आचार्य नेमीचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती विरचित गोम्मटसार जीवकाण्ड की
आचार्यकल्प पण्डितप्रवर टोडरमलजीकृत भाषा टीका

सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका

(प्रथम खण्ड)

गोम्मटसार जीवकाण्ड एवं उसकी भाषा टीका

सम्पादक

ब्र० यशपाल जैन, एम ए.
भारतीय श्रुति दर्शन केन्द्र
जयपुर

प्रकाशक

साहित्य प्रकाशन एवं प्रचार विभाग
श्री कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन तीर्थ सुरक्षा ट्रस्ट
ए-४, बापूनगर, जयपुर-३०२०१५

मूल्य : चालीस रुपये मात्र

प्रथम सस्करण · २२००
[७ मई, १९८९ अक्षय तृतीया]

मुद्रक : श्री बालचन्द्र यन्त्रालय 'मानवाश्रम', जयपुर

प्रकाशकीय

आचार्य नेमीचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती विरचित गोम्मटसार जीवकाण्ड की आचार्यकल्प पण्डित प्रवर टोडरमलजी कृत भाषा टीका, जो सम्यग्ज्ञान चन्द्रिका के नाम से विख्यात है, के प्रथम खण्ड का प्रकाशन करते हुए हमे हार्दिक प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है ।

दिगम्बराचार्य नेमीचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती करणानुयोग के महान आचार्य थे । गोम्मटसार जीवकाण्ड, गोम्मटसार कर्मकाण्ड, लब्धिसार, क्षपणासार, त्रिलोकसार तथा द्रव्य-सग्रह ये महत्वपूर्ण कृतियाँ आपकी प्रमुख देन हैं । पण्डित प्रवर टोडरमलजी ने गोम्मटसार जीवकाण्ड व कमकाण्ड तथा लब्धिसार और क्षपणासार की भाषा टीकाऐं पृथक्-पृथक् वनाई थी । चूंकि ये चारो टीकाएँ परस्पर एक-दूसरे से सम्बन्धित तथा सहायक थी, अत सुविधा की दृष्टि से उन्होने उक्त चारो टीकाओ को मिलाकर एक ही ग्रन्थ के रूप मे प्रस्तुत कर दिया तथा इस ग्रन्थ का नामकरण उन्होने 'सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका किया । इस सम्वन्ध मे टोडरमलजी स्वय लिखते है—

> या विधि गोम्मटसार, लब्धिसार ग्रन्थनिकी,
> भिन्न-भिन्न भाषाटीका कीनी अर्थ गायकैं ।
> इनिकै परस्पर सहायकपनो देख्यौ,
> तातै एक कर दई हम तिनको मिलायकैं ।।
> सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका धर्यो है याको नाम,
> सोई होत है सफल ज्ञानानन्द उपजायकैं ।
> कलिकाल रजनीमे अर्थ को प्रकाश करै,
> यातै निज काज कीजै इष्ट भाव भायकैं ।।

इस ग्रन्थ की पीठिका के सम्बन्ध मे मोक्षमार्ग प्रकाशक की प्रस्तावना लिखते हुए डॉ० हुकमचन्दजी भारिल्ल लिखते हैं—

"सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका विवेचनात्मक गद्य शैली मे लिखी गई है । प्रारभ मे इकहत्तर पृष्ठ की पीठिका है । आज नवीन शैली से सम्पादित ग्रन्थो मे भूमिका का बडा महत्त्व माना जाता है । शैली के क्षेत्र मे लगभग दो सौ बीस वर्ष पूर्व लिखी गई सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका की पीठिका आधुनिक भूमिका का आरभिक रूप है । किन्तु भूमिका का आद्य रूप होने पर भी उसमे प्रौढता पाई जाती है, उसमे हलकापन कही भी देखने को नही मिलता । इसके पढने से ग्रन्थ का पूरा हार्द खुल जाता है एव इस गूढ ग्रन्थ के पढने मे आने वाली पाठक की समस्त कठिनाइयाँ दूर हो जाती हैं । हिन्दी आत्मकथा साहित्य मे जो महत्त्व महाकवि पण्डित वनारसीदास के 'अर्द्धकथानक' को प्राप्त है, वही महत्त्व हिन्दी भूमिका साहित्य मे सम्यग्ज्ञान चन्द्रिका की पीठिका का है ।"

इस ग्रन्थ का प्रकाशन बडा ही श्रम साध्य कार्य था, चूंकि प्रकाशन के लिए समाज का दबाव भी बहुत था, अत इसे सम्पादित करने हेतु ब्र० यशपाल जी को तैयार किया गया। उन्होने अथक परिश्रम कर इस गुरुतर भार को वहन किया, इसके लिए यह ट्रस्ट सदैव उनका ऋणी रहेगा।

पुस्तक का प्रकाशन इस विभाग के प्रभारी श्री अखिल बसल ने बखूबी सम्हाला है। अत उनका आभार मानते हुए जिन महानुभावो ने इस ग्रन्थ की कीमत कम करने मे आर्थिक सहयोग दिया है उन्हे धन्यवाद देता हूँ।

इस ट्रस्ट के विषय मे तो अधिक क्या कहूँ इसकी गतिविधियो से सारा समाज परिचित है ही, तीर्थ क्षेत्रो का जीर्णोद्धार एव उनका सर्वेक्षण तो इस ट्रस्ट के माध्यम से हुआ ही है। इसकी सबसे बडी उपलब्धि है श्री टोडरमल दि० जैन सिद्धान्त महाविद्यालय जिसके माध्यम से सैकडो विद्वान जैन समाज को मिले हैं और निरन्तर मिल रहे हैं।

साहित्य प्रकाशन एव प्रचार विभाग के माध्यम से भी अनुकरणीय कार्य इस ट्रस्ट द्वारा हो रहा है। आचार्य कुन्दकुन्द के पचपरमागम समयसार, प्रवचनसार, नियमसार, अष्टपाहुड तथा पचास्तिकाय जैसे महत्त्वपूर्ण ग्रन्थो का प्रकाशन तो इस विभाग द्वारा हुआ ही है साथ ही–मोक्षशास्त्र, मोक्षमार्ग प्रकाशक, श्रावकधर्म प्रकाशक, पुरुषार्थसिद्धयुपाय, ज्ञान स्वभाव-ज्ञेयस्वभाव, छहढाला, समयसार–नाटक, चिद्‌विलास आदि का भी प्रकाशन इस विभाग ने किया है। प्रचार कार्य को भी गति देने के लिए पाच विद्वान नियुक्त किये गए हैं जो गाँव-गाँव जाकर विभिन्न माध्यमो से तत्त्वप्रचार मे रत हैं।

इस अनुपम ग्रन्थ के माध्यम से आप अपना आत्म कल्याण कर भव का अभाव करे ऐसी मगल कामना के साथ—

– नेमीचन्द पाटनी

सम्पादकीय

करणानुयोग के महान आचार्य श्री नेमीचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती ने ग्यारहवी शताब्दि मे गोम्मटसार जीवकाण्ड, गोम्मटसार कर्मकाण्ड, लब्धिसार और क्षपणासार ग्रन्थो की रचना प्राकृत गाथाओ मे की, जिस पर आचार्यकल्प पण्डित टोडरमलजी ने अठारहवी शताब्दि मे ढूढारी भाषा मे "सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका" नामक भाषा टीका लिखी है। त्रिलोकसार एव सुप्रसिद्ध लघु ग्रन्थ द्रव्यसग्रह भी आचार्य श्री नेमीचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती की ही रचनाएँ हैं।

सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका का प्रकाशन इससे पूर्व मात्र एक ही बार जैन सिद्धान्त प्रकाशिनी सस्था, कलकत्ता से हुआ था, जो कि बहुत वर्षों से अनुपलब्ध है, इसलिए पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट ने इसका पुनर्प्रकाशन करके करणानुयोग के एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण शास्त्र की दीर्घकालीन सुरक्षा का उत्तम उपाय किया है। सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका की महिमा के सम्बन्ध मे पण्डित टोडरमलजी के समकालीन स्वाध्यायशील ब्र० पण्डित राजमल्लजी ने अपने "चर्चा सग्रह" मे जो विचार व्यक्त किये हैं, वे द्रष्टव्य है —

"सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका की महिमा वचन अगोचर है, जो कोई जिन धर्म की महिमा और केवलज्ञान की महिमा जाणी चाहौं तो, या सिद्धान्त का अनुभव करो। घणी कहिता करि कहा।"

इस ग्रन्थ की महिमा एव विशेषता को समझने के लिए उपरोक्त विचार ही पर्याप्त है, अपनी ओर से और कुछ लिखने की आवश्यकता प्रतीत नही होती है।

सपूर्ण सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका का एकसाथ एक ही खण्ड मे प्रकाशन करने से इसका आकार बहुत ही बडा हो जाता, जिससे स्वाध्याय मे असुविधा हो सकती थी, इसलिए इसका तीन भागो मे प्रकाशन करने का निर्णय लिया गया। उसमे से प्रस्तुत सस्करण मे गोम्मटसार जीव-काण्ड की सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका टीका को प्रथम भाग के रूप मे प्रकाशित किया है।

इस ग्रन्थ के सपादन के लिए सर्वप्रथम हमने छह हस्तलिखित प्रतियो से इसका मिलान किया। मिलान करते समय हमारे सामने जैन सिद्धान्त प्रकाशिनी सस्था, कलकत्ता द्वारा प्रकाशित और प० गगाधरलाल जैन, न्यायतीर्थ एव श्रीलाल जैन काव्यतीर्थ द्वारा सपादित प्रति ही मूल आधार रही है। अन्य छह हस्तलिखित प्रतियो का विवरण इसप्रकार है —

१. **(अ) प्रति** — श्री दिगम्बर जैन बडा मन्दिर तेरह पथियान, जयपुर (राज०)

काल — पण्डित टोडरमलजी की स्वहस्तलिखित विक्रम सवत् १८१० की प्रति के आधार से विक्रम सवत् १८६१ मे लिखी हुई प्रति।

लिपिकार—अज्ञात (अक्षर सुन्दर व स्पष्ट हैं)

२. (ब) प्रति — श्री दिगम्बर जैन मन्दिर भदीचंदजी, जयपुर (राज०)

काल — अज्ञात

लिपिकार—अनेक लिपिकारो द्वारा लिखित एव पण्डित टोडरमलजी द्वारा सशोधित प्रति ।

३. (क) प्रति—श्री दिगम्बर जैन मन्दिर, आदर्शनगर, जयपुर (राज०)

काल—विक्रम सवत् १८२६, आषाढ सुदी तीज, गुरुवार ।

लिपिकार—गोविन्दराम ।

४. (ख) प्रति—श्री चन्द्रप्रभ दिगम्बर जैन मन्दिर, फिरोजाबाद (उ० प्र०)

काल—विक्रम सवत् १८१८

लिपिकार—अज्ञात ।

५. (ग) प्रति—श्री दिगम्बर जैन मन्दिर सघीजी, जयपुर (राज०)

काल—विक्रम सवत् १९७०, माघ शुक्ला पचमी ।

लिपिकार—श्री जमनालाल शर्मा ।

६. (घ) प्रति—श्री दिगम्बर जैन मन्दिर दीवान भदीचदजी, जयपुर (राज०)

काल—विक्रम सवत् १८६१, पौष वदी बारस ।

लिपिकार—श्री लालचन्द महात्मा देहा, श्री सीताराम के पठनार्थ ।

इस ग्रथ का सपादन करते समय हमने जिन बातो का ध्यान रखा है, उनका उल्लेख करना उचित होगा । वे बिन्दु इसप्रकार है —

(१) छह हस्तलिखित प्रतियो से मिलान करते समय जहाँ पर भी परस्पर विरुद्ध कथन आये, उनमे से जो हमे शास्त्र सम्मत प्रतीत हुआ उसे ही मूल मे रखा है और अन्य प्रतियो के कथन को फुटनोट मे दिया है । और जहाँ निर्णय नही कर पाये है, वहाँ छपी हुई प्रति को ही मूल मे रखकर अन्य प्रतियो का कथन फुटनोट मे दिया है ।

(२) पीठिका मे विपयवस्तु के अनुसार सामान्य प्रकरण, गोम्मटसार (जीवकाण्ड सबधी प्रकरण, गोम्मटसार कर्मकाण्ड सबधी प्रकरण, लब्धिसार-क्षपणासार सबधी प्रकरण – ये शीर्षक हमने अपनी तरफ से दिये है, मूल मे नही ।

(३) सपूर्ण ग्रथ मे स्वाध्याय की सुलभता के लिए विषयवस्तु के अनुसार वडे-बडे अनुच्छेदो (पैराग्राफो) को विभाजित करके छोटे-छोटे (पैराग्राफ) वनाये है । साथ ही टीका मे समागत प्रश्नोत्तर अथवा शका-समाधान भी अलग अनुच्छेद वनाकर दिये है ।

(४) गाथा के विषय का प्रतिपादक शीर्षकात्मक वाक्य मूल टीका मे गाथा के बाद टीका के साथ दिया है, लेकिन गाथा पढ़ने से पूर्व उसका विषय ध्यान मे आये – इसीलिए उस वाक्य को हमने गाथा से पहले दिया हे ।

(५) मूल गाथा तो वडे टाइप मे दी ही है, साथ ही टीका में भी जहाँ पर सस्कृत या प्राकृत के कोई सूत्र अथवा गाथा, श्लोक आदि आये है, उनको भी ब्लैक टाइप मे दिया है।

(६) गाथा का विषय जहाँ भी धवलादि ग्रथो से मिलता है, उसका उल्लेख श्रीमद् राजचद्र आश्रम, अगास से प्रकाशित गोम्मटसार जीवकाण्ड के आधार से फुटनोट मे किया है।

अनेक जगह अलौकिक गणितादि के विषय अति सूक्ष्मता के कारण से हमारे भी समझ मे नही आये है – ऐसे स्थानो पर मूल विषय यथावत ही दिया है, अपनी तरफ से अनुच्छेद भी नही बदले है।

सर्वप्रथम मैं पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट के महामन्त्री श्री नेमीचन्दजी पाटनी का हार्दिक आभारी हूँ, जिन्होने इस ग्रथ के सपादन का कार्यभार मुझे देकर ऐसे महान ग्रथ के सूक्ष्मता से अध्ययन का सुअवसर प्रदान किया।

डॉ० हुकमचद भारिल्ल का भी इस कार्य मे पूरा सहयोग एव महत्त्वपूर्ण सुझाव तथा मार्गदर्शन मिला है, इसलिए मैं उनका भी हार्दिक आभारी हूँ।

हस्तलिखित प्रतियो से मिलान करने का कार्य अतिशय कष्टसाध्य होता है। मैं तो हस्त-लिखित प्रति पढने मे पूर्ण समर्थ भी नही था। ऐसे कार्य मे शातस्वभावी स्वाध्यायप्रेमी साधर्मी भाई श्री सौभागमलजी वोहरा दूदूवाले, वापूनगर जयपुर का पूर्ण सहयोग रहा है। ग्रथ के कुछ विशेष प्रकरण अनेक वार पुन–पुन देखने पडते थे, फिर भी आप आलस्य छोडकर निरन्तर उत्साहित रहते थे। मुद्रण कार्य के समय भी आपने प्रत्येक पृष्ठ का शुद्धता की दृष्टि से अवलोकन किया है। एतदर्थ आपका जितना धन्यवाद दिया जाय, वह कम ही है। आशा है भविष्य मे भी आपका सहयोग इसीप्रकार निरन्तर मिलता रहेगा। साथ ही ब्र० कमलावेन जयपुर, श्रीमती शीलावाई विदिशा एव श्रीमती श्रीवती जैन दिल्ली का भी इस कार्य मे सहयोग मिला है, अत वे भी धन्यवाद की पात्र है।

गोम्मटसार जीवकाण्ड, गोम्मटसार कर्मकाण्ड तथा लब्धिसार-क्षपणासार के "सदृष्टि अधिकार" का प्रकाशन पृथक् ही होगा। गणित सम्वन्धी इस क्लिष्ट कार्य का भार ब्र० विमलावेन ने अपने ऊपर लिया तथा शारीरिक अस्वस्थता के वावजूद भी अत्यन्त परिश्रम से पूर्ण करके मेरे इस कार्य मे अभूतपूर्व योगदान दिया है, इसलिए मैं उनका भी हार्दिक आभारी हूँ।

हस्तलिखित प्रतियाँ जिन मदिरो से प्राप्त हुई है, उनके ट्रस्टियो का भी मैं आभारी हूँ, जिन्होने ये प्रतियाँ उपलब्ध कराई। इस कार्य मे श्री विनयकुमार पापडीवाल तथा सागरमलजी वज (लल्लूजी) का भी सहयोग प्राप्त हुआ है, इसलिए वे भी धन्यवाद के पात्र है।

अन्त मे इस ग्रथ का स्वाध्याय करके सभी जन सर्वज्ञता की महिमा से परिचित होकर अपने सर्वज्ञस्वभाव का आश्रय लेवे एव पूर्ण कल्याण करे – यही मेरी पवित्र भावना है।

— ब्र० यशपाल जैन

अक्षय तृतीया
७ मई, १९८९

प्रस्तुत संस्करण की कीमत कम कराने वाले दातारों की सूची

१	श्रीमती विभा जैन, ध प श्री अरुणकुमारजी जैन	मुजफ्फरनगर	२००१ ००
२.	श्रीमती भवरीदेवी सुपुत्री स्व. श्री ताराचन्दजी गगवाल	जयपुर	२०००.००
३	श्रीमती शकुतलादेवी ध प श्री विजयप्रतापजी जैन	कानपुर	१००१ ००
४.	श्री के सी सोगानी	ब्यावर	१००१ ००
५.	श्री छोटाभाई भीखाभाई मेहता	बम्बई	१००१ ००
६	श्रीमती प्यारीबाई ध प श्री माणकचन्दजी जैन	मुगावली	१००० ००
७	श्रीमती किरणकुमारी जैन	चण्डीगढ	६००.००
८	श्री दिगम्बर जैन मन्दिर	लवाण	६४१.००
९	श्री दिगम्बर जैन स्वाध्याय मण्डल	कानपुर	५५१ ००
१०.	श्री महिला मुमुक्षुमण्डल श्रीबुधु ब्यॉं सिघईजी का मन्दिर	सागर	५०५ ००
११	श्रीमती भवरीदेवी ध प श्री घीसालालजी छावडा	सीकर	५०१ ००
१२	श्रीमती बसतीदेवी ध प श्री हरकचन्दजी छाबडा	बम्बई	५०१ ००
१३	श्रीमती नारायणीदेवी ध प. श्रीगुलाबचन्दजी रारा	दिल्ली	५०१ ००
१४	श्री हुलासमलजी कासलीवाल	कलकत्ता	५०१ ००
१५	श्री भैयालालजी वैद	उजनेर	५०१ ००
१६.	श्री प्रमोदकुमार विनोदकुमारजी जैन	हस्तिनापुर	५०१ ००
१७	श्री माणकचन्द माधोसिहजी साखला	जयपुर	५०१ ००
१८	श्री चतरसेन अमीतकुमारजी जैन	रुडकी	५०१ ००
१९	श्री सोहनलालजी जैन, जयपुर प्रिण्टर्स	जयपुर	५०१.००
२०	श्री इन्दरचन्दजी विजयकुमारजी कौशल	छिन्दवाडा	५०१ ००
२१	श्रीमती सुमित्रा जैन ध प श्री नरेशचन्दजी जैन	मुजफ्फरनगर	५०१ ००
२२	श्रीमती किरण जैन ध प श्री सुरेशचन्दजी जैन	मुजफ्फरनगर	५०१ ००
२३	श्रीमती त्रिशला जैन ध प श्री रमेशचन्दजी जैन	मुजफ्फरनगर	५०१ ००
२४	श्रीमती उषा जैन ध प श्री अनिलकुमारजी जैन	मुजफ्फरनगर	५०१ ००
२५	श्री राजेश जैन (टोनी)	मुजफ्फरनगर	५०१ ००
२६	श्री राजकुमारजी कासलीवाल	तिनसुखिया	५०१ ००
२७	श्रीमती धापूदेवी ध प स्व श्री केसरीमलजी सेठी	नई दिल्ली	५०१ ००
२८	श्री अजितप्रसादजा जैन	दिल्ली	५०१ ००
२९	श्री सुमेरमलजी जैन	तिनसुखिया	५०१ ००
३०	श्री पूनमचन्द नेमचन्द जैन	वडौत	५०१ ००
३१	श्रीमती मोतीदेवी वण्डी ध प स्व श्री उग्रसेनजी बण्डी	उदयपुर	५०१.००
			२११२२ ००

३२	श्री कपूरचन्द राजमल जैन एव परिवार	लवाण	५०१ ००
३३	श्री छोटेलाल सतीशचन्दजी जैन	इटावा	५०१ ००
३४	श्रीमती रगूबाई ध प श्री उम्मेदमलजी भण्डारी	सायला	५०० ००
३५	श्रीमती केसरदेवी ध प श्री जयनारायणजी जैन	फिरोजाबाद	५०० ००
३६	श्री सुहास वसत मोहिरे	बेलगाव	५०० ००
३७	श्री वीरेन्द्रकुमार वालचन्द जैन	पारोला	५०० ००
३८	श्रीमती केसरदेवी वण्डी	उदयपुर	५०० ००
३९	श्री माणकचन्द प्रभुलालजी	कुरावड	५०० ००
४०	श्रीमती रत्नप्रभा सुपुत्री स्व श्री ताराचन्दजी गगवाल	जयपुर	५०० ००
४१	श्री माणकचन्द प्रभुलालजी भगनोत	कुरावड	५०० ००
४२	श्री नेमीचन्दजी जैन मगरोनी वाले	शिवपुरी	५०० ००
४३.	स्व श्रीमती कुसुमलता एव सुनद वसल स्मृति निधि हस्ते डॉ राजेन्द्र वसल	अमलाई	१११ ००
४४	श्री जयन्ति भाई धनजी भाई दोशी	दादर बम्बई	१११ ००
४५	श्रीमती धुडीबाई खेमराज गिडिया	खैरागढ	१०१ ००
४६	चौ० फूलचन्दजी जैन	बम्बई	१०१ ००
४७	फुटकर		५७७२ ००
		योग	३२८२० ००

हे भव्य हो ! शास्त्राभ्यास के अनेक अग है। शब्द या अर्थ का वाचन या सीखना, सिखाना, उपदेश देना, विचारना, सुनना, प्रश्न करना, समाधान जानना, बारम्बार चर्चा करना इत्यादि अनेक अग हैं–वहाँ जैसे बने तैसे अभ्यास करना। यदि सर्व शास्त्र का अभ्यास न बने तो इस शास्त्र मे सुगम या दुर्गम अनेक अर्थों का निरूपण है, वहाँ जिसका बने उसका अभ्यास करना। परन्तु अभ्यास मे आलसी न होना।

– प० भागचन्द जी

विषय-सूची

तेरहवां अधिकार :
संयममार्गणा-प्ररूपणा ५७२–५८०

चौदहवां अधिकार :
दर्शनमार्गणा-प्ररूपणा ५८१–५८४

पंद्रहवां अधिकार :
लेश्यामार्गणा-प्ररूपणा ५८५–६४४

सोलहवां अधिकार :
भव्यमार्गणा-प्ररूपणा ६४५–६५७

सतरहवा अधिकार .
सम्यक्त्वमार्गणा-प्ररूपणा ६५८–७२३

अठारहवा अधिकार :
संज्ञीमार्गणा-प्ररूपणा ७२४–७२५

---o---

विषयजनित जो सुख है वह दुख ही है क्योकि विषय-सुख परनिमित्त से होता है, पूर्व और पश्चात् तुरन्त ही आकुलता सहित है और जिसके नाश होने के अनेक कारण मिलते ही हैं, आगामी नरकादि दुर्गति प्राप्त करानेवाला है ऐसा होने पर भी वह तेरी चाह अनुसार मिलता ही नही, पूर्व पुण्य से होता है, इसलिए विषम है। जैसे खाज से पीडित पुरुष अपने अग को कठोर वस्तु से खुजाते हैं वैसे ही इन्द्रियो से पीडित जीव उनको पीडा सही न जाय तब किंचितमात्र जिनमे पीडा का प्रतिकार सा भासे ऐसे जो विषयसुख उनमे झपापात करते हैं, वह परमार्थ रूप सुख नही, और शास्त्राभ्यास करने से जो सम्यग्ज्ञान हुआ उससे उत्पन्न आनन्द, वह सच्चा सुख है। जिससे वह सुख स्वाधीन है, आकुलता रहित है, किसी द्वारा नष्ट नही होता, मोक्ष का कारण है, विषम नही है। जिस प्रकार खाज की पीडा नही होती तो सहज ही सुखी होता, उसी प्रकार वहाँ इन्द्रिय पीडने के लिए समर्थ नही होती तब सहज ही सुख को प्राप्त होता है। इसलिए विषयसुख को छोडकर शास्त्राभ्यास करना, यदि सर्वथा न छुटे तो जितना हो सके उतना छोडकर शास्त्राभ्यास मे तत्पर रहना।

इसी ग्रन्थ से अनुदित, पृष्ठ – १३ व १४

आचार्यकल्प पण्डितप्रवर टोडरमलजीकृत

सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका

पीठिका

।। मंगलाचरण ।।

बदौ ज्ञानानदकर, नेमिचन्द गुणकद ।
माधव वंदित विमलपद, पुण्यपयोनिधि नद ।। १ ।।
दोष दहन गुन गहन घन, अरि करि हरि अरहत ।
स्वानुभूति रमनी रमन, जगनायक जयवत ।। २ ।।
सिद्ध सुद्ध साधित सहज, स्वरससुधारसधार ।
समयसार शिव सर्वगत, नमत होहु सुखकार ।। ३ ।।
जैनी वानी विविध विधि, वरनत विश्वप्रमान ।
स्यातपद-मुद्रित अहित-हर, करहु सकल कल्यान ।। ४ ।।
मैं नमो नगल जैन जन, ज्ञान-ध्यान धन लीन ।
मैन मान बिन दान घन, एन हीन तन छीन ।। ५ ।।[१]
इहविधि मंगल करन तै, सबविधि मगल होत ।
होत उदगल दूरि सब, तम ज्यौ भानु उदोत ।। ६ ।।

सामान्य प्रकरण

अथ मंगलाचरण करि श्रीमद् गोम्मटसार द्वितीय नाम पंचसग्रह ग्रंथ, ताकी देशभाषामयी टीका करने का उद्यम करौ हौ। सो यहु ग्रथसमुद्र तौ ऐसा है जो सातिशय बुद्धि-बल संयुक्त जीवनि करि भी जाका अवगाहन होना दुर्लभ है। अर मैं मंदबुद्धि अर्थ प्रकाशनेरूप याकी टीका करनी विचारौ हौ।

सो यहु विचार ऐसा भया जैसे कोऊ अपने मुख तै जिनेद्रदेव का सर्व गुण वर्णन किया चाहै, सो कैसे बनै ?

इहां कोऊ कहै – नाही बनै है तो उद्यम काहे कौ करौ हौ ?

ताकौं कहिये है – जैसे जिनेद्रदेव के सर्व गुण कहने की सामर्थ्य नाही, तथापि भक्त पुरुष भक्ति के वश तै अपनी बुद्धि अनुरारार गुण वर्णन करै, तैसे इस ग्र थ का सपूर्ण अर्थ प्रकाशने की सामर्थ्य नाही। तथापि अनुराग के वश तै मैं अपनी बुद्धि अनुसार (गुण)[२] अर्थ प्रकाशोगा।

१ यह चित्रालकारयुक्त है।
२ गुण शब्द घ प्रति मे मिला।

बहुरि कोऊ कहै कि – अनुराग है तो अपनी बुद्धि अनुसार ग्रंथाभ्यास करो, मदबुद्धिनि कौ टीका करने का अधिकारी होना युक्त नाहीं ।

तार्कों कहिये है – जैसै किसी शिष्यशाला विषै बहुत बालक पढै है। तिनिविषै कोऊ बालक विशेष ज्ञान रहित है, तथापि अन्य बालकनि तै अधिक पढ्या है, सो आपतै थोरे पढने वाले बालकनि कौ अपने समान ज्ञान होने के अर्थि किछू लिखि देना आदि कार्य का अधिकारी हो है। तैसे मेरे विशेष ज्ञान नाही, तथापि काल दोष तै मोतै भी मदबुद्धि है, अर होहिंगे। तिनिकै मेरे समान इस ग्रथ का ज्ञान होने के अर्थि टीका करने का अधिकारी भया हौ ।

बहुरि कोऊ कहै कि – यहु कार्य करना तो विचारया, परन्तु जैसे छोटा मनुष्य बडा कार्य करना विचारै, तहा उस कार्य विषै चूक होई ही, तहा वह हास्य कौ पावै है। तैसै तुम भी मदबुद्धि होय, इस ग्रथ की टीका करनी विचारी हौ सो चूक होइगी, तहा हास्य कौ पावोगे ।

तार्कों कहिये है – यहु तौ सत्य है कि मैं मदबुद्धि होइ ऐसै महान ग्रथ की टीका करनी विचारौ हौं, सो चूक तौ होइ, परन्तु सज्जन हास्य नाही करेंगे। जैसें औरनि तै अधिक पढ्या बालक कही भूलै तब बडे ऐसा विचारै है कि बालक है, भूलै ही भूलै, परतु और बालकनि तै भला है, ऐसै विचारि हास्य नाही करै हैं। तैसै मैं इहा कही भूलोगा तहा सज्जन पुरुष ऐसा विचारेंगे कि मदबुद्धि था, सौ भूलै ही भूलै, परतु केतेइक अतिमदबुद्धीनि तै भला है, ऐसै विचारि हास्य न करेंगे ।

सज्जन तो हास्य न करेंगे, परन्तु दुर्जन तौ हास्य करेंगे ?

तार्कों कहिये है कि – दुष्ट तौ ऐसै ही है, जिनके हृदय विषै औरनि के निर्दोष भले गुण भी विपरीतरूप ही भासै। सो उनका भय करि जामै अपना हित होय ऐसे कार्य कौ कौन न करैगा ?

बहुरि कौऊ कहै कि – पूर्व ग्रथ थे ही, तिनिका अभ्यास करने-करावने तै ही हित हो है, मदबुद्धिनि करि ग्रथ की टीका करने की महतता काहेकौ प्रगट कीजिये ?

तार्कों कहिये है कि – ग्रथ अभ्यास करने तै ग्रथ की टीका रचना करने विषै उपयोग विशेष लागै है, अर्थ भी विशेष प्रतिभासै है। बहुरि अन्य जीवनि कौ ग्रथ अभ्यास करावने का सयोग होना दुर्लभ है। अर सयोग होइ तौ कोई ही जीव कै अभ्यास होइ। अर ग्रथ की टीका बनै तौ परपरा अनेक जीवनि कै अर्थ का ज्ञान होइ। तातै अपना अर अन्य जीवनि का विशेष हित होने के अर्थि टीका करिये है, महतता का तौ किछू प्रयोजन नाही ।

बहुरि कोऊ कहै कि इस कार्य विषै विशेष हित हो है सो सत्य, परंतु मदबुद्धि तै कही भूलि करि अन्यथा अर्थ लिखिए, तहा महत् पाप उपजने तै अहित भी तो होइ ?

ताकौ कहिए है – यथार्थ सर्व पदार्थनि का ज्ञाता तौ केवली भगवान है। औरनि कै ज्ञानावरण का क्षयोपशम के अनुसारी ज्ञान है, तिनिकौ कोई अर्थ अन्यथा भी प्रतिभासै, परतु जिनदेव का ऐसा उपदेश है – कुदेव, कुगुरु, कुशास्त्रनि के वचन की प्रतीति करि वा हठ करि वा क्रोध, मान, माया, लोभ करि वा हास्य, भयादिक करि जो अन्यथा श्रद्धान करै वा उपदेश देइ, सो महापापी है। अर विशेष ज्ञानवान गुरु के निमित्त बिना, वा अपने विशेष क्षयोपशम बिना कोई सूक्ष्म अर्थ अन्यथा प्रतिभासै अर यहु ऐसा जानै कि जिनदेव का उपदेश ऐसै ही है, ऐसा जानि कोई सूक्ष्म अर्थ कौ अन्यथा श्रद्धै है वा उपदेश दे तौ याकौ महत् पाप न होइ। सोइ इस ग्रथ विषै भी आचार्य करि कहा है –

सम्माइट्ठी जीवो, उवइट्ठं पवयणं तु सद्दहदि ।
सद्दहदि असब्भावं, अजाणमाणो गुरुणियोगा ॥२७॥ जीवकाड ॥

बहुरि कोऊ कहै कि – तुम विशेष ज्ञानी तै ग्रंथ का यथार्थ सर्व अर्थ का निर्णय करि टीका करने का प्रारभ क्यो न कीया ?

ताकौं कहिये है – काल दोष तै केवली, श्रुतकेवली का तौ इहा अभाव ही भया। बहुरि विशेष ज्ञानी भी विरले पाइए। जो कोई है तौ दूरि क्षेत्र विषै है, तिनिका संयोग दुर्लभ। अर आयु, बुद्धि, बल, पराक्रम आदि तुच्छ रहि गए। तातै जो बन्या सो अर्थ का निर्णय कीया, अवशेष जैसै है तैसै प्रमाण है।

बहुरि कोऊ कहै कि – तुम कही सो सत्य, परतु इस ग्रंथ विषै जो चूक होइगी, ताके शुद्ध होने का किछू उपाय भी है ?

ताकौं कहिये है – एक उपाय यहु कीजिए है – जो विशेष ज्ञानवान पुरुषनि का प्रत्यक्ष तौ सयोग नाही, तातै परोक्ष ही तिनिस्यो ऐसी बीनती करौ हौ कि मैं मद बुद्धि हौ, विशेषज्ञान रहित हौ, अविवेकी हौ, शब्द, न्याय, गणित, धार्मिक आदि ग्रथनि का विशेष अभ्यास मेरे नाही है, तातै शक्तिहीन हौ, तथापि धर्मानुराग के वश तै टीका करने का विचार कीया, सो या विषै जहा-जहा चूक होइ, अन्यथा अर्थ होइ, तहा-तहा मेरे ऊपरि क्षमा करि तिस अन्यथा अर्थ कौ दूरि करि यथार्थ अर्थ लिखना। ऐसै विनती करि जो चूक होइगी, ताके शुद्ध होने का उपाय कीया है।

बहुरि कोऊ कहै कि तुम टीका करनी विचारी सो तौ भला कीया, परतु ऐसे महान ग्रथनि की टीका सस्कृत ही चाहिये। भाषा विषै याकी गंभीरता भासै नाही।

ताकौं कहिये है – इस ग्रथ की **जीवतत्त्वप्रदीपिका** नामा सस्कृत टीका तौ पूर्वे है ही। परन्तु तहा सस्कृत, गणित, आम्नाय आदि का ज्ञान रहित जे मदबुद्धि हैं, तिनिका प्रवेश न हो है। बहुरि इहा काल दोष तै बुद्ध्यादिक के तुच्छ होने करि सस्कृतादि ज्ञान रहित घने जीव है। तिनिके इस ग्रथ के अर्थ का ज्ञान होने के अर्थि भाषा टीका करिए है। सो जे जीव सस्कृतादि विशेषज्ञान युक्त हैं, ते मूलग्रथ वा सस्कृत टीका तै अर्थ धारैगे। बहुरि जे जीव सस्कृतादि विशेष ज्ञान रहित हैं, ते इस भाषा टीका तै अर्थ धारौ। बहुरि जे जीव सस्कृतादि ज्ञान सहित है, परतु गणित आम्नायादिक के ज्ञान के अभाव तै मूलग्रथ वा सस्कृत टीका विषै प्रवेश न पावै हैं, ते इस भाषा टीका तै अर्थ कौ धारि, मूल ग्रथ वा सस्कृत टीका विषै प्रवेश करहु। बहुरि जो भाषा टीका तै मूल ग्रथ वा सस्कृत टीका विषै अधिक अर्थ होइ, ताके जानने का अन्य उपाय बनै सो करहु।

इहा कोऊ कहै – सस्कृत ज्ञानवालो कै भाषा अभ्यास विषै अधिकार नाही।

ताकौं कहिये है – सस्कृत ज्ञानवालो कौ भाषा वाचने तै कोई दोष तो नाही उपजै है, अपना प्रयोजन जैसै सिद्ध होइ तैसै ही करना। पूर्वै अर्धमागधी आदि भाषामय महान ग्रथ थे। बहुरि बुद्धि की मदता जीवनि के भई, तब सस्कृतादि भाषामय ग्रथ बने। अब विशेष बुद्धि की मदता जीवनि कै भई ताते देश भाषामय ग्रथ करने का विचार भया। बहुरि सस्कृतादिक का अर्थ भी अब भाषाद्वार करि जीवनि कौं समझाइये है। इहा भाषाद्वार करि ही अर्थ लिख्या तो किछू दोष नाही है।

ऐसै विचारि श्रीमद् **गोम्मटसार** द्वितीयनामा **पंचसग्रह** ग्रथ की 'जीवतत्त्व प्रदीपिका' नामा सस्कृत टीका, ताकै अनुसारि **'सम्यग्ज्ञानचद्रिका'** नामा यहु देशभाषामयी टीका करने का निश्चय किया है। सो श्री अरहत देव वा जिनवाणी वा निर्ग्रंथ गुरुनि के प्रसाद तै वा मूल ग्रथकर्ता नेमिचद्र आदि आचार्यनि के प्रसाद तै यहु कार्य सिद्ध होहु।

अब इस शास्त्र के अभ्यास विषै जीवनि कौं सन्मुख करिए है। हे भव्यजीव हौ! तुम अपने हित कौं वाछौ हौ तौ तुमकौं जैसै बनै तैसे या शास्त्र का अभ्यास करना। जातै आत्मा का हित मोक्ष है। मोक्ष बिना अन्य जो है, सो परसयोगजनित है, विनाशीक है, दुःखमय है। अर मोक्ष है सोई निज स्वभाव है, अविनाशी है, अनत सुखमय है। तातै मोक्ष पद पावने का उपाय तुमकौं करना। सो मोक्ष के उपाय सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र हैं। सो इनकी प्राप्ति जीवादिक के स्वरूप जानने ही तै हो है।

सो कहिए है – जीवादि तत्त्वनि का श्रद्धान सम्यग्दर्शन है । सो बिना जानें श्रद्धान का होना आकाश का फूल समान है । पहिलें जानें तब पीछें तैसें ही प्रतीति करि श्रद्धान कौ प्राप्त हो है । तातें जीवादिक का जानना श्रद्धान होने तें पहिलै जो होइ सोई तिनके श्रद्धान रूप सम्यग्दर्शन का कारण जानना । बहुरि श्रद्धान भए जो जीवादिक का जानना होइ, ताही का नाम सम्यग्ज्ञान है । बहुरि श्रद्धानपूर्वक जीवादि जानें स्वयमेव उदासीन होइ, हेय कौं त्यागै, उपादेय कौं ग्रहै, तब सम्यक् चारित्र हो है । अज्ञानपूर्वक क्रियाकाड तें सम्यक्चारित्र होइ नाही । ऐसें जीवादिक कौं जानने ही तें सम्यग्दर्शनादि मोक्ष के उपायनि की प्राप्ति निश्चय करनी । सो इस शास्त्र के अभ्यास तें जीवादिक का जानना नीकैं हो है । जातें ससार है सोई जीव अर कर्म का सबध रूप है । बहुरि विशेष जानें इनका सबध का जो अभाव होइ सोई मोक्ष है । सो इस शास्त्र विषै जीव अर कर्म का ही विशेष निरूपण है । अथवा जीवादिक षड् द्रव्य, सप्त तत्त्वादिकनि का भी या विषे नीकैं निरूपण है । तातैं इस शास्त्र का अभ्यास अवश्य करना ।

अब इहा केइ जीव इस शास्त्र का अभ्यास विषै अरुचि होने कौ कारण विपरीत विचार प्रकट करै है । तिनिकौ समझाइए है । तहा जीव प्रथमानुयोग वा चरणानुयोग वा द्रव्यानुयोग का केवल पक्ष करि इस करणानुयोगरूप शास्त्र विषै अभ्यास कौ निषेधै है ।

तिनिविषै प्रथमानुयोग का पक्षपाती कहै है कि – इदानी जीवनि की बुद्धि मद बहुत है, तिनिकैं ऐसैं सूक्ष्म व्याख्यानरूप शास्त्र विषै किछू समझना होइ नाही तातैं तीर्थकरादिक की कथा का उपदेश दीजिए तौ नीकैं समझैं, अर समझि करि पाप तें डरै, धर्मानुरागरूप होइ, तातें प्रथमानुयोग का उपदेश कार्यकारी है ।

ताकौं कहिये है – अब भी सर्व ही जीव तौ एक से न भए है । हीनाधिक बुद्धि देखिए है । तातें जैसा जीव होइ, तैसा उपदेश देना । अथवा मदबुद्धि भी सिखाए हुए अभ्यास तैं बुद्धिमान होते देखिए है । तातें जे बुद्धिमान है, तिनिकौं तौ यहु ग्रथ कार्यकारी है ही अर जे मदबुद्धि है, ते विशेषबुद्धिनि तें सामान्य-विशेष रूप गुणस्थानादिक का स्वरूप सीखि इस शास्त्र का अभ्यास विषै प्रवर्तौ ।

इहां मंदबुद्धि कहै है कि – इस गोम्मटसार शास्त्र विषै तौ गणित समस्या अनेक अपूर्व कथन करि बहुत कठिनता सुनिए है, हम कैसे या विषै प्रवेश पावै ?

तिनकौं कहिये है – भय मति करौ, इस भाषा टीका विषै गणित आदि का अर्थ सुगमरूप करि कह्या है , तातैं प्रवेश पावना कठिन रह्या नाही । बहुर या

शास्त्र विषै कथन कही सामान्य है, कही विशेष है, कही सुगम है, कही कठिन है, तहा जो सर्व अभ्यास बनै तो नीकै ही है, अर जो न बनै तौ अपनी बुद्धि के अनुसार जैसा बनै तैसा ही अभ्यास करौ। अपने उपाय मे आलस्य करना नाही।

बहुरि तै कह्या – प्रथमानुयोग सबधी कथादिक सुनै पाप तै डरै हैं, अर धर्मानुरागरूप हो है।

सो तहा तौ दोऊ कार्य शिथिलता लीए हो हैं। इहा पाप-पुण्य के कारणकार्यादिक विशेष जानने तै ते दोऊ कार्य दृढता लिए हो है। तातै याका अभ्यास करना। ऐसै प्रथमानुयोग के पक्षपाती कौ इस शास्त्र का अभ्यास विषै सन्मुख कीया।

अब चरणानुयोग का पक्षपाती कहै है कि – इस शास्त्र विषै कह्या जीव-कर्म का स्वरूप, सो जैसे है तैसे है ही, तिनिकौ जानै कहा सिद्धि हो है ? जो हिंसादिक का त्याग करि व्रत पालिए, वा उपवासादि तप करिए, वा अरहतादिक की पूजा, नामस्मरण आदि भक्ति करिए, वा दान दीजिए, वा विषयादिक स्यो उदासीन हूजै इत्यादि शुभ कार्य करिए तो आत्महित होइ। तातै इनका प्ररूपक चरणानुयोग का उपदेशादिक करना।

ताकौं कहिए है – हे स्थूलबुद्धि ! तै व्रतादिक शुभ कार्य कहे, ते करने योग्य ही हैं। परतु ते सर्व सम्यक्त्व विना अैसै है जैसै अक बिना बिंदी। अर जीवादिक का स्वरूप जानै बिना सम्यक्त्व का होना ऐसा जैसे बाझ का पुत्र। तातै जीवादिक जानने के अर्थि इस शास्त्र का अभ्यास अवश्य करना। बहुरि तै जैसे व्रतादिक शुभ कार्य कहे अर तिनितै पुण्यबध हो है। तैसै जीवादिक का स्वरूप जाननेरूप ज्ञानाभ्यास है, सो प्रधान शुभ कार्य है। यातै सातिशय पुण्य का बध हो है। बहुरि तिन व्रतादिकनि विषै भी ज्ञानाभ्यास की ही प्रधानता है, सो कहिए है–

(जो जीव प्रथम जीव समासादि जीवादिक के विशेष जानै, पीछै यथार्थ ज्ञान करि हिसादिक कौ त्यागि व्रत धारै, सोई व्रती है। बहुरि जीवादिक के विशेष जानै विना कथचित् हिसादिक का त्याग तै आपकौ व्रती मानै, सो व्रती नाही)। तातै व्रत पालने विषै ज्ञानाभ्यास ही प्रधान है।

बहुरि तप दोय प्रकार है –(एक बहिरग, एक अतरग। तहा जाकरि शरीर का दमन होइ, सो बहिरग तप है, अर जातै मन का दमन होइ, सो अतरग तप है। इनि विषै बहिरग तप तै अतरग तप उत्कृष्ट है। सो उपवासादिक तौ बहिरग तप है। ज्ञानाभ्यास अतरग तप है। सिद्धात विषै भी छह प्रकार अतरग तपनि विषै चौथा स्वाध्याय नाम तप कह्या है। तिसतै

उत्कृष्ट व्युत्सर्ग अर ध्यान ही है । तातै तप करने विषै भी ज्ञानाभ्यास ही प्रधान है। बहुरि जीवादिक के विशेषरूप गुणस्थानादिकनि का स्वरूप जानै ही अरहंतादिकनि का स्वरूप नीकै पहिचानिए है, वा अपनी अवस्था पहिचानिए है। ऐसी पहिचानि भए जो तीव्र अंतरंग भक्ति प्रकट हो है, सोई बहुत कार्यकारी है। बहुरि जो कुलक्रमादिक तै भक्ति हो है, सो किंचिन्मात्र ही फल की दाता है। तातै भक्ति विषै भी ज्ञानाभ्यास ही प्रधान है ।

बहुरि दान चार प्रकार है – तिनिविषै आहारदान, औषधदान, अभयदान तौ तात्कालिक क्षुधा के दुःख कौ वा रोग के दुःख कौ, वा मरणादि भय के दुःख ही कौ दूर करै है । **अर ज्ञानदान है सो अनंत भव संतान संबंधी दुःख दूर करने कौं कारण है।** तीर्थंकर, केवली, आचार्यादिकनि कै भी ज्ञानदान की प्रवृत्ति है । तातै ज्ञानदान उत्कृष्ट है, सो अपनै ज्ञानाभ्यास होइ तो अपना भला करै, अर अन्य जीवनि कौ ज्ञानदान देवै । ज्ञानाभ्यास बिना ज्ञानदान देना कैसै होइ ? तातै दान विषै भी ज्ञानाभ्यास ही प्रधान है ।

बहुरि जैसै जन्म तै ही केई पुरुष ठिगनि के घर गए – तहा तिन ठिगनि कौ अपने मानै है । बहुरि कदाचित् कोऊ पुरुष किसी निमित्त स्यो अपने कुल का वा ठिगनि का यथार्थ ज्ञान होनै ते ठिगनि स्यो अतरग विषै उदासीन भया, तिनिकौ पर जानि सबध छुडाया चाहै है। बाह्य जैसा निमित्त है तैसा प्रवर्त्तै है। बहुरि कोऊ पुरुष तिन ठिगनि कौ अपना ही जानै है अर किसी कारण तै कोऊ ठिग स्यो अनुरागरूप प्रवर्तै है । कोई ठिग स्यो लडि करि उदासीन भया आहारादिक का त्यागी होइ है ।

तैसे अनादि तै सर्व जीव ससार विषै प्राप्त है, तहा कर्मनि कौ अपने मानै है । बहुरि कोइ जीव किसी निमित्त स्यो जीव का अर कर्म का यथार्थ ज्ञान होनै तै कर्मनि स्यो उदासीन भया, तिनिकौ पर जानने लगा, तिनस्यो सबध छुडाया चाहै है । बाह्य जैसै निमित्त है तैसे वर्त्तै है। ऐसै जो ज्ञानाभ्यास तै उदासीनता होइ सोई कार्यकारी है। बहुरि कोई जीव तिन कर्मनि कौ अपने जानै है । अर किसी कारण तै कोई शुभ कर्म स्यो अनुराग रूप प्रवर्तै है । कोई अशुभ कर्म स्यो दु ख का कारण जानि उदासीन भया विषयादिक का त्यागी हो है । ऐसे ज्ञान बिना जो उदासीनता होइ सो पुण्यफल की दाता है, मोक्ष कार्य कौ न साधे है । तातै उदासीनता विषै भी ज्ञानाभ्यास ही प्रधान है। याही प्रकार अन्य भी शुभ कार्यनि विषै ज्ञानाभ्यास ही प्रधान जानना । देखो ! महामुनीनि कै भी ध्यान-अध्ययन दोय ही कार्य मुख्य है । तातै शास्त्र अध्ययन तै जीव-कर्म का स्वरूप जानि स्वरूप का ध्यान करना ।

बहुरि इहा कोऊ तर्क करै कि – कोई जीव शास्त्र अध्ययन तौ बहुत करै है। अर विषयादिक का त्यागी न हो है, ताकै शास्त्र अध्ययन कार्यकारी है कि नाही ? जो है तौ महत पुरुष काहेकौ विषयादिक तजै, अर नाही है तो ज्ञानाभ्यास का महिमा कहा रह्या ?

ताका समाधान – शास्त्राभ्यासी दोय प्रकार हैं, एक लोभार्थी, एक धर्मार्थी। तहा जो अतरग अनुराग बिना-ख्याति-पूजा-लाभादिक के अर्थि शास्त्राभ्यास करै, सो लोभार्थी है, सो विषयादिक का त्याग नाही करै है। अथवा ख्याति, पूजा, लाभादिक कै अर्थि विषयादिक का त्याग भी करै है, तौ भी ताका शास्त्राभ्यास कार्यकारी नाही।

बहुरि जो अतरग अनुराग तै आत्म हित के अर्थि शास्त्राभ्यास करै है, सो धर्मार्थी है। सो प्रथम तौ जैन शास्त्र ऐसे है जिनका धर्मार्थी होइ अभ्यास करै, सो विषयादिक का त्याग करै ही करै। ताकै तौ ज्ञानाभ्यास कार्यकारी है ही। बहुरि कदाचित् पूर्वकर्म का उदय की प्रबलता तै न्यायरूप विषयादिक का त्याग न बनै है तौ भी ताकै सम्यग्दर्शन, ज्ञान के होने तै ज्ञानाभ्यास कार्यकारी हो है। जैसै असयत गुणस्थान विषै विषयादिक का त्याग बिना भी मोक्षमार्गपना सभवै है।

इहा प्रश्न – जो धर्मार्थी होइ जैन शास्त्र अभ्यासै, ताकै विषयादिक का त्याग न होइ सो यहु तौ बनै नाही। जातै विषयादिक के सेवन परिणामनि तै हो है, परिणाम स्वाधीन है।

तहाँ समाधान – परिणाम ही दोय प्रकार है। एक बुद्धिपूर्वक, एक अबुद्धिपूर्वक। तहा अपने अभिप्राय के अनुसारि होइ सो बुद्धिपूर्वक। अर दैव – निमित्त तै अपने अभिप्राय तै अन्यथा होइ सो अबुद्धिपूर्वक। जैसै सामायिक करतै धर्मात्मा का अभिप्राय ऐसा है कि मैं मेरे परिणाम शुभरूप राखो। तहा जो शुभपरिणाम ही होइ सो तौ बुद्धिपूर्वक। अर कर्मोदय तै स्वयमेव अशुभ परिणाम होइ, सो अबुद्धिपूर्वक जानने। तैसै धर्मार्थी होइ जो जैन शास्त्र अभ्यासै है ताको अभिप्राय तौ विषयादिक का त्याग रूप वीतराग भाव का ही होइ, तहा वीतराग भाव होइ, तौ बुद्धिपूर्वक है। अर चारित्रमोह के उदय तै सराग भाव होइ तौ अबुद्धिपूर्वक है। तातै बिना वश जे सरागभाव हो है, तिनकरि ताकै विषयादिक की प्रवृत्ति देखिये है। जातै बाह्य प्रवृत्ति को कारण परिणाम है।

इहां तर्क – जो ऐसै है तो हम भी विषयादिक सेवेगे अर कहेगे – हमारे उदयाधीन कार्य हो है।

ताकौ कहिये है –(रे मूर्ख ! किछू कहने तै तौ होता नाही ! सिद्धि तौ अभिप्राय के अनुसारि है । तातै जैन शास्त्र के अभ्यास तै अपना अभिप्राय कौ सम्यक्रूप करना । अर अतरग विषै विषयादिक सेवन का अभिप्राय होतै तौ धर्मार्थी नाम पावै नाही)।

ऐसै चरणानुयोग के पक्षपाती कौ इस शास्त्र का अभ्यास विषै सन्मुख कीया ।

अब द्रव्यानुयोग का पक्षपाती कहै है कि – इस शास्त्र विषै जीव के गुणस्थानादिक रूप विशेप अर कर्म के विशेष वर्णन किए, तिनकौ जानै अनेक विकल्प तरग उठै, अर किछू सिद्धि नाही । तातै अपने शुद्ध स्वरूप कौ अनुभवना वा अपना अर पर का भेदविज्ञान करना – इतना ही कार्यकारी है । अथवा इनके उपदेशक जे अध्यात्मशास्त्र, तिनका ही अभ्यास करना योग्य है ।

ताकौं कहिये है – हे सूक्ष्माभासबुद्धि ! तै कह्या सो सत्य, परतु अपनी अवस्था देखनी । जो स्वरूपानुभव विषै वा भेदविज्ञान विषै उपयोग निरतर रहै, तौ काहेकौ अन्य विकल्प करने । तहा ही स्वरूपानदसुधारस का स्वादी होइ सतुष्ट होना । परन्तु नीचली अवस्था विषै तहा निरन्तर उपयोग रहै नाही । उपयोग अनेक अवलबनि कौ चाहै है । तातै जिस काल तहा उपयोग न लागै, तब गुणस्थानादि विशेष जानने का अभ्यास करना ।

बहुरि तै कह्या कि - अध्यात्मशास्त्रनि का ही अभ्यास करना, सो युक्त ही है । परन्तु तहा भेदविज्ञान करने के अर्थि स्व-पर का सामान्यपनै स्वरूप निरूपण है । अर विशेष ज्ञान बिना सामान्य का जानना स्पष्ट होइ नाही । तातै जीव के अर कर्म के विशेष नीकै जानै ही स्व-पर का जानना स्पष्ट हो है । तिस विशेष जानने कौ इस शास्त्र का अभ्यास करना । जातै सामान्य शास्त्र तै विशेप शास्त्र बलवान है । सो ही कह्या है– "**सामान्यशास्त्रतो नून विशेषो बलवान् भवेत् ।**"

इहा वह कहै है कि – अध्यात्मशास्त्रनि विषै तौ गुणस्थानादि विशेषनिकरि रहित शुद्धस्वरूप का अनुभवना उपादेय कह्या है । इहा गुणस्थानादि सहित जीव का वर्णन है । तातै अध्यात्मशास्त्र अर इस शास्त्र विषै तौ विरुद्ध भासै है, सो कैसै है ?

ताकौ कहिये है नय दोय प्रकार है – एक निश्चय, एक व्यवहार । तहा निश्चयनय करि जीव का स्वरूप गुणस्थानादि विशेष रहित अभेद वस्तु मात्र ही है । अर व्यवहारनय करि गुणस्थानादि विशेष संयुक्त अनेक प्रकार है । तहा जे जीव सर्वोत्कृष्ट, अभेद, एक स्वभाव कौ अनुभवै है, तिनकौ तौ तहा शुद्ध उपदेश रूप जो शुद्ध निश्चयनय, सो ही कार्यकारी है ।

बहुरि जे स्वानुभव दशा कौं न प्राप्त भए, वा स्वानुभवदशा तै छूटि सविकल्प दशा कौ प्राप्त भए ऐसे अनुत्कृष्ट जो अशुद्ध स्वभाव, तिहि विषै तिष्ठते जीव, तिनकौ व्यवहारनय प्रयोजनवान है। सोई आत्मख्याति अध्यात्मशास्त्र विषै कह्या है–

सुद्धो सुद्धादेसो, णादव्वो परमभावदरसीहिं।
ववहारदेसिदो पुण जे दु अपरमेट्ठिदा भावे ॥[1]

इस सूत्र की व्याख्या का अर्थ विचारि देखना।

(बहुरि सुनि! तेरे परिणाम स्वरूपानुभव दशा विषै तौ प्रवर्तै नाही। अर विकल्प जानि गुणस्थानादि भेदनि का विचार न करैगा तौ तू इतो भ्रष्ट ततो भ्रष्ट होय अशुभोपयोग ही (विषै) प्रवर्त्तैगा, तहा तेरा बुरा होयगा)।

बहुरि सुनि! (सामान्यपनै तौ वेदात आदि शास्त्राभासनि विषै भी जीव का स्वरूप शुद्ध कहै हैं, तहा विशेष जानै विना यथार्थ-अयथार्थ का निश्चय कैसै होय? तातै गुणस्थानादि विशेष जानै जीव की शुद्ध, अशुद्ध, मिश्र अवस्था का ज्ञान होइ, तब निर्णय करि यथार्थ का अगीकार करै। **बहुरि सुनि! जीव का गुण ज्ञान है, सो विशेष जानै आत्मगुण प्रकट होइ, अपना श्रद्धान भी दृढ होय। जैसै सम्यक्त्व है, सो केवलज्ञान भए परमावगाढ नाम पावै है।** तातै विशेष जानना।

बहुरि वह कहै है – तुम कह्या सो सत्य, परतु करणानुयोग तै विशेष जानै भी द्रव्यलिगी मुनि अध्यात्म श्रद्धान विना ससारी ही रहै। अर अध्यात्म अनुसारि तिर्यंचादिक कै स्तोक श्रद्धान तै भी सम्यक्त्व हो है। वा तुषमाष भिन्न इतना ही श्रद्धान तै शिवभूति मुनि मुक्त भया। तातै हमारी तौ बुद्धि तै विशेष विकल्पनि का साधन होता नाही। प्रयोजनमात्र अध्यात्म अभ्यास करेगे।

याकौं कहिये है –(जो द्रव्यलिगी जैसै करणानुयोग तै विशेष जानै है, तैसै अध्यात्म-शास्त्रनि का भी ज्ञान वाकै होय, परतु मिथ्यात्व के उदय तै अयथार्थ साधन करै तौ शास्त्र कहा करै? शास्त्रनि विषै तौ परस्पर विरुद्ध है नाही। कैसै? सो कहिये है – करणानुयोगशास्त्रनि विषै भी अर अध्यात्मशास्त्रनि विषै भी रागादिक भाव आत्मा के कर्म निमित्त तै उपजे कहे। द्रव्यलिगी तिनका आप कर्त्ता हुवा प्रवर्तै है। बहुरि शरीराश्रित सर्व शुभाशुभ क्रिया पुद्गलमय कही। द्रव्यलिंगी अपनी जानि तिनविषै त्यजन, ग्रहण बुद्धि करै है। बहुरि सर्व ही शुभाशुभ भाव, आस्रव बध के कारण कहे। द्रव्यलिगी शुभभावन को सवर, निर्जरा, मोक्ष का कारण मानै है। बहुरि

१ समयसार, गाथा १२

शुद्धभाव संवर, निर्जरा, मोक्ष का कारण कह्या, ताकौं द्रव्यलिंगी पहिचानै ही नाही। बहुरि शुद्धात्मस्वरूप मोक्ष कह्या, ताका द्रव्यलिंगी के यथार्थ ज्ञान नाही। ऐसें अन्यथा साधन करै तौ शास्त्रनि का कहा दोष है ?

बहुरि तै तिर्यंचादिक कै सामान्य श्रद्धान तै कार्यसिद्धि कही, सो उनकै भी अपना क्षयोपशम अनुसारि विशेष का जानना हो है। अथवा पूर्व पर्यायनि विषै विशेष का अभ्यास कीया था, तिस संस्कार के बल तै हो है। बहुरि जैसैं काहूनें कहीं गड्या धन पाया, सो हम भी ऐसें ही पावैंगे, ऐसा मानि सब ही कौं व्यापारादिक का त्यजन न करना। तैसैं काहूनै स्तोक श्रद्धान तै ही कार्य सिद्ध किया तो हम भी ऐसैं ही कार्य सिद्धि करैंगे – ऐसैं मानि सर्व ही कौ विशेष अभ्यास का त्यजन करना योग्य नाही, जातै यहु राजमार्ग नाही। **राजमार्ग तौ यहु ही है – नानाप्रकार विशेष जानि तत्त्वनि का निर्णय भए ही कार्यसिद्धि हो है।**

बहुरि तै कह्या, मेरी बुद्धि तै विकल्पसाधन होता नाही, सो जेता बनै तेता ही अभ्यास कर। बहुरि तू पापकार्य विषै तौ प्रवीण, अर इस अभ्यास विषै कहै मेरी बुद्धि नाही, सो यहु तौ पापी का लक्षण है।

ऐसैं द्रव्यानुयोग का पक्षपाती कौं इस शास्त्र का अभ्यास विषै सन्मुख कीया।

अब अन्य विपरीत विचारवालों कौं समझाइए है।

तहां शब्द-शास्त्रादिक का पक्षपाती बोलै है कि – व्याकरण, न्याय, कोश, छंद, अलंकार, काव्यादिक ग्रंथनि का अभ्यास करिए तो अनेक ग्रंथनि का स्वयमेव ज्ञान होय वा पंडितपना प्रगट होय। अर इस शास्त्र के अभ्यास तै तो एक याही का ज्ञान होय वा पंडितपना विशेष प्रकट न होय, तातै शब्द-शास्त्रादिक का अभ्यास करना।

ताकौं कहिये है – जो तू लोक विषै ही पंडित कहाया चाहै है तौ तू तिन ही का अभ्यास किया करि। अर जो अपना कार्य किया चाहै है तो ऐसे जैनग्रन्थनि का अभ्यास करना ही योग्य है। बहुरि जैनी तौ जीवादिक तत्त्वनि के निरूपक जे जैनग्रन्थ तिन ही का अभ्यास भए पंडित मानैंगे।

बहुरि वह कहै है कि – मैं जैनग्रंथनि का विशेष ज्ञान होने ही के अर्थि व्याकरणादिकनि का अभ्यास करौं हौं।

ताकौं कहिए है – ऐसैं है तो भलै ही है, परंतु इतना है जैसैं स्याना खितहर अपनी शक्ति अनुसारि हलादिक तै थोडा बहुत खेत कौं संवारि समय विषै बीज

बोवै तौ ताकौ फल की प्राप्ति होइ । वैसे तू भी जो अपनी शक्ति अनुसारि व्याकरणादिक का अभ्यास तै थोरी बहुत बुद्धि कौं संवारि यावत् मनुष्य पर्याय वा इंद्रियनि की प्रबलता इत्यादिक वर्तै है, तावत् समय विषै तत्त्वज्ञान कौं कारण जे शास्त्र, तिनिका अभ्यास करेगा तौ तुझकौं सम्यक्त्वादि की प्राप्ति होयगी ।

बहुरि जैसे अयाना खितहर हलादिक तै खेत कौ सवारता सवारता ही समय कौ खोवै, तौ ताकौ फलप्राप्ति होने की नाही, वृथा ही खेदखिन्न भया । तैसे तू भी जो व्याकरणादिक तै बुद्धि कौ सवारता सवारता ही समय खोवैगा तौ सम्यक्त्वादिक की प्राप्ति होने की नाही । वृथा ही खेदखिन्न भया । बहुरि इस काल विषै आयु बुद्धि आदि स्तोक है, तातै प्रयोजनमात्र अभ्यास करना, शास्त्रनि का तौ पार है नाही । बहुरि सुनि ! केई जीव व्याकरणादिक का ज्ञानविना भी तत्त्वोपदेशरूप भाषा शास्त्रनि करि, वा उपदेश सुनने करि, वा सीखने करि तत्त्वज्ञानी होते देखिये हैं । अर केई जीव केवल व्याकरणादिक का ही अभ्यास विषै जन्म गमावै है, अर तत्त्वज्ञानी न होते देखिये है ।

बहुरि सुनि ! व्याकरणादिक का अभ्यास करने तै पुण्य न उपजै है । धर्मार्थी होइ तिनका अभ्यास करै तौ किंचित् पुण्य उपजै । बहुरि तत्त्वोपदेशक शास्त्रनि का अभ्यास तै सातिशय महत् पुण्य उपजै है । तातै भला यहु है – असे तत्त्वोपदेशक शास्त्रानि का अभ्यास करना । ऐसे शब्द शास्त्रादिक का पक्षपाती कौ सन्मुख किया ।

बहुरि अर्थ का पक्षपाती कहै है कि - इस शास्त्र का अभ्यास किए कहा है ? सर्व कार्य धन तै बनै है, धन करि ही प्रभावना आदि धर्म निपजै है । धनवान के निकट अनेक पंडित आनि (आय) प्राप्त होइ । अन्य भी सर्वकार्यसिद्धि होइ । तातै धन उपजावने का उद्यम करना ।

ताकौ कहिए है - रे पापी ! धन किछू अपना उपजाया तौ न हो है । भाग्य तै हो है, सो ग्रथाभ्यास आदि धर्म साधन तै जो पुण्य निपजै, ताही का नाम भाग्य है । बहुरि धन होना है तौ शास्त्राभ्यास किए कैसे न होगा ? अर न होना है तौ शास्त्राभ्यास न किए कैसे होगा ? तातै धन का होना, न होना तौ उदयाधीन है । शास्त्राभ्यास विषै काहे कौ शिथिल हूजै । बहुरि सुनि ! धन है सो तौ विनाशीक है, भय सयुक्त है, पाप तै निपजै है, नरकादिक का कारण है ।

अर यहु शास्त्राभ्यासरूप ज्ञानधन है सो अविनाशी है, भय रहित है, धर्मरूप है, स्वर्ग मोक्ष का कारण है। सो महत पुरुष तौ धनकादिक कौ छोडि शास्त्राभ्यास विषै लगै है। तू पापी शास्त्राभ्यास कौ छुडाय धन उपजावने की बडाई करै है, सो तू अनत ससारी है।

बहुरि तै कह्या - प्रभावना आदि धर्म भी धन ही तै हो है। सो प्रभावना आदि धर्म है सो किंचित् सावद्य क्रिया संयुक्त है। तिसतै समस्त सावद्य रहित शास्त्राभ्यास रूप धर्म है, सो प्रधान है। ऐसै न होइ तौ गृहस्थ अवस्था विषै प्रभावना आदि धर्म साधते थे, तिनि कौ छाडि सजमी होइ शास्त्राभ्यास विषै काहे को लागै है? बहुरि शास्त्राभ्यास तै प्रभावनादिक भी विशेष हो है।

बहुरि तै कह्या - धनवान के निकट पडित भी आनि प्राप्त होइ। सो लोभी पडित होइ, अर अविवेकी धनवान होइ तहा ऐसै हो है। अर शास्त्राभ्यासवालौ की तौ इद्रादिक सेवा करै है। इहा भी बडे बडे महत पुरुष दास होते देखिए है। तातै शास्त्राभ्यासवालौ तै धनवान कौ महत मति जानै।

बहुरि तै कह्या – धन तै सर्व कार्यसिद्धि हो है। सो धन तै तौ इस लोक सबधी किछू विषयादिक कार्य ऐसा सिद्ध होइ, जातै बहुत काल पर्यंत नरकादि दुःख सहने होइ। अर शास्त्राभ्यास तै ऐसा कार्य सिद्ध हो है जातै इहलोक विषै अर परलोक विषै अनेक सुखनि की परपरा पाइए। तातै धन उपजावने का विकल्प छोडि शास्त्राभ्यास करना। अर जो सर्वथा ऐसै न बनै तौ सतोष लिए धन उपजावने का साधनकरि शास्त्राभ्यास विषै तत्पर रहना। ऐसै अर्थ उपजावने का पक्षपाती कौ सन्मुख किया।

बहुरि कामभोगादिक का पक्षपाती बोलै है कि - शास्त्राभ्यास करने विषै सुख नाही, बडाई नाही। तातै जिन करि इहा ही सुख उपजै ऐसे जे स्त्रीसेवना, खाना, पहिरना, इत्यादि विषय, तिनका सेवन करिए। अथवा जिन करि यहा ही बडाई होइ ऐसे विवाहादिक कार्य करिए।

ताकौ कहिए है – विषयजनित जो सुख है सो दुःख ही है। जातै विषय सुख है, सो परनिमित्त तै हो है। पहिले, पीछै, तत्काल आकुलता लिए है, जाके नाश होने के अनेक कारण पाइए है। आगामी नरकादि दुर्गति कौ प्राप्त करणहारा है। ऐसा है तौ भी तेरा चाह्या मिलै नाही, पूर्व पुण्य तै हो है, तातै विषम है। जैसे खाजि करि पीड़ित पुरुष अपना अग कौ कठोर वस्तु तै खुजावै, तैसे इद्रियनि करि

पीडित जीव, तिनकी पीडा सही न जाय तब किंचिन्मात्र तिस पीडा के प्रतिकार से भासै – ऐसै जे विषयसुख तिन विषै झपापात लेवै है, परमार्थरूप सुख है नाही ।

बहुरि **शास्त्राभ्यास करनेतै भया जो सम्यग्ज्ञान, ताकरि निपज्या जो आनन्द, सो सांचा सुख है । जातै सो सुख स्वाधीन है, आकुलता रहित है, काहू करि नष्ट न हो है, मोक्ष का कारण है, विषम नाहीं ।** जैसे खाजि न पीडै, तब सहज ही सुखी होइ, तैसे तहा इद्रिय पीडने कौ समर्थ न होइ, तब सहज ही, सुख कौ प्राप्त हो है । तातै विषय सुख छोडि शास्त्राभ्यास करना । (जो) सर्वथा न छूटे तौ जेता बनै तेता छोडि, शास्त्राभ्यास विषै तत्पर रहना ।

बहुरि तै विवाहादिक कार्य विषै वडाई होने की कही, सो केतेक दिन वड़ाई रहेगी ? जाकै अर्थि महापापारभ करि नरकादि विषै बहुतकाल दुःख भोगना होइगा । अथवा तुझ तै भी तिन कार्यनि विषै धन लगावनेवाले बहुत है, तातै विशेष वडाई भी होने की नाही ।

बहुरि शास्त्राभ्यास तै ऐसी वडाई हो है, जाकी सर्वजन महिमा करे, इद्रादिक भी प्रशसा करै अर परपरा स्वर्ग मुक्ति का कारण है । तातै विवाहादिक कार्यनि का विकल्प छोडि, शास्त्राभ्यास का उद्यम राखना । सर्वथा न छूटै तो बहुत विकल्प न करना । ऐसै काम भोगादिक का पक्षपाती कौ शास्त्राभ्यास विषै सन्मुख किया । या प्रकार अन्य जीव भी जे विपरीत विचार तै इस ग्रथ अभ्यास विषै अरुचि प्रगट करै, तिनकौ यथार्थ विचार तै इस शास्त्र के अभ्यास विषै सन्मुख होना योग्य है ।

इहा अन्यमती कहै हैं कि – तुम अपने ही शास्त्र अभ्यास करने कौ दृढ किया । हमारे मत विषै नाना युक्ति आदि करि सयुक्त शास्त्र हैं, तिनका भी अभ्यास क्यो न कराइए ?

ताकौं कहिए है – तुमारे मत के शास्त्रनि विषै आत्महित का उपदेश नाही । जातै कही शृगार का, कही युद्ध का, कही काम सेवनादि का, कही हिंसादि का कथन है । सो ए तौ बिना ही उपदेश सहज ही बनि रहे है । इनकौ तजे हित होई, ते तहा उलटे पोषे हैं, तातै तिनतै हित कैसे होइ ?

तहा वह कहै है – ईश्वरनै असै लीला करी है, ताकौं गावै है, तिसतै भला हो है ।

तहां कहिये है – जो ईश्वर कै सहज सुख न होगा, तब ससारीवत् लीला करि सुखी भया । जो (वह) सहज सुखी होता तौ काहेकौं विषयादि सेवन वा

युद्धादिक करता ? जातै मदबुद्धि हू बिना प्रयोजन किंचिन्मात्र भी कार्य न करै। तातै जानिए है – वह ईश्वर हम सारिखा ही है, ताका जस गाए कहा सिद्धि है ?

बहुरि वह कहै है कि – हमारे शास्त्रनि विषै वैराग्य, त्याग, अहिंसादिक का भी तौ उपदेश है।

तहां कहिए है – सो उपदेश पूर्वापर विरोध लिए है। कही विषय पोषे है, कही निषेधे है। कही वैराग्य दिखाय, पीछै हिंसादि का करना पोष्या है। तहा वातुलवचनवत् प्रमाण कहा ?

बहुरि वह कहै है कि वेदात आदि शास्त्रनि विषै तो तत्त्व ही का निरूपण है।

तहां कहिए है – सो निरूपण प्रमाण करि बाधित, अयथार्थ है। ताका निराकरण जैन के न्यायशास्त्रनि विषै किया है, सो जानना। तातै अन्यमत के शास्त्रनि का अभ्यास न करना।

ऐसै जीवनि कौ इस शास्त्र के अभ्यास विषै सन्मुख किया, तिनकौ कहिए है–

हे भव्य ! शास्त्राभ्यास के अनेक अग हैं। शब्द का वा अर्थ का वाचना, या सीखना, सिखावना, उपदेश देना, विचारना, सुनना, प्रश्न करना, समाधान जानना, बार बार चरचा करना, इत्यादि अनेक अग है। तहा जैसै बनै तैसै अभ्यास करना। जो सर्व शास्त्र का अभ्यास न बनै तौ इस शास्त्र विषै सुगम वा दुर्गम अनेक अर्थनि का निरूपण है। तहा जिसका बनै तिसही का अभ्यास करना। परतु अभ्यास विषै आलसी न होना।

देखो ! शास्त्राभ्यासकी महिमा, जाकौं होतै परंपरा आत्मानुभव दशा कौं प्राप्त होइ – सो मोक्ष रूप फल निपजै है, सो तौ दूर ही तिष्ठौ। शास्त्राभ्यास तै तत्काल ही इतने गुण हो है। १ क्रोधादि कषायनि की तौ मदता हो है। २ पचइद्रियनि की विषयनि विषै प्रवृत्ति रुकै है। ३. अति चचल मन भी एकाग्र हो है। ४ हिंसादि पच पाप न प्रवर्तै है। ५ स्तोक ज्ञान होतै भी त्रिलोक के त्रिकाल सबधी चराचर पदार्थनि का जानना हौ है। ६ हेयोपादेय की पहिचान हो है। ७ आतमज्ञान सन्मुख हो है (ज्ञान आतमसन्मुख हो है)। ८ अधिक-अधिक ज्ञान होतै आनद निपजै है। ९ लोकविषै महिमा, यश विशेष हो है। १०. सातिशय पुण्य का बध हो है – इत्यादिक गुण शास्त्राभ्यास करतै तत्काल ही प्रगट होई है।

तातै शास्त्राभ्यास अवश्य करना। बहुरि हे भव्य! शास्त्राभ्यास करने का समय पावना महादुर्लभ है। काहे तै? सो कहिए है—

एकेंद्रियादि असज्ञी पर्यंत जीवनिकै तौ मन ही नाही। अर नारकी वेदना पीडित, तिर्यंच विवेक रहित, देव विषयासक्त, तातै मनुष्यनि कै अनेक सामग्री मिले शास्त्राभ्यास होइ। सो मनुष्य पर्याय का पावना ही द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव करि महादुर्लभ है।

तहा द्रव्य करि लोक विषै मनुष्य जीव बहुत थोरे हैं, तुच्छ सख्यात मात्र ही हैं। अर अन्य जीवनि विषै निगोदिया अनत है, और जीव असख्याते हैं।

बहुरि क्षेत्र करि मनुष्यनि का क्षेत्र बहुत स्तोक है, अढाई द्वीप मात्र ही है। अर अन्य जीवनि विषै एकेंद्रिनि का सर्व लोक है, औरनिका केते इक राजू प्रमाण है। बहुरि काल करि मनुष्य पर्याय विषै उत्कृष्ट रहने का काल स्तोक है, कर्मभूमि अपेक्षा पृथक्त्व कोटि पूर्व मात्र ही है। अर अन्य पर्यायनि विषै उत्कृष्ट रहने का काल – एकेंद्रिय विषै तो असख्यात पुद्गल परिवर्तन मात्र, अर और विषै सख्यातपल्य मात्र है।

बहुरि भाव करि तीव्र शुभाशुभपना करि रहित ऐसे मनुष्य पर्याय कौं कारण परिणाम होने अति दुर्लभ है। अन्य पर्याय कौ कारण अशुभरूप वा शुभरूप परिणाम होने सुलभ है। ऐसै शास्त्राभ्यास का कारण जो पर्याप्त कर्मभूमिया मनुष्य पर्याय, ताका दुर्लभपना जानना।

(तहा सुवास, उच्चकुल, पूर्णआयु, इद्रियनि की सामर्थ्य, नीरोगपना, सुसगति, धर्मरूप अभिप्राय, बुद्धि की प्रबलता इत्यादिक का पावना उत्तरोत्तर महादुर्लभ है)। सो प्रत्यक्ष देखिए है। अर इतनी सामग्री मिले बिना ग्रथाभ्यास बनै नाही। सो तुम भाग्यकरि यहु अवसर पाया है। तातै तुमकौ हठ करि भी तुमारे हित होने के अर्थि प्रेरै है। जैसै बनै तैसै इस शास्त्र का अभ्यास करो। बहुरि अन्य जीवनि कौ जैसै बनै तैसै शास्त्राभ्यास करावौ। बहुरि जे जीव शास्त्राभ्यास करते होइ, तिनकी अनुमोदना करहु। बहुरि पुस्तक लिखावना, वा पढने, पढावनेवालो की स्थिरता करनी, इत्यादिक शास्त्राभ्यास कौ बाह्यकारण, तिनका साधन करना। जातै इनकरि भी परपरा कार्यसिद्धि हो है वा महत्पुण्य उपजै है।

ऐसै इस शास्त्र का अभ्यासादि विषै जीवनि कौ रुचिवान किया।

—❀—

गोम्मटसार जीवकाण्ड सम्बन्धी प्रकरण

बहुरि जो यहु **सम्यग्ज्ञानचंद्रिका** नामा भाषा टीका, तिहिविषै संस्कृत टीका तै कही अर्थ प्रकट करने के अर्थि, वा कही प्रसंगरूप, वा कही अन्य ग्रथ का अनुसारि लेइ अधिक भी कथन करियेगा। अर कही अर्थ स्पष्ट न प्रतिभासैगा, तहा न्यून कथन होइगा ऐसा जानना । सो इस भापा टीका विषै मुख्यपनै जो-जो मुख्य व्याख्यान है, ताकौ अनुक्रमतै सक्षेपता करि कहिए है । जातै याके जानै अभ्यास करने-वालौ कै सामान्यपनै इतना तौ जानना होइ जो या विपै ऐसा कथन है । अर क्रम जानै जिस व्याख्यान कौ जानना होइ, ताकौ तहा शीघ्र अवलोकि अभ्यास करै, वा जिनने अभ्यास किया होइ, ते याकौ देखि अर्थ का स्मरण करै, सो सर्व अर्थ की सूचनिका कीए तौ विस्तार होई, कथन आगै है ही, तातै मुख्य कथन की सूचनिका क्रम तै करिए है ।

तहाँ इस भाषा टीका विषै सूचनिका करि कर्माष्टक आदि गणित का स्वरूप दिखाइ सस्कृत टीका के अनुसारि मंगलाचरणादि का स्वरूप कहि मूल गाथानि की टीका कीजिएगा । तहा इस शास्त्र विषै दोय महा अधिकार है – एक जीवकाड, एक कर्मकाड । तहा जीवकांड विषै बाईस अधिकार है ।

तिनिविषै **प्रथम गुणस्थानाधिकार** है । तिस विपै गुणस्थाननि का नाम, वा सामान्य लक्षण कहि तिनिविषै सम्यक्त्व, चारित्र अपेक्षा औदयिकादि सभवते भावनि का निरूपण करि क्रम तै मिथ्यादृष्टि आदि गुणस्थाननि का वर्णन है । तहा मिथ्यादृष्टि विषै पच मिथ्यात्वादि का सासादन विषै ताके काल वा स्वरूप का, मिश्र विषै ताके स्वरूप का वा मरण न होने का, असयत विषै वेदकादि सम्यक्त्वनि का वा ताके स्वरूपादिक का, देश सयत विषै ताके स्वरूप का वर्णन है । बहुरि प्रमत्त का कथन विषै ताके स्वरूप का अर पद्रह वा अस्सी वा साढे सैतीस हजार प्रमाद भेदनि का अर तहा प्रसग पाइ संख्या, प्रस्तार, परिवर्तन, नष्ट, समुद्दिष्ट करि वा गूढ यत्र करि अक्षसचार विधान का कथन है । जहा भेदनि कौ पलटि पलटि परस्पर लगाइए तहा अक्षसचार विधान हो है । बहुरि अप्रमत्त का कथन विषै स्वस्थान अर-सातिशय दोय भेद कहि, सातिशय अप्रमत्त कै अध करण हो है, ताके स्वरूप वा काल वा परिणाम वा समय-समय सबधी परिणाम वा एक-एक समय विषै अनुकृष्टि विधान, वा तहा सभवते च्यारि आवश्यक इत्यादिक का विशेष वर्णन है । तहा प्रसग पाइ श्रेणी व्यवहार रूप गणित का कथन है । तिसविषै सर्वधन, उत्तरधन, मुख,

भूमि, चय, गच्छ इत्यादि सज्ञानि का स्वरूप वा प्रमाण ल्यावने कौ करणसूत्रनि का वर्णन है। बहुरि अपूर्वकरण का कथन विषै ताके काल, स्वरूप, परिणाम, समय-समय सबधी परिणामादिक का कथन है। बहुरि अनिवृत्तिकरण का कथन विषै ताके स्वरूपादिक का कथन है। बहुरि सूक्ष्मसापराय का कथन विषै प्रसग पाइ कर्मप्रकृतिनि के अनुभाग अपेक्षा अविभागप्रतिच्छेद, वर्ग, वर्गणा, स्पर्द्धक, गुणहानि, नाना-गुणहानिनि का अर पूर्वस्पर्द्धक, अपूर्वस्पर्धक, बादरकृष्टि, सूक्ष्मकृष्टि का वर्णन है। इत्यादि विशेष कथन है सो जानना। बहुरि उपशातकषाय, क्षीणकपाय का कथन विषै तिनके दृष्टातपूर्वक स्वरूप का, सयोगी जिन का कथन विषै नव केवललब्धि आदिक का, अयोगी विषै शैलेश्यपना आदिक का कथन है। ग्यारह गुणस्थाननि विषै गुणश्रेणी निर्जरा का कथन है। तहा द्रव्य कौ अपकर्षण करि उपरितन स्थिति अर गुणश्रेणी आयाम अर उदयावली विपै जैसे दीजिए है, ताका वा गुणश्रेणी आयाम के प्रमाण का निरूपण है। तहा प्रसग पाइ अतर्मुहूर्त के भेदनि का वर्णन है। बहुरि सिद्धनि का वर्णन है।

बहुरि दूसरा जीवसमास अधिकार विषै – जीवसमास का अर्थ वा होने का विधान कहि चौदह, उगणीस, वा सत्तावन, जीवसमासनि का वर्णन है। बहुरि च्यारि प्रकारि जीवसमास कहि, तहा स्थानभेद विषै एक आदि उगणीस पर्यंत जीवस्थाननि का, वा इन ही के पर्याप्तादि भेद करि स्थाननि का वा अठ्याणवै वा च्यारि सै छह जीवसमासनि का कथन है। बहुरि योनि भेद विपै शखावर्तादि तीन प्रकार योनि का, अर सम्मूर्च्छनादि जन्म भेद पूर्वक नव प्रकार योनि के स्वरूप वा स्वामित्व का अर चौरासी लक्ष योनि का वर्णन है। तहा प्रसग पाइ च्यारि गतिनि विषै सम्मूर्च्छनादि जन्म वा पुरुषादि वेद सभवै, तिनका निरूपण है। बहुरि अवगाहना भेद विषै सूक्ष्मनिगोद अपर्याप्त आदि जीवनि की जघन्य, उत्कृष्ट शरीर की अवगाहना का विशेष वर्णन है। तहा एकेंद्रियादिक की उत्कृष्ट अवगाहना कहने का प्रसग पाइ गोलक्षेत्र, सखक्षेत्र, आयत, चतुरस्रक्षेत्र का क्षेत्रफल करने का, अर अवगाहना विषै प्रदेशनि की वृद्धि जानने के अर्थि अनतभाग आदि चतु स्थानपतित वृद्धि का, अर इस प्रसग तै दृष्टातपूर्वक षट्स्थानपतित आदि वृद्धि-हानि का, सर्व अवगाहना भेद जानने के अर्थि मत्स्यरचना का वर्णन है। बहुरि कुल भेद विषै एक सौ साढा निण्याणवै लाख कोडि कुलनि का वर्णन है।

बहुरि तीसरा पर्याप्त नामा अधिकार विषै – पहलै मान का वर्णन है। तहा लौकिक-अलौकिक मान के भेद कहि। बहुरि द्रव्यमान के दोय भेदनि विषै, सख्या

मान विषै सख्यात, असख्यात, अनत के इकईस भेदनि का वर्णन है । बहुरि सख्या के विशेष रूप चौदह धारानि का कथन है। तिनि विषै द्विरूपवर्गधारा, द्विरूपघनधारा द्विरूपघनाघनधारानि कै स्थाननि विषै जे पाइए हैं, तिनका विशेष वर्णन है । तहां प्रसग पाइ पणट्ठी, बादाल, एकट्ठी का प्रमाण, अर वर्गशलाका, अर्धच्छेदनि का स्वरूप, वा अविभागप्रतिच्छेद का स्वरूप, वा उक्तम् च गाथानि करि अर्धच्छेदादिक के प्रमाण होनें का नियम, वा अग्निकायिक जीवनि का प्रमाण ल्यावने का विधान इत्यादिकनि का वर्णन है । बहुरि दूसरा उपमा मान के पल्य आदि आठ भेदनि का वर्णन है। तहा प्रसंग पाइ व्यवहारपल्य के रोमनि की संख्या ल्यावने कौ परमाणू तै लगाय अंगुल पर्यंत अनुक्रम का, अर तीन प्रकार अंगुल का, अर जिस जिस अगुल करि जाका प्रमाण वर्णिए ताका, अर गोलगर्त के क्षेत्रफल ल्यावने का वर्णन है । अर उद्धारपल्य करि द्वीप-समुद्रनि की संख्या ल्याइए है । अद्धापल्य करि आयु आदि वर्णिए है, ताका वर्णन है । अर सागर की सार्थिक सज्ञा जानने कौ, लवण समुद्र का क्षेत्रफल कौ आदि देकर वर्णन है । अर सूच्यंगुल, प्रतरागुल, घनागुल, जगत्श्रेणी, जगत्-प्रतर, (जगत्घन) लोकनि का प्रमाण ल्यावने कौ विरलन आदि विधान का वर्णन है । बहुरि पल्यादिक की वर्गशलाका अरु अर्धच्छेदनि का प्रमाण वर्णन है । तिनिके प्रमाण जानने कौं उक्तम् च गाथा रूप करणसूत्रनि का कथन है । बहुरि पीछै पर्याप्ति प्ररूपणा है । तहा पर्याप्ति, अपर्याप्ति के लक्षण का, अर छह पर्याप्तिनि के नाम का, स्वरूप का, प्रारभ सपूर्ण होने के काल का, स्वामित्व का वर्णन है । बहुरि लब्धिअपर्याप्त का लक्षण, वा ताके निरतर क्षुद्रभवनि के प्रमाणादिक का वर्णन है । तहा ही प्रसग पाइ प्रमाण, फल, इच्छारूप त्रैराशिक गणित का कथन है । बहुरि सयोगी जिन कै अपर्याप्तपना सभवने का, अर लब्धि अपर्याप्त, निर्वृति अपर्याप्त, पर्याप्त के संभवते गुणस्थाननि का वर्णन है ।

बहुरि चौथा प्राणाधिकार विषै – प्राणनि का लक्षण, अर भेद, अर कारण अर स्वामित्व का कथन है ।

बहुरि पाँचमां संज्ञा अधिकार विषै – च्यारि सज्ञानि का स्वरूप, अर भेद, अर कारण, अर स्वामित्व का वर्णन है ।

बहुरि छट्ठा मार्गणा महा अधिकार विषै – मार्गणा की निरुक्ति का, अर चोदह भेदनि का, अर सातर मार्गणा के अतराल का, अर प्रसग पाइ तत्त्वार्थसूत्र टीका के अनुसारि नाना जीव, एक जीव अपेक्षा गुणस्थाननि विषै, अर गुणस्थान

अपेक्षा लिऐ मार्गणानि विषै काल का, अर अतर का कथन करि छट्ठा गति मार्गणा अधिकार है। तहा गति के लक्षण का, अर भेदनि का अर च्यारि भेदनि के निरुक्ति लिए लक्षणनि का, अर पाँच प्रकार तिर्यंच, च्यारि प्रकार मनुष्यनि का अर सिद्धनि का वर्णन है। बहुरि सामान्य नारकी, जुदे-जुदे सात पृथ्वीनि के नारकी, अर पाँच प्रकार तिर्यच, च्यारि प्रकार मनुष्य, अर व्यतर, ज्योतिषी, भवनवासी, सौधर्मादिक देव, सामान्य देवराशि इन जीवनि की सख्या का वर्णन है। तहा पर्याप्त मनुष्यनि की सख्या कहने का प्रसग पाइ "**कटपयपुरस्थवर्णै**" इत्यादि सूत्र करि ककारादि अक्षररूप अक वा बिंदी की सख्या का वर्णन है।

बहुरि सातमां इंद्रियमार्गणा अधिकार विषै – इद्रियनि का निरुक्ति लिए लक्षण का, अर-लब्धि उपयोगरूप भावेद्रिय का, अर वाह्य अभ्यन्तर भेद लिए निवृत्ति-उपकरणरूप द्रव्येन्द्रिय का, अर इन्द्रियनि के स्वामी का, अर तिनके विषयभूत क्षेत्र का, अर तहा प्रसग पाइ सूर्य के चार क्षेत्रादिक का अर इद्रियनि के आकार का वा अवगाहना का, अर अतीद्रिय जीवनि का वर्णन है। बहुरि एकेन्द्रियादिकनि का उदाहरण रूप नाम कहि, तिनकी सामान्य सख्या का वर्णन करि, विशेषपने सामान्य एकेन्द्री, अर सूक्ष्म बादर एकेद्री, बहुरि सामान्य त्रस, अर बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइद्रिय, पचेन्द्रिय इन जीवनि का प्रमाण, अर इन विषै पर्याप्त-अपर्याप्त जीवनि का प्रमाण वर्णन है।

बहुरि आठमा कायमार्गणा अधिकार विषै – काय के लक्षण का वा भेदनि का वर्णन है। बहुरि पच स्थावरनि के नाम, अर काय, कायिक जीवरूप भेद, अर-बादर, सूक्ष्मपने का लक्षणादि, अर शरीर की अवगाहना का वर्णन है।

बहुरि वनस्पती के साधारण-प्रत्येक भेदनि का, प्रत्येक के सप्रतिष्ठित-अप्रतिष्ठित भेदनि का, अर तिनकी अवगावहना का अर एक स्कध विषै तिनके शरीरनि के प्रमाण का, अर योनीभूत बीज विषै जीव उपजने का, वा तहा सप्रतिष्ठित-अप्रतिष्ठित होने के काल का, अर प्रत्येक वनस्पती विषै सप्रतिष्ठित-अप्रतिष्ठित जानने कौ तिनके लक्षण का, बहुरि साधारण वनस्पती निगोदरूप तहा जीवनि के उपजने, पर्याप्ति धरने, मरने के विधान का, अर निगोद शरीर की उत्कृष्ट स्थिति का, अर स्कध, अडर, पुलवी, आवास, देह, जीव इनके लक्षण प्रमाणादिक का अर नित्यनिगोदादि के स्वरूप का वर्णन है। बहुरि त्रस जीवनि का अर तिनके क्षेत्र का वर्णन है। बहुरि वनस्पतीवत् औरनि के शरीर विषै सप्रतिष्ठित-अप्रतिष्ठितपने का, अर स्थावर, त्रस

जीवनि के आकार का, अर काय सहित, काय रहित जीवनि का वर्णन है। बहुरि अग्नि, पृथ्वी, अप्, वात, प्रतिष्ठित-अप्रतिष्ठित प्रत्येक-साधारण वनस्पती जीवनि की, अर तिनविषै सूक्ष्म-बादर जीवनि की, अर तिनविषै भी पर्याप्त-अपर्याप्त जीवनि की संख्या का वर्णन है। तहा प्रसंग पाइ पृथ्वी आदि जीवनि की उत्कृष्ट आयु का वर्णन है। बहुरि त्रस जीवनि की, अर तिनविषै पर्याप्त-अपर्याप्त जीवनि की सख्या का वर्णन है। बहुरि बादर अग्निकायिक आदि की सख्या का विशेष निर्णय करने के अर्थि तिनके अर्धच्छेदादिक का, अर प्रसग पाइ "**दिण्णछेदेणवहिद**" इत्यादिक करणसूत्र का वर्णन है।

बहुरि नवमां योगमार्गणा अधिकार विषै – योग के सामान्य लक्षण का अर सत्य आदि च्यारि-च्यारि प्रकार मन, वचन योग का वर्णन है। तहा सत्य वचन का विशेष जानने कौं दश प्रकार सत्य का, अर अनुभय वचन का विशेष जानने कौं आमत्रणी आदि भाषानि का, अर सत्यादिक भेद होने के कारण का, अर केवली के मन, वचन योग सभवने का अर द्रव्य मन के आकार का इत्यादि विशेष वर्णन है। बहुरि काय योग के सात भेदनि का वर्णन है। तहा औदारिकादिकनि के निरुक्ति पूर्वक लक्षण का, अर मिश्रयोग होने के विधान का, अर आहारक शरीर होने के विशेष का, अर कार्माणयोग के काल का विशेष वर्णन है। बहुरि युगपत् योगनि की प्रवृत्ति होने का विधान वर्णन है। अर योग रहित आत्मा का वर्णन है। बहुरि पच शरीरनि विषै कर्म-नोकर्म भेद का, अर पच शरीरनि की वर्गणा वा समय प्रबद्ध विषै परमाणूनि का प्रमाण वा क्रम तै सूक्ष्मपना वा तिनकी अवगाहना का वर्णन है। बहुरि विस्रसोपचय का स्वरूप वा तिनकी परमाणुनि के प्रमाण का वर्णन है। बहुरि कर्म-नोकर्म का उत्कृष्ट सचय होने का काल वा सामग्री का वर्णन है। बहुरि औदारिक आदि पच शरीरनि का द्रव्य तौ समय प्रबद्धमात्र कहि। तिनकी उत्कृष्ट स्थिति, अर तहाँ सभवती गुणहानि, नाना गुणहानि, अन्योन्याभ्यस्तराशि, दो गुणहानि का स्वरूप प्रमाण कहि, करणसूत्रादिक तै तहा चयादिक का प्रमाण ल्याय समय-समय सबधी निषेकनि का प्रमाण कहि, एक समय विषै केते परमाणू उदयरूप होइ निर्जरै, केते सत्ता विषै अवशेष रहै, ताके जानने कौं अकसदृष्टि की अपेक्षा लिये त्रिकोण यत्र का कथन है। बहुरि वैक्रियिकादिकनि का उत्कृष्ट सचय कौनकै कैसै होइ सो वर्णन है। बहुरि योगमार्गणा विषै जीवनि की सख्या का वर्णन विषै वैक्रियिक शक्ति करि सयुक्त बादर पर्याप्त अग्निकायिक, वातकायिक अर पर्याप्त पंचेन्द्रिय तिर्यच, मनुष्यनि के प्रमाण का, अर भोगभूमिया आदि

जीवनि कै पृथक् विक्रिया, अर औरनि कै अपृथक् विक्रिया हो है, ताका कथन है। बहुरि त्रियोगी, द्वियोगी, एकयोगी जीवनि का प्रमाण कहि त्रियोगीनि विषै आठ प्रकार मन-वचनयोगी अर काययोगी जीवनि का, अर द्वियोगीनि विषै वचन-काययोगीनि का प्रमाण वर्णन है। तहा प्रसग पाइ सत्यमनोयोगादि वा सामान्य मन-वचन-काय योगनि के काल का वर्णन है। बहुरि काययोगीनि विषै सात प्रकार काययोगीनि का जुदा-जुदा प्रमाण वर्णन है। तहा प्रसग पाइ औदारिक, औदारिकमिश्र, कार्माण के काल का, वा व्यतरनि विषै सोपक्रम, अनुपक्रम काल का वर्णन है। बहुरि यहु कथन है (जो) जीवनि की सख्या उत्कृष्टपनै युगपत् होने की अपेक्षा कही है।

बहुरि दशवा वेदमार्गणा अधिकार विषै – भाव-द्रव्यवेद होने के विधान का, अर तिनके लक्षण का, अर भाव-द्रव्यवेद समान वा असमान हो है ताका, अर वेदनि का कारण दिखाई ब्रह्मचर्य अगीकार करने का अर तीनो वेदनि का निरुक्ति लिये लक्षण का, अर अवेदी जीवनि का वर्णन है। बहुरि तहा सख्या का वर्णन विषै देव राशि कही। तहा स्त्री-पुरुषवेदीनि का, अर तिर्यंचनि विषै द्रव्य-स्त्री आदि का प्रमाण कहि समस्त पुरुष, स्त्री, नपुसकवेदीनि का प्रमाण वर्णन है। बहुरि सैनी पचेन्द्री गर्भज, नपुसकवेदी इत्यादिक ग्यारह स्थाननि विषै जीवनि का प्रमाण वर्णन है।

बहुरि ग्यारहवा कषायमार्गणा अधिकार विषै – कषाय का निरुक्ति लिये लक्षण का, वा सम्यक्त्वादिक घातने रूप दूसरे अर्थ विषै अनन्तानुबधी आदि का निरुक्ति लिए लक्षण का वर्णन है। बहुरि कषायनि के एक, च्यारि, सोलह, असख्यात लोकमात्र भेद कहि क्रोधादिक की उत्कृष्टादि च्यारि प्रकार शक्तिनि का दृष्टात वा फल की मुख्यता करि वर्णन है। बहुरि पर्याय धरने के पहलै समय कषाय होने का नियम है वा नाही है सो वर्णन है। बहुरि अकषाय जीवनि का वर्णन है। बहुरि क्रोधादिक के शक्ति अपेक्षा च्यार, लेश्या अपेक्षा चौदह, आयुबध अर अबध अपेक्षा बीस भेद है, तिनका अर सर्व कषायस्थाननि का प्रमाण कहि तिन भेदनि विषै जेते-जेते स्थान सभवै तिनका वर्णन है। बहुरि इहा जीवनि की सख्या का वर्णन विषै नारकी, देव, मनुष्य, तिर्यंच गति विषै जुदा-जुदा क्रोधी आदि जीवनि का प्रमाण वर्णन है। तहा प्रसग पाइ तिन गतिनि विषै क्रोधादिक का काल वर्णन है।

बहुरि बारहवा ज्ञानमार्गणा अधिकार विषै – ज्ञान का निरुक्ति पूर्वक लक्षण कहि, ताके पच भेदनि का अर क्षयोपशम के स्वरूप का वर्णन है। बहुरि तीन मिथ्या ज्ञाननि का, अर मिश्र ज्ञाननि का अर तीन कुज्ञाननि के परिणमन के उदाहरण का

वर्णन है । बहुरि मतिज्ञान का वर्णन विषै याके नामांतर का, अर इंद्रिय-मन तै उपजने का अर तहा अवग्रहादि होने का, अर व्यजन-अर्थ के स्वरूप का, अर व्यंजन विषै नेत्र, मन वा ईहादिक न पाइए ताका, अर पहले दर्शन होइ पीछै अवग्रहादि होने के क्रम का अर अवग्रहादिकनि के स्वरूप का, अर अर्थ-व्यजन के विषयभूत बहु, बहुविध आदि बारह भेदनि का, तहा अनिसृति विषै च्यारि प्रकार परोक्ष प्रमाण गर्भितपना आदि का, अर मतिज्ञान के एक, च्यारि, चौबीस, अट्ठाईस अर इनतै बारह गुणे भेदनि का वर्णन है । बहुरि श्रुतज्ञान का वर्णन विषै श्रुतज्ञान का लक्षण निरुक्ति आदि का, अर अक्षर-अनक्षर रूप श्रुतज्ञान के उदाहरण वा भेद वा प्रमाण का वर्णन है । बहुरि भाव श्रुतज्ञान अपेक्षा बीस भेदनि का वर्णन है । तहा पहिला जघन्यरूप पर्याय ज्ञान का वर्णन विषै ताके स्वरूप का, अर तिसका आवरण जैसै उदय हो है ताका, अर यहु जाकै हो है ताका, अर याका दूसरा नाम लब्धि अक्षर है, ताका वर्णन है । अर पर्यायसमास ज्ञान का वर्णन विषै षट्स्थानपतित वृद्धि का वर्णन है । तहा जघन्य ज्ञान के अविभाग प्रतिच्छेदनि का प्रमाण कहि । अर अनतादिक का प्रमाण अर अनंत भागादिक की सहनानी कहि, जैसै अनतभागादिक षट्स्थानपतित वृद्धि हो है, ताके क्रम का यत्र द्वार तै वर्णन करि अनत भागादि वृद्धिरूप स्थाननि विषै अविभाग प्रतिच्छेदनि का प्रमाण ल्यावने कौ प्रक्षेपक आदि का विधान, अर तहा प्रसग पाइ एक बार, दोय बार, आदि सकलन धन ल्यावने का विधान, अर साधिक जघन्य जहा दूणा हो है, ताका विधान, अर पर्याय समास विषै अनतभाग आदि वृद्धि होने का प्रमाण इत्यादि विशेष वर्णन है । बहुरि अक्षर आदि अठारह भेदनि का क्रम तै वर्णन है । तहा अर्थाक्षर के स्वरूप का, अर तीन प्रकार अक्षरनि का अर शास्त्र के विषयभूत भावनि के प्रमाण का, अर तीन प्रकार पदनि का अर चौदह पूर्वनि विषै वस्तु वा प्राभृत नामा अधिकारनि के प्रमाण का इत्यादि वर्णन है । बहुरि बीस भेदनि विषै अक्षर, अनक्षर श्रुतज्ञान के अठारह, दोय भेदनि का अर पर्यायज्ञानादि की निरुक्ति लिए स्वरूप का वर्णन है ।

बहुरि द्रव्यश्रुत का वर्णन विषै द्वादशाग के पदनि की अर प्रकीर्णक के अक्षरनि की सख्यानि का, बहुरि चौसठ मूल अक्षरनि की प्रक्रिया का, अर अपुनरुक्त सर्व अक्षरनि का प्रमाण वा अक्षरनि विषै प्रत्येक द्विसयोगी आदि भगनि करि तिस प्रमाण ल्यावने का विधान अर सर्व श्रुत के अक्षरनि का प्रमाण वा अक्षरनि विषै अगनि के पद अर प्रकीर्णकनि के अक्षरनि के प्रमाण ल्यावने का विधान इत्यादि वर्णन है । बहुरि आचारांग आदि ग्यारह अग, अर दृष्टिवाद अग के पाच भेद, तिनमै परिकर्म के पाच

भेद, तहा सूत्र अर प्रथमानुयोग का एक-एक भेद, अर पूर्वगत के चौदह भेद, चूलिका के पाच भेद, इन सबनि के जुदा-जुदा पदनि का प्रमाण अर इन विषै जो-जो व्याख्यान पाइए, ताकी सूचनिका का कथन है । तहा प्रसग पाइ तीर्थंकर की दिव्यध्वनि होने का विधान, अर वर्द्धमान स्वामी के समय दश-दश जीव अत कृत केवली अर अनुत्तरगामी भए तिनकानाम अर तीन सौ तिरेसठि कुवादनि के धारकनि विषै केई कुवादीनि के नाम अर सप्त भग का विधान, अर अक्षरनि के स्थान-प्रयत्नादिक, अर बारह भाषा अर आत्मा के जीवादि विशेषण इत्यादि घने कथन है । बहुरि सामायिक आदि चौदह प्रकीर्णकनि का स्वरूप वर्णन है । बहुरि श्रुतज्ञान की महिमा का वर्णन है ।

बहुरि अवधिज्ञान का वर्णन विषै निरुक्ति पूर्वक स्वरूप कहि, ताके भवप्रत्यय-गुणप्रत्यय भेदनि का, अर ते भेद कौनकै होय, कौन आत्मप्रदेशनि तै उपजै ताका, अर तहा गुणप्रत्यय, के छह भेदनि का, तिनविषै अनुगामी, अननुगामी के तीन-तीन भेदनि का वर्णन है । बहुरि सामान्यपनै अवधि के देशावधि, परमावधि, सर्वावधि भेदनि का, अर तिन विषै भवप्रत्यय-गुणप्रत्यय के सभवपने का, अर ए कौनकै होइ-ताका, अर तहा प्रतिपाती, अप्रतिपाती, विशेष का, अर इनके भेदनि के प्रमाण का, वर्णन है । बहुरि जघन्य देशावधि का विषयभूत द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव का वर्णन करि द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव अपेक्षा द्वितीयादि उत्कृष्ट पर्यंत क्रम तै भेद होने का विधान, अर तहा द्रव्यादिक के प्रमाण का अर सर्व भेदनि के प्रमाण का वर्णन है । तहा प्रसग पाइ ध्रुवहार, वर्ग, वर्गणा, गुणकार इत्यादिक का अनेक वर्णन है । अर तहा ही क्षेत्र-काल अपेक्षा तिस देशावधि के उगणीस काडकनि का वर्णन है ।

बहुरि परमावधि के विषयभूत द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव अपेक्षा जघन्य तै उत्कृष्ट पर्यन्त क्रम तै भेद होने का विधान, वा तहा द्रव्यादिक का प्रमाण वा सर्व भेदनि के प्रमाण का वर्णन है । तहा प्रसग पाइ सकलित धन ल्यावने का अर "**इच्छिदरासिच्छेद**" इत्यादि दोय करणसूत्रनि का आदि अनेक वर्णन है ।

बहुरि सर्वावधि अभेद है । ताकै विषयभूत द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव का वर्णन है । बहुरि जघन्य देशावधि तै सर्वावधि पर्यंत द्रव्य अर भाव अपेक्षा भेदनि की समानता का वर्णन है । बहुरि नरक विषै अवधि का वा ताके विषयभूत क्षेत्र का, अर मनुष्य, तिर्यंच विषै जघन्य-उत्कृष्ट अवधि होने का, अर देव विषै भवनवासी, व्यतर, ज्योतिषीनि के अवधिगोचर क्षेत्रकाल का, सौधर्मादि द्विकनि विषै क्षेत्रादिक का, वा द्रव्य का भी वर्णन है ।

बहुरि मन पर्ययज्ञान का वर्णन विषै ताके स्वरूप का, अर दोय भेदनि का अर तहा ऋजुमति तीन प्रकार, विपुलमति छह प्रकार ताका, अर मन पर्यय जहातै उपजै है अर जिनकै हो है ताका, अर दोय भेदनि विषै विशेष है ताका, अर जीव करि चितया हुवा द्रव्यादिक कौ जानै ताका, अर ऋजुमति का विषयभूत द्रव्य का अर मनःपर्यय सबधी ध्रुवहार का, अर विपुलमति के जघन्य तै उत्कृष्ट पर्यन्त द्रव्य अपेक्षा भेद होने का विधान, वा भेदनि का प्रमाण, वा द्रव्य का प्रमाण कहि, जघन्य उत्कृष्ट क्षेत्र, काल, भाव का वर्णन है ।

बहुरि केवलज्ञान सर्वज्ञ है, ताका वर्णन है । बहुरि इहा जीवनि की सख्या का वर्णन विषै मति, श्रुति, अवधि, मन·पर्यय, केवलज्ञानी का अर च्यारो गति सबधी विभगज्ञानीनि का, अर कुमति-कुश्रुत-ज्ञानीनि का प्रमाण वर्णन है ।

बहुरि तेरहवां संयममार्गणा अधिकार विषै – ताके स्वरूप का, अर सयम के भेद के निमित्त का वर्णन है । बहुरि सयम के भेदनि का स्वरूप वर्णन है । तहा परिहारविशुद्धि का विशेष, अर ग्यारह प्रतिमा, अट्ठाईस विषय इत्यादिक का वर्णन है । बहुरि इहा जीवनि की सख्या का वर्णन विषै सामायिक, छेदोपस्थापन, परिहार-विशुद्धि, सूक्ष्मसापराय, यथाख्यात सयमधारी, अर सयतासयत, अर असयत जीवनि का प्रमाण वर्णन है ।

बहुरि चौदहवां दर्शनमार्गणा अधिकार विषै – ताके स्वरूप का, अर दर्शन भेदनि के स्वरूप का वर्णन है । बहुरि इहा जीवनि की सख्या का वर्णन विषै शक्ति चक्षुर्दर्शनी, व्यक्त चक्षुर्दर्शनीनि का अर अवधि, केवल, अचक्षुर्दर्शनीनि का प्रमाण वर्णन है ।

बहुरि पंद्रहवां लेश्यामार्गणा अधिकार विषै – द्रव्य, भाव करि दोय प्रकार लेश्या कहि, भावलेश्या का निरुक्ति लिए लक्षण अर ताकरि बध होने का वर्णन है । बहुरि सोलह अधिकारनि के नाम है । बहुरि निर्देशाधिकार विषै छह लेश्यानि के नाम है । अर वर्णाधिकार विषै द्रव्य लेश्यानि के कारण का, अर लक्षण का, अर छहो द्रव्य लेश्यानि के वर्ण का दृष्टात का, अर जिनकै जो-जो द्रव्य लेश्या पाइए, ताका व्याख्यान है । बहुरि प्रमाणाधिकार विषै कषायनि के उदयस्थाननि विषै सक्लेशविशुद्धि स्थाननि के प्रमाण का, अर तिनविषै भी कृष्णादि लेश्यानि के स्थाननि के प्रमाण का, अर सक्लेशविशुद्धि की हानि, वृद्धि तै अशुभ, शुभलेश्या होने के

अनुक्रम का वर्णन है। बहुरि सक्रमणाधिकार विषै स्वस्थान-परस्थान सक्रमण कहि सक्लेशविशुद्धि का वृद्धि-हानि तै जैसै सक्रमण हो है ताका, अर सक्लेशविशुद्धि विषै जैसै लेश्या के स्थान होइ, अर तहा जैसै षट्स्थानपतित वृद्धि-हानि सभवै, ताका वर्णन है। बहुरि कर्माधिकार विषै छहो लेश्यावाले कार्य विषै जैसै प्रवर्तै, ताके उदाहरण का वर्णन है। बहुरि लक्षणाधिकार विषै छहो लेश्यावालेनि का लक्षण वर्णन है।

बहुरि गति अधिकार विषै लेश्यानि के छव्वीस अश, तिनविषै आठ मध्यम अश आयुबध कौ कारण, ते आठ अपकर्षकालनि विषै हौइ, तिन अपकर्षनि का उदाहरणपूर्वक स्वरूप का अर तिनविषै आयु न बधै तौ जहा बधै ताका, अर सोपक्रमायुष्क, निरुपक्रमायुष्क, जीवनि कै अपकर्षणरूप काल का, वा तहा आयु बधने का विधान वा गति आदि विशेष का, अर अपकर्षनि विषै आयु बधनेवाले जीवनि के प्रमाण का वर्णन करि पीछै लेश्यानि के अठारह अशनि विषै जिस-जिस अश विषै मरण भए, जिस-जिस स्थान विषै उपजै ताका वर्णन है।

बहुरि स्वामी अधिकार विषै भाव लेश्या की अपेक्षा सात नरकनि के नारकीनि विषै, अर मनुष्य-तिर्यंच विषै, तहा भी एकेंद्रिय-विकलत्रय विषै, असैनी पचेद्रिय विषै लब्धि अपर्याप्तक तिर्यंच-मनुष्य विषै, अपर्याप्तक तिर्यंच-मनुष्य-भवनत्रिकदेव सासादन वालो विषै, पर्याप्त-अपर्याप्त भोगभूमिया विषै, मिथ्यादृष्टि आदि गुणस्थानिनि विषै, पर्याप्त भवनत्रिक-सौधर्मादिक आदि देवनि विषै जो-जो लेश्या पाइए ताका वर्णन है। तहा असैनी के लेश्यानिमित्त तै गति विषै उपजने का आदि विशेष कथन है।

बहुरि साधन अधिकार विषै द्रव्य लेश्या अर भाव लेश्यानि के कारण का वर्णन है।

बहुरि सख्याधिकार विषै द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, मान करि कृष्णादि लेश्यावाले जीवनि का प्रमाण वर्णन है।

बहुरि क्षेत्राधिकार विषै सामान्यपनै स्वस्थान, समुद्घात, उपपाद अपेक्षा, विशेषपनै दोय प्रकार स्वस्थान, सात प्रकार समुद्घात, एक उपपाद इन दश स्थाननि विषै सभवतै स्थाननि की अपेक्षा कृष्णादि लेश्यानि का (स्थान वर्णन कहिए) क्षेत्र वर्णन है। तहा प्रसग पाइ विवक्षित लेश्या विषै सभवतै स्थान, तिन विषै जीवनि के प्रमाण का, तिन स्थाननि विषै क्षेत्र के प्रमाण का, समुद्घातादिक के विधान का, क्षेत्रफलादिक का, मरने वाले आदि देवनि के प्रमाण का, केवल समुद्घात विषै दड-कपाटादिक का, तहा लोक के क्षेत्रफल का इत्यादिक का वर्णन है।

बहुरि स्पर्शाधिकार विषै पूर्वोक्त सामान्य-विशेषपनै करि लेश्यानि का तीन काल सबधी क्षेत्र का वर्णन है। तहाँ प्रसग पाइ मेरु तै सहस्रार पर्यत सर्वत्र पवन के सद्भाव का, अर जबूद्वीप समान लवणसमुद्र के खड, लवणसमुद्र के समान अन्य समुद्र के खड करने के विधान का, अर जलचर रहित समुद्रनि का मिलाया हुआ क्षेत्रफल के प्रमाण का, अर देवादिक के उपजने, गमन करने का इत्यादि वर्णन है।

बहुरि काल अधिकार विषै कृष्णादि लेश्या जितने काल रहै ताका वर्णन है।

बहुरि अतराधिकार विषै कृष्णादि लेश्या का जघन्य, उत्कृष्ट जितने काल-अभाव रहै, ताका वर्णन है। तहा प्रसग पाइ एकेद्री, विकलेद्री विषै उत्कृष्ट रहने के काल का वर्णन है।

बहुरि भावाधिकार विषै छहौ लेश्यानि विषै औदयिक भाव के सद्भाव का वर्णन है।

बहुरि अल्पबहुत्व अधिकार विषै सख्या के अनुसारि लेश्यानि विषै परस्पर अल्प-बहुत्व का व्याख्यान है, ऐसै सोलह अधिकार कहि लेश्या रहित जीवनि का व्याख्यान है।

बहुरि सोलहवां भव्यमार्गणा अधिकार विषै – दोय प्रकार भव्य अर अभव्य अर भव्य-अभव्यपना करि रहित जीवनि का स्वरूप वर्णन है। बहुरि इहा सख्या का कथन विषै भव्य-अभव्य जीवनि का प्रमाण वर्णन है। बहुरि इहा प्रसग पाइ द्रव्य, क्षेत्र, काल, भव, भावरूप पचपरिवर्तननि के स्वरूप का, वा जैसे क्रम तै परिवर्तन हो है ताका, अर परिवर्तननि के काल का, अनादि तै जेते परिवर्तन भए, तिनके प्रमाण का वर्णन है। तहा गृहीतादि पुद्गलनि के स्वरूप सदृष्टि का, वा योग स्थान आदिकनि का वर्णन पाइए है।

बहुरि सतरहवां सम्यक्त्वमार्गणा अधिकार विषै – सम्यक्त्व के स्वरूप का, अर सराग-वीतराग के भेदनि का अर षट् द्रव्य, नव पदार्थनि के श्रद्धानरूप लक्षण का वर्णन है। बहुरि षट् द्रव्य का वर्णन विषै सात अधिकारनि का कथन है।

तहा नाम अधिकार विषै द्रव्य के एक वा दोय भेद का, अर जीव-अजीव के दोय-दोय भेदनि का, अर तहा पुद्गल का निरुक्ति लिए लक्षण का, पुद्गल परमाणु के आकार का वर्णनपूर्वक रूपी-अरूपी अजीव द्रव्य का कथन है।

बहुरि उपलक्षणानुवादाधिकार विषै छहो द्रव्यनि के लक्षणनि का वर्णन है। तहां गति आदि क्रिया जीव-पुद्गल कै है, ताका कारण धर्मादिक है, ताका दृष्टात-

पूर्वक वर्णन है । अर वर्तनाहेतुत्व काल के लक्षण का दृष्टातपूर्वक वर्णन है । अर मुख्य काल के निश्चय होने का, काल कै धर्मादिक कौं कारणपने का, समय, आवली आदि व्यवहारकाल के भेदनि का, तहा प्रसग पाइ प्रदेश के प्रमाण का, वा अतर्मुहूर्त के भेदनि का, वा व्यवहारकाल जानने कौ निमित्त का, व्यवहारकाल के अतीत, अनागत, वर्तमान भेदनि के प्रमाण का, वा व्यवहार निश्चय काल के स्वरूप का वर्णन है ।

बहुरि स्थिति अधिकार विषै सर्व अपने पर्यायनि का समुदायरूप अवस्थान का वर्णन है ।

बहुरि क्षेत्राधिकार विषै जीवादिक जितना क्षेत्र रोकै, ताका वर्णन है । तहा प्रसग पाइ तीन प्रकार आधार वा जीव के समुद्घातादि क्षेत्र का वा सकोच विस्तार शक्ति का वा पुद्गलादिकनि की अवगाहन शक्ति का वा लोकालोक के स्वरूप का वर्णन है ।

बहुरि सख्याधिकार विषै जीव द्रव्यादिक का वा तिनके प्रदेशनि का, वा व्यवहार काल के प्रमाण का, द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव मान करि वर्णन है ।

बहुरि स्थान स्वरूपाधिकार विषै (द्रव्यनि का वा) द्रव्य के प्रदेशनि का चल, अचलपने का वर्णन है । बहुरि अणुवर्गणा आदि तेईस पुद्गल वर्गणानि का वर्णन है । तहा तिन वर्गणानि विषै जेती-जेती परमाणू पाइए, ताका आहारादिक वर्गणा तै जो-जो कार्य निपजै है ताका जघन्य, उत्कृष्ट, प्रत्येकादि वर्गणा जहा पाईए ताका, महास्कध वर्गणा के स्वरूप का, अणुवर्गणा आदि का वर्गणा लोक विषै जितनी जितनी पाइए ताका इत्यादि का वर्णन है । बहुरि पुद्गल के स्थूल-स्थूल आदि छह भेदनि का, वा स्कध, प्रदेश, देश इन तीन भेदनि का वर्णन है ।

बहुरि फल अधिकार विषै धर्मादिक का गति आदि साधनरूप उपकार, जीवनि के परस्पर उपकार, पुद्गलनि का कर्मादिक वा सुखादिक उपकार, तिनका प्रश्नोत्तरादिक लिए वर्णन है । तहा प्रसग पाइ कर्मादिक पुद्गल ही हैं ताका, अर कर्मादिक जिस-जिस पुद्गल वर्गणा तै निपजै हैं ताका, अर स्निग्ध-रूक्ष के गुणनि के अशनि करि जैसै पुद्गल का सबध हो है, ताका वर्णन है । ऐसै षट् द्रव्य का वर्णन करि तहा काल विना पचास्तिकाय है, ताका वर्णन है । बहुरि नव पदार्थनि का वर्णन विषै जीव-अजीव का तौ षट् द्रव्यनि विषै वर्णन भया । बहुरि पाप जीव पुण्य जीवनि का वर्णन है । तहा प्रसग पाइ चौदह गुण-स्थाननि विषै जीवनि का

प्रमाण वर्णन है । तहां उपशम, क्षपक श्रेणीवाले निरंतर अष्ट समयनि विषै जेते जेते होइ ताका, वा युगपत् बोधितबुद्धि आदि जीव जेते-जेते होइ ताका, अर सकल संयमीनि के प्रमाण का वर्णन है। बहुरि सात नरक के नारकी, भवनत्रिक, सौधर्मद्विकादिक देव, तिर्यंच, मनुष्य ए जेते-जेते मिथ्यादृष्टि आदि गुणस्थाननि विषै पाइए, तिनका वर्णन है । बहुरि गुणस्थाननि विषै पुण्य जीव, पाप जीवनि का भेद वर्णन है । बहुरि पुद्गलीक द्रव्य पुण्य-पाप का वर्णन है । बहुरि आस्रव, बंध, संवर निर्जरा, मोक्षरूप पुद्गलनि का प्रमाण वर्णन है । ऐसै षट् द्रव्यादिक का स्वरूप कहि, तिनके श्रद्धानरूप सम्यक्त्व के भेदनि का वर्णन है ।

तहा क्षायिक सम्यक्त्व के भेदनि का वर्णन है ।[1] तहा क्षायिक सम्यक्त्व होने के कारण का, ताके स्वरूप का, ताकौ पाऐ जेते भवनि विषै मुक्ति होइ ताका, तिसकी महिमा का, अर तिसका प्रारभ, निष्ठापन जहा होइ, ताका वर्णन है ।

बहुरि वेदकसम्यक्त्व के कारण का वा स्वरूप का वर्णन है । बहुरि उपशम सम्यक्त्व के स्वरूप का, कारण का, पंचलब्धि आदि सामग्री का, वा जाके उपशम सम्यक्त्व होइ ताका वर्णन है । तहा प्रसग पाइ आयुबध भए पीछै सम्यक्त्व, व्रत होने न होने का वर्णन है । बहुरि सासादन, मिश्र, मिथ्यारुचि का वर्णन है । बहुरि इहा जीवनि की सख्या का वर्णन विषै क्षायिक, उपशम, वेदक सम्यग्दृष्टिनि का अर मिथ्यादृष्टि, सासादन, मिश्र जीवनि का प्रमाण वर्णन है । बहुरि नव पदार्थनि का प्रमाण वर्णन है । तहा जीव अर अजीव विषै पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश, काल अर पुण्य-पाप रूप जीव, अर पुण्य-पाप रूप अजीव अर आस्रव, सवर, निर्जरा, बध, मोक्ष इनके प्रमाण का निरूपण है ।

बहुरि अठारहवां संज्ञी मार्गणा अधिकार विषै – सज्ञी के स्वरूप का, सज्ञी असज्ञी जीवनि के लक्षण का वर्णन है । अर इहा सख्या का वर्णन विषै सज्ञी-असज्ञी जीवनि का प्रमाण वर्णन है ।

बहुरि उगणीसवा आहारमार्गणा अधिकार विषै – आहारक के स्वरूप वा निरुक्ति का अर अनाहारक जिनके हो है ताका, तहा प्रसग पाइ सात समुद्घातनि के नाम वा समुद्घात के स्वरूप का, अर आहारक अनाहारक के काल का वर्णन है । बहुरि तहा आहारक-अनाहारक जीवनि का प्रमाण वर्णन है । तहा प्रसग पाइ **प्रक्षेपयोगोद्धृतिमिश्रपिंड** इत्यादि सूत्र करि मिश्र के व्यवहार का कथन है ।

---

१. यह वाक्य छपी प्रति मे मिलता है, किन्तु इसका अर्थ स्पष्ट नही होता ।

बहुरि बीसवा उपयोग अधिकार विषै – उपयोग के लक्षण का, साकार-अनाकार भेदनि का, उपयोग है सो व्याप्ति, अव्याप्ति, असभवी दोष रहित जीव का लक्षण है ताका, अर केवलज्ञान-केवलदर्शन बिना साकार-अनाकार उपयोगनि का काल अतर्मूहुर्त मात्र है, ताका वर्णन है । बहुरि इहा जीवनि की सख्या साकारोपयोग विषै ज्ञानमार्गणावत् अर अनाकारोपयोग विषै दर्शनमार्गणावत् है ताका वर्णन है ।

बहुरि इक्कीसवा ओघादेशयो प्ररूपरणा प्ररूपरण अधिकार विषै – गति आदि मार्गणानि के भेदनि विषै यथासभव गुणस्थान अर जीवसमासनि का वर्णन है । तहा द्वितीयोपशम सम्यक्त्व विषै पर्याप्त-अपर्याप्त अपेक्षा गुणस्थाननि का विशेष कह्या है । बहुरि गुणस्थाननि विषै सभवते जे जीवसमास, पर्याप्ति, प्राण, सज्ञा, चौदह मार्गणानि के भेद, उपयोग, तिनका वर्णन है । तहा मार्गणा वा उपयोग के स्वरूप का भी किछू वर्णन है । तहा योग भव्यमार्गणानि के भेदनि का, वा सम्यक्त्वमार्गणा विषै प्रथम द्वितीयोपशम सम्यक्त्व का इत्यादि विशेष-सा वर्णन है । अर गति आदि केई मार्गणानि विषै पर्याप्त, अपर्याप्त अपेक्षा कथन है ।

बहुरि बावीसवां आलाप अधिकार विषै – मगलाचरण करि सामान्य, पर्याप्त, अपर्याप्त करि तीन आलाप, अर अनिवृत्तिकरण विषै पच भागनि की अपेक्षा पच आलाप, तिनका गुणस्थाननि विषै वा गुणस्थान अपेक्षा चौदह मार्गणा के भेदनि विषै यथासभव कथन है । तहा गतिमार्गणा विषै किछू विशेष-सा कथन है । बहुरि गुणस्थान मार्गणास्थाननि विषै गुणस्थानादि बीस प्ररूपणा यथासभव आलापनि की अपेक्षा निरूपण करनी । तहा पर्याप्त, अपर्याप्त एकेंद्रियादि जीवनी कै सभवते पर्याप्ति, प्राण, जीवसमासादिक का किछू वर्णन करि यथायोग्य सर्व प्ररूपणा जानने का उपदेश है । बहुरि तिनके जानने कौ यत्रनि करि कथन है । तहा पहिलै यंत्रनि विषै जैसै अनुक्रम है, वा समस्या है, वा विशेष है सो कथन है । पीछै एक-एक रचना विषै वीस-वीस प्ररूपणा का कथन स्वरूप छह सौ चौदह यत्रनि की रचना है । तहा केई रचना समान जानि बहुत रचनानि की एक रचना है । बहुरि मनः-पर्यय ज्ञानादिक विषै एक होतै अन्य न होय ताका, उपशम श्रेणी तै उतरि मरण भए उपजने का, सिद्धनि विषै संभवती प्ररूपणानि का निक्षेपादिक करि प्ररूपणा जानने के उपदेश का वर्णन है । बहुरि आशीर्वाद है । बहुरि टीकाकार के वचन है ।

ऐसै जीवकाण्ड नामा महा अधिकार के बावीस अधिकारनि विषै क्रम तै व्याख्यान की सूचनिका जाननी ।

गोम्मटसार कर्मकाण्ड सम्बन्धी प्रकरण

ॐ नमः । अथ कर्म (अजीवकांड) नामा महाअधिकार के नव अधिकार है । तिनके व्याख्यान की सूचना मात्र क्रम तें कहिए है –

तहां पहिला **प्रकृतिसमुत्कीर्तन-अधिकार** विषै मगलाचरणपूर्वक प्रतिज्ञा करि प्रतिज्ञा के स्वरूप का, जीव-कर्म के संबंध का, तिनके अस्तित्व का, दृष्टांतपूर्वक कर्म-परमाणूनि के ग्रहण का, बंध, उदय, सत्त्वरूप कर्मपरमाणूनि के प्रमाण का वर्णन है । बहुरि ज्ञानावरणादिक आठ मूल प्रकृतिनि के नाम का, इन विषै घाती-अघाती भेद का, इनकरि कार्य हो है ताका, इनके क्रम संभवने का, दृष्टात निरुक्ति लिए इनके स्वरूप का वर्णन है । बहुरि इनकी उत्तर प्रकृतिनि का कथन है । तहा पच निद्रा का, तीन दर्शनमोह होने के विधान का, पच शरीरनि के पद्रह भगनि का, विवक्षित सहननवाले देव-नरक गतिविषै जहा उपजै ताका, कर्मभूमि की स्त्रीनि के तीन सहनन हैं ताका, आताप प्रकृति के स्वरूप वा स्वामित्व का विशेष-व्याख्यान सा है ।

बहुरि मतिज्ञानावरणादि उत्तर प्रकृतिनि के निरुक्ति लिए स्वरूप का वर्णन है । तहा प्रसंग पाइ अभव्य के केवलज्ञान के सद्भाव विषै प्रश्नोत्तर का, सात धातु, सात उपधातु का इत्यादि वर्णन है । बहुरि अभेद विवक्षाकरि जे प्रकृति गर्भित हो है, तिनका वर्णनकरि बध-उदय-सत्तारूप जेती-जेती प्रकृति हैं, तिनका वर्णन है । बहुरि घातियानि विषै सर्वघाती-देशघाती प्रकृतिनि का, अर सर्व प्रकृतिनि विषै प्रशस्त-अप्रशस्त प्रकृतिनि का वर्णन है । बहुरि अनतानुबधी आदि कषायनि का कार्य वा वासनाकाल का वर्णन है । बहुरि कर्म-प्रकृतिनि विषै पुद्‌गलविपाकी, भवविपाकी, क्षेत्रविपाकी, जीवविपाकी प्रकृतिनि का वर्णन है ।

बहुरि प्रसंग पाइ सशय, विपर्यय, अनध्यवसाय का वर्णनपूर्वक तीन प्रकार श्रोतानि का वर्णनकरि प्रकृतिनि के चार निक्षेपनि का वर्णन है । तहा नामादि निक्षेपनि का स्वरूप कहि नाम निक्षेप का अर तदाकार-अतदाकाररूप दोय प्रकार स्थापना निक्षेप का अर आगम-नोआगम रूप दोय प्रकार द्रव्य निक्षेप का, तहा नो-आगम के ज्ञायक, भावी, तद्व्यतिरिक्तरूप तीन प्रकार का, तहा भी भूत, भावी, वर्तमानरूप ज्ञायकशरीर के तीन भेदनि का, तहा भी च्युत, च्यावित, त्यक्तरूप भूत शरीर के तीन भेदनि का, तहा भी त्यक्त के भक्त, प्रतिज्ञा, इगिनी, प्रायोपगमनरूप भेदनि का, तहा भी भक्त प्रतिज्ञा के उत्कृष्ट, मध्य, जघन्यरूप तीन प्रकारनि का अर तद्व्यतिरिक्त नो-आगम द्रव्य के कर्म-नोकर्म भेदनि का, बहुरि भावनिक्षेप के आगम,

नोआगम भेदनि का वर्णन है । तहा मूल प्रकृतिनि विषै इनकौ कहि उत्तर प्रकृतिनि विषै वर्णनहै । तहा औरनि का सामान्यपनै सभवपना कहि, नोकर्मरूप तद्वचतिरिक्त-नो-आगम-द्रव्य का जुदी-जुदी प्रकृतिनि विषै वर्णन है । अर नोआगमभाव का समुच्चयरूप वर्णन है ।

बहुरि दूसरा **बंध-उदय-सत्त्वयुक्तस्तवनामा** अधिकार है । तहा नमस्कार पूर्वक प्रतिज्ञाकरि स्तवनादिक का लक्षरण वर्णन है । बहुरि बध-व्याख्यान विषै बध के प्रकृति, स्थिति, अनुभाग, प्रदेशरूप भेदनि का, अर तिनविषै उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, जघन्य, अजघन्यपने का, अर इनविषै भी सादि, अनादि, ध्रुव, अध्रुव सभवनै का वर्णन है ।

बहुरि प्रकृतिबध का कथन विषै गुणस्थाननि विषै प्रकृतिबध के नियम का, तहा भी तीर्थकरप्रकृति बधने के विशेष का, अर गुणस्थाननि विषै व्युच्छित्ति, बध, अबध प्रकृतिनि का, तहा भी व्युच्छित्ति के स्वरूप दिखावने कौ द्रव्यार्थिक-पर्यायार्थिकनय की अपेक्षा का, अर गति आदि मार्गणा के भेदनि विषै सामान्यपनै वा सभवते गुणस्थान अपेक्षा व्युच्छित्ति-बध-अबध प्रकृतिनि के विशेष का, अर मूल-उत्तर प्रकृतिनि विषै सभवते सादिनै आदि देकर बध का, तहा अध्रुव-प्रकृतिनि विषै सप्रतिपक्ष-नि प्रतिपक्ष प्रकृतिनि का, अर निरतर बध होने के काल का वर्णन है ।

बहुरि स्थितिबध का वर्णन विषै मूल-उत्तर प्रकृतिनि के उत्कृष्ट स्थितिबध का, अर उत्कृष्ट स्थितिबध सज्ञी पचेंद्रिय ही के होय ताका, अर जिस परिणाम तै वा जिस जीव कै जिस प्रकृति का उत्कृष्ट स्थितिबध होय ताका, तहा प्रसग पाय उत्कृष्ट ईषत् मध्यम सक्लेश परिणामनि के स्वरूप दिखावने कौ अनुकृष्टि आदि विधान का, अर मूल-उत्तर प्रकृतिनि के जघन्य स्थितिबध के प्रमाण का, अर जघन्य-स्थितिबध जाकै होय ताका वर्णन है । अर एकेंद्री, बेइद्री, तेइद्री, चौइद्री, असज्ञी, सज्ञी पचेंद्री जीवनि कै मोहादिक की उत्कृष्ट-जघन्यस्थिति के प्रमाण का, तहा प्रसग पाइ तिनके आबाधा के कालभेदकाण्डकनि के प्रमाण कौ कहि भेद प्रमाण करि गुणितकांडक प्रमाण कौं उत्कृष्टस्थिति विषै घटाए जघन्यस्थिति का प्रमाण होने का वर्णन है ।

बहुरि एकेंद्रियादि जीवनि के स्थितिभेदनि कौ स्थापनकरि तहा चौदह जीवसमासनि विषै जघन्य-उत्कृष्ट-स्थितिबध अर अबाधा अर भेदनि के प्रमाण अर तिनके जानने का विधान वर्णन है । तहा प्रकृतिनि का जघन्य स्थितिबध जिनकै होइ

ताका, अर जघन्य आदि स्थितिबंध विषै सादि नै आदि देकर सभवपने का, अर विशुद्ध-संक्लेशपरिणामनि तै जैसै जघन्य-उत्कृष्ट स्थितिबध होय ताका, अर आबाधा के लक्षण का, मोहादिक की आबाधा के काल का, आयु की आबाधा के विशेष का, तहा प्रसग पाइ देव, नारकी, भोगभूमिया, कर्मभूमियानि के आयुबंध होने के समय का, उदीर्णा अपेक्षा आबाधाकाल के प्रमाण का, प्रसग पाइ अचलावली, उदयावली, उपरितन स्थिति विषै कर्मपरमाणु खिरने का, उदीर्णा के स्वरूप का, आयु वा अन्य कर्मनि के निषेकनि के स्वरूप का, अंकसदृष्टिपूर्वक निषेकनि विषै द्रव्यप्रमाण का, तहा गुणहानि आदि का वर्णन है ।

बहुरि अनुभागबंध का व्याख्यान विषै प्रकृतिनि का अनुभाग जैसै संक्लेश-विशुद्धिपरिणामनिकरि बधै है ताका, अर जिस प्रकृति का जाकै तीव्र वा जघन्य अनुभाग बंधै है ताका, तहा प्रसंग पाइ अपरिवर्तमान, परिवर्तमान मध्यम परिणामनि के स्वरूपादिक का अर उत्कृष्टादि अनुभागबध विषै सादि नै आदि देकरि भेदनि के सभवपने का वर्णन है। बहुरि घातियानि विषै लता, दारु, अस्थि शैलभागरूप अनुभाग का, तहां देशघातिया स्पर्द्धकनि का मिथ्यात्व विषै विशेष है ताका, अर जिन प्रकृतिनि विषै जेते प्रकार अनुभाग प्रवर्त्तै ताका, अर अघातियानि विषै प्रशस्त प्रकृतिनि का गुड, खाड, शर्करा, अमृतरूप, अप्रशस्त प्रकृतिनि का निब, कांजीर, विष, हलाहलरूप अनुभाग का, अर इन प्रकृतिनि कै तीन-तीन प्रकार अनुभाग प्रवर्त्तै, ताका वर्णन है।

बहुरि प्रदेशबंध का कथन विषै एकक्षेत्र, अनेकक्षेत्रसबधी वा तहा कर्मरूप होनै कौ योग्य-अयोग्यरूप, तिनविषै भी जीव का ग्रहण की अपेक्षा सादि-अनादिरूप पुद्गलनि का प्रमाणादिक कहि, तहा जिन पुद्गलनि कौ समयप्रबद्ध विषै ग्रहै है ताका, अर ग्रहे जे परमाणु तिनके प्रमाण कौ कहि तिनका आठ वा सात मूल प्रकृतिनि विषै जैसै विभाग हो है ताका, तहा हीनाधिक विभाग होने के कारण का वर्णन है। अर उत्तर प्रकृतिनि विषै विभाग के अनुक्रम का अर ज्ञानावरण, दर्शनावरण, अतराय विषै सर्वघाती-देशघाती द्रव्य के विभाग का, तहा प्रसग पाइ मतिज्ञानावरणादि प्रकृतिनि विषै सर्वघाती-देशघाती स्पर्द्धकनि का, तहा अनुभागसबधी नानागुणहानि, अन्योन्याभ्यस्त-द्रव्य-स्थिति-गुणहानि का प्रमाण कहि, तहा वर्गणानि का प्रमाण ल्याइ तिनविषै जहा सर्वघाती-देशघातीपना पाइए ताका वर्णनकरि च्यारि घातिया कर्मनि की उत्तर प्रकृतिनि विषै कर्मपरमाणुनि के विभाग का वर्णन है ।

तहा सज्वलन अर नोकषाय विषै विशेष है ताका, अर नोकषायनि विषै जिनका युगपत् बध होइ तिनका, अर तिनके निरतर बंधने के काल का, अर अतराय की प्रकृतिनि विषै सर्वघातीपना नाही ताका वर्णन है। बहुरि युगपत् नामकर्म की तेईस एक आदि प्रकृति बधै तिनविषै विभाग का, अर वेदनीयादिक की एक-एक ही प्रकृति बधै, तातै तहा विभाग न करने का वर्णन है ।

बहुरि मूल-उत्तर प्रकृतिनि का उत्कृष्टादि प्रदेशबध विषै सादि इत्यादि भेद सभवने का, अर जिस प्रकृति का उत्कृष्ट-जघन्य प्रदेशबध जाकै होय ताका, अर तहा प्रसग पाइ स्तोकसा एक जीव के युगपत् जेते-जेते प्रकृति बधे, ताका वर्णन है। बहुरि इहा प्रसग पाइ योगनि का कथन है। तहा उपपाद, एकातवृद्धि, परिणामरूप योगनि के स्वरूपादिक का वर्णन है। अर योगनि के अविभागप्रतिच्छेद, वर्ग, वर्गणा, स्पर्द्धक, गुणहानि, नानागुणहानि स्थाननि के स्वरूप, प्रमाण, विधान का योगशक्ति या प्रदेश अपेक्षा विशेष वर्णन है। अर योगनि का जघन्य स्थान तै लगाय स्थाननि विषै वृद्धि के अनुक्रम कौ आदि देकरि वर्णन है। अर सूक्ष्मनिगोदिया लब्धि-अपर्याप्तक का जघन्य उपपादयोगस्थान कौ आदि देकरि चौरासी स्थाननि का, अर बीचि-बीचि जिनका स्वामी न पाइए तिनका, अर तिनविषै गुणकार के अनुक्रम का, अर जघन्य स्थान तै उत्कृष्ट स्थान के गुणकार का वर्णन है। अर तीन प्रकार योग निरतर जेते काल प्रवर्त्तै ताका, अर पर्याप्त त्रस सबधी परिणामयोगस्थाननि विषै जे-जे जेते-जेते योगस्थान दोय आदि आठ समयपर्यंत निरतर प्रवर्त्तै तिनके प्रमाण ल्यावने कौ कालयवमध्य रचना का, अर पर्याप्त त्रससबधी परिणामयोगस्थाननि विषै जेते-जेते जीव पाइए तिनके प्रमाण जानने कौ गुणहानि आदि विशेष लीए जीवयवमध्य रचना का अर योगस्थाननि तै जेता-जेता प्रदेशबध होय ताका, अर जघन्य तै उत्कृष्ट स्थान पर्यंत बधने के क्रम का बीचि-बीचि जेते अविभागप्रतिच्छेद होइ तिनका वर्णन है।

बहुरि च्यारि प्रकार बध के कारणनि का वर्णन है। बहुरि योगस्थानादिक के अल्पबहुत्व का वर्णन है। तहा योगस्थान श्रेणी के असख्यातवा भागमात्र तिनका वर्णनकरि तिनतै असख्यात लोकगुणे कर्मप्रकृतिनि के भेदनि का वर्णन विषै मतिज्ञानादिकनि के भेदनि का, अर क्षेत्र अपेक्षा आनुपूर्वी के भेदनि का कथन है। बहुरि तिनतै असख्यातगुणे कर्मस्थिति के भेदनि का वर्णन विषै तिन एक-एक प्रकृति

की जघन्यादि उत्कृष्ट पर्यंत स्थिति भेदनि का कथन है। बहुरि तिनतैं असंख्यातगुणे स्थितिबंधाध्यवसायनि का वर्णन विषै द्रव्यस्थिति, गुणहानि, निषेक, चयादिककरि स्थितिबंध कौ कारण परिणामनि का स्तोकसा कथन है। बहुरि तिनतैं असंख्यात लोकगुणे अनुभागबंधाध्यवसायस्थाननि का वर्णन विषै द्रव्यस्थिति-गुणहान्यादिककरि अनुभाग कौ कारण परिणामनि का स्तोकसा कथन है। बहुरि तिनतैं अनंतगुणे कर्मप्रदेशनि का वर्णन विषै द्रव्यस्थिति, गुणहानि, नानागुणहानि, चय, निषेकनि का अंकसंदृष्टि वा अर्थकरि कथन है। तहां एक समय विषै समय-प्रबद्धमात्र पुद्गल बंधै, एक-एक निषेक मिलि समयप्रबद्धमात्र ही निर्जरै, ऐसैं होतैं द्वयर्द्धगुणहानिगुणित समयप्रबद्धमात्र सत्त्व रहै, ताका विधान जानने कै अर्थि त्रिकोणयंत्र की रचना करी है।

बहुरि ऐसैं बंध वर्णनकरि उदय का वर्णन विषै उदय-प्रकृतिनि का नियम कहि गुणस्थाननि विषै व्युच्छित्ति, उदय, अनुदय प्रकृतिनि का वर्णन है। बहुरि इहां ही उदीर्णा विषै विशेष कहि गुणस्थाननि विषै व्युच्छित्ति, उदीर्णा, अनुदीर्णारूप प्रकृतिनि का वर्णन है। बहुरि मार्गणा विषै उदय प्रकृतिनि का नियम कहि गति आदि मार्गणानि के भेदनि विषै संभवते गुणस्थाननि की अपेक्षा लीए व्युच्छित्ति, उदय, अनुदय प्रकृतिनि का वर्णन है। तहां प्रसंग पाइ अनेक कथन है।

बहुरि सत्त्व का कथन विषै तीर्थंकर, आहारक की सत्ता का, मिथ्यादृष्टयादि विषै विशेष अर आयुबंध भए पीछै सम्यक्त्व-व्रत होने का विशेष, क्षायिक-सम्यक्त्व होने का विशेष कहि मिथ्यादृष्टि आदि सात गुणस्थाननि विषै सत्त्व प्रकृतिनि का वर्णन करि, ऊपरि क्षपकश्रेणी अपेक्षा व्युच्छित्ति, सत्त्व, असत्त्व प्रकृतिनि का वर्णन है। बहुरि मिथ्यादृष्टि आदि गुणस्थाननि विषै सत्त्व, असत्त्व प्रकृतिनि का वर्णनकरि उपशम-श्रेणी विषै इकईस मोहप्रकृति उपशमावने का क्रम का, अर तहां सत्त्व-प्रकृतिनि का कथन है। बहुरि मार्गणानि विषै सत्ता-असत्ता प्रकृतिनि का नियम कहि गति आदि मार्गणानि के भेदनि विषै संभवते गुणस्थाननि की अपेक्षा लीए व्युच्छित्ति, सत्त्व, असत्त्व प्रकृतिनि का वर्णन है। तहां प्रसंग पाइ इन्द्रिय-काय मार्गणा विषै प्रकृतिनि की उद्वेलना का इत्यादि अनेक वर्णन है।

बहुरि विशेष सत्तारूप तीसरा सत्त्वस्थान-अधिकार विषै एक जीव कै एकै कालि प्रकृति पाइए तिनके प्रमाण की अपेक्षा स्थान, अर स्थान विषै प्रकृति बदलने की अपेक्षा भंग, तिनका वर्णन है। तहां नमस्कारपूर्वक प्रतिज्ञाकरि स्थानभंगनि का

स्वरूप कहि गुणस्थाननि विषै सामान्य सत्त्व प्रकृतिनि का वर्णन करि विशेष वर्णन विषै मिथ्यादृष्ट्यादि गुणस्थाननि विषै जेते स्थान वा भग पाइए तिनकौ कहि जुदा-जुदा कथन विषै तिनका विधान वा प्रकृति घटने, वधने, वदलने के विशेष का वद्धायु-अवद्धायु अपेक्षा वर्णन है । तहा प्रसग पाइ मिथ्यादृष्टि विषै तीर्थकर सत्तावाले कै नरकायु ही का सत्त्व होइ ताका, वा एकेंद्रियादिक कै उद्वेलना का अर सासादन विषै आहार सत्ता के विशेष का, मिश्र विषै अनतानुवधीरहित सत्त्वस्थान जैसे सभवै ताका, असयत विषै मनुष्यायु-तीर्थकर सहित एक सौ अडतीस प्रकृति की सत्तावाले कै दोय वा तीन ही कल्याणक होइ ताका, अपूर्वकरणादि विषै उपशमक-क्षपक श्रेणी अपेक्षा का इत्यादि अनेक वर्णन है । वहुरि आचार्यनि के मतकरि जो विशेष है ताकौं कहि तिस अपेक्षा कथन है ।

वहुरि चौथा त्रिचूलिका नामा अधिकार है । तहा प्रथम नव प्रश्नकरि चूलिका का व्याख्यान है । तिसविषै पहिलै तीन प्रश्नकरि तिनका उत्तर विषै जिन प्रकृतिनि की उदयव्युच्छित्ति तै पहिले वधव्युच्छित्ति भई तिनका, अर जिनकी उदयव्युच्छित्ति तै पीछै वधव्युच्छित्ति भई तिनका, अर जिनकी उदयव्युच्छित्ति-वधव्युच्छित्ति युगपत् भई तिनका वर्णन है । वहुरि दूसरा – तीन प्रश्नकरि तिनका उत्तर विषै जिनका अपना उदय होतै ही वध होइ तिनका, अर जिनका अन्य प्रकृतिनि का उदय होतै ही वध होइ तिनका, अर जिनका अपना वा अन्य प्रकृतिनि का उदय होतै वध होय तिन प्रकृतिनि का वर्णन है । वहुरि तीसरा – तीन प्रश्नकरि तिनका उत्तर विषै जिनका निरन्तर वध होइ तिनका, अर जिनका सातर वध होइ तिनका, अर जिनका सातर वा निरतर वध होइ तिनका कथन है । इहा तीर्थकरादि प्रकृति निरतर वधी जैसे है ताका, अर सप्रतिपक्ष-नि प्रतिपक्ष अवस्था विषै सातर-निरतर वध जैसे सभवै है ताका वर्णन है ।

वहुरि दूसरी पचभागहारचूलिका का व्याख्यान विषै मंगलाचरणकरि उद्वेलन, विध्यात, अधःप्रवृत्त, गुणसक्रम, सर्वसक्रम – इन पच भागहारनि के नाम का, अर स्वरूप का, अर ते भागहार जिनि-जिनि प्रकृतिनि विषै वा गुणस्थाननि विषै सभवै ताका वर्णन है । अर सर्वसक्रमभागहार, गुणसक्रमभागहार, उत्कर्षण वा अपकर्षणभागहार, अध प्रवृत्तभागहार, योगनि विषै गुणकार, स्थिति विषै नानागुणहानि, पल्य के अर्धच्छेद, पल्य का वर्गमूल, स्थिति विषै गुणहानि-आयाम, स्थिति विषै अन्योन्याभ्यस्त राशि, पल्य, कर्म की उत्कृष्ट स्थिति, विध्यातसक्रमभागहार, उद्वेलनभागहार,

अनुभाग विषै नानागुणहानि, गुणहानि, द्वयर्द्धगुणहानि, दो गुणहानि, अन्योन्याभ्यस्त इनका प्रमाणपूर्वक अल्पबहुत्व का कथन है ।

बहुरि तीसरी दशकरणचूलिका का व्याख्यान विषै बध, उत्कर्षण, सक्रम, अपकर्षण, उदीर्णा, सत्त्व, उदय, उपशम, निधत्ति, नि काचना – इन दशकरणनि के नाम का, स्वरूप का, जिनि-जिनि प्रकृतिनि विषै वा गुणस्थाननि विषै जैसै सभवै तिनका वर्णन है ।

बहुरि पांचवां बंध-उदय-सत्त्वसहित स्थानसमुत्कीर्तन नामा अधिकार विषै मगलाचरण करि एक जीव कै युगपत् सभवता बधादिक प्रकृतिनि का प्रमाणरूप स्थान वा तहा प्रकृति बदलने करि भये भगनि का वर्णन है । तहा मूल प्रकृतिनि के बधस्थाननि का, अर तहा सभवते भुजाकारादि बध विशेष का, अर भुजाकार, अल्पतर, अवस्थित, अवक्तव्यरूप बध विशेषनि के स्वरूप का, अर मूल प्रकृतिनि कै उदयस्थान, उदीर्णास्थान, सत्त्वस्थाननि का वर्णन है । बहुरि उत्तर प्रकृतिनि का कथन विषै दर्शनावरण, मोहनीय, नाम की प्रकृतिनि विषै विशेष है ।

तहा दर्शनावरण के बधस्थाननि का, अर तहा गुणस्थान अपेक्षा भुजाकारादि विशेष संभवने का, अर दर्शनावरण के गुणस्थाननि विषै सभवते बधस्थान, उदयस्थान, सत्त्वस्थाननि का वर्णन है ।

बहुरि मोहनीय के बधस्थाननि का, अर ते गुणस्थाननि विषै जैसै सभवे ताका, अर तहा प्रकृतिनि के नाम जानने कौ ध्रुवबधी प्रकृति, वा कूटरचना आदिक का, अर तहा प्रकृति बदलने तै भए भगनि का, अर तिन बधस्थाननि विषै सभवते भुजाकारादि विशेषनि का, वा भुजाकारादिक के लक्षण का, वा सामान्य-अवक्तव्य भगनि की सख्या का, अर भुजाकारादि सभवने के विधान का, अर इहा प्रसग पाइ गुणस्थाननि विषै चढना, उतरना इत्यादि विशेषनि का वर्णन है । बहुरि मोह के उदयस्थाननि का, अर गुणस्थाननि विषै सभवता दर्शनमोह का उदय कहि तहा सभवते मोह के उदयस्थाननि का, अर तहा प्रकृत्यादि के जानने कू कूटरचना आदि का, अर तहा प्रकृति बदलने तै भए भगनि का, अर अनिवृत्तिकरण विषै वेदादिक के उदयकालादिक का, अर सर्वमोह के उदयस्थान, अर तिनकी प्रकृतिनि का विधान, वा संख्या वा मिलाई हुई सख्या का, अर गुणस्थाननि विषै सभवते उपयोग, योग, सयम, लेश्या, सम्यक्त्व तिनकी अपेक्षा मोह के उदयस्थाननि का, वा तिनकी प्रकृतिनि

का विधान, सख्या आदिक का, तहा अनतानुबधी रहित उदयस्थान मिथ्यादृष्टि की अपर्याप्त-अवस्था में न पाइए इत्यादि विशेष का वर्णन है ।

बहुरि मोह के सत्त्वस्थाननि का वा तहा प्रकृति घटने का, अर ते स्थान गुणस्थाननि विषै जैसै सभवै ताका, अर अनिवृत्तिकरण विषै विशेष है ताका वर्णन है ।

बहुरि नामकर्म का कथन विषै आधारभूत इकतालीस जीवपद, चौंतीस कर्मपदनि का व्याख्यान करि नाम के बधस्थाननि का अर ते गुणस्थाननि विषै जैसै सभवै ताका, अर ते जिस-जिस कर्मपदसहित बधै है ताका, अर तिनविषै क्रम तै नवध्रुवबधी आदि प्रकृतिनि के नाम का, अर तेइस के नै आदि दै करि नाम के बधस्थाननि विषै जे-जे प्रकृति जैसै पाइए ताका, अर तहा प्रकृति बदलने तै भए भगनि का वर्णन है। अर इहा प्रसग पाइ जीव मरि जहा उपजै ताका वर्णन विषै प्रथमादि पृथ्वी नारकी मरि जहा उपजै वा न उपजै ताका, तहा प्रसग पाइ स्वयभू-रमण-समुद्रपरै कूणानि विषै कर्मभूमिया तिर्यंच है इत्यादि विशेष का, अर बादर-सूक्ष्म, पर्याप्त-अपर्याप्त अग्निकायिक आदि जीव जहा उपजै ताका, तहा सूक्ष्मनिगोद तै आए मनुष्य सकल सयम न ग्रहै इत्यादि विशेष का, अर अपर्याप्त मनुष्य जहा उपजै ताका, अर भोगभूमि-कुभोगभूमि के तिर्यच-मनुष्य, अर कर्मभूमि के मनुष्य जहा उपजै ताका, अर सर्वार्थसिद्धि तै लगाय भवनत्रिक पर्यंत देव जहा उपजै ताका वर्णन है। बहुरि जैसै च्यवन-उत्पाद कहि चौदह मार्गणानि विषै गुणस्थाननि की अपेक्षा लीए जैसै जे-जे नामकर्म के बधस्थान सभवै तिनका वर्णन है ।

तहा गति, इद्रिय, काय, योग, वेद मार्गणानि विषै तो लेश्या अपेक्षा बधस्थाननि का कथन है। कषाय मार्गणा विषै अनतानुबधी आदि जैसै उदय हो है ताका, वा इनके देशघाती-सर्वघाती स्पर्द्धकनि का, वा सम्यक्त्व-सयम घातने का, वा लेश्या अपेक्षा बधस्थाननि का कथन है। अर ज्ञान मार्गणा विषै गति आदिक की अपेक्षा करि बधस्थाननि का कथन है। अर सयम मार्गणा विषै सामायिकादिक के स्वरूप का, अर सयतासयत विषै दोय गति अपेक्षा, अर असयम विषै च्यारि गति अपेक्षा बधस्थाननि का कथन है। तहा निर्वृत्यपर्याप्त देव के बधस्थान कहने कौं देवगति विषै जे-जे जीव जहा पर्यंत उपजै ताका, अर सासादन विषै बधस्थान कहने कौ जे-जे जीव जैसै उपशम-सम्यक्त्व कौ छोडि सासादन होइ ताका इत्यादि कथन है। अर दर्शन मार्गणा विषै गति अपेक्षा बधस्थाननि का कथन है ।

अर लेश्या मार्गणा विषै प्रथमादि नरक पृथ्वीनि विषै लेश्या सभवने का, जिस-जिस सहनन के धारी जे-जे जीव जहा-जहा पर्यंत नरकविषै उपजै ताका, नरकनिविषै पर्याप्त-निर्वृत्यपर्याप्त अवस्था अपेक्षा बधस्थाननि अर का, तिर्यच विषै एकेद्रियादिक कै वा भोगभूमिया तिर्यंच कै जो-जो लेश्या पाइए ताका, अर जे-जे जीव जिस-जिस लेश्याकरि तिर्यंच विषै उपजै ताका, अर तिनकै निर्वृत्यपर्याप्त अवस्था विषै बधस्थाननि का, अर जहा तै आए सासादन वा असयत होइ अर तिनके जे बधस्थान होइ ताका, अर शुभाशुभलेश्यानि विषै परिणामनि का, तहा प्रसग पाइ कषायनि के स्थान वा तहा सक्लेश-विशुद्धस्थान वा कषायनि के च्यारि शक्तिस्थान, चौदह लेश्या स्थान, बीस आयु बन्धाबन्धस्थान तिनका, अर लेश्यानि के छब्बीस अश, तहा आठ मध्यम अश आयुबन्ध कौ कारण, ते आठ अपकर्षकालनि विषै होइ, अन्य अठारह अश च्यारि गतिनि विषै गमन कौ कारण तिनके विशेष का, अर लेश्यानि के पलटने के क्रम का वर्णन करि, तिर्यंच कै मिथ्यादृष्टि आदि विषै जैसै मिथ्यात्व-कषायनि का उदय पाइए है ताकौं कहि, तहा जे बधस्थान पाइए ताका, अर भोगभूमिया तिर्यच कै वा प्रसग पाई औरनि कै जैसै निर्वृत्यपर्याप्त वा पर्याप्त मिथ्यादृष्टि आदि विषै जैसै लेश्याकरि बधस्थान पाइए, वा भोगभूमि विषै जैसै उपजना होइ ताका वर्णन है ।

बहुरि मनुष्यगति विषै लब्धिअपर्याप्त, निर्वृत्यपर्याप्त, पर्याप्त दशा विषै जो-जो लेश्या पाइए वा तहा सभवते गुणस्थाननि विषै बधस्थान पाइए ताका वर्णन है ।

बहुरि देवगति विषै भवनत्रिकादिक कै निर्वृत्यपर्याप्त वा पर्याप्त दशा विषै जो-जो लेश्या पाइए, वा देवनि के जहा जन्मस्थान है वा जे जीव जिस-जिस लेश्याकरि जहा-जहा देवगति विषै उपजै, वा निर्वृत्यपर्याप्त वा पर्याप्त-दशा विषै मिथ्यादृष्टि आदि जीवनी कै जे-जे बधस्थान पाइए तिनका, अर तहा प्रासगिक गाथानिकरि जे-जे जीव जहा-जहा पर्यंत देवगति विषै उपजै, वा अनुदिशादिक विमाननि तै चयकरि जे पद न पावै, वा जे जीव देवगति तै चयकरि मनुष्य होइ निर्वाण ही जाय, वा जहा के आये तिरेसठि शलाका पुरुष न होइ, वा देवपर्याय पाइ जैसै जिनपूजादिक कार्य करै तिनका वर्णन है ।

बहुरि भव्यमार्गणा विषै बधस्थाननि का वर्णन है ।

बहुरि सम्यक्त्व मार्गणा विषै सम्यक्त्व के लक्षण का, भेदनि का, जहां मरण न होय ताका, अर प्रथमोपशम सम्यक्त्व जाकै होइ ताका, वा वाकै जिन प्रकृतिनि

का उपशम होइ ताका, तहा लब्धि आदि होने का, अर प्रथमोपशम सम्यक्त्व भए मिथ्यात्व के तीन खड हो हैं ताका, तहा नारकादिक कै जे बंधस्थान पाइए तिनका, तहा नरक विषै तीर्थंकर के बध होने के विधान का, वा साकार-उपयोग होने का, वा निसर्गज-अधिगमज के स्वरूप का अर द्वितीयोपशम सम्यक्त्व जाकै होइ ताका, तहा अपूर्वकरणादि विषै जो-जो क्रिया करता चढै वा उतरै ताका, तहा जे बधस्थान सभवैं ताका, वा तहा मरि देव होय ताकै बधस्थान सभवै ताका वर्णन है । बहुरि क्षायिक सम्यक्त्व का प्रारभ-निष्ठापन जाकै होइ ताका, वा तहा तीन करण हो हैं तिनका, तहा गुणश्रेणी आदि होने का अर अनतानुबधी का विसयोजनकरि पीछै केई क्रिया करि करणादि विधान तै दर्शनमोह क्षपावने का, अर तहा प्रारभ-निष्ठापन के काल का, वा तिनके स्वामीनि का, वा तहा तीर्थंकर सत्तावाले के तद्भव-अन्यभव विषै मुक्ति होने का वर्णनकरि क्षायिक सम्यक्त्व विषै सभवते बधस्थाननि का वर्णन है । बहुरि वेदक-सम्यक्त्व जिनकै होइ अर प्रथमोपशम, द्वितीयोपशम सम्यक्त्व तै वा मिथ्यात्व तै जैसै वेदक सम्यक्त्व होइ, अर तिनकै जे बधस्थान पाइए तिनका वर्णन है ।

बहुरि सासादन, मिश्र, मिथ्यात्व जहा-जहा जिस-जिस दशा विषै सभवै अर तहा जे बधस्थान पाइए तिनका वर्णन है । तहा प्रसग पाइ विवक्षित गुणस्थान तै जिस-जिस गुणस्थान को प्राप्त होइ ताका वर्णन है ।

बहुरि सज्ञी अर आहार मार्गणा विषै बधस्थाननि का वर्णन है । बहुरि नाम के बधस्थाननि विषै भुजाकारादि कहने कौ पुनरुक्त, अपुनरुक्त भगनि का, अर स्वस्थानादि तीन भेदनि का, प्रसग पाइ गुणस्थाननि तै चढने-उतरने का, जहा मरण न होइ ताका, कृतकृत्य-वेदक सम्यग्दृष्टि मरि जहा उपजै ताका, भुजाकारादिक के लक्षण का, अर इकतालीस जीव पदनि विषै भगसहित बधस्थाननि का वर्णन करि मिथ्यादृष्ट्यादि गुणस्थाननि विषै सभवते भुजाकार, अल्पतर, अवस्थित, अवक्तव्य भंगनि का वर्णन है ।

बहुरि नाम के उदयस्थाननि का वर्णन विषै कार्माण[१], मिश्रशरीर, शरीरपर्याप्ति, उच्छ्वासपर्याप्ति, भाषापर्याप्ति इन पचकालनि का स्वरूप प्रमाणादिक कहि, वा केवली के समुद्घात अपेक्षा इनका सभवपना कहि, नाम के उदयस्थान हानि

१. 'होने का' ऐसा ख पुस्तक मे पाठ है ।

का विधान विषै ध्रुवोदयी आदि प्रकृतिनि का वर्णन करि, तिन पचकालनि की अपेक्षा लीए जिस-जिस प्रकार वीस प्रकृति रूप स्थान तै लगाय सभवते नाम के उदयस्थाननि का, अर तहा प्रकृति बदलने करि सभवते भंगनि का वर्णन है। बहुरि नाम के सत्त्वस्थाननि का वर्णन विषै तिराणवे प्रकृतिरूप स्थान आदि जैसै जै सत्त्वस्थान है तिनका, अर तहा जिन प्रकृतिनि की उद्वेलना हो है तिनके स्वामी वा क्रम वा कालादिक विशेष का, अर सम्यक्त्व, देशसयम, अनतानुबधी का विसयोजन, उपशमश्रेणी चढना, सकलसंयम धरना, ए उत्कृष्टपनै केती वार होइ तिनका, अर च्यारि गति की अपेक्षा लीए गुणस्थाननि विषै जे सत्त्वस्थान सभवै तिनका, अर इकतालीस जीवपदनि विषै सत्त्वस्थान सभवै तिनका वर्णन है।

बहुरि त्रिसयोग विषै स्थान वा भगनि का वर्णन है। तहा मूल प्रकृतिनि विषै जिस-जिस बधस्थान होतै जो-जो उदय वा सत्त्वस्थान होइ ताका, अर ते गुणस्थाननि विषै जैसै सभवै ताका वर्णन है। बहुरि उत्तर प्रकृतिनि विषै ज्ञानावरण, अतराय का तौ पाच-पाच ही का बंध, उदय, सत्त्व होइ; तातै तहा विशेष वर्णन नाही। अर दर्शनावरण विषै जिस-जिस बधस्थान होतै जो-जो उदय वा सत्त्वस्थान गुणस्थान अपेक्षा सभवै ताका वर्णन है, अर वेदनीय विषै एक-एक प्रकृति का उदय-बध होतै भी प्रकृति बदलने की अपेक्षा, वा सत्त्व दोय का वा एक का भी हो है, ताकी अपेक्षा गुणस्थान विषै सभवते भगनि का वर्णन है। बहुरि गोत्र विषै नीच-उच्च गोत्र के बध, उदय, सत्त्व के बदलने की अपेक्षा गुणस्थाननि विषै सभवते भगनि का वर्णन है। बहुरि आयु विषै भोगभूमिया आदि जिस काल विषै आयुबध करै ताका, एकेद्रियादि जिस आयु कौ बाधै ताका, नारकादिकनि कै आयु का उदय, सत्त्व सभवै ताका, अर आठ अपकर्ष विषै बधै ताका, तहा दूसरी, तीसरी बार आयुबध होने विषै घटने-बधने का, अर बध्यमान-भुज्यमान आयु के घटनेरूप अपवर्तनघात, कदलीघात का वर्णन करि बध, अबध, उपरितबध की अपेक्षा गुणस्थाननि विषै सभवते भगनि का वर्णन है। बहुरि वेदनीय, गोत्र, आयु इनके भग मिथ्यादृष्टचादि विषै जेते-जेते सभवै, वा सर्व भग जेते-जेते है तिनका वर्णन है।

बहुरि मोह के स्थाननि की अपेक्षा भंग कहि गुणस्थाननि विषै बध, उदय, सत्त्वस्थान जैसै पाइए ताका वर्णन करि मोह के त्रिसयोग विषै एक आधार, दोय आधेय, तीन प्रकार, तहां जिस-जिस बधस्थान विषै जो-जो उदयस्थान, वा

सत्त्वस्थान सभवै, अर जिस-जिस उदयस्थान विषै जो-जो बधस्थान वा सत्त्वस्थान सभवै, अर जिस-जिस सत्त्वस्थान विषै जो-जो बधस्थान वा उदयस्थान सभवै तिनका वर्णन है। वहुरि मोह के बध, उदय, सत्त्वनि विषै दोय आधार, एक आधेय तीन प्रकार, तहा जिस-जिस बधस्थानसहित उदयस्थान विषै जो-जो सत्त्वस्थान जिसप्रकार सभवै, अर जिस-जिस बधस्थानसहित सत्त्वस्थान विषै जो-जो उदयस्थान संभवै अर जिस-जिस उदयस्थान सहित सत्त्वस्थान विषै जो-जो बधस्थान पाइए ताका वर्णन है। बहुरि नामकर्म के स्थानोक्त भग कहि गुणस्थाननि विषै, अर चौदह जीवसमासनि विषै अर गति आदि मार्गणानि के भेदनि विषै सभवते बध, उदय, सत्त्वस्थाननि का वर्णनकरि एक आधार, दोय आधेय का वर्णन विषै जिस-जिस बधस्थाननि विषै जो-जो उदयस्थान वा सत्त्वस्थान जिसप्रकार सभवै, अर जिस-जिस उदयस्थान विषै जो-जो बधस्थान वा सत्त्वस्थान जिसप्रकार सभवै, अर जिस-जिस सत्त्वस्थान विषै जो-जो बधस्थान वा उदयस्थान जिस-जिसप्रकार सभवै तिनका वर्णन है। बहुरि दोय आधार, एक आधेय विषै जिस-जिस बधस्थानसहित उदय स्थान विषै जो-जो सत्त्वस्थान सभवै, अर जिस-जिस बधस्थानसहित सत्त्वस्थान विषै जो-जो उदयस्थान सभवै अर जिस-जिस उदयस्थानसहित सत्त्वस्थान विषै जो-जो बधस्थान पाइए तिनका वर्णन है।

बहुरि छठा प्रत्यय अधिकार है, तहा नमस्कारपूर्वक प्रतिज्ञा करि च्यारि मूल आस्रव अर सत्तावन उत्तरआस्रवनि का, अर ते जैसै गुणस्थाननि विषै सभवै ताका, तहा व्युच्छित्ति वा आस्रवनि के प्रमाण, नामादिक का वर्णन करि, तहा विशेष जानने कौ पच प्रकारनि का वर्णन है। तहा प्रथम प्रकार विषै एक जीव कै एकै काल सभवै ऐसे जघन्य, मध्यम, उत्कृष्टरूप आस्रवस्थान जेते-जेते गुणस्थाननि विषै पाइए तिनका वर्णन है।

वहुरि दूसरा प्रकार विषै एक-एक स्थान विषै आस्रवभेद बदलने तै जेते-जेते प्रकार होइ तिनका वर्णन है।

वहुरि तीसरा प्रकार विषै तिन स्थाननि के प्रकारनि विषै सभवते आस्रवनि की अपेक्षा कूटरचना के विधान का वर्णन है।

बहुरि चौथा प्रकार विषै तिनहू कूटनि के अनुसारि अक्षसचारि विधान तै जैसे आस्रवस्थाननि कौ कहने का विधानरूप कूटोच्चारण विधान का वर्णन है। तहा

अविरत विषै युगपत् सभवतै हिसा के प्रत्येक द्विसयोगी आदि भेदनि का, अर ते भेद जेते होइ ताका वर्णन है ।

बहुरि पाचवा प्रकार विषै तिन स्थाननि विषै भंग ल्यावने के विधान का वा गुणस्थाननि विषै संभवते भंगनि का, तहाँ अविरत विषै हिसा के प्रत्येक द्विसयोगी आदि भंग ल्यावने कौ गणितशास्त्र के अनुसार प्रत्येक द्विसंयोगी, त्रिसयोगी आदि भगनि के ल्यावने के विधान का वर्णन है । बहुरि आस्रवनि के विशेषभूत जिनि-जिनि भाव तै स्थिति-अनुभाग की विशेषता लीये ज्ञानावरणादि जुदि-जुदि प्रकृति का बध होइ तिनका क्रम तै वर्णन है ।

बहुरि सातवां भावचूलिका नामा अधिकार है। तहा नमस्कारपूर्वक प्रतिज्ञा करि भावनि तै गुणस्थानसज्ञा हो है ऐसै कहि पच मूल भावनि का, अर इनके स्वरूप का,[१] अर तिरेपन उत्तर भावनि का, अर मूल-उत्तर भावनि विषै अक्षसचार विधान तै प्रत्येक परसयोगी, स्वसयोगी, द्विसयोगी आदि भग जैसे होइ ताका, अर नाना जीव, नाना काल अपेक्षा गुणस्थान विषै सभवते भावनि का वर्णन है ।

बहुरि एक जीव कै युगपत् सभवते भावनि का वर्णन है । तहा गुणस्थाननि विषै मूल भावनि के प्रत्येक, परसयोगी, द्विसयोगी आदि सभवते भगनि का वर्णन है । तहा प्रसग पाइ प्रत्येक, द्विसयोगी, त्रिसयोगी आदि भग ल्यावने के गणितशास्त्र अनुसार विधान वर्णन है । बहुरि गुणस्थाननि विषै मूल भावनि की वा तिनके भगनि की सख्या का वर्णन है ।

बहुरि उत्तर भावनि के भग स्थानगत, पदगत भेद तै दोय प्रकार कहे है । तहा एक जीव कै एक काल सभवते भावनि का समूह सो स्थान । तिस अपेक्षा जे स्थानगत भग, तिन विषै स्वसयोगी भग के अभाव का अर गुणस्थाननि विषै सभवते औपशमिकादिक भावनि का अर औदयिक के स्थाननि के भगनि का वर्णन करि तहा सभवते स्थाननि के परस्पर सयोग की अपेक्षा गुण्य, गुणकार, क्षेपादि विधान तै जैसे जेतै प्रत्येक भग अर परसयोगी विषै द्विसयोगी आदि भग होइ तिनका, अर तहा गुण्य, गुणकार, क्षेप का प्रमाण कहि सर्वभगनि के प्रमाण का वर्णन है ।

बहुरि जातिपद, सर्वपद भेदकरि पदगत भग दोय प्रकार, तिनका स्वरूप कहि गुणस्थाननि विषै जेते-जेते जातिपद सभवै तिनका, अर तिनकौं परस्पर

१. ख पुस्तक मे यह पाठ नही है ।

लगावने की अपेक्षा गुण्य, गुणकार, क्षेप आदि विधान तै जेते-जेते प्रत्येक स्वसयोगी परसयोगी, द्विसयोगी आदि भग सभवै तिनका, अर तहा गुण्य, गुणकार, क्षेप का प्रमाण कहि सर्व भगनि के प्रमाण का वर्णन है ।

बहुरि पिंडपद, प्रत्येकपद भेदकरि सर्वपद भग दोय प्रकार है । तिनके स्वरूप का, अर गुणस्थान विषै ए जेतै जैसै सभवै ताका, अर तहा परस्पर लगावने तै प्रत्येक द्विसयोगी आदि भग कीए जे भग होहि तिनका, तहा मिथ्यादृष्टि का पन्द्रहवा प्रत्येक पद विषै भग ल्यावने का, प्रसग पाइ गणितशास्त्र के अनुसार एकवार, दोयवार आदि सकलन धन के विधान का, अर गुणस्थाननि विषै प्रत्येकपद, पिंडपदनि की रचना के विधान का, अर प्रत्येकपदनि के प्रमाण का, अर तहा जेते सर्वपद भग भए तिनका वर्णन है । बहुरि यहा तीनसै तिरेसठि कुवाद के भेदनि का अर तिन विषै जैसै प्ररूपण है ताका, अर एकान्तरूप मिथ्यावचन, स्याद्वादरूप सम्यग्वचन का वर्णन है ।

बहुरि आठवा त्रिकरण चूलिका नामा अधिकार है । तहा मगलाचरण करि करणनि का प्रयोजन कहि अध करण का वर्णन विषै ताके काल का अर तहा सभवते सर्व परिणाम, प्रथम समय सबधी परिणाम, अर समय-समय प्रति वृद्धिरूप परिणाम, वा द्वितीयादि समय सबन्धी परिणाम, वा समय-समय सम्बन्धी परिणामनि विषै खड रचनाकरि अनुकृष्टि विधान, तहा खडनि विषै प्रथम खड विषै वा खड-खड प्रति वृद्धिरूप वा द्वितीयादि खडनि विषै परिणाम तिनका अंकसदृष्टि वा अर्थ अपेक्षा वर्णन है । तहा श्रेणीव्यवहार नामा गणित के सूत्रनि के अनुसार ऊर्ध्वरूप गच्छ, चय, उत्तर धन, आदि धन, सर्व धनादिक का, अर अनुकृष्टि विषै तिर्यग्रूप गच्छादिक के प्रमाण ल्यावने का विधान वर्णन है । अर तिन खडनि विषै विशुद्धता का अल्प-बहुत्व का वर्णन है । बहुरि अपूर्वकरण का वर्णन विषै अनुकृष्टि विधान नाही, ऊर्ध्वरूप गच्छादिक का प्रमाण ल्यावने का विधान पूर्वक ताके काल का वा सर्व परिणाम, प्रथम समयसबन्धी परिणाम, समय-समय प्रति वृद्धिरूप परिणाम, द्वितीयादि समय सबन्धी परिणाम, तिनका अकसदृष्टि वा अर्थ अपेक्षा वर्णन है । बहुरि अनिवृत्ति करण विषै भेद नाही, तातै तहा कालादिक का वर्णन है ।

बहुरि नवमा कर्मस्थिति अधिकार है । तहा नमस्कारपूर्वक प्रतिज्ञाकरि आबाधा के लक्षण का वा स्थिति अनुसार ताके काल का, वा उदीर्णा अपेक्षा

आबाधाकाल का वर्णन है। बहुरि कर्मस्थिति विषै निषेकनि का वर्णन है। बहुरि प्रथमादि गुणहानिनि के प्रथमादि निषेकनि का वर्णन है। बहुरि स्थितिरचना विषै द्रव्य, स्थिति, गुणहानि, नानागुणहानि, दोगुणहानि, अन्योन्याभ्यस्त इनके स्वरूप, का, अर अंकसंदृष्टि वा अर्थ अपेक्षा तिनके प्रमाण का वर्णन है। तहा नानागुणहानि अन्योन्याभ्यस्त राशि सर्व कर्मनि का समान नाही, ताते इनका विशेष वर्णन है। तहा मिथ्यात्वकर्म की नानागुणहानि, अन्योन्याभ्यस्त जानने का विधान वर्णन है। इहा प्रसंग पाइ **'अंतधणं गुणगुणियं'** इत्यादि करणसूत्रकरि गुणकाररूप पक्ति के जोडने का विधान आदि वर्णन है। बहुरि गुणहानि, दो गुणहानि के प्रमाण का वर्णन है। तहा ही विशेष जो चय ताका प्रमाण वर्णन है। ऐसे प्रमाण कहि प्रथमादि गुणहानिनि का वा तिनविषै प्रथमादि निषेकनि का द्रव्य जानने का विधान वा ताका प्रमाण अंकसंदृष्टि वा अर्थ अपेक्षा वर्णन है। बहुरि मिथ्यात्ववत् अन्यकर्मनि की रचना है। तहा गुणहानि, दो गुणहानि तो समान है, अर नानागुणहानि, अन्योन्याभ्यस्त राशि समान नाही। तिनके जानने कौ सात पक्ति करि विधान कहि तिनके प्रमाण का, अर जिस-जिसका जेता-जेता नानागुणहानि, अन्योन्याभ्यस्त का प्रमाण आया, ताका वर्णन है। बहुरि ऐसे कहि अकसदृष्टि अपेक्षा त्रिकोणयत्र, अर त्रिकोणयत्र का प्रयोजन, अर तहा एक-एक निषेक मिलि एक समयप्रबद्ध का उदय त्रिकोणयत्र हो है। अर सर्व त्रिकोणयत्र के निषेक जोड़ै किचिदून द्वयर्द्धगुणहानि गुणित समयप्रबद्ध प्रमाण सत्त्व हो है तिनका वर्णन है। बहुरि निरंतर-सातररूप स्थिति के भेद, स्वरूप स्वामीनि का वर्णन है। बहुरि स्थितिबध कौ कारण जे स्थितिबधाध्यवसायस्थान तिनका वर्णन विषै आयु आदि कर्म के स्थितिबधाध्यवसायस्थाननि के प्रमाण का अर स्थितिबधाध्यवसाय के स्वरूप जानने कौ सिद्धात वचनिका वर्णनकरि स्थिति के भेदनि कौ कहि तिन विषै जेते-जेते स्थितिबधाध्यवसायस्थान सभवै तिनके जानने कौ द्रव्य, स्थिति, गुणहानि, नानागुणहानि, दो-गुणहानि, अन्योन्याभ्यस्त का वा चय का, वा प्रथमादि गुणहानिनि का, वा तिनके निषेकनि का, वा आदि धनादिक का द्रव्यप्रमाण अर ताके जानने का विधान, ताका वर्णन है। बहुरि इहा एक-एक स्थितिभेद सबधी स्थितिबन्धाध्यवसायस्थननि विषै नानाजीव अपेक्षा खंड हो है। तहा ऊपरली-नीचली स्थिति संबंधी खड समान भी हो हैं, ताते तहा अनुकृष्टि-रचना का वर्णन है। तहा आयुकर्म का जुदा ही विधान है, ताते पहिले आयु की कहि, पीछे मोहादिक की अनुकृष्टि-रचना का अकसंदृष्टि वा अर्थ अपेक्षा वर्णन है। तहा

खडनि की समानता-असमानता इत्यादि अनेक कथन है । वहुरि अनुभागवध को कारण जे अनुभागाध्यवसायस्थान तिनका वर्णन विषै तिन सर्वनि का प्रमाण कहि, तहा एक-एक स्थितिभेद सबधी स्थितिबधाध्यवसायस्थाननि विषैं द्रव्य, स्थिति, गुणहानि आदि का प्रमाणादिक कहि एक-एक स्थितिबधाध्यवसायस्थानरूप जे निषेक तिनविषैं जेते-जेते अनुभागाध्यवसायस्थान पाइए तिनका वर्णन है । वहुरि मूलग्रथकर्त्ताकरि कीया हुवा ग्रथ की सपूर्णता होने विषै ग्रथ के हेतु का, चामुडराय राजा को आशीर्वाद का, ताकरि बनाया चैत्यालय वा जिनबिब का, वीरमार्तंड राजा कौ आशीर्वाद का वर्णन है । बहुरि सस्कृत टीकाकार अपने गुरुनि का वा ग्र थ होने के समाचार कहे है तिनका वर्णन है ।

असें श्रीमद् गोम्मटसार द्वितीय नाम पंचसंग्रह मूलशास्त्र, ताकी जीवतत्त्व-प्रदीपिका नामा संस्कृतटीका के अनुसार इस भाषाटीका विषै अर्थ का वर्णन होसी ताकौं सूचनिका कही ।

अर्थसंदृष्टि सम्बन्धी प्रकरण

बहुरि तहा जे सदृष्टि हैं, तिनका अर्थ, वा कहे अर्थ तिनकी सदृष्टि जानने कौं इस भाषाटीका विषै जुदा ही सदृष्टि अधिकार विषै वर्णन होसी ।

इहां कोऊ कहै – अर्थ का स्वरूप जान्या चाहिए, सदृष्टिनि के जानै कहा सिद्धि हो है ?

ताका समाधान – सदृष्टि जानै पूर्वाचार्यनि की परपरा तै चल्या आया जो सकेतरूप अभिप्राय, ताकौं जानिए है । अर थोरे में बहुत अर्थ कौ नीकै पहिचानिए है । अर मूलशास्त्र वा सस्कृतटीका विषै, वा अन्य ग्रथनि विषै, जहा सदृष्टिरूप व्याख्यान है, तहा प्रवेश पाइये है । अर अलौकिक गणित के लिखने का विधान आदि चमत्कार भासै है । अर सदृष्टिनि कौं देखते ही ग्रथ की गभीरता प्रगट हो है – इत्यादि प्रयोजन जानि सदृष्टि अधिकार करने का विचार कीया है ।

तहा केई सदृष्टि आकाररूप है, केई अकरूप है, केई अक्षररूप है, केई लिखने ही का विशेषरूप है, सो तिस अधिकार विषै पहिले तौ सामान्यपनै सदृष्टिनि का वर्णन है, तहा पदार्थनि के नाम तै, सख्या तै अर अक्षरनि तै अकनि की अर प्रभृति आदि की सदृष्टिनि का वर्णन है ।

बहुरि सामान्य संख्यात, असंख्यात,अनंत की, अर इनके इकईस भेदनि की, अर पल्य आदि आठ उपमा प्रमाण की, अर इनके अर्धच्छेद वा वर्गशलाकानि की सदृष्टिनि का वर्णन है। बहुरि परिकर्माष्टक विषै संकलनादि होतै जैसै सहनानि हो है अर बहुत प्रकार संकलनादि होतै वा संकलनादि आठ विषै एकत्र दोय, तीन आदि होतै जो सहनानी हो है, वा सकलनादि विषै अनेक सहनानी का एक अर्थ हो है इत्यादिकिनि का वर्णन है। अर स्थिति-अनुभागादिक विषै आकाररूप सहनानी है, वा केई इच्छित सहनानी है, इत्यादिकनि का वर्णन है । असै सामान्य वर्णन करि पीछे श्रीमद् गोम्मटसार नामा मूलशास्त्र वा ताकी जीवतत्त्वप्रदीपिका नामा टीका, ताविषै जिस-जिस अधिकार विषै कथन का अनुक्रम लीए सख्यादिक अर्थ की जैसे-जैसे सदृष्टि है, तिनका अनुक्रम तै वर्णन है। तहा केई करण वा त्रिकोणयत्र का जोड इत्यादिकनि का संदृष्टिनि का सस्कृत टीका विषै वर्णन था अर भाषा करतै अर्थ न लिख्या था, तिनका इस सदृष्टि अधिकार विषै अर्थ लिखिएगा। अर मूलशास्त्र के यत्ररचना विषै वा सस्कृत टीका विषै केई संदृष्टिरूप रचना ही लिखी थी। तिनकौ अर्थपूर्वक इस सदृष्टि अधिकार विषै लिखिएगा, सो इहा तिनकी सूचनिका लिखै विस्तार होई, तातै तहा ही वर्णन होगा सो जानना।

इहां कोऊ कहै – मूलशास्त्र वा टीका विषै जहा सदृष्टि वा अर्थ लिख्या था, तहा ही तुम भी तिनके अर्थनि का निरूपण करि क्यो न लिखान किया ? तहा छोडि तिनकौ एकत्र करि सदृष्टि अधिकार विषै कथन किया सो कौन कारण ?

तहां समाधान – जो यहु टीका मदबुद्धीनि कै ज्ञान होने के अर्थि करिए है, सो या विषै बीचि-बीचि सदृष्टि लिखने तै कठिनता तिनकौ भासै, तब अभ्यास तै विमुख होइ, तातै जिनकौ अर्थमात्र ही प्रयोजन होहि, सो अर्थ ही का अभ्यास करौ अर जिनकौ सदृष्टि कौ भी जाननी होइ, ते सदृष्टि अधिकार विषै तिनका भी अभ्यास करौ।

बहुरि इहां कोई कहै – तुम असा विचार कीया, परतु कोई इस टीका का अवलबन तै सस्कृत टीका का अभ्यास कीया चाहै, तो कैसै अभ्यास करै ?

ताकों कहिए है – अर्थ का तौ अनुक्रम जैसै सस्कृत टीका विषै है, तैसै या विषै है ही। अर जहा जो सदृष्टि आदि का कथन बीचि मै आवै, ताकौ सदृष्टि अधिकार विषै तिस स्थल विषै बाकी कथन है, ताकौ जानि तहा अभ्यास करौ। ऐसै विचारि सदृष्टि अधिकार करने का विचार कीया है।

लब्धिसार-क्षपणासार सम्बन्धी प्रकरण

बहुरि ऐसा विचार भया जो लब्धिसार अर क्षपणासार नामा शास्त्र है, तिन विषै सम्यक्त्व का अर चारित्र का विशेषता लीए बहुत नीकै वर्णन है। अर तिस वर्णन कौ जानै मिथ्यादृष्ट्यादि गुणस्थाननि का भी स्वरूप नीकै जानिए है, सो इनका जानना बहुत कार्यकारी जानि, तिन ग्रथनि के अनुसारि किछू कथन करना। तातै लब्धिसार शास्त्र के गाथा सूत्रनि की भाषा करि इस ही टीका विषै मिलाइएगा। तिस ही के क्षपक श्रेणी का कथन रूप गाथा सूत्रनि का अर्थ विषै क्षपणासार का अर्थ गर्भित होयगा ऐसा जानना।

इहां कोऊ कहै – तिन ग्रथनि की जुदी ही टीका क्यो न करिए ? याही विषै कथन करने का कहा प्रयोजन ?

ताका समाधान – गोम्मटसार विषै कह्या हुवा केतेइक अर्थनि कौं जानै बिना तिन ग्रथनि विषै कह्या हुवा केतेइक अर्थनि का ज्ञान न होय, वा तिन ग्रंथनि विषै कह्या हुवा अर्थ कौ जानै इस शास्त्र विषै कहे हुए गुणस्थानादिक केतेइक अर्थनि का स्पष्ट ज्ञान होइ, सो ऐसा सबध जान्या अर तिन ग्रथनि विषै कहे अर्थ कठिन हैं, सो जुदा रहे प्रवृत्ति विशेष न होइ तातै इस ही विषै तिन ग्रथनि का अर्थ लिखने का[1] विचार कीया है। सो तिस विषै प्रथमोपशम सम्यक्त्वादि होने का विधान धाराप्रवाह रूप वर्णन है। तातै ताकी सूचनिका लिखै विस्तार होइ, कथन आगै होयहीगा। तातै इहा अधिकार मात्र ताकी सूचनिका लिखिए है।

प्रथम मगलाचरण करि प्रकार कारण का वा प्रकृतिबधापसरण, स्थिति-बधापसरण, स्थितिकाडक, अनुभागकाडक, गुणश्रेणी फालि इत्यादि, केतीइक सज्ञानि का स्वरूप वर्णन करि प्रथमोपशम सम्यक्त्व होने का विधान वर्णन है।

तहा प्रथमोपशम सम्यक्त्व होने योग्य जीव का, अर पचलब्धिनि के नामादिक कहि, तिनके स्वरूप का वर्णन है। तहा प्रायोग्यता लब्धि का कथन विषै जैसै स्थिति घटै है अर तहा च्यारि गति अपेक्षा प्रकृतिबन्धापसरण हो है ताका, अर स्थिति, अनुभाग, प्रदेशबध का वर्णन है। बहुरि च्यारि गति अपेक्षा एक जीव कै युगपत् सभवता भगसहित प्रकृतिनि के उदय का, अर स्थिति, अनुभाग, प्रदेश के

---

१. घ प्रति मे 'अर्थ लिखने का' स्थान पर 'अनुसारि किछु कथन' ऐसा पाठ मिलता है।

उदय का वर्णन है। बहुरि एक जीव के युगपत् संभवती प्रकृतिनि के सत्त्व का रुग्र स्थिति, अनुभाग, प्रदेश के सत्त्व का वर्णन है। बहुरि करणलब्धि का कथन विषै तीन करणनि का नाम-कालादिक कहि तिनके स्वरूपादिक का वर्णन है।

तहा अधःकरण विषै स्थितिबधापसरणादिक आवश्यक हो है, तिनका वर्णन है।

अर अपूर्वकरण विषै च्यारि आवश्यक, तिनविषै गुणश्रेणी निर्जरा का कथन है। तहा अपकर्षण किया हुआ द्रव्य कौ जैसे उपरितन स्थिति गुणश्रेणी आयाम उदयावली विषै दीजिए है, सो वर्णन है। तहा प्रसग पाइ उत्कर्षण वा अपकर्षण किया हुआ द्रव्य का निक्षेप अर अतिस्थापन का विशेष वर्णन है। बहुरि गुणसंक्रमण इहा न संभवै है, सो जहां सभवै है ताका वर्णन है। बहुरि स्थितिकाडक, अनुभाग-काडक के स्वरूप, प्रमाणादिक का अर स्थिति, अनुभागकाडकोत्करण काल का वर्णनपूर्वक स्थिति, अनुभाग, सत्त्व घटावने का वर्णन है।

बहुरि अनिवृत्तिकरण विषै स्थितिकाडकादि विधान कहि ताके काल का संख्यातवा भाग रहे अंतरकरण हो है, ताके स्वरूप का, अर आयाम प्रमाण का, अर ताके निषेकनि का अभाव करि जहा निक्षेपण कीजिए है ताका इत्यादि वर्णन है। बहुरि अंतरकरण करने का अर प्रथम स्थिति का, अर अतरायाम का काल वर्णन है। बहुरि अंतरकरण का काल पूर्ण भए पीछे प्रथम स्थिति का काल विषै दर्शनमोह के उपशमावने का विधान, काल, अनुक्रमादिक का, तहां आगाल, प्रत्यागाल जहा पाइए है वा न पाइए है ताका, दर्शनमोह की गुणश्रेणी जहा न होइ है, ताका इत्यादि अनेक वर्णन है।

बहुरि पीछे अंतरायाम का काल प्राप्त भए उपशम सम्यक्त्व होने का, तहा एक मिथ्यात्व प्रकृति कौ तीन रूप परिणमावने के विधान का वर्णन है। बहुरि उपशम सम्यक्त्व का विधान विषै जैसे काल का अल्पबहुत्व पाइए है, तैसे वर्णन है।

बहुरि प्रथमोपशम सम्यक्त्व विषै मरण के अभाव का, अर तहा तै सासादन होने के कारण का, अर उपशम सम्यक्त्व का प्रारभ वा निष्ठापन विषै जो-जो उपयोग, योग, लेश्या पाइए ताका, अर उपशम सम्यक्त्व के काल, स्वरूपादिक का, अर तिस काल कौ पूर्ण भए पीछै एक कोई दर्शनमोह की प्रकृति उदय आवने का, तहा जैसे

द्रव्य कौं अपकर्षण करि अतरायामादि विषै दीजिए है ताका, अर दर्शनमोह का उदय भए वेदक सम्यक्त्व वा मिश्र गुणस्थान वा मिथ्यादृष्टि गुणस्थान हो है, तिनके स्वरूप का वर्णन है ।

बहुरि क्षायिक सम्यक्त्व का विधान वर्णन है । तहा क्षायिक सम्यक्त्व का प्रारभ जहा होइ ताका, अर प्रारभ-निष्ठापन अवस्था का वर्णन है । बहुरि अनतानुबधी के विसयोजन का वर्णन है । तहा तीन करणनि का अर अनिवृत्तिकरण विषै स्थिति घटने का अर अन्य कषायरूप परिणमने के विधान प्रमाणादिक का कथन है । बहुरि विश्राम लेइ दर्शनमोह की क्षपणा हो है, ताका विधान वर्णन है । तहा सभवता स्थितिकाडादिक का वर्णन है । अर मिथ्यात्व, मिश्रमोहनी, सम्यक्त्वमोहनी विषै स्थिति घटावने का, वा सक्रमण होने का विधान वर्णन करि सम्यक्त्वमोहनी की आठ वर्ष प्रमाण स्थिति रहे अनेक क्रिया विशेष हो हैं, वा तहा 'गुणश्रेणी, स्थितिकाडकादिक विषै विशेष हो है, तिनका वर्णन है । बहुरि कृतकृत्य वेदक सम्यग्दृष्टि होने का वा तहा मरण होतै लेश्या वा उपजने का, वा कृतकृत्य वेदक भए पीछै जे क्रिया विशेष हो हैं अर तहा अतकाडक वा अतफालि विषै विशेप हो है, तिनका वर्णन है । बहुरि क्षायिक सम्यक्त्व होने का वर्णन है । बहुरि क्षायिक सम्यक्त्व के विधान विषै सभवते काल का तेतीस जायगा अल्पबहुत्व वर्णन है । बहुरि क्षायिक सम्यक्त्व के स्वरूप का वा मुक्त होने का इत्यादि वर्णन है ।

बहुरि चारित्र दोय प्रकार – देशचारित्र, सकलचारित्र । सो ए जाकै होइ वा सन्मुख होतै जो क्रिया होइ सो कहि देशचारित्र का वर्णन है । तहा वेदक सम्यक्त्व सहित देशचारित्र जो ग्रहै, ताके दोइ ही करण होइ, गुणश्रेणी न होइ, देशसयत को प्राप्त भए गुणश्रेणी होइ इत्यादि वर्णन है । बहुरि एकातवृद्धि देशसयत के स्वरूपादिक का वर्णन है । बहुरि अध प्रवृत्त देशसयत का वर्णन है । तहा ताके स्वरूप-कालादिक का, अर तहा स्थिति-अनुभागखडन न होइ, अर तहा देशसयत तै भ्रष्ट होइ देशसयत कौ प्राप्त होइ ताकै करण होने न होने का, अर देशसयत विषै सभवते गुणश्रेण्यादि विशेष का वर्णन है । बहुरि देशसयम के विधान विषै सभवते काल का अल्पबहुत्वता का वर्णन है । बहुरि जघन्य, उत्कृष्ट देशसयम जाकै होइ ताका, अर देशसयम विषै स्पर्द्धक का अविभागप्रतिच्छेद पाइए ताका वर्णन है । बहुरि देशसयम के स्थाननि का, अर तिनके प्रतिपात, प्रतिपद्यमान, अनुभयरूप तीन प्रकारनि का, अर ते क्रम

तै जैसे जिनकै जेते पाइए, अर बीचि मे स्वामीरहित स्थान पाइए तिनका, अर तहा विशुद्धता का वर्णन है।

बहुरि सकलचारित्र तीन प्रकार – क्षायोपशमिक, औपशमिक, क्षायिक, तहा क्षायोपशमिक चारित्र का वर्णन है। तिसविषै यहु जाकै होइ ताका, वा सन्मुख होतै जो क्रिया होइ, ताका वर्णन करि वेदक सम्यक्त्व सहित चारित्र ग्रहरण करनेवाले कै दोय ही करण होइ इत्यादि अल्पबहुत्व पर्यंत सर्व कथन देशसयतवत् है, ताका वर्णन है। बहुरि सकलसयम स्पर्द्धक वा अविभागप्रतिच्छेदनि का कथन करि प्रतिपात, प्रतिपद्यमान, अनुभयरूप स्थान कहि ते जैसे जेते जिस जीव के पाइए, तिनका क्रम तै वर्णन है। तहां विशुद्धता का वा म्लेच्छ के सकलसयम संभवने का वा सामयिकादि संबधी स्थाननि का इत्यादि विशेष वर्णन है। बहुरि औपशमिक चारित्र का वर्णन है। तहा वेदक सम्यक्त्वी जिस-जिस विधानपूर्वक क्षायिक सम्यक्त्वी वा द्वितीयोपशम सम्यक्त्वी होइ उपशम श्रेणी चढै है, ताका वर्णन है। तहा द्वितीयोपशम सम्यक्त्व होने का विधान विषै तीन करण, गुणश्रेणी, स्थितिकाडकादिक वा अंतरकरणादिक का विशेष वर्णन है।

बहुरि उपशम श्रेणी विषै आठ अधिकार है, तिनका वर्णन है। तहा प्रथम अध करण का वर्णन है। बहुरि दूसरा अपूर्वकरण का वर्णन है। इहा सभवते आवश्यकनि का वर्णन है। इहातै लगाय उपशम श्रेणी का चढना वा उतरणा विषै स्थितिबधापसरण अर स्थितिकाडक वा अनुभागकाडक के आयामादिक के प्रमाण का, अर इनकौ होतै जैसा-जैसा स्थितिबध अर स्थितिसत्त्व वा अनुभागसत्त्व अवशेष रहै, ताका यथा ठिकाणै बीचि-बीचि वर्णन है, सो कथन आगै होइगा तहा जानना। बहुरि अपूर्वकरण का वर्णन विषै प्रसग पाइ, अनुभाग के स्वरूप का वा वर्ग, वर्गणा, स्पर्द्धक, गुणहानि, नानागुणहानि का वर्णन है। अर इहा गुणश्रेणी, गुणसक्रम हो है, अर प्रकृतिबध का व्युच्छेद हो है, ताका वर्णन है। बहुरि अनिवृत्तिकरण का कथन विषै दश करणनि विषै तीन करणनि का अभाव हो है। ताका अनुक्रम लीए कर्मनि का स्थितिबध करनेरूप क्रमकरण हो है ताका, तहा असख्यात समयप्रबद्धनि की उदीरणादिक का, अर कर्मप्रकृतिनि के स्पर्द्धक देशघाती करनेरूप देशघातीकरण का, अर कर्मप्रकृतिनि कै केतेइक निषेकनि का अभाव करि अन्य निषेकनि विषै निपेक्षण करनेरूप अतरकरण का, अर अतरकरण की समाप्तता भए युगपत् सात करननि का प्रारभ हो है ताका, तहा ही आनुपूर्वी सक्रमण का – इत्यादि वर्णन करि नपुसकवेद

अर स्त्रीवेद अर छह हास्यादिक, पुरुषवेद, तीन क्रोध अर तीन माया अर दोय लोभ, इनके उपशमावने के विधान का अनुक्रम तै वर्णन है। तहा गुणश्रेणी का वा स्थिति-अनुभागकाडकघात होने न होने का अर नपुसकवेदादिक विषै नवकवध के स्वरूप-परिणमनादि विशेष का, वा प्रथम स्थिति के स्वरूप का आदि विशेष का, वा तहा आगाल, प्रत्यागाल गुणश्रेणी न हो है इत्यादि विशेषनि का, अर सक्रमणादि विशेष पाइए है, तिनका इत्यादि अनेक वर्णन पाइए है। बहुरि संज्वलन लोभ का उपशम विधान विषै लोभ-वेदककाल के तीन भागनि का, अर तहा प्रथम स्थिति आदिक का वर्णन करि सूक्ष्मकृष्टि करने का विधान वर्णन है। तहा प्रसग पाइ वर्ग, वर्गणा, स्पर्द्धकनि का कथन करि अर कृष्टि करने का वर्णन है। इहा बादरकृष्टि तो है ही नाही, सूक्ष्मकृष्टि है, तिनविषै जैसै कर्मपरमाणु परिणमै है वा तहा ही जैसै अनुभागादिक पाइए है, वा तहा अनुसमयापवर्त्तनरूप अनुभाग का घात हो है इत्यादिकनि का, अर उपशमावने आदि क्रियानि का वर्णन है। बहुरि सूक्ष्मसापराय गुणस्थान कौं प्राप्त होइ सूक्ष्मकृष्टि कौ प्राप्त जो लोभ, ताके उदय कौ भोगवने का, तहा सभवती गुणश्रेणी, प्रथम स्थिति आदि का इहा उदय-अनुदयरूप जैसै कृष्टि पाइए तिनका, वा सक्रमण-उपशमनादि क्रियानि का वर्णन है। बहुरि सर्व कषाय उपशमाय उपशात कषाय हो है ताका, अर तहा सभवती गुणश्रेणी आदि क्रियानि का, अर इहा जे प्रकृति उदय हैं, तिनविषै परिणामप्रत्यय अर भवप्रत्ययरूप विशेष का वर्णन है। ऐसै सभवती इकईस चारित्रमोह की प्रकृति उपशमावने का विधान कहि उपशात कषाय तै पडनेरूप दोय प्रकार प्रतिपात का, तहा भवक्षय निमित्त प्रतिपात तै देव सबन्धी असयत गुणस्थान कौ प्राप्त हो है। तहा गुणश्रेणी वा अनुपशमन वा अतर का पूरण करना इत्यादि जे क्रिया हो है, तिनका वर्णन है। अर अद्धाक्षय निमित्त तै क्रम तै पडि स्वस्थान अप्रमत्त पर्यत आवै तहा गुणश्रेणी आदिक का, वा चढतै जे क्रिया भई थी, तिनका अनुक्रम तै नष्ट होने का वर्णन है। बहुरि अप्रमत्त तै पडने का तहा सभवति क्रियानि का अर अप्रमत्त तै चढै तौ बहुरि श्रैणी माडै ताका वर्णन है। ऐसै पुरुषवेद, सज्वलन क्रोध का उदय सहित जो श्रेणी माडै, ताकी अपेक्षा वर्णन है। बहुरि पुरुषवेद, सज्वलन मान सहित आदि ग्यारह प्रकार उपशम श्रेणी चढनेवालो के जो-जो विशेष पाइए है, तिनका वर्णन है। बहुरि इस उपशम चारित्र विधान विषै सभवते काल का अल्पबहुत्व वर्णन है।

बहुरि क्षपणासार के अनुसारि लीए क्षायिकचारित्र के विधान का वर्णन है। तहा अध करणादि सोलह अधिकारनि का अर क्षपक श्रेणी कौ सन्मुख जीव का वर्णन है।

बहुरि अध.करण का वर्णन है। तहां विशुद्धता की वृद्धि आदि च्यारि आवश्यकनि का, अर तहा सभवते परिणाम, योग, कषाय, उपयोग, लेश्या, वेद, अर प्रकृति, स्थिति, अनुभाग, प्रदेशरूप कर्मनि का सत्त्व, बध उदय, तिनका वर्णन है।

बहुरि अपूर्वकरण का वर्णन है। तहा सभवते स्थितिकाडकघात, अनुभाग-काडकघात, गुणश्रेणी, गुणसक्रम इनका विशेष वर्णन है। अर इहा प्रकृतिबध की व्युच्छित्ति हो है, तिनका वर्णन है। इहातै लगाय क्षपक श्रेणी विषै जहा-जहा जैसा-जैसा स्थितिबधापसरण, अर स्थितिकाडकघात, अनुभागकाडकघात पाइए अर इनकौ होतै जैसा-जैसा स्थितिबध, अर स्थितिसत्त्व अर अनुभागसत्त्व रहै, तिनका बीच-बीच वर्णन है, सो कथन होगा तहा जानना।

बहुरि अनिवृत्तिकरण का कथन है। तहा स्वरूप, गुणश्रेणी, स्थितिकाडकादि का वर्णन करि कर्मनि का क्रम लीए स्थितिबध, स्थितिसत्त्व करने रूप क्रमकरण का वर्णन है। बहुरि गुणश्रेणी विषै असख्यात समयप्रबद्धनि की उदीरणा होने लगी, ताका वर्णन है।

बहुरि प्रत्याख्यान-अप्रत्याख्यानरूप आठ कषायनि के खिपावने का विधान वर्णन है। बहुरि निद्रा-निद्रा आदि सोलह प्रकृति खिपावने का विधान वर्णन है। बहुरि प्रकृतिनि की देशघाती स्पर्द्धकनि का बध करनेरूप देशघातीकरण का वर्णन है। बहुरि च्यारि सज्वलन, नव नोकषायनि के केतेइक निषेकनि का अभाव करि अन्यत्र निक्षेपण करनेरूप अतरकरण का वर्णन है। बहुरि नपुसकवेद खिपावने का विधान वर्णन है। तहा सक्रम का वा युगपत् सात क्रियानि का प्रारभ हो है, तिनका इत्यादि वर्णन है। बहुरि स्त्रीवेद क्षपणा का वर्णन है। बहुरि छह नोकषाय अर पुरुषवेद इनकी क्षपणा का विधान वर्णन है। बहुरि अश्वकर्णकरणसहित अपूर्वस्पर्द्धक करने का वर्णन है। तहा पूर्वस्पर्द्धक जानने कौ वर्ग, वर्गणा, स्पर्द्धकनि का अर तिन-विषै देशघाती, सर्वघातिनि के विभाग का, वा वर्गणा की समानता, असमानता आदिक का कथन करि अश्वकरण के स्वरूप, विधान क्रोधादिकनि के अनुभाग का प्रमाणादिक का अर अपूर्वस्पर्द्धकनि के स्वरूप प्रमाण का तिनविषै द्रव्य-अनुभागा-दिक का, तहा समय-समय सबधी क्रिया का वा उदयादिक का बहुत वर्णन है।

बहुरि कृष्टिकरण का वर्णन है। तहा क्रोधवेदककाल के विभाग का, अर बादर-कृष्टि के विधान विषै कृष्टिनि के स्वरूप का, तहा बारह सग्रहकृष्टि, एक-एक सग्रहकृष्टि

विषै अनती अतरकृष्टि तिनका, अर तिनविषै प्रदेश अनुभागादिक के प्रमाण का, तहा समय-समय सबधी क्रियानि का वा उदयादिक का अनेक वर्णन है। बहुरि कृष्टि वेदना का विधान वर्णन है। तहा कृष्टिनि के उदयादिक का, वा सक्रम का, वा घात करने का, वा समय-समय सबधी क्रिया का विशेष वर्णन करि क्रम तै दश सग्रहकृष्टिनि के भोगवने का विधान-प्रमाणादिक का बहुत कथन करि तिनकी क्षपणा का विधान वर्णन है। बहुरि अन्य प्रकृति सक्रमण करि इनरूप परिणामी, तिनके द्रव्यसहित लोभ की द्वितीय, तृतीय सग्रहकृष्टि के द्रव्य कौं सूक्ष्मकृष्टिरूप परिणमावै है, ताके विधान-स्वरूप-प्रमाणादिक का वर्णन है। ऐसे अनिवृत्तिकरण का बहुत वर्णन है। याविषै गुणश्रेणी-अनुभागघात के विशेष आदि बीचि-बीचि अनेक कथन पाइए है, सो आगै कथन होइगा तहा जानना।

बहुरि सूक्ष्मसापराय का वर्णन है। तहा स्थिति, अनुभाग का घात वा गुण-श्रेणी आदि का कथन करि बादरकृष्टि सबधी अर्थ का निरूपण पूर्वक सूक्ष्मसापराय सबधी कृष्टिनि के अर्थ का निरूपण, अर तहा सूक्ष्मकृष्टिनि का उदय, अनुदय, प्रमाण अर सक्रमण, क्षयादिक का विधान इत्यादि अनेक वर्णन है। बहुरि यहु तौ पुरुषवेद, सज्वलन क्रोध का उदय सहित श्रेणी चढ्या, ताकी अपेक्षा कथन है। बहुरि पुरुषवेद, सज्वलन मान आदि का उदय सहित ग्यारह प्रकार श्रेणी चढने वालो कै जो-जो विशेष पाइए, ताका वर्णन है। ऐसे कृष्टिवेदना पूर्ण भए।

बहुरि क्षीणकषाय का वर्णन। तहा ईर्यापथबध का, अर स्थिति-अनुभागघात वा गुणश्रेणी आदि का, वा तहा सभवते ध्यानादिक का अर ज्ञानावरणादिक के क्षय होने के विधान का, अर इहाँ शरीर सम्बन्धी निगोद जीवनि के अभाव होने के क्रम का इत्यादि वर्णन है।

बहुरि सयोगकेवली का वर्णन है। तहा ताके महिमा का अर गुणश्रेणी का अर विहार-आहारादिक होने न होने का वर्णन करि अतर्मुहूर्त्त मात्र आयु रहै आवर्जितकरण हो है ताका, तहा गुणश्रेणी आदि का, अर केवलसमुद्घात का, तहा दड-कपाटादिक के विधान वा क्षेत्रप्रमाणादिक का, वा तहा सभवती स्थिति-अनुभाग घटने आदि क्रियानि का वा योगनि का इत्यादि वर्णन है। बहुरि बादर मन-वचन काय योग कौं निरोधि सूक्ष्म करने का, तहा जैसे योग हो है, ताका अर सूक्ष्म मनोयोग, वचनयोग, उच्छ्वास-निश्वास, काययोग के निरोध करने का, तहा काययोग के

पूर्वस्पर्द्धकनि के अपूर्वस्पर्द्धक अर तिनकी सूक्ष्मकृष्टि करिए है, तिनका स्वरूप, विधान, प्रमाण, समय-समय सम्बन्धी क्रियाविशेष इत्यादिक का अर करी सूक्ष्मकृष्टि, ताकौं भोगवता सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाती ध्यान युक्त हो है, ताका वा तहा सभवते स्थिति-अनुभागघात वा गुणश्रेणी आदि विशेष का वर्णन है ।

बहुरि अयोगकेवली का वर्णन है । तहा ताकी स्थिति का, शैलेश्यपना का, ध्यान का, तहा अवशेष सर्व प्रकृति खिपवाने का वर्णन है ।

बहुरि सिद्ध भगवान का वर्णन है । तहा सुखादिक का, महिमा का, स्थान का, अन्य मतोक्त स्वरूप के निराकरण का इत्यादि वर्णन है । असैं लब्धिसार क्षपणा-सार कथन की सूचनिका जाननी ।

बहुरि अन्त विषै अपने किछू समाचार प्रगट करि इस सम्यग्ज्ञानचद्रिका की समाप्तता होतै कृतकृत्य होइ आनद दशा कौ प्राप्त होना होइगा । असैं सूचनिका करि ग्रथसमुद्र के अर्थ संक्षेपपनै प्रकट किए है ।

इति सूचनिका ।

—०—

परिकर्माष्टक सम्बन्धी प्रकरण

बहुरि इस करणानुयोगरूप शास्त्र के अभ्यास करने के अर्थि गणित का ज्ञान अवश्य चाहिये, जातै अलकारादिक जानै प्रथमानुयोग का, गणितादिक जानै करणानुयोग का, सुभाषितादिक जानै चरणानुयोग का, न्यायादि जानै द्रव्यानुयोग का विशिष्ट ज्ञान हो है, तातै गणित ग्रथनि का अभ्यास करना । अर न बनै तौ परिकर्माष्टक तौ अवश्य जान्या चाहिये । जातै याकौ जाणै अन्य गणित कर्मनि का भी विधान जानि तिनकौ जानै अर इस शास्त्र विषै प्रवेश पावै । तातै इस शास्त्र का अभ्यास करने को प्रयोजनमात्र परिकर्माष्टक का वर्णन इहा करिए है–

तहा परिकर्माष्टक विषै सकलन, व्यवकलन, गुणाकार, भागहार, वर्ग, घन, वर्गमूल, घनमूल ए आठ नाम जानने । ए लौकिक गणित विषै भी सभवै है, अर अलौकिक गणित विषै भी संभवै है । सो लौकिक गणित तौ प्रवृत्ति विषै प्रसिद्ध ही है । अर अलौकिक गणित जघन्य सख्यातादिक वा पल्यादिक का व्याख्यान आगै जीवसमासाधिकार पूर्ण भए पीछै होइगा, तहा जानना । अब सकलनादिक का स्वरूप

कहिए है । किसी प्रमाण कौ किसी प्रमाण विषै जोडिये तहा सकलन कहिए । जैसे सात विषै पाच जोडे बारह होइ, वा पुद्गलराशि विषै जीवादिक का प्रमाण जोडे सर्व द्रव्यनि का प्रमाण होइ है ।

बहुरि किसी प्रमाण विषै किसी प्रमाण कौ घटाइए, तहा व्यवकलन कहिए । जैसे बारह विषै पाच घटाऐ सात होय, वा ससारी राशि विषै त्रसराशि घटाऐ स्थावरनि का प्रमाण होइ ।

बहुरि किसी प्रमाण कौ किसी प्रमाण करि गुणिए, तहा गुणकार कहिए । जैसे पाच कौ च्यारि करि गुणिए वीस होइ, वा जीवराशि कौ अनन्त करि गुणे पुद्गलराशि होइ ।

बहुरि किसी प्रमाण कौ किसी प्रमाण का जहा भाग दीजिए, तहा भागहार कहिए । जैसे वीस कौ च्यारि करि भाग दीऐ पाच होइ, वा जगत् श्रेणी कौ सात का भाग दीए राजू होइ ।

बहुरि किसी प्रमाण कौ दोय जायगा माडि परस्पर गुणिए, तहा तिस प्रमाण का वर्ग कहिए । जैसे पाच कौ दोय जायगा माडि परस्पर गुणे पाँच का वर्ग पचीस होइ, वा सूच्यगुल कौ दोय जायगा माडि, परस्पर गुणे, सूच्यगुल का वर्ग प्रतरागुल होइ ।

बहुरि किसी प्रमाण कौ तीन जायगा माडि, परस्पर गुणे, तिस प्रमाण को घन कहिए । जैसे पाच को तीन जायगा माडि, परस्पर गुणे, पाच का घन एक सौ पचीस होइ । वा जगत् श्रेणी कौ तीन जायगा माडि परस्पर गुणे लोक होइ ।

बहुरि जो प्रमाण जाका वर्ग कीये होइ, तिस प्रमाण का सो वर्गमूल कहिए । जैसे पचीस पाच का वर्ग कीए होइ ताते पचीस का वर्गमूल पाच है । वा प्रतरागुल है सो सूच्यगुल का वर्ग कीए हो है, ताते प्रतरागुल का वर्गमूल सूच्यगुल है ।

बहुरि जो प्रमाण जाका घन कीए होइ, तिस प्रमाण का सो घनमूल कहिए । जैसे एक सौ पचीस पाच का घन कीए होइ, ताते एक सौ पचीस का घनमूल पाच है । वा लोक है सो जगत्श्रेणी का घन कीए हो है, ताते लोक का घनमूल जगत्श्रेणी है ।

अब इहा केतेइक सज्ञाविशेष कहिए है । सकलन विषै जोडनें योग्य राशि का नाम धन है । मूलराशि कौं तिस धन करि अधिक कहिए । जैसें पाच अधिक कोटि वा जीवराश्यादिक करि अधिक पुद्गल इत्यादिक जानने ।

बहुरि व्यवकलन विषै घटावने योग्य राशि का नाम ऋण है । मूलराशि कौ तिस ऋण करि हीन वा न्यून वा शोधित वा स्फोटित इत्यादि कहिए । जैसें पाच करि हीन कोटि वा त्रसराशि हीन संसारी इत्यादि जानने । कही मूलराशि का नाम धन भी कहिए है ।

बहुरि गुणकार विषै जाकौ गुणिए, ताका नाम गुण्य कहिए ।

जाकरि गुणिए, ताका नाम गुणकार वा गुणक कहिए ।

गुण्यराशि कौ गुणकार करि गुणित वा हत वा अभ्यस्त वा घ्नत इत्यादि कहिए । जैसें पचगुणित लक्ष वा असख्यात करि गुणित लोक कहिए । कही गुणकार प्रमाण गुण्य कहिए । जैसें पाच गुणा वीस कौ पाच वीसी कहिए वा असख्यातगुणा लोक कू असख्यातलोक कहिए इत्यादिक जानने । गुनने का नाम गुणन वा हनन वा घात इत्यादि कहिए है ।

बहुरि भागहार विषै जाकौ भाग दीजिए ताका नाम भाज्य वा हार्य इत्यादि है । अर जाका भाग दीजिए ताका नाम भागहार वा हार वा भाजक इत्यादि है । भाज्य राशि कू भागहार करि भाजित भक्त वा हत वा खडित इत्यादि कहिए । जैसें पाच करि भाजित कोटि वा असख्यात करि भाजित पल्य इत्यादिक जानने । भागहार का भाग देइ एक भाग ग्रहण करना होइ, तहा तेथवा भाग वा एक भाग कहिये । जैसें वीस का चौथा भाग, वा पल्य का असख्यातवा भाग वा असख्यातैक भाग इत्यादि जानना ।

बहुरि एक भाग विना अवशेष भाग ग्रहण करने होई तहा बहुभाग कहिए । जैसें वीस के च्यारि बहुभाग वा पल्य का असख्यात बहुभाग इत्यादि जानने ।

बहुरि वर्ग का नाम कृति भी है । बहुरि वर्गमूल का नाम कृतिमूल वा मूल वा पद वा प्रथम मूल भी है । बहुरि प्रथम मूल के मूल कौ द्वितीय मूल कहिए। द्वितीय मूल के मूल कौ तृतीय मूल कहिए । असै चतुर्थादि मूल जानने । जैसें

पैंसठ हजार पाच सौ छत्तीस का प्रथम मूल दोय सै छप्पन, द्वितीय मूल सोलह, तृतीय मूल च्यारि, चतुर्थ मूल दोय होइ । असै ही पल्य वा केवलज्ञानादि के प्रथमादि मूल जानने । ऐसै अन्य भी अनेक सज्ञाविशेष यथासभव जानने ।

अब इहा विधान कहिए है। सो प्रथम लौकिक गणित अपेक्षा कहिए है। तहा असा जानना **'अंकानां वामतो गतिः'** अकनि का अनुक्रम बाई तरफ सेती है । जैसै दोय सै छप्पन (२५६) के तीन अकनि विषै छक्का आदि अक, पाचा दूसरा अक, दूवा अत अक कहिये । असै ही अन्यत्र जानना । बहुरि प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ आदि अकनि कौ क्रम तै एक स्थानीय, दश स्थानीय, शत स्थानीय, सहस्र स्थानीय आदि कहिए । प्रवृत्ति विषै इनही कौ इकवाई, दहाई, सैकडा, हजार आदि कहिए है ।

बहुरि सकलनादि होतै प्रमाण ल्यावने कौ गणित कर्म कौ कारण जे करण-सूत्र, तिनकरि गणित शास्त्रनि विषै अनेक प्रकार विधान कह्या है, सो तहातै जानना वा त्रिलोकसार की भाषा टीका बनी है, तहा लौकिक गणित का प्रयोजन जानि पीठबध विषै किछु वर्णन किया है, सो तहातै जानना ।

इस शास्त्र विषै गणित का कथन की मुख्यता नाही वा लौकिक गणित का बहुत विशेष प्रयोजन नाही तातै इहा बहुत वर्णन न करिए है । विधान का स्वरूप मात्र दिखावने कौ एक प्रकार करि किंचित् वर्णन करिए है ।

तहा सकलन विषै जिनका सकलन करना होइ, तिनके एक स्थानीय आदि अकनि कौ क्रम तै यथास्थान जोडै जो-जो अक आवै, सो-सो अक जोड विषै क्रम तै यथास्थान लिखना । सो प्रवृत्ति विषै जैसै जोड देने का विधान है, तैसै ही यहु जानना । बहुरि जो एक स्थानीय आदि अक जोडै दोय, तीन आदि अक आवै तौ प्रथम अक कौ जोड विषै पहिले लिखिए । द्वितीय आदि अकनि कौ दश स्थानीय आदि अकनि विषै जोडिए । याकौ प्रवृत्ति विषै हाथिलागा कहिए है । असै करतै जो अक होइ, सो जोड्या हुवा प्रमाण जानना ।

इहा उदाहरण – जैसै दोय सै छप्पन अर चौरासी (२५६+८४) जोडिए, तहा एक स्थानीय छह अर च्यारि जोडै दश भए । तहा जोड विषै एक स्थानीय बिंदी लिखी, अर रह्या एक, ताकौ अर दश स्थानीय पाचा, आठा इन कौ जोडै;

चौदह भए । तहा जोड विषै दश स्थानीय चौका लिख्या अर रह्या एका, ताकौ अर शत स्थानीय दूवा कौ जोडै, तीन भया, सो जोड विषै शत स्थानीय लिख्या । ऐसै जोडै तीन सै चालीस भये । ऐसै ही अन्यत्र जानना ।

बहुरि व्यवकलन विषै मूलराशि के एक स्थानीय आदि अकनि विषै ऋण राशि के एक स्थानीय आदि अकनि कौ यथाक्रम घटाइए । जो मूलराशि के एक स्थानीय आदि अक तै ऋणराशि के एक स्थानीय आदि अंक अधिक प्रमाण लीए होइ तौ धनराशि के दश स्थानीय आदि अक विषै एक घटाइ धनराशि के एक स्थानीय आदि अक विषै दश जोडि, तामै ऋणराशि का अक घटावना । सो प्रवृत्ति विषै जैसै बाकी काढने का विधान है, तैसै ही यहु जानना । ऐसै करतै जो होइ, सो अवशेष प्रमाण जानना ।

इहा उदाहरण – जैसै छह सै पिचहत्तरि मूलराशि विषै बाणवै (६७५–९२) ऋण घटावना होइ, तहा एक स्थानीय पाच मे दूवा घटाए तीन रहे अर दश स्थानीय सात विषै नव घटै नाही तातै शतस्थानीय छक्का मैं एक घटाइ ताके दश सात विषै जोडै सतरह भए, तामैं नौ घटाइ आठ रहे शत स्थानीय छक्का मे एक घटायें पाच रहे, तामैं ऋण का अक कोऊ घटावने कौ है नाही तातै, पाच ही रहे । ऐसै अवशेष पाच सै तियासी प्रमाण आया । ऐसै ही अन्यत्र जानना ।

बहुरि गुणाकार विषै गुण्य के अत अक तै लगाय आदि अक पर्यंत एक-एक अक कौ क्रम तै गुणकार के अकनि करि गुणि यथास्थान लिखिए वा जोडिए, तब गुणित राशि का प्रमाण आवै ।

इहा उदाहरण – जैसै गुण्य दोय सै छप्पन अर गुणकार सोलह (२५६×१६) । तहा गुण्य का अत अक दूवा कौ सोलह करि गुणना । तहा छक्का तौ दूवा ऊपरि अर एका ताके पीछै $\overset{१६}{२५६}$ ऐसै स्थापन करि एक करि दूवा कौ गुणै, दोय पाये, सो तो एक के नीचै लिखना । अर छह करि दूवा कौ गुणै बारह पाए, तिसविषै दूवा तौ गुण्य की जायगा लिखना एका पहिलै दोय लिख्या था तामै जोडना तब ऐसा भया [३२ ५६] । बहुरि ऐसै ही गुण्य का उपात अक पाचा, ताकौ सोलह करि गुणना तहा ऐसै $\overset{१६}{३२,५६}$ स्थापना करि एका करि पाचा कौ गुणै, पाच भये, सो तौ एका के नीचै दूवा, तामै जोडिए अर छक्का करि पाचा कौ गुणै तीस भए, तहा बिंदी पाचा की जायगा माडि तीन पीछले अकनि विषै जोडिए ऐसै कीए

ऐसा ४००६ भया। बहुरि गुण्य का आदि अंक छक्का कौं सोलह करि गुणना तहां

ऐसैं $\overset{१६}{४००६}$ स्थापि एक करि छह को गुणें छह भये सो तौ एका के नीचैं बिंदी तामैं जोडिए अर छ को छ करि गुणै छत्तीस भया, तहा छक्का तौ गुण्य का छक्का की जायगा स्थापना, तीया पीछला अंक छक्का तामैं जोडना, ऐसैं कीए ऐसा ४०९६ भया। या प्रकार गुणित राशि च्यारि हजार छिनवैं आया। ऐसैं ही अन्यत्र विधान जानना।

बहुरि भागहार विषै भाज्य के जेते अंकनि विषै भागहार का भाग देना संभवै, तितने अंकनि कौं ताका भाग देइ पाया अंक कौं जुदा लिखि तिस पाया अंक करि भागहार कौं गुणैं जो प्रमाण होइ, तितना जाका भाग दीया था, तामैं घटाय अवशेष तहां लिखना। बहुरि तैसैं ही भाग दीए जो अंक पावैं, ताकौं पूर्वै लिख्या था अंक, ताके आगैं लिखि ताकरि भागहार कौं गुणि तैसैं ही घटावना। ऐसैं यावत् भाज्यराशि निःशेष होइ तावत् कीए जुदे लिखे अंक प्रमाण एक भाग आवैं है।

इहां उदाहरण-जैसैं भाज्य च्यारि हजार छिनवैं, भागहार सोलह। तहां भाज्य का अन्त अंक च्यारि कौं तौ सोलह का भाग संभवै नाहीं तातैं दोय अंके

चालीस तिनकौं भाग देना, तहां ऐसैं $\frac{४०९६}{१६}$ लिखि। इहां तीन आदि अंकनि करि सोलह कौं गुणैं, तौ चालीस तैं अधिक होइ जाय तातैं दोइ पाये सो दूवा जुदा लिखि, ताकरि सोलह कौं गुणि चालीस मैं घटाए ऐसा ८९६ भया।

बहुरि इहां निवासी कौं सोलह का भाग दीए $\frac{८९६}{१६}$ पांच पाए, सो दूवा के आगैं लिखि, ताकरि सोलह कौं गुनि निवासी मैं घटाए ऐसा ९६ रह्या। याकौं सोलह का भाग दीए छह पाय, सो पांचा के आगैं लिखि, ताकरि सोलह कौं गुणि छिनवैं भए, सो घटाए भाज्यराशि निःशेष भया। ऐसैं जुदे लिखे अंक तिनकरि एक भाग का प्रमाण दोय सै छप्पन आवै है। बहुरि **'भागो नास्ति लब्धं शून्यं'** इस वचन तैं जहां भाग टूटि जाय तहां बिंदी पावै। जैसैं भाज्य तीन हजार छत्तीस (३०३६) भागहार छह (६) तहां तीस कौं छह का भाग दीए, पांच पाए, तिनकरि छह कौं गुणि, घटाए तीस निःशेष होय गया, सो इहां भाग टूट्या, तातैं पांच के आगैं बिंदी लिखिए। बहुरि अवशेष छत्तीस कौं छह का भाग दीए छह पाए, सो बिंदी के आगैं लिखि, ताकरि छह कौं गुणि घटाए सर्व भाज्य निःशेष भया। ऐसैं लब्ध प्रमाण पांच सै छै पाया। ऐसैं ही अन्यत्र जानना।

बहुरि वर्ग विषै गुणाकारवत् विधान जानना। जातैं दोय जायगा समान राशि लिखि एक कौ गुण्य, एक कौं गुणकार स्थापि परस्पर गुणें वर्ग हो है। जैसें सोलह कौं सोलह करि गुणें, सोलह का वर्ग दोय सै छप्पन हो है।

बहुरि घन विषै भी गुणकारवत् ही विधान है। जातैं तीन जायगां समान राशि माडि परस्पर गुणन करना। तहा पहिला राशिरूप गुण्य कौ दूसरा राशिरूप गुणकार करि गुणें जो (प्रमाण) होइ ताकौं गुण्य स्थापि, ताकौ तीसरा राशिरूप गुणकार करि गुणें जो प्रमाण आवैं, सोइ तिस राशि का घन जानना।

जैसें सोलह कौ सोलह करि गुणें, दोय सै छप्पन, बहुरि ताको सोलह करि गुणें च्यार हजार छिनवे होइ, सोई सोलह का घन है। ऐसें ही अन्यत्र जानना।

बहुरि वर्गमूल विषै वर्गरूप राशि के प्रथम अंक उपरि विषम की दूसरे अंक उपरि सम की तीसरे (अक) उपरि विषम की चौथे (अक) उपरि सम की ऐसें क्रम तैं अन्त अक पर्यंत उभी आडी लीक करि सहनानी करनी। जो अन्त का अंक सम होय तो तहा उपात का अर अन्त का दोऊ अंकनि कौ विषम संज्ञा जाननी। तहां अन्त का एक वा दोय जो विषम अंक, ताका प्रमाण विषै जिस अंक का वर्ग संभवै, ताका वर्ग करि अन्त का विषम प्रमाण मैं घटावना। अवशेष रहै सो तहां लिखना। बहुरि जाका वर्ग कीया था, तिस मूल अंक कौ जुदा लिखना। बहुरि अवशेष रहे अकनि करि सहित जो तिस विषम के आगें सम अंक, ताके प्रमाण कौ जुदा स्थाप्या जो अक, तातै दूणा प्रमाण रूप भागहार का भाग दीए जो अक पावै, ताकौ तिस जुदा स्थाप्या, अक के आगें लिखना। अर तिस अंक करि गुण्या हुवा भागहार का प्रमाण को तिस भाज्य मे घटाइ अवशेष तहा लिखि देना। बहुरि इस अवशेष सहित जो तिस सम के आगें विषम अक, तामैं जो अक पाया था, ताका वर्ग कीए जो प्रमाण होइ, सो घटावना अवशेष तहा लिखना। बहुरि इस अवशेष सहित जो तिस विषम के आगें सम अक, ताकौ तिन जुदे लिखे हुए सर्व अंकरूप प्रमाण तैं दूणा प्रमाण रूप भागहारा का भाग देइ पाया अक कौ तिन जुदे लिखे हुए अंकनि के आगें लिखना। अर इस पाया अंक करि भागहार कौ गुणि भाज्य मे घटाइ, अवशेष तहा लिखना। बहुरि इस अवशेष सहित जो सम अक के आगें विषम अक ताविषै पाया अंक का वर्ग घटावना। ऐसें ही क्रमतै यावत् वर्गित राशि निःशेष होय, तावत् कीए वर्गमूल का प्रमाण आवै है।

इहा उदाहरण – जैसे वर्गित राशि पैंसठ हजार पाच सौ छत्तीस (६५५३६) इहा विषम-सम की सहनानी ऐसी ।–।–। ६५५३६ करि अन्त का विषम छक्का तामें तीन का वर्ग तौ बहुत होइ जाइ, तातें संभवता दोय का वर्ग च्यारि घटाइ अवशेष दोइ तहा लिखना । अर मूल अंक दूवा जुदा पंक्ति विषै लिखना । बहुरि तिस अवशेष सहित आगिला सब अंक ऐसा २५। ताकौ जुदा लिख्या जो दूवा तातैं दूणा च्यारि का भाग दीए, छह पावै, परंतु आगें वर्ग घटावने का निर्वाह नाही, तातैं पाच पाया, सो जुदा लिख्या हुआ दूवा के आगें लिखना । अर पाया अंक पाच करि भागहार च्यारि कौ गुणि, भाज्य मैं घटाए, पचीस की जायगा पाच रह्या, तिस सहित आगिला विषम ऐसा (५५) तामैं पाया अंक पाच का वर्ग पचीस घटाए, अवशेष ऐसा ३०, तिस सहित आगिला सम ऐसा ३०३, ताकौ जुदे लिखे अंकनि तैं दूणा प्रमाण पचास का भाग दीए छह पाया, सो जुदे लिखे अंकनि के आगै लिखना । अर छह करि भागहार पचास कौ गुणि, भाज्य मैं घटाए अवशेष ऐसा ३ रह्या, तिस सहित आगिला विषम ऐसा ३६, यामैं पाया अंक छह का वर्ग घटाए राशि निःशेष भया । ऐसैं जुदे लिखे हूवे अंकनि करि पैंसठ हजार पाच सै छत्तीस का वर्गमूल दोए सै छप्पन आया । ऐसैं ही अन्यत्र विधान जानना ।

बहुरि घनमूल विषै घन रूप राशि के अंकनि उपरि पहिला घन, दूजा-तीजा अघन चौथा घन, पाचवाँ-छठा अघन ऐसैं क्रमतैं ऊभी आडी लीक रूप सहनानी करनी । जो अंत का घन अंक न होइ तो अन्त उपांत दोय अंकनि की घन संज्ञा जाननी । अर ते दोऊ घन न होइ तौ अन्त तै तीन अंकनि की घन संज्ञा जाननी । तहा एक वा दोय वा तीन अंक रूप जो अन्त का घन, तामैं जाका घन संभवै ताका घन करि ताकौ अंत का घन अंकरूप प्रमाण मैं घटाइ अवशेष तहा लिखना । अर जाका घन कीया था, तिस मूल अंक कौ जुदा पंक्ति विषै स्थापना । बहुरि तिस अवशेष सहित आगिला अंक कौ तिस मूल अंक के वर्ग तै तिगुणा भागहार का भाग देना जो अंक पावै, ताकौं जुदा लिख्या हुवा अंक के आगै लिखना । अर पाया अंक करि भागहार कौ गुणी, भाज्य मे घटाइ अवशेष तहा लिखि देना । बहुरि इस अवशेष सहित आगिला अंक, ताविषै पाया अंक के वर्ग कौं पूर्वे पंक्ति विषै तिष्ठते अंकनि करि गुणैं, जो प्रमाण होइ, ताकौ तिगुणा करि घटाइ देना । अवशेष तहा लिखना । बहुरि इस अवशेष सहित आगिला अंक विषै तिस ही पाया अंक का घन घटावना । बहुरि अवशेष सहित आगिला अंक कौ जुदा लिखि, अंकनि के प्रमाण

का वर्ग कौ तिगुणा करि निर्वाह होइ, तैसै भाग देना । पाया अंक पक्ति विषै आगै लिखना । ऐसै ही अनुक्रम तै यावत् धनराशि नि शेष होइ तावत् कीए घनमूल का प्रमाण आवै है ।

इहां उदाहरण – जैसै घनराशि पंद्रह हजार छह सै पच्चीस (१५६२५) इहां घनअघन की सहनानी कीए ऐसा (१५६२५) इहां अन्त अंक घन नाही तातै दोय अक रूप अन्तघन १५ । इहा तीन का घन कीए बहुत होइ जाइ, तातै दोय का घन आठ घटाइ, तहा अवशेष सात लिखना । अर घनमूल दूवा जुदी पक्ति विषै लिखना बहुरि तिस अवशेष सहित आगिला अक अैसा (७६) ताकौ मूल अक का वर्ग च्यारि, ताका तिगुणा बारह, ताका भाग दिए छह पावै, परंतु आगै निर्वाह नाहीं तातै पाच पाया सो दूवा के आगै पक्ति विषै लिखना अर इस पाच करि भागहार बारह कौ गुणि, भाज्य मे घटाए, अवशेष सोलह (१६) तिस सहित आगिला अक ऐसा (१६२) तामै पाया अक पाच, ताका वर्ग पचीस, ताकौ पूर्व पंक्ति विषै तिष्ठै था दूवा, ताकरी गुणे पचास, तिनके तिगुणे ड्योढ सै घटाए अवशेष बारह, तिस सहित आगिला अंक ऐसा (१२५), यामै पाच का घन घटाए राशि नि शेष भया ऐसै पद्रह हजार छ सै पच्चीस का घनमूल पच्चीस प्रमाण आया । ऐसै ही अन्यत्र जानना ।

ऐसै वर्णन करि अब भिन्न परिकर्माष्टिक कहिए है । तहा हार अर अशनि का संकलनादिक जानना । हार अर अश कहा कहिए । जैसै जहा छह पचास कहे, तहा एक के पचास अश कीए तिह समान छह अश जानने । वा छह का पाचवा भाग जानना । तहा छह कौ तो हार वा हर वा छेद कहिए । अर पाच कौ अश वा लव इत्यादिक कहिए । तहा हार कौ ऊपरि लिखिए, अश कौ नीचै लिखिए । जैसै छह पचास कौ अैसा ६/५० लिखिए । ऐसै ही अन्यत्र जानना । तहाँ भिन्न सकलन-व्यवकलन के अर्थि भागजाति, प्रभागजाति, भागानुबध, भागापवाह ए च्यारि जाति है । तिन-विषै इहा विशेष प्रयोजनभूत समच्छेद विधान लीए भागजाति कहिए है । जुदे-जुदे हार अर तिनके अश लिखि एक-एक हार कौ अन्य हारनि के अशनि करि गुणिए अर सर्व अशनि कौ परस्पर गुणिए । ऐसै करि जो सकलन करना होइ तौ परस्पर हारनि कौ जोड दीजिए अर व्यवकलन करना होइ तो मूलराशि के हारनि विषै ऋणराशि के हार घटाइ दीजिए । अर अश सबनि के समान भए । तातै अश परस्पर गुणे जेते भए तेते ही राखिए । ऐसै समान अश होने तै याका नाम समच्छेद विधान है ।

इहा उदाहरण – तहा सकलन विषै पाच छट्ठा अश दोय तिहाइ तीन पाव (चौथाई) इनकौ जोडना होइ तहा $\left|\frac{५}{६}\right|\frac{२}{३}\left|\frac{३}{४}\right|$ ऐसा लिखि तहा पाच हार कौ अन्य के तीन च्यारि-अशनि करि अर दोय हार कौ अन्य के छह-च्यारि अशनि करि अर तीन हार कौं अन्य के छह-तीन अशनि करि गुणे साठि अडतालीस चौवन हार भए। अर अशनि कौ परस्पर गुणे सर्वत्र बहत्तर अ श $\left|\frac{६०}{७२}\right|\frac{४८}{७२}\left|\frac{५४}{७२}\right|$ ऐसै भए। इहा हारनि कौ जोडे एक सो बासठ हार अर बहत्तर अश भए तहा हार कौ अश का भाग दीए दोय पाये अर अवशेष अठारह का बहत्तरिवा भाग रह्या। ताका अठारह करि अपवर्त्तन कीए एक का चौथा भाग भया। ऐसै तिनका जोड सवा दोय आया। कोई सभवता प्रमाण का भाग देइ भाज्य वा भाजक राशि का महत् प्रमाण कौं थोरा कीजिए (वा नि शेष कीजिए) तहा अपवर्त्तन सज्ञा जाननी सो इहा अठारह का भाग दीए भाज्य अठारह था, तहा एक भया अर भागहार बहत्तर था, तहा च्यारि भया, तातै अठारह करि अपवर्त्तन भया कह्या। ऐसै ही अन्यत्र अपवर्त्तन का स्वरूप जानना।

बहुरि व्यवकलन विषै जैसै तीन विषै पाच चौथा अश घटावना। तहा **'कल्प्यो हरो रूपमहारराशेः'** इस वचन तै जाकै अश न होइ, तहा एक अश कल्पना, सो इहा तीनका अश नाही, तातै एक अश कल्पि $\left|\frac{३}{१}\right|\frac{५}{४}\right|$ ऐसै लिखना इहा तीन हारनि कौ अन्य के च्यारि अश करि, अर पाच हारनि कौ अन्य के एक अश करि गुणे अर अशनि कौ परस्पर गुणे $\left|\frac{१२}{४}\right|\frac{५}{४}\right|$ ऐसा भया। इहा बारह हारनि विषै पाच घटाए सात हार भए। अर अश च्यारि भए। तहा हार कौं अश का भाग दीए एक अर तीन का चौथा भाग पौण इतना फल आया।

बहुरी भिन्न गुणकार विषै गुण्य अर गुणकार के हार कौं हार करि अश कौं अश करि गुणन करना। जैसै दश की चौथाइ कौ च्यारि की तिहाइ करि गुणना होइ, तहा ऐसा $\left|\frac{१०}{४}\right|\frac{४}{३}\right|$ लिखि गुण्य-गुणकार के हार अर अशनि कौं गुणे चालीस हार अर बारह अ श $\left|\frac{४०}{१२}\right|$ भए तहा हार कौं अश का भाग दीए तीन पाया। अब शेष च्यारि का बारहवा भाग ताकौ च्यारि करि अपवर्त्तन कीए एक का तीसरा भाग भया। अैसै ही अन्यत्र जानना।

बहुरि भिन्न भागहार विषै भाजक के हारनि कौ अंश कीजिए अर अंशनि कौ हार कीजिए । असैं पलटि भाज्य-भाजक का गुण्य-गुणकारवत् विधान करना । जैसैं सैंतीस के आधा कौ तेरह की चौथाई का भाग देना होइ तहा असैं $\left|\frac{३७}{२}\right|\frac{१३}{४}\right|$ लिखिए बहुरि भाजक के हार अर अंश पलटैं असैं $\left|\frac{३७}{२}\right|\frac{४}{१३}\right|$ लिखिना । बहुरि गुणनविधि कीए एक सौ अडतालीस हार अर छब्बीस अंश $\frac{१४८}{२६}$ भए । तहा अंश का हार कौ भाग दीए पाच पाए । अर अवशेष अठारह छब्बीसवा भाग, ताका दोय करि अपवर्त्तन कीए नव तेरहवा भागमात्र भया । असैं ही अन्यत्र जानना ।

बहुरि भिन्न वर्ग अर घन का विधान गुणकारवत् ही जानना । जातैं समान राशि दोय कौ परस्पर गुणे वर्ग हो है । तीन कौ परस्पर गुणे घन हो है । जैसैं तेरह का चौथा भाग कौ दोय जायगा माडि $\left|\frac{१३}{४}\right|\frac{१३}{४}\right|$ परस्पर गुणे ताका वर्ग एक सौ गुणहत्तर का सोलहवा भागमात्र $\frac{१६९}{१६}$ हो है । अर तीन जायगा माडि $\left|\frac{१३}{४}\right|\frac{१३}{४}\right|\frac{१३}{४}\right|$ परस्पर गुणे इकईस सै सत्याणवै का चौसठवा भाग मात्र $\frac{२१९७}{६४}$ घन हो है । बहुरि भिन्न वर्गमूल, घनमूल विषै हारनि का अर अंशनि का पूर्वोक्त विधान करि जुदा-जुदा मूल ग्रहण करिए । जैसैं वर्गित राशि एक सौ गुणहत्तरि का सोलहवा भाग $\frac{१६९}{१६}$ । तहा पूर्वोक्त विधान तैं एक सौ गुणहत्तरि का वर्गमूल तेरह, अर सोलह का च्यारि असैं तेरह का चौथा भागमात्र $\frac{१३}{४}$ वर्गमूल आया । बहुरि घनराशि इकईस सै सत्याणवै का चौसठवा भाग $\frac{२१९७}{६४}$ । तहा पूर्वोक्त विधान करि इकईस सै सत्याणवे का घनमूल तेरह, चौसठि का च्यारि ऐसैं तेरह का चौथा भागमात्र $\frac{१३}{४}$ घनमूल आया । असैं ही अन्यत्र जानना ।

बहुरि अब शून्यपरिकर्माष्ट लिखिए है । शून्य नाम बिंदी का है, ताके संकलनादिक कहिए है । तहा बिंदी विषै अंक जोडें अंक ही होय । जैसैं पचास विषै पाच जोडिए । तहा एकस्थानीय बिंदी विषै पाच जोडैं पाच भए । दशस्थानीय पाच है ही, असैं पचावन भए । बहुरि अंक विषैं बिंदी घटाए अंक ही रहै । जैसैं पचावन में दश

घटाए एक स्थानीय पाच मे बिंदी घटाए पाच ही रहे, दशस्थानीय पाच मे एक घटाए च्यारि रहे असै पैतालीस भए। बहुरि गुणकार विषै अक को बिंदीकरि गुणे बिंदी होय। जैसै वीस कौ पाच करि गुणिए, तहा गुण्य के दूवा कौ पाच करि गुणे दश भए। बहुरि बिंदी कौ पाच करि गुणे, बिंदी ही भई असै सौ भए।

बहुरि अक कौ बिंदी का भाग दीए खहर कहिए। जातै जैसे-जैसे भागहार घटता होइ, तैसे-तैसे लब्धराशि वधती होइ। जैसै दश कौ एक का छठा भाग का भाग दिए साठि होइ, एक का वीसवा भाग का भाग दीए दोय सै होय, सो बिंदी शून्यरूप, ताका भाग दीए फल का प्रमाण अवक्तव्य है। याका हार बिंदी है, इतना ही कह्या जाए। बहुरी बिंदी का वर्गघन, वर्गमूल, घनमूल विषै गुणकारादिवत् बिदी ही हो है। असै लौकिक गणित अपेक्षा परिकर्माप्टक का विधान कह्या।

बहुरि अलौकिक गणित अपेक्षा विधान है, सो सातिशय ज्ञानगम्य है। जातै तहा अकादिक का अनुक्रम व्यक्तरूप [१] नाही है। तहा कही तौ सकलनादि होतै जो प्रमाण भया ताका नाम कहिए है। जैसै उत्कृष्ट असख्यातासख्यात विषै एक जोडै जघन्य परीतानत होइ, (जघन्य परीतानत मे एक घटाए उत्कृष्ट असख्यातासख्यात होइ) [२] अर जघन्य परीतासख्यात विषै एक घटाए उत्कृष्ट सख्यात होइ। पल्य कौ दशकोडाकोडि करि गुणे सागर होइ जगत् श्रेणी कू सात का भाग दीए राजू होइ। जघन्य युक्तासख्यात का वर्ग कीए जघन्य असख्यातासख्यात होइ। सूच्यगुल का घन कीये घनागुल होइ। प्रतरागुल का वर्गमूल ग्रहे सूच्यगुल होइ। लोक का घनमूल ग्रहे जगत् श्रेणी होइ, इत्यादि जानना।

बहुरि कही सकलनादि होतै जो प्रमाण भया, ताका नाम न कहिए है, सकलनादिरूप ही कथन कहिए है। जातै सर्व सख्यात, असख्यात, अनतनि के भेदनि का नाम वक्तव्यरूप नाही है। जैसै जीवराशि करि अधिक पुद्गलराशि कहिए वा सिद्ध राशि करि हीन जीवराशि कहिए, वा असख्यात गुणा लोक कहिए वा सख्यात प्रतरागुल करि भाजित जगत्प्रतर कहिए, वा पल्य का वर्ग कहिए, वा पल्य का घन कहिए, वा केवलज्ञान का वर्गमूल कहिए, वा आकाश प्रदेशराशि का घनमूल कहिए, इत्यादि

---

१ घ प्रति 'वक्तव्यरूप' ऐसा पाठ है।

२ यह वाक्य सिर्फ छपी प्रति मे है, हस्तलिखित छह प्रतियो मे नही है।

जानना। बहुरि अलौकिक मान की सहनानी स्थापि, तिनके लिखने का वा तहा सकलनादि होतें लिखने का जो विधान है, सो आगै सदृष्टि अधिकार विषै वर्णन करेंगे, तहां ते जानना। बहुरि तहा ही लौकिक मान का भी लिखने का वा तहां संकलनादि होतें लिखने का जो विधान है, सो वर्णन करेंगे। इहा लिखै ग्रन्थ विषै प्रवेश करते ही शिष्यनि कौ कठिनता भासती, तहा अरुचि होती, तातै इहा न लिखिए है। उदाहरण मात्र इतना ही इहा भी जानना, जो सकलन विषै तौ अधिक राशि कौ ऊपरि लिखना जैसे पच अधिक सहस्र "$\overset{५}{१०००}$" असै लिखने। व्यवकलन विषै हीन राशि कौ ऊपरि लिखि तहा पूछडीकासा आकार करि बिंदी दीजिए जैसे पच हीन सहस्र $\overset{५\sim}{१०००}$ असै लिखिए। गुणकार विषै गुण्य के आगै गुणक कौ लिखिए। जैसे पचगुणा सहस्र १०००×५ असै लिखिए। भागहार विषै भाज्य के नीचै भाजक कौ लिखिए। जैसे पांच करि भाजित सहस्र $\frac{१०००}{५}$ असै लिखिए। वर्ग विषै राशि कौ दोय बार बराबर मांडिए। जैसे पाच का वर्ग कौ ५×५ असै लिखिए। घन विषै राशि कौ तीन बार बराबरि माडिए। जैसे पाच का घन कौ ५×५×५ असै लिखिए। वर्गमूल-घनमूल विषै वर्गरूप-घनरूप राशि के आगै मूल की सहनानी करनी। जैसे पचीस का वर्गमूल कौ "२५ व० मू०" असै लिखिए। एक सौ पचीस का घनमूल कौ "१२५ घ० मू०" असै लिखिए। असै अनेक प्रकार लिखने का विधान है। असै परिकर्माष्टक का व्याख्यान कीया सो जानना।

बहुरि त्रैराशिक का जहां-तहा प्रयोजन जानि स्वरूप मात्र कहिए है। तहा तीन राशि हो है – प्रमाण फल, इच्छा। तहा जिस विवक्षित प्रमाण करि जो फल प्राप्त होइ, सो प्रमाणराशि अर फलराशि जाननी। बहुरि अपना इच्छित प्रमाण होड, सो इच्छा राशि जाननी। तहा फल कौ इच्छा करि गुणि, प्रमाण का भाग दीए अपना इच्छित प्रमाण करि प्राप्त जो फल, ताका प्रमाण आवै है, इसका नाम लब्ध है। इहा प्रमाण अर इच्छा[1] की एकजाति जाननी। बहुरि फल अर लब्ध की एक जाति जाननी। इहा उदाहरण जैसे पाच रुपैया का सात मण अन्न आवै तौ सात रुपैया का केता अन्न आवै असै त्रैराशिक कीया। इहा प्रमाण राशि पाच, फल राशि सात, इच्छा राशि सात, तहा फलकरि इच्छा कौ गुणि प्रमाण का भाग दीए गुणचास

१ छपी प्रति 'इच्छा' शब्द और अन्य हस्तलिखित प्रतियो मे 'फल' शब्द है।

का पाचवा भाग मात्र लब्ध प्रमाण आया। ताका नव मण अर चयारि मण का पाचवा भाग मात्र लब्धराशि भया।

ऐसे ही छह से आठ (६०८) सिद्ध छह महीना आठ समय विषै होइ, तौ सर्व सिद्ध केते काल मे होइ, ऐसे त्रैराशिक करिए, तहा प्रमाण राशि छह से आठ, अर फलराशि छह मास आठ समयनि की सख्यात आवली, इच्छा राशि सिद्धराशि। तहा फल करि इच्छा कौ गुणि, प्रमाण का भाग दीए लब्धराशि सख्यात आवली करि गुणित सिद्ध राशि मात्र अतीत काल का प्रमाण आवै है। ऐसे ही अन्यत्र जानना।

बहुरि केतेइक गणितनि का कथन आगे इस शास्त्र विषै जहा प्रयोजन आवैगा तहा कहिएगा। जैसे श्रेणी व्यवहार का कथन गुणस्थानाधिकार विषै करणनि का कथन करते कहिएगा। बहुरि एक वार, दोय बार आदि सकलन का कथन ज्ञानाधिकार विषै पर्यायसमासज्ञान का कथन करते कहिएगा। बहुरि गोल आदि क्षेत्र व्यवहार का कथन जीवसमासादिक अधिकारनि विषै कहिएगा। ऐसे ही और भी गणितनि का जहा प्रयोजन होइगा तहा ही कथन करिएगा सो जानना। बहुरि अज्ञात राशि ल्यावने का विधान वा सुवर्णगणित आदि गणितनि का इहा प्रयोजन नाही, तातै तिनका इहा कथन न करिए है। ऐसे गणित का कथन किया। ताकौं यादि राखि जहा प्रयोजन होइ, तहा यथार्थरूप जानना। बहुरि ऐसे ही इस शास्त्र विषै करणसूत्रनि का, वा केई सज्ञानि का वा केई अर्थनि का स्वरूप एक बार जहा कह्या होइ, तहातै यादि राखि, तिनका जहा प्रयोजन आवै, तहा तैसा ही स्वरूप जानना।

या प्रकार श्रीगोम्मटसार शास्त्र की सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका नामा भाषाटीका विषै पीठिका समाप्त भई।

—❀—

गोम्मटसार जीवकाण्ड

सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका

भाषाटीका सहित

अब इस शास्त्र के मूल सूत्रनि की संस्कृत टीका के अनुसारि भाषा टीका करिए है। तहा प्रथम ही संस्कृत टीकाकार करि कथित ग्रन्थ करने की प्रतिज्ञा, वा मूल शास्त्र होने के समाचार वा मगल करने की पुष्टता इत्यादि कथन कहिए है।

बंदौं नेमिचंद्र जिनराय, सिद्ध ज्ञानभूषण सुखदाय।
करि हौं गोम्मटसार सुटीक, करि कर्णाट टीक तै ठीक ।।१।।

असै सस्कृत टीकाकार मंगलपूर्वक प्रतिज्ञा करी है। बहुरि कहै है – श्रीमान् अर काहू करि हण्या न जाय है प्रभाव जाका, ऐसा जो स्याद्वाद मत, सोही भई गुफा ताके अभ्यतर वास करता जो कुवादीरूप हस्तीनि कौ सिहसमान सिहनन्दि नामा मुनीद्र, तिहकरि भई है ज्ञानादिक की वृद्धि जाकै, ऐसा जो गगनामा वश विषै तिलक समान अर राजकार्य का सर्व जानने कौ आदि दे करि अनेक गुणसयुक्त श्रीमान् राजमल्ल नामा महाराजा देव, पृथिवी कौ प्यारा, ताका महान् जो मत्रीपद, तिहविषै शोभायमान अर रण की रगभूमि विषै शूरवीर अर पर का सहाय न चाहै, ऐसा पराक्रम का धारी, अर गुणरूपी रत्ननि का आभूषण जाके पाइए अर सम्यक्त्व रत्न का स्थानकपना कौ आदि देकरि नानाप्रकार के गुणन करि अगीकार करी जो कीर्ति, ताका भर्त्तार असा जो श्रीमान् चामुँडराय राजा, ताका प्रश्न करि जाका अवतार भया, ऐसा इकतालीस पदनि विषै नामकर्म के सत्त्व का निरूपण, तिह द्वार करि समस्त शिष्य जननि के समूह कौ सबोधन के अर्थि श्रीमान् नेमीचन्द्र नामा सिद्धातचक्रवर्ती, समस्त सिद्धात पाठी, जननि विषै विख्यात है निर्मल यश जाका, अर विस्तीर्ण बुद्धि का धारक, यहु भगवान् शास्त्र का कर्त्ता।

सो महाकर्मप्रकृति प्राभृत नामा मुख्य प्रथम सिद्धांत, तिहका १ जीवस्थान, २ क्षुद्रबध, ३ बंधस्वामी, ४. वेदनाखण्ड, ५ वर्गणाखंड, ६. महाबंध – ए छह खड है।

तिनविषै जीवादिक जो प्रमाण करनेयोग्य समस्त वस्तु, ताकौ उद्धार करि गोम्मटसार द्वितीय नाम पंचसंग्रह नामा ग्रंथ के विस्तार कौं रचता संता तिस ग्रंथ कौ आदि ही विषै निर्विघ्न शास्त्र की संपूर्णता होने के अर्थि, वा नास्तिक वादी का परिहार के अर्थि, वा शिष्टाचार का पालने के अर्थि, वा उपकार कौ स्मरण के अर्थि विशिष्ट जो अपना इष्ट देव का विशेष, ताहि नमस्कार करै है।

भावार्थ – इहा अैसा जानना – सिंहनन्दि नामा मुनि का शिष्य, जो गंगवंशी राजमल्ल नामा महाराजा, ताका मंत्री जो चामुंडराय राजा, तिहने नेमीचंद्र सिद्धांत चक्रवर्ती प्रति अैसा प्रश्न कीया –

जो सूक्ष्म अपर्याप्त पृथ्वीकायादिक इकतालीस जीवपदनि विषै नामकर्म के सत्त्वनि का निरूपण कैसे है ? सो कहौ।

तहां इस प्रश्न के निमित्त कौ पाय अनेक जीवनि के संबोधने के अर्थि जीवस्थानादिक छह अधिकार जामै पाइए, अैसा महाकर्म प्रकृति प्राभृत है नाम जाका, अैसा अग्रायणीय पूर्व का पांचवां वस्तु, अथवा यति भूतबलि आचार्यकृत[१] धवल शास्त्र, ताका अनुसार लेइ गोम्मटसार अर याहीका द्वितीय नाम पंचसंग्रह ग्रंथ, ताके करने का प्रारंभ किया। तहां प्रथम अपने इष्टदेव कौ नमस्कार करै हैं। ताके निर्विघ्नपने शास्त्र की समाप्तता होने कू आदि दैकरि च्यारि प्रयोजन कहे। अब इनकौ दृढ करै है।

इहा तर्क – जो इष्टदेव, ताकौ नमस्कार करने करि निर्विघ्नपनै शास्त्र की समाप्तता कहा हो है ?

तहां कहिए है – जो ऐसी आशंका न करनी, जातै शास्त्र का अैसा वचन है–

> **"विघ्नौघाः प्रलयं यांति शाकिनीभूतपन्नगाः।**
> **विषं निर्विषतां याति स्तूयमाने जिनेश्वरे ॥"**

याका अर्थ – जो जिनेश्वरदेव कौ स्तवता थका विघ्न के जु समूह, ते नाश कौ प्राप्त हो हैं। बहुरि शाकिनी, भूत, सर्पादिक, ते नाश कौ प्राप्त हो है। बहुरि विष है, सो विषरहितपना कौ प्राप्त हो है। सो अैसा वचन थकी शंका न करना। बहुरि जैसे प्रायश्चित्त का आचरण करि व्रतादिक का दोष नष्ट हो है, बहुरि जैसे

---

१ यति वृषभाचार्य ने गुणधराचार्य विरचित कषायपाहुड के सूत्रों पर चूर्णिसूत्र लिखे हैं। भूतबली आचार्य ने षट्खण्डागम सूत्रों की रचना की है और आचार्य वीरसेन ने षट्खण्डागम सूत्रों की 'धवला' टीका लिखी है

औषधि सेवन करि रोग नष्ट हो है, तैसे मगल करने करि विघ्नकर्ता अन्तरायकर्म के नाश का अविरोध है, तातै शका न करनी। असै प्रथम प्रयोजन दृढ कीया।

बहुरि तर्क – जो ऐसा न्याय है–

**"सर्वथा स्वहितमाचरणीयं किं करिष्यति जनो बहुजल्पः।
विद्यते नहि स कश्चिदुपाय सर्वलोकपरितोषकरो यः ॥"**

याका अर्थ – जो सर्वप्रकार करि अपना हित का आचरण करना। अपना हित करते बहुत बकै है जो मनुष्यलोक, सो कहा करैगा ? अर कोऊ कहै जो सर्व प्रसन्न होइ, सो कार्य करना, तो लोक विषै सो कोई उपाय ही नाही, जो सर्व लोक कौ सतोष करै। असै न्याय करि जाका प्रारभ करो हौ, ताका प्रारभ करौ।

नास्तिकवादी का परिहार करि कहा साध्य है ?

तहा कहिए है – असा भी न कहना। जातै प्रशम, सवेग अनुकपा, आस्तिक्य गुण का प्रगट होनेरूप लक्षण का धारी सम्यग्दर्शन है। यातै नास्तिकवादी का परिहार करि आप्त जो सर्वज्ञ, तिहने आदि देकरि पदार्थनि विषै जो आस्तिक्य भाव हो है, ताकै सम्यग्दर्शन का प्राप्ति करने का कारणपना पाइए है। बहुरि असा प्रसिद्ध वचन है–

**"यद्यपि विमलो योगी, छिद्रान् पश्यति मेदिनी।
तथापि लौकिकाचारं, मनसापि न लंघयेत् ॥"**

याका अर्थ – यद्यपि योगीश्वर निर्मल है, तथापि पृथ्वी वाके भी छिद्रनि कौ देखै है। तातै लौकिक आचार कू मन करि भी उल्लघन न करै, असै प्रसिद्ध है। तातै नास्तिक का परिहार कीया चाहिये। असै दूसरा प्रयोजन दृढ कीया।

बहुरि तर्क – जो शिष्टचार का पालन किसै अर्थ करिए ?

तहां कहिए है – असा विचार योग्य नाही, जातै असा वचन मुख्य है **"प्रायेण गुरुजनशीलमनुचरंति शिष्याः।"** **याका अर्थ** – जे शिष्य है ते, अतिशय करि गुरुजन का जु स्वभाव, ताकौ अनुसार करि आचरण करै है। बहुरि असा न्याय है – **"मगलं निमित्तं हेतुं परिमाणं नाम कर्तारमिति षडपि व्याकृत्याचार्याः पश्चाच्छास्त्रं व्याकुर्वन्तु"** **याका अर्थ**–जो मगल, निमित्त, हेतु, परिमाण, नाम, कर्ता इन छहो कौ पहिले करि

आचार्य है सो पीछे शास्त्र कौ करौ । असा न्याय आचार्यनि की परपरा तै चल्या आया है । ताका उल्लघन कीए उन्मार्ग विषै प्रवर्तने का प्रसग होय । तातै शिष्टाचार का पालना किसे अर्थ करिए है ? असा विचार योग्य नाही ।

अब इहा मगलादिक छहो कहा ? सो कहिए है – तहा प्रथम ही पुण्य, पूत, पवित्र, प्रशस्त, शिव, भद्र, क्षेम, कल्याण, शुभ, सौख्य – इत्यादि मगल के पर्याय हैं । मगल ही के पुण्यादिक भी नाम हैं । तहा मल दोय प्रकार है – द्रव्यमल, भावमल तहा द्रव्यमल दोयप्रकार – बहिरग, अन्तरग । तहा पसेव, मल, धूलि, कादो इत्यादि बहिरग द्रव्यमल है । बहुरि प्रकृति, स्थिति, अनुभाग, प्रदेशनि करि आत्मा के प्रदेशनि विषै निबिड़ बध्या जो ज्ञानावरणादि आठ प्रकार कर्म, सो अन्तरग द्रव्यमल है ।

बहुरि भावमल अज्ञान, अदर्शनादि परिणामरूप है । अथवा नाम, स्थापना, द्रव्य, भाव भेदरूप मल है । अथवा उपचार मल जीव के पाप कर्म है । तिस सब ही मल कौ **गालयति** कहिए विनाशै, वा घातै, वा दहै, वा हनै, वा शोधै, वा विध्वसै, सो मगल कहिए । अथवा **मंग** कहिए सौख्य वा पुण्य, ताकौ **लाति** कहिए आदान करै, ग्रहण करै, सो मगल है ।

बहुरि सो मगल नाम, स्थापना, द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव भेद तै आनद का उपजावनहारा छह प्रकार है । तहा अर्हत्, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, साधु, इनका जो नाम, सो तौ **नाम मंगल** है । बहुरि कृत्रिम, अकृत्रिम जिनादिक के प्रतिबिब,सो **स्थापना मंगल** है । बहुरि जिन, आचार्य, उपाध्याय, साधु इनका जो शरीर, सो **द्रव्य मगल** है ।

बहुरि कैलाश, गिरिनार, सम्मेदाचलादिक पर्वतादिक, अर्हन्त आदिक के तप-केवलज्ञानादि गुणनि के उपजने का स्थान, वा साढा तीन हाथ तै लगाय पाच सै पचीस धनुष पर्यन्त केवली का शरीर करि रोक्या हूवा आकाश अथवा केवली का समुद्घात् करि रोक्या हूवा आकाश, सो **क्षेत्र मगल** है ।

बहुरि जिस काल विषै तप आदिक कल्याण भए होहि, वा जिस काल विषै अष्टाह्निक आदि जिनादिक के महान उत्सव वर्तै, सो **काल मंगल** है ।

बहुरि मगल पर्याय करि सयुक्त जीवद्रव्यमात्र **भाव मंगल** है ।

सो यहु कह्या हूवा मगल जिनादिक का स्तवनादिरूप है, सो शास्त्र की आदि विषै कीया हूवा शिष्यनि कौ थोरे कालादिक करि शास्त्रनि का पारगामी करै है ।

मध्य विषै कीया हूवा मगल विद्या का व्युच्छेद न होइ, ताकौ करै है। अन्त विषै कीया हूवा विद्या का निर्विघ्नपनै कौ करै है।

कोई तर्क करै कि – इष्ट अर्थ की प्राप्ति परमेष्ठीनि के नमस्कार तै कैसै होइ ?

तहां काव्य कहिए है –

"नेष्टं विहंतु शुभभावभग्नरसप्रकर्षः प्रभुरंतराय ।
तत्कामचारेण गुणानुरागान्नुत्यादिरिष्टार्थकृदर्हदादे. ।।"

याका अर्थ – अर्हन्तादिक कौ नमस्काररूप शुभ भावनि करी नष्ट भया है अनुभाग का आधिक्य जाका, असा जु अन्तराय नामा कर्म, सो इष्ट के घातने कौ प्रभु कहिए समर्थ न होइ, तातै तिस अभिलाष युक्त जीव करि गुणानुराग तै अर्हत आदिक कौ कह्या हूवा नमस्कारादिक, सो इष्ट अर्थ का करनहारा है - असा परमागम विषै प्रसिद्ध है, तातै सो मगल अवश्य करना ही योग्य है।

बहुरि निमित्त इस शास्त्र का यहु है – जे भव्य जीव है, ते बहुत नय प्रमाणनि करि नानाप्रकार भेद कौ लीये पदार्थ कौ जानहु, इस कार्य कौ कारणभूत करिए है।

बहुरि हेतु इस शास्त्र के अध्ययन विषै दोय प्रकार है – प्रत्यक्ष, परोक्ष। तहा प्रत्यक्ष दोय प्रकार – साक्षात्प्रत्यक्ष, परपराप्रत्यक्ष। तहा अज्ञान का विनाश होना, बहुरि सम्यग्ज्ञान की उत्पत्ति होनी, बहुरि देव-मनुष्यादिकनि करि निरतर पूजा करना, बहुरि समय-समय प्रति असख्यात गुणश्रेणीरूप कर्म निर्जर होना, ये तौ साक्षात् प्रत्यक्ष हेतु है। शास्त्राध्ययन करतै ही ए फल निपजै है। बहुरि शिष्य वा शिष्यनि के प्रति शिष्य, तिनकरि निरतर पूजा का करना, सो परपरा प्रत्यक्ष हेतु है। शास्त्राध्ययन कीए तै असी फल की परपरा हो है।

बहुरि परोक्ष हेतु दोय प्रकार – अभ्युदयरूप, निःश्रेयसरूप। तहा सातावेदनीयादिक प्रशस्त प्रकृतिनि का तीव्र अनुभाग का उदय करि निपज्या तीर्थकर, इद्र, राजादिक का सुख, सो तौ अभ्युदयरूप है। बहुरि अतिशय सयुक्त, आत्मजनित, अनौपम्य, सर्वोत्कृष्ट तीर्थकर का सुख वा पचेद्रियनि तै अतीत सिद्ध सुख, सो निःश्रेयसरूप है। ग्रथ अध्ययन तै पीछै परोक्ष असा फल पाइए है। तातै यहु ग्रथ ऐसे फलनि का हेतु जानना।

बहुरि प्रमाण इस शास्त्र का नानाप्रकार अर्थनि करि अनत है । बहुरि अक्षर गणना करि सख्यात है, जातै जीवकाड का सात सै पचीस गाथा सूत्र है ।

बहुरि नाम-जीवादि वस्तु का प्रकाशने कौ दीपिका समान है । तातै सस्कृत टीका की अपेक्षा **जीवतत्त्वप्रदीपिका** है ।

बहुरि कर्ता इस शास्त्र का तीन प्रकार – अर्थकर्ता, ग्रथकर्ता, उत्तर ग्रथकर्ता ।

तहा समस्तपनै दग्ध कीया घाति कर्म चतुष्टय, तिहकरि उपज्या जो अनन्त ज्ञानादिक चतुष्टयपना, ताकरि जान्या है त्रिकाल सबन्धी समस्त द्रव्य-गुण-पर्याय का यथार्थ स्वरूप जिहै, बहुरि नष्ट भए है क्षुधादिक अठारह दोष जाके, बहुरि चौतीस अतिशय, आठ प्रातिहार्य करि सयुक्त, बहुरि समस्त सुरेद्र-नरेद्रादिकनि करि पूजित है चरण कमल जाका, बहुरि तीन लोक का एक नाथ, बहुरि अठारह महाभाषा अर सात सै क्षुद्र भाषा, वा सज्ञी सबधी अक्षर-अनक्षर भाषा तिहस्वरूप, अर तालवा, दात, होठ, कठ का हलावना आदि व्यापाररहित, अर भव्य जीवनि कौ आनन्द का कर्ता, अर युगपत् सर्व जीवनि कौ उत्तर का प्रतिपादन करनहारा ऐसी जु दिव्यध्वनि, तिहकरि सयुक्त, बहुरि बारह सभा करि सेवनीक, ऐसा जो भगवान श्री वर्द्धमान तीर्थंकर परमदेव, सो अर्थकर्ता जानना ।

बहुरि तिस अर्थ का ज्ञान वा कवित्वादि विज्ञान अर सात ऋद्धि, तिनकरि सपूर्ण विराजमान ऐसा गौतम गणधर देव, सो ग्रथकर्ता जानना । बहुरि तिसही के अनुक्रम का धारक, बहुरि नाही नष्ट भया है सूत्र का अर्थ जाकै, बहुरि रागादि दोषनि करि रहित ऐसा जो मुनिश्वरनि का समूह, सो उत्तर ग्रथकर्ता जानना ।

या प्रकार मगलादि छहोनि का व्याख्यान इहा कीया । ऐसै तीसरा प्रयोजन दृढ कीया है ।

बहुरि तर्क – जो शास्त्र की आदि विषै उपकार स्मरण किसे अर्थ करिए है?

तहां कहिए है – जो ऐसा न कहना, जातै ऐसा कथन है

"श्रेयोमार्गस्य ससिद्धिः प्रसादात्परमेष्ठिनः
इत्याहुस्तद्गुणस्तोत्र शास्त्रादौ मुनिपुगवाः ।।"

याका अर्थ — श्रेय जो कल्याण, ताके मार्ग की सम्यक् प्रकार सिद्धि, सो परमेष्ठि के प्रसाद तैं हो है । इस हेतु तैं मुनि प्रधान है, ते शास्त्र की आदि विषै तिस परमेष्ठी का स्तोत्र करना कहै है । बहुरि ऐसा वचन है–

अभिमतफलसिद्धेरभ्युपायः सुबोधः, प्रभवति स च शास्त्रात्तस्य चोत्पत्तिराप्तात् ।
इति भवति स पूज्यस्तत्प्रसादात्प्रबुद्धैर्न हि कृतमुपकारं पण्डिता (साधवो) विस्मरंति ॥

याका अर्थ – वाछित, अभीष्ट फल की सिद्धि होने का उपाय सम्यग्ज्ञान है । बहुरि सो सम्यग्ज्ञान शास्त्र तैं हो है । बहुरि तिस शास्त्र की उत्पत्ति आप्त जो सर्वज्ञ तैं है । इस हेतु तैं सो आप्त सर्वज्ञदेव है, सो तिसका प्रसाद तैं ज्ञानवत भए जे जीव, तिनकरि पूज्य हो है, सो न्याय ही है व पडित है, ते कीए उपकार कौं नाही भूलै है, तातै शास्त्र को आदि विषै उपकार स्मरण किसे अर्थ करिए ऐसा न कहना । ऐसैं चौथा प्रयोजन दृढ किया ।

याहीतै विघ्न विनाशने कौ, बहुरि शिष्टाचार पालने कौ, बहुरि नास्तिक के परिहार कौ, बहुरि अभ्युदय का कारण जो परम पुण्य, ताहि उपजावने कौ, बहुरि कीया उपकार के यादि करने कौ शास्त्र की आदि विषै जिनेद्रादिक कौ नमस्कारादि रूप जो मुख्य मगल, ताकौ आचरण करत सता, बहुरि जो अर्थ कहेगा, तिस अभिधेय की प्रतिज्ञा कौं प्रकाशता सता आचार्य है, सौ **सिद्धं** इत्यादि गाथा सूत्र कौ कहै है-

मंगलाचरण

सिद्धं सुद्धं पणमिय, जिणिंदवरणेमिचंदमकलंकं ।
गुणरयणभूसणुदयं, जीवस्स परूवणं वोच्छं ॥१॥

सिद्धं शुद्धं प्रणम्य, जिनेंद्रवरनेमिचन्द्रमकलंकम् ।
गुणरत्नभूषणोदयं, जीवस्य प्ररूपणं वक्ष्ये ॥१॥

टीका – **अहं वक्ष्यामि** । **अहं** कहिए मैं जु हो ग्रथकर्ता । सो **वक्ष्यामि** कहिये कहौगा करौगा । **किं** ? किसहि करौगा ? **प्ररूपणं** कहिये व्याख्यान अथवा अर्थ कौ प्ररूपै वा अर्थ याकरि प्ररूपिये ऐसा जु ग्रथ, ताहि करौगा । **कस्य प्ररूपणं** ? किसका प्ररूपण कहौगा ? **जीवस्य** कहिये च्यारि प्राणनि करि जीवै है, जीवेगा, जीया ऐसा जीव जो आतमा, तिस जीव के भेद का प्रतिपादन करण हारा शास्त्र

मैं कहौगा, ऐसी प्रतिज्ञा करि । इस प्रतिज्ञा करि इस शास्त्र कै सबन्धाभिधेय, शक्यानुष्ठान, इष्टप्रयोजनपना है, तातै बुद्धिवतनि करि आदर करना योग्य कह्या है ।

तहा जैसा सबन्ध होइ, तैसा ही जहा अर्थ होइ, सो सबधाभिधेय कहिये । बहुरि जाके अर्थ के आचरण करने की सामर्थ्य होइ, सो शक्यानुष्ठान कहिये । बहुरि जो हितकारी प्रयोजन लिए होइ, सो इष्टप्रयोजक कहिये ।

कथंभूत प्ररूपणं ? जाकौ कहौगा, सो कैसा है प्ररूपण ? **गुणरत्नभूषणोदयं**– गुण जे सम्यग्दर्शनादिक, तेई भये रत्न, सोई है आभूषण जाकै, ऐसा जो गुणरत्नभूषण चामुडराय, तिसतै है उदय कहिये उत्पत्ति जाकी ऐसा शास्त्र है । जातै चामुडराय के प्रश्न के वश तै याकी उत्पत्ति प्रसिद्ध है । अथवा गुणरूप जो रत्न सो **भूषयति** कहिये शोभै जिहि विषै ऐसा गुणरत्नभूषण मोक्ष, ताकी है उदय कहिये उत्पत्ति जातै ऐसा शास्त्र है ।

भावार्थ – यहु शास्त्र मोक्ष का कारण है । बहुरि विकथादिरूप बध का कारण नाही है । इस विशेषण करि १ बधक २ बध्यमान ३ बधस्वामी ४ बधहेतु ५ बधभेद - ये पच सिद्धात के अर्थ है ।

तहा कर्मबध का कर्ता ससारी जीव, सो बधक । बहुरि मूल-उत्तर प्रकृतिबध सो बध्यमान । बहुरि यथासभव बध का सद्भाव लीये गुणस्थानादिक, सो बधस्वामी । बहुरि मिथ्यात्वादि आस्रव, सो बधहेतु । बहुरि प्रकृति, स्थिति आदि बधभेद – इनका निरूपण है, तातै गोम्मटसार का द्वितीयनाम पचसग्रह है । तिहिविषै बधक जो जीव, ताका प्रतिपादन करणहारा यहु शास्त्र **जीवस्थान** वा **जीवकाड** इनि दोय नामनिकरि विख्यात, ताहि मैं कहौंगा । ऐसा शास्त्र के कर्ता का अभिप्राय यहु विशेषण दिखावै है ।

बहुरि **कथंभूत प्ररूपणं** ? कैसा है प्ररूपण ? **सिद्ध** कहिये पूर्वाचार्यनि की परपरा करि प्रसिद्ध है, अपनी रुचि करि नाही रचनारूप किया है । इस विशेषण करि आचार्य अपना कर्तापना कौ छोडि पूर्व आचार्यादिकनि का अनुसार को कहै हैं । **पुन. किं विशिष्ट प्ररूपण** ? बहुरि कैसा है प्ररूपण ? **शुद्धं** कहिये पूर्वापर विरोध कौं आदि देकरि दोषनि करि रहित है, तातै निर्मल है । इस विशेषण करि सम्यग्ज्ञानी जीवनि के उपादेयपना इस शास्त्र का प्रकाशित कीया है ।

किं कृत्य ? कहाकरि ? **प्रणम्य** कहिये प्रकर्षपने नमस्कार करि प्ररूपण करौ हौं । **कं** किसहि ? **जिनेंद्रवरनेमिचंद्रं** - कर्मरूप वैरीनि कौ जीतै, सो जिन । अपूर्वकरण परिणाम कौ प्राप्त प्रथमोपशम सम्यक्त्व कौ सन्मुख सातिशय मिथ्यादृष्टि, ते जिन कहिये । तेई भए इद्र, कर्मनिर्जरारूप ऐश्वर्य, ताका भोक्ता कौ आदि देकरि सर्वजिनेद्रनि विषै वर कहिये श्रेष्ठ, असख्यातगुणी महानिर्जरा का स्वामी असा चामुडराय करि निर्मापित महापूत चैत्यालय विषै विराजमान नेमि नामा तीर्थंकर देव, सोउ भव्य जीवनि कौ **चंद्रयति** कहिये आह्लाद करै वा समस्त वस्तुनि कौ प्रकाशै अथवा ससार आताप अर अज्ञान अधकार का नाशक चंद्र असा जिनेद्रवरनेमिचद्र । बहुरि कैसा है ? **अकलंकं** कहिए कलकरहित, ताकौ नमस्कार करि जीव का प्ररूपण मैं कहौगा ।

अथवा अन्य अर्थ कहै – **कं प्रणम्य** ? किसहि नमस्कार करि जीव का प्ररूपण करौ हौ ? **जिनेद्रवरनेमिचंद्रं** – नेमिचद्र नामा बाईसमा जिनेद्र तीर्थंकर देव, ताहि नमस्कार करि जीव की प्ररूपणा करौ हौ । कैसा है सो ? **सिद्धं** कहिये समस्त लोक विषै विख्यात है । बहुरि कैसा है ? **शुद्धं** कहिये द्रव्य-भावस्वरूप घातिया कर्मनि करि रहित है । तथापि ताके कोई सशयी क्षुधादिदोष का सभव कहै है, तिस प्रति कहै हैं – कैसा है सो ? **अकलंकं** कहिये नाही विद्यमान है कलक कहिये क्षुधादिक अठारह दोष जाके, ऐसा है । बहुरि कैसा है ? **गुणरत्नभूषणोदयं** – गुण जे अनत ज्ञानादिक, तेई भए रत्न के आभूषण, तिनका है उदय कहिये उत्कृष्टपना जा विषै ऐसा है । इस प्रकार अन्य विषै न पाईए ऐसे असाधारण विशेषण, समस्त अतिशयनि के प्रकाशक, अन्य के आप्तपनै की वार्ता कौ भी जे सहै नाही, तिन इनि विशेषणनि करि इस ही भगवान के परम आप्तपना, परम कृतकृत्यपना हम आदि दै जे अकृतकृत्य हैं, तिनकै शरणपना प्रतिपादन किया है, ऐसा जानना ।

अथवा अन्य अर्थ कहै है – **कं प्रणम्य** ? किसहि नमस्कार करि जीव का प्रतिपादन करौ हौ ? **जिनेद्रवरनेमिचंद्रं** - सकल आतमा के प्रदेशनि विषै सघन बंधे जे घाति कर्मरूप मेघपटल, तिनके विघटन तै प्रकटीभूत भए अनतज्ञानादिक नव केवल लब्धिपना, तातै जिन कहिये । बहुरि अनौपम्य परम ईश्वरता करि सपूर्णपना होनेकरि इद्र कहिये । जिन सोई जो इद्र सो जिनेद्र, अपने ज्ञान के प्रभाव करि व्याप्त भया है तीन काल सबधी तीन लोक का विस्तार जाकै ऐसा जिनेद्र, **वर** कहिये अक्षर सज्ञा करि चौबीस, कैसै ? **'कटपयपुरस्थवर्णैः'** इत्यादि सूत्र अपेक्षा य र ल व विषै वकार

चौथा अक्षर, ताका च्यारि का अक, अर रकार दूसरा अक्षर, ताका दोय का अक, अकनि की बाई तरफ से गति है, अैसे **वर** शब्द करि **चौबीस** का अर्थ भया। बहुरि अपने अद्भूत पुण्य के माहात्म्य तै नागेद्र, नरेद्र, देवेंद्र का समूह कौ अपने चरणकमल विषै नमावे, सो नेमि कहिये। अथवा धर्मतीर्थरूपी रथ के चलावने विषै सावधान हैं, तातै जैसे रथ के पहिए कै नेमि - धुरी है, तैसे सो तीर्थंकरनि का समुदाय धर्मरथ विषै नेमि कहिये है। बहुरि **चंद्रयति** कहिये तीनलोक के नेत्ररूप चद्रवशी कमलवननि कौं आह्लादित करै, सो चद्र कहिये। अथवा जाके तैसा रूप की सपदा का सपूर्ण उदय होय है, जिसरूप सपदा के तौलन के विषै इद्रादिकनि की सुन्दरता की समीचीन सर्वस्व भी परमाणु समान हलवा (हलका) हो है, सो जो नेमि सोई चद्र, सो नेमिचद्र, वर - चौवीस सख्या लिए जो नेमिचद्र, सो वरनेमिचद्र, जो जिनेन्द्र सोइ वर नेमिचद्र, सो जिनेन्द्रवरनेमिचद्र कहिए वृषभादि वर्धमानपर्यंत तीर्थंकरनि का समुदाय, ताहि नमस्कार करि जीव का प्ररूपण कहौ हौ; ऐसा अभिप्राय है। अवशेष सिद्ध आदि विशेषरणनि का पूर्वोक्त प्रकार सबध जानना।

– अथवा अन्य अर्थ कहै हैं – **प्रणम्य** कहिये नमस्कार करि कं ? किसहि ? **जिनेन्द्रवरनेमिचंद्रं। जयति** कहिये जीतै, भेदै, विदारै कर्मपर्वतसमूह कौ, सो जिन कहिए। बहुरि नाम का एकदेश सपूर्णनाम विषै प्रवर्तै है - इस न्याय करि इन्द्र कहिये इन्द्रभूति ब्राह्मण, ताका वा इन्द्र कहिये देवेंद्र, ताका **वर** कहिए गुरू, ऐसा इन्द्रवर श्रीवर्धमानस्वामी, बहुरि **'नयति'** कहिए अविनश्वर पद को प्राप्त करै शिष्य समूह कौ, सो नेमि कहिये। बहुरि समस्त तत्त्वनि कौ प्रकाशै है चद्रवत्, तातै चद्र कहिये। जिन सोई इन्द्रवर, सोई नेमि, सोई चन्द्र, ऐसा जिनेन्द्रवरनेमिचद्र वर्धमान-स्वामी ताहि नमस्कार करि जीव का प्ररूपण करौ हौ। अन्य सबध पूर्वोक्त प्रकार जानना।

अथवा अन्य अर्थ कहै हैं – **प्रणम्य** – नमस्कार करि। कं ? किसहि ? **सिद्धं** कहिये सिद्ध भया, वा निष्ठित - सपूर्ण भया वा निष्पन्न (जो) होना था सो हूवा। वा कृतकृत्य जो करना था, सो जानै कीया। वा सिद्धसाध्य, सिद्ध भया है साध्य जाकै, अैसा सिद्धपरमेष्ठी बहुत हैं; तथापि जाति एक है, तातै द्वितीया विभक्ति का एकवचन कह्या। तिह करि सर्वक्षेत्र विषै, सर्वकाल विषै, सर्वप्रकार करि सिद्धनि का सामान्यपनै करि ग्रहण करना। सो सर्वसिद्धसमूह कौ नमस्कार करि जीव का

प्ररूपण करौ हौ, अैसा अर्थ जानना । सो कैसा है ? **शुद्धं** कहिये ज्ञानावरणादि आठ प्रकार द्रव्य-भावस्वरूप कर्म करि रहित है । बहुरि कैसा है ? **जिनेंद्रवरनेमिचद्रं** – अनेक संसार वन संबधी विषम कष्ट दैने कौ कारण कर्म वैरी, ताहि जीतै, सो जिन । बहुरि इदन कहिये परम ईश्वर ताका योग, ताकरि राजते कहिए शोभै, सो इद्र । बहुरि यथार्थ पदार्थनि कौ **नयति** कहिये जानै, सो नेमि कहिये ज्ञान, वर कहिए उत्कृष्ट अनंतरूप जाके पाइए, सो वरनेमि । बहुरि **चंद्रयति** कहिए आह्लादरूप होइ परम सुख को अनुभवे सो चद्र । इहा सर्वत्र जाति अपेक्षा एकवचन जानना । सो जो जिन, सोई इंद्र, सोई वर नेमि, सोई चद्र, अैसा जिनेद्रवरनेमिचद्र सिद्ध है । बहुरि कैसा है ? **अकलंकं** कहिए नाही विद्यमान है **कलंक** कहिए अन्यमतीनि करि कल्पना कीया दोष जाकै ऐसा है । बहुरि कैसा है ? **गुणरत्नभूषणोदयं** गुण कहिए परमावगाढ सम्यक्त्वादि आठ गुण, तेई भए रत्न-आभूषण, तिनका है उदय कहिए अनुभवन वा उत्कृष्ट प्राप्ति जाकै अैसा है ।

अथवा अन्य अर्थ कहै हैं – **प्रणम्य** नमस्कार करि **कं** ? किसहि ? **कं** कहिए आत्मद्रव्य, ताहि नमस्कार करि जीव का प्ररूपण करौ हौ । कैसा है ? **अकलं** कहिये नाही विद्यमान है कल कहिये शरीर जाकै ऐसा है । बहुरि कैसा है ? **सिद्धं** कहिए नित्य अनादि-निधन है । बहुरि कैसा है ? **शुद्धं** कहिये शुद्धनिश्चयनय के गोचर है ।

बहुरि कैसा है ? **जिनेंद्रवरनेमिचंद्रं** – जिन जे असयत सम्यग्दृष्टी आदि, तिनका इद्र कहिये स्वामी है, परम आराधने योग्य है । बहुरि **वर** कहिये समस्त पदार्थनि विषै सारभूत है । बहुरि नेमिचद्र कहिये ज्ञान-सुखस्वभाव कौ धरै है । सो जिनेद्र, सोई वर, सोई नेमिचद्र अैसा जिनेद्रवरनेमिचद्र आत्मा है ।

बहुरि कैसा है ? **गुणरत्नभूषणोदयं** - **गुणानां** कहिये समस्त गुणनि विषै रत्न कहिये रत्नवत् पूज्य प्रधान अैसा जो सम्यक्त्वगुण, ताकी है उदय कहिये उत्पत्ति जाकै वा जातै आत्मानुभव तै सम्यक्त्व हो है, तातै आत्मा गुणरत्नभूषणोदय है ।

अथवा अन्य अर्थ कहै हैं – **प्रणम्य** नमस्कार करि, क ? किसहि ? **सिद्धं** कहिये सिद्ध परमेष्ठीनि के समूह कौं, सो कैसा है ? **शुद्धं** कहिये दग्ध किए है आठ कर्ममूल जिहि । बहुरि किसहि ? **जिनेद्रवरनेमिचंद्रं** जिनेद्र कहिये अर्हत् परमेष्ठीनि का समूह सो **वरा** कहिये उत्कृष्ट जीव गणधर, चक्रवर्ती, इद्र, धरणेद्रादिक भव्यप्रधान तेई भए नेमि कहिये नक्षत्र, तिनिविषै चद्र कहिये चद्रमावत् प्रधान, अैसा जिनेद्र, सोई

वरनेमिचद्र, ताहि अर्हंतपरमेश्वरनि के समूह को। सो कैसा है ? अकलक कहिए दूर कीया है तरेसठि कर्मप्रकृतिरूप मल कलक जानै ऐसा है। केवल तिसही को नमस्कार करि नाही, बहुरि **गुणरत्नभूषणोदयं** गुणरूपी रतन सम्यग्दर्शन, ज्ञान, चारित्र, तेई भए भूषण कहिए आभरण, तिनका है उदय कहिए समुदाय (जाके) ऐसा आचार्य, उपाध्याय, साधुसमूह ताको, ऐसे सिद्ध, अरहत, आचार्य, उपाध्याय, साधुरूप पचपरमेष्ठीनि कौ नमस्कार करि जीव का प्ररूपण करौ हौ।

अथवा अन्य अर्थ कहै है – **प्रणम्य** कहिये नमस्कार करि, कं कहिए किसहि ? **जीवस्य प्ररूपणं** कहिए जीवनि का निरूपण वा ग्रंथ, ताहि नमस्कार करि कहौ। सो कैसा है ? **सिद्धं** कहिए सम्यक् गुरुनि का उपदेश पूर्वकपनै करि अखडित प्रवाहरूप करि अनादितै चल्या आया है। बहुरि कैसा है ? **शुद्धं** कहिए प्रमाण तै अविरोधी अर्थ का प्रतिपादकपनै करि पूर्वापरतै, प्रत्यक्षतै अनुमान तै, आगम तै, लोक तै निजवचनादि तै विरोध, तिनिकरि अखडित है। बहुरि कैसा है **'जिनेंद्रवरनेमिचंद्र** – जिनेद्र कहिये सर्वज्ञ, सो है वर कहिए कर्ता जाका, ऐसा जिनेंद्रवर कहिए सर्वज्ञ-प्रणीत है। इस विशेषण करि वक्ता के प्रमाणपना तै वचन का प्रमाणपना दिखाया। बहुरि यथावस्थित अर्थ कौ **नयति** कहिए प्रतिपादन करै, प्रकासै, सो नेमि कहिए। बहुरि **चंद्रयति** कहिए आह्लादित करै, विकासै शब्द, अर्थ, अलकारनि करि श्रोतानि के मनरूपी गढूलनि (कमल) कौं, सो चद्र कहिए जिनेद्रवर, सोई नेमि, सोई चद्र ऐसा जिनेंद्रवरनेमिचन्द्र प्ररूपण है। बहुरि कैसा है ? **अकलंकं** कहिए दूरहि तै छोड्या है शब्द-अर्थ-गोचर दोषकलक जिहि, ऐसा है। बहुरि कैसा है ? **गुणरत्न-भूषणोदयं** – गुणरत्न जे रत्नत्रयरूप भूषण कहिये आभूषण, तिनकी है उदय कहिए उत्पत्ति वा प्राप्ति, हम आदि जीवनि कै जातै, ऐसा गुणरत्नभूषण प्ररूपण है।

अथवा अन्य अर्थ कहै हैं – चामुडराय कै जीवप्ररूपणशास्त्र का कर्तापनै का आश्रय करि मगलसूत्र व्याख्यान करिए है।

भावार्थ – इस गोम्मटसार का मूलगाथाबध ग्रथकर्ता नेमिचन्द्र आचार्य है। ताकी टीका कर्णाटकदेशभाषाकरि चामुण्डराय करी है। ताकै अनुसारि केशवनामा ब्रह्मचारी सस्कृतटीका करी है। सो चामुण्डराय की अपेक्षा करि इस सूत्र का अर्थ करिए है। **अहं जीवस्य प्ररूपण वक्ष्यामि** मैं जु हौं चामुण्डराय, सो जीव का प्ररूपण रूप ग्रथ का टिप्पण ताहि कहौंगा। **किं कृत्वा** ? कहाकरि ? **प्रणम्य** नमस्कार करि।

कं ? किसहि ? **जिनेंद्रवरनेमिचंद्रं** जिनेंद्र है वर कहिए भर्ता, स्वामी जाका, सो जिनेन्द्रवर इहा जिन कहिये कर्मनिर्जरा संयुक्त जीव, तिनि विषै इद्र कहिए स्वामी अर्हत्, सिद्ध । बहुरि जिन है इद्र कहिए स्वामी जिनिका ऐसै आचार्य, उपाध्याय, साधु; ऐसै जिनेद्र शब्दकरि पंच परमेष्ठी आए । तिनका आराधन तै उपजै जे सम्यग्दर्शनादिक गुण, तिनिकरि सयुक्त अपना परमगुरु नेमिचद्र आचार्य, ताहि नमस्कार करि जीव प्ररूपणा कहौगा । सो कैसा है ? **सिद्धं** कहिये प्रसिद्ध है वा वर्तमान काल विषै प्रवृत्ति-रूप समस्त शास्त्रनि मैं निष्पन्न है । बहुरि कैसा है ? **शुद्धं** कहिये पचीस मलरहित सम्यक्त्व जाकै पाइये है वा अतिचार रहित चारित्र जाके पाइए है। वा देश, जाति, कुल कर शुद्ध है । बहुरि कैसा है ? **अकलकं** कहिए विशुद्ध मन, वचन, काय संयुक्त है । बहुरि कैसा है ? **गुणरत्नभूषणोदयं** – गुणरत्नभूषण कहिए चामुण्डराय राजा, ताकै है उदय कहिये ज्ञानादिक की वृद्धि, जातै ऐसा नेमिचद्र आचार्य है । ऐसै इष्ट विशेष-रूप देवतानि कौ नमस्कार करना है लक्षण जाका, ऐसा परम मगल कौ अगीकार करि याकै अनंतर अधिकारभूत जीवप्ररूपणा के अधिकारनि कौ निर्देश करै हैं ।

गुणजीवा पज्जत्ती, पाणा सण्णा य मग्गणाओ य ।
उओवगोवि य कमसो, वीसं तु परूवणा भणिदा ।।२।।[1]

गुणजीवाः पर्याप्तयः, प्राणाः संज्ञाश्च मार्गणाश्च ।
उपयोगोऽपि च क्रमशः, विंशतिस्तु प्ररूपणा भणिताः ।।२।।

टीका – इहा चौदह गुणस्थान, अठ्याणवै जीवसमास, छह पर्याप्ति, दश प्राण, च्यारि सज्ञा, मार्गणा विषै च्यारि गतिमार्गणा, पाच इंद्रियमार्गणा, छह कायमार्गणा, पंद्रह योगमार्गणा, तीन वेदमार्गणा, च्यारि कषायमार्गणा, आठ ज्ञानमार्गणा, सात सयममार्गणा, च्यारि दर्शनमार्गणा, छह लेश्यामार्गणा, दोय भव्यमार्गणा, छह सम्यक्त्वमार्गणा, दोय सज्ञिमार्गणा, दोय आहारमार्गणा, दोय उपयोग – ऐसै ये जीव-प्ररूपणा वीस कही है ।

इहा निरुक्ति करिये है – **गुण्यते** कहिये जाणिये द्रव्य तै द्रव्यातर कौ याकरि, सो गुण कहिये । बहुरि कर्म उपाधि की अपेक्षा सहित ज्ञान-दर्शन उपयोगरूप चैतन्य प्राण करि जीवै है ते जीव, सम्यक् प्रकार आसते कहिये स्थितिरूप होइ इनि विषै

१ -षट्खडागम – धवला पुस्तक २, पृष्ठ ४१३, गाथा २२२

ते जीवसमास है । बहुरि परि कहिये समतता तै आप्ति कहिये प्राप्ति, सो पर्याप्ति है । शक्ति की निष्पन्नता का होना सो पर्याप्त जानना । बहुरि प्राणंति कहिये जीवै है जीवितव्यरूप व्यवहार कौं योग्य हो है जीव जिनिकरि, ते प्राण है । बहुरि आगम विषै प्रसिद्ध वाछा, सज्ञा, अभिलाषा ए एकार्थ है । बहुरि जिन करि वा जिन विषै जीव है, ते मृग्यते कहिये अवलोकिये ते मार्गणा है । तहा अवलोकनहारा मृगयिता तो भव्यनि विषै उत्कृष्ट, प्रधान तत्त्वार्थ श्रद्धावान जीव जानना । अवलोकने योग्य, मृग्य चोदह मार्गणानि के विशेष लिये आत्मा जानना । बहुरि अवलोकना मृग्यता का साधन कौ वा अधिकरण कौ जे प्राप्त, ते गति आदि मार्गणा है । बहुरि मार्गणा जो अवलोकन, ताका जो उपाय, सो ज्ञान-दर्शन का सामान्य भावरूप उपयोग है । ऐसै इन प्ररूपणानि का साधारण अर्थ का प्रतिपादन कह्या ।

आगै सग्रहनय की अपेक्षा करि प्ररूपणा का दोय प्रकार को मन विषै धारि गुणस्थान-मार्गणास्थानरूप दोय प्ररूपणानि के नामातर कहै है –

संखेओ ओघोत्ति य, गुणसण्णा सा च मोहजोगभवा ।
वित्थारादेसोत्ति य, मग्गणसण्णा सकम्मभवा ।।३।।

संक्षेप ओघ इति च गुणसंज्ञा, सा च मोहयोगभवा ।
विस्तार आदेश इति च, मार्गणसंज्ञा स्वकर्मभवा ।।३।।

टीका – **सक्षेप** ऐसी **ओघ** गुणस्थान की सज्ञा अनादिनिधन ऋषिप्रणीत मार्ग विषै रूढ है, प्रसिद्ध है । गुणस्थान का ही सक्षेप वा ओघ असा भी नाम है । बहुरि सो सज्ञा **'मोहयोगभवा'** कहिए दर्शन-चारित्रमोह वा मन, वचन, काय योग, तिनकरि उपजी है । इहा सज्ञा के धारक गुणस्थान कै मोह-योग तै उत्पन्नपना है । तातै तिनकी सज्ञा कै भी मोह-योग करि उपजना उपचार करि कह्या है । बहुरि सूत्र विषै चकार कह्या है, तातै सामान्य असी भी गुणस्थान की सज्ञा है, असा जानना ।

बहुरि तैसे ही **विस्तार, आदेश** असी मार्गणास्थान की सज्ञा है । मार्गणा का विस्तार, आदेश असा नाम है । सो यहु सज्ञा अपना-अपना मार्गणा का नाम की प्रतीति के व्यवहार कौ कारण जो कर्म, ताके उदय तै हो है । इहा भी पूर्ववत् सज्ञा के कर्म तै उपजने का उपचार जानना । निश्चय करि सज्ञा तौ शब्दजनित ही है ।

बहुरि चकार तै विशेष ऐसी भी मार्गणास्थान की सज्ञा गाथा विषै बिना कही भी जाननी ।

आगै प्ररूपणा का दोय प्रकार पना विषै अवशेष प्ररूपणानि का अतर्भूतपना दिखावै है –

आदेसे संलीणा, जीवा पज्जत्तिपाणसण्णाओ ।
उवओगोवि य भेदे, वीसं तु परूवणा भणिदा ॥४॥

आदेशे संलीना, जीवाः पर्याप्तिप्राणसंज्ञाश्च ।
उपयोगोऽपि च भेदे, विंशतिस्तु प्ररूपणा भणिताः ॥४॥

टीका – मार्गणास्थानप्ररूपणा विषै जीवसमास, पर्याप्ति, प्राण, सज्ञा, उपयोग – ए पाच प्ररूपणा **संलीना** कहिए गर्भित है, किसी प्रकार करि तिनि मार्गणाभेदनि विषै अंतर्भूत है । तैसे होतै गुणस्थानप्ररूपणा अर मार्गणास्थानप्ररूपणा ऐसे सग्रहनय अपेक्षा करि प्ररूपणा दोय ही निरूपित हो है ।

आगै किस मार्गणा विषै कौन प्ररूपणा गर्भित है ? सो तीन गाथानि करि कहै है –

इंदियकाये लीणा, जीवा पज्जत्तिआणभासमणो ।
जोगे काओ णाणे, अक्खा गदिमग्गणे आऊ ॥५॥

इंद्रियकाययोर्लीना, जीवाः पर्याप्त्यानभाषामनांसि ।
योगे कायः ज्ञाने, अक्षीणि गतिमार्गणायामायुः ॥५॥

टीका – इद्रियमार्गणा विषै, बहुरि कायमार्गणा विषै जीवसमास अर पर्याप्ति अर सासोश्वास, भाषा, मनबल प्राण ए अतर्भूत है । कैसे है ? सो कहै है – जीवसमास अर पर्याप्ति इनिकै इद्रिय अर कायसहित तादात्म्यकरि कीया हूवा एकत्व सभवै है । जीवसमास अर पर्याप्ति ए इद्रिय-कायरूप ही है । बहुरि सामान्य-विशेष करि कीया हूवा एकत्व सभवै है । जीवसमास, पर्याप्ति अर इद्रिय, काय विषै कही सामान्य का ग्रहण है, कही विशेष का ग्रहण है । बहुरि पर्याप्तिनि कै धर्म-धर्मीकरि कीया हुवा एकत्व सभवै है । पर्याप्ति धर्म है, इद्रिय-काय धर्मी है । तातै जीवसमास अर पर्याप्ति

ए इंद्रिय-कायमार्गणा विषै गर्भित जानने । बहुरि उश्वास, वचनबल, मनबल, प्राणनि कै अपना कारणभूत उश्वास, भाषा, मन पर्याप्ति जहा-जहा अतर्भूत भया, तिसविषै अतर्भूतपना न्याय ही है । तातै एऊ तहा ही इंद्रिय-कायमार्गणा विषै गर्भित भए । बहुरि योग-मार्गणा विषै कायबल प्राण गर्भित है, जातै जीव के प्रदेशनि का चचल होनै रूप लक्षण धरै काययोगरूप जो कार्य, तीहिविषै तिस काय का बलरूप, लक्षण धरै कायबल प्राणस्वरूप जो कारण, ताकै अपने स्वरूप का सामान्य-विशेष करि कीया एकत्व-विशेष का सद्भाव है, तातै कार्य-कारण करि कीया एकत्व हो है । बहुरि ज्ञानमार्गणा विषै इंद्रिय-प्राण गर्भित है, जातै इंद्रियरूप मति-श्रुतावरण के क्षयोपशम तै प्रकट जे लब्धिरूप इंद्रिय, तिनकै ज्ञान सहित तादात्म्य करि कीया एकत्व का सद्भाव है । बहुरि गतिमार्गणा विषै आयु प्राण गर्भित है । जातै गति और आयु के परस्पर अजहद्वृत्ति है । गति आयु विना नाही, आयु गति बिना नाही, सो इस लक्षण करि एकत्व सभवै है ।

मायालोहे रदिपुव्वाहारं, कोहमाणगह्मि भयं ।
वेदे मेहुणसण्णा, लोहह्मि परिग्गहे सण्णा ॥६॥

मायालोभयोः रतिपूर्वकमाहारं, क्रोधमानकयोर्भयं ।
वेदे मैथुनसंज्ञा, लोभे परिग्रहे संज्ञा ॥६॥

टीका – माया कषाय अर लोभ कषाय विषै आहार सज्ञा गर्भित है, जातै आहार की वाछा रतिनामकर्म के उदय कौं पहिले भए हो है । बहुरि रतिकर्म है, सो माया-लोभ कषाय राग कौ कारण है, तहा अतर्भूत है । बहुरि क्रोध कषाय अर मान कषाय विषै भयसज्ञा गर्भित है । जातै भय के कारणनि विषै द्वेष का कारणपना है, तातै द्वेषरूप जे क्रोध-मान कषाय, तिनकै कार्य-कारण अपेक्षा एकत्व सभवै है । बहुरि वेदमार्गणा विषै मैथुन सज्ञा अतर्भूत है, जातै काम का तीव्रपना का वशीभूत-पना करि कीया स्त्री-पुरुष युगलरूप जो मिथुन का कार्य अभिलाषसहित सभोगरूप, सो वेद का उदय करि निपज्या पुरुषादिक का अभिलाषरूप कार्य है । ऐसै कार्य-कारणभाव करि एकत्व का सद्भाव है । बहुरि लोभ कषाय विषै परिग्रह सज्ञा अतर्भूत है, जातै लोभ कषाय होतै ही ममत्वभावरूप जो परिग्रह का अभिलाष, ताका सभव है, तातै यहा कार्य-कारण अपेक्षा एकत्व है । ऐसा हे भव्य ! तू जाणि ।

सागारो उवजोगो, णाणे मग्गह्मि दंसणे मग्गे ।
अणगारो उवजोगो, लीणोत्ति जिणेहिं णिद्दिट्ठं ।।७।।

साकारो उपयोगो ज्ञानमार्गणायां दर्शनमार्गणायाम् ।
अनाकारो उपयोगो लीन इति जिनैर्निर्दिष्टम् ।।७।।

टीका – ज्ञानमार्गणा विषै साकार उपयोग गर्भित है । जातै ज्ञानावरण, वीर्यान्तराय के क्षयोपशम तै उत्पन्न ज्ञाता का परिणमन का निकटपना होतै ही विशेष ग्रहण रूप लक्षण धरै जो ज्ञान, ताकी उत्पत्ति है, तातै कार्य-कारण करि कीया एकत्व सभवै है । बहुरि दर्शनमार्गणा विषै अनाकार उपयोग गर्भित है । जातै दर्शनावरण, वीर्यान्तराय के क्षयोपशम करि प्रकट भया पदार्थ का सामान्य ग्रहणरूप व्यापार होते ही पदार्थ का सामान्य ग्रहणरूप लक्षण धरै जो दर्शन, ताकी उत्पत्ति है, तातै कार्य-कारण भाव बनै है । अैसै यहु गर्भितभाव पूर्वोक्त रीति करि जिन जे अर्हन्तादिक, तिनिकरि निर्दिष्ट कहिए कह्या है । बहुरि अपनी रुचि करि रच्या हूवा नाही है । अैसै जीवसमासादिकनि कै मार्गणास्थान विषै गर्भित भाव का समर्थन करि गुणस्थान अर मार्गणास्थान ए प्ररूपणा दोय प्रतिपादन करि । बहुरि भेदविवक्षा करि वीस प्ररूपणा पूर्वै कही, तेई कहिए है । पूर्वै गाथा विषै **'भणिताः'** अैसा पद कह्या, ताकरि वीस प्ररूपणा परमागम विषै प्रसिद्ध हैं, तिनका प्रकाशन करि तिनका विशेष कथन विषै स्वाधीनपना अपनी इच्छा के अनुसारि कहना, सो छोड्या है । अैसै यह न्याय तैसै ही जोडिए है ।

आगै तिनि वीस प्ररूपणानि विषै पहलै कही जो गुणस्थानप्ररूपणा, ताका प्रतिपादनि के अर्थि प्रथम गुणस्थान शब्द की निरुक्तिपूर्वक अर्थ कहै हैं –

जेहिं दु लक्खिज्जंते, उदयादिसु संभवेहिं भावेहिं ।
जीवा ते गुणसण्णा, णिद्दिट्ठा सव्वदरसीहिं ।।८।।[1]

यैस्तु लक्ष्यंते, उदयादिषु संभवैर्भावै ।
जीवास्ते गुणसंज्ञा, निर्दिष्टाः सर्वदर्शिभिः ।।८।।

टीका – मोहनीय आदि कर्मनि का उदय, उपशम, क्षय, क्षयोपशम परिणामरूप जे अवस्था विशेष, तिनकौ होते सतै उत्पन्न भए जे भाव कहिए जीव के

१–षट्खडागम – धवला पुस्तक १, गाथा १०४, पृष्ठ १६२

मिथ्यात्वादिक परिणाम, तिनकरि **गुण्यंते** कहिए लखिए वा देखिए वा लाछित करिए जीव, ते जीव के परिणाम गुणस्थान सज्ञा के धारक है, असा सर्वदर्शी जे सर्वज्ञदेव, तिनकरि **निर्दिष्टाः** कहिए कहे है। इस गुण शब्द की निरुक्ति की प्रधानता लीए सूत्र करि मिथ्यात्वादिक अयोगकेवलीपना पर्यन्त ये जीव के परिणाम विशेष, तेई गुणस्थान हैं, असा प्रतिपादन कीया है।

तहा अपनी स्थिति के नाश के वश तै उदयरूप निषेक विषै गले जे कार्माण स्कंध, तिनका फल देनेरूप जो परिणमन, सो उदय है। ताकौ होते जो भाव होइ, सो औदयिक भाव है।

बहुरि गुण का प्रतिपक्षी जे कर्म, तिनका उदय का अभाव, सो उपशम है। ताकौं होते सतै जो होय, सो औपशमिक भाव है।

बहुरि प्रतिपक्षी कर्मनि का बहुरि न उपजै असा नाश होना, सो क्षय, ताकौ होतै जो होइ, सो क्षायिक भाव है।

बहुरि प्रतिपक्षी कर्मनि का उदय विद्यमान होतै भी जो जीव के गुण का अश देखिए, सो क्षयोपशम, ताकौ होतै जो होइ, सो क्षायोपशमिक भाव है।

बहुरि उदयादिक अपेक्षा तै रहित, सो परिणाम है, ताकौं होतै जो होइ, सो पारिणामिक भाव है। असै औदयिक आदि पचभावनि का सामान्य अर्थ प्रतिपादन करि विस्तार तै आगै तिनि भावनि का महा अधिकार विषै प्रतिपादन करिसी।

आगै ते गुणस्थान गाथा दोय करि नाममात्र कहै है–

मिच्छो सासण मिस्सो, अविरदसम्मो य देसविरदो य।
विरदा पमत्त इदरो, अपुव्व अणियट्टि सुहमो य ॥९॥

उवसंत खीणमोहो, सजोगकेवलिजिणो अजोगी य।
चउदस जीवसमासा, कमेण सिद्धा य णादव्वा ॥१०॥[१]

मिथ्यात्वं सासनः मिश्रः, अविरतसम्यक्त्वं च देशविरतश्च।
विरता. प्रमत्तः इतर, अपूर्वः अनिवृत्तिः सूक्ष्मश्च ॥९॥
उपशांतः क्षीणमोहः, सयोगकेवलिजिनः अयोगी च।
चतुर्दश जीवसमासा., क्रमेण सिद्धाश्च ज्ञातव्या ॥१०॥

१, षट्खडागम धवला पुस्तक १, पृष्ठ १९२ से २०१ तक, सूत्र ९ से २३ तक।

टीका – मिथ्या कहिए अतत्त्वगोचर है दृष्टि कहिए श्रद्धा जाकी, सो मिथ्यादृष्टि है । '**नाम्न्युत्तरपदश्च**' असा व्याकरण सूत्र करि दृष्टिपद का लोप करतें 'मिच्छो' असा कह्या है । यहु भेद आगै भी जानना ।

बहुरि आसादन जो विराधना, तिहि सहित वर्तै सो सासादना, सासादना है सम्यग्दृष्टि जाकै, सो सासादन सम्यग्दृष्टि है । अथवा आसादन कहिए सम्यक्त्व का विराधन, तीहि सहित जो वर्तमान, सो सासादन । बहुरि सासादन अर सो सम्यग्दृष्टि सो सासादन सम्यग्दृष्टि है । यहु पूर्वै भया था सम्यक्त्व, तिस न्याय करि इहां सम्यग्दृष्टिपना जानना ।

बहुरि सम्यक्त्व अर मिथ्यात्व का जो मिश्रभाव, सो मिश्र है ।

बहुरि सम्यक् कहिए समीचीन है दृष्टि कहिए तत्त्वार्थश्रद्धान जाकै, सो सम्यग्दृष्टि अर सोई अविरत कहिए असयमी, सो अविरतसम्यग्दृष्टि है ।

बहुरि देशत कहिए एकदेश तै विरत कहिए सयमी, सो देशविरत है, सयता-सयत है, असा अर्थ जानना ।

इहां जो विरत पद है, सो ऊपरि के सर्व गुणस्थानवर्तीनि कै सयमीपना कौ जनावै है । बहुरि **प्रमाद्यति** कहिये प्रमाद करै, सो प्रमत्त है । बहुरि इतर कहिए प्रमाद न करै, सो अप्रमत्त है ।

बहुरि अपूर्व है करण कहिए परिणाम जाकै, सो अपूर्वकरण है ।

बहुरि निवृत्ति कहिए परिणामनि विषै विशेष न पाइए है निवृत्तिरूप करण कहिए परिणाम जाकै, सो अनिवृत्तिकरण है ।

बहुरि सूक्ष्म है सापराय कहिये कषाय जाकै, सो सूक्ष्मसापराय है ।

बहुरि उपशात भया है मोह जाका, सो उपशातमोह है ।

बहुरि क्षीण भया है मोह जाका, सो क्षीणमोह है ।

बहुरि घातिकर्मनि कौ जीतता भया, सो जिन, बहुरि केवलज्ञान याकै हैं यातै केवली, केवली सोई जिन, सो केवलिजिन, बहुरि योग करि सहित सो सयोग, सोई केवलिजिन, ऐसे सयोगकेवलीजिन है ।

बहुरि योग याकै है सो योगी, योगी नाही सो अयोगी, केवलिजिन ऐसी अनुवृत्ति तै अयोगी, सोई केवलिजिन असै अयोगकेवलिजिन है ।

असै ए मिथ्यादृष्टि आदि अयोगिकेवलिजिन पर्यन्त चौदह जीवसमास कहिए गुणस्थान ते जानने ।

कैसे यहु जीवसमास ऐसी सज्ञा गुणस्थान की भई ?

तहा कहिए है – जीव है, ते **समस्यते** कहिए सक्षेपरूप करिए इनिविषै, ते जीवसमास अथवा जीव है । ते **सम्यक् आसते एषु** कहिए भले प्रकार तिष्ठै हैं, इनिविषै, ते जीवसमास, असै इहा प्रकरण जो प्रस्ताव, ताकी सामर्थ्य करि गुणस्थान ही जीवसमास शब्द करि कहिए है । जातै ऐसा वचन है – **'यादृशं प्रकरणं तादृशोर्थः'** जैसा प्रकरण तैसा अर्थ, सो इहा गुणस्थान का प्रकरण है, तातै गुणस्थान अर्थ का ग्रहण किया है ।

बहुरि ये कर्म सहित जीव जैसे लोक विषै है, तैसे नष्ट भए सर्वकर्म जिनके, ऐसे सिद्ध परमेष्ठी भी है, ऐसा जानना । क्रमेण कहिए क्रम करि सिद्ध है, सो यहा क्रम शब्द करि पहिलै घातिकर्मनि कौ क्षपाइ सयोगकेवली, अयोगकेवली गुणस्थाननि विषै यथायोग्य काल तिष्ठि, अयोगकेवली का अंत समय विषै अवशेष अघातिकर्म समस्त खिपाइ सिद्ध हो है – ऐसा अनुक्रम जनाइए है । सो इस अनुक्रम कौ जनावनहारा क्रम शब्द करि युगपत् सर्वकर्म का नाशपना, बहुरि सर्वदा कर्म के अभाव तै सदा ही मुक्तपना परमात्मा के निराकरण कीया है ।

आगै गुणस्थाननि विषै औदयिक आदि भावनि का सभव दिखावै है –

मिच्छे खलु ओदइओ, बिदिये पुण पारणामिओ भावो ।
मिस्से खओवसमिओ, अविरदसम्मह्मि तिण्णेव ॥११॥[1]

मिथ्यात्वे खलु औदयिको द्वितीये पुनः पारिणामिको भावः ।
मिश्रे क्षायोपशमिकः अविरतसम्यक्त्वे त्रय एव ॥११॥

टीका – मिथ्यादृष्टि गुणस्थान विषै दर्शनमोह का उदय करि निपज्या ऐसा औदयिक भाव, अतत्त्वश्रद्धान है लक्षण जाका, सो पाइए है । खलु कहिए

1 षट्खण्डागम – धवला पुस्तक–५ पृष्ठ १७४ १७७ भावानुगम सूत्र २, से ५

प्रकटपनै। बहुरि दूसरा सासादनगुणस्थान विषै पारिणामिक भाव है। जातै इहां दर्शनमोह का उदय आदि की अपेक्षा का जु अभाव, ताका सद्भाव है।

बहुरि मिश्रगुणस्थान विषै क्षायोपशमिक भाव है। काहै तै ?

मिथ्यात्वप्रकृति का सर्वघातिया स्पर्धकनि का उदय का अभाव, सोई है लक्षण जाका, ऐसा तो क्षय होते सते, बहुरि सम्यग्मिथ्यात्व नाम प्रकृति का उदय विद्यमान होते सते, बहुरि उदय कौ न प्राप्त भए ऐसे निषेकनि का उपशम होते संते, मिश्रगुणस्थान हो है। तातै ऐसा कारण तै मिश्र विषै क्षायोपशमिकभाव है।

बहुरि अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान विषै औपशमिक सम्यक्त्व, बहुरि क्षायोपशमिकरूप वेदकसम्यक्त्व, बहुरि क्षायिक सम्यक्त्व ऐसे नाम धारक तीन भाव हैं, जातै इहा दर्शनमोह का उपशम वा क्षयोपशम वा क्षय सभवै है।

आगै कहे है जु ए भाव, तिनके सभवने के नियम का कारण कहै है –

एदे भावा णियमा, दंसणमोहं पडुच्च भणिदा हु।
चारित्तं णत्थि जदो, अविरदअंतेसु ठाणेसु ॥१२॥

एते भावा नियमाद्, दर्शनमोहं प्रतीत्य भाणिताः खलु।
चारित्रं नास्ति यतो, ऽविरतांतेषु स्थानेषु ॥१२॥

टीका – असै पूर्वोक्त औदयिक आदि भाव कहे, ते नियम तै दर्शनमोह कौ **प्रतीत्य** कहिए आश्रयकरि, **भणिता** कहिए कहे है प्रगटपनै, जातै अविरतपर्यंत च्यारि गुणस्थान विषै चारित्र नाही है। इस कारण तै ते भाव चारित्र मोह का आश्रय करि नाही कहे है।

तीहिं करि सासादनगुणस्थान विषै अनतानुबधी की कोई क्रोधादिक एक कषाय का उदय विद्यमान होतै भी ताकी विवक्षा न करने करि पारिणामिकभाव सिद्धात विषै प्रतिपादन कीया है, ऐसा तू जानि।

बहुरि अनंतानुबधी की किसी कषाय का उदय की विवक्षा करि औदयिक भाव भी है।

आगै देशसंयतादि गुणस्थाननि विषैं भावनि का नियम गाथा दोय करि दिखावै है –

देसविरदे पमत्ते, इदरे य खओवसमियभावो दु।
सो खलु चरित्तमोहं, पडुच्च भणियं तहा उवरिं ॥१३॥

देशविरते प्रमत्ते, इतरे च क्षायोपशमिकभावस्तु ।
स खलु चरित्रमोहं, प्रतीत्य भणितस्तथा उपरि ॥१३॥

टीका – देशविरत विषै, बहुरि प्रमत्तसयत विषै, बहुरि इतर अप्रमत्तसयत विषै क्षायोपशमिक भाव है। तहा देशसयत अपेक्षा करि प्रत्याख्यान कषायनि के उदय अवस्था कौ प्राप्त भए जे देशघाती स्पर्धकनि का अनतवा भाग मात्र, तिनका जो उदय, तीहि सहित जे उदय कौ न प्राप्त भए ही निर्जरा रूप क्षय होते जे विवक्षित उदयरूप निषेक, तिनि स्वरूप जे सर्वघातिया स्पर्धक अनत भागनि विषै एक भागविना बहुभाग, प्रमाण मात्र लीए तिनका उदय का अभाव, सो ही है लक्षण जाका असा क्षय होते सते, बहुरि वर्तमान समय सवधी निषेक तै ऊपरि के निषेक जे उदय अवस्थाकौ न प्राप्त भए, तिनकी सत्तारूप जो अवस्था, सोई है लक्षण जाका, असा उपशम होते सते देशसयम प्रकटै है। तातै चारित्र मोह कौ आश्रय करि देशसयम क्षायोपशमिक भाव है, असा कह्या है।

बहुरि तैसै ही प्रमत्त-अप्रमत्त विषै भी सज्वलन कषायनि का उदय आए जे देशघातिया स्पर्धक अनतवा भागरूप, तिनिका उदय करि सहित उदय कौ न प्राप्त होतै ही क्षयरूप होते जे विवक्षित उदय निषेक, तिनिरूप सर्वघातिया स्पर्धक अनत भागनि विषै एक भागविना बहुभागरूप, तिनिका उदय का अभाव, सो ही है लक्षण जाका असा क्षय होते, बहुरि ऊपरि के निषेक जे उदय कौ प्राप्त न भए, तिनिका सत्ता अवस्थारूप है लक्षण जाका, असा उपशम, ताकौ होते सतै प्रमत्त-अप्रमत्त हो है। तातै चारित्र मोह अपेक्षा इहा सकलसयम है। तथापि क्षायोपशमिक भाव है ऐसा कह्या है, असा श्रीमान् अभयचद्रनामा आचार्य सिद्धातचक्रवर्ती, ताका अभिप्राय है।

भावार्थ – सर्वत्र क्षयोपशम का स्वरूप असा ही जानना। जहा प्रतिपक्षी कर्म के देशघातिया स्पर्धकनि का उदय पाइए, तीह सहित सर्वघातिया स्पर्धक उदय-निषेक संबधी, तिनका उदय न पाइए (बिना ही उदय दीए) निर्जरै, सोई क्षय, अर जे उदय न प्राप्त भए आगामी निषेक, तिनका सत्तास्वरूप उपशम, तिनि दोऊनि कौ होतै

क्षयोपशम हो है । सो स्पर्धकनि का वा निषेकनि का वा सर्वघाति-देशघातिस्पर्धकनि के विभाग का आगै वर्णन होगा, तातै इहा विशेष नाही लिख्या है । सो इहा भी पूर्वोक्तप्रकार चारित्रमोह को क्षयोपशम ही है । तातै क्षायोपशमिक भाव देशसयत, प्रमत्त, अप्रमत्त विषै जानना । तैसै ही ऊपरि भी अपूर्वकरणादि गुणस्थाननि विषै चारित्रमोह कौ आश्रय करि भाव जानने ।

तत्तो उवरिं उवसमभावो उवसामगेसु खवगेसु ।
खइओ भावो णियमा, अजोगिचरिमोत्ति सिद्धे य ॥१४॥

तत उपरि उपशमभावः उपशामकेषु क्षपकेषु ।
क्षायिको भावो नियमात् अयोगिचरम इति सिद्धे च ॥१४॥

टीका – तातै ऊपरि अपूर्वकरणादि च्यारि गुणस्थान उपशम श्रेणी सबधी, तिनिविषै औपशमिक भाव है । जातै तिस सयम का चारित्रमोह के उपशम ही तै सभव है । बहुरि तैसै ही अपूर्वकरणादि च्यारि गुणस्थान क्षपक श्रेणी सबधी अर सयोग-अयोगीकेवली, तिनिविषै क्षायिक भाव है नियमकरि, जातै तिस चारित्र का चारित्र-मोह के क्षय ही तै उपजना है ।

बहुरि तैसै ही सिद्ध परमेष्ठीनि विषै भी क्षायिक भाव हो है, जातै तिस सिद्धपद का सकलकर्म के क्षय ही तै प्रकटपना हो है ।

आगै पूर्वै नाममात्र कहे जे चौदह गुणस्थान, तिनिविषै पहिले कह्या जो मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, ताका स्वरूप कौ प्ररूपै हैं –

मिच्छोदयेण मिच्छत्तमसद्दहणं तु तच्चअत्थाणं ।
एयंतं विवरीयं, विणयं संसयिदमण्णाणं ॥१५॥

मिथ्यात्वोदयेन मिथ्यात्वमश्रद्धानं तु तत्त्वार्थानाम् ।
एकांतं विपरीतं, विनयं संशयितमज्ञानम् ॥१५॥

टीका – दर्शनमोहनी का भेदरूप मिथ्यात्व प्रकृति का उदय करि जीव कै अतत्त्व श्रद्धान है लक्षण जाका असा मिथ्यात्व हो है । बहुरि सो मिथ्यात्व १. एकात २. विपरीत ३ विनय ४. संशयित ५. अज्ञान – असै पांच प्रकार है ।

तहा जीवादि वस्तु सर्वथा सत्वरूप ही है, मर्वथा असत्त्वरूप ही है, सर्वथा एक ही है, सर्वथा अनेक ही है – इत्यादि प्रतिपक्षी दूसरा भाव की अपेक्षारहित एकातरूप अभिप्राय, सो एकात मिथ्यात्व है ।

बहुरि अहिंसादिक समीचीन धर्म का फल जो स्वर्गादिक सुख, ताकौ हिंसादिरूप यज्ञादिक का फल कलपना करि मानै, वा जीव कै प्रमाण करि सिद्ध है जो मोक्ष, ताका निराकरण करि मोक्ष का अभाव मानै, वा प्रमाण करि खडित जो स्त्री कै मोक्षप्राप्ति, ताका अस्तित्व वचन करि स्त्री कौ मोक्ष है अैसा मानै इत्यादि एकात अवलंबन करि विपरीतरूप जो अभिनिवेश – अभिप्राय, सो विपरीत मिथ्यात्व है ।

बहुरि सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र की सापेक्षा रहितपनै करि गुरुचरणपूजनादिरूप विनय ही करि मुक्ति है – यहु श्रद्धान वैनयिक मिथ्यात्व है ।

बहुरि प्रत्यक्षादि प्रमाण करि ग्रह्या जो अर्थ, ताका देशातर विषै अर कालातर विषै व्यभिचार जो अन्यथाभाव, सो सभवै है । तातै अनेक मत अपेक्षा परस्पर विरोधी जो आप्तवचन, ताका भी प्रमाणता की प्राप्ति नाही । तातै अैसे ही तत्त्व है, अैसा निर्णय करने की शक्ति के अभाव तै सर्वत्र सशय ही है, अैसा जो अभिप्राय, सो सशय मिथ्यात्व है ।

बहुरि ज्ञानावरण दर्शनावरण का तीव्र उदय करि सयुक्त जे एकेंद्रियादिक जीव, तिनके अनेकात स्वरूप वस्तु है, अैसा वस्तु का सामान्य भाव विषै अर उपयोग लक्षण जीव है अैसा वस्तु का विशेष भाव विषै जो अज्ञान, ताकरि निपज्या जो श्रद्धान, सो अज्ञान मिथ्यात्व है ।

अैसे स्थूल भेदनि का आश्रय करि मिथ्यात्व का पचप्रकारपना कह्या, जातै सूक्ष्म भेदनि का आश्रय करि असख्यात लोकमात्र भेद सभवै हैं । तातै तहा व्याख्यानादिक व्यवहार की अप्राप्ति है ।

आगै इन पचनि का उदाहरण कौ कहै है –

एयंत बुद्धदरसी, विवरीओ बह्म तावसो विणओ ।
इंदो विय संसइयो, मक्कडिओ चेव अण्णाणी ॥१६॥

एकांतो बुद्धदर्शी, विपरीतो ब्रह्म तापसो विनयः ।
इंद्रोऽपि च संशयितो, मस्करी चैवाज्ञानी ॥१६॥

टीका – ए उपलक्षणपना करि कहे है। एक का नाम लेनै तै अन्य भी ग्रहण करने, तातै ऐसै कहने – बुद्धदर्शी जो बौद्धमती, ताकौ आदि देकरि एकांत मिथ्यादृष्टि हैं। बहुरि यज्ञकर्ता ब्राह्मण आदि विपरीत मिथ्यादृष्टि है । बहुरि तापसी आदि विनय मिथ्यादृष्टि है। बहुरि इन्द्रनामा जो श्वेतांबरनि का गुरु, ताकौ आदि देकरि संशय मिथ्यादृष्टि है। बहुरि मस्करी (मुसलमान) संन्यासी कौ आदि देकरि अज्ञान मिथ्यादृष्टि है। वर्तमान काल अपेक्षा करि ए भरतक्षेत्र विषै संभवते बौद्धमती आदि उदाहरण कहे है ।

आगै अतत्त्वश्रद्धान है लक्षण जाका, अैसे मिथ्यात्व कौ प्ररूपै है –

मिच्छंतं वेदंतो, जीवो विवरीयदंसणो होदि ।
ण य धम्मं रोचेदि हु, महुरं खु रसं जहा जरिदो ।।१७।।[१]

मिथ्यात्वं विदन् जीवो, विपरीतदर्शनो भवति ।
न च धर्मं रोचते हि, मधुरं खलु रसं यथा ज्वरितः ।।१७।।

टीका – उदय आया मिथ्यात्व कौ **वेदयन्** कहिए अनुभवता जो जीव, सो विपरीतदर्शन कहिए अतत्त्वश्रद्धानसयुक्त है, अयथार्थ प्रतीत करै है। बहुरि केवल अतत्त्व ही कौ नाही श्रद्धै है, अनेकातस्वरूप जो धर्म कहिए वस्तु का स्वभाव अथवा रत्नत्रयस्वरूप मोक्ष का कारणभूत धर्म, ताहि न रोचते कहिए नाही रूचिरूप प्राप्त हो है।

इहा दृष्टांत कहै है – जैसै ज्वरित कहिए पित्तज्वर सहित पुरुष, सो मधुर – मीठा दुग्धादिक रस, ताहि न रोचै है; तैसै मिथ्यादृष्टि धर्म कौ न रोचै है, ऐसा अर्थ जानना ।

इस ही वस्तु स्वभाव के श्रद्धान कौ स्पष्ट करै है –

मिच्छाइट्ठी जीवो, उवइट्ठं पवयणं ण सद्दहदि ।
सद्दहदि असब्भावं, उवइट्ठं वा अणुवइट्ठं ।।१८।।

मिथ्यादृष्टिर्जीवः उपदिष्टं प्रवचनं न श्रद्दधाति ।
श्रद्दधाति असद्भावं, उपदिष्टं वा अनुपदिष्टम् ।।१८।।

---

१. षटखण्डागम – धवला पुस्तक –१, पृष्ठ १६३, गाथा १०६.

टीका – मिथ्यादृष्टि जीव है, सो उपदिष्ट कहिए अर्हन्त आदिकनि करि उपदेस्या हूआ प्रवचन कहिए आप्त, आगम, पदार्थ इनि तीनो कौं नाहीं श्रद्धै है, जातै प्र कहिए उत्कृष्ट है वचन जाका, अैसा प्रवचन कहिए आप्त । बहुरि प्रकृष्ट जो परमात्मा, ताका वचन सो प्रवचन कहिए परमागम । बहुरि प्रकृष्ट उच्यते कहिए प्रमाण करि निरूपिए अैसा प्रवचन कहिए पदार्थ, या प्रकार निरुक्ति करि प्रवचन शब्द करि आप्त, आगम, पदार्थ तीनो का अर्थ हो है । बहुरि सो मिथ्यादृष्टि असद्भाव कहिए मिथ्यारूप, प्रवचन कहिए आप्त आगम, पदार्थ, उपदिष्टं कहिए आप्त कीसी आभासा लिए कुदेव जे है, तिनकरि उपदेस्या हूआ अथवा अनुपदिष्ट कहिए विना उपदेस्या हूआ, ताकौं श्रद्धान करै है । बहुरि वादी का अभिप्राय लेइ उक्त च गाथा कहै हैं –

"घडपडथंभादिपयत्थेसु मिच्छाइट्ठी जहावगम ।
सद्दहतो वि अण्णाणी उच्चदे जिणवयणे सद्दहणाभावादो ।।"

याका अर्थ – घट, पट, स्तंभ आदि पदार्थनि विषै मिथ्यादृष्टि जीव यथार्थ ज्ञान लीए श्रद्धान करता भी अज्ञानी कहिए, जातै जिनवचन विषै श्रद्धान का अभाव है । अैसा सिद्धात का वाक्य करि कह्या मिथ्यादृष्टि का लक्षण जानि सो मिथ्यात्व भाव त्यजना योग्य है । ताका भेद भी इस ही वाक्य करि जानना । सो कहिए हैं – कोऊ मिथ्यादर्शनरूप परिणाम आत्मा विषै प्रकट हूआ थका वर्ण-रसादि की उपलब्धि जो ज्ञान करि जानने की प्राप्ति, ताहि होते सतै कारणविपर्यास, बहुरि भेदाभेदविपर्यास, बहुरि स्वरूपविपर्यास कौं उपजावै है ।

तहा कारणविपर्यास प्रथम कहिए है । रूप-रसादिकनि का एक कारण है, सो अमूर्तीक है, नित्य है अैसैं कल्पना करै है । अन्य कोई पृथ्वी आदि जातिभेद लीए भिन्न-भिन्न परमाणु है, ते पृथ्वी के च्यारि गुणयुक्त, अपके गध विना तीन गुणयुक्त, अग्नि के रस विना दोय गुणयुक्त, पवन के एक स्पर्श गुणयुक्त परमाणु हैं, ते अपनी समान जाति के कार्यनि कौ निपजावनहारे है, अैसा वर्णन करैं है । या प्रकार कारण विषै विपरीतभाव जानना ।

बहुरि भेदाभेदविपर्यास कहै हैं – कार्य तै कारण भिन्न ही है अथवा अभिन्न ही है, अैसी कल्पना भेदाभेद विषै अन्यथापना जानना ।

बहुरि स्वरूपविपर्यास कहै है – रूपादिक गुण निर्विकल्प है, कोऊ कहै – है ही नाही । कोऊ कहै – रूपादिकनि के जानने करि तिनके आकार परिणया ज्ञान ही है नाही, तिनका अवलंबन बाह्य वस्तुरूप है । अैसा विचार स्वरूप विषै मिथ्यारूप जानना । या प्रकार कुमतिज्ञान का बल का आधार करि कुश्रुतज्ञान के विकल्प हो है । इनका सर्व मूल कारण मिथ्यात्व कर्म का उदय ही है, अैसा निश्चय करना ।

आगै सासादनगुणस्थान का स्वरूप दोय सूत्रनि करि कहै है –

आदिमसम्मत्तद्धा, समयादो छावलित्ति वा सेसे ।
अणअण्णदरुदयादो, णासियसम्मोत्ति सासणक्खो सो ।।१९।।

आदिमसम्यक्त्वाद्धा, आसमयतः षडावलिरिति वा शेषे ।
अनान्यतरोदयात् नाशितसम्यक्त्व इति सासानाख्यः सः ।।१९।।

टीका – प्रथमोपशम सम्यक्त्व का काल विषै जघन्य एकसमय, उत्कृष्ट छह आवली अवशेष रहैं, अनंतानुबंधी च्यारि कषायनि विषै अन्यतम कोई एक का उदय होते सतै, नष्ट कीया है सम्यक्त्व जानै अैसा होई, सो सासादन अैसा कहिए । बहुरि वा शब्दकरि द्वितीयोपशम सम्यक्त्व का काल विषै भी सासादन गुणस्थान की प्राप्ति हो है । अैसा (गुणधराचार्यकृत) कषायप्राभृतनामा यतिवृषभाचार्यकृत (चूर्णिसूत्र) जयधवल ग्रन्थ का अभिप्राय है ।

जो मिथ्यात्व तै चतुर्थादि गुणस्थाननि विषै उपशम सम्यक्त्व होइ, सो प्रथमोपशम सम्यक्त्व है ।

बहुरि उपशमश्रेणी चढते क्षायोपशमिक सम्यक्त्व तै जो उपशम सम्यक्त्व होय, सो द्वितीयोपशम सम्यक्त्व जानना ।

सम्मत्तरयणपव्वयसिहरादो मिच्छभूमिसमभिमुहो ।
णासियसम्मत्तो सो, सासणणामो मुणेयव्वो ।।२०।।[1]

सम्यक्त्वरत्नपर्वतशिखरात् मिथ्यात्वभूमिसमभिमुखः ।
नाशितसम्यक्त्वः सः, सासननामा मंतव्य ।।२०।।

---

१ पट्खण्डागम – धवला पुस्तक – १, पृष्ठ १६७, गाथा १०८.

टीका – जो जीव सम्यक्त्वपरिणामरूपी रत्नमय पर्वत के शिखर तै मिथ्यात्व-परिणामरूपी भूमिका के सन्मुख होता सता, पडि करि जितना अंतराल का काल एक समय आदि छह आवली पर्यन्त है, तिहि विषै वर्तै, सो जीव नष्ट कीया है सम्यक्त्व जानै, असा सासादन नाम धारक जानना ।

आगै सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थान का स्वरूप गाथा च्यारि करि कहै है -

सम्मामिच्छुदयेण य, जत्तंतरसव्वघादिकज्जेण ।
ण य सम्मं मिच्छं पि य, सम्मिस्सो होदि परिणामो ।।२१।।[1]

सम्यग्मिथ्यात्वोदयेन च, जात्यंतरसर्वघातिकार्येण ।
न च सम्यक्त्वं मिथ्यात्वमपि च, सम्मिश्रो भवति परिणामः ।।२१।।

टीका – जात्यतर कहिए जुदी ही एक जाति भेद लीए जो सर्वघातिया कार्यरूप सम्यग्मिथ्यात्व नामा दर्शनमोह की प्रकृति, ताका उदय करि मिथ्यात्व प्रकृति का उदयवत् केवल मिथ्यात्व परिणाम भी न होइ है । अर सम्यक्त्व प्रकृति का उदयवत् केवल सम्यक्त्व परिणाम भी न होइ है । तिहि कारण तै तिस सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृति का कार्यभूत जुदी ही जातिरूप सम्यग्मिथ्यात्वपरिणाम मिलाया हूआ मिश्रभाव हो है, असा जानना ।

दहिगुडमिव वामिस्सं, पुहभावं णेव कारिदुं सक्कं ।
एवं मिस्सयभावो, सम्मामिच्छोत्ति णादव्वो ।।२२।।[1]

दधिगुडमिव व्यामिश्रं, पृथग्भावं नैव कर्तुं शक्यम् ।
एवं मिश्रकभावः, सम्यग्मिथ्यात्वमिति ज्ञातव्यम् ।।२२।।

टीका – इव कहिए जैसे, **व्यामिश्रं** कहिए मिल्या हूआ, दही अर गुड सो **पृथग्भाव कर्तुं** कहिए जुदा-जुदा भाव करने कौ, **नैव शक्य** कहिए नाही समर्थपना है, **एवं** कहिए तैसे, सम्यग्मिथ्यात्वरूप मिल्या हूआ परिणाम, सो केवल सम्यक्त्वभाव करि अथवा केवल मिथ्यात्वभाव करि जुदा-जुदा भाव करि स्थापने कौ नाही समर्थपना है । इस कारण तै सम्यग्मिथ्यादृष्टि असा जानना योग्य है । समीचीन अर सोई मिथ्या, सो सम्यग्मिथ्या असा है दृष्टि कहिए श्रद्धान जाकै, सो सम्यग्मिथ्या-

---

१–षट्खडागम–धवला पुस्तक १, पृ १७१–गा १०९

मिथ्यादृष्टि है। इस निरुक्ति तैं भी पूर्वै ग्रह्या जो अतत्त्वश्रद्धान, ताका सर्वथा त्याग बिना, तीहि सहित ही तत्त्व श्रद्धान हो है। जातै तैसै ही सभवता प्रकृति का उदयरूप कारण का सद्भाव है।

सो संजमं ण गिण्हदि, देसजमं वा ण बंधदे आउं।
सम्मं वा मिच्छं वा, पडिवज्जिय मरदि णियमेण ॥२३॥[1]

स संयम न गृह्णाति, देशयमं वा न बध्नाति आयुः।
सम्यक्त्वं वा मिथ्यात्वं, वा प्रतिपद्य म्रियते नियमेन ॥२३॥

टीका – सो सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीव है, सो सकलसयम वा देशसयम कौ ग्रहण करै नाही, जातै तिनके ग्रहण योग्य जे करणरूप परिणाम, तिनिका तहा मिश्र-गुणस्थान विषै असभव है। बहुरि तैसै ही सो सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीव च्यारि गति संबधी आयु कौ नाही बाधै है। बहुरि मरणकाल विषै नियमकरि सम्यग्मिथ्यात्वरूप परिणाम कौ छोडि, असयत सम्यग्दृष्टीपना कौ वा मिथ्यादृष्टीपना कौ नियमकरि प्राप्त होइ, पीछै मरै है।

भावार्थ – मिश्रगुणस्थान तै पचमादि गुणस्थान विषै चढना नाही है। बहुरि तहा आयुबध वा मरण नाही है।

सम्मत्तमिच्छपरिणामेसु जहिं आउगं पुरा बद्धं।
तहिं मरणं मरणंतसमुग्घादो वि य ण मिस्सम्मि ॥२४॥[2]

सम्यक्त्वमिथ्यात्वपरिणामेषु यत्रायुष्क पुरा बद्धम्।
तत्र मरण मरणांतसमुद्घातोऽपि च न मिश्रे ॥२४॥

टीका – सम्यक्त्वपरिणाम अर मिथ्यात्वपरिणाम इनि दोऊनि विषै जिह परिणाम विषै पुरा कहिए सम्यग्मिथ्यादृष्टीपनाकौ प्राप्ति भए पहिले, परभव का आयु बध्या होइ, तीहि सम्यक्त्वरूप वा मिथ्यात्वरूप परिणाम विषै प्राप्त भया ही जीव का मरण हो है, ऐसा नियम कहिए है। बहुरि अन्य केई आचार्यनि के

---

१ षट्खडागम – धवला पुस्तक ४, पृष्ठ ३४१, गाथा ३३

२ षट्खडागम – धवला पुस्तक ४, पृष्ठ ३४९ गाथा ३३ एव पुस्तक ५, पृष्ठ ३१ टीका.

अभिप्राय करि नियम नाही है । सोई कहिए है – सम्यक्त्वपरिणाम विषै वर्तमान कोई जीव यथायोग्य परभव के आयु कौ बाधि बहुरि सम्यग्मिथ्यादृष्टि होइ पीछै सम्यक्त्व कौं वा मिथ्यात्व कौ प्राप्त होइ मरै है । बहुरि कोई जीव मिथ्यात्व-परिणाम विषै वर्तमान, सो यथायोग्य परभव का आयु बाधि, बहुरि सम्यग्मिथ्या-दृष्टि होइ पीछै सम्यक्त्व कौ वा मिथ्यात्व कौ प्राप्त होइ मरै है । बहुरि तैसे ही माराणातिक समुद्घात भी मिश्रगुणस्थान विषै नाही है ।

आगै असयत गुणस्थान के स्वरूप कौ निरूपै हैं ।

सम्मत्तदेसघादिस्सुदयादो वेदगं हवे सम्म ।
चलमलिनमगाढं तं णिच्चं कम्मक्खवणहेदु ॥२५॥

सम्यक्त्वदेशघातेरुदयाद्वेदक भवेत्सम्यक्त्वम् ।
चलं मलिनमगाढं तन्नित्यं कर्मक्षपणहेतु ॥२५॥

टीका – अनतानुवधी कषायनि का प्रशस्त उपशम नाही है, इस हेतु तै तिन अनतानुबधी कषायनि का अप्रशस्त उपशम कौ होते अथवा विसयोजन होते, बहुरि दर्शनमोह का भेदरूप मिथ्यात्वकर्म अर सम्यग्मिथ्यात्वकर्म, इनि दोऊनि कौ प्रशस्त उपशमरूप होतै वा अप्रशस्त उपशम होतै वा क्षय होने के सन्मुख होतै बहुरि सम्यक्त्व प्रकृतिरूप देशघातिया स्पर्धको का उदय होतै ही जो तत्त्वार्थश्रद्धान है लक्षण जाका, अैसा सम्यक्त्व होइ, सो वेदक अैसा नाम धारक है ।

जहा विवक्षित प्रकृति उदय आवने योग्य न होइ अर स्थिति, अनुभाग घटनै वा बधनै वा सक्रमण होनै योग्य होइ, तहा अप्रशस्तोपशम जानना ।

बहुरि जहा उदय आवने योग्य न होइ अर स्थिति, अनुभाग घटने-बधने वा सक्रमण होने योग्य भी न होइ, तहा प्रशस्तोपशम जानना ।

बहुरि तीहि सम्यक्त्व प्रकृति का उदय होतै देशघातिया स्पर्धकनि कै तत्त्वार्थश्रद्धान नष्ट करने की सामर्थ्य का अभाव है, तातै सो सम्यक्त्व चल, मलिन अगाढ हो है । जातै सम्यक्त्व प्रकृति के उदय का तत्त्वार्थश्रद्धान कौं मल उपजावने मात्र ही विषै व्यापार है । तीहिं कारण तै तिस सम्यक्त्व प्रकृति कै देशघातिपना है । अैसे सम्यक्त्व प्रकृति के उदय कौ अनुभवता जीव के उत्पन्न भया

जो तत्त्वार्थश्रद्धान, सो वेदक सम्यक्त्व है, असा कहिए है। यह ही वेदक सम्यक्त्व है, सो क्षायोपशमिक सम्यक्त्व असा नामधारक है, जातै दर्शनमोह के सर्वघाती स्पर्धकनि का उदय का अभावरूप है लक्षरण जाका, ऐसा क्षय होतै, बहुरि देशघातिस्पर्धकरूप सम्यक्त्व प्रकृति का उदय होतै, बहुरि तिसही का वर्तमान समयसबधी तै ऊपरि के निषेक उदय कौ न प्राप्त भए, तिनिसबधी स्पर्धकनि का सत्ता अवस्थारूप है लक्षण जाका, ऐसा उपशम होतै वेदक सम्यक्त्व हो है। तातै याही का दूसरा नाम क्षायोपशमिक सम्यक्त्व है, भिन्न नाही है।

सो वेदक सम्यक्त्व कैसा है? नित्यं कहिए नित्य है। इस विशेषण करि याकी जघन्यस्थिति अतर्मुहूर्त है, तथापि उत्कृष्टपना करि छ्यासठि सागरप्रमाण काल रहै है। तातै उत्कृष्ट स्थिति अपेक्षा दीर्घकाल ताई रहै है, तातै नित्य कह्या है। बहुरि सर्वकाल अविनश्वर अपेक्षा नित्य इहा न जानना। बहुरि कैसा है? कर्मक्षपरणहेतु (कहिए) कर्मक्षपावने का कारण है। इस विशेषण करि मोक्ष के कारण सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र परिणाम हैं, तिनि विषै सम्यक्त्व ही मुख्य कारण है, ऐसा सूचै है। बहुरि वेदक सम्यक्त्व विषै शकादिक मल है, ते भी यथासभव सम्यक्त्व का मूल तै नाश करने कौ कारण नाही, असे सम्यक्त्व प्रकृति के उदय तै उपजे है।

बहुरि औपशमिक अर क्षायिक सम्यक्त्व विषै मल उपजावने कौ कारण तिस सम्यक्त्व प्रकृति का उदय का अभाव तै निर्मलपना सिद्ध है, ऐसा हे शिष्य! तू जान।

बहुरि चलादिकनि का लक्षण कहै है, तहा चलपना कहिए है –

> नानात्मीयविशेषेषु चलतीति चलं स्मृतं।
> लसत्कल्लोलमालासु जलमेकमवस्थितं ॥
> स्वकारितेऽर्हच्चैत्यादौ देवोऽयं मेऽन्यकारिते।
> अन्यस्यायमिति भ्राम्यन् मोहाच्छाद्धोऽपि चेष्टते ॥

याका अर्थ – नाना प्रकार अपने ही विशेष कहिए आप्त, आगम, पदार्थरूप श्रद्धान के भेद, तिनि विषै जो चलै – चचल होइ, सो चल कह्या है। सोई कहिए है - अपना कराया अर्हन्तप्रतिबिंबादिक विषै यहु मेरा देव है, ऐसे ममत्व करि, बहुरि

अन्यकरि कराया अर्हन्तप्रतिबिंबादिक विषै यहु अन्य का है, ऐसे पर का मानिकरि भेदरूप भजन करै है, तातै चल कह्या है ।

इहा दृष्टात कहै है – जैसे नाना प्रकार कल्लोल तरगनि की पक्ति विषै जल एक ही अवस्थित है, तथापि नाना रूप होइ चल है, तैसे मोह जो सम्यक्त्व प्रकृति का उदय, तातै श्रद्धान है, सो भ्रमण रूप चेष्टा करै है ।

भावार्थ – जैसे जल तरगनि विषै चचल होइ, परतु अन्यभाव कौ न भजै, तैसे वेदक सम्यग्दृष्टि अपना वा अन्य का कराया जिनबिंबादि विषै यहु मेरा, यहु अन्य का इत्यादि विकल्प करै है, परतु अन्य देवादिक कौ नाही भजै है ।

अब मलिनपना कहिए है –

तदप्यलब्धमाहात्म्यं पाकात्सम्यक्त्वकर्मणः ।
मलिनं मलसंगेन शुद्धं स्वर्णमिवोद्भवेत् ।।

याका अर्थ – सो भी वेदक सम्यक्त्व है, सो सम्यक्त्व प्रकृति के उदय तै न पाया है माहात्म्य जिहि, ऐसा हो है । वहुरि सो शकादिक मल का संगकरि मलिन हो है । जैसे शुद्ध सोना बाह्य मल का सयोग तै मलिन हो है, तैसे वेदक सम्यक्त्व शकादिक मल का सयोग तै मलिन हो है ।

अब अगाढ कहिए है –

स्थान एव स्थितं कंप्रमगाढमिति कीर्त्यते ।
वृद्धयष्टिरिवात्यक्तस्थाना करतले स्थिता ।।
समेप्यनतशक्तित्वे सर्वेषामर्हतामयं ।
देवोऽस्मै प्रभुरेषोस्मा इत्यास्था सुदृशामपि ।।

याका अर्थ – स्थान कहिए आप्त, आगम, पदार्थनि का श्रद्धान रूप अवस्था, तिहिं विषै तिष्ठता हुआ ही कापै, गाढा न रहै, सो अगाढ ऐसा कहिए है ।

ताका उदाहरण कहै हैं – असे तीव्र रुचि रहित होय सर्व अर्हन्त परमेष्ठीनि के अनतशक्तिपना समान होतै सते, भी इस शातिकर्म, जो शाति क्रिया ताकै अर्थि शातिनाथ देव है, सो प्रभु कहिए समर्थ है । बहुरि इस विघ्ननाशन आदि क्रिया के अर्थि पार्श्वनाथ देव समर्थ है । इत्यादि प्रकार करि रुचि, जो प्रतीति, ताकी शिथिलता सभवै है । तातै बूढे का हाथ विषै लाठी शिथिल सबधपना करि अगाढ है, तैसे सम्यक्त्व अगाढ है ।

भावार्थ – जैसे बूढे के हाथ ते लाठी छूटै नाहीं, परंतु शिथिल रहै । तैसे वेदक सम्यक्त्व का श्रद्धान छूटै नाही । शाति आदि के अर्थि अन्य देवादिकनि कौ न सेवै, तथापि शिथिल रहै । जैन देवादिक विषै कल्पना उपजावै ।

असा इहा चल, मलिन, अगाढ का वर्णन उपदेशरूप उदाहरण मात्र कह्या है । सर्व तारतम्य भाव ज्ञानगम्य है ।

आगै औपशमिक, क्षायिक सम्यक्त्वनि का उपजने का कारण अर स्वरूप प्रतिपादन करै है –

सत्तण्हं उवसमदो, उवसमसम्मो खयादु खइयो य ।
बिदियकसायुदयादो, असंजदो होदि सम्मो य ॥२६॥
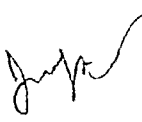
सप्तानामुपशमतः, उपशमसम्यक्त्वं क्षयात्तु क्षायिकं च ।
द्वितीयकषायोदयादसयतं भवति सम्यक्त्वं च ॥२६॥

टीका – ताही पाइए है अत जाका, असा अनत कहिए मिथ्यात्व, ताहि **अनुबध्नंति** कहिए आश्रय करि प्रवर्तै असे अनतानुबधी क्रोध, मान, माया, लोभ, बहुरि मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, सम्यक्त्व प्रकृति नाम धारक दर्शनमोह प्रकृति तीन, असे सात प्रकृतिनि का सर्व उपशम होने करि औपशमिक सम्यक्त्व हो है । बहुरि तैसे तिन सात प्रकृतिनि का क्षयतै क्षायिक सम्यक्त्व हो है । बहुरि दोऊ सम्यक्त्व ही निर्मल है, जातै शकादिक मलनि का अश की भी उत्पत्ति नाहीं सभवै है । बहुरि तैसे दोऊ सम्यक्त्व निश्चल है, जातै आप्त, आगम, पदार्थ गोचर श्रद्धान भेदनि विषै कही भी स्खलित न हो है । बहुरि तैसे ही दोऊ सम्यक्त्व गाढ हैं, जातै आप्तादिक विषै तीव्र रुचि सभवै है । यहु मल का न सभवना, स्खलित न होना तीव्ररुचि का सभवना – ए तीनो सम्यक्त्व प्रकृति का उदय का इहा अत्यत अभाव है, तातै पाइए है असा जानना ।

बहुरि या प्रकार कहे तीन प्रकार सम्यक्त्वनि करि परिणाया जो सम्यग्दृष्टि जीव, सो द्वितीय कषाय जे अप्रत्याख्यान क्रोध, मान, माया, लोभ; इन विषै एक किसी का उदय करि असंयत कहिए असयमी हो है, याही तै याका नाम असंयत-सम्यग्दृष्टी है ।

आगै तत्त्वार्थश्रद्धान का सम्यक् प्रकार ग्रहण अर त्याग-का अवसर नाही, ताहि गाथा दोय करि प्ररूपे है –

सम्माइट्ठी जीवो, उवइट्ठं पवयणं तु सद्दहदि ।
सद्दहदि असब्भावं, अजाणमाणो गुरुणियोगा ।।२७।।[1]

सम्यग्दृष्टिर्जीव', उपदिष्टं प्रवचनं तु श्रद्दधाति ।
श्रद्दधाति असद्भावं, अज्ञायमानो गुरुनियोगात् ।।२७।।

टीका – जो जीव अर्हन्तादिकनि करि उपदेस्या हूवा असा जु प्रवचन कहिए आप्त, आगम, पदार्थ ए तीन, ताहि श्रद्दधाति कहिए श्रद्धै है, रोचै है । बहुरि तिनि आप्तादिकनि विषै असद्भावं कहिए अतत्त्व, अन्यथा रूप ताकौ भी अपने विशेष ज्ञान का अभाव करि केवल गुरु ही का नियोग तै जो इस गुरु ने कह्या, सो ही अर्हन्त की आज्ञा है, असा प्रतीति तै श्रद्धान करै है, सो भी सम्यग्दृष्टि ही है, जातै तिस की आज्ञा का उल्लघन नाही करै है ।

भावार्थ – जो अपनै विशेष ज्ञान न होइ, बहुरि जैनगुरु मदमति तै आप्तादिक का स्वरूप अन्यथा कहै, अर यहु अर्हन्त की असी ही आज्ञा है, असै मानि जो असत्य श्रद्धान करै तौ भी सम्यग्दृष्टि का अभाव न होइ, जातै इसनै तो अर्हन्त की आज्ञा जानि प्रतीति करी है ।

सुत्तादो त सम्मं, दरसिज्जत जदा ण सद्दहदि ।
सो चेव हवइ मिच्छाइट्ठी जीवो तदो पहुदी ।।२८।।

सूत्रात्त सम्यग्दर्शयतं, यदा न श्रद्दधाति ।
स चैव भवति मिथ्यादृष्टिर्जीवः तदा प्रभृति ।।२८।।

टीका – तैसै असत्य अर्थ श्रद्धान करता आज्ञा सम्यग्दृष्टी जीव, सो जिस काल प्रवीण अन्य आचार्यनि करि पूर्वे ग्रह्या हुवा असत्यार्थरूप श्रद्धान तै विपरीत भाव सत्यार्थ, सो गणधरादिकनि के सूत्र दिखाइ सम्यक् प्रकार निरूपण कह्या हुवा होइ, ताकौ खोटा हट करि न श्रद्धान करै तौ, तीहि काल सौ लगाय, सो जीव

---

१. षट्खडागम – धवला पुस्तक १, पृष्ठ १७४, गाथा ११०

मिथ्यादृष्टी हो है। जातैं सूत्र का अश्रद्धान करि जिन आज्ञा का उल्लघन का सुप्रसिद्धपना है, तीहि कारण तै मिथ्यादृष्टी हो है।

आगै असयतपना अर सम्यग्दृष्टीपना कै सामानाधिकरण्य कौ दिखावै है –

णो इंदियेसु विरदो, णो जीवे थावरे तसे वापि।
जो सद्दहदि जिणुत्तं, सम्माइट्ठी अविरदोसो ॥२९॥[1]

नो इंद्रियेषु विरतो, नो जीवे स्थावरे त्रसे वापि।
यः श्रद्दधाति जिनोक्तं, सम्यग्दृष्टिरविरतः सः ॥२९॥

टीका – जो जीव इद्रियविषयनि विषै **नोविरत** – विरति रहित है, बहुरि तैसै ही स्थावर, त्रस जीव की हिसा विषै भी नाही विरत है – त्याग रहित है। बहुरि जिन करि उपदेश्या प्रवचन कौ श्रद्धान करै है, सो जीव अविरत सम्यग्दृष्टी हो है। या करि असयत, सोई सम्यग्दृष्टी, सो असयतसम्यग्दृष्टी है ऐसै समानाधिकरणपना दृढ कीया। बहुत विशेषणनि का एक वस्तु आधार होइ, तहा कर्मधारेय समास विषै समानाधिरणपना जानना। बहुरि **अपि** शब्द करि ताकै सवेगादिक सम्यक्त्व के गुण भी याकै पाइए है, ऐसा सूचै है। बहुरि इहा जो अविरत विशेषण है, सो अत्यदीपक समान जानना। जैसै छैहडै धरचा हुवा दीपक, पिछले सर्वपदार्थनि कौ प्रकाशै, तैसै इहा अविरत विशेषण नीचे के मिथ्यादृष्टि आदि गुणस्थाननि विषै अविरतपना कौ प्रकाशै है, ऐसा सबध जानना। बहुरि अपि शब्द करि अनुकपा भी है।

भावार्थ—कोऊ जानैगा कि विषयनि विषै अविरती है, तातै विषयानुरागी बहुत होगा, सो नाही है, सवेगादि गुणसयुक्त है। बहुरि हिसादि विषै अविरति है, तातै निर्दयी होगा, सो नाही है, दया भाव सयुक्त है, ऐसा अविरतसम्यग्दृष्टि है।

आगै देशसयत गुणस्थान कौ गाथा दोय करि निर्देश करै है –

पच्चक्खाणुदयादो, संजमभावो ण होदि णवरिं तु।
थोववदो होदि तदो, देसवदो होदि पंचमओ ॥३०॥[2]

---

१. षट्खडागम – धवला पुस्तक १, पृष्ठ १७४, गाथा १११.
२ षट्खडागम – धवला पुस्तक १, पृष्ठ १७६, गाथा ११२.

प्रत्याख्यानोदयात् संयमभावो न भवति नवरिं तु ।
स्तोकव्रत भवति ततो, देशव्रतो भवति पंचमः ॥३०॥

टीका – अनतानुबधी, अप्रत्याख्यानावरण रूप आठ कषायनि का उपशम तै प्रत्याख्यानावरण कषायनि का देशघाती स्पर्धकनि का उदय होतै सतै सर्वघाती स्पर्धकनि का उदयाभाव रूप लक्षण जाका, ऐसा क्षय करि जाकै सकल सयमरूप भाव न हो है । विशेष यहु देशसयम कहिए, किंचित् विरति हो है, ताकौ धरै-धरै, देशसयत नामा पचमगुणस्थानवर्ती जीव जानना ।

जो तसवहाउ विरदो, अविरदओ तह य थावरवहादो ।
एक्कसमयम्हि जीवो, विरदाविरदो जिणेक्कमई ॥३१॥

यस्त्रसवधाद्विरत , अविरतस्तथा च स्थावरवधात् ।
एकसमये जीवो, विरताविरतो जिनैकमतिः ॥३१॥

टीका – सोई देशसयत विरताविरत ऐसा भी कहिए है । एक काल ही विषै जो जीव त्रसहिसा तै विरत है अर स्थावरहिसा तै अविरत है, सो जीव विरत अर सोई अविरत ऐसै विरत-अविरत विषै विरोध है, तथापि अपने-अपने गोचर भाव त्रस-स्थावर के भेद अपेक्षा करि विरोध नाही । तीहि करि विरत-अविरत ऐसा उपदेश योग्य है । बहुरि तैसै चकार शब्द करि प्रयोजन बिना स्थावर हिंसा कौ भी नाही करै है, ऐसा व्याख्यान करना योग्य है । सो कैसा है ? **जिनैकमतिः** कहिए जिन जे आप्तादिक, तिनही विषै है एक केवल मति कहिए इच्छा - रुचि जाकै ऐसा है । इस करि देशसयत कै सम्यग्दृष्टीपना है, ऐसा विशेषण निरूपण कीया है । यहु विशेषण आदि दीपक समान है, सो आदि विषै धर्या हूवा दीपक जैसे अगिले सर्व पदार्थनि कौ प्रकाशै, तैसै इहातै आगै भी सर्व गुणस्थानकनि विषै इस विशेषण करि सबध करना योग्य है – सर्व सम्यग्दृष्टी जानने ।

आगै प्रमत्तगुणस्थान कौ गाथा दोय करि कहैं है –

संजलण णोकसायाणुदयादो संजमो हवे जम्हा ।
मलजणणपमादो वि, य तम्हा हु पमत्तविरदो सो ॥३२॥

सज्वलननोकषायाणामुदयात्सयमो भवेद्यस्मात् ।
मलजननप्रमादोऽपि च तस्मात्खलु प्रमत्तविरतः सः ॥३२॥

टीका – जा कारण तै संज्वलनकषाय के सर्वघाती स्पर्धकनि का उदयाभाव लक्षण धरै क्षय होतै, बहुरि बारह कषाय उदय कौ न प्राप्त तिनका, अर सज्वलन कषाय अर नोकषाय, इनके निषेकनि का सत्ता अवस्था रूप लक्षण धरै उपशम होतै, बहुरि सज्वलनकषाय, नोकषायनि का देशघाती स्पर्धकनि का तीव्र उदय तै सकलसयम अर मल का उपजावनहारा प्रमाद दोऊ हो है। तीहि कारण तै प्रमत्त सोई विरत, सो षष्ठम गुणस्थानवर्ती जीव प्रमत्तसयत असा कहिए है।

"विवक्खिदस्स संजमस्स खओवसमियत्तपडुप्पायणमेत्तफलत्तादो कथं सजलणणोकसायाणं चरित्तविरोहीण चारित्तकारयत्तं ? देशघादित्तेण सपडिवक्ख गुणं विणिम्मूलणसत्तिविरहियाणमुदयो विज्जमाणो वि ण स कज्जकार ओत्ति सजमहेदुत्तेण विविक्खियत्तादो, वत्थुदो दु कज्ज पडुप्पायेदि मलजणणपमादोविय 'अविय इत्यवधारणे' मलजणणपमादो चेव जम्हा एव तम्हा हु पमत्ताविरदो सो तमुवलक्खदि ।"

याका अर्थ – विवक्षित जो सयम, ताकै क्षायोपशमिकपना का उत्पादनमात्र फलपना है। सज्वलन अर नोकषाय जे चारित्र के विरोधी, तिनकै चारित्र का करना – उपजावना कैसै सभव है ?

तहा कहै है – एक देशघाती है, तीहि भावकरि अपना प्रतिपक्षी सयमगुण, ताहि निर्मूल नाश करने की शक्ति रहित है। सो इनका उदय विद्यमान भी है, तथापि अपना कार्यकारी नाही, सयम नाश न करि सकै है। असै सयम का कारणपना करि विवक्षा तै सज्वलन अर नोकषायनि कै चारित्र उपजावना उपचार करि जानना। वस्तु तै यथार्थ निश्चय विचार करिए, तब ए सज्वलन अर नोकषाय अपने कार्य ही कौ उपजावै है। इनि तै मल का उपजावनहारा प्रमाद हो है। **अपि** च असा शब्द है सो प्रमाद भी है, असा अवधारण अर्थ विषै जानना। मल का उपजावनहारा प्रमाद है, जातै असै तातै प्रकट प्रमत्तविरत, सो षष्ठम गुणस्थानवर्ती जीव है।

ताहि लक्षण करि कहै है –

वत्तावत्तपमादे, जो वसइ पमत्तसंजदो होदि ।
सयलगुणशीलकलिओ, महव्वई चित्तलायरणो ॥३३॥[1]

---

[1] षट्खडागम – धवला, पुस्तक १, पृष्ठ १७९, गाथा ११३

व्यक्ताव्यक्तप्रमादे यो वसति प्रमत्तसंयतो भवति ।
सकलगुणशीलकलितो, महाव्रती चित्रलाचरणः ।।३३।।

टीका – **व्यक्त** कहिए आपके जानने मे आवै, बहुरि **अव्यक्त** कहिए प्रत्यक्ष ज्ञानीनि के ही जानने योग्य ऐसा जो प्रमाद, तीहिविषै जो सयत प्रवर्ते, सो चारित्र-मोहनीय का क्षयोपशम का माहात्म्य करि समस्त गुण अर शील करि सयुक्त महाव्रती हो है । **अपि** शब्द करि प्रमादी भी हो है, अर महाव्रती भी हो है । इहा सकलसयमपनो महाव्रतीपनो देशसंयत अपेक्षा करि जानना, ऊपरि के गुणस्थाननि की अपेक्षा नाही है । तिस कारण तै ही प्रमत्तसयत चित्रलाचरण है, ऐसा कह्या है । **चित्रं** कहिए प्रमाद करि मिश्ररूप कौ **'लाति'** कहिए गहै – करै, सो चित्रल कहिए । चित्रल आचरण जाकै होइ, सो चित्रलाचरण जानना । अथवा चित्रल कहिए सारग, चीता, तिहि समान मिल्या हूवा कावरा आचरण जाका होइ, सो चित्रलाचरण जानना । अथवा **चित्तं लाति** कहिए मन कौं प्रमादरूप करि कहै, सो चित्तल कहिए । चित्तल है आचरण जाका, सो चित्तलाचरण जानना । ऐसी विशेष निरुक्ति भी पाठातर अपेक्षा जाननी ।

आगै तिनि प्रमादनि का नाम, सख्या दिखावने के अर्थि सूत्र कहै है –

विकहा तहा कसाया, इंदियणिद्दा तहेव पणयो य ।
चदु चदु पणमेगेगं, होंति पमादा हु पण्णरस ।।३४।।[1]

विकथा तथा कषाया, इद्रियनिद्राः तथैव प्रणयश्च ।
चतुश्चतुः पञ्चैकैक, भवंति प्रमादाः खलु पंचदश ।।३४।।

टीका – सयमविरुद्ध जे कथा, ते विकथा कहिए । बहुरि **कषति** कहिए सयमगुण कौ घातै, ते कषाय कहिए । बहुरि सयम विरोधी इद्रियनि का विषय प्रवृत्तिरूप व्यापार, ते इद्रिय कहिए । बहुरि स्त्यानगृद्धि आदि तीन कर्मप्रकृतिनि का उदय करि वा निद्रा, प्रचला का तीव्र उदय करि प्रकट भई जो जीव कै अपने दृश्य पदार्थनि का सामान्यमात्र ग्रहण कौ रोकनहारी जडरूप अवस्था, सो निद्रा है । बहुरि बाह्य पदार्थनि विषै ममत्वरूप भाव सो, प्रणय कहिए स्नेह है । ए क्रम तै विकथा च्यारि, कषाय च्यारि, इद्रिय पाच, निद्रा एक, स्नेह एक ऐसै सर्व मिलि प्रमाद पद्रह

---

१ षट्खडागम – धवला, पुस्तक १, पृष्ठ १७६ गाथा ११४

हो है । इहा सूत्र विषै पहिले चकार कह्या, सो सर्व ही ए प्रमाद है, अैसा साधारण भाव जानने के अर्थि कह्या है । बहुरि दूसरा तथा शब्द कह्या, सो परस्पर समुदाय करने के अर्थि कह्या है ।

आगै इनि प्रमादनि के अन्य प्रकार करि पाच प्रकार है, तिनकौ नव गाथानि करि कहै है –

संखा तह पत्थारो, परियट्टण णट्ठ तह समुद्दिट्ठं ।
एदे पंच पयारा, पमदसमुक्कित्तणे णेया ॥३५॥

संख्या तथा प्रस्तारः, परिवर्तन नष्टं तथा समुद्दिष्टम् ।
एते पंच प्रकाराः, प्रमादसमुत्कीर्तने ज्ञेयाः ॥३५॥

टीका – सख्या, प्रस्तार, परिवर्तन, नष्ट, समुद्दिष्ट ए पांच प्रकार प्रमादनि का व्याख्यान विषैं जानना । तहा प्रमादनि का आलाप कौ कारणभूत जो अक्ष-सचार के निमित्त का विशेष, सो सख्या है । बहुरि इनका स्थापन करना, सो प्रस्तार है । बहुरि अक्षसचार परिवर्तन है । सख्या धरि अक्ष का ल्यावना नष्ट है । अक्ष धरि सख्या का ल्यावना समुद्दिष्ट है । इहा भग कौ कहने का विधान, सो आलाप जानना । बहुरि भेद वा भग का नाम अक्ष जानना । बहुरि एक भेद अनेक भगनि विषै क्रम तै पलटै, ताका नाम अक्षसचार जानना । बहुरि जेथवा भग होइ, तीहि प्रमाण का नाम सख्या जानना ।

आगै विशेष सख्या की उत्पत्ति का अनुक्रम कहै है –

सव्वे पि पुव्वभंगा, उवरिमभंगेसु एक्कमेक्केसु ।
मेलंति त्ति य कमसो, गुणिदे उप्पज्जदे संखा ॥३६॥

सर्वेऽपि पूर्वभंगा, उपरिमभगेषु एकैकेषु ।
मिलति इति च क्रमशो, गुणिते उत्पद्यते संख्या ॥३६॥

टीका – सर्व ही पहिले भग ऊपरि-ऊपरि के भंगनि विषै एक-एक विषै मिलै है, सभवे हैं । यातै क्रम करि परस्पर गुणे, विशेष सख्या उपजै है । सोई कहिए है – पूर्व भंग विकथाप्रमाद च्यारि, ते ऊपरि के कषायप्रमादनि विषै एक-एक विषै संभवै

है । अैसे च्यारि विकथानि करि गुणे, च्यारि कपायनि के सोलह प्रमाद हो है । बहुरि ए नीचले भग सोलह भए, ते ऊपरि के इद्रियप्रमादनि विषै एक-एक विषै सभवै हैं । अैसे सोलह करि गुणे, पच इद्रियनि के असी प्रमाद हो हैं । तैसे ही निद्रा विषै, बहुरि स्नेह विषै एक-एक ही भेद है । तातै एक-एक करि गुणे भी असी-असी ही प्रमाद हो हैं । अैसे विशेष सख्या की उत्पत्ति कही ।

आगै प्रस्तार का अनुक्रम दिखावै है –

पढमं पमदपमाणं, कमेण णिक्खिविय उवरिमाण च ।
पिंडं पडि एक्केकं, णिक्खित्ते होदि पत्थारो ॥३७॥

प्रथम प्रमादप्रमाण, क्रमेण निक्षिप्य उपरिमाण च ।
पिंड प्रति एकैक, निक्षिप्ते भवति प्रस्तारः ॥३७॥

टीका – प्रथम विकथास्वरूप प्रमादनि का प्रमाण का विरलन करि एक-एक जुदा बिखेरी, पीछै क्रम करि नीचै विरल कीया था । ताकै एक-एक भेद प्रति एक-एक ऊपरि का प्रमादपिंड कौं स्थापन करना, तिनकौं मिलें प्रस्तार हो है । सो कहिए है – विकथा प्रमाद का प्रमाण च्यारि, ताकौं विरलन करि क्रम तें स्थापि (१ १ १ १) बहुरि ताकै ऊपरि का दूसरा कपाय नामा प्रमाद, ताका पिड जो समुदाय, ताका प्रमाण च्यारि (४) ताहि विरलनरूप स्थापे जे नीचले प्रमाद, तिनिका एक-एक भेद प्रति देना ।

भावार्थ – एक-एक विकथा भेद ऊपरि च्यारि-च्यारि कषाय स्थापने
क ४ ४ ४ ४
वि १ १ १ १ सो इनकौ मिलाए जोडे, सोलह प्रमाद हो है । बहुरि ऊपरि की अपेक्षा लीए याकौ पहिला प्रमादपिंड कहिए, सो याकौं विरलन करि क्रम तें स्थापि, यातें ऊपरी का तिस पहिला की अपेक्षा याको दूसरा इद्रियप्रमाद, ताका पिंड प्रमाण पाच, ताहि पूर्ववत् विरलन करि स्थापे, जे नीचले प्रमाद, तिनके एक-एक भेद प्रति एक-एक पिंडरूप स्थापिए –

५ ५ ५ ५   ५ ५ ५ ५   ५ ५ ५ ५   ५ ५ ५ ५
१ १ १ १   १ १ १ १   १ १ १ १   १ १ १ १
क्रो मा मा लो , क्रो मा मा लो , क्रो मा मा लो , क्रो मा मा लो ,
स्त्री स्त्री स्त्री स्त्री , भ भ भ भ , रा रा रा रा , अ अ अ अ ,

भावार्थ – सोलह भेदनि विषै एक-एक भेद ऊपरि पाच-पांच इंद्रिय स्थापने, सो इनकौं जोडै, असी भग हो है। यहु प्रस्तार आगै कहिए जो अक्षसचार, ताका कारण है। अैसे प्रस्ताररूप स्थापे जे असी भग, तिनिका आलाप जो भग कहने का विधान, ताहि कहिए है – स्नेहवान्-निद्रालु-स्पर्शन इद्रिय के वशीभूत-क्रोधी-स्त्री-कथालापी अैसे यहु असी भंगनि विषै पहिला भग है। बहुरि स्नेहवान्-निद्रालु-रसना इंद्रिय के वशीभूत-क्रोधी-स्त्रीकथालापी अैसे यहु दूसरा भंग है। बहुरि स्नेहवान्-निद्रालु-घ्राण इंद्रिय के वशीभूत-क्रोधी-स्त्रीकथालापी अैसे यहु तीसरा भंग भया। बहुरि स्नेहवान्-निद्रालु-चक्षु इद्रिय के वशीभूत-क्रोधी-स्त्रीकथालापी अैसै यहु चौथा भग है। बहुरि स्नेहवान्-निद्रालु-श्रोत्र इद्रिय के वशीभूत-क्रोधी-स्त्रीकथालापी अैसै यहु पाचवा भग है। अैसे पाच भग भए। याही प्रकार क्रोधी की जायगा मानी स्थापि पच भग करने।

बहुरि मायावी स्थापि पंच भग करने। बहुरि लोभी स्थापि पच भंग करने। अैसे एक-एक कषाय के पाच-पाच होइ, च्यारि कषायनि के एक स्त्रीकथा प्रमाद विषै वीस आलाप हो है। बहुरि जैसे स्त्रीकथा आलापी की अपेक्षा वीस भेद कहे, तैसे ही स्त्रीकथालापी की जायगा भक्तकथालापी, बहुरि राष्ट्रकथालापी, बहुरि अवनिपालकथालापी क्रम तै स्थापि एक-एक विकथा के वीस-वीस भंग होइ। च्यारौ विकथानि के मिलि करि सर्वप्रमादनि के असी आलाप हो है, अैसा जानना।

आगै अन्य प्रकार प्रस्तार दिखावै है –

णिक्खित्तु बिदियमेत्तं, पढमं तस्सुवरि बिदयमेक्केक्कं।
पिंडं पडि णिक्खेओ, एवं सव्वत्थ कायव्वो ॥३८॥

निक्षिप्त्वा द्वितीयमात्रं, तस्यौपरि द्वितीयमेकैकम्।
पिंडं प्रति निक्षेप, एवं सर्वत्र कर्तव्यः ॥३८॥

टीका – कषायनामा दूसरा प्रमाद का जेता प्रमाण, तीहिमात्र स्थानकनि विषै विकथास्वरूप पहिला प्रमाद का समुदायरूप पिड जुदा-जुदा स्थापि (४४४४), बहुरि एक-एक पिंडप्रति द्वितीय प्रमादनि का प्रमाण का एक-एक रूप ऊपरि स्थापना।

भावार्थ – च्यारि-च्यारि प्रमाण लीए, एक-एक विकथा प्रमाद का पिंड, ताकौ दूसरा प्रमाद कषाय का प्रमाण च्यारि, सो च्यारि जायगा स्थापि, एक-एक पिंड के ऊपरि क्रम तै एक-एक कषाय स्थापिए (१ १ १ १ / ४ ४ ४ ४) अैसे स्थापन कीए, तिन का जोड सोलह पिंड प्रमाण होइ। बहुरि 'अैसे ही सर्वत्र करना' इस वचन तै यहु सोलह प्रमाण पिंड जो समुदाय, सो तीसरा इंद्रिय प्रमाद का जेता प्रमाण, तितनी जायगा स्थापिए। सो पाच जायगा स्थापि (१६ १६ १६ १६ १६), इनके ऊपरी तीसरा इंद्रिय प्रमाद का प्रमाण एक-एक रूपकरि स्थापन करना।

भावार्थ – पूर्वोक्त सोलह भेद जुदे-जुदे इंद्रिय प्रमाद का प्रमाण पाचा, सो पाच जायगा स्थापि, एक-एक पिंड के ऊपरि एक-एक इंद्रिय भेद स्थापन करना

(१६/१ १६/१ १६/१ १६/१) अैसे स्थापन कीए, अधस्तन कहिए नीचे की अपेक्षा अक्षसचार कौं कारण दूसरा प्रस्तार हो है।

सो इस प्रस्तार अपेक्षा आलाप जो भग कहने का विधान, सो कैसे हो है ?

सोई कहिए है – स्त्रीकथालापी-क्रोधी-स्पर्शन-इंद्रिय के वशीभूत-निद्रालु-स्नेहवान् अैसा असी भगनि विषै प्रथम भग है। बहुरि भक्तकथालापी-क्रोधी-स्पर्शन इंद्रिय के वशीभूत-निद्रालु-स्नेहवान अैसा दूसरा भग है। बहुरि राष्ट्रकथालापी-क्रोधी-स्पर्शन इंद्रिय के वशीभूत-निद्रालु-स्नेहवान् अैसा तीसरा भग है। बहुरि अवनिपालकथालापी-क्रोधी-स्पर्शन इंद्रिय के वशीभूत-निद्रालु-स्नेहवान् अैसा चौथा भग है। अैसे ही क्रोध की जायगा मानी वा मायावी वा लोभी क्रम तै कहि च्यारि-च्यारि भग होइ, च्यारौ कषायनि के एक स्पर्शन इंद्रिय विषै सोलह आलाप हो है।

बहुरि अैसे ही स्पर्शन इंद्रिय के वशीभूत की जायगा रसना वा घ्राण वा चक्षु वा श्रोत्र इंद्रिय के वशीभूत क्रम तै कहि एक-एक के सोलह-सोलह भेद होइ पाचो इंद्रियनि के असी प्रमाद आलाप हो हैं। तिनि सबनि को जानि व्रती पुरुषनि करि प्रमाद छोडने।

भावार्थ – एकै जीव के एक काल कोई एक-एक, कोई भेदरूप विकथादिक हो है। तातै तिनके पलटने की अपेक्षा पद्रह प्रमादनि के असी भग हो हैं। अैसा ही यहु अनुक्रम चौरासी लाख उत्तरगुण, अठारह हजार शील के भेद, तिनका भी प्रस्तार विषै करना।

आगै पीछे कह्या जो दूसरा प्रस्तार, ताकी अपेक्षा अक्षपरिवर्तन कहिए अक्षसंचार, ताका अनुक्रम कहै है –

पढमक्खो अंतगदो, आदिगदे संकमेदि बिदियक्खो ।
दोण्णिवि गंतूणंतं, आदिगदे संकमेदि तदियक्खो ॥३९॥

प्रथमाक्ष अंतगतः आदिगते संक्रामति द्वितीयाक्षः ।
द्वावपि गत्वांतमादिगते, संक्रामति तृतीयाक्षः ॥३९॥

टीका – पहिला प्रमाद का अक्ष कहिए भेद विकथा, सो आलाप का अनुक्रम करि अपने पर्यन्त जाइ, बहुरि बाहुडि करि अपने प्रथम स्थान कौ युगपत् प्राप्त होइ, तब दूसरा प्रमाद का अक्ष कषाय, सो अपने दूसरे स्थान कौ प्राप्त होइ ।

भावार्थ – आलापनि विषै पहिलै तो विकथा के भेदनि कौ पलटिए, क्रम तै स्त्री, भक्त, राष्ट्र, अवनिपालकथा च्यारि आलापनि विषैं कहिए । अर अन्य प्रमादनि का पहिला-पहिला ही भेद इन चारौ आलापनि विषै ग्रहण करिए । तहां पीछै पहिला विकथा प्रमाद अपना अंत अवनिपालकथा तहां पर्यंत जाइ, बाहुडि करि अपना स्त्रीकथारूप प्रथम भेद कौ जब प्राप्त होइ, तब दूसरा प्रमाद कषाय, सो अपना पहला स्थान क्रोध को छोडि, द्वितीय स्थान मान कौ प्राप्त होइ । बहुरि प्रथम प्रमाद का अक्ष पूर्वोक्त अनुक्रम करि संचार करता अपना पर्यन्त कौ जाइ, बाहुडि करि युगपत् अपना प्रथम स्थान कौ जब प्राप्त होइ, तब दूसरा प्रमाद का अक्ष कषाय, सो अपना तीसरा स्थान कौ प्राप्त होइ ।

भावार्थ – दूसरा कषाय प्रमाद दूसरा भेद मान कौ प्राप्त हुवा, तहा भी पूर्वोक्त प्रकार पहला भेद क्रम तै च्यारि आलापनि विषै क्रम तै पलटी, अपना पर्यन्त भेद ताईं जाइ, बाहुडि अपना प्रथम भेद स्त्रीकथा कौ प्राप्त होइ, तब कषाय प्रमाद अपना तीसरा भेद माया कौ प्राप्त हो है । बहुरि अैसै ही सचार करता, पलटता दूसरा प्रमाद का अक्ष कषाय, सो जब अपने अत पर्यन्त भेद कौ प्राप्त होइ, तब प्रथम अक्ष विकथा, सो भी अपना पर्यन्त भेद कौ प्राप्त होइ तिष्ठै ।

भावार्थ – पूर्वोक्त प्रकार च्यारि आलाप माया विषै, च्यारि आलाप लोभ विषै भए कषाय अक्ष अपना पर्यन्त भेद लोभ, ताकौ प्राप्त भया । अर इनिविषै

पहिला अक्ष विकथा, सो भी अपना पर्यन्त भेद अवनिपालकथा, ताकौं प्राप्त भया, ऐसे होते सोलह आलाप भए ।

बहुरि ए दोऊ अक्ष विकथा अर कषाय बाहुडि करि अपने प्रथम स्थान कौं प्राप्त भए, तब तीसरा प्रमाद का अक्ष अपना प्रथम स्थान छोडि, दूसरा स्थान कौं प्राप्त हो है। अर इस ही अनुक्रम करि प्रथम अर द्वितीय अक्ष का क्रम तैं अपने पर्यन्त भेद ताई जानना । बहुरि बाहुडना तिनकरि तीसरा प्रमाद का अक्ष इंद्रिय, सो अपना तीसरा आदि स्थान कौं प्राप्त होइ, ऐसा जानना ।

भावार्थ – विकथा अर कषाय अक्ष बाहुडि अपना प्रथम स्थान स्त्रीकथा अर क्रोध कौं प्राप्त होइ, तब इंद्रिय अक्ष विषै पूर्वे सोलह आलापनि विषै पहिला भेद स्पर्शन इंद्रिय था, सो तहा रसना इंद्रिय होइ, तहा पूर्वोक्त प्रकार अपना-अपना पर्यंत भेद ताई जाय, तब रसना इंद्रिय विषै सोलह आलाप होइ । बहुरि तैसे ही ते दोऊ अक्ष बाहुडि अपने प्रथम स्थान कौं प्राप्त होइ, तब इंद्रिय अक्ष अपना तीसरा भेद घ्राण इंद्रिय कौं प्राप्त होइ, या विषै पूर्वोक्त प्रकार सोलह आलाप होइ ।

बहुरि इस ही क्रमकरि सोलह-सोलह आलाप चक्षु, श्रोत्र इंद्रिय विषै भए, सर्व प्रमाद के अक्ष अपने पर्यन्त भेद कौं प्राप्त होइ तिष्ठै है । यहु अक्षसचार का अनुक्रम नीचै के अक्ष तैं लगाय, ऊपरि के अक्ष पर्यन्त विचार करि प्रवर्तावना । बहुरि अक्ष की सहनानी हसपद है, ताका आकार (×) ऐसा जानना ।

आगै प्रथम प्रस्तार की अपेक्षा अक्षपरिवर्तन कहै हैं –

तदियक्खो अंतगदो, आदिगदे संकमेदि विदियक्खो ।
दोण्णिवि गंतूणंतं, आदिगदे संकमेदि पढमक्खो ।।४०।।

तृतीयाक्ष. अंतगत', आदिगते संक्रामति द्वितीयाक्षः ।
द्वावपि गत्वातमादिगते संक्रामति प्रथमाक्षः ।।४०।।

टीका – तीसरा प्रमाद का अक्ष इंद्रिय, सो आलाप का अनुक्रम करि अपने पर्यन्त जाइ स्पर्शनादि क्रम तैं पाच आलापनि विषै श्रोत्र पर्यन्त जाइ, बहुरि बाहुडि युगपत् अपने प्रथम स्थान स्पर्शन कौं प्राप्त होइ, तब दूसरा प्रमाद का अक्ष कषाय, सो पहले क्रोधरूप प्रथम स्थान कौं प्राप्त था, ताकौं छोडि अपना दूसरा स्थान मान

कौ प्राप्त हो है । तहा बहुरि तीसरा प्रमाद का अक्ष इद्रिय, सो पूर्वोक्त अनुक्रम करि अपने अत भेद पर्यन्त जाइ, बाहुडि युगपत् प्रथम स्थान कौ प्राप्त होइ, तब दूसरा प्रमाद का अक्ष कषाय, सो दूसरा स्थान मान कौ छोडि, अपना तृतीय स्थान माया कौ प्राप्त होइ । तहा भी पूर्वोक्त प्रकार विधान होइ, अैसे क्रम तै दूसरा प्रमाद का अक्ष जब एक बार अपना पर्यन्त भेद लोभ कौ प्राप्त होइ, तब तीसरा प्रमाद का अक्ष इद्रिय, सो भी क्रम करि सचार करता अपने अत भेद कौ प्राप्त होइ, तब बीस आलाप होइ ।

भावार्थ – एक-एक कषाय विषै पांच-पाच आलाप इद्रियनि के संचार करि होइ । बहुरि ते इद्रिय अर कषाय दोऊ ही अक्ष बाहुडि अपने-अपने प्रथम स्थान कौ युगपत् प्राप्त होइ, तब पहिला प्रमाद का अक्ष विकथा, सो पहिलै बीसो आलापनि विषै अपना प्रथम स्थान स्त्रीकथा रूप, ताकौ प्राप्त था । सो अब प्रथम स्थान कौ छोडि, अपना द्वितीय स्थान भक्तकथा कौ प्राप्त होइ । बहुरि इस ही अनुक्रम करि पूर्वोक्त प्रकार तृतीय, द्वितीय प्रमाद का अक्ष इद्रिय अर कषाय, तिनिका अपने अत पर्यन्त जानना । बहुरि बाहुडना इनि करि प्रथम प्रमाद का अक्ष विकथा, सो अपना तृतीयादि स्थानकनि कौ प्राप्त होइ, अैसा सचार जानना ।

भावार्थ – पूर्वोक्त प्रकार एक-एक विकथा भेद विषै इद्रिय-कषायनि के पलटने तै बीस आलाप होइ, ताके चारौ विकथानि विषै असी आलाप हो है । यहु अक्षसचार का अनुक्रम ऊपरि अत का भेद इद्रिय का पलटन तै लगाय क्रम तै अधस्तन पूर्व-पूर्व अक्ष का परिवर्तन कौं विचारि पलटना, अैसै अक्षसचार कह्या । अक्ष जो भेद, ताका क्रम तै पलटने का विधान अैसै जानना ।

आगै नष्ट ल्यावने का विधान दिखावै है –

सगमाणेहिं विभत्ते, सेसं लक्खित्तु जाण अक्खपदं ।
लद्धे रूवं पक्खिव, सुद्धे अंते ण रूवपक्खेओ ।।४१ ।।

स्वकमानैर्विभक्ते, शेषं लक्षयित्वा जानीहि अक्षपदम् ।
लब्धे रूपं प्रक्षिप्य शुद्धे अंते न रूपप्रक्षेपः ।।४१।।

टीका – कोऊ जेथवा प्रमाद भग पूछै, तीहि प्रमाद भग का आलाप की खबरि नाही, जो यहु आलाप कौन है, तहा ताकौं नष्ट कहिए । ताके ल्यावने

का, जानने का उपाय कहिए है। कोऊ जेथवा प्रमाद पूछ्या होइ, ताकौ अपना प्रमाद पिंड का भाग दीजिए, जो अवशेष रहै, सो अक्षस्थान जानना। बहुरि जेते पाए होइ, तिनिविषै एक जोडि, जो प्रमाण होइ, ताकौ द्वितीय प्रमाद पिंड का भाग देना, तहा भी तैसे ही जानना। असे ही क्रम ते सर्वत्र करना। इतना विशेष जानना, जो जहा भाग दीए राशि शुद्ध होइ जाय, कछु भी अवशेष न रहै, तहा तिस प्रमाद का अत भेद ग्रहण करना। बहुरि तहा जो लब्धराशि होइ, तिहि विषै एक न जोडना। बहुरि असे करतै अत जहा होइ, तहा एक न जोडना, सो कहिए है।

जेथवा प्रमाद पूछ्या, तिस विवक्षित प्रमाद की सख्या कौ प्रथम प्रमाद विकथा, ताका प्रमाण पिंड च्यारि, ताका भाग देइ, अवशेष जितना रहै, सो अक्षस्थान है। जितने अवशेष रहै, तेथवा विकथा का भेद, तिस आलाप विषै जानना। बहुरि इहा भाग दीए, जो पाया, तीह लब्धराशि विषै एक और जोडना। जोडे जो प्रमाण होइ, ताका ऊपरि का दूसरा प्रमाद कषाय, ताका प्रमाण पिंड च्यारि, ताका भाग देइ, जो अवशेष रहै, सो तहा अक्षस्थान जानना। जितने अवशेष रहैं, तेथवा कषाय का भेद तिस आलाप विषै जानना बहुरि जो इहा लब्धराशि होइ, तीहि विषै एक जोडि, तीसरा प्रमाद इद्रिय, ताका प्रमाण पिड पाच, ताका भाग दीजिए। बहुरि जहा अवशेष शून्य रहै, तहा प्रमादनि का अतस्थान विषै ही अक्ष तिष्ठै है। तहा अत का भेद ग्रहण करना, बहुरि लब्धिराशि विषै एक न जोडना।

इहा उदाहरण कहिए है – काहूने पूछ्या कि असी भगनि विषै पद्रहवा प्रमाद भग कौन है ?

तहा ताके जानने को विवक्षित नष्ट प्रमाद की सख्या पद्रह, ताकौं प्रथम प्रमाद का प्रमाण पिंड च्यारि का भाग देइ तीन पाए, अर अवशेष भी तीन रहै, सो तीन अवशेष रहै, तातै विकथा का तीसरा भेद राष्ट्रकथा, तीहि विषै अक्ष है, तहा अक्ष देइकरि देखै।

भावार्थ – तहा पद्रहवा आलाप विषै राष्ट्रकथालापी जानना। बहुरि तहा तीन पाए थे। तिस लब्धराशि तीन विषै एक जोडे, च्यारि होइ, ताकौं ताके ऊपरि कषाय प्रमाद, ताका प्रमाण पिंड च्यारि, ताका भाग दीए अवशेष शून्य है, किछु न रह्या, तहा तिस कषाय प्रमाद का अत भेद जो लोभ, ताका आलाप विषै अक्ष सूचै है। जातै जहा राशि शुद्ध होइ जाइ, तहा ताका अत भेद ग्रहण करना।

भावार्थ – पद्रहवा आलाप विषै लोभी जानना । बहुरि तहा लब्धराशि एक, तीहि विषै एक न जोडना । जातै जहा राशि शुद्ध होइ जाय, तहा पाया राशि विषै एक और न मिलावना सो एक का एक ही रह्या, ताकौ ऊपरि का इद्रिय प्रमाण पिंड पाच का भाग दीए, लब्धराशि शून्य है । जातै भाज्य तै भागहार का प्रमाण अधिक है, तातै इहा लब्धराशि का अभाव है । अवशेष एक रह्या, तातै इद्रिय का स्पर्शन इद्रिय के वशीभूत असा प्रथम भेद रूप अक्ष पद्रहवा आलाप विषै सूचै है । असे पद्रहवा राष्ट्रकथालापी-लोभी-स्पर्शन इद्रिय के वशीभूत-निद्रालु-स्नेहवान ऐसा आलाप जानना ।

याही प्रकार जेथवा आलाप जान्या चाहिए, तेथवा नष्ट आलाप कौं साधै ।

बहुरि इहा द्वितीय प्रस्तार अपेक्षा विकथादिक का क्रम करि जैसे नष्ट ल्यावने का विधान कह्या, तैसे ही प्रथम प्रस्तार अपेक्षा ऊपरि तै इंद्रिय, कपाय, विकथा का अनुक्रम करि पूर्वोक्त भागादिक विधान तै नष्ट ल्यावने का विधान करना ।

तहा उदाहरण – किसी ने पूछा प्रथम प्रस्तार अपेक्षा पद्रहवा आलाप कौन ?

तहां इस सख्या कौ पाच का भाग दीए, अवशेष शून्य, तातै इहा अंत का भेद श्रोत्र इद्रिय के वशीभूत ग्रहण करना ।

बहुरि इहा पाए तीन, ताकौ कषाय पिंड प्रमाण च्यारि, ताका भाग दीए, लब्धराशि शून्य, अवशेष तीन, तातै तहा तीसरा कषाय भेद मायावी जानना । बहुरि लब्धराशि शून्य विषै एक मिलाए एक भया, ताकौ विकथा का प्रमाद पिड च्यारि का भाग दीए लब्धराशि शून्य, अवशेष एक, सो स्त्रीकथालापी जानना । ऐसें प्रथम प्रस्तार अपेक्षा पद्रहवा स्नेहवान्-निद्रालु-श्रोत्र इद्रिय के वशीभूत-मायावी-स्त्रीकथालापी असा आलाप जानना । असैं ही अन्य नष्ट आलाप साधने ।

आगे आलाप धरि सख्या साधने कौ अगिला सूत्र कहै है –

संठाविदूण रूवं, उवरीदो संगुणित्तु सगमाणे ।
अवणिज्ज अणंकिदयं, कुज्जा एमेव सव्वत्थ ॥४२॥

संस्थाप्य रूपमुपरितः संगुणित्वा स्वकमानम् ।
अपनीयानंकितं, कुर्यात् एवमेव सर्वत्र ॥४२॥

टीका – प्रथम एक रूप स्थापन करि ऊपरि तै अपना प्रमाण करि गुणै, जो प्रमाण होई, तामैं अनकित स्थान का प्रमाण घटावना, असै सर्वत्र करना। इहा जो भेद ग्रहण होइ, ताकै परै स्थानकनि की जो सख्या, ताकौ अनकित कहिए। जैसै विकथा प्रमाद विषै प्रथम भेद स्त्रीकथा का ग्रहण होइ, तौ तहा ताकै परै तीन स्थान रहैं, तातै अनकित का प्रमाण तीन है। बहुरि जो भक्तकथा का ग्रहण होइ, तौ ताकै परै दोय स्थान रहै, तातै अनकित स्थान दोय है। वहुरि जो राष्ट्रकथा का ग्रहण होइ, तौ ताकै परै एक स्थान है, तातै अनकित स्थान एक है। बहुरि जो अवनिपालकथा का ग्रहण होइ, तौ ताकै परै कोऊ भी नही, तातै तहा अनकित स्थान का अभाव है। असै ही कपाय, इद्रिय प्रमाद विपै भी अनकित स्थान जानना।

सो कोऊ कहे कि अमुक आलाप केथवा है ? तहा आलाप कह्या, ताकी सख्या न जानिए, तो ताकी सख्या जानने कौ उद्दिष्ट कहिए है। प्रथम एक रूप स्थापिए, बहुरि ऊपरि का इद्रिय प्रमाद सख्या पाच, ताकरि तिस एक कौ गुणिए, तहा अनकित स्थानकनि की सख्या घटाइ, अवशेष कौं ताके अनतर नीचला कषाय प्रमाद का पिंड की सख्या च्यारि, ताकरि गुणिए, तहा भी अनकित स्थान घटाइ, अवशेष कौ ताके अनतरि नीचला विकथा प्रमाद का पिड च्यारि, ताकरि गुणिए, तहा भी अनकित स्थान घटाइ, अवशेष रहै तितना विवक्षित आलाप की सख्या हो है। असै ही सर्वत्र उत्तरगुण वा शीलभेदनि विषै उद्दिप्ट ल्यावने का अनुक्रम जानना।

इहा भी उदाहरण दिखाइए है – काहूने पूछ्या कि राष्ट्रकथालापी-लोभी-स्पर्शन इद्रिय के वशीभूत-निद्रालु-स्नेहवान असा आलाप केथवा है ?

तहा प्रथम एक रूप स्थापि, ताकौं ऊपरि का इद्रिय प्रमाद, ताकी सख्या पाच, तीहिकरि गुणै पाच भए। तीहि राशि विषै पद्रहवा उद्दिष्ट की विवक्षा करि, तामैं पहला भेद स्पर्शन इद्रिय के वशीभूत ऐसा आलाप विषै कह्या था, तातै ताके परै रसना, घ्राण, चक्षु, श्रोत्र ए च्यारि अनकित स्थान हैं। तातै इनकौ घटाए, अवशेष एक रहै, ताकौ नीचला कषाय प्रमाद की सख्या च्यारि करि गुणै, च्यारि भए, सो इस लब्धराशि च्यारि विषै इहा आलाप विषै लोभी कह्या था, सो लोभ के परै कोऊ भेद नाही। तातै अनकित स्थान कोऊ नाही। इस हेतु तै इहा शून्य घटाए, राशि जैसा का तैसा ही रह्या, सो च्यारि ही रहै। बहुरि इस राशि कौं याके नीचे विकथा प्रमाद की सख्या च्यारि ताकरि गुणै सोलह भए। इहा आलाप विषै

राष्ट्रकथालापी कह्या, सो याके परै एक भेद अवनिपाल कथा है, यातै अनंकित स्थान एक घटाए, पद्रह रहै, सोई पूछ्या था, ताका उत्तर असा – जो राष्ट्रकथालापी-लोभी-स्पर्शन इद्रिय के वशीभूत-निद्रालु-स्नेहवान, असा आलाप पद्रहवा है। सो यहु विधान दूसरा प्रस्तार की अपेक्षा जानना।

बहुरि प्रथम प्रस्तार अपेक्षा नीचे तै अनुक्रम जानना।

तहा उदाहरण कहिए है – स्नेहवान-निद्रालु-श्रोत्र इद्रिय के वशीभूत-मायावी-स्त्रीकथालापी, असा आलाप केथवा है ?

तहा एक रूप स्थापि, प्रथम प्रस्तार अपेक्षा ऊपरि का प्रमाद विकथा, ताका प्रमाण च्यारि करि गुणै, च्यारि भए, सो इहा स्त्रीकथालापी ग्रह्या, सो याकै परै तीन भेद है। तातै अनंकित स्थान तीन घटाए, अवशेष एक रह्या, ताकौ कषाय प्रमाद च्यारि करि गुणै, च्यारि भए, सो इहा मायावी ग्रह्या, ताकै परै एक लोभ अनंकित स्थान है, ताकौ घटाएं तीन रहै, याकौ इद्रिय प्रमाद पाच करि गुणै, पद्रह भए, सो इहा श्रोत्र इद्रिय का ग्रहण है। ताके परै कोऊ भेद नाही, तातै अनंकित स्थान का अभाव है। इस हेतु तै शून्य घटाएं भी पद्रह ही रहै। असै स्नेहवान-निद्रालु-श्रोत्र इद्रिय के वशीभूत-मायावी-स्त्रीकथालापी, ऐसा आलाप पद्रहवा है। या ही प्रकार विवक्षित प्रमाद का आलाप की सख्या हो है, ऐसै अक्ष धरि सख्या का ल्यावना, सो उद्दिष्ट सर्वत्र साधै।

आगै प्रथम प्रस्तार का अक्षसंचार कौ आश्रय करि नष्ट, उद्दिष्ट का गूढ यत्र कहै है –

इगिबितिचपणखपणदसपण्णरसं खवीसतालसट्ठी य।
संठविय पमदठाणे, णट्ठुद्दिट्ठं च जाण तिट्ठाणे ॥४३॥

एकद्वित्रिचतुः पंचखपंचदशपंचदशखर्विशच्चत्वारिंशत्षष्टीश्च।
संस्थाप्य प्रमाद स्थाने, नष्टोद्दिष्टे च जानीहि त्रिस्थाने ॥४३॥

टीका – प्रमादस्थानकनि विषै इद्रियनि के पंच कोठानि विषै क्रम तै एक, दोय, तीन, च्यारि, पाच इन अकनि कौ स्थापि; कषायनि के च्यारि कोठानि विषै क्रम तै बिंदी, पाच, दश, पद्रह इन अकनि कौ स्थापि, तैसै विकथानि के च्यारि कोठानि विषै क्रम तै बिदी, बीस, चालीस, साठि इनि अकनि कौ स्थापि, निद्रा,

स्नेह के दोय, तीन आदि भेदनि का अभाव है। तीहि करि ताके निमित्त तै हुई जो आलापनि की बहुत सख्या, सो न सभवै है। यातै तिन तीनौं स्थानकनि विषै स्थापे अक, तिन विषै नष्ट उद्दिष्ट तू जानि।

भावार्थ – निद्रा, स्नेह का तौ एक-एक भेद ही है। सो इनकी तौ सर्वभगनि विषै पलटनि नाही। तातै इनिको तो कहि लैने। अर अवशेष तीन प्रमादनि का तीन पक्ति रूप यत्र करना। तहा ऊपरि की पक्ति विषै पच कोठे करने। तिन विषै क्रम तै स्पर्शन आदि इद्रिय लिखने। अर एक, दोय, तीन, च्यारि, पाच ए अक लिखने। बहुरि ताके नीचली पक्ति विषै च्यारि कोठे करने, तिन विषै क्रम तै क्रोधादि कषाय लिखने। अर बिदी, पाच, दश, पद्रह ए अक लिखने। बहुरि ताके नीचली पक्ति विषै च्यारि कोठे लिखने, तहा स्त्री आदि विकथा क्रम तै लिखनी। अर बिदी, बीस, चालीस, साठ ए अक लिखने।

स्पर्शन १	रसन २	घ्राण ३	चक्षु ४	श्रोत्र ५
क्रोध ०	मान ५	माया १०	लोभ १५	
स्त्री ०	भक्त २०	राष्ट्र ४०	अव ६०	

इहा कोऊ नष्ट बूझै तो जेथवा प्रमाद भग पूछया सो प्रमाण तीनो पक्ति विषै जिन-जिन कोठेनि के अक जोडै होइ, तिन-तिन कोठेनि विषै जो-जो इद्रियादि लिखा होइ, सो-सो तिस पूछ्या हूवा आलाप विषै जानने। बहुरि जो उद्दिष्ट बूझै तौ, जो आलाप पूछ्या, तिस आलाप विषै जो इद्रियादिक ग्रहे होइ, तिनके तीनो पक्तिनि के कोठेनि विषै जे-जे अक लिखे होइ, तिनकौ जोडे जो प्रमाण होइ, तेथवा सो आलाप जानना।

तहा नष्ट का उदाहरण कहिए है –

जैसै पैतीसवा आलाप कैसा है ?

ऐसा पूछे इद्रिय, कपाय, विकथानि कै तीनौ पक्ति सबधी जिन-जिन कोठानि के अक वा शून्य मिलाए, सो पैतीस की सख्या होइ, तिन-तिन कोठानि विषै लिखे हुवे इद्रियादि प्रमाद अर स्नेह-निद्रा विषै आगै उच्चारण कीए स्नेहवान-निद्रालु-श्रोत्र इद्रिय के वशीभूत-मायावी-भक्तकथालापी ऐसा पूछ्या हूआ पैतीसवा आलाप जानना।

भावार्थ – यत्र विषै इद्रियपंक्ति का पांचवा कोठा, कषायपक्ति का तीसरा कोठा, विकथापक्ति का दूसरा कोठा, इन कोठेनि का अक जोडे पैतीस होइ, ताते इन कोठेनि विषै जे-जे इद्रियादि लिखे, ते-ते पैतीसवा आलाप विषै जानने । स्नेह, निद्रा कौ पहिलै कहि लीजिये ।

बहुरि दूसरा उदाहरण नष्ट का ही कहिए है । इकसठिवा आलाप कैसा है ? अैसै पूछै, इहा भी इद्रिय कषाय विकथानि के जिन-जिन कोठानि के अक वा शून्य जोडे, सो इकसठि सख्या होइ, तिन-तिन कोठानि विषै प्राप्त प्रमाद पूर्ववत् कहे । स्नेहवान्-निद्रालु-स्पर्शन इद्रिय के वशीभूत-क्रोधी-अवनिपालकथालापी अैसा पूछ्या हूवा इकसठिवा आलाप हो है ।

भावार्थ – इद्रियपक्ति का प्रथम कोठा का एका अर कषायपक्ति का प्रथम कोठा की बिदी, विकथा का चौथा कोठा का साठि जोडे, इकसठि होइ । सो इनि कोठानि विषै जे-जे इद्रियादि लिखे है, ते इकसठिवा आलाप विषै जानने । अैसै ही अन्य आलाप का प्रश्न भए भी विधान करना ।

बहुरि उद्दिष्ट का उदाहरण कहिए है – स्नेहवान्-निद्रालु-स्पर्शन इद्रिय के वशीभूत-मानी-राष्ट्रकथालापी अैसा आलाप केथवा है ?

अैसा प्रश्न होतै स्नेह, निद्रा बिना जे-जे इद्रियादिक इस आलाप विषै कहे, ते तीनो पक्तिनि विषै जिस-जिस कोठे विषै ये लिखे होइ, सो ये इद्रियपक्ति का प्रथम कोठा, कषायपक्ति का दूसरा कोठा, विकथापक्ति का तीसरा कोठानि विषै ये आलाप लिखे है । सो इन कोठानि के एक, पाच, चालीस ये अक मिलाइ, छियालीस होइ है, सो पूछ्या हूआ आलाप छयालीसवा है ।

बहुरि दूसरा उदाहरण कहिए है – स्नेहवान-निद्रालु-चक्षु इदिय के वशीभूत लोभी-भक्तकथालापी ऐसा आलाप केथवा है ?

तहा इस आलाप विषै कहे इद्रियादिकनि के कोठे, तिनि विषै लिखे हुवे च्यारि, पद्रह, बीस ये अक जोडे गुणतालीस होइ, सो पूछ्या आलाप गुणतालीसवा है । ऐसै ही अन्य आलाप पूछे भी विधान करना ।

आगै द्वितीय प्रस्तार अपेक्षा नष्ट, उद्दिष्ट का गूढ यत्र कहै है –

इगिवितिचखचडवारं, खसोलरागट्ठदालचउसट्ठिं ।
संठविय पमपठाणे, णट्ठुद्दिट्ठं च जाण तिट्ठाणे ।।४४।।

एकद्वित्रिचतुःखचतुरष्टद्वादश खषोडशरागाष्टचत्वारिंशच्चतुःषष्टिम् ।
संस्थाप्य प्रमादस्थाने, नष्टोद्दिष्टे च जानीहि त्रिस्थाने ।।४४।।

टीका – प्रमादस्थानकनि विषै विकथा प्रमाद के च्यारि कोठानि विषै क्रम तै एक, दोय, तीन, च्यारि अकनि कौ स्थापि, तैसे ही कषाय प्रमाद के च्यारि कोठानि विषै क्रम तै बिंदी, आठ, बारह अकनि कौ स्थापि, तैसे ही इद्रिय प्रमादनि के पच कोठानि विषै क्रम तै बिंदी, सोलह, बत्तीस, अडतालीस, चौसठि अकनि कौ स्थापि, पूर्वोक्त प्रकार हेतु तै तिन तीनो स्थानकनि विषै स्थापे जे अक, तिनि विषै नष्ट अर समुद्दिष्ट कौ तू जानहु ।

भावार्थ – यहा भी पूर्वोक्त प्रकार तीन पक्ति का यन्त्र करना । तहा ऊपर की पक्ति विषै च्यारि कोठे करने, तहा क्रम तै स्त्री आदि त्रिकथा लिखनी अर एक, दोय, तीन, च्यारि, ए अक लिखने । बहुरि ताके नीचै पक्ति विषै च्यारि कोठे करने, तहा क्रम तै क्रोधादि कषाय लिखने अर बिंदी, च्यारि, आठ, बारा ए अक लिखने । बहुरि नीचै पक्ति विषै पाच कोठे करने, तहा क्रम तै स्पर्शनादि इद्रिय लिखने, अर बिदी, सोलह, बत्तीस, अडतालीस, चौसठि ए अक लिखने ।

स्त्री १	भक्त २	राष्ट्र ३	अवनि ४	
क्रोध ०	मान ४	माया ८	लोभ १२	
स्पर्शन ०	रसना १६	घ्राण ३२	चक्षु ४८	श्रोत्र ६४

असे यत्र करि पूर्वै जैसे विधान कह्या, तैसे इहा भी नष्ट, समुद्दिष्ट का ज्ञान करना ।

तहा नष्ट का उदाहरण – जैसे पद्रहवा आलाप कैसा है ?

असा प्रश्न होतै विकथा, कषाय, इद्रियनि के जिस-जिस कोठा के अक वा शून्य मिलाए, सो पद्रह सख्या होइ, तिस-तिस कोठा को प्राप्त विकथादिक जोडै, राष्ट्रकथालापी-लोभी-स्पर्शन इद्रिय के वशीभूत-निद्रालु-स्नेहवान असा तिस पद्रहवा आलाप कौं कहै ।

तथा दूसरा उदाहरण – तीसवा आलाप कैसा है ?

असा प्रश्न होतै विकथा, कषाय, इंद्रिय के जिस-जिस कोठा के अक जोडे सो तीस सख्या होइ, तिस-तिस कोठा कौं प्राप्त विकथादि प्रमाद जोडे, भक्तकथा-लापी-लोभी-रसना इद्रिय के वशीभूत-निद्रालु-स्नेहवान असा तिस तीसवा आलाप को कहै ।

अब उद्दिष्ट का उदाहरण कहिए है – स्त्रीकथालापी-मानी-घ्राण इद्रिय के वशीभूत-निद्रालु-स्नेहवान अैसा आलाप केथवां है ?

अैसा प्रश्न होतै इस आलाप विषै जो-जो विकथादि प्रमाद कह्या है, तीह-तीह प्रमाद का कोठा विषै जो-जो अक एक, च्यारि, बत्तीस, लिखे हैं, तिनकौ जोडे, सैतीस होइ, तातै सो आलाप सैतीसवा कहिए ।

बहुरि दूसरा उदाहरण अवनिपालकथालापी-लोभी-चक्षु इन्द्रिय के वशीभूत-निद्रालु-स्नेहवान असा आलाप कैथवा है ?

तहा इस आलाप विषै जे प्रमाद कहे, तिनके कोठानि विषै प्राप्त च्यारि, बारह, अडतालीस अक मिलाए, जो संख्या चौसठि होइ, सोई तिस आलाप कौ चौसठिवा कहै, असै ही अन्य आलाप पूछै भी विधान करना ।

अैसै मूल प्रमाद पाच, उत्तर प्रमाद पंद्रह, उत्तरोत्तर प्रमाद असी, इनका यथासभव सख्यादिक पाच प्रकारनि कौ निरूपण करि ।

अब और प्रमाद की सख्या का विशेष कौ जनावै है, सो कहै है । स्त्री की सो स्त्रीकथा, धनादिरूप अर्थकथा, खाने की सो भोजन कथा, राजानि की सो राज-कथा चोर की सो चोरकथा, वैर करणहारी सो वैरकथा, पराया पाखडादिरूप सो परपाखडकथा, देशादिक की सो देशकथा, कहानी इत्यादि भाषाकथा, गुण रोकनेरूप गुणबधकथा, देवी की सो देवीकथा, कठोररूप निष्ठुरकथा, दुष्टतारूप परपैशून्यकथा, कामादिरूप कदर्पकथा, देशकाल विषै विपरीत सो देशकालानुचितकथा, निर्लज्जता-दिरूप भडकथा, मूर्खतारूप मूर्खकथा, अपनी बढाईरूप आत्मप्रशसाकथा, पराई निंदा रूप परपरिवादकथा, पराई घृणारूप परजुगुप्साकथा, पर कौ पीडा देनेरूप परपीडा कथा, लडनैरूप कलहकथा, परिग्रह कार्यरूप परिग्रहकथा, खेती आदि का आरभरूप कृष्याद्यारभकथा, सगीत वादित्रादिरूप सगीतवादित्रादि कथा – असै विकथा पचीस भेदसयुक्त है ।

बहुरि सोलह कषाय अर नव नो कषाय भेद करि कषाय पचीस हैं। बहुरि स्पर्शन, रसन, घ्राण, चक्षु, श्रोत्र, मन नाम धारक इंद्रिय छह हैं। बहुरि स्त्यानगृद्धि, निद्रानिद्रा, प्रचलाप्रचला, निद्रा, प्रचला भेद करि निद्रा पाच है। बहुरि स्नेह, मोह भेद करि प्रणय दोय है। इनकौ परस्पर गुणें, पाचर्स अधिक सैंतीस हजार प्रमाण हो हैं (३७५००)। ए भी मिथ्यादृष्टि आदि प्रमत्तसंयत गुणस्थान पर्यंत प्रवर्ते हैं। जे बीस प्ररूपणा, तिनि विषै यथासंभव बंध का हेतुपणाकरि पूर्वोक्त संख्या आदि पाच प्रकार लीए जैनागम तै अविरुद्धपनै जोडने।

अब प्रमादनि के साढा सैंतीस हजार भेदनि विषै संख्या, दोय प्रकार प्रस्तार, तिन प्रस्तारनि की अपेक्षा अक्षसंचार, नष्ट, समुद्दिष्ट पूर्वोक्त विधान तै यथासंभव करना।

बहुरि गूढ यंत्र करने का विधान न कह्या, सो गूढ यंत्र कैसे होइ ?

तातै इहा भाषा विषै गूढ यंत्र करने का विधान कहिए है। जाकौ जानै, जाका चाहिए, ताका गूढ यंत्र कर लीजिये। तहा पहिलै प्रथम प्रस्तार की अपेक्षा कहिए है। जाका गूढ यंत्र करना होइ, तिस विवक्षित के जे मूलभेद जितने होइ, तितनी पंक्ति का यंत्र करना। तहा तिन मूल भेदनि विषै अंत का मूलभेद होइ, ताकी पंक्ति सबनि के ऊपरि करनी। तहा तिस मूल भेद के जे उत्तर भेद होहि, तितने कोठे करने। तिन कोठानि विषै तिस मूल भेद के जे उत्तर भेद होहि, ते क्रम तै लिखने। बहुरि तिनही प्रथमादि कोठानि विषै एक, दोय इत्यादि क्रम तै एक-एक बधता का अंक लिखना। बहुरि ताके नीचे जो अंत भेद तै पहला उपात मूल भेद होइ, ताकी पंक्ति करनी। तहा उपात मूल भेद के जेते उत्तर भेद होइ तिनके कोठे करने। तहा उपान्त मूल भेद के उत्तर भेदनि कौं क्रम तै लिखने। बहुरि तिनही कोठानि विषै प्रथम कोठा विषै बिंदी लिखनी। दूसरे कोठा विषै ऊपरि की पंक्ति का अंत का कोठा विषै जेते का अंक होइ, सो लिखना। बहुरि तृतीयादि कोठानि विषै दूसरा कोठा विषै जेते का अंक लिख्या, तितना-तितना ही बधाई-बधाई क्रम तै लिखने। बहुरि ताके नीचे-नीचे जे उपात तै पूर्व मूल भेद होइ, ताकौ आदि देकरि आदि के मूल भेद पर्यंत जे मूल भेद होइ, तिनकी पंक्ति करनी। तहा तिनके जेते-जेते उत्तर भेद होइ, तितने-तितने कोठे करने। बहुरि तिन कोठानि विषै अपना-मूल भेद के जे उत्तर भेद होइ, ते क्रम तै लिखने।

बहुरि तिन सर्व पक्तिनि के प्रथम कोठानि विषै तौ बिंदी लिखनी, बहुरि द्वितीय कोठा विषै अपनी पक्ति तै ऊपरि की सर्व पंक्ति के अत का कोठानि विषै जितने-जितने का अंक लिख्या होइ, तिनकौ जोडे जो प्रमाण होइ, तितने का अक लिखना । बहुरि तृतीयादि कोठानि विषै जेते का अक दूसरा कोठा विषै लिख्या होइ तितना-तितना ही क्रम तै बधाइ-बधाइ लिखना । असै विधान करना ।

अब द्वितीय प्रस्तार अपेक्षा कहिए है । जो विधान प्रथम प्रस्तार अपेक्षा लिख्या, सोई विधान द्वितीय प्रस्तार अपेक्षा जानना । विशेष इतना – इहा विवक्षित का जो प्रथम मूल भेद होइ, ताकी पंक्ति ऊपरि करनी । ताकै नीचै दूसरे मूल भेद की पंक्ति करनी । असै ही नीचे-नीचे अत के मूल भेद पर्यंत पक्ति करनी । बहुरि तहा जैसै अंत मूल भेद संबधी ऊपरि पक्ति तै लगाइ क्रम वर्णन कीया था, तैसै यहा प्रथम मूल भेद सबधी पंक्ति तै लगाइ क्रम तै विधान जानना । अन्य या प्रकार साडा सैतीस हजार प्रमाद भगनि का प्रथम प्रस्तार अपेक्षा गूड यत्र कह्या ।

तहा कोऊ नष्ट पूछै कि एथवा आलाप भग कौन ?

तहा जिस प्रमाण का आलाप पूछ्या, सो प्रमाण सर्व पक्तिनि के जिस-जिस कोठानि के अक वा बिंदी मिलाए होइ, तिस-तिस कोठा विषै जे-जे उत्तर भेद लिखे, तिनरूप सो पूछ्या हूवा आलाप जानना ।

बहुरि कोई उद्दिष्ट पूछै कि अमुक आलाप केथवा है ?

तौ तहा पूछे हुए आलाप विषै जे-जे उत्तर भेद ग्रहे हैं, तिन-तिन उत्तर भेदनि के कोठानि विषै जे-जे अक वा बिंदी लिखी है, तिनकौ जोडै जो प्रमाण होइ, तेथवा सो पूछ्या हूवा आलाप जानना । अब इस विधान तै साडा सैतीस हजार प्रमाद भगनि का प्रथम प्रस्तार अपेक्षा गूढ यत्र लिखिए है ।

इहा प्रमाद के मूल भेद पाच है, तातै पाच पक्ति करनी । तहा ऊपरि प्रणय पक्ति विषै दोय कोठे करि, तहा स्नेह मोह लिखे अर एक दोय का अक लिखे, ताके नीचै निद्रा पक्ति के पाच कोठे करि तहा स्त्यानगृद्धि आदि लिखे अर प्रथम कोठा विषै बिंदी लिखी । द्वितीय कोठा विषै ऊपरि की पंक्ति के अत के कोठे में अंक दोय था, सो लिख्या । अर तृतीयादि कोठे विषै तितने-तितने ही बधाइ च्यारि, छह, आठ लिखे । बहुरि ताके नीचे इंद्रिय पक्ति के छह कोठे करि, तहां स्पर्शनादि लिखे ।

अर प्रथम कोठा विषै बिंदी, द्वितीय कोठा विषै ऊपरि की दोय पक्ति के अत का कोठा के जोडे दश होइ सो, अर तृतीयादि कोठानि विषै सोई दश-दश बधाइ लिखे है । अर ताके नीचै कषाय पक्ति विषै पचीस कोठे करि, तहा अनतानुबंधी क्रोधादि लिखे । अर प्रथम कोठा विषै बिंदी, दूसरा कोठा विषै ऊपरि की तीन पक्ति का अत के कोठानि का जोड साठि लिखि, तृतीयादि कोठानि विषै तितने-तितने बधाइ लिखे । बहुरि ताके नीचै विकथा पक्ति विषै पचीस कोठा करि तहा स्त्रीकथादि लिखे । अर प्रथम कोठा विषै बिंदी, द्वितीय कोठा विषै ऊपरि की च्यारि पक्तिनि के अत कोठानि का जोड पद्रह सै, तृतीयादि कोठानि विषै तितने-तितने ही बधाइ लिखे हैं । असै प्रथम प्रस्तार अपेक्षा यत्र भया । (देखिए पृष्ठ १२५)

बहुरि साडा सैंतीस हजार प्रमाद भगनि का द्वितीय प्रस्तार अपेक्षा गूढ यत्र लिखिए हैं ।

तहा ऊपरि विकथा पक्ति करी, तहा पचीस कोठे करि, तहा स्त्रीकथादि लिखे । अर एक, दोय आदि एक-एक बधता अक लिखे, ताके नीचै-नीचै कषाय पक्ति अर इद्रिय पक्ति अर निद्रा पक्ति अर प्रणय पक्ति विषै क्रम तै पचीस, पचीस, छह, पाच, दोय कोठे करि तहा अपने-अपने उत्तर भेद लिखे । बहुरि इन सब पक्तिनि के प्रथम कोठा विषै बिदी लिखी । अर दूसरा कोठा विषै अपनी-अपनी पक्ति तै ऊपरि क्रम तै एक, दोय, तीन, च्यारि पक्ति, तिनके अत कोठा सबधी अकनि कौं जोडे, पचीस, छह सै पचीस, साडा सैतीस सै, अठारह हजार सात सै पचास लिखे । बहुरि तृतीयादि कोठानि विषै जेते दूसरे कोठा विषै लिखे, तितने-तितने बधाइ, क्रम तैं अत कोठा पर्यंत लिखे है । असै द्वितीय प्रस्तार अपेक्षा यत्र जानना । (सोही यत्र का कोठा की विधि वा अक्षर अकादिक कही विधि मूजिब क्रम तै यत्र रचना विधि लिखि है ।)[१] इसप्रकार साढा सैतीस हजार प्रमाद का गूढ यत्र कीए । (देखिए पृष्ठ १२६)

तहा प्रथम प्रस्तार अपेक्षा कोऊ पूछै कि इन भगनि विषै पैतीस हजारवा भग कौन है ?

तहा प्रणय पक्ति का दूसरा कोठा, निद्रा पक्ति का पाचवा कोठा, इद्रिय पक्ति का दूसरा कोठा, कषाय पंक्ति का नवमा कोठा, विकथा पक्ति का चौवीसवा कोठा,

---

१ यह वाक्य छह हस्तलिखित प्रतियो मे नहीं मिला ।

०	स्त्री	अनतानुबधी क्रोध ०	स्पर्शन ०	सस्त्यानग्रद्धि ०	१ स्नेह
१५००	अर्थ	अनतानुबधी मान ६०	रसन १०	निद्रानिद्रा २	२ मोह
३०००	भोजन	अनतानुबधी माया १२०	घ्राण २०	प्रचलाप्रचला ४	
४५००	राजा	अनतानुबधी लोभ १८०	चक्षु ३०	निद्रा ६	
६०००	चोर	अप्रत्याख्यान क्रोध २४०	श्रोत्र ४०	प्रचला ८	
७५००	वैर	अप्रत्याख्यान मान ३००	मन ४०		
९०००	परपाखड	अप्रत्याख्यान माया ३६०			
१०५००	देश	अप्रत्याख्यान लोभ ४२०			
१२०००	भाषा	प्रत्याख्यान क्रोध ४८०			
१३५००	गुणवध	प्रत्याख्यान मान ५४०			
१५०००	देवी	प्रत्याख्यान माया ६००			
१६५००	निष्ठुर	प्रत्याख्यान लोभ ६६०			
१८०००	परपैशून्य	सज्वलन क्रोध ७२०			
१९५००	कदर्प	सज्वलन मान ७८०			
२१०००	देशकाला-नुचित	सज्वलन माया ८४०			
२२५००	मड	सज्वलन लोभ ९००			
२४०००	मूर्ख	हास्य ९६०			
२५५००	आत्मप्रशसा	रति १०२०			
२७०००	परपरिवाद	अरति १०८०			
२८५००	परजुगुप्सा	शोक ११४०			
३००००	परपीडा	भय १२००			
३१५००	कलह	जुगुप्सा १२६०			
३३०००	परिग्रह	पुरुष १३२०			
३४५००	कृष्याद्यारभ	स्त्री १३८०			
३६०००	सगीतवाद्य	नपुसक १४४०			

सर्व विधान पूर्वोक्त जानना, असै गूढ यंत्र करना। तहा प्रमाद के साडे सैतीस हजार भेद, तिनिका यत्र लिखिए।

१	स्त्री	अनतानुवधी क्रोध ०	स्पर्शन ०	सस्त्यानगृद्धि ०	० स्नेह
२	अर्थ	अनतानुवधी मान २५	रसन ६२५	निद्रानिद्रा ३७५०	१८७५० मोह
३	भोजन	अनतानुवधी माया ५०	घ्राण १२५०	प्रचलाप्रचला ७५००	
४	राजा	अनतानुवधी लोभ ७५	चक्षु १८७५	निद्रा ११२५०	
५	चोर	अप्रत्याख्यान क्रोध १००	श्रोत्र २५००	प्रचला १५०००	
६	वैर	अप्रत्याख्यान मान १२५	मन ३१२५		
७	परपाखड	अप्रत्याख्यान माया १५०			
८	देश	अप्रत्याख्यान लोभ १७५			
९	भाषा	प्रत्याख्यान क्रोध २००			
१०	गुणवध	प्रत्याख्यान मान २२५			
११	देवी	प्रत्याख्यान माया २५०			
१२	निष्ठुर	प्रत्याख्यान लोभ २७५			
१३	परपैशून्य	सज्वलन क्रोध ३००			
१४	कदर्प	सज्वलन मान ३२५			
१५	देशकाला- नुचित	सज्वलन माया ३५०			
१६	मड	सज्वलन लोभ ३७५			
१७	मूर्ख	हास्य ४००			
१८	आत्मप्रशसा	रति ४२५			
१९	परपरिवाद	अरति ४५०			
२०	परजुगुप्सा	शोक ४७५			
२१	परपीडा	भय ५००			
२२	कलह	जुगुप्सा ५२५			
२३	परिग्रह	पुरुष ५५०			
२४	कृष्याद्यारभ	स्त्री ५७५			
२५	सगीतवाद्य	नपुसक ६००			

इनि कोठानि के अक जोडे पैंतीस हजार होइ। तातै इनि कोठानि विषै तिष्ठतै उत्तर भेदरूप मोही-प्रचलायुक्त-रसना इद्रिय के वशीभूत-प्रत्याख्यान क्रोधी-कृष्याद्यारभकथालापी असा आलाप पैंतीस हजारवा जानना। याकौ दृढ करणे कौं 'सगमाणेहिं विभत्ते' इत्यादि पूर्वोक्त सूत्र करि भी याकौ साधिए है। पूछनहारेने पैंतीस हजारवां आलाप पूछ्या, तहा प्रथम प्रस्तार अपेक्षा पहलै प्रणय का प्रमाण दोय, ताकौ भाग दीए, साढे सतरा हजार पाए, अवशेष किछू रह्या नाही। तातै इहा अंत भेद स्नेह ग्रहण करना। बहुरि लब्धराशि विषै किछू अवशेष न रह्या, तातै एक न जोडना। बहुरि तिस लब्धराशि कौ याके नीचै निद्राभेद पाच, ताका भाग दीए, पैंतीस सै पाए, इहा भी किछू अवशेष न रह्या, तातै अत भेद प्रचला का ग्रहण करना। इहा भी लब्धराशि विषै एक न जोडि, तिस लब्धराशि कौ छह इद्रिय का भाग दीए पाच सै तियासी पाए, अवशेष दोय रहै, सो इहा दूसरा अक्ष रसना इद्रिय का ग्रहण करना। बहुरि लब्धराशि विषै इहा एक जोडिए, तब पाच सै चौरासी होइ, तिनकौ कषाय पचीस का भाग दीए, तेवीस पाए, अवशेष नव रहै सो इहा नवमां कषाय प्रत्याख्यान क्रोध का ग्रहण करना। बहुरि लब्धराशि तेवीस विषैं एक जोडिए, तब चौवीस होइ, ताकौ कषाय भेद पचीस का भाग दीए, शून्य पावै, अवशेष चौवीस रहै, सो इहा चौवीसवा विकथा भेद कृष्याद्यारभ का ग्रहण करना। असे पूछ्या हुवा पैंतीस हजारवा आलाप मोही-प्रचलायुक्त-रसना इद्रिय के वशीभूत-प्रत्याख्यान क्रोधी-कृष्याद्यारभकथालापी असा भगरूप हो है। असै ही अन्य नष्ट का साधन करना। असे नष्ट का उदाहरण कह्या।

अब उद्दिष्ट का कहिए है – कोऊ पूछै कि स्नेही-निद्रायुक्त-मन के वशीभूत अनतानुबन्धी क्रोधयुक्त-मूर्खकथालापी असा आलाप केथवा है ?

तहा उत्तर भेद जिस-जिस कोठानि विषै लिखे है, तिस-तिस कोठानि के अक एक, छह, पचास, बिदी, चौवीस हजार मिलाए, चौवीस हजार सत्तावनवा भेद है, असा कहिए। बहुरि याही कू 'संठाविदूणरूवं' इत्यादि सूत्रोक्त उद्दिष्ट ल्यावने का विधान साधिए है। प्रथम एकरूप स्थापि, ताकौ प्रथम प्रस्तार अपेक्षा पहिलै पचीस विकथानि करि गुणिए। अर इहा आलाप विषै मूर्खकथा का ग्रहण है, तातै याके परै आठ अनकित स्थान है। तिनकौ घटाए, तब सतरह होइ। बहुरि इनिकौं पचीस कषायनि करि गुणिए अर यहा प्रथम कषाय का ग्रहण है, तातै याके परै

चौवीस अनकित स्थान घटाइए, तब च्यारि सै एक होड । वहुरि इनिकौ छह इद्रिय करि गुरिए अर इहा अतभेद का ग्रहण है, तातै अनकित न घटाइए, तब चौवीस सै छह होइ । बहुरि इनको पाच निद्रा करि गुरिए अर इहा चौथी निद्रा का ग्रहण है, तातै याके परै एक अनकित स्थान है, ताकौ घटाइए, तब वारह हजार गुणतीस होइ । याकौं दोय प्रणय करि गुणिए अर इहा प्रथम भेद का ग्रहण है, तातै याके परै एक अनकित स्थान घटाइए, तब चौवीस हजार सत्तावन होड, ऐसै स्नेहवान-निद्रालु-मन के वशीभूत-अनतानुवधीक्रोधयुक्त-मूर्खकथालापी ऐसा पूछ्या हुवा आलाप चौवीस हजार सत्तावनवा जानना । याही प्रकार अन्य उद्दिष्ट साधने । बहुरि जैसै प्रथम प्रस्तार अपेक्षा विधान कह्या; तैसै ही द्वितीय प्रस्तार अपेक्षा यथा-संभव नष्ट, उद्दिष्ट ल्यावने का विधान जानना । ऐसै साडा सैतीस हजार प्रमाद भगनि के प्रकार जानने ।

वहुरि याही प्रकार अठारह हजार शील भेद, चौरासी लाख उत्तर गुण, मतिज्ञान के भेद वा पाखडनि के भेद वा जीवाधिकरण के भेद इत्यादिकनि विषै जहा अक्षसचार करि भेदनि की पलटनी होड, तहा सख्यादिक पाच प्रकार जानने । विशेष इतना पूर्वं प्रमादनि की अपेक्षा वर्णन कीया है । इहा जाका विवक्षित वर्णन होइ, ताको अपेक्षा सर्वविधान करना । तहा जैसै प्रमादनि के विकथादि मूलभेद कहे है, तैसै विवक्षित के जेते मूलभेद होइ, ते कहने । वहुरि जैसै प्रमाद के मूल भेदनि के स्त्रीकथादिक उत्तरभेद कहै है, तैसै विवक्षित के मूलभेदनि के जे उत्तर भेद हो है, ते कहने । वहुरि जैसै प्रमादनि के आदि-अतादिरूप मूलभेद ग्रहि विधान कह्या है, तैसै विवक्षित के जे आदि-अतादि मूलभेद होइ, तिनकौ ग्रहि विधान करना । बहुरि जैसै प्रमाद के मूलभेद-उत्तरभेद का जेता प्रमाण था, तितना ग्रहण कीया । तैसै विवक्षित के मूल भेद वा उत्तर भेदनि का जेता-जेता प्रमाण होइ, तितना ग्रहण करना । इत्यादि सभवते विशेप जानि, सख्या अर दोय प्रकार प्रस्तार अर तिन प्रस्तारनि की अपेक्षा अक्षसंचार अर नष्ट अर समुद्दिष्ट ए पाच प्रकार हैं, ते यथा-सभव साधन करने ।

तहा उदाहरण – तत्त्वार्थसूत्र का षष्ठम अध्याय विषै जीवाधिकरण के वर्णन स्वरूप ऐसा सूत्र है –

"आद्यं संरभसमारंभारभयोगकृतकारितानुमतकषायविशेषैस्त्रिस्त्रिस्त्रिश्चतुश्चैकशः" ।

इस सूत्र विषै सरंभ, समारंभ, आरंभ – ए तीन, अर मन, वचन, काय – ए योग तीन, अर कृत, कारित, अनुमोदित – ए तीन, अर क्रोध, मान, माया, लोभ ए कषाय च्यारि, इनके एक-एक मूल भेद के एक-एक उत्तर भेद कौं होतैं अन्य सर्व मूल भेदनि के एक-एक उत्तर भेद संभवै है। तातैं क्रम तैं ग्रहे, इनका परस्पर गुणने तैं एक सौ आठ भेद हो है, सो यहु संख्या जानना।

बहुरि पहला-पहला प्रमाण का विरलन करि ताके एक-एक के ऊपरी आगला प्रमाण पिंड कौं स्थापैं, प्रथम प्रस्तार हो है। बहुरि पहला-पहला प्रमाण पिंड की संख्या कौं आगला मूल भेद के उत्तर भेद प्रमाण स्थानकनि विषै स्थापि, तिनके ऊपरि तिनि उत्तर भेदनि कौं स्थापैं, द्वितीय प्रस्तार हो है। (देखिए पृष्ठ १३० पर)

बहुरि प्रथम प्रस्तार अपेक्षा अंत का मूल भेद तैं लगाय आदि भेद पर्यन्त अर द्वितीय प्रस्तार अपेक्षा आदि मूल भेद तैं लगाय अंत भेद पर्यन्त क्रम तैं उत्तर भेदनि का अंत पर्यन्त जाइ-जाइ बाहुडना का अनुक्रम लीए उत्तर भेदनि के पलटनेरूप अक्ष संचार जानना। **'बहुरि संगमाणेहिं विभत्ते'** इत्यादि पूर्वोक्त सूत्र करि नष्ट का विधान करिए।

तहां उदाहरण – प्रथम प्रस्तार अपेक्षा कोउ पूछै कि पचासवां आलाप कौन है ?

तहां पचास कौं पहलैं च्यारि कषाय का भाग दीए, बारह पाए, अर अवशेष दोय रहै, तातैं दूसरा कषाय मान ग्रहना। बहुरि अवशेष बारह विषै एक जोडि कृतादि तीन का भाग दीए, च्यारि पाए, अवशेष एक रह्या, तातैं पहला भेद कृत जानना। बहुरि पाए च्यारि विषै एक जोडि, योग तीन का भाग दीए, एक पाया, अवशेष दोय, सो दूसरा वचन योग ग्रहना। बहुरि पाया एक विषै एक जोडैं सरंभादि तीन भाग दीए किछू भी न पाया, अवशेष दोय, सो दूसरा भेद समारंभ ग्रहना। ऐसैं पूछ्या हुवा पचासवां आलाप मान कषायकृत वचन समारंभ ऐसा भंग रूप हो है। ऐसैं ही अन्य नष्ट साधने।

बहुरि **'संठाविदूणरूवं'** इत्यादि पूर्वोक्त सूत्र करि उद्दिष्ट का विधान करिए। तहां उदाहरण।

प्रश्न – जो माया कषाय कारित मन आरंभ ऐसा आलाप केथवां है ?

यह जीवाधिकरण का प्रथम प्रस्तार है। यहा सरभादिक की प्रथम अक्षर की सहनानी है। ऊपरि च्यारि कषायनि की सहनानी है।

४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४
क्र	का	म	क्र	का	म	क्र	का	म	क्र	का	म	क्र	का	म	क्र	रा	म	क्र	का	म	क्र	रा	र	क्र	का	प
म	म	म	व	व	व	का	का	का	म	म	र	र	व	व	रा	का	का	म	र	म	व	र	व	रा	का	रा
म	म	म	म	म	म	म	र	म	म	म	म	म	म	म	म	र	म	घा	घा	घा	घा	घा	घा	घा	घा	घा

बहुरि यह द्वितीय प्रस्तार है। इहा क्रोधादि कषायनि विषै क्रम तै सत्ताईस-सत्ताईस भग कहने।

क्रोध	मान	माया	लोभ
१	१	१	१
२७	२७	२७	२७

तहा प्रथम एक स्थापि प्रथम प्रस्तार अपेक्षा उपरि तै संरभादि तीन करि गुणी, इहा अतस्थान का ग्रहण है, तातै अनंकित कौ न घटाए, तीन ही भए। बहुरि इनकौ तीन योग करि गुणि, इहा वचन, काय ए दोय अनकित घटाए सात भए। बहुरि इनकौ कृतादि तीन करि गुणि, अनुमोदन अनकित स्थान घटाए, वीस हो है। बहुरि इनकौ च्यारि कषाय करि गुणिए, एक लोभ अनकित स्थान घटाए गुन्यासी हो है। अैसा पूछ्या हुवा आलाप गुण्यासीवा है, अैसे ही अन्य उद्दिष्ट साधने। बहुरि इस ही प्रकार तै द्वितीय प्रस्तार अपेक्षा भी नष्ट-उद्दिष्ट समुद्दिष्ट साधने। बहुरि पूर्वै जो विधान कह्या है, तातै याके गूढयंत्र अैसे करने।

प्रथम प्रस्तार अपेक्षा जीवाधिकरण का गूढयत्र।

क्रोध १	मान २	माया ३	लोभ ४
कृत ०	कारित ४	अनुमोदित ८	
मन ०	वचन १२	काय २४	
सरभ ०	समारभ ३६	आरभ ७२	

द्वितीय प्रस्तार अपेक्षा जीवाधिकरण का गूढयत्र।

सरभ १	समारभ २	आरभ ३	
मन ०	वचन ३	काय ६	
कृत ०	कारित ९	अनुमोदित १८	
क्रोध ०	मान २७	माया ५४	लोभ ८१

तहा नष्ट पूछै तौ जैसै च्यारो पंक्तिनि के जिस-जिस कोठा के अक मिलाए पूछ्या हुवा प्रमाण मिलै, तिस-तिस कोठा विषै स्थित भेदरूप आलाप कहना। जैसे साठिवा आलाप पूछै तौ च्यारि, आठ, बारह, छत्तीस अक जोडे साठि अक होइ।

तातै इन अक सयुक्त कोठानि के भेद ग्रहै, लोभ अनुमोदित वचन समारभ अैसा आलाप कहिए ।

बहुरि उद्दिष्ट पूछै तौ, तिस आलाप विषै कहे भेद सयुक्त कोठेनि के अक मिलाए, जो प्रमाण होइ, तेथवा आलाप कहना । जैसै पूछ्या कि मान कृत काय आरभ केथवा आलाप है ? तहा इस आलाप विषै कहे भेद सयुक्त कोठेनि के दोय, बिदी, चौवीस, वहत्तरि ए अक जोडि, अठ्याणवैवा आलाप है, अैसा कहना । याही प्रकार प्रथम प्रस्तार अपेक्षा अन्य नष्ट-समुद्दिष्ट वा दूसरा प्रस्तार अपेक्षा ते नष्ट-समुद्दिष्ट साधन करने । अैसै ही शील भेदादि विषै यथासभव साधन करना । या प्रकार प्रमत्तगुणस्थान विषै प्रमाद भग कहने का प्रसग पाइ सख्यादि पाच प्रकारनि का वर्णन करि प्रमत्तगुणस्थान का वर्णन समाप्त किया ।

आगै अप्रमत्त गुणस्थान के स्वरूप कौं प्ररूपै है –

संजलणणोकसायाणुदयो मंदो जदा तदा होदि ।
अपमत्तगुणो तेण य, अपमत्तो संजदो होदि ।।४५।।

संज्वलननोकषायाणामुदयो मंदो यदा तदा भवति ।
अप्रमत्तगुणस्तेन च, अप्रमत्तः संयतो भवति ।।४५।।

टीका – यदा कहिए जिस काल विषै सज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ च्यारि कषाय अर हास्यादि नव नोकषाय इनका यथासभव उदय कहिए फल देनेरूप परिणमन, सो मद होइ, प्रमाद उपजावने की शक्ति करि रहित होइ, तदा कहिए तीहि काल विषै अतर्मुहूर्त पर्यत जीव कै अप्रमत्तगुण कहिए अप्रमत्तगुणस्थान हो है, तीहि कारणकरि तिस अप्रमत्त गुणस्थान सयुक्त सयत कहिए सकलसयमी, सो अप्रमत्तसयत है । चकार करि आगै कहिए है जे गुण, तिनकरि सयुक्त है ।

आगै अप्रमत्त सयत के दोय भेद हैं, स्वस्थान अप्रमत्त, सातिशय अप्रमत्त । तहा जो श्रेणी चढने कौं सन्मुख नाही भया, सो स्वस्थान अप्रमत्त कहिए । बहुरि जो श्रेणी चढने कौं सन्मुख भया, सो सातिशय अप्रमत्त कहिए ।

तहा स्वस्थान अप्रमत्त सयत के स्वरूप कौं निरूपै है –

णट्ठासेसपमादो, वयगुणसीलोलिमंडिओ णाणी ।
अणुवसमओ अखवओ, झाणणिलीणो हु अपमत्तो ॥ ४६ ॥[1]

नष्टाशेषप्रमादो, व्रतगुणशीलावलिमंडितो ज्ञानी ।
अनुपशमकः अक्षपको, ध्याननिलीनो हि अप्रमत्तः ॥ ४६ ॥

टीका – जो जीव नष्ट भए है समस्त प्रमाद जाके असा होइ, बहुरि व्रत, गुण, शील इनकी आवली - पंक्ति, तिनकरि मंडित होइ – आभूषित होइ, बहुरि सम्यग्ज्ञान उपयोग करि संयुक्त होइ, बहुरि धर्मध्यान विषै लीन है मन जाका असा होइ, असा अप्रमत्त संयमी यावत् उपशम श्रेणी वा क्षपक श्रेणी के सन्मुख चढने कौं न प्रवर्तै, तावत् सो जीव प्रकट स्वस्थान अप्रमत्त है, असा कहिए । इहां ज्ञानी ऐसा विशेषण कह्या है, सो जैसैं सम्यग्दर्शन-सम्यक्चारित्र मोक्ष के कारण है, तैसैं सम्यक्ज्ञान कैं भी मोक्ष का कारणपना कौं सूचै है ।

भावार्थ – कोऊ जानेगा कि चतुर्थ गुणस्थान विषै सम्यक्त्व का वर्णन कीया, पीछैं चारित्र का कीया, सो ए दोय ही मोक्षमार्ग है, तातैं ज्ञानी असा विशेषण कहि सम्यग्ज्ञान भी इनि की साथि ही मोक्ष का कारण है असा अभिप्राय दिखाया है ।

आगैं सातिशय अप्रमत्तसंयत के स्वरूप कौं कहै है –

इगवीसमोहखवणुवसमणणिमित्ताणि तिकरणाणि तहिं ।
पढमं अधापवत्तं, करणं तु करेदि अपमत्तो ॥ ४७ ॥

एकविंशतिमोहक्षपणोपशमननिमित्तानि त्रिकरणानि तेषु ।
प्रथममधःप्रवृत्तं, करणं तु करोति अप्रमत्तः ॥ ४७ ॥

टीका – इहां विशेष कथन है, सो कैसैं है ? सो कहिए है – जो जीव समय-समय प्रति अनंतगुणी विशुद्धता करि वर्धमान होइ, मंदकषाय होने का नाम विशुद्धता है, सो प्रथम समय की विशुद्धता तैं दूसरे समय की विशुद्धता अनंतगुणी, तातैं तीसरे समय की अनन्त गुणी, असैं समय-समय विशुद्धता जाकै वधती होइ, असा जो

१ षट्खंडागम – धवला पुस्तक १, पृष्ठ १८०, गाथा ११५

वेदक सम्यग्दृष्टि अप्रमत्तसंयत गुणस्थानवर्ती जीव, सो प्रथम ही अनतानुबंधी के चतुष्क कौ अध.करणादि तीन करणरूप पहिलें करि विसयोजन करै है ।

विसयोजन कहा करै है ?

अन्य प्रकृतिरूप परिणमावनेरूप जो सक्रमण, ताका विधान करि इस अनतानुबन्धी के चतुष्क के जे कर्म परमाणु, तिनकौ बारह कषाय अर नव नोकषायरूप परिणमावै है ।

बहुरि ताके अनतरि अतर्मुहूर्त्तकाल ताईं विश्राम करि जैसा का तैसा रहि, बहुरि तीन करण पहिले करि, दर्शन मोह की तीन प्रकृति, तिन कौ उपशमाय, द्वितीयोपशम सम्यग्दृष्टि हो है ।

अथवा तीनकरण पहिलें करि, तीन दर्शनमोह की प्रकृतिनि कौं खिपाइ, क्षायिक सम्यग्दृष्टि हो है ।

बहुरि ताके अनतर अतर्मुहूर्त काल ताईं अप्रमत्त तै प्रमत्त विषै प्रमत्त तै अप्रमत्त विषै हजाराबार गमनागमन करि पलटनि करै है । बहुरि ताके अनतर समय-समय प्रति अनतगुणी विशुद्धता की वृद्धि करि वर्धमान होत सता इकईस चारित्र मोह की प्रकृतिनि के उपशमावने कौ उद्यमवत हो है । अथवा इकईस चारित्र मोह की प्रकृति क्षपावने कौ क्षायिक सम्यग्दृष्टि ही उद्यमवत हो है ।

भावार्थ – उपशम श्रेणी कौ क्षायिक सम्यग्दृष्टि वा द्वितीयोपशम सम्यग्दृष्टि दोऊ चढै अर क्षपक श्रेणी कौ क्षायिक सम्यग्दृष्टि ही चढने कौ समर्थ है । उपशम सम्यग्दृष्टि क्षपक श्रेणी कौं नाही चढै है । सो यहु असा सातिशय अप्रमत्तसयत, सो अनतानुबधी चतुष्क बिना इकईस प्रकृतिरूप, तिस चारित्रमोह कौ उपशमावने वा क्षय करने कौ कारणभूत असै जे तीन करण के परिणाम, तिन विषै प्रथम अध - प्रवृत्ताकरण कौं करै है, असा अर्थ जानना ।

आगै अध प्रवृत्तकरण का निरुक्ति करि सिद्ध भया असा लक्षण कौ कहै हैं –

जह्मा उवरिमभावा, हेट्ठिमभावेहिं सरिसगा होंति ।
तह्मा पढमं करणं, अधापवत्तो त्ति णिद्दिट्ठं ॥४८॥

यस्मादुपरितनभावा, अधस्तनभावैः सदृशका भवंति ।
तस्मात्प्रथमं करणं, अधःप्रवृत्तमिति निर्दिष्टम् ।।४८।।

टोका – जा कारण तै जिस जीव का ऊपरि-ऊपरि के समय सबधी परिणामनि करि सहित, अन्य जीव के नीचे-नीचे के समय सबधी परिणाम सदृश - समान हो है, ता कारण तै सो प्रथम करण अध करण है – अैसा **णिद्दिट्ठं** कहिए परमागम विषै प्रतिपादन कीया है ।

भावार्थ – तीनो करणनि के नाम नाना जीवनि के परिणामनि की अपेक्षा हैं । तहा जैसी विशुद्धता वा सख्या लीए किसी जीव के परिणाम ऊपरि के समय सबधी होइ, तैसी विशुद्धता वा सख्या लीए किसी अन्य जीव के परिणाम अधस्तन समय सबधी भी जिस करण विषै होइ, सो अध प्रवृत्त करण है । **अधःप्रवृत्त कहिए नीचले समय संबंधी परिणामनि की समानता कौं प्रवर्तै अैसै है करण कहिए परिणाम जा विषै, सो अधःप्रवृत्तकरण है ।** इहा करण प्रारभ भए पीछै घने-घने समय व्यतीत भए जे परिणाम होहि, ते ऊपरि ऊपरि समय सबधी जानने । बहुरि थोरे-थोरे समय व्यतीत भए जे परिणाम होहि, ते अधस्तन-अधस्तन समय सबधी जानने । सो नाना जीवनि कै इनकी समानता भी होइ ।

ताका उदाहरण - जैसै दोय जीव कै एकै कालि अध प्रवृत्ताकरण का प्रारंभ करे, तहा एक जीव कै द्वितीयादि घने समय व्यतीत भये, जैसै सख्या वा विशुद्धता लीये परिणाम भये, तैसै सख्या वा विशुद्धता लीये द्वितीय जीव कै प्रथम समय विषै भी होइ । याही प्रकार अन्य भी ऊपरि नीचै के समय सबधी परिणामनि की समानता इस करण विषै जानि याका नाम अध प्रवृत्ताकरण निरूपण कीया है ।

आगै अध:प्रवृत्ताकरण के काल का प्रमाण कौ चय का निर्देश के अर्थि कहै है –

अंतोमुहुत्तमेत्तो, तक्कालो होदि तत्थ परिणामा ।
लोगाणमसंखमिदा, उवरुवरिं सरिसवड्ढिगया ।।४९।।

अंतर्मुहूर्तमात्रस्तत्कालो भवति तत्र परिणामाः ।
लोकानामसंख्यमिता, उपर्युपरि सदृशवृद्धिगताः ।।४९।।

टीका – तीनौ करणनि विषै स्तोक अतर्मुहूर्त प्रमाण अनिवृत्तिकरण का काल है। यातै संख्यातगुणा अपूर्वकरण का काल है। यातै संख्यातगुणा इस अधःप्रवृत्तकरण का काल है, सो भी अतर्मुहूर्त मात्र ही है। जातै अतर्मुहूर्त के भेद बहुत हैं। बहुरि तीह अधःप्रवृत्तकरण के काल विषै अतीत, अनागत, वर्तमान त्रिकालवर्ती नाना जीव सबधी विशुद्धतारूप इस करण के सर्व परिणाम असंख्यात लोक प्रमाण हैं। लोक के प्रदेशनि का प्रमाण तै असंख्यात गुणे हैं। बहुरि तिनि परिणामनि विषै तिस अधःप्रवृत्तकरण का काल प्रथम समय सबधी जेते परिणाम हैं, तिन तै लगाय द्वितीयादि समयनि विषै ऊपरि-ऊपरि अत समय पर्यन्त समान वृद्धि करि वर्धमान हैं। प्रथम समय सबधी परिणाम तै द्वितीय समय संबधी परिणाम जितने बधती हैं, तितने ही द्वितीय समय सबधी परिणामनि तै तृतीय समय सबधी परिणाम बधती हैं। इस क्रम तैं ऊपरि-ऊपरि अत समय पर्यंत सदृश वृद्धि कौ प्राप्त जानने। सो जहा समान वृद्धिहानि का अनुक्रम स्थानकनि विषै होइ, तहा श्रेणी व्यवहाररूप गणित सभवै है, तातै इहा श्रेणी व्यवहार करि वर्णन करिए है।

तहा प्रथम सज्ञा कहिए है, विवक्षित सर्व स्थानक सबधी सर्व द्रव्य जोडै जो प्रमाण होइ, सो सर्वधन कहिए वा पदधन कहिए। बहुरि स्थानकनि का जो प्रमाण, ताकौ पद कहिए वा गच्छ कहिए। बहुरि स्थान-स्थान प्रति जितना-जितना बधै, ताकौ चय कहिए वा उत्तर कहिए वा विशेष कहिए। बहुरि आदि स्थान विषै जो प्रमाण, ताकौं मुख कहिए वा आदि कहिए वा प्रथम कहिए। बहुरि अतस्थान विषै जो द्रव्य का प्रमाण होइ, ताकौ अतधन कहिए वा भूमि कहिए। बहुरि सर्व स्थानकनि के वीचि जो स्थान, ताका द्रव्य के प्रमाण कौं मध्यधन कहिए। जहा स्थानकनि का प्रमाण सम होइ, तहा बीचि के दोय स्थानकनि का द्रव्य जोडि आधा कीए जो प्रमाण होइ, ताकौ मध्यधन कहिए। बहुरि जेता मुख का प्रमाण होइ, तितना-तितना सर्व स्थानकनि का ग्रहण करि जोडै जो प्रमाण होइ, सो आदिधन कहिए। बहुरि सर्व स्थानकनि विषै जे-जे चय बधे, तिन सर्व चयनि कौ जोडै जो प्रमाण होइ, ताकौ उत्तरधन कहिए वा चयधन कहिए। बहुरि असै आदिधन, उत्तरधन मिलै सर्वधन हो है। अब इनके प्रमाण जानने के अर्थि करण सूत्र कहिए है।

"मुहभूमिजोगदले पदगुणिदे पदधनं होदि" इस सूत्र करि मुख आदिस्थान अर भूमि अतस्थान, इनकौ जोडि, ताका आधा करि, ताकौ गच्छकरि गुणै, पदधन कहिए सर्वधन हो है।

बहुरि 'आदि अंते सुद्धे वट्टिहदे रूवसंजुदे ठाणे।' इस सूत्र करि आदि कौ अतधन विषै घटाए, जेते अवशेष रहै, तिनकौ वृद्धि जो चय, ताका भाग दीयें, जो होइ, तामै एक मिलाए स्थानकनि का प्रमाणरूप पद वा गच्छ का प्रमाण आवै है। बहुरि 'पदकदिसंखेण भाजियं पचयं' पद जो गच्छ, ताकी जो कृति कहिए वर्ग, ताका भाग सर्वधन कौ दीए जो प्रमाण आवै, ताकू सख्यात का भाग दीए, जो प्रमाण होइ, सो चय जानना। सो इहा अध.करण विषै पहिलै मुखादिक का ज्ञान न होइ तातै असै कथन कीया है। बहुरि सर्वत्र सर्वधन कौ गच्छ का भाग दीए, जो प्रमाण होइ, तामै मुख का प्रमाण घटाइ, अवशेष रहै, तिनकौ एक गच्छ का आधा प्रमाण का भाग दीए चय का प्रमाण हो है।

अथवा 'आदिधनोणं गणितं पदोनपदकृतिदलेन संभजित प्रचयः' इस वचन तै सर्वस्थानक संबधी आदिधन कौ सर्वधन विषै घटाइ, अवशेष कौ गच्छ के प्रमाण का वर्ग विषै गच्छ का प्रमाण घटाइ अवशेष रहै, ताका आधा जेता होय, ताका भाग दीये चय का प्रमाण आवै है। बहुरि उत्तरधन कौ सर्वधन विषै घटाए, अवशेष रहै, ताकौ गच्छ का भाग दीए मुख का प्रमाण आवै है।

बहुरि "व्येक पदं चयाभ्यस्तं तदादिसहितं धनं" इस सूत्र करि एक घाटि गच्छ कौ चय करि गुणै, जो प्रमाण होइ, ताकौ मुख का प्रमाण सहित जोडे, अतधन हो है। बहुरि मुख अर अतधन कौ मिलाइ ताका आधा कीए मध्यधन हो है।

बहुरि 'पदहतमुखमादिधन' इस सूत्र करि पद करि गुण्या हुवा मुख का प्रमाण, सो आदिधन हो है।

बहुरि "व्येकपदार्धघ्नचयगुणो गच्छ उत्तरधनं" इस सूत्र करि एक घाटि जो गच्छ, ताका आधा प्रमाण कौ चय करि गुणै, जो प्रमाण होइ, ताकौ गच्छ करि गुणै, उत्तरधन हो है। सो आदिधन, उत्तरधन मिलाएं भी सर्वधन का प्रमाण हो

है । अथवा मध्यधन कौं गच्छ करि गुणै भी सर्वधन का प्रमाण आवै है । अैसे श्रेणी व्यवहाररूप गणित का किंचित् स्वरूप प्रसग पाइ कह्या ।

अब अधिकारभूत अध करण विषै सर्वधन आदि का वर्णन करिए है । तहा प्रथम अकसदृष्टि करि कल्पनारूप प्रमाण लीए दृष्टातमात्र कथन करिए है । सर्व अध - करण का परिणामनि की सख्यारूप सर्वधन तीन हजार वहत्तरि (३०७२) । बहुरि अध करण के काल का समयनि का प्रमाणरूप गच्छ सोलह (१६) । बहुरि समय-समय परिणामनि की वृद्धि का प्रमाणरूप चय च्यारि (४) । वहुरि इहा सख्यात का प्रमाण तीन (३) । अब उर्ध्व रचना विषै धन ल्याइए है । सो युगपत् अनेक समय की प्रवृत्ति न होइ, तातै समय सबधी रचना ऊपरि-ऊपरि ऊर्ध्वरूप करिए है । तहा आदि धनादिक का प्रमाण ल्याइये है ।

'पदकदिसखेण भाजिय पचय' इस सूत्र करि सर्वधन तीन हजार बहत्तरी, ताकौ पद सोलह की कृति दोय सै छप्पन, ताका भाग दीए बारह होइ । अर ताकौं सख्यात का प्रमाण तीन, ताका भाग दीए च्यारि होइ । अथवा दोय सौ छप्पन कौ तिगुणा करि, ताका भाग सर्व धन कौ दीये भी च्यारि होइ सो समय-समय प्रति परिणामनि का चय का प्रमाण है । अथवा याकौ अन्य विधान करि कहिए है । सर्वधन तीन हजार बहत्तारि, ताकौं गच्छ का भाग दीए एक सौ बाणवै, तामैं आगै कहिए है मुख का प्रमाण एक सौ बासठि, सो घटाइ तीस रहे । इनकौं एक घाटि गच्छ का आधा साढा सात, ताका भाग दीये च्यारि पाए, सो चय जानना ।

अथवा **'आदिधनोनं गणितं पदोनपदकृतिदलेन सभजितं'** इस सूत्र करि आगै कहिए है – आदिधन पचीस सै बाणवै, तीहकरि रहित सर्वधन च्यारि सै असी, ताकौ पद की कृति दोय सै छप्पन विषै पद सोलह घटाइ, अवशेष का आधा कीये, एक सौ बीस होइ, ताका भाग दीये च्यारि पाये, सो चय का प्रमाण जानना ।

बहुरि **'व्येकपदार्धघ्नचयगुणो गच्छ उत्तरधन'** इस सूत्र करि एक घाटि गच्छ पद्रह, ताका आधा साढा सात $(\frac{१५}{२})$ ताकौ चय च्यारि, ताकरि गुणै तीस, ताकौ गच्छ सोलह करि गुणै, च्यारि सौ असी चयधन का प्रमाण हो है । बहुरि इस प्रचयधन करि सर्वधन तीन हजार बहत्तरि सो हीन कीये, अवशेष दोय हजार पाच

सै बाणवै रहे। इनकौ पद सोलह, ताका भाग दीये एक सौ बासठि पाये, सोई प्रथम समय सबधी परिणामनि की सख्या हो है। बहुरि यामैं एक-एक चय बधाये सते द्वितीय, तृतीयादि समय सबधी परिणामनि की सख्या हो है। तहा द्वितीय समय सबधी एक सौ छ्यासठ, तृतीय समय सबधी एक सौ सत्तरि इत्यादि क्रम तै एक-एक चय बधती परिणामनि की सख्या हो है। १६२, १६६, १७०, १७४, १७८, १८२, १८६, १९०, १९४, १९८, २०२, २०६, २१०, २१४, २१८, २२२।

इहा अत समय सबधी परिणामनि की सख्यारूप अतधन ल्याइये है।

'व्येकं पदं चयाभ्यस्तं तदादिसहितं धन' इस सूत्र तै एक घाटि गच्छ पद्रह, ताकौं चय च्यारि करि गुणै साठि, बहुरि याकौ आदि एक सौ बासठि करि युक्त कीए दोय सै बाईस होइ, सोई अत समय सबधी परिणामनि का प्रमाण जानना। बहुरि यामै एक चय च्यारि घटाए दोय सै अठारह द्विचरम समय सबधी परिणामनि का प्रमाण जानना। अैसै कहे जो धन कहिए समय-समय सबधी परिणामनि का प्रमाण, तिनकौ अध प्रवृतकरण का प्रथम समय तै लगाइ अत समय पर्यन्त ऊपरि-ऊपरि स्थापन करने।

आगै अनुकृष्टिरचना कहिए है - तहा नीचै के समय सबधी परिणामनि के जे खड, तिनके ऊपरि के समय सबधी परिणामनि के जे खडनि करि जो सादृश्य कहिए समानता, सो अनुकृष्टि अैसा नाम धरै है।

भावार्थ – ऊपरि के अर नीचे के समय सबधी परिणामनि के जे खड, ते परस्पर समान जैसै होइ, तैसै एक समय के परिणामनि विषै खड करना, तिसका नाम अनुकृष्टि जानना। तहा ऊर्ध्वगच्छ के सख्यातवा भाग अनुकृष्टि का गच्छ है, सो अकसदृष्टि अपेक्षा ऊर्ध्वगच्छ का प्रमाण सोलह, ताकौ सख्यात का प्रमाण च्यारि का भाग दीए जो च्यारि पाए, सोई अनुकृष्टि विषै गच्छ का प्रमाण है। अनुकृष्टि विषै खडनि का प्रमाण इतना जानना। बहुरि ऊर्ध्व रचना का चय कौ अनुकृष्टि गच्छ का भाग दीए, अनुकृष्टि विषै चय होइ, सो ऊर्ध्व चय च्यारि कौ अनुकृष्टि गच्छ च्यारि का भाग दीए एक पाया, सोई अनुकृष्टि चय जानना। खड-खंड प्रति बधती का प्रमाण इतना है। बहुरि प्रथम समय सबधी समस्त परिणामनि का प्रमाण एक सौ बासठि, सो इहा प्रथम समय सबधी अनुकृष्टि रचना विषै सर्वधन जानना। बहुरि **'व्येकपदार्धघ्नचयगुणो गच्छ उत्तरधनं'** इस सूत्र करि एक घाटि गच्छ तीन,

ताका आधा कौ चय एक करि गुणी अर गच्छ च्यारि करि गुणे छह होइ, सो इहा उत्तरधन का प्रमाण जानना। बहुरि इस उत्तरधन छह कौ (६) सर्वधन एक सौ बासठि (१६२) विषै घटाए, अवशेष एक सौ छप्पन रहे, तिनकौ अनुकृष्टि गच्छ च्यारि का भाग दीए गुणतालीस पाए, सोई प्रथम समय सबधी परिणामनि का जो प्रथम खण्ड, ताका प्रमाण है, सो यहु ही सर्व जघन्य खण्ड है, जातै इस खण्ड तै अन्य सर्व खडनि के परिणामनि की सख्या अर विशुद्धता करि अधिकपनो सभवै है। बहुरि तिस प्रथम खड विषै एक अनुकृष्टि का चय जोडे, तिसही के दूसरा खड का प्रमाण चालीस हो है। असै ही तृतीयादिक अत खड पर्यंत तिर्यक् एक-एक चय अधिक स्थापने। तहा तृतीय खड विषै इकतालीस अत खड विषै बियालीस परिणामनि का प्रमाण हो है। ते ऊर्ध्वरचना विषै जहा प्रथम समय सबधी परिणाम स्थापे, ताकै आगै-आगै बरोबरि ए खड स्थापन करने। ए (खड) एक समय विषै युगपत् अनेक जीवनि के पाइए, तातै इनिको बरोबरि स्थापन कीए है। बहुरि तातै परै ऊपरि द्वितीय समय का प्रथम खड प्रथम समय का प्रथम खड ३९ तै एक अनुकृष्टि चय करि (१) एक अधिक हो है, तातै ताका प्रमाण चालीस है। जातै द्वितीय समय सबधी परिणाम एक सो छयासठि, सो ही सर्वधन, तामे अनुकृष्टि का उत्तार धन छह घटाइ, अवशेप कौ अनुकृष्टि का गच्छ च्यारि का भाग दीयें, तिस द्वितीय समय का प्रथम खड की उत्पत्ति सभवै है। बहुरि ताकै आगै द्वितीय समय के द्वितीयादि खड, ते एक-एक चय अधिक सभवै है ४१, ४२, ४३। इहा द्वितीय समय का प्रथम खड सो प्रथम समय का द्वितीय खड करि समान है।

असै ही द्वितीय समय का द्वितीयादि खड, ते प्रथम समय का तृतीयादि खडनि करि समान है। इतना विशेष - जो द्वितीय समय का अत का खड प्रथम समय का सर्व खडनि विषै किसी खड करि भी समान नाही। बहुरि तृतीयादि समयनि के प्रथमादि खड द्वितीयादि समयनि के प्रथमादि खडनि तै एक विशेष अधिक है।

तहा तृतीय समय के ४१, ४२, ४३, ४४। चतुर्थ के ४२, ४३, ४४, ४५। पचम समय के ४३, ४४, ४५, ४६। षष्ठम समय के ४४, ४५, ४६, ४७। सप्तम समय के ४५, ४६, ४७, ४८। अष्टम समय के ४६, ४७, ४८, ४९। नवमा समय के ४७, ४८, ४९, ५०। दशवा समय के ४८, ४९, ५०, ५१। ग्यारहवा समय के ४९, ५०, ५१, ५२। बारहवा समय के ५०, ५१, ५२, ५३। तेरहवा समय

के ५१, ५२, ५३, ५४ । चौदहवा समय के ५२, ५३, ५४, ५५ । पद्रहवा समय के ५३, ५४, ५५, ५६ । सोलहवा समय के ५४, ५५, ५६, ५७ खड जानने ।

जातै ऊपरि-ऊपरि सर्वधन एक-एक ऊर्ध्व चय करि अधिक है। इहा सर्व जघन्य खड जो प्रथम समय का प्रथम खड, ताके परिणामनि के अर सर्वोत्कृष्ट खड अत समय का अत का खड, ताके परिणामनि के किस ही खड के परिणामनि करि सहित समानता नाही है, जातै अवशेष समस्त ऊपरि के वा नीचले समय सबधी खडनि का परिणाम पुजनि कै यथासंभव समानता सभवै है। बहुरि इहा ऊर्ध्व रचना विषैं **'मुहभूमि जोगदले पदगुणिदे पदधणं होदि'** इस सूत्र करि मुख एक सौ बासठि, अर भूमि दोय सौ बाइस, इनिकौ जोडि ३८४ । आधा करि १६२ गच्छ, सोलह करि गुणैं सर्वधन तीन हजार बहत्तरी हो है। अथवा मुख १६२, भूमि २२२ कौ जोडै ३८४, आधा कीये मध्यधन का प्रमाण एक सौ बाणवै होइ, ताकौ गच्छ सोलह करि गुणैं सर्वधन का प्रमाण हो है। अथवा **'पदहतमुखमादिधनं'** इस सूत्र करि गच्छ सोलह करि मुख एक सौ बासठि कौ गुणैं, पचीस सै बाणवै सर्वसमय सबधी आदि धन हो है। बहुरि उत्तरधन पूर्वे च्यारि सै असी कह्या है, इनि दोऊनि कौं मिलाए सर्वधन का प्रमाण हो है। बहुरि गच्छ का प्रमाण जानने कौ **'आदी अंते सुध्दे वड्ढिहदे रूवसंजुदे ठाणे'** इस सूत्र करि आदि एक सौ बासठि, सो अत दोय सै बाईस मे घटाए अवशेष साठि, ताकौ वृद्धिरूप चय च्यारि का भाग दीए पद्रह, तामै एक जोडे गच्छ का प्रमाण सोलह आवै है। ऐसै दृष्टातमात्र सर्वधनादिक का प्रमाण कल्पना करि वर्णन कीया है, सो याका प्रयोजन यहु - जो इस दृष्टात करि अर्थ का प्रयोजन नीकै समझने मे आवै ।

अब यथार्थ वर्णन करिए है - सो ताका स्थापन असख्यात लोकादिक की अर्थ-सदृष्टि करि वा सदृष्टि के अर्थि समच्छेदादि विधान करि सस्कृत टीका विषै दिखाया है, सो इहा भाषा टीका विषै आगै सदृष्टि अधिकार जुदा कहैगे, तहा इनिकी भी अर्थ-सदृष्टि का अर्थ-विधान लिखैगे तहा जानना। इहा प्रयोजन मात्र कथन करिए है। आगै भी जहां अर्थसदृष्टि होय, ताका अर्थ वा विधान आगै सदृष्टि अधिकार विषै ही देख लेना। जायगा-जायगा संदृष्टि का अर्थ लिखने तै ग्रथ प्रचुर होइ, अर कठिन होइ; तातै न लिखिए हैं। सो इहा त्रिकालवर्ती नाना जीव सबधी समस्त अधः-प्रवृत्तकरण के परिणाम असख्यात लोकमात्र है, सो सर्वधन जानना। बहुरि अधः-

प्रवृत्तकरण का काल अतर्मूहूर्तमात्र, ताके जेते समय होइ, सो इहा गच्छ जानना। बहुरि सर्वधन कौ गच्छ का वर्ग करि, ताका भाग दीजिए। बहुरि यथासभव सख्यात का भाग दीजिए, जो प्रमाण आवै, सो ऊर्ध्वचय जानना। बहुरि एक घाटि गच्छ का आधा प्रमाण करि चय कौ गुणि, बहुरि गच्छ का प्रमाण करि गुणे जो प्रमाण आवै, सो उत्तरधन जानना। बहुरि इस उत्तरधन कौ सर्वधन विषै घटाइ, अवशेष कौ ऊर्ध्वगच्छ का भाग दीए, त्रिकालवर्ती समस्त जीवनि का अध:प्रवृत्तकरण काल के प्रथम समय विषै सभवते परिणामनि का पुज का प्रमाण हो है। बहुरि याके विषै एक उर्ध्व चय जोडे, द्वितीय समय सबधी नाना जीवनि के समस्त परिणामनि के पुज का प्रमाण हो है। असै ही ऊपरि भी समय-समय प्रति एक-एक ऊर्ध्वचय जाडे, परिणाम पुज का प्रमाण जानना।

तहा प्रथम समय सबधी परिणाम पुज विषै एक घाटि गच्छ प्रमाण चय जोडे अत समय सबधी नाना जीवनि के समस्त परिणामनि के पुज का प्रमाण हो है, सो ही कहिए है – **'व्येकं पदं चयाभ्यस्त तत्साद्यंतधनं भवेत्'** इस करण सूत्र करि एक घाटि गच्छ का प्रमाण करि चय कौ गुणे जो प्रमाण होइ, ताकौं प्रथम समय सबधी परिणाम पुज प्रमाण विषै जोडे, अत समय सबधी परिणाम पुज का प्रमाण हो है। बहुरि या विषै एक चय घटाए, द्विचरम समयवर्ती नाना जीव संबंधी समस्त विशुद्ध परिणाम पुज का प्रमाण हो है। असै ऊर्ध्वरचना जो ऊपरि-ऊपरि रचना, तीहि विषै समय-समय सबधी अध प्रवृत्तकरण के परिणाम पुज का प्रमाण कह्या।

भावार्थ – आगे कषायाधिकार विषै विशुद्ध परिणामनि की सख्या कहैगे, तिस विषै अध:करण विषै सभवते शुभलेश्यामय सज्वलन कषाय का देशघाती स्पर्धकनि का उदय सयुक्त विशुद्ध परिणामनि की सख्या त्रिकालवर्ती नाना जीवनि कै असख्यात लोकमात्र है। तिनि विषै जिनि जीवनि कौ अध प्रवृत्तकरण माडै पहला समय है, असे त्रिकाल सबधी अनेक जीवनि कै जे परिणाम सभवै, तिनिके समूह कौ प्रथम समय परिणाम पुज कहिए। बहुरि जिनि जीवनि कौ अध:करण माडै, दूसरा समय भया, असे त्रिकाल सबधी अनेक जीवनि कै जे परिणाम सभवै, तिनिके समूह कौं द्वितीय समय परिणाम पुज कहिए। असै ही क्रम तै अन्त समय पर्यंत जानना।

तहा प्रथमादि समय सबधी परिणाम पुज का प्रमाण श्रेणी व्यवहार गणित का विधान करि जुदा-जुदा कह्या, सो सर्वसमय सबधी परिणाम पुजनि कौं जोडे

असंख्यात लोकमात्र प्रमाण होइ है। बहुरि इन अध प्रवृत्तकरण काल का प्रथमादि समय सबधी परिणामनि विषै त्रिकालवर्ती नाना जीव सबन्धी प्रथम समय के जघन्य मध्यम, उत्कृष्ट भेद लीए जो परिणाम पुज कह्या, ताके अध प्रवृत्तकरण काल के जेते समय, तिनकौ सख्यात का भाग दीए जेता प्रमाण आवै, तितना खड करिए। ते खड निर्वर्गणा काडक के जेते समय, तितने हो है। वर्गणा कहिए समयनि की समानता, तीहिकरि रहित जे ऊपरि-ऊपरि समयवर्ती परिणाम खड, तिनका जो काडक कहिए पर्व प्रमाण; सो निर्वर्गणा काडक है। तिनिके समयनि का जो प्रमाण सो अधःप्रवृत्तकरण कालरूप जो ऊर्ध्वगच्छ, ताके सख्यातवे भागमात्र है, सो यहु प्रमाण अनुकृष्टि के गच्छ का जानना। इस अनुकृष्टि गच्छ प्रमाण एक-एक समय सबधी परिणामनि विषै खड हो है। बहुरि ते खड एक-एक अनुकृष्टि चय करि अधिक हैं। तहा ऊर्ध्व रचना विषै जो चय का प्रमाण कह्या, ताकौ अनुकृष्टि गच्छ का भाग दीए जो पाइए, सो अनुकृष्टि के चय का प्रमाण है।

बहुरि '**व्येकपदार्धघ्नचयगुणो गच्छ उत्तरधनं**' इस सूत्र करि एक घाटि अनुकृष्टि के गच्छ का आधा प्रमाण कौ अनुकृष्टि चय करि गुणी, बहुरि अनुकृष्टि गच्छ करि गुणै जो प्रमाण होइ, सो अनुकृष्टि का चयधन हो है। याकौ ऊर्ध्व रचना विषै जो प्रथम समय सबधी समस्त परिणाम पुज का प्रमाणरूप सर्वधन, तीहि विषै घटाइ, अवशेष जो रहै, ताकौ अनुकृष्टि गच्छ का भाग दीए जो प्रमाण होइ; सोई प्रथम समय सबधी प्रथम खड का प्रमाण है। बहुरि या विषै एक अनुकृष्टि चय कौ जोडे, प्रथम समय सम्बन्धी समस्त परिणामनि के द्वितीय खड का प्रमाण हो है। असै ही तृतीयादिक खड एक-एक अनुकृष्टि चय करि अधिक अपने अत खड पर्यन्त क्रम तै स्थापन करने।

तहा अनुकृष्टि का प्रथम खड विषै एक घाटि अनुकृष्टि गच्छ का प्रमाण अनुकृष्टि चय जोडै जो प्रमाण होइ, सोई अत खड का प्रमाण जानना। यामै एक अनुकृष्टि चय घटाए, प्रथम समय सबधी द्विचरम खड का प्रमाण हो है। असै प्रथम समय सबधी परिणाम पुजरूप खड सख्यात आवली प्रमाण है, ते क्रम तै जानने। इहा तीन वार सख्यात करि गुणित आवली प्रमाण जो अध करण का काल, ताके सख्यातवे भाग खडनि का प्रमाण, सो दोइ बार सख्यात करि गुणित आवली प्रमाण है, असा जानना।

वहुरि द्वितीय समय संबंधी परिणाम पुंज का प्रथम खंड है, सो प्रथम समय संबधी प्रथम खंड तै अनुकृष्टि चय करि अधिक है। काहे तै ? जाते द्वितीय समय संबंधी समस्त परिणाम पुंजरूप जो सर्वधन, तामैं पूर्वोक्त प्रमाण अनुकृष्टि का चय-धन घटाए अवशेष रहै, ताकौ अनुकृष्टि का भाग दीए, सो प्रथम खंड सिद्ध हो है। वहुरि इस द्वितीय समय का प्रथम खंड विषै एक अनुकृष्टि चय कौ जोडै, द्वितीय समय संबंधी परिणामनि का द्वितीय खंड का प्रमाण हो है। ऐसै तृतीयादिक खंड एक-एक अनुकृष्टि चय करि अधिक स्थापन करने। तहां एक घाटि अनुकृष्टि गच्छ प्रमाण चय द्वितीय समय परिणाम का प्रथम खंड विषै जोडै, द्वितीय समय संबंधी अंत खंड का प्रमाण हो है। यामै एक अनुकृष्टि चय घटाए द्वितीय समय संबंधी द्विचरम खंड का प्रमाण हो है। वहुरि इहां द्वितीय समय का प्रथम खंड अर प्रथम समय का द्वितीय खंड, ए दोऊ समान है। तैसे ही द्वितीय समय का द्वितीयादि खंड अर प्रथम समय का तृतीयादि खण्ड दोऊ समान हो हैं। इतना विशेष द्वितीय समय का अंत खंड, सो प्रथम समय का खंडनि विषै किसीही करि समान नाही। वहुरि याके आगै ऊपरि तृतीयादि समयनि विषै अनुकृष्टि का प्रथमादिक खंड, ते नीचला समय सम्बन्धी प्रथमादि अनुकृष्टि खंडनि तै एक-एक अनुकृष्टि चय करि अधिक है। ऐसै अध:प्रवृत्तकरण काल का अंत समय पर्यन्त जानने। तहां अन्त समय का समस्त परिणामरूप सर्वधन विषै अनुकृष्टि का चयधन कौ घटाई, अवशेष कौ अनुकृष्टि गच्छ का भाग दीए, अंत समय सम्बन्धी परिणाम का प्रथम अनुकृष्टि खंड हो है। यामैं एक अनुकृष्टि चय जोडै, अंत समय का द्वितीय अनुकृष्टि खंड हो है। ऐसै तृतीयादि खण्ड एक-एक अनुकृष्टि चय करि अधिक जानने। तहां एक घाटि अनुकृष्टि गच्छ प्रमाण अनुकृष्टि चय अन्त समय सम्बन्धी परिणाम का प्रथम खण्ड विषै जोडै, अंत समय सम्बन्धी अंत अनुकृष्टि खण्ड के परिणाम पुंज का प्रमाण हो है। वहुरि यामैं एक अनुकृष्टि चय घटाए, अन्त समय सम्बन्धी द्विचरम खण्ड के परिणाम पुंज का प्रमाण हो है। ऐसै अंत समय संबंधी अनुकृष्टि खंड, ते अनुकृष्टि के गच्छ प्रमाण हैं, ते वरोवरि आगै-आगै क्रम तै स्थापने। वहुरि अंत समय संबंधी अनुकृष्टि का प्रथम खंड विषै एक अनुकृष्टि चय घटाए, अवशेष द्विचरम समय संबंधी प्रथम खंड का परिणाम पुंज का प्रमाण हो है। वहुरि यामैं एक अनुकृष्टि चय जोडै, द्विचरम समय संबंधी द्वितीय खंड का परिणाम पुंज हो है। वहुरि ऐसै ही तृतीयादि खंड एक-एक चय अधिक जानने। तहां एक घाटि अनुकृष्टि गच्छ प्रमाण अनुकृष्टि चय द्विचरम

समय संबंधी परिणाम का प्रथम खण्ड विषै जोड़ै, द्विचरम समय संबंधी अनुकृष्टि का अंत खंड का परिणाम पुंज का प्रमाण हो है । बहुरि यामैं एक अनुकृष्टि चय घटाएं, तिस ही द्विचरम समय का द्विचरम खंड का प्रमाण हो है । असैं अध प्रवृत्तकरण के काल का द्विचरम समय संबधी अनुकृष्टि खंड, ते अनुकृष्टि का गच्छप्रमाण है, ते क्रम तै एक-एक चय अधिक स्थापन करने । असैं तिर्यक्‌रचना जो बरोबर रचना, तीहि विषै एक-एक समय संबधी खडनि विषै परिणामनि का प्रमाण कह्या ।

भावार्थ - पूर्वै अध करण का एक-एक समय विषै संभवते नाना जीवनि के परिणामनि का प्रमाण कह्या था । अब तिस विषै जुदे जुदे सभवते असे एक-एक समय संबंधी खडनि विषै परिणामनि का प्रमाण इहा कह्या है । सो ऊपरि के अर नीचै के समय संबधी खडनि विषै परस्पर समानता पाइए है । तातै अनुकृष्टि असा नाम इहां संभवै है । जितनी सख्या लीये ऊपरि के समय विषै परिणाम खड हो है, तितनी सख्या लीये नीचले समय विषै भी परिणाम खण्ड होइ है । असैं नीचले समय संबधी परिणाम खड तैं ऊपरि के समय सबधी परिणाम खण्ड विषै समानता जानि इसका नाम अध प्रवृत्तकरण कह्या है ।

बहुरि इहा विशेष है, सो कहिए है । प्रथम समय संबधी अनुकृष्टि का प्रथम खण्ड, सो सर्व तै जघन्य खण्ड है; जातै सर्वखण्डनि तै याकी सख्या घाटि है । बहुरि अतसमय सबंधी अत का अनुकृष्टि खण्ड, सो सर्वोत्कृष्ट है, जातै याकी संख्या सर्व खण्डनि तै अधिक है; सो इन दोऊनि कै कही अन्य खण्ड करि समानता नाही है । बहुरि अवशेष ऊपरि समय सबंधी खण्डनि के नीचले समय सबधी खण्डनि सहित अथवा नीचले समय सबधी खण्डनि कै ऊपरि समय सबधी खण्डनि सहित यथासभव समानता है । तहा द्वितीय समय तै लगाय द्विचरम समय पर्यंत जे समय, तिनका पहला-पहला खण्ड अर अत समय का प्रथम खण्ड तै लगाइ द्विचरम खण्ड पर्यंत खण्ड, ते अपने-अपने ऊपरि के समय संबधी खडनि करि समान नाही है । तातै असदृश है, सो द्वितीयादि द्विचरम पर्यन्त समय सबधी प्रथम खण्डनि की ऊर्ध्वरचना कीए । अर ऊपरि अत समय के प्रथमादि द्विचरम पर्यन्त खण्डनि की तिर्यक् रचना कीए अकुश के आकार रचना हो है । तातै याकी अकुश रचना कहिए ।

यहु अक सदृष्टि अपेक्षा अकुश-रचना

५४	५३	५२	५१	५०	४९	४८	४७	४६	४५	४४	४३	४२	४१	४०
५५														
५६														

बहुरि द्वितीय समय तै लगाइ द्विचरम समय पर्यंत समय सबधी अत-अत के खण्ड अर प्रथम समय सबधी प्रथम खड बिना अन्य सर्व खण्ड, ते अपने-अपने नीचले समय सबधी किसी ही खण्डनि करि समान नाही, तातै असदृश हैं । सो इहा द्वितीयादि द्विचरम पर्यत समय सबधी अत-अत खण्डनि की ऊर्ध्वरचना कीए अर नीचे प्रथम समय के द्वितीयादि अत पर्यंत खण्डनि की तिर्यक्‌रचना कीए हल के आकार रचना हो है । तातै याकौ लागल रचना कहिए ।

यहु अक सदृष्टि अपेक्षा लागल रचना

														४०
														४१
५६	५५	५४	५३	५२	५१	५०	४९	४८	४७	४६	४५	४४	४३	४२

बहुरि जघन्य उत्कृष्ट खड अर ऊपरि नीचै समय सबधी खण्डनि की अपेक्षा कहे असदृश खण्ड, तिनि खडनि विना अवशेष सर्व खण्ड अपने ऊपरि के अर नीचले समय सबधी खण्डनि करि यथासभव समान जानने ।

अब विशुद्धता के अविभागप्रतिच्छेदनि की अपेक्षा वर्णन करिए है । जाका दूसरा भाग न होइ – असा शक्ति का अश, ताका नाम अविभागप्रतिच्छेद जानना । तिनकी अपेक्षा गणना करि पूर्वोक्त अधःकरण के खडनि विषै अल्पवहुत्वरूप वर्णन करै हैं । तहा अध प्रवृत्तकरण के परिणामनि विषै प्रथम समय सबधी जे परिणाम, तिनके खडनि विषै जे प्रथम खड के परिणाम, ते सामान्यपनै असख्यात लोकमात्र हैं । तथापि पूर्वोक्त विधान के अनुसारि स्थापि, भाज्य भागहार का यथासभव अपवर्तन किये, सख्यात प्रतरावली का जाकौ भाग दीजिये, ऐसा असख्यात लोक मात्र है । ते ए परिणाम अविभागप्रतिच्छेदनि की अपेक्षा जघन्य, मध्यम, उत्कृष्ट भेद लिये हैं । तहा एक अधिक सूच्यगुल का असख्यातवा भाग का घन करि तिसही का वर्ग कौ गुणे जो प्रमाण होइ, तितने परिणामनि विषै जो एक बार षट्‌स्थान होइ, तो सख्यात प्रतरावली भक्त असख्यात लोक प्रमाण प्रथम समय सबधी प्रथम खड के परिणामनि विषै केती बार षट्‌स्थान होइ ? ऐसै त्रैराशिक करि पाए हुए असख्यात लोक वार षट्‌स्थाननि कौ प्राप्त जो विशुद्धता की वृद्धि, तीहि करि वर्धमान है ।

भावार्थ – आगै ज्ञानमार्गणा विषै पर्याय समास श्रुतज्ञान का वर्णन करतै जैसै अनतभाग वृद्धि आदि षट्‌स्थानपतित वृद्धि का अनुक्रम कहैंगे, तैसै इहा अध प्रवृत्तकरण सम्बन्धी विशुद्धतारूप कषाय परिणामनि विषै भी अनुक्रम तै अनन्तभाग,

असख्यातभाग, सख्यातभाग, सख्यातगुण, असख्यातगुण, अनतगुण वृद्धिरूप षट्-स्थानपतित वृद्धि सभवै है। तहा तिस अनुक्रम के अनुसारि एक अधिक जो सूच्यगुल का असख्यातवा भाग, ताका घन करि ताही का वर्ग कौ गुणिए।

भावार्थ ऐसा – पाच जायगा माडि परस्पर गुणिये जो प्रमाण आवै, तितने विशुद्धि परिणाम विषै एक बार षट्स्थानपतित वृद्धि हो है। ऐसै क्रम तै प्रथम परिणाम तै लगाइ, इतने-इतने परिणाम भये पीछै एक-एक बार षट्स्थान वृद्धि पूर्ण होते असख्यात लोकमात्र बार षट्स्थानपतित वृद्धि भए, तिस प्रथम खड के सब परिणामनि की सख्या पूर्ण होइ है। यातै असख्यात लोकमात्र षट्स्थानपतित वृद्धि करि वर्धमान प्रथम खड के परिणाम है। बहुरि तैसै ही द्वितीय समय के प्रथम खड का परिणाम एक अनुकृष्टि चय करि अधिक है, ते जघन्य, मध्यम, उत्कृष्टभेद लिये है। सो ए भी पूर्वोक्त प्रकार असख्यात लोकमात्र षट्स्थान-पतित वृद्धि करि वर्धमान है।

भावार्थ – एक अधिक सूच्यगुल के असख्यातवा भाग का घन करि गुणित तिस ही का वर्गमात्र परिणामनि विषै जो एक बार षट्स्थान होइ, तो अनुकृष्टि चय प्रमाण परिणामनि विषै केती बार षट्स्थान होइ ? ऐसै त्रैराशिक किये जितने पावै, तितनी बार अधिक षट्स्थानपतित वृद्धि प्रथम समय के प्रथम खण्ड तै द्वितीय समय के प्रथम खण्ड विषै सभवै है। ऐसै ही तृतीयादिक अत पर्यन्त समयनि कै प्रथम-प्रथम खड के परिणाम एक-एक अनुकृष्टि चय करि अधिक है। बहुरि तैसै ही प्रथमादि समयनि के अपने-अपने प्रथम खण्ड तै द्वितीयादि खण्डनि के परिणाम भी क्रम तै एक-एक चय अधिक है। तहा यथासम्भव षट्स्थानपतित वृद्धि जेती बार होइ, तिनका प्रमाण जानना।

अथ तिन खण्डनि कै विशुद्धता का अविभागप्रतिच्छेदनि की अपेक्षा अल्प-बहुत्व कहिये है। प्रथम समय सम्बन्धी प्रथम खण्ड का जघन्य परिणाम की विशुद्धता अन्य सर्व तै स्तोक है। तथापि जीव राशि का जो प्रमाण, तातै अनतगुणा अविभाग-प्रतिच्छेदनि के समूह कौ धरै है। बहुरि यातै तिस ही प्रथम समय का प्रथम खण्ड का उत्कृष्ट परिणाम की विशुद्धता अनतगुणी है। बहुरि तातै द्वितीय खण्ड का जघन्य परिणाम की विशुद्धता अनतगुणी है। तातै तिस हि का उत्कृष्ट परिणाम की विशुद्धता अनतगुणी है। ऐसै ही क्रम तै तृतीयादि खण्डनि विषै भी जघन्य,

उत्कृष्ट परिणामनि की विशुद्धता अनतगुणी-अनतगुणी अत के खण्ड की उत्कृष्ट परिणाम विशुद्धता पर्यन्त प्रवर्ते है ।

बहुरि प्रथम समय सबधी प्रथम खण्ड का उत्कृष्ट परिणाम विशुद्धता तै द्वितीय समय के प्रथम खण्ड की जघन्य परिणाम विशुद्धता अनतगुणी है। तातै तिस ही की उत्कृष्ट परिणाम विशुद्धता अनतगुणी है ।

बहुरि तातै द्वितीय खण्ड की जघन्य परिणाम विशुद्धता अनतगुणी है। तातै तिस ही की उत्कृष्ट परिणाम विशुद्धता अनतगुणी है । ऐसै तृतीयादि खण्डनि विषै भी जघन्य उत्कृष्ट परिणाम विशुद्धता अननगुणा अनुक्रम करि द्वितीय समय का अत का खण्ड की उत्कृष्ट परिणाम विशुद्धता पर्यन्त प्राप्त हो है । बहुरि इस ही मार्ग करि तृतीयादि समयनि विषै भी पूर्वोक्त लक्षणयुक्त जो निर्वर्गणाकाडक, ताका द्विचरम समय पर्यन्त जघन्य उत्कृष्ट परिणाम विशुद्धता अनतगुणा अनुक्रम करि ल्यावनी ।

बहुरि निर्वर्गणाकाण्डक का अत समय सबधी प्रथम खण्ड की जघन्य परिणाम विशुद्धता तै प्रथम समय का अत खण्ड की उत्कृष्ट परिणाम विशुद्धता अनतगुणी है । तातै दूसरा निर्वर्गणाकाडक का प्रथम समय सबधी प्रथम खण्ड की जघन्य परिणाम विशुद्धता अनतगुणी है । तातै तिस प्रथम निर्वर्गणाकाडक का द्वितीय समय सबधी अत के खण्ड की उत्कृष्ट परिणाम विशुद्धता अनतगुणी है । तातै द्वितीय निर्वर्गणाकाडक का द्वितीय समय सबधी प्रथम खण्ड की जघन्य परिणाम
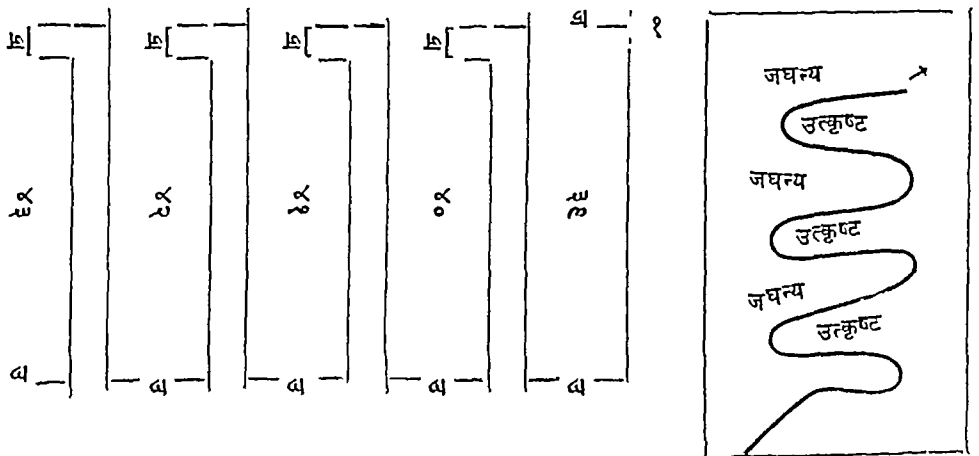
१ – भाषाटीका मे सर्प का आकार बनाकर बीच मे जघन्य उत्कृष्ट तीन तीन बार लिखकर सदृष्टि लिखी है, परतु मदप्रबोधिका मे इस प्रकार है ।

विशुद्धता अनतगुणी है। तातै प्रथम निर्वर्गणाकाडक का तृतीय समय सबधी उत्कृष्ट खण्ड की उत्कृष्ट विशुद्धता अनतगुणी है। या प्रकार जैसै सर्प की चाल इधर तै ऊधर, ऊधर तै इधर पलटनिरूप हो है, तैसै जघन्य तै उत्कृष्ट, उत्कृष्ट तै जघन्य असै पलटनि विषै अनतगुणी अनुक्रम करि विशुद्धता प्राप्त करिए, पीछे अत का निर्वर्गणाकाडक का अत समय सबधी प्रथम खण्ड की जघन्य परिणाम विशुद्धता अनतानंतगुणी है। काहे तै ? जातै पूर्व-पूर्व विशुद्धता तै अनतानंतगुणापनौ सिद्ध है। बहुरि तातै अंत का निर्वर्गणाकाडक का प्रथम समय सबधी उत्कृष्ट खण्ड की परिणाम विशुद्धता अनंतगुणी है। तातै ताके ऊपरि अत का निर्वर्गणाकाडक का अत समय सबधी अत खण्ड की उत्कृष्ट परिणाम विशुद्धता पर्यन्त उत्कृष्ट खण्ड की उत्कृष्ट परिणाम विशुद्धता अनतानतगुणा अनुक्रम करि प्राप्त हो है। तिनि विषै जे जघन्य तै उत्कृष्ट परिणामनि की विशुद्धता अनतानतगुणी है, ते इहा विवक्षारूप नाही है, असा जानना।

या प्रकार विशुद्धता विशेष धरै जे अधःप्रवृत्तकरण के परिणाम, तिनि विषै गुणश्रेणिनिर्जरा, गुणसक्रमण, स्थितिकाडकोत्करण, अनुभागकाडकोत्करण भए च्यारि आवश्यक न सभवै हैं। जातै तिस अधःकरण के परिणामनि के तैसा गुण-श्रेणि निर्जरा आदि कार्य करने की समर्थता का अभाव है। इनका स्वरूप आगै अपूर्वकरण के कथन विषै लिखैगे।

तौ इस करण विषै कहा हो है ?

केवल प्रथम समय तै लगाइ समय-समय प्रति अनतगुणी-अनतगुणी विशुद्धता की वृद्धि हो है। बहुरि स्थितिबधापसरण हो है। पूर्वै जेता प्रमाण लीए कर्मनि का स्थितिबध होता था, तातै घटाइ-घटाइ स्थितिबध करै है। बहुरि साता वेदनीय कौ आदि दैकरि प्रशस्त कर्मप्रकृतिनि का समय-समय प्रति अनतगुणा-अनंत-गुणा बधता गुड, खड, शर्करा, अमृत समान चतुस्थान लीए अनुभाग बध हो है। बहुरि असाता वेदनीय आदि अप्रशस्त कर्म प्रकृतिनि का समय-समय प्रति अनतगुणा-अनतगुणा घटता निंब, काजीर समान द्विस्थान लीए अनुभाग बध हो है, विष-हलाहल रूप न हो है। असै च्यारि आवश्यक इहा सभवै हैं। **अवश्य हो हैं, तातै इनिकौं आवश्यक कहिए है।**

बहुरि असै यहु कह्या जो अर्थ, ताकी रचना अकसदृष्टि अपेक्षा लिखिए है।

अंकसंदृष्टि अपेक्षा अधःकरण रचना

सोलह समयनि की ऊर्ध्व रचना	अनुकृष्टिरूप एक-एक समय सबधी च्यारि-च्यारि खडनि की तिर्यक् रचना			
	प्रथम खड	द्वितीय खड	तृतीय खड	चतुर्थ खड
२२२	५४	५५	५६	५७
२१८	५३	५४	५५	५६
२१४	५२	५३	५४	५५
२१०	५१	५२	५३	५४
२०६	५०	५१	५२	५३
२०२	४९	५०	५१	५२
१९८	४८	४९	५०	५१
१९४	४७	४८	४९	५०
१९०	४६	४७	४८	४९
१८६	४५	४६	४७	४८
१८२	४४	४५	४६	४७
१७८	४३	४४	४५	४६
१७४	४२	४३	४४	४५
१७०	४१	४२	४३	४४
१६६	४०	४१	४२	४३
१६२	३९	४०	४१	४२

अर्थसदृष्टि अपेक्षा रचना है, सो आगे सदृष्टि अधिकार विषै लिखेंगे। तथा याका यहु अभिप्राय है – एक जीव एकै काल अैसा कहिए, तहा विवक्षित अध प्रवृतकरण का परिणामरूप परिणया जो एक जीव, ताका परमार्थवृत्ति करि वर्तमान अपेक्षा काल एक समय मात्र ही है, तातै एक जीव का एकै काल समय प्रमाण जानना। बहुरि एक जीव नानाकाल अैसा कहिए, तहा अधःप्रवृत्तकरण का नानाकालरूप अतर्मुहूर्त के समय ते अनुक्रम तै एक जीव करि चढिए है, यातै एक जीव का नानाकाल अतर्मुहूर्त का समय मात्र है। बहुरि नानाजीवनि का एक काल अैसा कहिए, तहा विवक्षित एक समय अपेक्षा अध प्रवृत्तकाल के असख्यात समय है, तथापि तिनिविषै यथासभव एक सौ आठ समयरूप जे स्थान, तिनिविषै सग्रहरूप जीवनि की विवक्षा करि एक काल है, जातै वर्तमान एक कोई समय विषै अनेक जीव हैं, ते पहिला, दूसरा, तीसरा आदि अध करण के असख्यात समयनि विषै यथासभव एक सौ आठ समय विषै ही प्रवर्तते पाइए है। तातै अनेक जीवनि का एक काल एक सौ आठ समय प्रमाण है। बहुरि नानाजीव, नानाकाल अैसा कहिए, तहा अध प्रवृत्तकरण के परिणाम असख्यात लोकमात्र हैं, ते त्रिकालवर्ती अनेक जीव सबंधी है। बहुरि जिस परिणाम कौ कह्या, तिसको

फेर न कहना; ऐसे अपुनरुक्तरूप है। तिनकौ अनेक जीव अनेक काल विषै आश्रय करै है। सो एक-एक परिणाम का एक-एक समय की विवक्षा करि नाना जीवनि का नानाकाल असख्यातलोक प्रमाण समय मात्र है, ऐसा जानना।

बहुरि अब अधःप्रवृत्तकरण का काल विषै प्रथमादि समय सबधी स्थापे जे विशुद्धतारूप कषाय परिणाम, तिनिविषै प्रमाण के अवधारने कौ कारणभूत जे करणसूत्र, तिनिका गोपालिक विधान करि बीजगणित का स्थापन कहिए है, जातै पूर्वोक्त करणसूत्रनि का अर्थ विषै सशय का अभाव है। तहा **'व्येकपदार्धघ्नचय-गुणो गच्छ उत्तरधनं'** इस करणसूत्र की वासना अकसदृष्टि अपेक्षा दिखाइए है। **'व्येकपदार्धघ्नचयगुणो गच्छ'** ऐसा शब्द करि एक घाटि गच्छ का आधा प्रमाण चय सर्वस्थानकनि विषै ग्रहण कीया, ताका प्रयोजन यहु जो ऊपरि वा नीचै के स्थान-कनि विषै हीनाधिक चय पाइए, तिनकौ समान करि स्थापै, एक घाटि गच्छ का आधा प्रमाण चय सर्व स्थानकनि विषै समान हो है। सो इहा एक घाटि गच्छ का आधा प्रमाण साडा सात है, सो इतने-इतने चय सोलह समयनि विषै समान हो है। कैसे ? सो कहिए है – प्रथम समय विषै तो आदि प्रमाण ही है, ताके चय की वृद्धि वा हानि नाही है। बहुरि अंत समय विषै एक घाटि गच्छ का प्रमाण चय है, यातै **व्येकपद** शब्द करि एक घाटि गच्छ प्रमाण चयनि की सख्या कही। बहुरि **अर्ध** शब्द करि अत समय के पद्रह चयनि विषै साडा सात चय काढि प्रथम समय का स्थान विषै रचे दोऊ जायगा साडा सात, साडा सात चय समान भए। ऐसे ही ताके नीचे पद्रहवा समय के चौदह चयनि विषै साडा छह चय काढि, द्वितीय समय का एक चय के आगे रचनारूप कीए, दोऊ जाएगा साडा सात, साडा सात चय हो है। बहुरि ताके नीचै चौदहवा समय के तेरह चयनि विषै साडा पाच चय काढि, तीसरा समय का स्थान विषै दोय चय के आगै रचे दोऊ जायगा साडा सात, साड़ा सात चय हो है। ऐसे ही ऊपरि तै चौथा स्थान तेरहवा समय, ताकौ आदि देकरि समयनि के साडा च्यारि आदि चय काढि नीचै तै चौथा समय आदि स्थानकनि के तीन आदि चयनि के आगै स्थापै सर्वत्र साडा सात, साडा सात चय हो है। ऐसे सोलह स्थानकनि विषै जैसे समपाटीका आकार हो है, तैसे साडा सात, साडा सात चय स्थापिए है। इहा का यत्र है–

यह अंक संदृष्टि अपेक्षा 'व्येकपदार्धघ्नचयगुणो गच्छ उत्तरधनं' इस सूत्र की वासना कहने कौं रचना है।

सर्व स्थानकनि विषैं आदि का प्रमाण	सर्वस्थानकनि विषैं समानरूप कीए चयनि की रचना इहा च्यारि-च्यारि तौ एक-एक चय का प्रमाण, आगैं दोय आधा चय का प्रमाण जानना	ऊपरि समयवर्ती चयकादि नीचले समय स्थान विषैं स्थापे, तिनकी रचना
१६२	४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । २	४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । २
१६२	४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । २	४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । २
१६२	४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । २	४ । ४ । ४ । ४ । ४ । २
१६२	४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । २	४ । ४ । ४ । ४ । २
१६२	४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । २	४ । ४ । ४ । २
१६२	४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । २	४ । ४ । २
१६२	४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । २	४ । २
१६२	४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । २	२
१६२	४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । २	
१६२	४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । २	
१६२	४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । २	
१६२	४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । २	
१६२	४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । २	
१६२	४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । २	
१६२	४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । २	
१६२	४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । २	
इनको जोडें आदिधन २५९२	इनको जोडे उत्तरधन ४८०	

बहुरि एक स्थान विषै साडा सात चय का प्रमाण होइ, तो सोलह स्थानकनि विषै केते चय हो हैं ? ऐसैं त्रैराशिक करि प्रमाण राशि एक स्थान, फलराशि साडा सात चय, तिनिका प्रमाण तीस, इच्छाराशि सोलह स्थान, तहा फल कौ इच्छा करि गुणि, प्रमाण का भाग दिये लब्धराशि च्यारि सै असी पूर्वोक्त उत्तरधन का प्रमाण आवै है । ऐसै ही अनुकृष्टि विषै भी अकसंदृष्टि करि प्ररूपण करना ।

बहुरि याही प्रकार अर्थसदृष्टि करि भी सत्यार्थरूप साधन करना । ऐसै 'व्येकपदार्धघ्नचयगुणो गच्छ उत्तरधनं' इस सूत्र की वासना बीजगणित करि दिखाई । बहुरि अन्य करण सूत्रनि की भी यथासभव बीजगणित करि वासना जानना ।

ऐसै अप्रमत्त गुणस्थान कौ व्याख्यान करि याके अनन्तर अपूर्वकरण गुणस्थान कौ कहै है –

अंतोमुहुत्तकालं, गमिऊण अधापवत्तकरणं तं ।
पडिसमयं सुज्झंतो, अपुव्वकरणं समल्लियइ ।।५०।।

अंतर्मूहूर्तकालं, गमयित्वा अधःप्रवृत्तकरणं तत् ।
प्रतिसमयं शुध्द्यन् अपूर्वकरणं समाश्रयति ।।५०।।

टीका – ऐसै अतर्मुहूर्तकाल प्रमाण पूर्वोक्त लक्षण धरै अध प्रवृत्तकरण कौ गमाइ, विशुद्ध सयमी होइ, समय-समय प्रति अनन्तगुणी विशुद्धता की वृद्धि करि बधता सता अपूर्वकरण गुणस्थान कौ आश्रय करै है ।

एदम्हि गुणट्ठाणे, विसरिस समयट्ठियेहिं जीवेहिं ।
पुव्वमपत्ता जह्मा, होंति अपुव्वा हु परिणामा ।।५१।। [१]

एतस्मिन् गुणस्थाने, विसदृशसमयस्थितैर्जीवैः ।
पूर्वमप्राप्ता यस्माद्, भवंति अपूर्वा हि परिणामाः ।।५१।।

टीका – जा कारण तै इस अपूर्वकरण गुणस्थान विषै विसदृश कहिए समानरूप नाही, ऐसै जे ऊपरि-ऊपरि के समयनि विषै तिष्ठते जीवनि करि जे विशुद्ध परिणाम पाइए है, ते पूर्व-पूर्व समयनि विषै किसी ही जीव करि न पाये

---

१ षट्खडागम - धवला पुस्तक १, पृष्ठ १६८, गाथा ११७

ऐसें है, ता कारण तें अपूर्व है करण कहिए परिणाम जा विषै, सो अपूर्वकरण गुणस्थान है – ऐसा निरुक्ति करि लक्षण कह्या है ।

भिण्णसमयट्ठियेहिं दु, जीवेहिं ण होदि सव्वदा सरिसो ।
करणेहिं एक्कसमयट्ठियेहिं सरिसो विसरिसो वा ॥५२॥ [1]

भिन्नसमयस्थितैस्तु, जीवैर्न भवति सर्वदा सादृश्यम् ।
करणैरेकसमयस्थितैः सादृश्यं वैसादृश्यं वा ॥५२॥

टीका – जैसें अध प्रवृत्तकरण विषै भिन्न-भिन्न ऊपरि नीचै के समयनि विषै तिष्ठते जीवनि के परिणामनि की सख्या अर विशुद्धता समान सभवै है, तैसें इहा अपूर्वकरण गुणस्थान विषै सर्वकाल विषै भी कोई ही जीव कै सो समानता न सभवै है । बहुरि एक समय विषै स्थित करण के परिणाम, तिनके मध्य विवक्षित एक परिणाम की अपेक्षा समानता अर नाना परिणाम की अपेक्षा असमानता जीवनि के अध करणवत् इहा भी सभवै है, नियम नाही, अैसा जानना ।

भावार्थ – इस अपूर्वकरण विषै ऊपरि के समयवर्ती जीवनि कै अर नीचले समयवर्ती जीवनि कै समान परिणाम कदाचित् न होइ । बहुरि एक समयवर्ती जीवनि कै तिस समय सबधी परिणामनि विषै परस्पर समान भी होइ अर समान नाही भी होइ ।

ताका उदाहरण - जैसें जिनि जीवनि कौ अपूर्वकरण माडे पाचवा समय भया, तहा तिन जीवनि के जैसे परिणाम होहि, तैसे परिणाम जिन जीवनि कौं अपूर्वकरण माडे प्रथमादि चतुर्थ समय पर्यन्त वा षष्ठमादि अत समय पर्यन्त भए होहि, तिनकै कदाचित् न होइ, यहु नियम है । बहुरि जिनि जीवनि कौ अपूर्वकरण माडे पाचवा समय भया, अैसे अनेक जीवनि के परिणाम परस्पर समान भी होइ, जैसा एक जीव का परिणाम होइ, तैसा अन्य का भी होइ अथवा असमान भी होइ । एक जीव का औरसा परिणाम होइ, एक जीव का औरसा परिणाम होइ । अैसें ही अन्य-अन्य समयवर्ती जीवनि कै तौ जैसें अध करण विषै परस्पर समानता भी थी, तैसें इहा नाही हैं । बहुरि एक समयवर्ती जीवनि कै जैसे अध करण विषै

---

१ = षट्खडागम - धवला पुस्तक १, पृष्ठ १८४, गाथा न ११६

समानता वा असमानता थी, तैसै इहा भी है । या प्रकार त्रिकालवर्ती नाना जीवनि के परिणाम इस अपूर्वकरण विषै प्रवर्तते जानने ।

अंतोमुहुत्तमेत्ते, पडिसमयमसंखलोगपरिणामा ।
कमउड्ढा पुव्वगुणे, अणुकट्ठी णत्थि णियमेण ।।५३।।

अंतर्मुहूर्तमात्रे, प्रतिसमयमसंख्यलोकपरिणामाः ।
क्रमवृद्धा अपूर्वगुणे, अनुकृष्टिर्नास्ति नियमेन ।।५३।।

टीका – अंतर्मुहूर्तमात्र जो अपूर्वकरण का काल, तीहि विषै समय-समय प्रति क्रम तै एक-एक चय बधता असख्यात लोकमात्र परिणाम है । तहा नियम करि पूर्वापर समय सबधी परिणामनि के समानता का अभाव तै अनुकृष्टि विधान नाही है ।

इहा भी अंक सदृष्टि करि दृष्टातमात्र प्रमाण कल्पना करि रचना का अनुक्रम दिखाइये है । अपूर्वकरण के परिणाम च्यारि हजार छिनवै, सो सर्वधन है । बहुरि अपूर्वकरण का काल आठ समय मात्र, सो गच्छ है । बहुरि सख्यात का प्रमाण च्यारि (४) है । सो **'पदकदिसंखेण भाजिदे पचयो होदि'** इस सूत्र करि गच्छ ८ का वर्ग ६४ अर सख्यात च्यारि का भाग सर्वधन ४०९६ कौ दीए चय होइ, ताका प्रमाण सोलह भया । बहुरि **'व्येकपदार्धघ्नचयगुणो गच्छ उत्तरधनं'** इस सूत्र करि एक घाटि गच्छ ७, ताका आधा $\frac{७}{२}$ कौ चय १६ करि गुणे जो प्रमाण ५६ होय, ताका गच्छ (८) आठ करि गुणे चय धन च्यारि सै अडतालीस (४४८) होइ । याकौ सर्वधन ४०९६ मे घटाइ, अवशेष ३६४८ कौ गच्छ आठ (८) का भाग दीए, प्रथम समय सबधी परिणाम च्यारि सै छप्पन (४५६) हो है । यामैं एक चय १६ मिलाए द्वितीय समय सबधी हो है । ऐसै तृतीयादि समयनि विषै एक-एक चय बधता परिणाम पुज है, तहा एक घाटि गच्छ मात्र चय का प्रमाण एक सौ बारह, सो प्रथम समय सबधी धन विषै जोडे, अत समय सबधी परिणाम पुज पाच सै अडसठि हो है । यामै एक चय घटाए द्विचरम समय सबधी परिणाम पुज पाच सै बावन हो है । ऐसे ही एक चय घटाए आठौ गच्छ कौ प्रमाण जानना ।

अंकसंदृष्टि अपेक्षा समय-समयसंबंधी अपूर्व-करण परिणाम रचना	
५६८	
५५२	
५३६	
५२०	
५०४	
४८८	
४७२	
४५६	
सर्व परिणाम जोड	
४९९६	

अब यथार्थ कथन करिये है । तहा अर्थसदृष्टि करि रचना है, सो आगै सदृष्टि अधिकार विषै लिखेगे । सो त्रिकालवर्ती नाना जीव सबधी अपूर्वकरण के विशुद्धतारूप परिणाम, ते सर्व ही अध प्रवृत्तकरण के जेते परिणाम हैं, तिनतै असख्यात लोक गुणे हैं । काहे तै ? जाते अध:प्रवृत्त-करण काल का अत समय सबधी जे विशुद्ध परिणाम है, तिनका अपूर्वकरण काल का प्रथम समय विषै प्रत्येक एक-एक परिणाम के असख्यात लोक प्रमाण भेदनि की उत्पत्ति का सद्भाव है । तातै अपूर्वकरण का सर्व परिणाम-रूप सर्वधन, सो असख्यात लोक कौ असख्यात लोक करि गुणै जो प्रमाण होइ, तितना है, सो सर्वधन जानना । बहुरि ताका काल अतर्मुहूर्तमात्र है, ताके जेते समय, सो गच्छ जानना । बहुरि **'पदकदिसखेण भाजिदं पचयं'** इस सूत्र करि गच्छ का वर्ग का अर सख्यात का भाग सर्वधन कौ दीए जो प्रमाण होइ, सो चय जानना । बहुरि **'व्येकपदार्धघ्नचयगुणो गच्छ उत्तरधन'** इस सूत्र करि एक घाटि गच्छ का आधा प्रमाण करि चय कौं गुणि गच्छ कौ गुणै जो प्रमाण होइ, सो चय धन जानना । याकौ सर्वधन विषै घटाइ अवशेष कौ गच्छ का भाग दीए जो प्रमाण आवै, सोई प्रथम समयवर्ती त्रिकाल गोचर नाना जीव सबधी अपूर्वकरण परिणाम का प्रमाण हो है । बहुरि यामैं एक चय जोडै, द्वितीय समयवर्ती नाना जीव सबधी अपूर्वकरण परिणामनि का पुज प्रमाण हो है । ऐसै ही तृतीयादि समयनि विषै एक-एक चय की वृद्धि का अनुक्रम करि परिणाम पुज का प्रमाण ल्याए सतै अत समय विषै परिणाम धन है । सो एक घाटि गच्छ का प्रमाण चयनि कौ प्रथम समय सबधी धन विषै जोडे जितना प्रमाण होइ, तितना हो है । बहुरि यामैं एक चय घटाए, द्विचरम समयवर्ती नाना जीव सबधी विशुद्ध परिणामनि का पुज प्रमाण हो है । ऐसै समय-समय सबधी परिणाम क्रम तै बधते जानने ।

बहुरि इस अपूर्वकरण गुणस्थान विषै पूर्वोत्तर समय सबधी परिणामनि कै सदा ही समानता का अभाव है, तातै इहा खडरूप अनुकृष्टि रचना नाही है ।

भावार्थ – आगै कषायाधिकार विषै शुक्ल लेश्या सबधी विशुद्ध परिणामनि का प्रमाण कहैंगे । तिसविषै इहा अपूर्वकरण विषै सभवते जे परिणाम, तिनिविषै

अपूर्वकरण काल का प्रथमादि समयनि विषै जेते-जेते परिणाम संभवै, तिनका प्रमाण कह्या है । बहुरि इहा पूर्वापर विषै समानता का अभाव है, तातै खड करि अनुकृष्टि विधान न कह्या है । बहुरि इस अपूर्वकरण काल विषै प्रथमादिक अंत समय पर्यंत स्थित जे परिणाम स्थान, ते पूर्वोक्त विधान करि असख्यात लोक बार षट्स्थान पतित वृद्धि कौ लीएं जघन्य, मध्यम, उत्कृष्ट भेद सयुक्त है । तिनका समय-समय प्रति अर परिणाम-परिणाम प्रति विशुद्धता का अविभागप्रतिच्छेदनि का प्रमाण अवधारणे के अर्थि अल्पबहुत्व कहिए है ।

तहां प्रथम समयवर्ती सर्वजघन्य परिणाम विशुद्धता, सो अध प्रवृत्तकरण का अंत समय सबधी अत खड की उत्कृष्ट विशुद्धता तै भी अनतगुणा अविभागप्रतिच्छेदमयी है, तथापि अन्य अपूर्वकरण के परिणामनि की विशुद्धता तै स्तोक है । बहुरि तातै प्रथम समयवर्ती उत्कृष्ट परिणाम विशुद्धता अनतगुणी है । बहुरि तातै द्वितीय समयवर्ती जघन्य परिणाम विशुद्धता अनंतगुणी है । जातै प्रथम समय उत्कृष्ट विशुद्धता तै असख्यात लोक मात्र बार षट्स्थानपतित वृद्धिरूप अतराल करि सो द्वितीय समयवर्ती जघन्य विशुद्धता उपजै है । बहुरि तातै तिस द्वितीय समयवर्ती उत्कृष्ट विशुद्धता अनतगुणी है । असै उत्कृष्ट तै जघन्य अर जघन्य तै उत्कृष्ट विशुद्ध स्थान अनतगुणा-अनतगुणा है । या प्रकार सर्प की चालवत् जघन्य तै उत्कृष्ट, उत्कृष्ट तै जघन्यरूप अनुक्रम लीए अपूर्वकरण का अत समयवर्ती उत्कृष्ट परिणाम विशुद्धता पर्यंत जघन्य, उत्कृष्ट विशुद्धता का अल्पबहुत्व जानना ।

या प्रकार इस अपूर्वकरण परिणाम का जो कार्य है, ताके विशेष कौ गाथा दोय करि कहै है –

तारिसपरिणामट्ठियजीवा हु जिणेहिं गलियतिमिरेहिं ।
मोहस्सपुव्वकरणा, खवणुवसमणुज्जया भणिया ।।५४।।[1]

तादृशपरिणामस्थितजीवा हि जिनैर्गलिततिमिरैः ।
मोहस्यापूर्वकरणा, क्षपणोपशमनोद्यता भणिताः ।।८४।।

टीका – तादृश कहिए तैसा पूर्व-उत्तर समयनि विषै असमान जे अपूर्वकरण के परिणाम, तिनिविषै स्थिताः कहिए परिणए असे जीव, ते अपूर्वकरण है ।

---

१ षट्खडगम – धवला पुस्तक १, पृष्ठ १८४, गाथा ११८

असैं गल्या है ज्ञानावरणादि कर्मरूप अंधकार जिनिका, असे जिनदेवनि करि कह्या है ।

बहुरि ते अपूर्वकरण जीव सर्व ही प्रथम समय तै लगाइ चारित्र मोहनीय नामा कर्म के क्षपावने कौ वा उपशम करने कौ उद्यमवत हो है । याका अर्थ यहु – जो गुणश्रेणिनिर्जरा, गुणसक्रमण, स्थितिखडन, अनुभागखडन असैं लक्षण धरै जे च्यारि आवश्यक, तिनकौ करै है ।

तहा पूर्वै बाध्या था असा सत्तारूप जो कर्म परमाणुरूप द्रव्य, तामै सौ काढि जो द्रव्य गुणश्रेणी विषै दीया, ताका गुणश्रेणी का काल विषै समय-सयय प्रति असख्यात-असख्यातगुणा अनुक्रम लीए पक्तिवध जो निर्जरा का होना, सो गुणश्रेणि-निर्जरा है ।

बहुरि समय-समय प्रति गुणकार का अनुक्रम तै विवक्षित प्रकृति के परमाणु पलटि करि अन्य प्रकृतिरूप होइ परिणमै, सो गुण सक्रमण है ।

बहुरि पूर्वै बाधी थी असी सत्तारूप कर्म प्रकृतिनि की स्थिति, ताका घटा-वना, सो स्थिति खडन कहिए ।

बहुरि पूर्वै बाध्या था असा सत्तारूप अप्रशस्त कर्म प्रकृतिनि का अनुभाग, ताका घटावना, सो अनुभाग खडन कहिए । असैं च्यारि कार्य अपूर्वकरण विषै अवश्य हो है । इनिका विशेष वर्णन आगै लब्धिसार, क्षपणासार अनुसार अर्थ लिखैगे, तहा जानना ।

णिद्दापयले णट्ठे, सदि आऊ उवसमंति उवसमया ।
खवयं ढुक्के खवया, णियमेण खवंति मोहं तु ।।५५।।

निद्राप्रचले नष्टे, सति आयुषि उपशमयंति उपशमकाः ।
क्षपकं ढौकमानाः, क्षपका नियमेन क्षपयति मोह तु ।।५५।।

टीका – इस अपूर्वकरण गुणस्थान विषै विद्यमान मनुष्य आयु जाकै पाइए, ऐसा अपूर्वकरण जीव कै प्रथम भाग विषै निद्रा अर प्रचला – ए दोय प्रकृति बध होने तै व्युच्छित्तिरूप हो है ।

अर्थ यहु - जो उपशम श्रेणी चढनेवाले अपूर्वकरण जीव का प्रथम भाग विषै मरण न होइ, बहुरि निद्रा-प्रचला का बध व्युच्छेद होइ, तिसको होतै ते अपूर्वकरण गुणस्थानवर्ती जीव जो उपशम श्रेणी प्रति चढै तो चारित्रमोह को नियमकरि उपशमावै है। बहुरि क्षपक श्रेणी प्रति चढनेवाले क्षपक, ते नियम करि तिस चारित्र मोह को क्षपावै है। बहुरि क्षपक श्रैणी विषै सर्वत्र नियमकरि मरण नाही है।

आगै अनिवृत्तिकरण गुणस्थान का स्वरूप कौ गाथा दोय करि प्ररूपै है -

एकह्मि कालसमये, संठाणादीहिं जह णिवट्टंति।
ण णिवट्टंति तहावि य, परिणामेहिं मिहो जेहिं ॥५६॥

होंति अणियट्टिणो ते, पडिसमयं जेस्सिमेक्कपरिणामा।
विमलयरझाणहुयवहसिहाहिं णिद्दड्ढकम्मवणा ॥५७॥[1] (जुग्मम्)

एकस्मिन् कालसमये, संस्थानादिभिर्यथा निवर्तंते।
न निवर्तंते तथापि च, परिणामैर्मिथो यैः ॥५६॥

भवंति अनिर्वर्तिनस्ते, प्रतिसमयं येषामेकपरिणामाः।
विमलतरध्यानहुतवहशिखाभिर्निर्दग्धकर्मवनाः ॥५७॥ (युग्मम्)

टीका - अनिवृत्तिकरण काल विषै एक समय विषै वर्तमान जे त्रिकालवर्ती अनेक जीव, ते जैसै शरीर का सस्थान, वर्ण, वय, अवगाहना अर क्षयोपशमरूप ज्ञान उपयोगादिक, तिनकरि परस्पर भेद कौ प्राप्त है, तैसै विशुद्ध परिणामनि करि भेद कौ प्राप्त न हो है प्रगटपने, ते जीव अनिवृत्तिकरण है, असै सम्यक् जानना। जातै नाही विद्यमान है निवृत्ति कहिए विशुद्ध परिणामनि विषै भेद जिनकै, ते अनिवृत्तिकरण है, ऐसी निरुक्ति हो है।

भावार्थ - जिन जीवनि कौ अनिवृत्तिकरण माडै पहला, दूसरा आदि समान समय भए होहिं, तिनि त्रिकालवर्ती अनेक जीवनि के परिणाम समान ही होइ। जैसै अध करण, अपूर्वकरण विषै समान वा असमान होते थे, तैसै इहा नाही। बहुरि अनिवृत्तिकरण काल का प्रथम समय कौ आदि दैकरि समय-समय प्रति वर्त-

---

१ षट्खडागम - धवला पुस्तक १, पृष्ठ १८७ गाथा १६, २०

मान जे सर्व जीव, ते हीन-अधिकपना तै रहित समान विशुद्ध परिणाम धरै हैं। तहा समय-समय प्रति ते विशुद्ध परिणाम अनतगुणे-अनतगुणे उपजै है। तहा प्रथम समय विषै जे विशुद्ध परिणाम हैं, तिनतै द्वितीय समय विषै विशुद्ध परिणाम अनंतगुणे हो है। असै पूर्व-पूर्व समयवर्ती विशुद्ध परिणामनि तै जीवनि के उत्तरोत्तर समयवर्ती विशुद्ध परिणाम अविभागप्रतिच्छेदनि की अपेक्षा अनतगुणा-अनतगुणा अनुक्रम करि बधता हुआ प्रवर्तै हैं। ऐसा यहु विशेष जैनसिद्धात विषै प्रतिपादन किया है, सो प्रतीति में ल्यावना।

भावार्थ – अनिवृत्तिकरण विषै एक समयवर्ती जीवनि के परिणामनि विषै समानता है। बहुरि ऊपरि-ऊपरि समयवर्तीनि के अनतगुणी-अनतगुणी विशुद्धता बधती है।

ताका उदाहरण – जैसै जिनकौ अनिवृतिकरण माडे पाचवा समय भया, ऐसे त्रिकालवर्ती अनेक जीव, तिनकै विशुद्ध परिणाम परस्पर समान ही होइ, कदाचित् हीन-अधिक न होइ। बहुरि ते विशुद्ध परिणाम जिनकौ अनिवृत्तिकरण माडे चौथा समय भया, तिनकै विशुद्ध परिणामनि तै अनतगुणे है। बहुरि इनतै जिनकौं अनि-वृत्तिकरण माडे छठा समय भया, तिनकै अनतगुणे विशुद्ध परिणाम हो है, ऐसै सर्वत्र जानना। बहुरि तिस अनिवृत्तिकरण परिणाम सयुक्त जीव, ते अति निर्मल ध्यानरूपी हुतभुक् कहिए अग्नि, ताकी शिखानि करि दग्ध कीए हैं कर्मरूपी वन जिनने ऐसे है। इस विशेषण करि चारित्र मोह का उपशमावना वा क्षय करना अनिवृत्तिकरण परिणामनि का कार्य है, ऐसा सूच्या है।

आगै सूक्ष्म सापराय गुणस्थान के स्वरूप कौ कहै है –

धुदकोसुंभयवत्थं, होदि जहा सुहमरायसंजुत्तं।
एवं सुहमकसाओ, सुहमसरागो त्ति णादव्वो ॥५८॥

धौतकौसुंभवस्त्र भवति यथा सूक्ष्मरागसंयुक्तं।
एवं सूक्ष्मकषायः, सूक्ष्मसांपराय इति ज्ञातव्यः ॥५८॥

टीका – जैसै धोया हुआ कसूंमल वस्त्र, सो सूक्ष्म लाल रग करि सयुक्त हो है। तैसै अगिला सूत्र विषै कह्या विधान करि सूक्ष्म कृष्टि कौ प्राप्त जो लोभ कषाय, ताहिकरि जो सयुक्त, सो सूक्ष्मसापराय है, ऐसा जानना।

आगे सूक्ष्मकृष्टि कौ प्राप्तपने का स्वभाव कौ गाथा दोय करि प्ररूपै हैं –

पुव्वापुव्वप्फड्ढय, बादरसुहुमगयकिट्टिअणुभागा ।
हीणकमाणंतगुणेणवराढु वरं च हेट्ठस्स ॥५९॥ [1]

पूर्वापूर्वस्पर्धकबादरसूक्ष्मगतकृष्टयनुभागाः ।
हीनक्रमा अनंतगुणेन, अवरात्तु वरं चाधस्तनस्य ॥५९॥

टीका – पूर्वं अनिवृत्तिकरण गुणस्थान विषै वा संसार अवस्था विषै जे सभवै ऐसै कर्म की शक्ति समूहरूप पूर्वस्पर्धक, बहुरि अनिवृत्तिकरण परिणामनि करि कीए तिनके अनतवे भाग प्रमाण अपूर्वस्पर्धक, बहुरि तिनहि करि करी जे बादर-कृष्टि, बहुरि तिनही करि करी जे कर्म शक्ति का सूक्ष्म खडरूप सूक्ष्मकृष्टि, इनिका क्रम तै अनुभाग अपने उत्कृष्ट तै अपना जघन्य, अर ऊपरि के जघन्य तै नीचला उत्कृष्ट ऐसा अनतगुणा घाटि क्रम लीए है ।

भावार्थ – पूर्व स्पर्धकनि का उत्कृष्ट अनुभाग, सो अविभागप्रतिच्छेद अपेक्षा जो प्रमाण धरै है, ताके अनतवे भाग पूर्व स्पर्धकनि का जघन्य अनुभाग है । बहुरि ताके अनंतवे भाग अपूर्वस्पर्धकनि का उत्कृष्ट अनुभाग है । बहुरि ताके अनतवे भाग अपूर्वस्पर्धकनि का जघन्य अनुभाग है । बहुरि ताके अनतवे भाग बादरकृष्टि का उत्कृष्ट अनुभाग है । बहुरि ताके अनतवे भाग बादरकृष्टि का जघन्य अनुभाग है । बहुरि ताके अनतवे भाग सूक्ष्मकृष्टि का उत्कृष्ट अनुभाग है । बहुरि ताके अनतवे भाग सूक्ष्मकृष्टि का जघन्य अनुभाग है, ऐसा अनुक्रम जानना ।

बहुरि इन पूर्वस्पर्धकादिकनि का स्वरूप आगै लब्धिसार-क्षपणासार का कथन लिखेगे, तहा नीकै जानना । तथापि इनिका स्वरूप जानने के अर्थि इहा भी किचित् वर्णन करिये है ।

कर्म प्रकृतिरूप परिणए जे परमाणु, तिनिविषै अपने फल देने की जो शक्ति, ताकौ अनुभाग कहिये । तिस अनुभाग का ऐसा कोई केवलज्ञानगम्य अश, जाका दूसरा भाग न होइ, सो इहा अविभागप्रतिच्छेद जानना ।

बहुरि एक परमाणु विषै जेते अविभागप्रतिच्छेद पाइए, तिनके समूह का नाम वर्ग है ।

---

१ षट्खडागम – धवला पुस्तक १, पृष्ठ १८६, गाथा १२१

बहुरि जिन परमाणुनि विषै परस्पर समान गणना लीए अविभागप्रतिच्छेद पाइए, तिनिके समूह का नाम वर्गणा है ।

तहा अन्य परमाणुनि तै जाविषै थोरे अविभागप्रतिच्छेद पाइए, ताका नाम जघन्य वर्ग है ।

बहुरि तिस परमाणु के समान जिन परमाणुनि विषै अविभागप्रतिच्छेद पाइए, तिनके समूह का नाम जघन्य वर्गणा है । बहुरि जघन्य वर्ग तै एक अविभाग-प्रतिच्छेद अधिक जिनिविषै पाइए असी परमाणुनि का समूह, सो द्वितीय वर्गणा है । असै जहा ताईं एक-एक अविभागप्रतिच्छेद बधने का क्रम लीए जेती वर्गणा होइ, तितनी वर्गणा के समूह का नाम जघन्य स्पर्धक है । बहुरि यातै ऊपरि जघन्य वर्गणा के वर्गनि विषै जेते अविभागप्रतिच्छेद थे, तिनतै दूणे जिस वर्गणा के वर्गनि विषै अविभागप्रतिच्छेद होहि, तहातै द्वितीय स्पर्धक का प्रारंभ भया । तहा भी पूर्वोक्त प्रकार एक-एक अविभागप्रतिच्छेद बधने का क्रमयुक्त वर्गनि के समूहरूप जेती वर्गणा होइ, तिनके समूह का नाम द्वितीय स्पर्धक है । बहुरि प्रथम स्पर्धक की प्रथम वर्गणा के वर्गनि विषै जेते अविभागप्रतिच्छेद थे, तिनतै तिगुणे जिस वर्गणा के वर्गनि विषै अविभागप्रतिच्छेद पाइए, तहातै तीसरे स्पर्धक का प्रारभ भया, तहा भी पूर्वोक्त क्रम जानना ।

अर्थ इहा यहु – जो यावत् वर्गणा के वर्गनि विषै क्रम तै एक-एक अविभाग प्रतिच्छेद बधै, तावत् सोई स्पर्धक कहिए । बहुरि जहा युगपत् अनेक अविभागप्रति-च्छेद बधै, तहातै नवीन अन्य स्पर्धक का प्रारभ कहिए । सो चतुर्थादि स्पर्धकनि की आदि वर्गणा का वर्ग विषै अविभागप्रतिच्छेद प्रथम स्पर्धक की आदि वर्गणा के वर्गनि विषै जेते थे, तिनतै चौगुणा, पचगुणा आदि क्रम लीए जानने । बहुरि अपनी-अपनी द्वितीयादि वर्गणा के वर्ग विषै अपनी-अपनी प्रथम वर्गणा के वर्ग तै एक-एक अविभागप्रतिच्छेद बधता अनुक्रम तै जानना । असै स्पर्धकनि के समूह का नाम प्रथम गुणहानि है । इस प्रथम गुणहानि की प्रथम वर्गणा विषै जेता परमाणुरूप वर्ग पाइए है, तिनितै एक-एक चय प्रमाण घटते द्वितीयादि वर्गणानि विषै वर्ग जानने । असै क्रम तै जहा प्रथम गुणहानि की वर्गणा के वर्गनि तै आधा जिस वर्गणा विषै वर्ग होइ, तहातै दूसरी गुणहानि का प्रारभ भया । तहा द्रव्य, चय आदि का प्रमाण आधा-आधा जानना । इस क्रम तै जेती गुणहानि सर्व कर्म परमाणुनि विषै पाइए, तिनिके समूह का नाम नानागुणहानि है ।

इहा वर्गणादि विषै परमाणुनि का प्रमाण ल्यावने कौ द्रव्य, स्थिति, गुणहानि, दोगुणहानि, नानागुणहानि, अन्योन्याभ्यस्तराशि ए छह जानने ।

तहा सर्व कर्म परमाणुनि का प्रमाण त्रिकोण यत्र के अनुसारि स्थिति सबंधी किंचित्ऊन द्वयर्धगुणहानिगुणित समयप्रबद्ध प्रमाण, सो सर्वद्रव्य जानना ।

बहुरि नानागुणहानि करि गुणहानि आयाम कौ गुणै जो सर्वद्रव्य विषै वगर्णानि का प्रमाण होई, सो स्थिति जाननी ।

बहुरि एक गुणहानि विषै अनंतगुणा अनत प्रमाण वर्गणा पाइए हैं, सो गुणहानि आयाम जानना ।

याकौ दूणा किए जो प्रमाण होई, सो दोगुणहानि है ।

बहुरि सर्वद्रव्य विषै जे गुणहानि प्रमाण अनत पाइए, तिनिका नाम नानागुणहानि है, जातै दोय का गुणकार रूप घटता-घटता जाविषै द्रव्यादिक पाइए, सो गुणहानि, अनेक जो गुणहानि, सो नानागुणहानि जानना ।

बहुरि नानागुणहानि प्रमाण दुये माडि परस्पर गुणै, जो प्रमाण होई, सो अन्योन्याभ्यस्तराशि जानना ।

तहा एक घाटि अन्योन्याभ्यस्तराशि का भाग सर्वद्रव्य कौ दीए जो प्रमाण होई, सो अंत की गुणहानि के द्रव्य का प्रमाण है । यातै दूणा-दूणा प्रथम गुणहानि पर्यन्त द्रव्य का प्रमाण है । बहुरि **'दिवड्ढगुणहाणिभाजिदे पढमा'** इस सूत्र करि साधिक ड्योढ गुणहानि आयाम का भाग सर्वद्रव्य कौ दीए जो प्रमाण होइ, सोई प्रथम गुणहानि की प्रथम वर्गणा विषै परमाणुनि का प्रमाण है । बहुरि याकौ दो गुणहानि का भाग दीए चय का प्रमाण आवै है, सो द्वितीयादि वर्गणानि विषै एक-एक चय घटता परमाणुनि का प्रमाण जानना । ऐसै क्रम तै जहा प्रथम गुणहानि की प्रथम वर्गणा तै जिस वर्गणा विषै आधा परमाणुनि का प्रमाण है, सो द्वितीय गुणहानि की प्रथम वर्गणा है । याके पहले जेती वर्गणा भई, ते सर्व प्रथम गुणहानि सबधी जाननी ।

बहुरि इहा द्वितीय गुणहानि विषै भी द्वितीयादि वर्गणानि विषै एक-एक चय घटता परमाणुनि का प्रमाण जानना । इहा द्रव्य, चय आदि का प्रमाण प्रथम गुण-

हानि तै सर्वत्र आधा-आधा जानना, ऐसै क्रम तै सर्वद्रव्य विषै नानागुणहानि अनत हैं। बहुरि इहा प्रथम गुणहानि की प्रथम वर्गणा तै लगाइ अत वर्गणा पर्यन्त जे वर्गणा, तिनिके वर्गनि विषै अविभागप्रतिच्छेदनि का प्रमाण प्रवाहरूप पूर्वोक्त प्रकार अनुक्रमरूप बधता-बधता जानना ।

अब इस कथन कौ अकसंदृष्टि करि दिखाइए है।

सर्वद्रव्य इकतीस सै ३१००, स्थिति चालीस ४०, गुणहानि आयाम आठ ८, दोगुण हानि सोलह १६, नानागुणहानि पाच ५, अन्योन्याभ्यस्त राशि बत्तीस ३२, तहा एक घाटि अन्योन्याभ्यस्तराशि ३१ का भाग सर्वद्रव्य ३१०० कौ दीए सौ पाये, सो अत गुणहानि का द्रव्य है। यातै दूणा-दूणा प्रथम गुणहानि पर्यंत द्रव्य जानना। १६००, ८००, ४००, २००, १०० । बहुरि साधिक ड्योढ गुणहानि का भाग सर्वद्रव्य कौ दीए, दोय सै छप्पन (२५६) पाए, सो प्रथम गुणहानि विषै प्रथम गुणहानि की प्रथम वर्गणा विषै इतना-इतना घटता वर्ग जानना ऐसे वर्गनि का प्रमाण है। याकौं दो गुणहानि सोलह (१६) का भाग दीए सोलह पाए, सो चय का प्रमाण है। सा द्वितीयादि वर्गणा विषै इतना-इतना घटता वर्ग जानना। ऐसै आठ वर्गणा प्रथम गुणहानि विषै जाननी। बहुरि द्वितीय गुणहानि विषै आठ वर्गणा हैं। तिनि विषै पूर्व तै द्रव्य वा चय का प्रमाण आधा-आधा जानना। ऐसै आधा-आधा क्रम करि पाच नानागुणहानि सर्व द्रव्य विषै हो है।

इनकी रचना –

अंकसंदृष्टी अपेक्षा गुणहानि की वर्गणानि विषै वर्गनि के प्रमाण का यंत्र है।

प्रथम गुणहानि	द्वितीय गुणहानि	तृतीय गुणहानि	चतुर्थ गुणहानि	पंचम गुणहानि
१४४	७२	३६	१८	९
१६०	८०	४०	२०	१०
१७६	८८	४४	२२	११
१९२	९६	४८	२४	१२
२०८	१०४	५२	२६	१३
२२४	११२	५६	२८	१४
२४०	१२०	६०	३०	१५
२५६	१२८	६४	३२	१६
जोड १६००	जोड ८००	जोड ४००	जोड २००	जोड १००

बहुरि च्यारि-च्यारि वर्गणा का समूह एक-एक स्पर्धक है, तातै एक-एक गुणहानि विषै दोय-दोय स्पर्धक है। तहा प्रथम गुणहानि का प्रथम स्पर्धक की प्रथमवर्गणा का वर्गनि विषै आठ-आठ अविभागप्रतिच्छेद पाइये है। दूसरी वर्गणा का वर्गनि विषै नव-नव, तीसरी का विषै दश-दश, चौथी का विषै ग्यारह-ग्यारह जानने। बहुरि प्रथम गुणहानि का द्वितीय स्पर्धक की प्रथम वर्गणा का वर्गनि विषै सोलह-सोलह, दूसरीकानि विषै सतरह-सतरह, तीसरीकानि विषै अठारह-अठारह, चौथीकानि विषै उगणीस-उगणीस अविभागप्रतिच्छेद है। बहुरि द्वितीय गुणहानि का प्रथम स्पर्धक की प्रथम वर्गणा के वर्गनि विषै चौईस-चौईस, ऊपरि एक-एक बधती ऐसै ही अनतगुणहानि का अत स्पर्धक की अन्त वर्गणा पर्यन्त अनुक्रम जानना। इनकी रचना –

अंकसदृष्टि अपेक्षा अविभागप्रतिच्छेदनि की रचना का यंत्र

प्रथम गुणहानि		द्वितीय गुणहानि		तृतीय गुणहानि		चतुर्थ गुणहानि		पञ्चम गुणहानि	
प्रथम स्पर्धक	द्वितय स्पर्धक	प्रथम स्पर्धक	द्वितीय स्पर्धक	प्रथम स्पर्धक	द्वितीय स्पर्धक	प्रथम स्पर्धक	द्वितीय स्पर्धक	प्रथम स्पर्धक	द्वितीय स्पर्धक
११	१९	२७	३५	४३	५१	५९	६७	७५	८३
१०। १०	१८। १८	२६। २६	३४। ३४	४२। ४२	५०। ५०	५८। ५८	६६। ६६	७४। ७४	८२। ८२
९। ९। ९	१७। १७। १७	२५। २५। २५	३३। ३३। ३३	४१। ४१। ४१	४९। ४९। ४९	५७। ५७। ५७	६५। ६५। ६५	७३। ७३। ७३	८१। ८१। ८१
८। ८। ८। ८	१६।१६।१६।१६	२४।२४।२४।२४	३२।३२।३२।३२	४०।४०।४०।४०	४८।४८।४८।४८	५६।५६।५६।५६	६४।६४।६४।६४	७२।७२।७२।७२	८०।८०।८०।८०

इहा च्यारि, तीन आदि स्थानकनि विषै आठ, नव आदि अविभागप्रतिच्छेद स्थापे हैं। तिनकी सहनानी करि अपनी-अपनी वर्गणा विषै जेते-जेते वर्ग हैं, तितने-तितने स्थानकनि विषै तिन अविभागप्रतिच्छेदनि का स्थापन जानना।

ऐसै अंकसदृष्टि करि जैसै दृष्टात कह्या, तैसै ही पूर्वोक्त यथार्थ कथन का अवधारण करना। या प्रकार कहे जे अनुभागरूप स्पर्धक, ते पूर्वै ससार अवस्था विषै जीवनि के सभवै है, तातै इनिकौं पूर्वस्पर्धक कहिये। इनि विषै जघन्य स्पर्धक तै लगाइ लताभागादिकरूप स्पर्धक प्रवर्तै है। तिनि विषै लताभागादिरूप केई स्पर्धक देशघाती है। ऊपरि के केई स्पर्धक सर्वघाती है, तिनिका विभाग आगै लिखेगे। बहुरि अनिवृत्तिकरण परिणामनि करि कबहू पूर्वै न भए ऐसे अपूर्वस्पर्धक हो है। तिनि विषै जघन्य पूर्वस्पर्धक तै भी अनतवे भाग उत्कृष्ट अपूर्व स्पर्धक विषै भी अनुभाग शक्ति पाइए है। विशुद्धता का माहात्म्य तै अनुभाग शक्ति घटाए कर्म परमाणुनि कौं ऐसै परिणमावै है। इहा विशेष इतना ही भया – जो पूर्वस्पर्धक की जघन्य वर्गणा के वर्ग तै इस अपूर्वस्पर्धक की अत वर्गणा के वर्ग विषै अनतवे भाग अनुभाग है। बहुरि तातै अन्य वर्गणानि विषै अनुभाग घटता है, ताका विधान पूर्वस्पर्धकवत् ही जानना। बहुरि वर्गणानि विषै परमाणुनि का प्रमाण पूर्वस्पर्धक की जघन्य वर्गणा तै एक-एक चय बधता पूर्व स्पर्धकवत् क्रम तै जानना। इहा चय का प्रमाण पूर्वस्पर्धक की आदि गुणहानि का चय तै दूणा है। बहुरि पीछै अनिवृत्तिकरण के परिणामनि ही करि कृष्टि करिये है। **अनुभाग का कृष करना, घटावना, सो कृष्टि कहिये। तहा सज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ का अनुभाग घटाइ स्थूल खण्ड करना, सो बादरकृष्टि** है। तहा उत्कृष्ट बादरकृष्टि विषै भी जघन्य अपूर्वस्पर्धक तै भी अनतगुणा अनुभाग घटता हो है। तहा च्यारो कषायनि की बारह सग्रहकृष्टि हो हैं। अर एक-एक सग्रहकृष्टि के विषै अनन्त-अनन्त अतर कृष्टि हो है। तिनि विषै लोभ की प्रथम सग्रह की प्रथमकृष्टि तै लगाइ क्रोध की तृतीय सग्रह की अतकृष्टि पर्यन्त क्रम तै अनन्तगुणा-अनन्तगुणा अनुभाग है। तिस क्रोध की तृतीय कृष्टि की अतकृष्टि तै अपूर्वस्पर्धकनि की प्रथम वर्गणा विषै अनन्तगुणा अनुभाग है। सो स्पर्धकनि विषै तौ पूर्वोक्त प्रकार अनुभाग का अनुक्रम था। इहा अनन्तगुणा घटता अनुभाग का क्रम भया, सोई स्पर्धक अर कृष्टि विषै विशेष जानना। बहुरि तहा परमाणुनि का प्रमाण लोभ की प्रथम सग्रह की जघन्य कृष्टि विषै यथासभव बहुत है, तातै क्रोध की तृतीय सग्रह की अतकृष्टि पर्यन्त चय घटता क्रम लीए है। सो याका विशेष आगै लिखैगे, सो जानना। सो यहु अपूर्व

स्पर्धक अर बादरकृष्टि क्षपक श्रेणी विषै ही हो है, उपशम श्रेणी विषै न हो है। बहुरि अनिवृत्तिकरण के परिणामनि करि ही कषायनि के सर्व परमाणु आनुपूर्वी सक्रमादि विधान करि एक लोभरूप परिणमाइ बादरकृष्टिगत लोभरूप करि पीछै तिनिकौं सूक्ष्मकृष्टिरूप परिणमावै है, सो सूक्ष्मकृष्टि कौ प्राप्त भया लोभ, ताका जघन्य बादरकृष्टि तै भी अनतवे भाग उत्कृष्ट सूक्ष्मकृष्टि विषै अनुभाग हो है। तहा अनंती कृष्टिनि विषै क्रम तै अनतगुणा अनुभाग घटता है। बहुरि परमाणुनि का प्रमाण जघन्य कृष्टि तै लगाइ उत्कृष्ट कृष्टि पर्यन्त चय घटता क्रम लीए है, सो विशेष आगे लिखैगे सो जानना। सो यहु विधान क्षपक श्रेणी विषै हो है।

उपशम श्रेणी विषै पूर्वस्पर्धकरूप जे लोभ के केई परमाणु, तिन ही कौ सूक्ष्म कृष्टिरूप परिणमावै है, ताका विशेष आगै लिखैगे।

बहुरि असै अनिवृत्तिकरण विषै करी जो सत्ता विषै सूक्ष्म कृष्टि, सो जहा उदयरूप होइ प्रवर्ते, तहा सूक्ष्मसापराय गुणस्थान हो है असा जानना।

अणुलोहं वेदंतो, जीवो उवसामगो व खवगो वा।
सो सुहुमसांपराओ, जहखादेणूणओ किंचि ॥६०॥

अणुलोभं विदन्, जीवः उपशामको व क्षपको वा।
स सूक्ष्मसांपरायो, यथाख्यातेनोनः किंचित् ॥६०॥

टीका – अनिवृत्तिकरण काल का अत समय के अनतरि सूक्ष्मसापराय गुणस्थान कौ पाइ, सूक्ष्म कृष्टि कौ प्राप्त जो लोभ, ताके उदय कौ भोगवता सता उपशमावनेवाला वा क्षय करने वाला जीव, सो सूक्ष्मसापराय है, असा कहिए है।

सोई सामायिक, छेदोपस्थापना सयम की विशुद्धता तै अति अधिक विशुद्धतामय जो सूक्ष्मसापराय सयम, तीहिकरि सयुक्त जो जीव, सो यथाख्यातचारित्र सयुक्त जीव तै किंचित् मात्र ही हीन है। जातै सूक्ष्म कहिए सूक्ष्म कृष्टि कौ प्राप्त असा जो सापराय कहिए लोभ कषाय, सो जाकै पाइए, सो सूक्ष्मसापराय है असा सार्थक नाम है।

आगै उपशांत कषाय गुणस्थान के स्वरूप का निर्देश करै है।

कदकफलजुदजलं[1] वा, सरए सरवाणियं व णिम्मलयं।
सयलोवसंतमोहो, उवसंतकसायओ होदि ॥६१॥[2]

---

१. 'कदकफलजुदजल' के स्थान पर 'सकयगहल जल' ऐसा पाठान्तर है।

२ षट्खण्डागम – धवला पुस्तक १, पृष्ठ १९०, गाथा १२२

कतकफलयुतजलं वा शरदि सरःपानीयं व निर्मलं ।
सकलोपशांतमोहः, उपशांत कषायको भवति ।।६१।।

टीका – कतकफल का चूर्ण करि संयुक्त जो जल, सो जैसे प्रसन्न हो है अथवा मेघपटल रहित जो शरत्काल, तीहि विषै जैसे सरोवर का पानी प्रसन्न हो है, ऊपरि तै निर्मल हो है, तैसे समस्तपने करि उपशांत भया है मोहनीय कर्म जाका, सो उपशांत कषाय है। उपशांत कहिए समस्तपनेकरि उदय होने कौ अयोग्य कीए हैं कषाय-नोकषाय जानै, सो उपशांत कषाय है। ऐसी निरुक्त करि अत्यंत प्रसन्न-चित्तपना सूचन किया है।

आगै क्षीण कषाय गुणस्थान का स्वरूप कौ प्ररूपै है –

णिस्सेसखीणमोहो, फलिहामलभायणुदयसमचित्तो ।
खीणकसाओ भण्णदि, णिग्गंथो वीयरायेहिं ।।६२।।[1]

निश्शेषक्षीणमोहः, स्फटिकामलभाजनोदकसमचित्तः ।
क्षीणकषायो भण्यते, निर्ग्रन्थो वीतरागैः ।।६२।।

टीका – अवशेष रहित क्षीण कहिए प्रकृति, स्थिति, अनुभाग, प्रदेश करि रहित भई है मोहनीय कर्म की प्रकृति जाकै, सो निःशेष क्षीणकषाय है। ऐसे निःशेष मोह प्रकृतिनि का सत्त्व करि रहित जीव, सो क्षीण कषाय है। ता कारण तै स्फटिक का भाजन विषै तिष्ठता जल सदृश प्रसन्न – सर्वथा निर्मल है चित्त जाका ऐसा क्षीणकषाय जीव है, ऐसे वीतराग सर्वज्ञदेवनि करि कहिए है। सोई परमार्थ करि निर्ग्रन्थ है। उपशांत कषाय भी यथाख्यात चारित्र की समानता करि निर्ग्रन्थ है, ऐसे जिनवचन विषै प्रतिपादन करिए है।

भावार्थ – उपशांत कषाय कै तौ मोह के उदय का अभाव है, सत्त्व विद्यमान है। बहुरि क्षीणकषाय कै उदय, सत्त्व सर्वथा नष्ट भए है, परन्तु दोऊनि के परिणामनि विषै कषायनि का अभाव है। तातै दोऊनि कै यथाख्यात चारित्र समान है। तीहिंकरि दोऊ बाह्य, अभ्यंतर परिग्रह रहित निर्ग्रन्थ कहे हैं।

आगै सयोगकेवलिगुणस्थान कौं गाथा दोय करि कहैं है –

केवलणाणदिवायरकिरणकलावप्पणासियण्णाणो ।
णवकेवललद्धुग्गमसुजणियपरमप्पववएसो ।।६३।।[2]

---

१ षट्खंडागम – धवला पुस्तक १, पृष्ठ १९१, गाथा १२३
२. षट्खंडागम – धवला पुस्तक १, पृष्ठ १९२, गाथा १२४

केवलज्ञानदिवाकरकिरणकलापप्रणाशिताज्ञानः ।
नवकेवललब्ध्युद्गमसुजनितपरमात्मव्यपदेशः ॥६३॥

टीका – **केवलज्ञानदिवाकरकिरणकलापप्रणाशिताज्ञानः** कहिए केवलज्ञान-रूपी दिवाकर जो सूर्य, ताके किरणनि का कलाप कहिए समूह, पदार्थनि के प्रकाशने विषै प्रवीण दिव्यध्वनि के विशेष, तिनकरि प्रनष्ट कीया है शिष्य जननि का अज्ञाना-धकार जानै असा सयोगकेवली है । इस विशेषण करि सयोगी भट्टारक कै भव्यलोक कौ उपकारीपना है लक्षण जाका, अैसी परार्थरूप सपदा कही । बहुरि **नवकेवल-लब्ध्युद्गमसुजनितपरमात्मव्यपदेशः**' कहिए क्षायिकसम्यक्त्व, क्षायिकचारित्र, ज्ञान, दर्शन, दान, लाभ, भोग, उपभोग, वीर्यरूप लक्षण धरै जे नव केवललब्धि, तिनिका उदय कहिए प्रकट होना, ताकरि सुजनित कहिए वस्तुवृत्ति करि निपज्या है परमात्मा, अैसा व्यपदेश कहिए नाम जाका, अैसा सयोगकेवली है । इस विशेषण करि भगवान अर्हत्परमेष्ठी कै अनत ज्ञानादि लक्षण धरै स्वार्थरूप सपदा दिखाइए है ।

असहायणाणदंसणसहिओ इदि केवली हु जोगेण ।
जुत्तो त्ति सजोगिजिणो,[1] अणाइणिहणारिसे उत्तो ॥६४॥ [2]

असहायज्ञानदर्शनसहितः इति केवली हि योगेन ।
युक्त इति सयोगिजिनः अनादिनिधनार्षे उक्तः ॥६४॥

टीका – योग करि सहित सो सयोग, अर परसहाय रहित जो ज्ञान-दर्शन, तिनिकरि सहित सो केवली, सयोग सो ही केवली, सो सयोगकेवली । बहुरि घाति-कर्मनि का निर्मूल नाशकर्ता, सो जिन सयोगकेवली सोई जिन, सो सयोगकेवलिजिन कहिए । अैसैं अनादि-निधन ऋषिप्रणीत आगम विषै कह्या है ।

आगै अयोग केवलि गुणस्थान कौ निरूपै है –

सीलेसिं संपत्तो, णिरुद्धणिस्सेसआसवो जीवो ।
कम्मरयविप्पमुक्को, गयजोगो केवली होदि ॥६५॥ [3]

---

१. 'सजोगिजिणो' इसके स्थान पर 'सजोगो इदि' ऐसा पाठान्तर है ।

२. षट्खण्डागम – धवला पुस्तक १, पृष्ठ १९३, गाथा १२५

३. षट्खण्डागम – धवला पुस्तक १, पृष्ठ २००, गाथा १२६

शीलेश्यं सप्राप्तो निरुद्धनिश्शेषास्रवो जीवः ।
कर्मरजोविप्रमुक्तो गतयोगः केवली भवति ।।६५।।

टीका – अठारह हजार शील का स्वामित्वपना कौ प्राप्त भया । बहुरि निरोधे है समस्त आस्रव जानै, तातै नवीन बध्यमान कर्मरूपी रज करि सर्वथा रहित भया । बहुरि मन, वचन, काय योग करि रहितपना तै अयोग भया । सो नाही विद्यमान है योग जाकै, अैसा अयोग अर अयोग सोई केवली, सो अयोग केवली भगवान परमेष्टी जीव अैसा है ।

या प्रकार कहे चौदह गुणस्थान, तिनिविषै अपने आयु बिना सात कर्मनि की गुणश्रेणी निर्जरा सभवै है । ताका अर तिस गुणश्रेणी निर्जरा का काल विशेष कौं गाथा दोय करि कहै है –

सम्मत्तुप्पत्तीये, सावयविरदे अणंतकम्मंसे ।
दंसणमोहक्खवगे, कसायउवसामगे य उवसंते ।।६६।।

खवगे य खीणमोहे, जिणेसु दव्वा असंखगुणिदकमा ।
तव्विवरीया काला, संखेज्जगुणक्कमा होंति ।।६७।।

सम्यक्त्वोत्पत्तौ, श्रावकविरते अनतकर्माशे ।
दर्शनमोहक्षपके, कषायोपशामके चोपशाते ।।६६।।

क्षपके च क्षीणमोहे, जिनेषु द्रव्याण्यसख्यगुणितक्रमाणि ।
तद्विपरीताः काला सख्यातगुणक्रमा भवति ।।६७।।

टीका – प्रथमोपशम सम्यक्त्व की उत्पत्ति जो प्रथमोपशम सम्यक्त्व कौं कारण तीन करणनि के परिणामनि का अत समय, तीहिविषै प्रवर्तमान अैसा जो विशुद्धता का विशेष धरै मिथ्यादृष्टि जीव, ताकै आयु बिना अवशेष ज्ञानावरणादि कर्मनि का जो गुणश्रेणी निर्जरा का द्रव्य है, तातै देशसयत कै गुणश्रेणी निर्जरा द्रव्य असख्यातगुणा है । बहुरि तातै सकलसयमी के गुणश्रेणी निर्जरा द्रव्य असख्यात गुणा है । तातै अनतानुबधी कषाय का विसयोजन करनहारा जीव कै गुणश्रेणी निर्जरा द्रव्य असख्यात गुणा है । तातै दर्शन मोह का क्षय करने वाले कै गुणश्रेणी निर्जरा द्रव्य असख्यात गुणा है । बहुरि तातै कषाय उपशम करने वाले अपूर्वकरणादि

तीन गुणस्थानवर्ती जीवनि कै गुणश्रेणी निर्जरा द्रव्य असख्यात गुणा है। बहुरि तातै उपशात कषाय गुणस्थानवर्ती जीव कै गुणश्रेणी निर्जरा द्रव्य असख्यात गुणा है। बहुरि तातै क्षपक श्रेणीवाले अपूर्वकरणादि तीन गुणस्थानवर्ती जीव कै गुणश्रेणी निर्जरा द्रव्य असंख्यात गुणा है। बहुरि तातै क्षीण कषाय गुणस्थानवर्ती जीव कै गुणश्रेणी निर्जरा द्रव्य असख्यात गुणा है। बहुरि तातै समुद्घात रहित जो स्वस्थान केवली जिन, ताकै गुणश्रेणी निर्जरा द्रव्य असख्यात गुणा है। बहुरि तातै समुद्घात सहित जो स्वस्थान समुद्घात केवली जिन, ताकै गुणश्रेणी निर्जरा द्रव्य असख्यात गुणा है। असै ग्यारह स्थानकनि विषै गुणश्रेणी निर्जरा द्रव्य के स्थान-स्थान प्रति असख्यातगुणापना कह्या।

अब तिस गुणश्रेणी निर्जरा द्रव्य का प्रमाण कहिए है। कर्मप्रकृतिरूप परिणए पुद्गल परमाणु, तिनका नाम इहा द्रव्य जानना। अनादि ससार के हेतु तै बध का संबध करि बधरूप भया जो जगच्छ्रेणी का घनमात्र लोक, तीहि प्रमाण एक जीव के प्रदेशनि विषै तिष्ठता ज्ञानावरणादिक मूल प्रकृति वा उत्तर प्रकृति सबधी सत्तारूप सर्वद्रव्य, सो आगै कहिएगा जो त्रिकोण रचना, ताका अभिप्राय करि किंचित् ऊन ड्योढ गुणहानि आयाम का प्रमाण करि समयप्रबद्ध का प्रमाण कौ गुणै जो प्रमाण होइ, तितना है।

बहुरि इस विषै आयु कर्म का स्तोक द्रव्य है, तातै या विषै किंचित् ऊन किए अवशेष द्रव्य सात कर्मनि का है। तातै याकौ सात का भाग दीए एक भाग प्रमाण ज्ञानावरण कर्म का द्रव्य हो है। बहुरि याकौ देशघाती, सर्वघाती द्रव्य का विभाग के अर्थि जिनदेव करि देखा यथासभव अनंत, ताका भाग दीए एक भाग प्रमाण तौ सर्वघाती केवलज्ञानावरण का द्रव्य है। अवशेष बहुभाग प्रमाण मति-ज्ञानादि देशघाति प्रकृतिनि का द्रव्य है। बहुरि इस देशघाती द्रव्य कौ मति, श्रुत, अवधि, मन पर्यय, ज्ञानावरणरूप च्यारि देशघाती प्रकृतिनि का विभाग के अर्थि च्यारि का भाग दीए एक भाग प्रमाण मतिज्ञानावरण का द्रव्य हो है।

भावार्थ – इहा मतिज्ञानावरण के द्रव्य की गुणश्रेणी का उदाहरण करि कथन कीया है। तातै मतिज्ञानावरण द्रव्य का ही ग्रहण कीया है। असै ही अन्य प्रकृतिनि का भी यथासभव जानि लेना। बहुरि इस मतिज्ञानावरण द्रव्य कौ अपकर्षण भागहार का भाग देइ, तहा बहुभाग तौ तैसै ही तिष्ठै है; असा जानि एक भाग का ग्रहण कीया।

भावार्थ - जैसै अन्न का राशि मे स्यो च्यारि का भाग देइ, कोई कार्य के अर्थि एक भाग जुदा काढिए, अवशेष बहुभाग जैसे थे तैसै ही राखिए। तैसै इहा मतिज्ञानावरणरूप द्रव्य मे स्यो अपकर्षण भागहार का भाग देइ, एकभाग कौं अन्यरूप परणमावेने के अर्थि जुदा ग्रहण कीया। अवशेष बहुभाग प्रमाण द्रव्य,जैसे पूर्वै अपनी स्थिति के समय-समय सबधी निषेकनि विषै तिष्ठै था, तैसै ही रह्या। इहा कर्म परमाणुरूप राशि विषै स्थिति घटावने कौ जिस भागहार का भाग सभवै, ताका नाम अपकर्षण भागहार जानना। सो इस अपकर्षण भागहार का प्रमाण, आगे कर्मकाड विषै पच भागहार चूलिका अधिकार विषै कहैंगे, तहा जानना। बहुरि विवक्षित भागहार का भाग दीए, तहा एक भाग विना अवशेष सर्व भागनि के समूह का नाम बहुभाग जानना। सो अपकर्षण भागहार का भाग देई, बहुभाग कौ तैसे ही राखि, एकभाग कौ जुदा ग्रह्या था, ताकौ कैसे-कैसे परिणमाया सो कहै है।

तिस एक भाग को पल्य का असख्यातवा भाग का भाग देई, तहा बहुभाग तौ उपरितन स्थिति विषै देना, सो एक जायगा स्थापै, बहुरि अवशेष एक भाग रह्या, ताकौं बहुरि असख्यात लोक का भाग देइ, तहा बहुभाग तौ गुणश्रेणी का आयाम विषै देना, सो एक जायगा स्थापै अवशेष एक भागहार रह्या, सो उदयावली विषै दीजिए है।

अब उदयावली, गुणश्रेणी, उपरितन स्थिति विषै दीया हुवा द्रव्य कैसे परिणमै है ? सो कहिए है। तहा उदयावली विषै दीया हुआ द्रव्य वर्तमान समय तै लगाइ एक आवली प्रमाण काल विषै पूर्वै जे आवली के निषेक थे, तिनकी साथि अपना फल कौ देइ खिरै है।

तहा आवली का काल के प्रथमादि समयनि विषै केता-केता द्रव्य उदय आवै है ? सो कहैं हैं - एक समय सबधी जेता द्रव्य का प्रमाण, ताका नाम निषेक जानना। तहा उदयावली विषै दीया जो द्रव्य, ताकौ उदयावली काल के समयनि का जो प्रमाण, ताका भाग दीए बीचि के समय सबधी द्रव्यरूप जो मध्यधन, ताका प्रमाण आवै है। ताकौ एक घाटि आवली का आधा प्रमाण करि हीन असा जो निषेकहार कहिए गुणहानि आयाम का प्रमाण तै दूणा जो दो गुणहानि का प्रमाण, ताका भाग दीए चय का प्रमाण हो है। बहुरि इस चय कौं दोगुणहानि करि गुणे, उदयावली का प्रथम समय सबधी प्रथम निषेक का प्रमाण आवै है। यामैं एक चय घटाए,

उदयावली का द्वितीय समय संबंधी द्वितीय निषेक का प्रमाण आवै है। ऐसै ही क्रम तै उदयावली का अत निषेक पर्यन्त एक-एक चय घटाए, एक घाटि आवली प्रमाण चय उदयावली का प्रथम निषेक विषै घटे उदयावली का अत का निषेक का प्रमाण हो है। याकौ अंकसंदृष्टि करि व्यक्ति करिए है।

जैसै उदयावली विषै दीया द्रव्य दोय सै, बहुरि गच्छ आवली, ताका प्रमाण आठ, बहुरि एक-एक गुणहानि विषै जो निषेकनि का प्रमाण सो गुणहानि का आयाम, ताका प्रमाण आठ, याकौ दूणा कीए दो गुणहानि का प्रमाण सोलह, तहां सर्वद्रव्य दोय सै कौ आवली प्रमाण गच्छ आठ का भाग दीए पचीस मध्यधन का प्रमाण होइ। याकौं एक घाटि आवली का आधा साढा तीन, सो निषैकहार सोलह में घटाए साढ बारा, ताका भाग दीए दोय पाए, सो चय का प्रमाण जानना। याकौ दोगुणहानि सोलह, ताकरि गुणै, बत्तीस पाए, सो प्रथम निषेक का प्रमाण है। यामै एक-एक चय घटाए द्वितीयादि निषेकनि का तीस आदि प्रमाण हो है। ऐसै एक घाटि आवली प्रमाण चय के भये चौदह, ते प्रथम निषेक विषै घटाए, अवशेष अठारह अत निषेक का प्रमाण हो है। इनि सर्वनि कौ जोडै ३२, ३०, २८, २६, २४, २२, २०, १८ दोय सै (२००) सर्वद्रव्य का प्रमाण हो है। ऐसै ही अर्थसदृष्टि करि पूर्वोक्त यथार्थ स्वरूप अवधारण करना।

बहुरि यातै परै उदयावली काल पीछै अतर्मुहूर्तमात्र जो गुणश्रेणी का आयाम कहिए काल प्रमाण, ताविषै दीया हुवा द्रव्य, सो तिस काल का प्रथमादि समय विषै जे पूर्वै निषेक थे, तिनकी साथि क्रम तै असख्यातगुणा-असख्यातगुणा होई निर्जरै है। सो गुणश्रेणी निर्जरा का द्रव्य असख्यात लोक का भाग दीए बहुभाग प्रमाण था, सो सम्यक्त्व की उत्पत्तिरूप करणकाल सबधी गुणश्रेणी का आयाम अतर्मुहूर्तमात्र, तिसविषै असख्यात-असख्यात गुणी अनुक्रम करि निषेक रचना करिए है।

इहा सम्यक्त्व की उत्पत्ति सबधी गुणश्रेणी का कथन मुख्य कीया, तातै तिस ही के काल का ग्रहण कीया है। तहा **'प्रक्षेपयोगोद्धृतमिश्रपिंडः प्रक्षेपकाणां गुणको भवेदिति'** इस करण सूत्र करि प्रक्षेप जो शलाका, तिनिका जो योग कहिए जोड, ताकरि उद्धृत कहिए भाजित, ऐसा जो मिश्रपिंड कहिए मिल्या हुवा द्रव्य का जो प्रमाण, सो प्रक्षेप कहिए। अपनी-अपनी शलाकनि का प्रमाण, ताका गुणक कहिए

गुणकार हो है । अथवा यहु गुण्य हो है, ते प्रक्षेप गुणकार हो है, अैसे भी करिए तो दोष नाही, जातै दोऊनि का प्रयोजन एक है । सो इहा तिस गुणश्रेणी आयाम का प्रथम समय विषै जेता द्रव्य दीया, तीहि प्रमाण एक शलाका है । बहुरि तातै दूसरे समय तैसे ही असख्यात गुणी शलाका है । तातै तीसरे समय असख्यातगुणी शलाका है । अैसे असख्यातगुणा अनुक्रम करि अत समय विषै यथायोग्य असख्यातगुणी शलाका हो है । इनि सर्व प्रथमादि समय सबधी शलाकानि का जोड दीए, जो प्रमाण होइ, सो प्रक्षेपयोग जानना । ताका भाग गुणश्रेणी विषै दीया हुवा द्रव्य कौ लीए जो प्रमाण आवै, ताकौ प्रक्षेपक, जो अपना-अपना समय सबधी शलाका का प्रमाण, ताकरि गुणै, अपने-अपने द्रव्य का प्रमाण आवै है । अैसे जिस-जिस समय विषै जेता-जेता द्रव्य का प्रमाण आवै है, तितना-तितना द्रव्य तिस-तिस समय विषै निर्जरै है । या प्रकार गुणश्रेणी आयाम विषै सर्व गुणश्रेणी विषै दीया हुवा जो द्रव्य, सो निर्जरै है ।

अब इस कथन कौ अकसदृष्टि करि व्यक्त करिए है ।

जैसे गुणश्रेणी विषै दीया हुवा द्रव्य का प्रमाण छ सै अस्सी, गुणश्रेणी आयाम का प्रमाण च्यारि, असख्यात का प्रमाण च्यारि । तहा प्रथम समय सबधी जेता द्रव्य, तीहि प्रमाण शलाका एक, दूसरा समय सबधी तातै असख्यात गुणी शलाका च्यारि (४), तीसरा समय सबधी तातै असख्यातगुणी शलाका सोलह (१६), चौथा समय सबधी तातै असख्यातगुणी शलाका चौसठि (६४), सो इनि शलाकनि का नाम प्रक्षेप है । इनिका जो योग कहिये जोड, सो पिच्यासी हो है । ताकरि मिश्रपिड जो सबनि का मिल्या हुआ द्रव्य छ सै असी, ताकौं भाग दीजिये, तब आठ पाये । बहुरि यहु पाया हुआ राशि, ताकौ प्रक्षेप कहिए । अपनी-अपनी शलाका का प्रमाण, ताकरि गुणिये है । तहा आठ कौं एक करि गुणै प्रथम समय सबधी निषेक का प्रमाण आठ (८) हो है । बहुरि च्यारि कौ गुणै द्वितीय निषेक का प्रमाण बत्तीस हो है । बहुरि सोलह करि गुणै तृतीय निषेक का प्रमाण एक सौ अठ्ठाईस (१२८) हो है । बहुरि चौसठि करि गुणे अत निषेक का प्रमाण पाच सै बारह (५१२) हो है । ऐसै सर्व समयनि विषै ८, ३२, १२८, ५१२ मिलि करि छ सै असी (६८०) द्रव्य निर्जरै हैं ।

भावार्थ – लोक विषै जाकौं विसवा कहिए, ताका नाम इहा शलाका है । बहुरि जाकौं लोक विषै सीर का द्रव्य कहिए, ताका नाम इहा मिश्रपिड कह्या है, सो

सब विसवा मिलाइ, इनिका भाग देइ अपना-अपना विसवानि करि गुणै, जैसै अपना-अपना द्रव्य का प्रमाण आवै, तैसै इहा समय-समय विषैं जेता-जेता द्रव्य निर्जरै, ताका प्रमाण वर्णन किया है। ऐसै इहा सम्यक्त्व की उत्पत्तिरूप करण का गुणश्रेणी आयाम विषै वर्णन उदाहरण मात्र किया, ऐसै ही अन्यत्र भी जानना। तहा काल का वा द्रव्य का विशेष है, सो यथासभव जानना।

बहुरि यातै आगै जो उपरितन स्थिति विषै दीया द्रव्य, सो विवक्षित मतिज्ञानावरण की स्थिति के निषेक पूर्वै थे, तिन विषै इस गुणश्रेणी आयाम के काल के पीछै अनन्तर समय संबंधी जो निषेक, तातै लगाइ अत विषै अतिस्थापनावली के निषैकनि कौ छोडि जे पूर्वै निषेक थे, तिनि विषै क्रम तै दीजिए है। पूर्वै तिनि निषेकनि कौ द्रव्य विषै याकौ भी क्रम करि मिलाइए है। तहा नानागुणहानि विषै पहला-पहला निषेकनि विषै आधा-आधा दीजिये, द्वितीयादि निषेकनि विषै चय हीन का अनुक्रम करि दीजिए, सो इस वर्णन विषै त्रिकोण रचना सभवै है। ताका विशेष आगै करैगे। इहा प्रयोजन का अभाव है, तातै विशेष न कीया है। ऐसैं जो एक भाग मात्र जुदा द्रव्य ग्रह्या था, ताकौ वर्तमान समय तै लगाइ उदयावली का काल, ताके पीछै गुणश्रेणी आयाम का काल, ताके पीछै अवशेष सर्वस्थिति का काल, अंत विषै अतिस्थापनावली बिना सो उपरितनस्थिति का काल, तिनके निषेक पूर्वै थे, तिनिविषै मिलाइए है, सो यह मिलाया हुवा द्रव्य पूर्व निषेकनि की साथि उदय होइ निर्जरै है, ऐसा भाव जानना।

बहुरि पूर्वै कह्या जो-जो गुणश्रेणी निर्जरा द्रव्य, सो-सो श्रावकादि दश स्थानकनि विषै असख्यात-असंख्यात गुणा है, सो कैसे ?

ताका समाधान – तिस गुणश्रेणी द्रव्य कौ कारणभूत जो अपकर्षण भागहार, तिनके अधिक-अधिक विशुद्धता का निमित्त करि असख्यातगुणा घाटिपना है, तातै तिस गुणश्रेणी द्रव्य कै असंख्यातगुणा अनुक्रम की प्रसिद्धता है।

भावार्थ – श्रावकादि दश स्थानकनि विषै विशुद्धता अधिक-अधिक है, तातै जो पूर्वस्थान विषै अपकर्षण भागहार का प्रमाण था, ताके असख्यातवे भाग उत्तर स्थान विषै अपकर्षण भागहार का प्रमाण जानना। सो जेता भागहार घटता होइ, तेता लब्धराशि का प्रमाण अधिक होइ। तातै इहां लब्धराशि जो गुणश्रेणी का द्रव्य, सो भी क्रम तै असंख्यातगुणा हो है।

बहुरि गुणश्रेणी आयाम का काल तातैं विपरीत उल्टा अनुक्रम धरै है, सोई कहिए है – 'समुद्घात जिनकौ आदि देकरि विशुद्ध मिथ्यादृष्टि पर्यंत गुणश्रेणी आयाम का काल क्रम करि सख्यातगुणा-सख्यातगुणा है'। समुद्घात जिनका गुणश्रेणी आयामकाल अन्तर्मुहूर्तमात्र है। तातै स्वस्थान जिनका गुणश्रेणी आयामकाल सख्यात गुणा है। तातै क्षीणमोह का सख्यातगुणा है। अैसे ही क्रम तै पीछे तै क्षपकश्रेणी वाले आदि विषै सख्यात-संख्यात गुणा जानना।

तहा अत विषै बहुत वार सख्यातगुणा भया, तौ भी करण परिणाम सयुक्त विशुद्ध मिथ्यादृष्टि कै गुणश्रेणी आयाम का काल अतर्मुहूर्तमात्र ही है, अधिक नाही। काहे तै ?

जातै अतर्मुहूर्त के भेद बहुत है। तहा जघन्य अतर्मुहूर्त एक आवली प्रमाण है, सो सर्व तै स्तोक है। बहुरि यातै एक समय अधिक आवली तै लगाइ एक-एक समय बधता मध्यम अतर्मुहूर्त होइ। अत का उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त एक समय घाटि दोय घटिकारूप मुहूर्त प्रमाण है। तहा ताके उच्छ्वास तीन हजार सात सै तेहत्तरि अर एक उच्छ्वास की आवली संख्यात, यातै दोय वार सख्यातगुणी आवली प्रमाण उत्कृष्ट मुहूर्त है। बहुरि – 'आदि अते सुद्धे वड्ढिहदे रूवसजुदे ठाणे' इस सूत्र करि आवलीमात्र जघन्य अतर्मुहूर्त कौ दोय वार सख्यातगुणित आवली प्रमाण उत्कृष्ट अतर्मुहूर्त विषै घटाइ, वृद्धि का प्रमाण एक समय का भाग दीए जो प्रमाण होइ, तामै एक और जोडे जो प्रमाण होइ, तितने अतर्मुहूर्त के भेद सख्यात आवली प्रमाण हो हैं।

आगै अैसे कर्म सहित जीवनि का गुणस्थानकनि का आश्रय लीए स्वरूप अर तिस-तिस का कर्म की निर्जरा का द्रव्य वा काल आयाम का प्रमाण, ताकौ निरूपण करि अब निर्जरे है सर्व कर्म जिनकरि अैसे जे सिद्ध परमेष्ठी, तिनका स्वरूप कौं अन्यमत के विवाद का निराकरण लीए गाथा दोय करि कहैं हैं –

अट्ठवियकम्मवियला, सीदीभूदा णिरंजणा णिच्चा।
अट्ठगुणा किदकिच्चा, लोयग्गणिवासिणो सिद्धा ॥६८॥[1]

अष्टविधकर्मविकलाः, शीतीभूता निरंजना नित्याः।
अष्टगुणाः कृतकृत्याः, लोकाग्रनिवासिनः सिद्धाः ॥६८॥

---

१ षट्खंडागम – धवला पुस्तक १, पृष्ठ २०१, सूत्र २३, गाथा १२७

टीका – केवल कहे जे गुणस्थानवर्ती जीव, तेई नाही है सिद्ध कहिये अपने आतमस्वरूप की प्राप्तिरूप लक्षण धरै जो सिद्धि, ताकरि सयुक्त मुक्त जीव भी लोक विषै है। ते कैसे है ? **अष्टविधकर्मविकलाः** कहिये अनेक प्रकार उत्तर प्रकृतिरूप भेद जिन विषै गर्भित ऐसे जो ज्ञानावरणादिक आठ प्रकार कर्म आठ गुणनि के प्रतिपक्षी, तिनका सर्वथा क्षय करि प्रतिपक्ष रहित भए है। कैसे आठ कर्म आठ गुणनि के प्रतिपक्षी है ? सो कहै हैं –

उक्तं च

मोहो खाइय सम्मं, केवलणाण च केवलालोय।
हणदि उ आवरणदुगं, अणतविरयं हणेदि विग्घ तु ॥
सुहमं च णामकम्मं, हणेदि, आऊ हणेदि अवगहणं।
अगुरुलहुगं गोदं अव्वाबाहं हणेइ वेयणियं ॥

इनिका अर्थ – मोहकर्म क्षायिक सम्यक्त्व कौ घातै है। केवलज्ञान अर केवलदर्शन कौ आवरणद्विक जो ज्ञानावरण-दर्शनावरण, सो घातै है। अनतवीर्य कौं विघन जो अतराय कर्म, सो घातै है। सूक्ष्मगुण कौ नाम कर्म घातै है। आयुकर्म अवगाहन गुण कौं घातै है। अगुरुलघु कौ गोत्र कर्म घातै है। अव्याबाध कौ वेदनीयकर्म घातै है। ऐसै आठ गुणनि के प्रतिपक्षी आठ कर्म जानने।

इस विशेषण करि जीव के मुक्ति नाही है, ऐसा मीमांसक मत, बहुरि सर्वदा कर्ममलनि करि स्पर्शा नाही, तातै सदाकाल मुक्त ही है, सदा ही ईश्वर है ऐसा सदाशिव मत, सो निराकरण किया है।

बहुरि कैसे है सिद्ध ? **शीतीभूता** कहिये जन्म-मरणादिरूप सहज दु ख अर रोगादिक तै निपज्या शरीर दु ख अर सर्पादिक तै उपज्या आगतुक दु ख अर आकुलतादिरूप मानसदु ख इत्यादि नानाप्रकार ससार सबधी दु ख, तिनकी जो वेदना, सोई भया आतप, ताका सर्वथा नाश करि शीतल भए है, सुखी भए है। इस विशेषण करि मुक्ति विषै आतमा के सुख का अभाव है, ऐसै कहता जो साख्यमत, सो निराकरण कीया है।

बहुरि कैसे है सिद्ध ? **निरंजनाः** कहिये नवीन आस्रवरूप जो कर्ममल, सो ही भया अजन, ताकरि रहित है। इस विशेषण करि मुक्ति भए पीछै, बहुरि कर्म अजन का सयोग करि ससार हो है, ऐसै कहता जो सन्यासी मत, सो निराकरण कीया है।

बहुरि कैसे हैं सिद्ध ? **नित्याः** कहिये यद्यपि समय-समयवर्ती अर्थपर्यायनि करि परिणमए सिद्ध अपने विषै उत्पाद, व्यय कौ करै है, तथापि विशुद्ध चैतन्य स्वभाव का सामान्यभावरूप जो द्रव्य का आकार, सो अन्वयरूप है, भिन्न न हो है, ताके माहात्म्य तै सर्वकाल विषै अविनाशीपणा कौ आश्रित हैं, तातै ते सिद्ध नित्यपना कौ नाही छोडै है। इस विशेषण करि क्षण-क्षण प्रति विनाशीक चैतन्य के पर्याय ते, एक सतानवर्ती है, परमार्थ तै कोई नित्य द्रव्य नाही है, ऐसै कहता जो बौद्धमती की प्रतिज्ञा, सो निराकरण करी है।

बहुरि कैसे है सिद्ध ? **अष्टगुणाः** कहिए क्षायिक सम्यक्त्व, ज्ञान, दर्शन, वीर्य, सूक्ष्मत्व, अवगाहन, अगुरुलघुत्व, अव्याबाध नाम धारक जे आठ गुण, तिनकरि सयुक्त हैं। सो यहु विशेषण उपलक्षणरूप है, ताकरि तिनि गुणनि के अनुसार अनतानत गुणनि का तिन ही विषै अतर्भूतपना जानना। इस विशेषण करि ज्ञानादि गुणनि का अत्यन्त अभाव होना, सोई आत्मा कै मुक्ति है ऐसै कहता जो नैयायिक अर वैशेषिक मत का अभिप्राय, सो निराकरण कीया है।

बहुरि कैसे है सिद्ध ? **कृतकृत्याः** कहिए सपूर्ण कीया है कृत्य कहिए सकल कर्म का नाश अर ताका कारण चारित्रादिक जिनकरि अैसे है। इस विशेषण करि ईश्वर सदा मुक्त है, तथापि जगत का निर्मापण विषै आदर कीया है, तीहि करि कृतकृत्य नाही, वाकै भी किछू करना है, अैसे कहता जो ईश्वर सृष्टिवाद का अभिप्राय, सो निराकरण कीया है।

बहुरि कैसे है सिद्ध ? **लोकाग्रनिवासिनः** कहिए विलोकिए है जीवादि पदार्थ जाविषै, अैसा जो तीन लोक, ताका अग्रभाग, जो तनुवात का भी अत, तीहिविषै निवासी है, तिष्ठै हैं। यद्यपि कर्म क्षय जहा कीया, तिस क्षेत्र तै ऊपरि ही कर्मक्षय के अनतरि ऊर्ध्वगमन स्वभाव तै ते गमन करै है, तथापि लोक का अग्रभाग पर्यंत ऊर्ध्वगमन हो है। गमन का सहकारी धर्मास्तिकाय के अभाव तै तहा तै ऊपरि गमन न हो हैं, अैसै लोक का अग्रभाग विषै ही निवासीपणा तिन सिद्धनि के युक्त है। अन्यथा कहिए तौ लोक-अलोक के विभाग का अभाव होइ। इस विशेषण करि आत्मा के ऊर्ध्वगमन स्वभाव तै मुक्त अवस्था विषै कही भी विश्राम के अभाव तै ऊपरि-ऊपरि गमन हुवा ही करै है, अैसै कहता जो माडलिक मत, सो निराकरण कीया है।

आगे श्री माधवचन्द्र त्रैविद्यदेव ते 'अष्टविधकर्मविकला' इत्यादि सात विशेषणनि का प्रयोजन दिखावै है —

सदसिवसंखो मक्कडि, बुद्धो णैयाइयो य वेसेसी ।
ईसरमंडलिदंसण,-विदूसणट्ठं कयं एदं ।। ६९ ।।

सदाशिवः सांख्यः मस्करी, बुद्धो नैयायिकश्च वैशेषिकः ।
ईश्वरमंडलिदर्शनविदूषरणार्थ कृतमेतत् ।। ३९ ।।

टीका – सदाशिवमत, साख्यमत, मस्करी सन्यासी मत, बौद्धमत, नैयायिक मत, वैशेषिकमत, ईश्वरमत, मडलिमत ए जु दर्शन कहिए मत, तिनके दूषने के अर्थि ए पूर्वोक्त विशेषण कीए है ।

उक्तं च –

सदाशिवः सदाकर्म, सांख्यो मुक्तं सुखोज्झितम् ।
मस्करी किल मुक्तानां, मन्यते पुनरागतिम् ।।
क्षणिकं निर्गुणं चैव, बुद्धो यौगश्च मन्यते ।
कृतकृत्यं तमीशानो, मंडली चोर्ध्वगामिनम् ।।

इनिके अर्थ – सदाशिव मतवाला सदा कर्म रहित मानै है । साख्य मतवाला मुक्त जीव कौ सुख रहित मानै है । मस्करी सन्यासी, सो मुक्त जीव कै ससार विषै बहुरि आवना मानै है । बहुरि बौद्ध अर योग मतवाले क्षणिक अर निर्गुण आत्मा कौं मानै है । बहुरि ईशान जो सृष्टिवादी, सो ईश्वर कौ अकृतकृत्य मानै हैं । बहुरि माडलिक आत्मा कौ ऊर्ध्वगमन रूप ही मानै है । असैं माननेवाले मतनि का पूर्वोक्त विशेषण तै निराकरण करि यथार्थ सिद्धपरमेष्ठी का स्वरूप निरूपण कीया । ते सिद्ध भगवान आनन्दकर्ता होहु ।

इति श्रीआचार्य नेमिचद्र विरचित गोम्मटसार द्वितीय नाम पचसग्रह ग्रन्थ की जीव
तत्त्वप्रदीपिका नाम सस्कृत टीका के अनुसारि **सम्यग्ज्ञानचद्रिका** नाम
भाषा टीका के विषै जीव काडविषै कही जे वीस प्ररूणा
तिन विषै **गुणस्थान प्ररूपणा** है नाम जाका
असा **प्रथम** अधिकार सपूर्ण भया ।।१।।

———

दूसरा अधिकार : जीवसमास प्ररूपण

कर्मघातिया जीति जिन, पाय चतुष्टय सार[१] ।
विश्वस्वरूप प्रकाशियो, नमौं अजित सुखकार[२] ।।

टीका – असै गुणस्थान सबन्धी सख्यादिक प्ररूपणा के अनन्तरि जीवसमास प्ररूपणा कौं रचता सता निरुक्ति पूर्वक सामान्यपनै तिस जीवसमास का लक्षण कहै है –

जेहिं अणेया जीवा, णज्जंते बहुविहा वि तज्जादी ।
ते पुण संगहिदत्था, जीवसमासा त्ति विण्णेया ।। ७० ।।

यैरनेके जीवाः, ज्ञायंते बहुविधा अपि तज्जातयः ।
ते पुनः सगृहितार्था, जीवसमासा इति विज्ञेयाः ।। ७० ।।

टीका – यैः कहिए जिनि समान पर्यायरूप धर्मनि करि **जीवा** कहिए जीव हैं, ते **अनेके** अपि कहिए यद्यपि बहुत है, **बहुविधाः** कहिए बहुत प्रकार हैं, तथापि **तज्जातयः** कहिए विवक्षित सामान्यभाव करि एकठा करने तै एक जाति विषै प्राप्त कीए हुए **ज्ञायंते** कहिए जानिए **ते** कहिये जीव समान पर्यायरूप **धर्मसंगृहीतार्थाः** कहिए अतर्भूत करी है अनेक व्यक्ति जिनिकरि असे **जीवसमासाः** कहिए जीवसमास हैं, असै जानना ।

भावार्थ – जैसे एक गऊ जाति विषै अनेक खाडी, मुडी, सावरी गऊरूप व्यक्ति सास्नादिमत्त्व समान धर्म करि अतर्गभित हो है । तैसै एकेद्रियत्वादि जाति विषै अनेक पृथ्वीकायादिक व्यक्ति जिनि एकेद्रियत्वादि युक्त लक्षणनि करि अतर्गभित करिए, तिनिका नाम जीवसमास है । काहे तै ? जातै **'जीवाः समस्यते यैर्येषु वा ते जीवसमासाः'** जीव हैं ते सग्रहरूप करिए जिनि समानधर्मनि करि वा जिनि समान लक्षणनि विषै ते वे समानरूप लक्षण जीवसमास हैं, असी निरुक्ति हो है । इस विशेषण करि समस्त ससारी जीवनि का संग्रहणरूप ग्रहण करना है प्रयोजन जाका, असा जीवसमास का प्ररूपण है, सो प्रारभ कीया है, असा जानना । अथवा अन्य अर्थ कहै है **'जीवा अज्ञेया अपि'** कहिए यद्यपि जीव अज्ञात है । काहे तै ? **बहुविधत्वात्** कहिए जातै जीव बहुत प्रकार है । नानाप्रकार आतमा की पर्यायरूप व्यक्ति तै

---

१ 'सार' के स्थान पर 'अनन्त' ऐसा पाठान्तर है ।
२ 'सुखकार' के स्थान पर 'शिवसत' ऐसा पाठान्तर है ।

समस्तपना करि केवलज्ञान विना न जानिये है, यातैं सर्वपर्यायिरूप जीव जानने कौं असमर्थपना है, तथापि **तज्जातयः** कहिए सोई एकेन्द्रियत्वादिरूप है जाति जिनकी। बहुरि **संगृहीतार्थाः** कहिए समस्तपना करि गर्भित कीए है, एकठे कीये है व्यक्ति जिनिकरि, ऐसे जीव है, तेई जीवसमास है, ऐसा जानना। अथवा अन्य अर्थ कहै है – **संगृहीतार्थाः** कहिए समस्तपना करि गर्भित करी है, एकठी करी है व्यक्ति जिन करि ऐसी **तज्जातयः** कहिए ते जाति है। जातै विशेष विना सामान्य न होइ। काहे तै ? जातै असा वचन है – **'निर्विशेषं हि सामान्यं भवेच्छशविषाणवत्'** याका अर्थ – विशेष रहित जो सामान्य, सो ससा के सीग समान अभावरूप है, तातै सगृहीतार्थ जे वे जाति, तिनका कारणभूत जातिनि करि जीव प्राणी है, ते **'अनेकेऽपि'** कहिए यद्यपि अनेक है, **बहुविधा अपि** कहिए बहुत प्रकार है, तथापि ज्ञायते कहिए जानिए है, ते वे जाति जीवसमास है, असा जानना।

भावार्थ – जीवसमास शब्द के तीन अर्थ कहे। तहा एक अर्थ विषै एकेद्रिय-युक्तत्वादि समान धर्मनि कौ जीवसमास कहे। एक अर्थ विषै एकेद्रियादि जीवनि कौ जीवसमास कहे। एक अर्थ विषै एकेद्रियत्वादि जातिनि कौ जीवसमास कहे, असैं विवक्षा भेद करि तीन अर्थ जानने।

आगै जीवसमास की उत्पत्ति का कारण बहुरि जीवसमास का लक्षण कहै है –

तसचदुजुगाणमज्झे, अविरुद्धेहिं जुदजादिकम्मुदये।
जीवसमासा होंति हु, तब्भवसारिच्छसामण्णा॥ ७१॥

त्रसचतुर्युगलानां मध्ये, अविरुद्धैर्युतजातिकर्म्मोदये।
जीवसमासा भवंति हि, तद्भवसादृश्यसामान्याः॥ ७१॥

टीका – त्रस-स्थावर, बहुरि बादर-सूक्ष्म, बहुरि पर्याप्त-अपर्याप्त, बहुरि प्रत्येक-साधारण ऐसै नाम कर्म की प्रकृतिनि के च्यारि युगल है। तिनिके विषै यथासभव परस्पर विरोध रहित जे प्रकृति, तिनिकरि सहित मिल्या ऐसा जो एकेद्रियादि जातिरूप नाम कर्म का उदय, ताकौ होते सतै प्रकट भए ऐसे तद्भवसादृश्य सामान्य-रूप जीव कै धर्म, ते जीवसमास है।

तहा तद्भव सामान्य का अर्थ कहै है – विवक्षित एकद्रव्य विषै प्राप्त जो त्रिकाल सबधी पर्याय, ते **भवंति** कहिए विद्यमान जाविषै होइ, सो तद्भव सामान्य है । ऊर्ध्वता सामान्य का नाम तद्भव सामान्य है । जहा अनेक काल सबधी पर्याय का ग्रहण होइ, तहा ऊर्ध्वता सामान्य कहिए । जातै काल के समय है, ते ऊपरि-ऊपरि क्रम तै प्रवर्ते है, युगपत् चौड़ाईरूप नाही प्रवर्ते हैं, तातै इहा नाना काल विषै एक विवक्षित व्यक्ति विषै प्राप्त जे पर्याय, तिनिका अन्वयरूप ऊर्ध्वता सामान्य है, सो एक द्रव्य के आश्रय जो पर्याय, सो अन्वयरूप है । जैसे स्थास, कोश, कुशूल, घट, कपालक आदि विषै माटी अन्वयरूप आकार धरै द्रव्य है ।

भावार्थ – माटी क्रम तै इतने पर्यायरूप परिणया । प्रथम स्थास कहिए पिडरूप भया । बहुरि कोश कहिए चाक के ऊपरि ऊभा कीया, पिंडरूप भया । बहुरि कुशूल कहिए हाथ अगूंठनि करि कीया आकाररूप भया । बहुरि घट कहिए घडारूप भया । बहुरि कपाल कहिए फूटया घडारूप भया । असै एक माटीरूप व्यक्ति विषै अनेक कालवर्ती पर्याय हो हैं । तिनि सबनि विषै माटीपना पाइए है । ताकरि सर्वत्र माटी द्रव्य अवलोकिए है । असै इहा भी अनेक कालवर्ती अनेक अवस्थानि विषै एकेंद्रिय आदि जीव द्रव्यरूप व्यक्ति, सो अन्वयरूप द्रव्य जानना । सो याका नाम तद्भव सामान्य वा ऊर्ध्वता सामान्य है । तीहि तद्भव सामान्य करि उपलक्षणरूप सयुक्त असे जो सादृश्य सामान्य कहिए, तिर्यक् सामान्य ते जीवसमास है । सो एक काल विषै नाना व्यक्तिनि कौ प्राप्त भया असा एक जातिरूप अन्वय, सो तिर्यक् सामान्य है । याका अर्थ यहु – जो समान धर्म का नाम सादृश्य सामान्य है । जैसे खाडी, मूंडी, सावरी इत्यादि नाना प्रकार की व्यक्तिनि विषै गऊपणा समान धर्म है ।

भावार्थ – एक कालवर्ती खाडा, मूडा, सावला इत्यादि अनेक बैल, तिनि विषै बैलपना समान धर्म है, सो यहु सादृश्य सामान्य है । तैसे एक कालवर्ती पृथ्वीकायिक आदि नाना प्रकार जीवनि विषै एकेंद्रिय युक्तपना आदि धर्म हैं, ते समान परिणामरूप है, तातै इनिकौ सादृश्य सामान्य कहिए । असे जे सादृश्य सामान्य, तेई जीवसमास है, असा तात्पर्य जानना । बहुरि तिनि च्यारि युगलनि की आठ प्रकृतिनि विषै एकेंद्रिय जाति नाम कर्म सहित त्रस नाम कर्म का उदय विरोधी है । बहुरि द्वीद्रियादिक जातिरूप नाम कर्म की च्यारि प्रकृतिनि का उदय सहित स्थावर-सूक्ष्म-साधारण नाम प्रकृतिनि का उदय विरोधी है, अन्य कर्म का

उदय अविरोधी है । बहुरि तैसै ही त्रस नाम कर्म सहित स्थावर-सूक्ष्म-साधारण नाम कर्म का उदय विरोधी है, अन्य कर्म का उदय अविरोधी है । बहुरि स्थावर नाम कर्म सहित त्रस नाम कर्म का उदय एक ही विरोधी है, अवशेष कर्म का उदय अविरोधी है । बहुरि बादर नाम कर्म सहित सूक्ष्म नाम कर्म का उदय विरोधी है, अवशेष प्रकृतिनि का उदय अविरोधी है । बहुरि सूक्ष्म नाम कर्म सहित त्रस बादर नाम कर्म का उदय विरोधी है, अवशेष कर्म का उदय अविरोधी है । बहुरि पर्याप्त नाम कर्म सहित अपर्याप्त नाम कर्म का उदय विरोधी है, अवशेष सर्व कर्म का उदय अविरोधी है । बहुरि अपर्याप्त नाम कर्म का उदय सहित पर्याप्त नाम कर्म का उदय विरोधी है, अवशेष सर्व कर्म का उदय अविरोधी है । बहुरि प्रत्येक शरीर नाम कर्म का उदय सहित साधारण शरीर नाम कर्म का उदय विरोधी है, अवशेष कर्म का उदय अविरोधी है । बहुरि साधारण शरीर नाम कर्म का उदय सहित प्रत्येक शरीर नाम कर्म का उदय अर त्रस नाम कर्म का उदय विरोधी है, अवशेष कर्म का उदय अविरोधी है । अैसै अविरोधी प्रकृतिनि का उदय करि निपजे जे सदृश परिणामरूप धर्म, ते जीवसमास है, अैसा जानना ।

आगै सक्षेप करि जीवसमास के स्थानकनि कौ प्ररूपै है -

बादरसुहमेइंदिय, बितिचउरिंदिय असण्णिसण्णी य ।
पज्जत्तापज्जत्ता, एवं ते चोद्दसा होंति ।।७२।।

बादरसूक्ष्मैकेंद्रियद्वित्रिचतुरिंद्रियासंज्ञिसंज्ञिनश्च ।
पर्याप्तापर्याप्ता, एवं ते चतुर्दश भवंति ।।७२।।

टीका - एकेंद्रिय के बादर, सूक्ष्म ए दोय भेद । बहुरि विकलत्रय के द्वीद्रिय, त्रीद्रिय, चतुरिद्रिय ए तीन भेद । बहुरि पचेद्रिय के सज्ञी, असज्ञी ए दोय भेद, अैसै सात जीवभेद भए । ये एक-एक भेद पर्याप्त, अपर्याप्त रूप है । अैसै सक्षेप करि चौदह जीवसमास हो है ।

आगै विस्तार तै जीवसमास कौ प्ररूपै है -

भूआउतेउवाऊ, णिच्चचदुग्गदिणिगोदथूलिदरा ।
पत्तेयपदिट्ठिदरा, तसपरण पुण्णा अपुण्णदुगा ।।७३।।

भ्वप्तेजोवायुनित्यचतुर्गतिनिगोदस्थूलेतराः ।
प्रत्येकप्रतिष्ठेतराः, त्रसपंच पूर्णा अपूर्णद्विकाः ।।७३।।

टीका – पृथ्वीकायिक, अप्कायिक, तेज कायिक, वायुकायिक, अर वनस्पतिकायिकनि विषै दोय भेद नित्यनिगोद साधारण, चतुर्गतिनिगोद साधारण ए छह भेद भए। ते एक-एक भेद बादर, सूक्ष्म करि दोय-दोय भेदरूप है, असें बारह भए। बहुरि प्रत्येक शरीररूप वनस्पतीकायिक के सप्रतिष्ठित, अप्रतिष्ठित ए दोय भेद हैं। बहुरि विकलेंद्रिय के बेइंद्री, तेइंद्री, चौइंद्री, ए तीन भेद। बहुरि पचेंद्रिय के सज्ञी पचेंद्रिय, असज्ञी पचेंद्रिय ए दोय भेद। ए सर्व मिलि सामान्य अपेक्षा उगणीस जीवसमास हो हैं। बहुरि ए सर्व ही प्रत्येक पर्याप्तक, निर्वृत्ति अपर्याप्रक, लब्धि अपर्याप्तक असें तीन-तीन भेद लीए हैं। तातें विस्तार तें जीवसमास सत्तावन भेद सयुक्त हो है।

आगें इनि सत्तावन जीव-भेदनि के गर्भित विशेष दिखावने के अर्थि स्थानादिक च्यारि अधिकार कहै हैं –

ठाणेहिं वि जोणीहिं वि, देहोग्गाहणकुलाण भेदेहिं ।
जीवसमासा सव्वे, परूविदव्वा जहाकमसो ॥७४॥

स्थानैरपि योनिभिरपि, देहावगाहनकुलानां भेदैः ।
जीवसमासाः सर्वे, प्ररूपितव्या यथाक्रमशः ॥७४॥

टीका – स्थानकनि करि, बहुरि योनि भेदनि करि, बहुरि देह की अवगाहना के भेदनि करि, बहुरि कुलभेदनि, करि सर्व ही ते जीवसमास यथाक्रम सिद्धात परिपाटी का उलघन जैसें न होइ, तैसें प्ररूपण करने योग्य है।

आगें जैसें उद्देश कहिए नाम का क्रम होइ, तैसें ही निर्देश कहिए स्वरूप निर्णय क्रम करि करना। इस न्याय करि प्रथम कह्या जो जीवसमास विषै स्थानाधिकार, ताकौ गाथा च्यारि करि कहै हैं –

सामण्णजीव तसथावरेसु, इगिविगलसयलचरिमदुगे ।
इंदियकाये चरिमस्स य, दुतिचदुपणगभेदजुदे ॥७५॥

सामान्यजीवः त्रसस्थावरयोः, एकविकलसकलचरमद्विके ।
इंद्रियकाययोः चरमस्य च, द्वित्रिचतुःपचभेदयुते ॥७५॥

टीका – तहा उपयोग लक्षण धरै सामान्यमात्र जीवद्रव्य, सो द्रव्यार्थिक नय करि ग्रहण कीए जीवसमास का स्थान एक है। बहुरि संग्रहनय करि ग्रह्या जो अर्थ, ताका भेद करणहारा जो व्यवहारनय, ताकी विवक्षा विषै ससारी जीव के मुख्य भेद त्रस-स्थावर, ते अधिकाररूप है, असै जीवसमास के स्थान दोय है। बहुरि अन्य प्रकार करि व्यवहारनय की विवक्षा होतै एकेद्रिय, विकलेद्रिय, सकलेद्रिय, जीवनि कौ अधिकाररूप करि जीवसमास के स्थान तीन है। बहुरि असै ही आगै भी सर्वत्र अन्य-अन्य प्रकारनि करि व्यवहारनय की विवक्षा जाननी। सो कहै है – एकेंद्रिय, विकलेंद्रिय दोय तौ ए, अर सकलेद्रिय जो पचेद्रिय, ताके असज्ञी, सज्ञी ए दोय भेद, असै मिलि जीवसमास के स्थान च्यारि हो है। बहुरि तैसै ही एकेद्रिय, बेइद्री तेइंद्री, चौइद्री, पचेंद्री भेद तै जीवसमास के स्थान पाच है। बहुरि तैसै ही पृथ्वी, अप्, तेज, वायु, वनस्पति, त्रसकायिक भेद तै जीवसमास के स्थान छह है। बहुरि तैसै ही पृथ्वी, अप्, तेज, वायु, वनस्पति ए पाच स्थावर अर अन्य त्रसकाय के विकलेद्रिय, सकलेद्रिय ए दोय भेद, असै मिलि जीवसमास के स्थानक सप्त हो है। बहुरि तैसै ही पृथ्वी आदि स्थावरकाय पांच, विकलेद्रिय, असज्ञी पचेंद्रिय, सज्ञी पचेद्रिय ए तीन मिलि करि जीवसमास के स्थान आठ हो है। बहुरि स्थावरकाय पाच अर बेद्री, तेइद्री, चौद्री, पचेद्री ए च्यारि मिलि करि जीव-समास के स्थान नव हो है। बहुरि तैसै ही स्थावरकाय पाच, अर बेद्री, तेद्री, चौंद्री, असज्ञी पचेद्री, सज्ञी पचेद्री ए पाच मिलि करि जीवसमास के स्थान दश हो है।

पणजुगले तससहिये, तसस्स दुतिचदुरपणगभेदजुदे।
छद्दुगपत्तेयह्मि य, तसस्स तियचदुरपणगभेदजुदे ॥७६॥

पंचयुगले त्रससहिते, त्रसस्य द्वित्रिचतुःपंचकभेदयुते।
षड्द्विकप्रत्येके च, त्रसस्य त्रिचतुःपंचभेदयुते ॥७६॥

टीका – तैसै ही स्थावरकाय पाच, ते प्रत्येक बादर-सूक्ष्म भेद सयुक्त, ताके दश अर त्रसकाय ए मिलि जीवसमास के स्थान ग्यारह हो है। बहुरि तैसै ही स्थावरकाय दश अर विकलेद्रिय सकलेद्रिय, मिलि करि जीवसमास के स्थान बारह हो है। बहुरि तैसै ही स्थावरकाय दश अर त्रसकाय के विकलेद्रिय, सज्ञी, असज्ञी पचेद्रिय ए तीन मिलि करि जीवसमास के स्थान तेरह हो है। बहुरि स्थावरकाय दश अर त्रसकाय के बेद्री, तेद्री, चौद्री, पचेद्री ए च्यारि भेद मिलि जीवसमास के

स्थान चौदह हो है । बहुरि तैसे ही स्थावरकाय के दश, बहुरि त्रसकाय के बेंद्री, तेंद्री, चौंद्री, असज्ञी पचेद्री, सज्ञी पचेद्री ए पाच मिलि करि जीवसमास के स्थान पद्रह हो है। बहुरि तैसे ही पृथिवी, अप्, तेज, वायु ए च्यारि अर साधारण वनस्पति के नित्यनिगोद, इतरनिगोद ए दोय भेद मिलि छह भए । ते ए जुदे-जुदे बादर सूक्ष्म भेद लीए है । ताके बारह अर एक प्रत्येक वनस्पती, असे स्थावरकाय तेरह अर त्रसकाय विकलेद्रिय, असज्ञी पचेद्रिय, सज्ञी पचेद्रिय ए तीनि मिलि जीवसमास के स्थान सोलह हो है । बहुरि तैसे ही स्थावरकाय के तेरह अर त्रसकाय के बेंद्री, तेंद्री, चौंद्री, पचेद्री ए च्यारि भेद मिलि करि जीवसमास के स्थान सतरह हो है । बहुरि स्थावरकाय के तेरह अर त्रसकाय के बेंद्री, तेंद्री, चौंद्री, असज्ञी पचेद्री, सज्ञी पचेद्री ए पाच मिलि जीवसमास के स्थान अठारह हो है ।

सगजुगलह्मितसस्स य, पणभंगजुदेसु होंति उणवीसा ।
एयादुणवीसो त्ति य, इगिबितिगुणिदे हवे ठाणा ।।७७।।

सप्तयुगले त्रसस्य च, पंचभंगयुतेषु भवंति एकोनविंशतिः ।
एकादेकोनविंशतिरिति च, एकद्वित्रिगुणिते भवेयुः स्थानानि ।।७७।।

टीका – तैसे ही पृथ्वी, अप्, तेज, वायु, नित्यनिगोद, इतरनिगोद ए छहो बादर-सूक्ष्मरूप, ताके बारह अर प्रत्येक वनस्पति के सप्रतिष्ठित, अप्रतिष्ठित ए दोय अर त्रस के बेंद्री, तेंद्री, चौंद्री असज्ञी पचेद्रिय, सज्ञी पचेद्रिय ए पाच मिलि जीवसमास के स्थान उगणीस हो है । असे कहे जे ए सामान्य जीवरूप एक स्थान कौ आदि देकरि उगणीस भेदरूप स्थान पर्यन्त स्थान, तिनिकौ एक, दोय तीन करि गुणे, अनुक्रम ते अत विषै उगणीस भेदस्थान, अडतीस भेदस्थान, सत्तावन भेदस्थान हो है ।

सामण्णेण तिपंती, पढमा बिदिया अपुण्णगे इदरे ।
पज्जत्ते लद्धिअपज्जत्तेऽपढमा हवे पंती ।।७८।।

सामान्येन त्रिपंक्तयः, प्रथमा द्वितीया अपूर्णके इतरस्मिन् ।
पर्याप्ते लब्ध्यपर्याप्तेऽप्रथमा भवेत् पंक्तिः ।।७८।।

टीका – पूर्वे कहे जे एक कौ आदि देकरि एक-एक बधते उगणीस भेदरूप स्थान, तिनिकी तीन पक्ति नीचै-नीचै करनी । तिनि विषै प्रथम पक्ति तौ पर्याप्तादिक

की विवक्षा कौ न करि सामान्य आलाप करि गुणनी। बहुरि दूसरी पक्ति दोय जे पर्याप्त, अपर्याप्त भेद, तिनि करि गुणनी। बहुरि अप्रथमा कहिए तीसरी पक्ति, सो तीन जे पर्याप्त, निर्वृत्ति अपर्याप्त, लब्धि अपर्याप्त भेद तिनि करि गुणनी। इहा दूसरी, तीसरी दोय पक्ति अप्रथमा है। तथापि दूसरी पक्ति काठै ही कही, तीहिकरि अप्रथमा असै शब्द करि अवशेष रही पक्ति तीसरी सोई ग्रहण करी है।

भावार्थ – एक कौ आदि देकरि उगणीस पर्यन्त जीवसमास के स्थान कहे। तिनिका सामान्यरूप ग्रहण कीए एक आदि एक-एक बधते उगणीस पर्यन्त, स्थान हो है। इहा सामान्य विषै पर्याप्तादि भेद गर्भित जानने। बहुरि तिन ही एक-एक के पर्याप्त, अपर्याप्त भेद कीए दोय कौ आदि देकरि दोय-दोय बधते अडतीस पर्यन्त स्थान हो है। इहा अपर्याप्त विषै निर्वृत्ति अपर्याप्त, लब्धि अपर्याप्त दोऊ गर्भित जानने। बहुरि तिन ही एक-एक के पर्याप्त, निर्वृत्ति अपर्याप्त, लब्धि अपर्याप्त भेद कीये तिनिकौ आदि देकरि तीन-तीन बधते सत्तावन पर्यन्त स्थान हो है। इहा जुदे-जुदे भेद जानने।

अब कहे भेदनि की यत्र मे रचना अकनि करि लिखिये है।

जीवसमास के स्थानकनि का यंत्र

सामान्य अपेक्षा स्थान	पर्याप्त, अपर्याप्त अपेक्षा स्थान	पर्याप्त, निर्वृत्ति अपर्याप्त, लब्धि अपर्याप्त अपेक्षा स्थान
१	२	३
२	४	६
३	६	९
४	८	१२
५	१०	१५
६	१२	१८
७	१४	२१
८	१६	२४
९	१८	२७
१०	२०	३०
११	२२	३३
१२	२४	३६
१३	२६	३९
१४	२८	४२
१५	३०	४५
१६	३२	४८
१७	३४	५१
१८	३६	५४
१९	३८	५७
१९०	३८०	५७०

अब इनि पक्तिनि का जोड देने के अर्थि करणसूत्र कहिए है '**मुहभूमीजोगदले पदगुणिदे पदधणं होदि**' मुख आदि अर भूमी अत, इनिकौ जोडें, आधा करि पद जो स्थान प्रमाण, तीहि करि गुणें, सर्वपदधन हो है ।

सो प्रथम पक्ति विषै मुख एक अर भूमी उगणीस जोडें वीस, ताका आधा दश, पद उगणीस करि गुणें एक सौ नब्बे सर्व जोड हो है ।

बहुरि द्वितीय पक्ति विषै मुख दोय, भूमी अडतीस जोडें चालीस, आधा कीए वीस पद, उगणीस करि गुणें, तीन सै असी सर्व जोड हो है ।

बहुरि तीसरी पक्ति विषै मुख तीन, भूमी सत्तावन जोडें साठि, आधा कीए तीस, पद उगणीस करि गुणें पाच सै सत्तरि सर्व जोड हो है ।

आगै एकेंद्रिय, विकलत्रय जीवसमासनि करि मिले हुए असें पचेंद्रिय सबधी जीवसमास स्थान के विशेषनि कौ गाथा दोय करि कहै है –

इगिवण्णं इगिविगले, असण्णिसण्णिगयजलथलखगाणं ।
गब्भभवे सम्मुच्छे, दुतिगं भोगथलखेचरे दो दो ॥७९॥

अज्जवमलेच्छमणुए, तिदु भोगकुभोगभूमिजे दो दो ।
सुरणिरये दो दो इदि, जीवसमासा हु अडणउदी ॥८०॥

एकपचाशत् एकविकले, असंज्ञिसंज्ञिगतजलस्थलखगानाम् ।
गर्भभवे सम्मूर्छे, द्वित्रिकं भोगस्थलखेचरे द्वौ द्वौ ॥७९॥

आर्यम्लेच्छमनुष्ययोस्त्रयो द्वौ भोगकुभोगभूमिजयोर्द्वौ द्वौ ।
सुरनिरयोर्द्वौ द्वौ इति, जीवसमासा हि अष्टानवतिः ॥८०॥

टीका – पृथ्वी, अप्, तेज, वायु, नित्यनिगोद-इतरनिगोद के सूक्ष्म, बादर भेद करि छह युगल अर प्रत्येक वनस्पती का सप्रतिष्ठित, अप्रतिष्ठित भेद करि एक युगल, ऐसें एकेन्द्रिय के सात युगल ।बहुरि बेंद्री, तेंद्री, चौंद्री ए तीन ऐसें ए सतरह भेद पर्याप्त, निर्वृत्ति अपर्याप्त, लब्धि अपर्याप्त भेद करि तीन-तीन प्रकार है । ऐसें एकेंद्रिय, विकलेंद्रियनि विषै इक्यावन भेद भये । बहुरि पचेंद्रियरूप तिर्यंच गति विषै कर्मभूमि के तिर्यंच तीन प्रकार है । तहा जे जल विषै गमनादि करें, ते जलचर, अर जे भूमि

विषै गमनादि करै, ते स्थलचर; अर जे आकाश विषै उडना आदि गमनादि करै, ते नभचर; ते तीनों प्रत्येक सज्ञी, असंज्ञी भेदरूप है, तिनिके छह भए। बहुरि ते छहौ गर्भज अर सम्मूर्छन हो है। तहा गर्भज विषै पर्याप्त अर निर्वृत्ति अपर्याप्त ए दोय-दोय भेद संभवै है, तिनिके बारह भए। बहुरि सम्मूर्छन विषै पर्याप्त, निर्वृति अपर्याप्त, लब्धि अपर्याप्त ऐ तीन-तीन भेद सभवै है, तिनिके अठारह भए। असै कर्मभूमियां पंचेद्रिय तिर्यंच के तीस भेद भये।

बहुरि भोगभूमि विषै सज्ञी ही है, असज्ञी नाही। बहुरि स्थलचर अर नभचर ही है, जलचर नाही। बहुरि पर्याप्त, निर्वृत्ति अपर्याप्त ही है, लब्धि अपर्याप्त नाही। तातै संज्ञी स्थलचर, नभचर के पर्याप्त, अपर्याप्त भेद करि च्यारि ए भए, असै तिर्यंच पचेद्रिय के चौतीस भेद भये।

बहुरि मनुष्यनि के कर्मभूमि विषै, आर्यखड विषै तौ गर्भज के पर्याप्त, निर्वृत्ति अपर्याप्त करि दोय भेद अर सम्मूर्छन का लब्धि अपर्याप्तरूप एक भेद असै तीन भए। बहुरि म्लेच्छखंड विषै गर्भज ही है। ताके पर्याप्त, निर्वृत्ति अपर्याप्त करि दोय भेद। बहुरि भोगभूमि अर कुभोगभूमि इन दोऊनि विषै गर्भज ही है। तिनके पर्याप्त, निर्वृत्ति अपर्याप्त करि दोय-दोय भेद भए। च्यारि भेद मिलि करि मनुष्यगति विषै नव भेद भए।

बहुरि देव, नारकी औपपादिक है, तिनिके पर्याप्त, निर्वृत्ति अपर्याप्त भेद करि दोय-दोय भेद होई च्यारि भेद। असै च्यारि गतिनि विषै पचेद्रिय के जीवसमास के स्थान सैतालीस है।

बहुरि ए सैतालीस अर एकेद्री, विकलेद्रिय के इक्यावन मिलि करि अठयाणवै जीवसमास स्थान हो है, असा सूत्रनि का तात्पर्य जानना।

इहा विवक्षा करि स्थावरनि के बियालीस, विकलेद्रियनि के नव, तिर्यंच पचेद्रियनि के चौतीस, देवनि के दोय, नारकीनि के दोय, मनुष्यनि के नव, सर्व मिलि अठयाणवे भए। असै ए कहे जीवसमास के स्थान, ते ससारी जीवनि के ही जानने, मुक्त जीवनि के नाही है। जातै विशुद्ध चैतन्यभाव ज्ञान-दर्शन उपयोग का सयुक्तपना करि तिन मुक्त जीवनि के त्रस-स्थावर भेदनि का अभाव है। अथवा **'संसारिणस्त्रस-स्थावराः'** असा तत्त्वार्थसूत्र विषै वचन है, तातै ए भेद ससारी जीवनि के ही जानने।

अब कहे जे जीवसमासनि तै विशेष जीवसमास का कहनहारा अन्य आचार्य करि कह्या हुवा गाथा सूत्र कहै हैं –

सुद्ध-खरकु-जल-ते-वा, णिच्चचदुग्गदिणिगोदथूलिदरा ।
पदिठिदरपचपत्तिय, वियलतिपुण्णा अपुण्णदुगा ॥

इगिविगले इगिसीदी, असण्णिसण्णिगयजलथलखगाणं ।
गब्भभवे सम्मुच्छे, दुतिगतिभोगथलखेचरे दो दो ॥

अज्जसमुच्छिगिगब्भे, मलेच्छभोगतियकुणरछपणत्तीससये ।
सुरणिरये दो दो इदि, जीवसमासा हु छहियचारिसयं ॥

टीका – माटी आदिरूप शुद्ध पृथ्वीकायिक, पाषाणादिरूप खरपृथ्वीकायिक, अप्कायिक, तेजःकायिक, वायुकायिक, नित्यनिगोद, इतरनिगोद का दूसरा नाम चतुर्गतिनिगोद अैसें इनि सातनि के बादर-सूक्ष्म भेद तै चोदह भए । बहुरि तृण, वेलि, छोटे वृक्ष, बडे वृक्ष, कंदमूल अैसें ए पाच प्रत्येक वनस्पति के भेद है । ए जब निगोद शरीर करि आश्रित होइ, तब प्रतिष्ठित कहिए । निगोद रहित होइ, तब अप्रतिष्ठित कहिए । अैसे इनिके दश भेद भए ।

बहुरि बेइन्द्री, त्रीद्रिय, चतुरिंद्रय अैसें विकलेंद्रिय के तीन, ए सर्व मिलि सत्ताइस भेद एकेंद्रिय-विकलेंद्रियनि के भए । इन एक-एक के पर्याप्त, निर्वृत्ति अपर्याप्त, लब्धि अपर्याप्त भेद करि इक्यासी भए ।

बहुरि पचेद्रियनि विषै – तिर्यंच कर्मभूमि विषै तौ सज्ञी, असज्ञी भेद लीये जलचर, स्थलचर, नभचर भेद करि छह, तिनि छहौ गर्भजनि विषै तौ पर्याप्त, निर्वृत्ति अपर्याप्त भेद करि बारह, अर तिनि छहौ सम्मूर्छननि विषै पर्याप्त, निर्वृत्ति अपर्याप्त, लब्धि अपर्याप्त भेदनि करि अठारह । बहुरि उत्कृष्ट, मध्यम, जघन्य भोगभूमि के सज्ञी थलचर, नभचर इनि छहौ विषै पर्याप्त, निर्वृत्ति अपर्याप्त भेद करि बारह, सर्व मिलि पचेद्री तिर्यच, के बियालीस भेद भए ।

बहुरि मनुष्यनि विषै आर्यखड विषै उपजया सम्मूर्छन विषै लब्धि अपर्याप्तकरूप एक स्थान है । बहुरि आर्यखण्ड विषै उपजे गर्भज अर म्लेच्छखड विषै उपजे गर्भज ही है । अर उत्कृष्ट, मध्यम, जघन्य भोगभूमि उपजे गर्भज ही है । अर कुभोगभूमि विषै उपजे गर्भज ही है । अैसें छह प्रकार तौ मनुष्य, बहुरि तैसे ही दश प्रकार

भवनवासी, आठ प्रकार व्यंतर, पांच प्रकार ज्योतिषी, पटलनि की अपेक्षा करि तरेसठि प्रकार वैमानिक, सर्व मिलि छियासी प्रकार देव ।

बहुरि प्रस्तारनि की अपेक्षा करि गुणचास प्रकार नारकी ए सर्व मिलि सर्व एक सौ इकतालीस भए । तिन एक-एक के पर्याप्त, निर्वृत्ति अपर्याप्त भेद कीए दोय सै बियासी होंइ । अैसे एकेन्द्री, विकलेद्रिय के इक्यासी, पचेन्द्रिय तिर्यंच के बियालीस, सम्मूर्छन मनुष्य का एक, गर्भज मनुष्य, देव, नारकिनि के दोय सै बियासी मिलि करि छह अधिक च्यारि सै जीवसमास प्रकटरूप हो है ।

इति जीवसमासनि का स्थान अधिकार समाप्त भया ।

आगै योनि प्ररूपणा विषै प्रथम आकार योनि के भेदनि कौ कहै है –

संखावत्तयजोणी, कुम्मुण्णयवंसपत्तजोणी य ।
तत्थ य संखावत्ते, णियमादु विवज्जदे गब्भो ।।८१।।

शंखावर्तकयोनिः, कूर्मोन्नतवंशपत्रयोनि च ।
तत्र तु शंखावर्ते, नियमात्तु विवर्ज्यते गर्भः ।। ८१ ।।

टीका – शखावर्तयोनि कूर्मोन्नतयोनि, वंशपत्र योनि अैसे स्त्री शरीर विषै संभवती आकाररूप योनि तीन प्रकार है । योनि कहिए मिश्ररूप होइ औदारिकादिक नोकर्मवर्गणारूप पुद्गलनि करि सहित बधै जीव जाविषै, सो योनि कहिए । जीव का उपजने का स्थान सो योनि है । तहा तीन प्रकार योननि विषै शखावर्तयोनि विषै तो गर्भ नियम करि विवर्जित है, गर्भ रहै ही नाही । अथवा कदाचित रहै तौ नष्ट होइ है ।

कुम्मण्णयजोणीए, तित्थयरा दुविहचक्कवट्टी य ।
रामा वि य जायंते, सेसाये सेसगजणो दु ।। ८२ ।।

कूर्मोन्नतयोनौ, तीर्थंकराः द्विविधचक्रवर्तिनश्च ।
रामा अपि च जायते, शेषायां शेषकजनस्तु ।।८२।।

टीका – कूर्मोन्नतयोनि विषै तीर्थंकर वा सकलचक्रवर्ती वा अर्धचक्रवर्ती, नारायण, प्रतिनारायण वा बलभद्र उपजै है । अपि शब्द करि अन्य कोई नाही

उपजे है। बहुरि अवशेप वशपत्रयोनि विषै अवशेष जन उपजे है, तीर्थकरादि उपजे हैं।

आगै जन्मभेदनि का निर्देश पूर्वक गुणयोनि निर्देश करै है –

जम्मं खलु संमुच्छण, गब्भुववादा[1] दु होदि तज्जोणी।
सच्चित्तसीदसंउडसेदर मिस्सा[2] य पत्तेयं ॥ ८३ ॥

जन्म खलु समूर्छनगर्भोपपादास्तु भवति तद्योनयः।
सचित्तशीतसंवृतसेतरमिश्राश्च प्रत्येकं ॥८३॥

टीका – सम्मूर्छन, गर्भज, उपपाद ए तीन ससारी जीवनि के जन्म के भेद है। स कहिए समस्तपने करि मूर्छनं कहिए जन्म धरता जो जीव, ताकौ उपकारी ऐसे जे शरीर के आकारि परिणमने योग्य पुद्गलस्कध, तिनिका स्वयमेव प्रकट होना, सो सम्मूर्छन जन्म है।

बहुरि जन्म धरता जीव करि शुक्र-शोणितरूप पिंड का गरणं कहिए अपना शरीररूप करि ग्रहण करना, सो गर्भ है। बहुरि उपपादन कहिए सपुट शय्या वा उष्ट्रादि मुखाकार योनि विषै लघु अतर्मुहूर्त काल करि ही जीव का उपजना, सो उपपाद है। ऐसे तीन प्रकार जन्म भेद हैं।

भावार्थ – माता-पितादिक का निमित्त विना स्वयमेव शरीराकार पुद्गल का प्रकट होने करि जीव का उपजना, सो सम्मूर्छन जन्म है।

बहुरि माता का लोही अर पिता का वीर्यरूप पुद्गल का शरीररूप ग्रहण करि जीव का उपजना, सो गर्भ जन्म है। बहुरि देवनि का सपुट शय्या विषै, नारकीनि का उष्ट्रमुखादि आकाररूप योनि स्थानकनि विषै लघु अतर्मुहूर्त करि सपूर्ण शरीर करि जीव का उपजना, सो उपपाद जन्म है। ऐसे तीन प्रकार जन्म भेद जानने।

बहुरि इनि सम्मूर्छनादि करि तिनि जीवनि की योनि कहिए। जीव के शरीर ग्रहण का आधारभूत स्थान, ते यथासभव नव प्रकार हैं। सचित्त, शीत,

---

१ सम्मूर्छनगर्भोपपादा जन्म ॥३१॥

२ सचित्तशीतसवृता सेतरा मिश्राश्चैकशस्तद्योनय ॥३२॥ तत्त्वार्थसूत्र, अध्याय दूसरा

सवृत, इनिके प्रतिपक्षी इतर अचित्त, उष्ण विवृत; बहुरि इनिके मिलने से मिश्र – सचित्ताचित्त, शीतोष्ण, सवृतविवृत अैसे नव प्रकार है। बहुरि ते योनि सम्मूर्छनादिकनि विषै प्रत्येक यथासभव जानना।

तहां चित्त कहिए अन्य चेतन, तीहिकरि सहित वर्तै, ते सचित्त हैं। अन्य प्राणी करि पूर्वै ग्रहे हुवे पुद्गल स्कध सचित्त कहिए। बहुरि तातै विपरीत अन्य प्राणीनिकरि न ग्रहे जे पुद्गल स्कध, ते अचित्त है। बहुरि सचित्त-अचित्त दोऊरूप जे पुद्गल स्कध, ते मिश्र है। बहुरि प्रगट है शीत स्पर्श जिनके ऐसे पुद्गल, ते शीत हैं। बहुरि प्रगट है उष्ण स्पर्श जिनिके अैसे पुद्गल, ते उष्ण है। बहुरि शीत, उष्ण दोऊरूप जे पुद्गल, ते मिश्र है। बहुरि प्रकट जाकौ न अवलोकिए अैसा गुप्त आकार जाका, सो पुद्गल स्कध सवृत है। बहुरि प्रकट आकाररूप जाकौ अवलोकिए अैसा पुद्गल स्कध, सो विवृत है। बहरि सवृत-विवृत दोऊरूप पुद्गल स्कध, सो मिश्र है। अैसे जीव उपजने के आधाररूप पुद्गल स्कध, नव प्रकार जानने।

भावार्थ – गुण कौ धरै त्रैलोक्य विषै यथासभव जीव जहां उपजै, अैसे योनिरूप पुद्गल स्कध, तिनिके भेद नव है।

आगै सम्मूर्छनादिक जन्मभेद के जे स्वामी है, तिनका निर्देश करै है –

पोतजरायुजअंडज, जीवाणं गब्भ देवणिरयाणं।
उववादं सेसाणं, सम्मुच्छणयं तु णिद्दिट्ठं ॥८४॥[1]

पोतजरायुजांडजजीवानां गर्भः देवनारकाणाम्।
उपपादः शेषाणां, सम्मूर्छनकं तु निर्दिष्टम् ॥८४॥

टीका – किछू भी शरीर ऊपरि आवरण बिना सपूर्ण है अवयव जाका अर योनि तै निकसता ही चलनादिक की सामर्थ्य, ताकरी सयुक्त अैसा जीव, सो पोत कहिए। बहुरि जालवत् प्राणी का शरीर ऊपरि आवरण, मास, लोही जामे विस्तार रूप पाइए अैसा जो जरायु, ता विषै जो जीव उपज्या, सो जरायुज कहिए। बहुरि शुक्र, लोहीमय आवरण कठिनता को लीए नख की चामडी समान गोल आकार

१, जरायुजाण्डजपोताना गर्भ ॥३३॥ देवनारकानामुपपाद ॥३४॥
शेषाणा सम्मूर्च्छनम् ॥३५॥ तत्त्वार्थसूत्र, अध्याय दूसरा

धरै, सो अंड, तीहि विषै उपज्या जो जीव, सो अडज कहिए । इनि पोतजरायुज अडज जीवनि के गर्भरूप ही जन्म का भेद जानना ।

बहुरि च्यारि प्रकार देव अर धम्मादि विषै उपजे नारकी, तिनिके उपपाद ही जन्म का भेद है ।

इनि कहे जीवनि बिना अन्य सर्व एकेंद्री, बेद्री, तेद्री, चौद्री अर केई पचेंद्री तिर्यञ्च अर लब्धि अपर्याप्तक मनुष्य, इनिकै सम्मूर्छन ही जन्म का भेद पाइए है, असा सिद्धात विषै कह्या है ।

आगै सचित्तादि योनिभेदनि का सम्मूर्छनादि जन्मभेद विषै सभवपना, असभवपना गाथा तीन करि दिखावै है –

उववादे अच्चित्तं, गब्भे मिस्सं तु होदि सम्मुच्छे ।
सच्चित्त अच्चित्त, मिस्सं च य होदि जोणी हु ॥८५॥

उपपादे अचित्ता, गर्भे मिश्रा तु भवति संमूर्च्छे ।
सचित्ता अचित्ता, मिश्रा च च भवति योनिर्हि ॥८५॥

टीका – देव, नारकी सबधी जो उपपाद जन्म का भेद, तीहिविषै अचित्त ही योनि हैं । तहा योनिरूप पुद्गल स्कध सर्व अचित्त ही हैं ।

गर्भजन्म का भेदरूप सचित्त, अचित्त दोऊरूप मिश्र ही पुद्गल स्कधरूप योनि है । तहा योनिरूप पुद्गल स्कध विषै कोई पुद्गल सचित्त हैं, कोई अचित्त हैं ।

बहुरि सम्मूर्छन जन्म विषै सचित्त, अचित्त, मिश्र ए तीन प्रकार योनि पाइए हैं । कही योनिरूप पुद्गल स्कध सचित्त ही है, कही अचित्त ही हैं, कही मिश्र है ।

उववादे सीदुसणं, सेसे सीदुसणमिस्सयं होदि ।
उववादेयक्खेसु य संउड वियलेसु विउलं तु ॥८६॥

उपपादे शीतोष्णे, शेषे शीतोष्णमिश्रका भवति ।
उपपादैकाक्षेषु च, संवृता विकलेषु विवृता तु ॥८६॥

टीका – उपपाद जन्मभेद विषै शीत अर उष्ण ए दोय योनि है। योनिरूप पुद्गल स्कंध शीत हैं वा उष्ण है। तहा नारकीनि के रत्नप्रभा का बिलनि तै लगाइ धूमप्रभा बिलनि का तीन चौथा भाग पर्यन्त बिलनि विषै उष्ण योनि ही है। बहुरि धूमप्रभा बिलनि का चौथा भाग तै लगाइ महातम प्रभा का बिलनि पर्यन्त बिलनि विषै शीत योनि ही है, ऐसा विशेष जानना। बहुरि अवशेष गर्भ जन्मभेद विषै अर सम्मूर्छन जन्म के भेद विषै शीत, उष्ण, मिश्र तीनो योनि है। कोई योनिरूप पुद्गल स्कध शीत ही है, कोऊ उष्ण ही है। कोऊ योनिरूप पुद्गल स्कध विषै कोई पुदगल शीत है, कोई उष्ण है, तातै मिश्र है। तहा तेजस्कायिक जीवनि विषै उष्ण ही योनि है। तहा योनिरूप पुद्गल स्कध उष्ण ही है। बहुरि जलकायिक जीवनि विषै शीत ही योनि है। तहा योनिरूप पुद्गल स्कध शीत ही है। बहुरि उपपादज देव-नारकी अर एकेंद्रिय इन विषै संवृत ही योनि है, जहा उपजै ऐसा योनिरूप पुद्गल स्कंध, सो अप्रकट आकाररूप ही है। बहुरि विकलेंद्रिय विषै विवृत योनि ही है; जहां उपजै ऐसा योनिरूप पुद्गल स्कध, सो प्रकट ही है।

गब्भजजीवाणं पुण, मिस्सं णियमेण होदि जोणी हु।
सम्मुच्छणपंचक्खे, वियलं वा विउलजोणी हु ॥८७॥

गर्भजजीवानां पुनः, मिश्रा नियमेन भवति योनिर्हि।
संमूर्च्छनपंचाक्षेषु, विकलं वा विवृतयोनिर्हि ॥८७॥

टीका – बहुरि गर्भज जीवनि कै सवृत, विवृत दोऊरूप मिश्र योनि है। जहां उपजै ऐसा योनिरूप पुद्गल स्कध विषै किछु प्रकट, किछु अप्रकट है। बहुरि सम्मूर्च्छन पचेंद्रियनि विषै विकलेंद्रियवत् विवृत योनि ही है।

आगै योनिभेदनि की सख्या का उद्देश के आगै कथन का सकोचनि कौ कहै है –

सामण्णेण य एवं, णव जोणीओ हवंति वित्थारे।
लक्खाण चदुरसीदी, जोणीओ होंति णियमेण ॥८८॥

सामान्येन च एवं, नव योनयो भवंति विस्तारे।
लक्षाणां चतुरशीतिः, योनयो भवंति नियमेन ॥८८॥

टीका – ऐसे पूर्वोक्त प्रकार करि सामान्येन कहिए संक्षेप करि नव योनि है। बहुरि विस्तार करि चौरासी लाख योनि है नियमकरि।

भावार्थ – जीव उपजने का आधारभूत पुद्गल स्कंध का नाम योनि है। ताके सामान्यपनै नव भेद है, विस्तार करि तिस ही के चौरासी लाख भेद है।

आगै तिनि योनिनि की विस्तार करि संख्या दिखावै है –

णिच्चिदरधादुसत्त य, तरुदस वियलेंदियेसु छच्चेव।
सुरणिरयतिरियचउरो, चोद्दस मणुए सदसहस्सा ॥८९॥

नित्येतरधातुसप्त च, तरुदश विकलेंद्रियेषु षट् चेव।
सुरनिरयतिर्यक्चतस्रः, चतुर्दश मनुष्ये शतसहस्राः ॥८९॥

टीका – नित्यनिगोद, इतरनिगोद अर धातु कहिए पृथ्वीकायिक, जलकायिक, तेजस्कायिक वायुकायिक इनि छहो स्थाननि विषै प्रत्येक सात-सात लाख योनि हैं। बहुरि तरु जो प्रत्येक वनस्पति, तिनि विषै दश लाख योनि हैं। बहुरि विकलेंद्रीरूप बेंद्री, तेंद्री, चौंद्री इनि विषै प्रत्येक दोय-दोय लाख योनि हैं। बहुरि देव, नारकी, पचेंद्री तिर्यंच इनि विषै प्रत्येक च्यारि-च्यारि लाख योनि हैं। बहुरि मनुष्यनि विषै चौदह लाख योनि है। ऐसे समस्त संसारी जीवनि के योनि सर्व मिलि चौरासी लाख संख्यारूप प्रतीति करनी।

आगै गतिनि का आश्रय करि जन्मभेद कौं गाथा दोय करि कहै हैं –

उववादा सुरणिरया, गब्भजसमुच्छिमा हु णरतिरिया।
सम्मुच्छिमा मणुस्साऽपज्जत्ता एयवियलक्खा ॥९०॥

उपपादाः सुरनिरयाः, गर्भजसमूर्छिमा हि नरतिर्यंचः।
संमूर्छिमा मनुष्या, अपर्याप्ता एकविकलाक्षाः ॥९०॥

टीका – देव अर नारकी उपपाद जन्म संयुक्त है। बहुरि मनुष्य अर तिर्यंच ए गर्भज अर सम्मूर्च्छन यथासंभव हो हैं। तहां लब्धि अपर्याप्तक मनुष्य अर एकेंद्रिय विकलेंद्रिय ए केवल सम्मूर्च्छन ही है।

पंचक्खतिरिक्खाओ, गब्भजसम्मुच्छिमा तिरिक्खाणं।
भोगभुमा गब्भभवा, नरपुण्णा गब्भजा चेव ॥९१॥

पंचाक्षतिर्यंच , गर्भजसम्मूर्छिमा तिरश्चाम् ।
भोगभूमा गर्भभवा, नरपूर्णा गर्भजाश्चैव ॥९१॥

टीका – पंचेद्रिय तिर्यंच, ते गर्भज अर सम्मूर्च्छन हो है । बहुरि तिर्यंचनि विषै भोगभूमिया तिर्यंच गर्भज ही है । बहुरि पर्याप्त मनुष्य गर्भज ही है ।

आगै औपपादिकादिनि विषै लब्धि अपर्याप्तकपना का संभवपना-असंभवपना कौ कहै है –

उववादगब्भजेसु य, लद्धिअपज्जत्तगा ण णियमेण।
णरसम्मुच्छिमजीवा, लद्धिअपज्जत्तगा चेव ॥९२॥

उपपादगर्भजेषु च, लब्ध्यपर्याप्तका न नियमेन ।
नरसम्मूर्छिमजीवा, लब्ध्यपर्याप्तकाश्चैव ॥९२॥

टीका – औपपादिकनि विषै, बहुरि गर्भजनि विषै लब्धि अपर्याप्तक नियम करि नाही है । बहुरि सम्मूर्च्छन मनुष्य लब्धि अपर्याप्तक ही हो है, पर्याप्त न हो है ।

आगै नरकादि गतिनि विषै वेदनि कौ अवधारण करै है –

णेरइया खलु संढा, णरतिरिये तिण्णि होंति सम्मुच्छा।
संढा सुरभोगभुमा, पुरिसिच्छीवेदगा चेव ॥९३॥

नैरयिकाः खलु षंढा, नरतिरश्चोस्त्रयो भवंति सम्मूर्छाः ।
षंढाः सुरभोगभुमाः पुरुषस्त्रीवेदकाश्चैव ॥९३॥

टीका – नारकी सर्व ही नियमकरि षंढा कहिए नपुसक वेदी ही है । बहुरि मनुष्य-तिर्यंचनि विषै स्त्री, पुरुष, नपुसक भेदरूप तीनो वेद है । बहुरि सम्मूर्च्छन तिर्यंच अर मनुष्य सर्व नपुसक वेदी ही है । ते सम्मूर्च्छन मनुष्य स्त्री की योनि वा काख वा स्तननि का मूल, तिनि विषै अर चक्रवर्ती की पट्टराज्ञी बिना मूत्र, विष्टा आदि अशुचिस्थानकनि विषै उपजै है, ऐसा विशेष जानना । बहुरि देव अर भोग

भूमिया ते पुरुष वेद, स्त्री वेद का ही उदय सयुक्त नियम करि है। तहा नपुसक न पाइए है।

इति तीन प्रकार योनिनि का अधिकार जीवसमासनि का कह्या।

आगै शरीर की अवगाहना आश्रय करि जीवसमासनि की कहने का है मन जाका, ऐसा आचार्य, सो प्रथम ही सर्व जघन्य अर उत्कृष्ट अवगाहना के जे स्वामी, तिनिका निर्देश करै है –

सुहमणिगोदअपज्जत्तायस्स जादस्स तदियसमयम्हि ।
अंगुलअसंखभागं, जहण्णमुक्कस्सयं मच्छे ॥६४॥

सूक्ष्मनिगोदापर्याप्तकस्य जातस्य तृतीयसमये ।
अंगुलासख्यभागं, जघन्यमुत्कृष्टक मत्स्ये ॥९४॥

टीका – जितना आकाश क्षेत्र शरीर रोकै, ताका नाम इहा अवगाहना है। सो सूक्ष्म निगोदिया लब्धि अपर्याप्तक जीव, तीहि पर्याय विषै ऋजुगति करि उत्पन्न भया, ताके तीसरा समय विषै घनागुल के असख्यातवे भाग प्रमाण प्रदेशनि की अवगाह विशेष धरै शरीर हो है। सो यहु अन्य सर्व अवगाहना भेदनि तै जघन्य है। बहुरि स्वयभूरमण नामा समुद्र के मध्यवर्ती जो महामत्स्य, ताका उत्कृष्ट अवगाहना ते भी सबनि तै सर्वोत्कृष्ट अवगाहना विशेष धरै शरीर हो है।

इहां तर्क – जो उपजने तै तीसरा समय विषै सर्व तै जघन्य अवगाहना कैसे सभवै है ?

तहा समाधान – जो उपजता ही प्रथम समय विषै तो निगोदिया जीव का शरीर लबा बहुत, चौडा थोडा, ऐसा चौकोर हो है। बहुरि दूसरा समय विषै लबा-चौडा समान ऐसा चौकोर हो है। बहुरि तीसरे समय कोण दूर करणे करि गोल आकार हो है, तब ही तिस शरीर कै अवगाहना का अल्प प्रमाण हो है, जातै लबा चौकोर, सम चौकोर तै, गोल क्षेत्रफल स्तोक हो है।

बहुरि तर्क – जो ऐसै है तो ऋजुगति करि उपज्या ही कै होइ – ऐसैं कैसै कह्या ?

ताका समाधान – जीव पर भव कौ गमन करै, ताकी विदिशा करि वर्जित च्यारि दिशा वा अध , ऊर्ध्व विषै गमन क्रिया होइ है, सो च्यारि प्रकार है - ऋजु गति, पाणिमुक्ता गति, लागल गति, गोमूत्रिका गति । तहा सूधा गमन होइ, सो ऋजु गति है । जामैं बीचि एक बार मुडे, सो पाणिमुक्ता गति है । जामैं बीच दोय बार मुडे, सो लागल गति है । जामै बीच तीन बार मुडे, सो गोमूत्रिका गति है । सो मुडने रूप जो विग्रह गति, ताविषै जीव योगनि की वृद्धि करि युक्त हो है । ताकरि शरीर की अवगाहना भी वृद्धिरूप हो है । तातै ऋजुगति करि उपज्या जीव कै जघन्य अवगाहना कही, सो सर्वजघन्य अवगाहन का प्रमाणक है है । घनागुल रूप जो प्रमाण, ताका पल्य का असख्यातवा भाग उगणीस बार, बहुरि आवली का असख्यातवा भाग नव बार, बहुरि एक अधिक आवली का असख्यातवा भाग बाईस बार, बहुरि सख्यात का भाग नव बार इतने तौ भागहार जानने । बहुरि तिस घनागुल को आवली का असंख्यातवा भाग का बाईस बार गुणकार जानने । तहा पूर्वोक्त भागहारनि कौं माडि परस्पर गुणन कीए, जेता प्रमाण आवै, तितना भागहार का प्रमाण जानना । बहुरि बाईस जायगा आवली का असंख्यातवा भाग कौ माडि परस्पर गुणै जो प्रमाण आवै, तितना गुणकार का प्रमाण जानना । तहा घनागुल के प्रमाण कौ भागहार के प्रमाण का भाग दीए, अर गुणकार का प्रमाण करि गुणै जो प्रमाण आवै, तितना जघन्य अवगाहना के प्रदेशनि का प्रमाण जानना । असै ही आगै भी गुणकार, भागहार का अनुक्रम जानना ।

आगै इद्रिय आश्रय करि उत्कृष्ट अवगाहनानि का प्रमाण, तिनिके स्वामीनि कौ निर्देश करै है –

साहियसहस्समेकं, बारं कोसूणमेकमेक्कं च ।
जोयणसहस्सदीहं, पम्मे वियले महामच्छे ॥९५॥

साधिकसहस्रमेकं, द्वादश क्रोशोनमेकमेकं च ।
योजनसहस्रदीर्घं, पद्मे विकले महामत्स्ये ॥९५॥

टीका – एकेद्रियनि विषै स्वयभूरमण द्वीप के मध्यवर्ती जो स्वयप्रभ नामा पर्वत, ताका परला भाग सबधी कर्मभूमिरूप क्षेत्र विषै उपज्या असा जो कमल, तीहि विषै किछू अधिक एक हजार योजन लबा, एक योजन चौडा असा उत्कृष्ट

अवगाह है। याका क्षेत्रफल कहिए है – समान प्रमाण लीए खड कल्पै जितने खड होइ, तिस प्रमाण का नाम क्षेत्रफल है। तहा ऊचा, लम्बा, चौडा क्षेत्र का ग्रहण जहा होइ, तहा घन क्षेत्रफल वा खात क्षेत्रफल जानना। बहुरि जहा ऊचापना की विवक्षा न होइ अर लम्बा-चौडा ही का ग्रहण होइ, तहा प्रतर क्षेत्रफल वा वर्ग क्षेत्रफल जानना। बहुरि जहा ऊचा-चौडापना की विवक्षा न होइ, एक लम्बाई का ही ग्रहण होइ, तहा श्रेणी क्षेत्रफल जानना।

सो इहा खात क्षेत्रफल कहिए है। तहा कमल गोल है, तातै गोल क्षेत्र का क्षेत्रफल साधनरूप करण सूत्र करि साधिए है –

वासोत्तिगुणो परिही, वासचउत्थाहदो दु खेत्तफलं।
खेत्तफलं वेहगुणं, खादफलं होइ सव्वत्थ ॥

याका अर्थ - व्यास, जो चौडाई का प्रमाण, तातै तिगुणा गिरदभ्रमणरूप जो परिधि, ताका प्रमाण हो है। बहुरि परिधि कौ व्यास का चौथा भाग करि गुणै, प्रतररूप क्षेत्रफल हो है। बहुरि याकौ वेध, जो ऊचाई का प्रमाण, ताकरि गुणै सर्वत्र खातफल हो है। सो इहा कमल विषै व्यास एक योजन, ताकौ तिगुणा कीए परिधि तीन योजन हो है। याकौ व्यास का चौथा भाग पाव योजन करि गुणै, प्रतर क्षेत्रफल पौण योजन हो है। याकौ वेध हजार योजन करि गुणै, च्यारि करि अपवर्तन कीए, योजन स्वरूप कमल का क्षेत्रफल साडा सात सौ योजन प्रमाण हो है।

भावार्थ – एक-एक योजन लम्बा, चौडा, ऊचा खड कल्पै इतने खड हो है।

बहुरि द्वीद्रियनि विषै तीहि स्वयभूरमण समुद्रवर्ती शख विषै बारह योजन लम्बा, योजन का पाच चौथा भाग प्रमाण चौडा, च्यारि योजन मुख व्यास करि युक्त, असा उत्कृष्ट अवगाह है। याका क्षेत्रफल करणसूत्र करि साधिए है –

व्यासस्तावद् गुणितो, वदनदलोनो मुखार्धवर्गयुतः।
द्विगुणश्चतुर्भिर्भक्तः, पचगुणः शंखखातफलं ॥

याका अर्थ – प्रथम व्यास कौं व्यास करि गुणिए, तामे मुख का आधा प्रमाण घटाइ, तामे मुख का आधा प्रमाण का वर्ग जोडिए, ताका दूणा करिए, ताकौ च्यारि

का भाग दीजिए, ताकौ पाचगुणा करिए,अैसै करते शंख क्षेत्र का खातफल हो है। सो इहा व्यास बारह योजन कौ याही करि गुणै एक सौ चवालीस होइ। यामे मुख का आधा प्रमाण दोय घटाए, एक सौ ब्यालीस होइ। यामे मुख का आधा प्रमाण का वर्ग च्यारि जोडे, एक सौ छियालीस होइ। याकौ दूणा कीए दोय सै बाणवे होइ। याकौ च्यारि का भाग दीए तेहत्तरि होइ। याकौ पाच करि गुणै, तीन सौ पैसठि योजन प्रमाण शख का क्षेत्रफल हो है।

बहुरि त्रीद्रियनि विषै स्वयभूरमण द्वीप का परला भाग विषै जो कर्मभूमि सबधी क्षेत्र है, तहा रक्त बीछू जीव है। तीहि विषै योजन का तीन चौथा भाग प्रमाण ($\frac{३}{४}$) लम्बा, लम्बाई के आठवे भाग ($\frac{३}{३२}$) चौडा, चौडाई तै आधा ($\frac{३}{६४}$) ऊचा अैसा उत्कृष्ट अवगाह है। यहु क्षेत्र आयत चतुरस्र है। लम्बाई लीए चौकोर है, सो याका प्रतर क्षेत्रफल भुज कोटि बधतै हो है। सन्मुख दोय दिशानि विषै कोई एक दिशा विषै जितना प्रमाण, ताका नाम भुज है। बहुरि अन्य दोय दिशा विषै कोई एक दिशा विषै जितना प्रमाण, ताका नाम कोटि है। अर्थ यहु जो लम्बाई-चौडाई विषै एक का नाम भुज, एक का नाम कोटि जानना। इनिका वेध कहिए परस्पर गुणना, तीहि थकी प्रतर क्षेत्रफल हो है। सो इहा लम्बाई तीन चौथा भाग, चौडाई तीन बत्तीसवा भाग, इनिको परस्पर गुणे नव का एक सौ अठाईसवा भाग ($\frac{९}{१२८}$) भया। बहुरि याकौ वेध ऊचाई का प्रमाण तिनिका चौसठिवा भाग, ताकरि गुणे, सत्ताईस योजन को इक्यासी से बाणवे का भाग दीए एक भाग ($\frac{२७}{८१९२}$)प्रमाण रक्त बीछू का घन क्षेत्रफल हो है।

बहुरि चतुरिद्रियनि विषै स्वयभूरमण द्वीप का परला भागवर्ती कर्मभूमि सबधी क्षेत्र विषै भ्रमर हो है। सो तिहि विषै एक योजन लाबा, पौन योजन($\frac{३}{४}$) चौडा, आधा योजन ($\frac{१}{२}$) ऊचा उत्कृष्ट अवगाह है। ताकौ भुज कोटि बेध - एक योजन अर तीन योजन का चौथा भाग, अर एक योजन का दूसरा भाग, इनिकौ परस्पर गुणै, तीन योजन का आठवा भाग ($\frac{३}{८}$) प्रमाण घन क्षेत्रफल हो है।

बहुरि पचेद्रियनि विषै स्वयभूरमण समुद्र के मध्यवर्ती महामच्छ, तीहि विषै हजार (१०००) योजन लाबा, पाच सै (५००) योजन चौडा, पचास अधिक दोय सै (२५०) योजन ऊचा उत्कृष्ट अवगाह है। तहा भुज, कोटि, वेध हजार

(१०००) अर पाच सै (५००) अर अढाई सै (२५०) योजन प्रमाण, इनिकौं परस्पर गुणें साढे बारा कोडि (१२५०००००००) योजन प्रमाण घनफल हो है। असैं कहे जो योजन रूप घनफल, तिनके प्रदेशनि का प्रमाण कीए एकेंद्रिय के च्यारि बार सख्यातगुणा घनागुल प्रमाण, द्वीद्रिय के तीन वार सख्यातगुणा घनागुल प्रमाण, त्रीद्रिय के एक बार सख्यातगुणा घनागुल प्रमाण, चतुरिद्रिय के दोय बार सख्यातगुणा घनागुल प्रमाण, पचेद्रिय के पाच बार सख्यातगुणा घनागुल प्रमाण प्रदेश उत्कृष्ट अवगाहना विषै हो है।

आगै पर्याप्त द्वीद्रियादिक जीवनि का जघन्य अवगाहना का प्रमाण अर ताका स्वामी का निर्देश कौ कहै है –

बितिचपपुण्णंजहण्ण, अणुंधरीकुंथुकाणमच्छीसु।
सिच्छयमच्छे विंदंगुलसंखं संखगुणिदकमा ॥९६॥

द्वित्रिचपपूर्णजघन्यमनुधरीकुंथुकाणमक्षिकासु ।
सिक्थकमत्स्ये वृंदागुलसख्यं संख्यगुणितक्रमाः ॥९६॥

टीका – पर्याप्त द्वीद्रिय विषै अनुधरी, त्रीद्रियनि विषै कुथु, चतुरिंद्रियनि विषै काणमक्षिका, पचेद्रियनि विषै तदुलमच्छ इनि जीवनि विषै जघन्य अवगाहना विशेष धरै जो शरीर, ताकरि रोक्या हुवा क्षेत्र (प्रदेशनि) का प्रमाण घनागुल का सख्यातवा भाग तै लगाइ, सख्यातगुणा अनुक्रम करि जानना। तहा द्वीद्रिय विषै च्यारि बार, त्रीद्रिय विषै तीन बार, चतुरिंद्रिय विषै दोय बार, पचेद्रिय विषै एक बार, सख्यात का भाग जाकौं दीजिए असा घनागुल मात्र पर्याप्तनि की जघन्य अवगाहना के प्रदेशनि का प्रमाण जानना। इनिका अब चौडाई, लम्बाई, ऊचाई का उपदेश इहा नाही है। घनफल कीए जो प्रदेशनि का प्रमाण भया, सो इहा कह्या है।

आगै सर्व तै जघन्य अवगाहना कौ आदि देकरि उत्कृष्ट अवगाहना पर्यंत शरीर की अवगाहना के भेद, तिनिका स्वामी वा अल्पबहुत्व वा क्रम तै गुणकार, तिनिकौं गाथा पच करि इहा दिखावै है –

सुहमणिवातेआभू वातेआपुणिपदिट्ठिदं इदरं।
बितिचपमादिल्लाणं, एयाराणं तिसेढीय ॥९७॥

सूक्ष्मनिवातेआभू, वातेअपूनिप्रतिष्ठितमितरत् ।
द्वित्रिचपमाद्यानामेकादशानां त्रिश्रेण्यः ॥९७॥

टीका – इहां नाम का एक देश, सो सपूर्ण नाम विषै वर्तै है । इस लघुकरण न्याय कौ आश्रय करि गाथा विषै कह्या हुवा **णिवा** इत्यादि आदि अक्षरनि करि निगोद वायुकायिक आदि जीवनि का ग्रहण करना । सो इहा अवगाहना के भेद जानने के अर्थि एक यंत्र करना ।

तहा सूक्ष्म निगोदिया, सूक्ष्म वायुकायिक, सूक्ष्म तेजःकायिक, सूक्ष्म अप्कायिक, सूक्ष्म पृथ्वीकायिक नाम धारक पाच सूक्ष्म तिस यत्र के प्रथम कोठे विषै लिखे हो हैं ।

बहुरि ताकी बरोबरि आगै बादर – वायु, तेज, जल, पृथ्वी, निगोद, प्रतिष्ठित प्रत्येक नाम धारक ये छह बादर पूर्ववत् अनुक्रम करि दूसरा कोठा विषै लिखे हो हैं । पहिलै जिनिके नाम लीए थे, तिन ही के फेरी लीए, इस प्रयोजन की समर्थता तै प्रथम कोठा विषै सूक्ष्म कहे थे; इहा दूसरा कोठा विषै बादर ही है, अैसा जानना ।

बहुरि ताके आगै अप्रतिष्ठित प्रत्येक, द्वीद्रिय, त्रीद्रिय, चतुरिद्रिय, पचेद्रिय नाम धारक ए पाच बादर तीसरा कोठा विषै लिखे हो है । इनि सोलहौ विषै आदि के सूक्ष्म निगोदादिक ग्यारह, तिनिकै आगै तीन पक्ति करनी । तहा एक-एक पक्ति विषै दोय-दोय कोठे जानने । कैसै ? सो कहिए है - पूर्वै तीसरा कोठा कह्या था, ताके आगै दोय कोठे करने । तिनि विषै जैसै पहला, दूसरा कोठा विषै पाच सूक्ष्म, छह बादर लिखे थे, तैसै इहा भी लिखे हो है । बहुरि तिनि दोऊ कोठानि के नीचै पक्ति विषै दोय कोठे और करने । तहा भी तैसै ही पाच सूक्ष्म, छह बादर लिखे हो है । बहुरि तिनिके नीचै पंक्ति विषै दोय कोठे और करने, तहा भी तैसै ही पाच सूक्ष्म, छह बादर लिखे हो है । अैसै सूक्ष्म निगोदादि ग्यारह स्थानकनि का दोय-दोय कोठानि करि सयुक्त तीन पक्ति भई । या प्रकार ऊपरि की पक्ति विषै पाच कोठे, तातै नीचली पक्ति विषै दोय कोठे, तातै नीचली पक्ति विषै दोय कोठे मिलि नव कोठे भए ।

अपदिट्ठिदपत्तेयं, बितिचपतिचबि-अपदिट्ठिदं सयलं ।
तिचवि-अपदिट्ठिदं च य, सयलं बादालगुणिदकमा ॥९८॥

अप्रतिष्ठितप्रत्येकं द्वित्रिचपत्रिचद्विचप्रतिष्ठितं सकलम् ।
त्रिचद्विचप्रतिष्ठित च च सकलं द्वाचत्वारिंशद्गुणितक्रमाः ॥९८॥

टीका – बहुरि तिनि तीनि पंक्तिनि के आगे ऊपर पंक्ति विषै दशवां कोठा करना तीहि विषै अप्रतिष्ठित प्रत्येक, द्वींद्रिय, त्रींद्रिय, चतुरिंद्रिय, पचेंद्रिय नाम धारक पांच बादर लिखे हो है। बहुरि ताके आगै ग्यारहवां कोठा विषै त्रींद्रिय, चौइंद्रिय, बेंद्रिय, अप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पती, पचेंद्रिय नाम धारक पांच बादर लिखे हो हैं। बहुरि ताके आगै बारहवां कोठा विषै त्रींद्रिय, चतुरिंद्रिय, द्वींद्रिय, अप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पती, पचेंद्रिय नाम धारक पांच बादर लिखे हो है। असें ए चौसठि जीवसमासनि की अवगाहना के भेद है। तिनि विषै ऊपरि की पंक्तिनि के आठ कोठानि विषै प्राप्त असे जे वियालीस जीवसमास, तिनकी अवगाहना के स्थान, ते गुणितक्रम हैं। अनुक्रम तै पूर्व स्थान कौ यथासंभव गुणकार करि गुणै उत्तरस्थान हो है। बहुरि तातै इनि नीचै की दोय पंक्तिनि विषै प्राप्त भए बाईस स्थान, ते **'सेढिगया अहिया तत्थेकपडिभागो'** इस वचन तै अधिक रूप है। तहां एक प्रतिभाग का अधिकपना जानना। पूर्वस्थान कौं संभवता भागहार का भाग देइ एक भाग कौं पूर्वस्थान विषै अधिक कीए उत्तरस्थान हो है, असा सूचन कीया है।

अवरमपुण्णं पढमं, सोलं पुण पढमबिदियतदियोली।
पुण्णिदरपुण्णियाणं, जहण्णमुक्कस्समुक्कस्सं ॥९९॥

अवरमपूर्णं प्रथमे, षोडश पुनः प्रथमद्वितीयतृतीयावलिः।
पूर्णेतरपूर्णानां, जघन्यमुत्कृष्टमुत्कृष्टं ॥९९॥

टीका – पहलै तीन कोठेनि विषै प्राप्त जे सोलह जीवसमास, तिनिकी अपर्याप्त विषै जघन्य अवगाहना जाननी। बहुरि आगै ऊपरि तै पहली, दूसरी, तीसरी पंक्तिनि विषै एक-एक पंक्ति विषै दोय-दोय कोठे कीए, ते क्रम तै पर्याप्त, अपर्याप्त, पर्याप्तरूप तीन प्रकार जीव की जघन्य, उत्कृष्ट अर उत्कृष्ट अवगाहना है। याका अर्थ यहु – जो ऊपरि तै प्रथम पंक्ति के दोय कोठानि विषै पांच सूक्ष्म, छह बादर इनि ग्यारह पर्याप्त जीवसमासनि की जघन्य अवगाहना के स्थान हैं। तैसे ही नीचै दूसरी पंक्ति विषै प्राप्त तिनि ग्यारह अपर्याप्त जीवसमासनि की उत्कृष्ट अवगाहना के स्थान हैं। तैसे ही तीसरी पंक्ति विषै प्राप्त तिनि ग्यारह पर्याप्त जीव समासनि की उत्कृष्ट अवगाहना के स्थान है।

पुण्णजहण्णं तत्तो, वरं अपुण्णस्स पुण्णउक्कस्सं।
बीपुण्णजहण्णो त्ति, असंखं संखं गुणं तत्तो ॥१००॥

पूर्णजघन्यं ततो, वरमपूर्णस्य पूर्णोत्कृष्टं ।
द्विपूर्णजघन्यमिति असंख्यं संख्यं गुणं ततः ॥१००॥

टीका – ताके आगे दशवां कोठा विषै प्राप्त पर्याप्त पाच जीवसमासनि की जघन्य अवगाहना के स्थान है। बहुरि तहा तै आगै ग्यारहवा कोठा विषै अपर्याप्त पाच जीवसमासनि की उत्कृष्ट अवगाहना के स्थान है। बहुरि ताके आगै बारहवां कोठा विषै पर्याप्त पच जीवसमासनि की उत्कृष्ट अवगाहना के स्थान है। अैसे ए कहे स्थान, तिनि विषै प्रथम कोठा विषै प्राप्त सूक्ष्म अपर्याप्त निगोदिया जीव की जघन्य अवगाहना तै लगाइ दशवा कोठा विषै प्राप्त बादर पर्याप्त द्वीद्रिय की जघन्य अवगाहना पर्यंत ऊपरि की पक्ति सबधी गुणतीस अवगाहना के स्थान, ते असख्यात-असख्यात गुणा क्रम लीए है। बहुरि तिसतै आगै बादर पर्याप्त पंचेद्रिय की उत्कृष्ट अवगाहना पर्यंत तेरह अवगाहना के स्थान, ते सख्यातगुणा, सख्यातगुणा अनुक्रम लीए है; अैसा जानना।

सुहमेदरगुणगारो, आवलिपल्ला असंखभागो दु।
सट्ठाणे सेढिगया, अहिया तत्थेकपडिभागो ॥१०१॥

सूक्ष्मेतरगुणकार, आवलिपल्यासंख्येयभागस्तु ।
स्वस्थाने श्रेणिगता, अधिकास्तत्रैकप्रतिभागः ॥१०१॥

टीका – इहा गुणतीस स्थान असख्यातगुणे कहे, तिनिविषै जे सूक्ष्म जीवनि के अवगाहना के स्थान है, ते आवली का असख्यातवा भाग करि गुणित जानने। पूर्वस्थान कौ घनावली[1] का असख्यातवा भाग करि तहा एक भाग करि गुणै उत्तर स्थान हो है। बहुरि जे बादर जीवनि के अवगाहन के स्थान है, ते पल्य का असख्यातवा भाग करि गुणित है। पल्य का असख्यात भाग करि तहा एक भाग करि पूर्वस्थान कौ गुणै, उत्तर स्थान हो है। अैसे स्वस्थान विषै गुणकार है, या प्रकार असख्यात का गुणकार विषै भेद है, सो देखना। बहुरि नीचली दूसरी, तीसरी पक्ति

---

१. अ प्रति मे 'आवली' है, बाकी चार प्रतियो मे 'घनावली' है।

सूक्ष्मनिगोद १ वात २ तेज ३ अप ४ पृथ्वी ५ इति पच अपर्याप्तनि की जघन्य अवगाहना ।	घादरघात ६ तेज ७ अप् ८ पृथ्वी ९ निगोद १० प्रतिष्ठित प्रत्येक ११ इनि छह अपर्याप्तनि की जघन्य अवगाहना ।	अप्रतिष्ठित प्रत्येक १२ वेंद्री १३ तेंद्री १४ चौंद्री १५ पचेंद्री १६ इनि पाच अपर्याप्तनि की जघन्य अवगाहना ।	सूक्ष्मनिगोद १७ वात १८ तेज १९ अप् २० पृथ्वी २१ इनि पच पर्याप्तनि की जघन्य अवगाहना ।	वादर घात २२ तेज २३ अप् २४ पृथ्वी २५ निगोद २६ प्रतिष्ठित प्रत्येक २७ इनि छहो प्रर्याप्तनि की जघन्य अवगाहना ।	अप्रतिष्ठित प्रत्येक ५० वेंद्री ५१ तेंद्री ५२ चौंद्री ५३ पचेंद्री ५४ इनि पाच पर्याप्तनि की जघन्य अवगाहना ।	तेंद्री ५५ चौइद्री ५६ वेंद्री ५७ अप्रतिष्ठित ५८ पचेंद्री ५९ इनि पाच अप्रर्याप्तनि की उत्कृष्ट अवगाहना ।	तेंद्री ६० चौइद्री ६१ वेंद्री ६२ अप्रतिष्ठित प्रत्येक ६३ पचेंद्री ६४ इनि पाच पर्याप्तनि की उत्कृष्ट अवगाहना ।
			सूक्ष्मनिगोद २८ वात २९ तेज ३० अप् ३१ पृथ्वी ३२ इनि पाच अपर्याप्तनि की उत्कृष्ट अवगाहना ।	वादर वात ३३ तेज ३४ अप् ३५ पृथ्वी ३६ निमोद ३७ प्रतिष्ठित प्रत्येक ३८ इनि छहो अपर्याप्तनि की उत्कृष्ट अवगाहना ।			
			सूक्ष्मनिगोद ३९ घात ४० तेज ४१ अप् ४२ पृथ्वी ४३ इनि पचपर्याप्तनि की उत्कृष्ट अवगाहना ।	वादर वात ४४ तेज ४५ अप् ४६ पृथ्वी ४७ निगोद ४८ प्रतिष्ठित प्रत्येक ४९ इनि छहो पर्याप्तनि की उत्कृष्ट अवगाहना ।			

विषै प्राप्त जे अवगाहना के स्थान ते अधिक अनुक्रम धरे है । तहा सूक्ष्म निगोद अपर्याप्तक की उत्कृष्ट अवगाहना के स्थान कौ आदि देकरि उत्तर-उत्तर स्थान पूर्व-पूर्व अवगाहना स्थान तै ताही कौं आवली का असंख्यातवा भाग का भाग दीए, तहां एक भागमात्र अधिक है । पूर्वस्थान कौ आवली का असंख्यातवा (भाग का) भाग दीए जो प्रमाण होइ, तितना पूर्वस्थान विषै अधिक कीए उत्तरस्थान विषै प्रमाण हो है । इहा अधिक का प्रमाण ल्यावने के अर्थि भागहार वा भागहार का भागहार, सो आवली का असंख्यातवा भाग प्रमाण है । असै परमगुरु का उपदेश तै चल्या आया प्रमाण जानना । बहुरि यहा यहु जानना - सूक्ष्मनिगोदिया का तीनो पंक्ति विषै अनुक्रम करि पीछै सूक्ष्म वातकायिक का तीनो पक्तिनि विषै अनुक्रम करना । असै ही क्रम तै ग्यारह जीवसमासनि का अनुक्रम जानना ।

यहु यंत्र जीवसमासनि की अवगाहना का है । इहा ऊपरि की पक्ति विषै प्राप्त बियालीस स्थान गुणकाररूप है । तहा पहला, चौथा कोठा विषै सूक्ष्म जीव कहे, ते क्रम तै पूर्वस्थान तै उत्तरस्थान आवली का असख्यातवा भाग करि गुणित है । बहुरि दूसरा, तीसरा, सातवा कोठा विषै बादर कहे अर दशवा कोठा विषै अप्रतिष्ठित प्रत्येक वा बेद्री कहे, ते क्रम तै पल्य के असख्यातवा भाग करि गुणित है । बहुरि दशवा कोठा विषै तेद्री सौ लगाइ बारहवा कोठा विषै प्राप्त पचेद्री पर्यंत सख्यात करि गुणित है । बहुरि नीचली दोय पक्तिनि के च्यारि कोठानि विषै जे स्थान कहे, ते आवली का असंख्यातवा भाग करि भाजित पूर्वस्थान प्रमाण अधिक है ।

(देखिए पृष्ठ २०६)

अब इहा कहे जे अवगाहना के स्थान, तिनके गुणकार का विधान कहिए है । सूक्ष्म निगोदिया लब्धि अपर्याप्तक की जघन्य अवगाहना का स्थान, सो आगै कहैगे गुणकार, तिनकी अपेक्षा असा है । उगणीस बार पल्य का भाग, नव बार आवली का असख्यातवा भाग, बाईस बार एक अधिक आवली का असख्यातवा भाग, नव बार सख्यात, इनिका तौ जाकौ भाग दीजिए । बहुरि बाईस बार आवली का असख्यातवा भाग करि जाकौ गुणिए असा जो घनागुल, तीहि प्रमाण है, सो याकौ आदिभूत स्थान स्थापि, यातै सूक्ष्म अपर्याप्तक वायुकायिक जीव का जघन्य अवगाहना स्थान आवली का असख्यातवा भाग करि गुणित है, सो याका गुणकार आवली का असंख्यातवां भाग अर पूर्वै आवली का असख्यातवा भाग का भागहार

१ छपी हुई प्रति मे 'ग्यारहवा', अन्य छह हस्तलिखित प्रतियो, मे 'बारहवा' है ।

नव बार कह्या था, तामैं एक बार आवली का असख्यातवा भाग सदृश देखि दोऊनि का अपवर्तन कीए, पूर्वै जहा नव बार कह्या था, तहा इहा आठ बार आवली का असंख्यातवा भाग का भागहार जानना। असै ही आगै भी गुणकार भागहार कौं समान देखि, तिनि दोऊनि का अपवर्तन करना। बहुरि यातै सूक्ष्म अपर्याप्त तेजस्कायिक की जघन्य अवगाहना स्थान आवली का असख्यातवा भाग गुणा है। इहा भी पूर्वोक्त प्रकार अपवर्तन कीए आठ बार की जायगा सात बार आवली का असंख्यात भाग का भागहार हो है। बहुरि यातै सूक्ष्म अपर्याप्त अप्कायिक का जघन्य अवगाहना स्थान आवली का असख्यातवा भाग गुणा है। इहा पूर्ववत् अपवर्तन करना। बहुरि यातै सूक्ष्म अपर्याप्त पृथ्वीकायिक का जघन्य अवगाहना स्थान आवली का असख्यातवा भाग गुणा है। इहा भी पूर्ववत् अपवर्तन करना। असै इहा आवली का असख्यातवा भाग का भागहार तौ पाच बार रह्या, अन्य सर्व गुणकार भागहार पूर्ववत् जानने। बहुरि इहा पर्यत सूक्ष्म तै सूक्ष्म का गुणकार भया, तातै स्वस्थान गुणकार कहिए है। अब सूक्ष्म तै बादर का गुणकार कहिए है, सो यहु परस्थान गुणकार जानना। आगै भी सूक्ष्म तै बादर, बादर तै सूक्ष्म का जहा गुणकार होइ, सो परस्थान गुणकार है, असा विशेष जानना। बहुरि इस सूक्ष्म अपर्याप्त पृथिवीकायिक का जघन्य अवगाहन स्थान तै स्वस्थान गुणकार कौं उलघि परस्थानरूप बादर अपर्याप्त वातकायिक का जघन्य अवगाहना स्थान पल्य का असख्यातवा भाग गुणा है। इहा इस गुणकार करि उगणीस बार पल्य का असख्यातवा भाग का भागहार था, तामे एक बार का अपवर्तन करना। बहुरि यातै बादर तेज कायिक अपर्याप्तक का जघन्य अवगाहना स्थान पल्य का असख्यातवा भाग गुणा है। इहा भी पूर्ववत् अपवर्तन करना। असै ही पल्य का असख्यातवा भाग गुणा अनुक्रम करि अपर्याप्त बादर, अप्, पृथ्वी, निगोद, प्रतिष्ठित प्रत्येकनि के जघन्य अवगाहना स्थान, अर अपर्याप्त अप्रतिष्ठित प्रत्येक, बेद्री, तेद्री, चौइद्री पचेद्री, के जघन्य अवगाहना स्थान, इन नव स्थानकनि कौ प्राप्त करि पूर्ववत् अपवर्तन करतै अपर्याप्त पचेद्रिय का जघन्य अवगाहना स्थान विषै आठ बार पल्य का असख्यातवा भाग का भागहार रहै हैं। अन्य भागहार गुणकार पूर्ववत् जानना। बहुरि यातै सूक्ष्म निगोद पर्याप्त का जघन्य अवगाहना स्थान, सो परस्थानरूप आवली का असख्यातवा भाग गुणा है। सो पूर्वै आवली का असख्यातवा भाग का भागहार पाच बार रह्या था, तामे एक बार करि इस गुणाकार का अपवर्तन करना।

बहुरि यातै सूक्ष्म निगोद अपर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहना स्थान विशेष करि अधिक है। विशेष का प्रमाण कह्या सूक्ष्म निगोद पर्याप्त का जघन्य अवगाहना स्थान कौ आवली का असख्यातवा भाग का भाग दीए, तहा एक भाग मात्र विशेष का प्रमाण है। याकौ तिस ही सूक्ष्म निगोद पर्याप्त का जघन्य स्थान विषै समच्छेद विधान करि मिलाइ राशि कौ अपवर्तन कीए, सूक्ष्म निगोद अपर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहना हो है।

अपवर्तन कैसै करिए ?

जहा जिस राशि का भागहार देइ एक भाग कोई विवक्षित राशि विषै जोडना होइ, तहा तिस राशि तै एक अधिक का तौ गुणकार अर तिस पूर्णराशि का भागहार विवक्षित राशि कौ दीजिए। जैसै चौसठि का चौथा भाग चौसठि विषै मिलावना होइ तौ चौसठि कौ पाच गुणा करि च्यारि का भाग दीजिए। तैसै इहा भी आवली का असख्यातवा भाग का भाग देइ एक भाग मिलावना है, तातै एक अधिक आवली का असख्यातवा भाग का गुणकार अर आवली का असख्यातवा भाग का भागहार करना। बहुरि पूर्व राशि विषै बाईस बार एक अधिक आवली का असख्यातवा भाग का भागहार है। अर बाईस बार ही आवली का असख्यात भाग का गुणकार है। सो इनि विषै एक बार का भागहार गुणकार करि अवै कहे जे गुणकार भागहार, तिनिका अपवर्तन कीए बाईस बार की जायगा गुणकार भागहार इकईस बार ही रहै है। ऐसै ही आगै भी जहा विशेष अधिक होइ, तहा अपवर्तन करि आवली का असख्यातवा भाग का गुणकार अर एक अधिक आवली का असख्यातवा भाग का भागहार एक-एक बार घटावना। बहुरि सूक्ष्म निगोद अपर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहन तै सूक्ष्म निगोद पर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहना विशेष करि अधिक है। इहा विशेष का प्रमाण सूक्ष्म निगोद अपर्याप्त की उत्कृष्ट अवगाहना कौ आवली का असख्यातवां भाग का भाग दीए एक भागमात्र है। याकौ पूर्व अवगाहन विषै जोडि, पूर्ववत् अपवर्तन करना। बहुरि यातै सूक्ष्म वायुकायिक पर्याप्त का जघन्य अवगाह आवली का असख्यातवा भाग गुणा है। सोई यहा अपवर्तन कीए च्यारि बार आवली का असख्यातवा भाग का भाग था, सो तीन बार ही रहै है। बहुरि यातै सूक्ष्म वायुकायिक अपर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहन विशेष करि अधिक है। इहा विशेष का प्रमाण पूर्वराशि कौ आवली का असख्यातवा भाग का भाग दीए एक भागमात्र है, ताकौ जोडि अपवर्तन करना। बहुरि यातै याके नीचै सूक्ष्म वायुकायिक

पर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहन, सो विशेष करि अधिक है। पूर्वराशि कौं आवली का असख्यातवां भाग का भाग दीये, तहा एक भाग करि अधिक जानना। इहा भी अपवर्तन करना। बहुरि यातै सूक्ष्म तेजकायिक पर्याप्तक का जघन्य अवगाहन आवली का असख्यातवा भाग गुणा है। इहा अपवर्तन करिए, तहा आवली का असख्यातवा भाग का भागहार तीन बार की जायगा दोय बार ही रहै है, ऐसै ही यातै सूक्ष्म तेज कायिक अपर्याप्त का उत्कृप्ट आवगाहन विशेष करि अधिक है। यातै सूक्ष्म तेज कायिक पर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहन विशेप करि अधिक है। यातै सूक्ष्म अपकायिक पर्याप्तक का जघन्य अवगाहन आवली का असख्यातवा भाग गुणा है। यातै सूक्ष्म अपकायिक अपर्याप्त का उत्कृप्ट अवगाहन विशेप करि अधिक है। यातै सूक्ष्म अपकायिक पर्याप्त का उत्कृप्ट अवगाहन विशेष करि अधिक है। यातै सूक्ष्म पृथ्वीकायिक पर्याप्त का जघन्य अवगाहन आवली का असख्यातवा भाग-गुणा है, यातै सूक्ष्म पृथ्वीकायिक अपर्याप्त का उत्कृप्ट अवगाहन विशेप करि अधिक है। यातै सूक्ष्म पृथ्वीकायिक पर्याप्त का उत्कृप्ट अवगाहन विशेष करि अधिक है, ऐसै दोय-दोय तौ आवली का असख्यातवा भाग करि भाजित पूर्वराशि प्रमाण विशेष करि अधिक अर एक-एक अपना-अपना पूर्वराशि तै आवली का असख्यातवा भाग गुणा जानना। असै आठ अवगाहना स्थाननि कौं उलघि तहा आठवा सूक्ष्म पृथ्वीकायिक पर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहन, सो पूर्वोक्त प्रकार अपवर्तन करतै बारह बार आवली का असख्यातवा भाग का गुणकार अर आठ वार पल्य का असख्यात भाग, बारह बार एक अधिक आवली का असख्यातवा भाग, नव बार सख्यात का भाग जाकै पाइए, असा घनागुल प्रमाण हो है। बहुरि यातै बादर वायुकायिक पर्याप्त का जघन्य अवगाहन परस्थानरूप है, तातै पल्य का असख्यातवा भाग गुणा है। इहा पल्य का असख्यातवा भाग का भागहार आठ बार था, तामैं एकबार करि अपवर्तन कीए सात बार रहै है। बहुरि यातै आगै दोय-दोय स्थान तौ विशेष करि अधिक अर एक-एक स्थान पल्य का असख्यातवा भाग गुणा जानना। तहा विशेष का प्रमाण अपना-अपना पूर्वराशि कौं आवली का असख्यातवा भागरूप प्रतिभाग का भाग दीए एक भाग प्रमाण जानना। सो जहा अधिक होइ, तहा अपवर्तन कीए बारह बार आवली का असख्यातवा भाग का गुणकार अर एक अधिक आवली का असख्यातवा भाग का भागहार थे, तिनिविषै एक-एक बार घटता हो है। बहुरि जहा पल्य का असख्यातवा भाग का गुणकार होइ, तहा अपवर्तन कीए सात बार पल्य का

असख्यातवा भाग का भागहार थे, तिनि विषै एक-एक बार घटता हो है, अैसा क्रम जानना । सो बादर वायुकायिक पर्याप्त का जघन्य अवगाहन तै बादर वायुकायिक अपर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहन विशेष करि अधिक है । यातै बादर वायुकायिक पर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहन विशेष करि अधिक है । यातै बादर तेजकाय पर्याप्त का जघन्य अवगाहन पल्य का असख्यातवा भाग गुणा है, यातै बादर तेजकाय अपर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहन विशेष अधिक है । यातै बादर तेजकायिक पर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहन विशेष करि अधिक है। यातै बादर अप्कायिक अपर्याप्त का जघन्य अवगाहन पल्य का असख्यातवा भाग गुणा है । यातै बादर अप्कायिक अपर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहन विशेष करि अधिक है । यातै बादर अप्कायिक पर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहन विशेष अधिक है । यातै बादर पृथ्वी पर्याप्त का जघन्य अवगाहन पल्य का असख्यातवा भाग गुणा है । यातै बादर पृथ्वी अपर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहन विशेष अधिक है । यातै बादर पृथ्वी पर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहन विशेष अधिक है । यातै बादर निगोद पर्याप्त का जघन्य अवगाहन पल्य का असख्यातवा भाग गुणा है । यातै बादर निगोद अपर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहन विशेष अधिक है । यातै बादर निगोद पर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहन विशेष अधिक है । यातै प्रतिष्ठित प्रत्येक पर्याप्त का जघन्य अवगाहन पल्य के असख्यातवा भाग गुणा है । यातै प्रतिष्ठित प्रत्येक अपर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहन विशेष अधिक है । यातै प्रतिष्ठित प्रत्येक पर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहन विशेष अधिक है । अैसै सतरह अवगाहन स्थाननि कौ उलघि पूर्वोक्त प्रकार अपवर्तन कीए सतरहवा बादर पर्याप्त प्रतिष्ठित प्रत्येक का उत्कृष्ट अवगाहन दोय बार पल्य का असख्यातवा भाग अर नव बार सख्यात का भाग जाकौं दीजिए, अैसा घनागुल प्रमाण हो है । बहुरि यातै अप्रतिष्ठित प्रत्येक पर्याप्त का जघन्य अवगाहन पल्य का असख्यातवा भाग गुणा है, इहा भी अपवर्तन करना ।

बहुरि यातै बेद्री पर्याप्त का जघन्य अवगाहन पल्य का असख्यातवा भाग गुणा है । इहा भी अपवर्तन कीए पल्य का असख्यातवा भाग का भागहार था, सो दूरि होइ घनागुल का नव बार सख्यात का भागहार रह्या । बहुरि यातै तेद्री, चौद्री, पचेद्री पर्याप्तनि के जघन्य अवगाहन ते क्रम तै पूर्व-पूर्व तै सख्यात-सख्यात गुणै है । यातै तेद्री अपर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहन सख्यात गुणा है । यातै चौद्री अपर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहन सख्यात गुणा है । यातै बेद्री अपर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहन सख्यात गुणा है । यातै अप्रतिष्ठित प्रत्येक अपर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहन सख्यात

गुणा है । यातै पचेंद्री अपर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहन सख्यात गुणा है । ऐसै एक-एक बार सख्यात का गुणकार करि नव बार सख्यात का भागहार विषै एक-एक बार का अपवर्तन करतै पचेंद्री अपर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहन एक बार सख्यात करि भाजित घनागुल प्रमाण हो है । बहुरि यातै त्रीद्रिय पर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहन सख्यात गुणा है, सो अपवर्तन करिए, तथापि इहा गुणाकार के सख्यात का प्रमाण भागहार के सख्यात का प्रमाण तै बहुत है । तातै त्रीद्रिय पर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहन सख्यात गुणा घनागुल प्रमाण है । यातै चौइद्री पर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहन सख्यात गुणा है । यातै वेद्री पर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहन सख्यात गुणा है । यातै अप्रतिष्ठित प्रत्येक पर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहन सख्यात गुणा है । यातै पचेंद्री पर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहन सख्यात गुणा है । ऐसै क्रम तै अवगाहन के स्थान जानने ।

आगै सूक्ष्म निगोद लब्धि अपर्याप्त का जघन्य अवगाहन तै सूक्ष्म वायुकायिक लब्धि अपर्याप्त के जघन्य अवगाहन का गुणकार स्वरूप आवली का असख्यात भाग कह्या । ताकी उत्पत्ति का अनुक्रम कौ अर तिन दोऊनि के मध्य अवगाहन के भेद है, तिनके प्रकारनि कौ गाथा नव करि कहै है –

अवरुवरि इगिपदेसे,जुदे असंखेज्जभागवड्ढीए ।
आदी णिरंतरमदो, एगेगपदेसपरिवड्ढी ॥१०२॥

अवरोपरि एकप्रदेशे, युते असंख्यातभागवृद्धेः ।
आदिः निरंतरमतः, एकैकप्रदेशपरिवृद्धिः ॥१०२॥

टीका – सूक्ष्म निगोद लब्धि अपर्याप्तक जीव का जघन्य अवगाहन पूर्वोक्त प्रमाण, ताकी लघु सदृष्टि करि यहु सर्व तै जघन्य भेद है, तातै याका आदि अक्षर ज ऐसा स्थापन करि बहुरि यातै दूसरा अवगाहना का भेद के अर्थि इस जघन्य अवगाहन विषै एक प्रदेश जोडै, सूक्ष्म निगोद लब्धि अपर्याप्तक का दूसरा अवगाहन का भेद हो है । बहुरि ऐसै ही एक-एक प्रदेश बधता अनुक्रम करि तावत् प्राप्त होना, यावत् सूक्ष्म वायुकायिक अपर्याप्त का जघन्य अवगाहना, सो सूक्ष्म निगोद लब्धि अपर्याप्तक का जघन्य अवगाहना तै आवली का असख्यातवा भाग गुणा होइ । तहा असख्यात भाग वृद्धि, सख्यात भाग वृद्धि, सख्यात गुण वृद्धि असख्यात गुण वृद्धि ऐसै चतुस्थान पतित वृद्धि अर बीचि-बीचि अवक्तव्य भाग वृद्धि

वा अवक्तव्य गुण वृद्धि, तिनिकरि बधते जे अवगाहन के स्थान, तिनिके उपजने का विधान कहिए है ।

भावार्थ – जघन्य अवगाहना का जेता प्रदेशनि का प्रमाण, ताकौ जघन्य अवगाहना प्रमाण असख्यात तै लगाइ जघन्य परीतासख्यात पर्यंत जिस-जिसका भाग देना संभवे, तिस-तिस असख्यात का भाग देते (जघन्य अवगाहन) जिस-जिस अवगाहन भेद विषै प्रदेश बधती का प्रमाण होइ, तहा-तहा असख्यात भाग वृद्धि कहिए । बहुरि तिस जघन्य अवगाहना का प्रदेश प्रमाण कौ उत्कृष्ट सख्यात तै लगाइ यथा सभव दोय पर्यंत सख्यात के भेदनि का भाग देतै जघन्य अवगाहना तै जिस-जिस अवगाहना विषै बधती का प्रमाण होइ, तहा-तहा सख्यात भाग वृद्धि कहिये । बहुरि दोय तै लगाइ उत्कृष्ट सख्यात पर्यंत (सख्यात के भेदनि करि) [१]जघन्य अवगाहना कौ गुणै जिस-जिस अवगाहना विषै प्रदेशनि का प्रमाण होइ, तहा-तहा सख्यात गुण वृद्धि कहिए । बहुरि जघन्य परीतासख्यात तै लगाइ आवली का असख्यातवा भाग पर्यंत असख्यात के भेदनि करि जघन्य अवगाहना कौ गुणै, जिस-जिस अवगाहना के भेद विषै प्रदेशनि का प्रमाण होइ तहा-तहा असंख्यात गुण वृद्धि कहिए । बहुरि जहा-जहा इनि सख्यात वा असख्यात के भेदनि का भागहार गुणकार न सभवै ऐसे प्रदेश जघन्य अवगाहना तै जहा-जहा बधती होइ, सो अवक्तव्य भाग वृद्धि वा अवक्तव्य गुण वृद्धि कहिए । सो यहु (अवक्तव्य) वृद्धि पूर्वोक्त चतु स्थान पतित वृद्धि के बीचि-बीचि होइ है । बहुरि यहाँ जघन्य अवगाहना प्रमाण तै बधता असख्यात का अर अनत का भाग की वृद्धि न सभवै है, जातै इनिका भाग जघन्य अवगाहना कौ न बनै है । बहुरि इहा आवली का असख्यातवा भाग तै बधता असख्यात का अर अनन्त का गुणकाररूप वृद्धि न सभवै है, जातै इनि करि जघन्य अवगाहना कौ गुणै प्रमाण बधता होइ । इहा सूक्ष्म अपर्याप्त वायुकायिक का जघन्य अवगाहना पर्यंत ही विवक्षा है ।

अैसे इहा प्रदेश वृद्धि का स्वरूप जानना, सोई विशेप करि कहिए है । सर्व तै जघन्य अवगाहना कौ इस जघन्य अवगाहना प्रमाण असख्यात का भाग दीए एक पाया, सो जघन्य अवगाहना के ऊपरि एक प्रदेश जोडै, दूसरा अवगाहना का भेद हो है, सो यहु असख्यात भाग वृद्धि का आदि स्थान है । बहुरि जघन्य अवगाहना तै आधा प्रमाणरूप असख्यात का भाग तिस जघन्य अवगाहना कौ दीए दोय पाए,

---

१ ब प्रति के अनुसार पाठभेद है ।

सो जघन्य अवगाहना विषै जोडै, तीसरा अवगाहना का भेद होइ, सो यहु असख्यात भाग वृद्धि का दूसरा स्थान है। अैसै ही क्रम करि जघन्य अवगाहना कौ यथायोग्य असख्यात का भाग दीए तीन, च्यारि, पाच इत्यादि सख्यात असख्यात पाए, ते जघन्य अवगाहना विषै जोडै निरतर एक-एक प्रदेश की वृद्धि करि सयुक्त अवगाहना के स्थान असख्यात हो हैं। तिनिकी उलधि कहा होइ सो कहै है –

अवरोग्गाहणमाणे, जहण्णपरिमिदअसंखरासिहिदे।
अवरस्सुवरिं उड्ढे, जेट्ठमसखेज्जभागस्स ॥१०३॥

अवरावगाहनाप्रमाणे, जघन्यपरिमितासख्यातराशिहृते।
अवरस्योपरि वृद्धे, ज्येष्ठमसंख्यातभागस्य ॥१०३॥

टीका – एक जायगा जघन्य अवगाहना कौ जघन्य परिमित असख्यात राशि का भाग दीए, जो प्रमाण आवै, तितने जघन्य अवगाहना विषै जोडै जितने होइ, तितने प्रदेश जहा अवगाहना भेद विषै होइ, तहा असख्यात भाग वृद्धिरूप अवगाहना स्थाननि का अतस्थान हो है। एते ए असख्यात भाग वृद्धि के स्थान कितने भए ? सो कहिए है – 'आदी अते सुद्धे वड्ढिहिदे रूवसजुदे ठाणे' इस करण सूत्र करि असख्यात भाग वृद्धिरूप अवगाहना का आदिस्थान का प्रदेश प्रमाण कौ अतस्थान का प्रदेश प्रमाण मे स्यौं घटाए अवशेष रहै, ताकौ स्थान-स्थान प्रति एक-एक प्रदेश वधता है, तातै एक का भाग दीए भी तितने ही रहैं, तिनमे एक और जोडै जितने होइ, तितने असख्यात भाग वृद्धि के स्थान जानने।

तस्सुवरि इगिपदेसे, जुदे अवत्तव्वभागपारंभो।
वरसंखमवहिदवरे, रूऊणे अवरउवरिजुदे ॥१०४॥

तस्योपरि एकप्रदेशे, युते अवक्तव्यभागप्रारभ।
वरसंख्यातावहितावरे, रूपोने अवरोपरियुते ॥१०४॥

टीका – पूर्वोक्त असख्यात भाग वृद्धि का अत अवगाहना स्थान, तीहि विषै एक प्रदेश जुडै अवक्तव्य भाग वृद्धि का प्रारभरूप प्रथम अवगाहना स्थान हो है। बहुरि ताके आगै एक-एक प्रदेश वधता अनुक्रम करि अवक्तव्य भाग वृद्धि के स्थानकनि कौ उलधि एक बार उत्कृष्ट सख्यात का भाग जघन्य अवगाहना कौ दीए जो

प्रमाण आवै, तामैं एक घटाए जितने होंइ, तितने प्रदेश जघन्य अवगाहना के ऊपरि जुडे कहा होइ, सो कहै है –

तव्वड्ढीए चरिमो, तस्सुवरिं रूवसंजुदे पढमा ।
संखेज्जभागउड्ढी, उवरिमदो रूवपरिवड्ढी ॥१०५॥

तद्वृद्धेश्चरमः, तस्योपरि रूपसयुते प्रथमा ।
सख्यातभागवृद्धिः उपर्यतो रूपपरिवृद्धिः ॥१०५॥

टीका – तीहि अवक्तव्य भाग वृद्धि का अत अवगाहन स्थान हो है । बहुरि ए अवक्तव्य भाग वृद्धि स्थानकनि के भेद कितने है ? सो कहिए है – **'आदी अंते सुद्धे वड्ढिहिदे रूवसंजुदे ठाणे'** इस करण सूत्र करि अवक्तव्य भाग वृद्धि का आदिस्थान का प्रदेश प्रमाण अतस्थान का प्रदेश प्रमाण विषै घटाइ, अवशेष कौ वृद्धि प्रमाण एक-एक का भाग देइ जे पाए तिनि मे एक जोडे जितने होइ, तितने अवक्तव्य भाग वृद्धि के स्थान हैं ।

बहुरि अब अववतव्य भाग वृद्धि के स्थानकनि की उत्पत्ति कौ अंक सदृष्टि करि व्यक्त करै है । जैसै जघन्य अवगाहना का प्रमाण अडतालीस सै (४८००), जघन्य परीतासख्यात का प्रमाण सोलह, उत्कृष्ट सख्यात का प्रमाण १५, तहा भागहारभूत जघन्य परीतासख्यात सोलह (१६) का भाग जघन्य अवगाहना अडतालीस सै (४८००) कौ दीए तीन सै पाए, सो इतने जघन्य अवगाहना तै बधै असख्यात भाग वृद्धि का अत अवगाहना स्थान हो है । बहुरि तिस जघन्य अवगाहना अडतालीस सै कौ उत्कृष्ट सख्यात पद्रह, ताका भाग दीए तीन सै बीस (३२०) पाए, सो इतने बधै सख्यात भाग वृद्धि का प्रथम अवगाहना स्थान हो है । बहुरि इनि दोऊनि के बीच अतराल विषै तीन सै एक कौ आदि देकरि तीन सै उगणीस ३०१, ३०२, ३०३, ३०४, ३०५, ३०६, ३०७, ३०८, ३०९, ३१०, ३११, ३१२, ३१३, ३१४, ३१५, ३१६, ३१७, ३१८, ३१९ पर्यन्त वधै जे ए उगणीस स्थान भेद हो है, ते असख्यात भाग वृद्धिरूप वा सख्यात भाग वृद्धिरूप न कहे जाइ, जातै जघन्य असख्यात का भी वा उत्कृष्ट सख्यात का भी भाग दीए ते तीन सै एक आदि न पाइए है । काहे तै ? जातै जघन्य असख्यात का भाग दीए तीन सै पाए, उत्कृष्ट संख्यात का भाग दीए तीन सै बीस पाए, इनि तै तिनकी सख्या हीन अधिक है । तातै इनिकौ अवक्तव्य भाग वृद्धिरूप स्थान कहिए तौ इहा अवक्तव्य भाग वृद्धि विषै भागहार का प्रमाण कैसा सभवै है ? सो कहिए है – जघन्य का प्रमाण अडतालीस

सै, ताकौ इस तीन सै एक प्रमाण भागहार का भाग दीए जो पाइए, तितने का भागहार संभवै है । तहा 'हारस्य हारो गुणकोंशराशे.' इस करण सूत्र करि भागहार का भागहार है, सो भाज्य राशि का गुणकार होइ, असें भिन्न गणित का आश्रय करि अडतालीस सै कौं तीन सै एक करि ताकौ अडतालीस सै का भाग दीए इतने प्रमाण तिस अवक्तव्य भागवृद्धि का प्रथम अवगाहन भेद के वृद्धि का प्रमाण हो है । सो अपवर्तन कीए तीन सै एक ही आवे है । सो यहु सख्यात-असख्यातरूप भागहाररूप न कह्या जाय, तातै अवक्तव्य भाग वृद्धिरूप कह्या है ।

भावार्थ – इहा असा जो भिन्न गणित का आश्रय करि इहा भागहार का प्रमाण असा आवै है । बहुरि जैसे यहु अकसदृष्टि करि कथन कीया, असे ही अर्थ-सदृष्टि करि कथन जोडना । इस ही अनुक्रम करि अवक्तव्य भाग वृद्धि के अतस्थान पर्यन्त स्थान ल्यावने । बहुरि तिस अवक्तव्य भाग वृद्धि का अत अवगाहना स्थान विषै एक प्रदेश जुडै सख्यात भाग वृद्धि का प्रथम अवगाहन स्थान हो है । ताके आगै एक-एक प्रदेश की वृद्धि का अनुक्रम करि अवगाहन स्थान असख्यात प्राप्त हो है ।

अवरद्धे अवरुवरिं, उड्ढे तव्वड्ढिपरिसमत्तीहु ।
रूवे तदुवरि उड्ढे, होदि अवत्तव्वपढमपदं ॥१०६॥

अवरार्धे अवरोपरिवृद्धे तद्वृद्धिपरिसमाप्तिर्हि ।
रूपे तदुपरिवृद्धे, भवति अवक्तव्यप्रथमपदम् ॥१०६॥

टीका – जघन्य अवगाहना का आधा प्रमाणरूप प्रदेश जघन्य अवगाहना के ऊपरि बधते संते सख्यात भाग वृद्धि का अतस्थान हो है । जातै जघन्य सख्यात का प्रमाण दोय है, ताका भाग दीए राशि का आधा प्रमाण हो है । बहुरि ए सख्यात भाग वृद्धि के स्थान केते हैं ? सो कहिए है - '**आदी अते सुद्धे वड्ढिहिदे रूवसजुदे ठाणे**' इस सूत्र करि सख्यात भाग वृद्धि का आदिस्थान का प्रदेश प्रमाण कौं अतस्थान का प्रदेश प्रमाण विषै घटाइ अवशेष कौं वृद्धि का प्रमाण एक का भाग दीए भी तितने ही रहे । तहा एक जोडे जो प्रमाण होइ, तितने सख्यात भाग वृद्धि के स्थान है । बहुरि सख्यात भाग वृद्धि का अत अवगाहना स्थान विषै एक प्रदेश जुडै, अवक्तव्य भागवृद्धि का प्रथम अवगाहन स्थान उपजै है । बहुरि ताके आगै एक-एक प्रदेश बधता अनुक्रम करि अवक्तव्य भाग वृद्धि के स्थान असाख्यात उलघि एक जायगा कह्या, सो कहै है ।

रूऊणवरे अवरुस्सुवरिं संवड्ढिदे तदुक्कस्सं ।
तम्हि पदेसे उड्ढे, पढ़मा संखेज्जगुणवड्ढि ॥१०७॥

रूपोनावरे अवरस्योपरि संवर्धिते तदुत्कृष्टं ।
तस्मिन् प्रदेशे वृद्धे प्रथमा सख्यातगुणवृद्धिः ॥१०७॥

टीका – एक घाटि जघन्य अवगाहना का प्रदेश प्रमाण जघन्य अवगाहना के ऊपरि बधतै सतै अवक्तव्य भाग वृद्धि का अत उत्कृष्ट अवगाहना स्थान हो है । जातै जघन्य सख्यात का प्रमाण दोय है, सो दूणा भए सख्यात गुण वृद्धि का आदि स्थान होइ । तातै एक घाटि भए, याका अतस्थान हो है । इहा अवक्तव्य भाग वृद्धि के स्थान केते है ? सो कहिए है – **'आदी अते सुद्धे'** इत्यादि सूत्र करि याके आदि कौ अत विषै घटाइ, अवशेष कौ वृद्धि एक का भाग देइ एक जोडै जो प्रमाण होइ, तितने अवक्तव्य भाग वृद्धि के स्थान हो है । बहुरि तिस अवक्तव्य भाग वृद्धि का अत स्थान विषै एक प्रदेश जुडै, सख्यात गुण वृद्धि का प्रथम अवगाहन स्थान हो है । ताकै आगै एक-एक प्रदेश की वृद्धि करि सख्यात गुण वृद्धि के असख्यात अवगाहना स्थान कौ प्राप्त होइ, एक स्थान विषै कह्या, सो कहै है –

अवरे वरसंखगुणे, तच्चरिमो तह्मि रूवसंजुत्ते ।
उग्गाहणह्मि पढमा, होदि अवत्तव्वगुणवड्ढी ॥१०८॥

अवरे वरसंख्यगुणे, तच्चरमः तस्मिन् रूपसयुक्ते ।
अवगाहने प्रथमा, भवति अवक्तव्यगुणवृद्धिः ॥१०८॥

टीका – जघन्य अवगाहना कौ उत्कृष्ट सख्यात करि गुणै जितने होइ, तितने प्रदेश जहा पाइए, सो सख्यात गुण वृद्धि का अत अवगाहना स्थान है । बहुरि ए सख्यात गुण वृद्धि के स्थान केते है ? सो कहिए है – पूर्ववत् **'आदी अंते सुद्धे वड्ढिहिदे रूवसंजुदे ठाणे'** इत्यादि सूत्र करि याका आदि कौ अत विषै घटाइ, वृद्धि एक का भाग देई, एक जोडै, जितने पावै तितने है । बहुरि आगै सख्यात गुण वृद्धि का अत अवगाहना स्थान विषै एक प्रदेश जोडै, अवक्तव्य गुण वृद्धि का प्रथम अवगाहन स्थान हो है । यातै आगै एक-एक प्रदेश की वृद्धि करि अवक्तव्य गुण वृद्धि के स्थान असंख्यात प्राप्त करि एक स्थान विषै कह्या, सो कहै है –

अवरपरित्तासंखेणवरं संगुणिय रूवपरिहीणे ।
तच्चरिमो रूवजुदे, तह्मि असंखेज्जगुणपढमं ॥१०९॥

अवरपरीतासंख्येनावरं सगुण्य रूपपरिहीने ।
तच्चरमो रूपयुते, तस्मिन् असंख्यातगुणप्रथमम् ॥१०९॥

टीका – जघन्य परीता असख्यात करि जघन्य अवगाहना कौ गुरिण, तामैं एक घटाए जो प्रमाण होइ, तितने प्रदेशरूप तिस अवक्तव्य गुण वृद्धि का अत अवगाहना स्थान हो है । ए अवक्तव्य गुण वृद्धि के स्थान केते है ? सो कहिए है – पूर्ववत् **'आदी अंते सुद्धे'** इत्यादि सूत्र करि याका आदि कौं अत विषै घटाए, अवशेष कौ वृद्धि एक का भाग देइ एक जोडे, जितने होइ तितने है । वहुरि इहा अवक्तव्य गुण वृद्धि का स्वरूप अकसदृष्टि करि अवलोकिए हैं । जैसे जघन्य अवगाहना का प्रमाण सोलह (१६), एक घाटि जघन्य परीता असख्यात प्रमाण जो उत्कृष्ट सख्यात, ताका प्रमाण तीन, ताकरि जघन्य कौ गुणै अडतालीस होइ । वहुरि जघन्य परिमित असख्यात का प्रमाण च्यारि, ताकरि जघन्य कौ गुणै चौंसठि होइ, इनिके बीचि जे भेद, ते अवक्तव्य गुण वृद्धि के स्थान है । जातै इनि कौ सख्यात वा असख्यात गुण वृद्धि रूप कहे न जाइ, तहा जघन्य अवगाहन सोलह कौ एक घाटि परीता सख्यात तीन करि गुणै अडतालीस होइ, तामे एक जोडे अवक्तव्य गुण वृद्धि का प्रथम स्थान हो है । याकौ जघन्य अवगाहन सोलह का भाग दीए पाया गुणचास का सोलहवा भाग प्रमाण अवक्तव्य गुण वृद्धि का प्रथम स्थान ल्यावने कौ गुणकार हो है । याकरि जघन्य अवगाहन कौ गुणि अपवर्तन कीए अवक्तव्य गुण वृद्धि का प्रथम अवगाहन स्थान गुणचास प्रदेश प्रमाण हो है । अथवा अवक्तव्य गुण वृद्धि का प्रथम स्थान एक अधिक तिगुणा सोलह, ताकौ जघन्य अवगाहना सोलह, ताका भाग देइ पाया एक सोलहवा भाग अधिक तीन, ताकरि जघन्य अवगाहन सोलह कौ गुणै गुणचास पाए, तितने ही प्रदेश प्रमाण अवक्तव्य गुण वृद्धि का प्रथम अवगाहन स्थान हो है । ऐसे अन्य उत्तरोत्तर भेदनि विषै भी गुणकार का अनुक्रम जानना । तहा अवक्तव्य गुण वृद्धि का अत का अवगाहना स्थान, सो जघन्य अवगाहन सोलह कौ जघन्य परिमिता सख्यात च्यारि करि गुणै जो पाया, तामे एक घटाए तरेसठि होइ, सो इतने प्रदेश प्रमाण है । बहुरि याकौ जघन्य अवगाहन सोलह का भाग देइ, पाया तरेसठि का सोलहवा भाग, सोई अवक्तव्य गुण वृद्धि का

अत अवगाहना स्थान ल्यावने विषै गुणकार हो है । याकरि जघन्य अवगाहन सोलह कौ गुणै, अवक्तव्य गुण वृद्धि का अत अवगाहन स्थान की उत्पत्ति हो है, सो अवलोकनी । अथवा अवक्तव्य गुण वृद्धि के अत अवगाहन स्थान तरेसठि कौ जघन्य अवगाहन सोलह का भाग देइ पाया तीन अर पद्रह सोलहवा भाग, इस करि जघन्य अवगाहन सोलह कौ गुणै, अवक्तव्य गुण वृद्धि का अत अवगाहना स्थान का प्रदेश प्रमाण हो है । सो सर्व अवक्तव्य गुण वृद्धि का स्थापन गुणचास आदि एक-एक बधता तरेसठि पर्यन्त जानना । ४६, ५०, ५१, ५२, ५३, ५४, ५५, ५६, ५७, ५८, ५६, ६०, ६१, ६२, ६३ । बहुरि इस ही अनुक्रम करि अर्थसदृष्टि विषै भी एक घाटि जघन्य अवगाहन प्रमाण इस अवक्तव्य गुण वृद्धि के स्थान जानने । बहुरि अब पूर्वोक्त अवक्तव्य गुण वृद्धि का अत अवगाहन स्थान विषै एक प्रदेश जुडै, असंख्यात गुण वृद्धि का प्रथम अवगाहन स्थान हो है ।

रूवुत्तरेण तत्तो, आवलियासंखभागगुणगारे ।
तप्पाउग्गे जादे, वाउस्सोग्गाहणं कमसो ॥११०॥

रूपोत्तरेण तत, आवलिकासंख्यभागगुणकारे ।
तत्प्रायोग्ये जाते, वायोरवगाहन क्रमशः ॥११०॥

टीका – ततः कहिए तीहि असख्यात गुण वृद्धि का प्रथम अवगाहन स्थान तै आगै एक-एक प्रदेश वृद्धि करि असख्यात गुण वृद्धि के अवगाहन स्थान असख्यात हो है । तिनिकौ उलघि एक स्थान विषै यथायोग्य आवलि का असख्यातवा भाग प्रमाण असख्यात का गुणकार, सो सूक्ष्म लब्धि अपर्याप्त निगोद का जघन्य अवगाहन गुण्य का होते साते सूक्ष्म वायुकायिक लब्धि अपर्याप्त का जघन्य अवगाहन स्थान की उत्पत्ति हो है । इहा ए केते स्थान भए ? तहा '**आदी अंते सुद्धे**' इत्यादि सूत्र करि आदि स्थान कौ अत स्थान विषै घटाइ, अवशेष कौ वृद्धि एक का भाग देइ लब्ध राशि विषै एक जोडै, स्थानकनि का प्रमाण हो है ।

आगै सर्व अवगाहन के स्थानकनि का गुणकार की उत्पत्ति का अनुक्रम कहै है–

एवं उवरि वि णेओ, पदेसवड्ढिक्कमो जहाजोग्गं ।
सव्वत्थेक्केक्कह्मि य, जीवसमासाण विच्चाले ॥१११॥

एवमुपर्यपि ज्ञेयः, प्रदेशवृद्धिक्रमो यथायोग्यम् ।
सर्वत्रैकैकस्मिश्च जीवसमासानामंतराले ॥१११॥

टीका – एवं कहिए इस ही प्रकार जैसै सूक्ष्म निगोद लब्धि अपर्याप्तक का जघन्य अवगाहना स्थान कौ आदि देकरि सूक्ष्म लब्धि अपर्याप्त वायुकायिक जीव का जघन्य अवगाहन स्थान पर्यन्त पूर्वोक्त प्रकार चतु स्थान पतित प्रदेश वृद्धि का अनुक्रम विधान कह्या, तैसै ऊपरि भी सूक्ष्म लब्धि अपर्याप्तक तेजकाय का जघन्य अवगाहन तै लगाइ द्वीद्रिय पर्याप्त का जघन्य अवगाहन स्थान पर्यन्त जीवसमास का अवगाहना स्थानकनि का अतरालनि विषै प्रत्येक जुदा-जुदा चतु स्थान पतित वृद्धि का अनुक्रम करि प्राप्त होइ यथायोग्य गुणकार की उत्पत्ति का विधान जानना।

भावार्थ – जैसै सूक्ष्मनिगोद लब्धि अपर्याप्त का जघन्य अवगाहना स्थान अर सूक्ष्म वायुकायिक लब्धि अपर्याप्त का जघन्य अवगाहना स्थान के वीचि अतराल विषै चतु स्थान पतित वृद्धि का अनुक्रम विधान कह्या । तैसै ही सूक्ष्म वायुकायिक लब्धि अपर्याप्त अर सूक्ष्म तेज कायिक लब्धि अपर्याप्तकनि का अतराल विषै वा असै ही द्वीद्रिय पर्याप्त का जघन्य अवगाहन स्थान पर्यंत अगिले अतरालनि विषै चतु स्थान पतित वृद्धि का अनुक्रम विधान जानना। विशेष इतना - तहा आदि अवगाहन स्थान का वा भाग वृद्धि, गुण वृद्धि विषै असख्यात का प्रमाण वा अनुक्रम वा स्थानकनि का प्रमाण इत्यादि यथासभव जानने ।

बहुरि तैसै ही ताके आगै तेइद्री पर्याप्त का जघन्य अवगाहन स्थान आदि देकरि सज्ञी पचेद्री पर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहन पर्यंत अवगाहन स्थानकनि का एक-एक अतराल विषै असख्यात गुण वृद्धि बिना त्रिस्थान पतित प्रदेशनि की वृद्धि का अनुक्रम करि प्राप्त होइ यथायोग्य गुणकार की उत्पत्ति का विधान जानना ।

भावार्थ – इहा पूर्वस्थान तै अगिला स्थान सख्यात गुणा ही है । तातै तहा असख्यात गुण वृद्धि न सभवै है, त्रिस्थान पतित वृद्धि ही सभवै है । इहा भी विशेष इतना – जो आदि अवगाहना स्थान का वा भाग वृद्धि विषै असख्यात का वा गुण वृद्धि विषै सख्यात का प्रमाण वा अनुक्रम वा स्थानकनि का प्रमाण इत्यादिक यथासभव जानने । ऐसै इहा प्रसग पाइ चतु स्थान पतित वृद्धि का वर्णन कीया है ।

बहुरि कही षट्स्थान पतित, कही पचस्थान पतित, कही चतु स्थान पतित, कही त्रिस्थान पतित, कही द्विस्थान पतित, कही एकस्थान पतित वृद्धि सभवै है । अथवा कही ऐसै ही हानि सभवै है, तहा भी ऐसै ही विधान जानना । तहा जाका निरूपण होइ ऐसा जो विवक्षित, ताके आदि स्थान के प्रमाण तै अगले स्थान विषै

प्रमाण बधता होइ, तहा वृद्धि सभवै है, जहा घटता होइ, तहा हानि सभवै है। सो इनिका स्वरूप नीकै जानने के अर्थि इस भाषाटीका विषै किछू कथन करिए है।

प्रथम षट्स्थान पतित वृद्धि वा हानि का स्वरूप कहिये है। अनंत भाग वृद्धि, असख्यात भाग वृद्धि, सख्यात भाग वृद्धि, सख्यात गुण वृद्धि, असख्यात गुण वृद्धि, अनत गुण वृद्धि ऐसै षट्स्थान पतित वृद्धि जाननी। बहुरि अनत भागहानि, असख्यात भागहानि, सख्यात भागहानि सख्यात गुणहानि, असख्यात गुणहानि, अनत गुणहानि असै षट्स्थानपतित हानि जाननी। बहुरि इनिके बीचि-बीचि अवक्तव्य वृद्धि वा हानि सभवै है। सो इनिका स्वरूप अकसंदृष्टिरूप दृष्टात करि दिखाइए है, जातै याके जानै यथार्थ स्वरूप का ज्ञान सुगम होइ है।

तहा जघन्य सख्यात का प्रमाण दोय (२), उत्कृष्ट सख्यात का पाच (५), जघन्य असख्यात का छह (६), उत्कृष्ट असख्यात का पद्रह (१५), जघन्य अनत का सोलह (१६), उत्कृष्ट अनत का प्रमाण बहुत है। तथापि इहा भागहार विषै तौ आदिस्थान प्रमाण जानना अर गुणकार विषै आदिस्थान तै जितने गुणा बधता वा घटता अत स्थान होई, तीहिं प्रमाण ग्रहण करना। सो इहा अकसदृष्टि विषै आदि स्थान का प्रमाण चौवीस सै स्थापना कीया। बहुरि वृद्धिरूप होइ दूसरा स्थान चौवीस सै एक प्रमाण-रूप भया। तहा अनत भाग वृद्धि का आदि सभवै है, जातै आदि स्थान के प्रमाण कौ आदि स्थान प्रमाण जो अनत का भेद, ताका भाग दीए एक पाया, सो आदि स्थान तै इहा एक की वृद्धि भई है। असै ही जिस-जिस स्थान विषै आदि स्थान तै जो अधिक का प्रमाण होइ, सो प्रमाण सभवतै कोई अनत के भेद का भाग आदि स्थान कौ दीए आवै, तहा-तहा अनत भाग वृद्धि सभवै है। तहा जो स्थान पचीस सै पचास प्रमाणरूप भया, तहा अनत भाग वृद्धि का अत जानना। जातै जघन्य अनत का प्रमाण सोलह, ताका भाग आदि स्थान कौ दीए एक सो पचास पाए, सोई इहा आदि स्थान तै अधिक का प्रमाण है। बहुरि पचीस सै इक्यावन तै लगाइ पचीस सै गुणसठि पर्यत प्रमाणरूप जे स्थान, ते अवक्तव्य भाग वृद्धिरूप है। जातै जघन्य अनत का भी वा उत्कृष्ट असख्यात का भी भाग की वृद्धि कीए जो प्रमाण होइ, तातै इनिका प्रमाण हीन अधिक है। यद्यपि भिन्न गणित करि इहा भागहार का प्रमाण सोलह तै किछू हीन वा पद्रह तै किछू अधिक पाइए, तथापि सोलह प्रमाण जघन्य अनत तै भी याका प्रमाण हीन भया। तातै याकौ अनत भागरूप न कह्या जाय।

अर उत्कृष्ट असंख्यात पद्रह तै भी याका प्रमाण अधिक भया, तातै याकौं असख्यात भागरूप न कह्या जाय । जातै उत्कृष्ट तै अधिक अर जघन्य तै हीन कहना असभव है, तातै इहा अवक्तव्य भाग का ग्रहण कीया । असै ही आगे भी यथासभव अवक्तव्य भाग वृद्धि वा गुण वृद्धि वा अवक्तव्य भाग हानि वा गुण हानि का स्वरूप जानना । बहुरि वृद्धिरूप होइ जो स्थान पचीस सै साठि प्रमाण रूप भया, तहा असख्यात भाग वृद्धि आदि सभवै है । जातै उत्कृष्ट असख्यात पद्रह का भाग आदि स्थान कौं दीए एक सौ साठि पाए, सोई इहा आदि स्थान तै अधिक का प्रमाण है । बहुरि ऐसै ही जिस-जिस स्थान विषै आदि स्थान तै अधिक का प्रमाण सभवतै असख्यात के भेद का भाग आदि स्थान की दीए आवै, तहा-तहा असख्यात भाग वृद्धि सभवै है । तहा जो स्थान अठाइस सै प्रमाणरूप भया, तहा असख्यात भाग वृद्धि का अत जानना । जातै जघन्य असख्यात छह, ताका भाग आदि स्थान कौं दीए च्यारि सै पाए, सोई इहा इतने आदि स्थान तै अधिक है । बहुरि जे स्थान अट्ठाइस सै एक आदि अट्ठाईस सै गुण्यासी पर्यंत प्रमाणरूप है, तहा अवक्तव्य भाग वृद्धि सभवै है । जातै जघन्य असख्यात का भी वा उत्कृष्ट सख्यात का भी भाग की वृद्धिरूप प्रमाण तै इनिका प्रमाण अधिक हीन है । बहुरि वृद्धिरूप होइ जो स्थान अठ्ठाईस सै असी प्रमाणरूप भया, तहा सख्यात भाग वृद्धि का आदि सभवै है । जातै उत्कृष्ट सख्यात पाच, ताका भाग आदि स्थान कौं दीए च्यारि सै असी पाए, सोई इतने इहा आदि स्थान तै अधिक है । बहुरि असै ही जिस-जिस स्थान विषै आदि स्थान तै अधिक का प्रमाण सभवते सख्यात के भेद का भाग आदि स्थान कौं दीए आवै, तहा-तहा सख्यात भाग वृद्धि सभवै है । यहा जो स्थान छत्तीस सै प्रमाणरूप भया, तहा सख्यात भाग वृद्धि का अत जानना । जातै जघन्य सख्यात दोय, ताका भाग आदि स्थान कौं दीए बारह सै पाए, सो इतने इहा आदि स्थान तै अधिक है । बहुरि जे स्थान छत्तीस सै एक आदि सैतालीस सै निन्याणवे पर्यन्त प्रमाणरूप है, तहा अवक्तव्य भाग वृद्धि सभवै है । जातै जघन्य सख्यात भाग वृद्धि वा जघन्य सख्यात गुण वृद्धिरूप प्रमाण तै भी इनिका प्रमाण अधिक हीन है । बहुरि वृद्धिरूप होइ जो स्थान अडतालीस सै प्रमाणरूप भया, तहा सख्यात गुण वृद्धि का आदि सभवै है, जातै जघन्य सख्यात दोय, ताकरि आदि स्थान कौं गुणै इतना प्रमाण हो है । असै ही जिस-जिस स्थान का प्रमाण सभवते सख्यात के भेद करि आदि स्थान कौं गुणै आवै, तहा-तहा सख्यात गुण वृद्धि सभवै है । तहा जो स्थान बारह हजार प्रमाणरूप भया, तहा सख्यात

गुण वृद्धि का अंत जानना। जातै उत्कृष्ट सख्यात पांच, ताकरि आदि स्थान कौ गुणे इतना प्रमाण हो है। बहुरि जे स्थान बारह हजार एक तै लगाई चौदह हजार तीन सौ निन्याणवै पर्यंत प्रमाणरूप है, तहा अवक्तव्य गुण वृद्धि सभवै है। जातै उत्कृष्ट सख्यात गुण वृद्धि वा जघन्य असख्यात गुण वृद्धिरूप प्रमाण तै भी इनिका प्रमाण अधिक हीन है। बहुरि वृद्धिरूप होई जो स्थान चौदह च्यारि सै प्रमाणरूप भया, तहा असख्यात भागवृद्धि[१] का आदि सभव है। जातै जघन्य असख्यात छह, ताकरि आदि स्थान कौ गुणै, इतना प्रमाण हो है। बहुरि ऐसै ही जिस-जिस स्थान का प्रमाण सभवते असख्यात के भेद करि आदि स्थान कौ गुणै आवै, तहा-तहा असख्यात गुण वृद्धि[२] सभवै है। तहा जो स्थान छत्तीस हजार प्रमाणरूप भया, तहा असख्यात गुण वृद्धि [३] का अत जानना। जातै उत्कृष्ट असख्यात पद्रह, ताकरि आदि स्थान कौ गुणै इतना प्रमाण हो है। बहुरि जे स्थान छत्तीस हजार एक आदि अडतीस हजार तीन सै निन्याणवै पर्यंत प्रमाणरूप है, तहा अवक्तव्य गुण वृद्धि सभवै है। जातै उत्कृष्ट असंख्यात गुण वृद्धि वा जघन्य अनत गुण वृद्धिरूप प्रमाण तै भी इनिका प्रमाण अधिक हीन है। बहुरि वृद्धिरूप होइ जो स्थान अडतीस हजार च्यारि सै प्रमाणरूप भया, तहा अनंत गुणवृद्धि का आदि सभवै है, जातै जघन्य अनत सोलह, ताकरि आदि स्थान कौ गुणै इतना प्रमाण हो है।

बहुरि ऐसै ही जिस-जिस स्थान का प्रमाण सम्भव तै अनन्त का भेद करि आदि स्थान कौ गुणै आवै, तहा अनन्त गुण वृद्धि सम्भवै है। तहा जो स्थान दोय लाख चालीस हजार प्रमाण रूप भया, तहा अनन्त गुण वृद्धि का अत जानना। जातै यद्यपि अनन्त का प्रमाण बहुत है, तथापि इहा जिस अनन्त के भेद करि गुणित अतस्थान होइ, सोई अनन्त का भेद इहा अत विषै ग्रहण करना। सो अकसदृष्टि विषै एक सौ प्रमाण अनन्त के भेद का अंत विषै ग्रहण कीया। तीहिकरि आदि स्थान कौ गुणै दोय लाख चालीस हजार होइ, सोई विवक्षित के अतस्थान का प्रमाण जानना। ऐसै इहा षट्स्थान पतित वृद्धि का विधान दिखाया।

अब षट्स्थान पतित हानि का विधान दिखाइए है। इहा विवक्षित का आदि स्थान दोय लाख चालीस हजार प्रमाणरूप स्थापन कीया। यातै घटि करि दूसरा स्थान जो दोय लाख गुणतालीस हजार नौ सै निन्याणवै प्रमाणरूप भया, सो

---

१ ख प्रति मे गुणवृद्धि है। २ ब प्रति मे यहा भागवृद्धि है। ३ ब प्रति मे यहा भागवृद्धि है।

अनत भाग हानि का आदिरूप है । जातै आदि स्थान कौ आदि स्थान प्रमाणरूप जो अनत का भेद, ताका भाग दीए एक पाया, सोई इहा आदि स्थान तै एक घटती भया है । बहुरि अैसै ही जिस-जिस स्थान विषै आदि स्थान तै जेता घटती होइ, तितना प्रमाण कोई अनत के भेद का भाग आदि स्थान कौ दीए पावै, सो-सो स्थान अनत भाग हानिरूप जानना । तहा जो स्थान दोय लाख पचीस हजार प्रमाणरूप होइ, सो स्थान अनत भाग हानि का अत जानना । जातै जघन्य अनत सोलह, ताका भाग आदि स्थान कौ दीए पद्रह हजार पाये, सो इहा आदि स्थान तै हीन का प्रमाण है। बहुरि दोय लाख चौवीस हजार नव सै निन्याणवै तै लगाइ दोय लाख चौवीस हजार एक पर्यन्त प्रमाणरूप जे स्थान है, ते अवक्तव्य भाग हानिरूप है । जातै जघन्य अनत का भी वा उत्कृष्ट असख्यात का भी भाग हानिरूप प्रमाण तै इनिका प्रमाण हीन अधिक आवै है । तातै इनिकौ अनत वा असख्यात भाग हानिरूप न कहे जाइ । बहुरि हानिरूप होइ जो स्थान दोय लाख चौवीस हजार प्रमाण होइ, सो स्थान असख्यात भाग हानि का आदिरूप जानना । जातै उत्कृष्ट असख्यात पद्रह का भाग आदि स्थान कौ दीए सोलह हजार पाए, सोई इतने इहा आदि स्थान तै हीन है । बहुरि अैसै हो जिस-जिस स्थान विषै आदि स्थान तै हीन का प्रमाण सभवते असख्यात के भेद का भाग दीए पावै, सो-सो स्थान असख्यात भाग हानिरूप जानना । तहा स्थान दोय लाख प्रमाणरूप भया, तहा असख्यात भाग हानि का अत जानना । जातै जघन्य असख्यात छह का भाग आदि स्थान को दीए चालीस हजार पाए, सोई इतना इहा आदिस्थान तै हीन है । बहुरि एक घाटि दोय लाख तै लगाइ एक अधिक एक लाख बाणवै हजार पर्यन्त प्रमाणरूप जे स्थान हैं, ते अवक्तव्य भाग हानिरूप है । जातै जघन्य असख्यात का भी वा उत्कृष्ट सख्यात का भी भाग हानि रूप प्रमाण तै इनिका प्रमाण हीन अधिक है, तातै इनिकौं असख्यात वा सख्यात भाग हानिरूप कहे न जाइ । बहुरि हानिरूप होइ जो स्थान एक लाख बाणवै हजार प्रमाणरूप होय, तहा सख्यात भाग हानि का आदि है, जातै उत्कृष्ट सख्यात पाच का भाग आदि स्थान कौ दीए अडतालीस हजार पाए, सो इतने इहा आदि स्थान तै हीन है । अैसै ही जिस-जिस स्थान विषै आदि स्थान तै हीन का प्रमाण सभवते सख्यात का भाग दीए पावै, सो-सो स्थान सख्यात भाग हानिरूप जानना । तहा जो स्थान एक लाख वीस हजार प्रमाण होइ, सो स्थान सख्यात भाग हानि का अतरूप जानना । जातै जघन्य सख्यात दोय का भाग आदिस्थान कौ दीए एक लाख

बीस हजार पाए, सोई इतने इहा आदि स्थान तै हीन है। बहुरि इस ही स्थान कौं सख्यात गुणहानि का आदिरूप कहिए, जातै जघन्य सख्यात दोय, सो आदि स्थान कौ दुगुणा घाटि कीए एक लाख बीस हजार पाए, सोई इस स्थान का प्रमाण है। पूर्व राशि कौ जितने का भाग दीए उत्तर राशि का प्रमाण आवै अर तिस उत्तर राशि के प्रमाण कौ तितने करि गुणै पूर्व राशि का प्रमाण होइ, तातै भागहार का कहना अर गुणहानि का कहना एकार्थरूप जानना। जैसै चौसठि कौ च्यारि का भाग दीजिए तौ भी सोलह होइ अर सोलह कौ च्यारि करि गुणै भी चौसठि होइ; तातै सोलह कौ चौसठि का चौथा भाग भी कहिए, अर चौसठि तै चौगुणा घाटि भी कहिए। ऐसै ही जहा जितनी गुणहानि का प्रमाण होइ, तहा तितने का भागहार जानना। सो इहा जघन्य सख्यात दोय, सो आदि स्थान कौ दुगुणा घाटि कीए वा दोय का भाग दीए एक लाख बीस हजार होइ, तीहि प्रमाण जो स्थान, सो संख्यात गुणहानि का आदिरूप जानना। बहुरि ऐसै ही जिस-जिस स्थान का प्रमाण सभवते सख्यात के भेदनि करि गुणै आदि स्थान का प्रमाण मात्र होइ, सो-सो स्थान सख्यात गुणहानिरूप जानना। तहा जो स्थान अडतालीस हजार प्रमाण भया, सो स्थान संख्यात गुणहानि का अतरूप जानना। जातै उत्कृष्ट सख्यात पाच, सो आदि स्थान का प्रमाण कू पचगुणा घाटि कीए इतना प्रमाण आवै है। बहुरि सैतालीस हजार नव सै निन्याणवै तै लगाइ चालीस हजार एक पर्यंत प्रमाणरूप जे स्थान है, ते अवक्तव्य गुणहानिरूप जानने। जातै उत्कृष्ट संख्यात वा जघन्य असख्यात गुणा घाटि आदि स्थान कौ कीए भी जो प्रमाण होइ, तातै इनिका प्रमाण हीन अधिक है। तातै इनिकौ सख्यात गुणहानिरूप वा असख्यात गुणहानिरूप न कहे जाइ। बहुरि हानिरूप होइ जो स्थान चालीस हजार प्रमाण भया, सो स्थान असख्यात गुणहानि का आदिरूप है, जातै जघन्य असख्यात छह, सो आदि स्थान कौ छहगुणा घाटि कीए इतना प्रमाण आवै है। ऐसै ही जिस-जिस स्थान का प्रमाण सभवते असख्यात के भेदनि करि गुणै आदि स्थान मात्र होइ, सो-सो स्थान असख्यात गुणहानिरूप जानना। तहा जो स्थान सोलह हजार प्रमाण रूप होइ, सो स्थान असख्यात गुणहानि का अतरूप है। जातै उत्कृष्ट असख्यात पद्रह, सो आदि स्थान कौ पद्रहगुणा घाटि कीए इतना प्रमाण हो है। बहुरि एक घाटि सोलह हजार तै लगाइ एक अधिक पद्रह हजार पर्यन्त जे स्थान है, ते अवक्तव्य गुणहानिरूप जानने। जातै उत्कृष्ट असख्यात वा जघन्य अनतगुणा घाटि भी आदि

स्थान कौ कीए जो प्रमाण होइ, तिनि तै इनिका प्रमाण हीन अधिक है। बहुरि हानिरूप होइ जो स्थान पद्रह हजार प्रमाणरूप भया, तहा अनत गुणहानि का आदि जानना। जातै जघन्य अनत सोलह, सो आदि स्थान कौ सोलह गुणा घाटि कीए इतना प्रमाण आवै है। बहुरि असै ही जिस-जिस स्थान का प्रमाण संभवतै अनत का भेद करि गुणै आदि स्थान मात्र होइ, सो-सो स्थान अनंत गुणहानिरूप जानना। तहा जो स्थान चौबीस सै प्रमाण रूप भया, सो स्थान अनंत गुणहानि का अंतरूप है। जातै यद्यपि अनत का प्रमाण बहुत है, तथापि इहा आदि स्थान तैं अत स्थान जितने गुणा घाटि होइ, तितने प्रमाण ही अनत का अत विषै ग्रहण करना, सो अकसदृष्टि विषै जो प्रमाण अनत का भेद ग्रहण कीया, सो आदि स्थान कौ सौ गुणा घाटि कीए इतना ही प्रमाण आवै है। या प्रकार जैसै अकसदृष्टि करि कथन कीया, तैसै ही यथार्थ कथन अवधारण करना। इतना विशेष – तहा जघन्य सख्यात का प्रमाण दोय है। उत्कृष्ट सख्यात का एक घाटि जघन्य परीतासख्यात मात्र है। जघन्य असख्यात का जघन्य परीतासख्यात प्रमाण है। उत्कृष्ट असख्यात का उत्कृष्ट असख्यातासख्यात मात्र है। जघन्य अनत का जघन्यपरीतानत प्रमाण है। उत्कृष्ट अनत का केवलज्ञानमात्र है, तथापि इहा भाग वृद्धि वा हानि विषै तौ आदि स्थान प्रमाण अर गुण वृद्धि वा हानि विषै आदि स्थान तै अत स्थान जितने गुणा बधता वा घटता होइ, तीहि प्रमाण अनत का ही अत विषै ग्रहण करना। बहुरि जाका निरूपण कीजिए, ताकौं विवक्षित कहिए, ताका आदि भेद विषै जितना प्रमाण होइ, सो आदि स्थान का प्रमाण जानना। ताके आगै अगिले स्थान वृद्धिरूप वा हानिरूप होइ, तिनिका प्रमाण यथासम्भव जानना। इत्यादिक विशेष होइ, सो विशेष जानना अर अन्य विधान अकसदृष्टि करि जानना। बहुरि जहा आदि स्थान का प्रमाण असख्यातरूप ही होइ, तहा अनत भाग की वृद्धि वा हानि न सभवै, जहा आदि स्थान का प्रमाण सख्यातरूप ही होइ, तहा अनत भाग अर असख्यात भाग की वृद्धि वा हानि न सभवै है। बहुरि जहाँ आदि स्थान तै अत स्थान का प्रमाण असख्यात गुणा ही अधिक वा हीन होइ, तहा अनत गुण वृद्धि वा हानि न सभवै है। जहा आदि स्थान तै अत स्थान का प्रमाण सख्यात गुणा ही अधिक वा हीन होइ, तहा अनत वा असख्यात गुणी वृद्धि वा गुणहानि न सभवै है, तातै कही पच स्थान पतित, कही चतुस्थान पतित, कही त्रीस्थान पतित, कही द्विस्थान पतित, कही एकस्थान पतित वृद्धि वा हानि यथासभव जाननी। असै

ही आदि स्थान की अपेक्षा लीए वृद्धि-हानि का स्वरूप कह्या । बहुरि कही एक स्थान का प्रमाण की अपेक्षा दूसरा स्थान विषै वृद्धि वा हानि कही, दूसरा स्थान का प्रमाण की अपेक्षा तीसरा स्थान विषै वृद्धि वा हानि कही, ऐसै स्थान-स्थान प्रति वृद्धि वा हानि का अनुक्रम हो है। तहा अनत भागादिरूप वृद्धि वा हानि होइ, सो यथासभव जाननी। बहुरि पर्यायसमास नामा श्रुतज्ञान के भेद वा कषाय स्थान इत्यादिकनि विषै सभवती षट्स्थान पतित वृद्धि वा हानि के अनुक्रम का विधान आगै ज्ञानमार्गणा अधिकार विषै लिखैगे, सो जानना । ऐसै वृद्धि-हानि का विधान अनुक्रम अनेक प्रकार है, सो यथासभव है । ऐसै प्रसग पाइ षट्गुणी आदि हानि-वृद्धि का वर्णन कीया ।

आगै जिस-जिस जीवसमास के अवगाहन कहे, तिस-तिसके सर्व अवगाहन के भेदनि के प्रमाण कौ ल्यावै है –

हेट्ठा जेसिं जहण्णं, उवरिं उक्कस्सयं हवे जत्थ ।
तत्थंतरगा सव्वे, तेसिं उग्गाहणविअप्पा ॥११२॥

अधस्तनं येषां, जघन्यमुपर्युत्कृष्टकं भवेद्यत्र ।
तत्रांतरगाः सर्वे, तेषामवगाहनविकल्पाः ॥११२॥

टीका – इहा मत्स्यरचना कौ मन विषै विचारि यहु कहिये है – जो जिन अवगाहना स्थाननि का प्रदेश प्रमाण थोरा होइ, ते अधस्तन स्थान है । बहुरि जिन अवगाहना स्थाननि का प्रदेश प्रमाण बहुत होइ, ते उपरितन स्थान है, ऐसा कहिये है । सो जिन जीवनि का जघन्य अवगाहना स्थान तौ नीचै तिष्ठै अर जहा उत्कृष्ट अवगाहना स्थान ऊपरि तिष्ठै, तिनि दोऊनि का अतराल विषै वर्तमान सर्व ही अवगाहना के स्थान तिन जीवनि के मध्य अवगाहना स्थान के भेदरूप है – ऐसा सिद्धात विषै प्रतिपादन कीया है ।

भावार्थ – पूर्वै अवगाहन के स्थान कहे, तिनि विषै जिसका जघन्य स्थान जहा कह्या होइ, तहातै लगाइ एक-एक प्रदेश की वृद्धि का अनुक्रम लीए जहा तिस ही का उत्कृष्ट स्थान कह्या होइ, तहा पर्यंत जेते भेद होइ, ते सर्वै ही भेद तिस जीव की अवगाहना के जानने । तहा सूक्ष्म निगोद लब्धि अपर्याप्त का पूर्वोक्त प्रमाणरूप जो जघन्य स्थान, सो तो आदि जानना । बहुरि इस ही का पूर्वोक्त प्रमाणरूप जो

उत्कृष्ट स्थान, सो अत जानना । तहा 'आदी अंते सुद्धे वड्ढिहिदे रूवसंजुदे ठाणे' इस करण सूत्र करि आदि का प्रमाण कौं अत का प्रमाण समच्छेद विषै अपवर्तनादि विधान करि घटाए जो अवशेष प्रमाण रहै, ताकौ स्थान-स्थान प्रति वृद्धिरूप जो एक प्रदेश, ताका भाग दीए भी तेता ही रहै, तामैं एक जोडे जो प्रमाण होइ, तितने सूक्ष्म निगोद लब्धि अपर्याप्तक जीवनि के सब अवगाहना के भेद है । इनिमैं आदि स्थान अर अत स्थान, इनि दोऊनि कौं घटाये अवशेष तिस ही जीव के मध्यम अवगाहना के स्थान हो हैं । बहुरि इस ही प्रकार सूक्ष्म लब्धि अपर्याप्तक वायुकायिक जीव आदि देकरि सज्ञी पचेद्री पर्याप्त पर्यंत जीवनि के अपने-अपने जघन्य अवगाहना स्थान तै लगाइ, अपने-अपने उत्कृष्ट अवगाहना स्थान पर्यंत सर्व अवगाहना के स्थान, अर तिनि विषै जघन्य-उत्कृष्ट दोय स्थान घटाये तिन ही के मध्य अवगाहना स्थान, ते सूत्र के अनुसारि ल्याईये ।

अब मत्स्यरचना के मध्य प्राप्त भए ऐसे सर्व अवगाहना स्थान, तिनिके स्थापना का अनुक्रम कहिये है । पूर्वै अवगाहना के स्थान चौसठि कहे थे, तिनि विषै ऊपरि की पक्ति विषै प्राप्त जे बियालीस गुणकाररूप स्थान, तिनिकौं गुणित क्रमस्थान कहिये । बहुरि नीचै की दोय पक्तिनि विषै प्राप्त जे बावीस अधिकरूप स्थान, तिनिकौ अधिक स्थान कहिये । तहा चौसठि स्थाननि विषै गुणित क्रमरूप वा अधिकरूप स्थान अपने-अपने जघन्य तै लगाइ अपने-अपने उत्कृष्ट पर्यंत जेते-जेते होइ, तिनि एक-एक स्थान की दोय-दोय बिदी बरोबरि लिखनी, जातै एक-एक स्थान के बीचि अवगाहना के भेद बहुत है । तिनिकी सदृष्टि के अर्थि दोय बिदी स्थापी, बहुरि तिनि जीवसमासनि विषै सभवते स्थाननि की नीचै-नीचै पक्ति करनी । ऐसै स्थापै माछलेकासा आकार हो है, सो कहिए है । (देखिए पृष्ठ २२९-२३०)

प्रथम सूक्ष्म निगोद लब्धि अपर्याप्त का जघन्य अवगाहन स्थान तै लगाइ ताही का उत्कृष्ट पर्यत सतरह स्थान हैं। तहा सोलह गुणित स्थान है। एक अधिकस्थान है । सो प्रथमादि एक-एक स्थान की दोय-दोय बिदी की सदृष्टि करने करि चौतीस बिदी बरोबरि ऊपरि पक्ति विषै लिखनी । इहा सूक्ष्म निगोद लब्धि अपर्याप्त का जघन्य स्थान पहला है, उत्कृष्ट अठारहवा है, तथापि गुणाकारपना वा अधिकपनारूप अतराल सतरह ही है, तातै सतरह ही स्थान ग्रहे हैं। ऐसै आगै भी जानना । बहुरि तैसै ही तिस पक्ति के नीचै दूसरी पक्ति विषै सूक्ष्म लब्धि अपर्याप्तक वायुकायिक जीव का जघन्य अवगाहना स्थान तै लगाइ ताके उत्कृष्ट

अवगाहना स्थान पर्यंत उगणीस स्थान है, तिनकी अड़तीस बिदी लिखना। सो इहा दूसरा स्थान तै लगाइ स्थान है, तातै ऊपरि की पक्ति विषै दोय बिंदी प्रथम स्थान की लिखी थी, तिनकी नीचा कौ छोडि द्वितीय स्थान की दोय बिदी तै लगाइ आगै बरोबरि अडतीस बिदी लिखनी। बहुरि तैसै ही तिस पक्ति के नीचै तीसरी पक्ति विषै सूक्ष्म लब्धि अपर्याप्तक तेजस्कायिक का जघन्य अवगाहन तै उत्कृष्ट अवगाहन पर्यंत इकईस स्थान है, तिनकी बियालीस बिदी लिखनी। सो इहा तीजा स्थान तै लगाइ स्थान है, तातै ऊपरि की पक्ति विषै दूसरा स्थान की दोइ बिदी लिखी थी, तिनके नीचा कौ भी छोडि तीसरी स्थानक की दोइ बिदी तै लगाइ बियालीस बिदी लिखनी। बहुरि तैसै ही तिस पक्ति के नीचै चौथी पक्ति विषै सूक्ष्म लब्धि अपर्याप्तक अप्कायिक का जघन्य अवगाहन स्थान तै लगाइ, ताका उत्कृष्ट अवगाहन स्थान पर्यंत तेवीस स्थाननि की छियालीस बिदी लिखनी। सो इहा चौथा स्थान तै लगाइ स्थान है, तातै तीसरा स्थानक की दोय बिदी का नीचा कौ छोडि चौथा स्थानक की दोय बिदी तै लगाइ छियालीस बिदो लिखनी। बहुरि तैसै ही तिस पक्ति के नीचै पाचमी पक्ति विषै सूक्ष्म लब्धि अपर्याप्तक पृथ्वीकायिक का जघन्य अवगाहन तै लगाइ ताका उत्कृष्ट अवगाहन पर्यंत पचीस स्थान है, तिनकी पचास बिदी लिखनी। सो इहा पाचवा स्थान तै लगाइ स्थान है, तातै चौथा स्थान की दोय बिदी का भी नीचा कौ छोडि पाचवा स्थानक की दोय बिदी तै लगाइ पचास बिदी लिखनी। बहुरि तैसै ही तिस पक्ति के नीचै-नीचै छठी, सातमी, आठवी, नवमी, दशमी, ग्यारहमी बारहवी, तेरहवी, चौदहवी, पद्रहवी, सोलहवी पक्ति विषै बादर लब्धि अपर्याप्तक वायु, तेज, अप्, पृथ्वी, निगोद, प्रतिष्ठित प्रत्येक, अप्रतिष्ठित प्रत्येक, द्वीद्रिय, त्रीद्रिय, चतुरिंद्रिय, पचेद्रिय इनि ग्यारहनि का अपना-अपना जघन्य स्थान तै लगाइ उत्कृष्ट स्थान पर्यंत अनुक्रम तै सत्ताईस, गुणतीस, इकतीस, तेतीस, पैतीस, सैतीस, छियालिस, चवालीस, इकतालीस, इकतालीस, तियालीस स्थान है। तिनिकी चौवन, अठावन, बासठि, छयासठि, सत्तरि, चौहत्तरि, बाणवै, अठासी, बियासी, छियासी बिदी लिखनी। सो इहा छठा, सातवा आदि स्थान तै लगाइ स्थान है, तातै ऊपरि पक्ति का आदि स्थान की दोय-दोय बिदी का नीचा कौ छोडि छठा, सातवा आदि स्थान की दोय बिदी तै लगाइ ए बिदी तिनि पक्तिनि विषै क्रम तै लिखनी।

बहुरि तिस पचेद्रिय लब्धि अपर्याप्तक की पक्ति के नीचे सतरहवी पक्ति विषै सूक्ष्मनिगोद पर्याप्त का जघन्य अवगाहना स्थान तै लगाइ, उत्कृष्ट अवगाहना स्थान

अवगाहना स्थान पर्यंत उगणीस स्थान है, तिनकी अडतीस बिंदी लिखना। सो इहां दूसरा स्थान तै लगाइ स्थान है, तातै ऊपरि की पंक्ति विषै दोय बिंदी प्रथम स्थान की लिखी थी, तिनकी नीचा कौं छोडि द्वितीय स्थान की दोय बिंदी तै लगाइ आगै बरोबरि अडतीस बिंदी लिखनी। बहुरि तैसै ही तिस पंक्ति के नीचै तीसरी पंक्ति विषै सूक्ष्म लब्धि अपर्याप्तक तेजस्कायिक का जघन्य अवगाहन तै उत्कृष्ट अवगाहन पर्यंत इकईस स्थान है, तिनकी बियालीस बिंदी लिखनी। सो इहां तीजा स्थान तै लगाइ स्थान है, तातै ऊपरि की पंक्ति विषै दूसरा स्थान की दोइ बिंदी लिखी थी, तिनके नीचा कौं भी छोडि तीसरी स्थानक की दोइ बिंदी तै लगाइ बियालीस बिंदी लिखनी। बहुरि तैसै ही तिस पंक्ति के नीचै चौथी पंक्ति विषै सूक्ष्म लब्धि अपर्याप्तक अप्कायिक का जघन्य अवगाहन स्थान तै लगाइ, ताका उत्कृष्ट अवगाहन स्थान पर्यंत तेवीस स्थाननि की छियालीस बिंदी लिखनी। सो इहां चौथा स्थान तै लगाइ स्थान है, तातै तीसरा स्थानक की दोय बिंदी का नीचा कौं छोडि चौथा स्थानक की दोय बिंदी तै लगाइ छियालीस बिंदी लिखनी। बहुरि तैसै ही तिस पंक्ति के नीचै पाचमी पंक्ति विषै सूक्ष्म लब्धि अपर्याप्तक पृथ्वीकायिक का जघन्य अवगाहन तै लगाइ ताका उत्कृष्ट अवगाहन पर्यंत पचीस स्थान है, तिनकी पचास बिंदी लिखनी। सो इहां पाचवा स्थान तै लगाइ स्थान है, तातै चौथा स्थान की दोय बिंदी का भी नीचा कौं छोडि पाचवा स्थानक की दोय बिंदी तै लगाइ पचास बिंदी लिखनी। बहुरि तैसै ही तिस पंक्ति के नीचै-नीचै छठी, सातमी, आठवी, नवमी, दशमी, ग्यारहमी बारहवी, तेरहवी, चौदहवी, पंद्रहवी, सोलहवी पंक्ति विषै बादर लब्धि अपर्याप्तक वायु, तेज, अप्, पृथ्वी, निगोद, प्रतिष्ठित प्रत्येक, अप्रतिष्ठित प्रत्येक, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिंद्रिय, पंचेंद्रिय इनि ग्यारहनि का अपना-अपना जघन्य स्थान तै लगाइ उत्कृष्ट स्थान पर्यंत अनुक्रम तै सत्ताईस, गुणतीस, इकतीस, तेतीस, पैंतीस, सैंतीस, छियालिस, चवालीस, इकतालीस, इकतालीस, तियालीस स्थान है। तिनिकी चावन, अठावन, बासठि, छयासठि, सत्तरि, चौहत्तरि, बाणवै, अठासी, बियासी, छियासी बिंदी लिखनी। सो इहां छठा, सातवा आदि स्थान तै लगाइ स्थान है, तातै ऊपरि पंक्ति का आदि स्थान की दोय-दोय बिंदी का नीचा कौं छोडि छठा, सातवा आदि स्थान की दोय बिंदी तै लगाइ ए बिंदी तिनि पंक्तिनि विषै क्रम तै लिखनी।

बहुरि तिस पंचेंद्रिय लब्धि अपर्याप्तक की पंक्ति के नीचै सतरहवी पंक्ति विषै सूक्ष्मनिगोद पर्याप्त का जघन्य अवगाहना स्थान तै लगाइ, उत्कृष्ट अवगाहना स्थान

अवगाहना स्थान पर्यंत उगणीस स्थान है, तिनकी अडतीस बिंदी लिखना। सो इहा दूसरा स्थान तै लगाइ स्थान है, तातै ऊपरि की पंक्ति विषै दोय बिंदी प्रथम स्थान की लिखी थी, तिनकी नीचा कौ छोडि द्वितीय स्थान की दोय बिंदी तै लगाइ आगै बरोबरि अडतीस बिंदी लिखनी। बहुरि तैसै ही तिस पंक्ति के नीचै तीसरी पंक्ति विषै सूक्ष्म लब्धि अपर्याप्तक तेजस्कायिक का जघन्य अवगाहन तै उत्कृष्ट अवगाहन पर्यंत इकईस स्थान है, तिनकी बियालीस बिंदी लिखनी। सो इहा तीजा स्थान तै लगाइ स्थान हैं, तातै ऊपरि की पंक्ति विषै दूसरा स्थान की दोइ बिंदी लिखी थी, तिनके नीचा कौ भी छौडि तीसरी स्थानक की दोइ बिंदी तै लगाइ बियालीस बिंदी लिखनी। बहुरि तैसै ही तिस पंक्ति के नीचै चौथी पंक्ति विषै सूक्ष्म लब्धि अपर्याप्तक अप्कायिक का जघन्य अवगाहन स्थान तै लगाइ, ताका उत्कृष्ट अवगाहन स्थान पर्यंत तेवीस स्थाननि की छियालीस बिंदी लिखनी। सो इहा चौथा स्थान तै लगाइ स्थान है, तातै तीसरा स्थानक की दोय बिंदी का नीचा कौ छोडि चौथा स्थानक की दोय बिंदी तै लगाइ छियालीस बिंदी लिखनी। बहुरि तैसै ही तिस पंक्ति के नीचै पाचमी पंक्ति विषै सूक्ष्म लब्धि अपर्याप्तक पृथ्वीकायिक का जघन्य अवगाहन तै लगाइ ताका उत्कृष्ट अवगाहन पर्यंत पचीस स्थान है, तिनकी पचास बिंदी लिखनी। सो इहा पाचवा स्थान तै लगाइ स्थान है, तातै चौथा स्थान की दोय बिंदी का भी नीचा कौ छोडि पाचवा स्थानक की दोय बिंदी तै लगाइ पचास बिंदी लिखनी। बहुरि तैसै ही तिस पंक्ति के नीचै-नीचै छठी, सातमी, आठवी, नवमी, दशमी, ग्यारहमी बारहवी, तेरहवी, चौदहवी, पंद्रहवी, सोलहवी पंक्ति विषै बादर लब्धि अपर्याप्तक वायु, तेज, अप्, पृथ्वी, निगोद, प्रतिष्ठित प्रत्येक, अप्रतिष्ठित प्रत्येक, द्वीद्रिय, त्रीद्रिय, चतुरिंद्रिय, पचेंद्रिय इनि ग्यारहनि का अपना-अपना जघन्य स्थान तै लगाइ उत्कृष्ट स्थान पर्यंत अनुक्रम तै सत्ताईस, गुणतीस, इकतीस, तेतीस, पैंतीस, सैंतीस, छियालिस, चवालीस, इकतालीस, इकतालीस, तियालीस स्थान है। तिनिकी चौवन, अठावन, बासठि, छचासठि, सत्तरि, चौहत्तरि, बाणवै, अठासी, बियासी, छियासी बिंदी लिखनी। सो इहा छठा, सातवा आदि स्थान तै लगाइ स्थान है, तातै ऊपरि पंक्ति का आदि स्थान की दोय-दोय बिंदी का नीचा कौ छोडि छठा, सातवा आदि स्थान की दोय बिंदी तै लगाइ ए बिंदी तिनि पंक्तिनि विषै क्रम तै लिखनी।

बहुरि तिस पचेंद्रिय लब्धि अपर्याप्तक की पंक्ति के नीचे सतरहवी पंक्ति विषै सूक्ष्मनिगोद पर्याप्त का जघन्य अवगाहना स्थान तै लगाइ, उत्कृष्ट अवगाहना स्थान

पर्यन्त दोय स्थान है, तिनिकी च्यारि बिंदी लिखनी । बहुरि इस ही प्रकार आगै इस एक ही पंक्ति विषै सूक्ष्म पर्याप्त वायु, तेज, अप्, पृथ्वी, बहुरि बादर पर्याप्त वायु, तेज, पृथ्वी, अप्, निगोद, प्रतिष्ठित प्रत्येक इनिका अपना-अपना जघन्य अवगाहना स्थान कौं आदि देकरि अपना-अपना उत्कृष्ट अवगाहना स्थान पर्यन्त दोय-दोय स्थाननि की च्यारि-च्यारि बिंदी लिखनी । बहुरि असैं ही प्रतिष्ठित प्रत्येक का उत्कृष्ट अवगाहन स्थान तैं आगै तिस ही पंक्ति विषै अप्रतिष्ठित प्रत्येक पर्याप्त का जघन्य अवगाहना स्थान तैं लगाइ उत्कृष्ट अवगाहना स्थान पर्यन्त तेरह स्थान हैं । तिनिकी छब्बीस बिंदी लिखनी । असैं इस एक ही पंक्ति विषै बिंदी लिखनी कही । तहां पर्याप्त सूक्ष्म निगोद का आदि स्थान सतरहवां है, तातैं इनिके दोय स्थाननि की सोलहवां स्थान की दोय बिंदीनि का नीचा कौं छोडि सतरहवां अठारहवां स्थान की च्यारि बिंदी लिखनी । बहुरि सूक्ष्म पर्याप्त का आदि स्थान बीसवां है । तातैं तिस ही पंक्ति विषै उगणीसवां स्थान की दोय बिंदी का नीचा कौं छोडि बीसवां, इकईसवां दोय स्थाननि की च्यारि बिंदी लिखनी । असैं ही बीचि-बीचि एक स्थान की दोय-दोय बिंदी का नीचा कौं छोडि-छोडि सूक्ष्म पर्याप्त तेज आदिक के दोय-दोय स्थाननि की च्यारि-च्यारि बिंदी लिखनी । बहुरि तिस ही पंक्ति विषै अप्रतिष्ठित प्रत्येक के पचासवां तैं लगाइ स्थान है, तातैं पचासवां स्थानक की बिंदीनि तैं लगाइ तेरह स्थाननि की छब्बीस बिंदी लिखनी, असैं एक-एक पंक्ति विषै कहे । बहुरि तिस पंक्ति के नीचैं-नीचैं अठारमी, उगणीसमी, बीसमी, इकवीसमी पंक्ति विषै पर्याप्त द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिंद्रिय, पंचेंद्रिय जीवनि का अपना-अपना जघन्य अवगाहन स्थान तैं लगाइ उत्कृष्ट स्थान पर्यन्त ग्यारह, आठ, आठ, दश स्थान है । तिनिकी क्रम तैं बाईस, सोलह, सोलह, बीस बिंदी लिखनि । तहां पर्याप्त बेंद्रिय के इक्यावन तैं लगाइ स्थान है, तातैं सतरहवीं पंक्ति विषै अप्रतिष्ठित प्रत्येक की छब्बीस बिंदी लिखी थी, तिनिके नीचे आदि की पचासवां स्थान की दोय बिंदी का नीचा कौं छोडि आगै बाईस बिंदी लिखनी । बहुरि असैं ही नीचे-नीचे आदि की दोय-दोय बिंदी का नीचा कौं छोडि बावनवां, तरेपनवां, चौवनवां स्थानक की बिंदी तैं लगाइ क्रम तैं सोलह, सोलह, बीस बिंदी लिखनी । या प्रकार मत्स्यरचना विषै सूक्ष्म निगोद लब्धि अपर्याप्त का जघन्य अवगाहना स्थान कौं आदि देकरि संज्ञी पंचेंद्री पर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहन स्थान पर्यन्त सर्व अवगाहन स्थाननि की प्रत्येक दोय-दोय शून्य की विवक्षा करि तिन स्थानकनि की गणती के आश्रय असा हीनाधिक तैं

रहित बिदीनि के स्थापन का अनुक्रम, सो अनादिनिधन ऋषि प्रणीत आगम विषै कह्या है । ऐसै जीवसमासनि की अवगाहना कहि ।

अब तिनके कुल की सख्या का जो विशेष, ताकौ गाथा च्यारि करि कहै है –

बावीस सत्त तिण्णि य, सत्त य कुलकोडिसयसहस्साइं ।
णेया पुढविदगागणि, वाउक्कायाण परिसंखा ॥११३॥

द्वाविंशतिः सप्त त्रीणि, च सप्त च कुलकोटिशतसहस्राणि ।
ज्ञेया पृथिवीदकाग्निवायुकायिकानां परिसख्या ॥११३॥

टीका – पृथ्वी कायिकनि के कुल बाईस लाख कोडि है । अप् कायिकनि के कुल सात लाख कोडि है । तेज कायिकनि के कुल तीन लाख कोडि है । वायु कायिकनि के कुल सात लाख कोडि है, असै जानना ।

कोडिसयसहस्साइं, सत्तट्ठणव य अट्ठवीसाइं ।
बेइंदिय-तेइंदिय-चउरिंदियहरिदकायाणं ॥११४॥

कोटिशतसहस्राणि, सप्ताष्ट नव च अष्टाविंशतिः ।
द्वींद्रियत्रींद्रियचतुरिंद्रियहरितकायानाम् ॥११४॥

टीका – बेंद्रिय के कुल सात लाख कोडि है । त्रीद्रियनि के कुल आठ लाख कोडि है । चतुरिंद्रियनि के कुल नव लाख कोडि है । वनस्पति कायिकनि के कुल अठाईस लाख कोडि है ।

अद्धत्तेरस बारस, दसयं कुलकोडिसदसहस्साइं ।
जलचर-पक्खि-चउप्पय-उरपरिसप्पेसु णव होंति ॥११५॥

अर्धत्रयोदश द्वादश, दशकं कुलकोटिशतसहस्राणि ।
जलचरपक्षिचतुष्पदोरुपरिसर्पेषु नव भवंति ॥११५॥

टीका – पचेंद्रिय विषै जलचरनि के कुल साडा बारा लाख कोडि है । पक्षीनि के कुल बारा लाख कोडि है । चौपदनि के कुल दश लाख कोडि है । उरसर्प जे सरीसृप आदि, तिनिके कुल नव लाख कोडि है ।

छप्पंचाधियवीसं, बारसकुलकोडिसदसहस्साइं ।
सुर-णेरइय-णराणं, जहाकमं होंति णेयाणि ।।११६।।

षट्पचाधिकविंशतिः, द्वादश कुलकोटिशतसहस्राणि ।
सुरनैरयिकनराणां, यथाक्रम भवति ज्ञेयानि ।।११६।।

टीका – देवनि के कुल छब्बीस लाख कोडि हैं । नारकीनि के कुल पचीस लाख कोडि है । मनुष्यनि के कुल बारह लाख कोडि हैं । ए सर्व कुल यथाक्रम करि कहे, ते भव्य जीवनि करि जानने योग्य है ।

आगै सर्व जीवसमासनि के कुलनि के जोड कौ निर्देश करै है –

एया य कोडिकोडी, सत्ताणउदी य सदसहस्साइं ।
पण्णं कोडिसहस्सा, सव्वंगीणं कुलाणं य ।।११७।।

एका च कोटिकोटी, सप्तनवतिश्च शतसहस्राणि ।
पचाशत्कोटिसहस्राणि सर्वांगिना कुलाना च ।।११७।।

टीका – ऐसे कहे जे पृथ्वीकायिकादि मनुष्य पर्यन्त सर्व प्राणी, तिनके कुलनि का जोड एक कोडा-कोडि अर सत्याणवे लाख पचास हजार कोडि प्रमाण (१९७५००००००००००००) है ।

इहा कोऊ कहै कि कुल अर जाति विषै भेद कहा ?

ताका समाधन – जाति है सो तो योनि है, तहा उपजने के स्थानरूप पुद्गल स्कध के भेदनि का ग्रहण करना । बहुरि कुल है सो जिनि पुद्गलनि करि शरीर निपजै, तिनके भेदरूप हैं । जैसे शरीररूप पुद्गल आकारादि भेद करि पचेद्रिय तिर्यच विषै हाथी, घोडा इत्यादि भेद है, ऐसे यथासभव जानने ।

इति आचार्य श्री नेमिचन्द्र सिद्धान्त चक्रवर्ती विरचित गोम्मटसार द्वितीय नाम पचसग्रह ग्रन्थ की जीवतत्त्वप्रदीपिका नाम सस्कृत टीका के अनुसारि **सम्यग्ज्ञान चद्रिका** नामा इस भाषाटीका विषै जीवकाड विषै प्ररूपित जे बीस प्ररूपणा, तिनि विषै **जीवसमास प्ररूपणा** है नाम जाका, ऐसा दूसरा अधिकार सपूर्ण भया ।।२।।

———

तीसरा अधिकार : पर्याप्ति प्ररूपणा

संभव स्वामि नमौ सदा, घातिकर्म विनसाय ।
पाय चतुष्टय जो भयो, तीजो श्रीजिनराय ।।

अब इहा जहा-तहा अलौकिक गणित का प्रयोजन पाइए, तातै अलौकिक गणित कहिए है सदृष्टि इनिकी आगै सदृष्टि अधिकार विषै जानना ।

मान दोय प्रकार है, एक लौकिक एक अलौकिक । तहा लौकिक मान छह प्रकार – मान, उन्मान, अवमान, गणितमान, प्रतिमान, तत्प्रतिमान एवं छह प्रकार जानना । तहा पाइ माणी इत्यादिक मान जानना । ताखडी का तौल उन्मान जानना । चल इत्यादिक का प्रमाण (परिमाण) अवमान जानना । एक-दोय कौ आदि देकरि गणितमान जानना । चरिम तोला, मासा, इत्यादिक प्रतिमान जानना । घोडा का मोल इत्यादि तत्प्रतिमान जानना ।

बहुरि अलौकिक मान के च्यारि भेद है – द्रव्य मान, क्षेत्र मान, काल मान, भाव मान । तहा द्रव्य मान विषै जघन्य एक परमाणु अर उत्कृष्ट सब पदार्थनि का परिमाण । क्षेत्र मान विषै जघन्य एक प्रदेश अर उत्कृष्ट सब आकाश । काल मान विषै जघन्य एक समय अर उत्कृष्ट तीन काल का समय समूह । भाव मान विषै जघन्य सूक्ष्म निगोदिया लब्धि अपर्याप्तक का लब्धि अक्षर ज्ञान अर उत्कृष्ट केवलज्ञान ।

बहुरि द्रव्य मान के दोय भेद – एक सख्या मान एक उपमा मान । तहा सख्या मान के तीन भेद – सख्यात, असख्यात, अनंत । तहा सख्यात जघन्य, मध्यम, उत्कृष्ट तै तीन प्रकार है । बहुरि असख्यात है, सो परीतासख्यात, युक्तासख्यात, असख्याता-सख्यात इनि तीनों के जघन्य, मध्यम, उत्कृष्ट भेद करि नव प्रकार है । बहुरि अनत है, सो परीतानत, युक्तानत, अनतानत इनि तीनो के जघन्य, मध्यम, उत्कृष्ट भेद करि नव प्रकार है – ऐसै सख्यामान के इकईस भेद भए । तिनि विषै जघन्य सख्यात दोय सख्यामात्र है । इहां एक का गुणाकार भागहार कीए किछू वृद्धि-हानि होइ नाही, तातैं दोय के ही भेद का ग्राहकपना है, एक के नाही है । बहुरि तीनि आदिकनि के मध्यम सख्यात का भेदपना है, तातै दोय ही को जघन्य संख्यात

कहिये । बहुरि तीनि कौ आदि देकरि एक घाटि उत्कृष्ट सख्यात पर्यन्त मध्यम सख्यात जानना ।

सो जघन्य (परीतासख्यात) कितना है ?

ताके जानने निमित्त उपाय कहै है । अनवस्था, शलाका, प्रतिशलाका, महाशलाका ए नाम धारक च्यारि कु ड करने । तिनिका प्रत्येक प्रमाण जबूद्वीप समान

लाख योजन चौडा अर एक हजार योजन ऊढा जानना । तिनि विषै अनवस्था कु ड कौं सिघाउ गोल सरसौ करि भरना । केते सरसौनि करि भरै, सो कहिए है – एक, नव, सात, नव, एक, दोय, बिंदी, नव, दोय, नव, नव, नव, छह, आठ इतने तो अक अनुक्रम तै लिखने, तिनके आगै इकतीस बिदी और लिखनी, इतने प्रमाण सरिसौं तौ उस कु ड के माही मावै । (१९७९१२०९२९९९६८०००००००००००००००० ०००००००००००००००) बहुरि उस कुड के ऊपरि आकाश विषै राशि करिए, सो सिघाउ भरना कहिए, सो ऊपरि कितने सरसौ का ढेर होइ, सो कहिए है । एक सात, नव, नव, दोय बिदी, बिदी, आठ, च्यारि, पाच, च्यारि, पाच, एक, छह इतने तौ अनुक्रम तै लिखने अर इनिके आगै सोलह बार छत्तीस-छत्तीस लिखने । (१७९९२००८४५४५१६ ३६ ३६ ३६ ३६ ३६ ३६ ३६ ३६ ३६ ३६ ३६ ३६ ३६ ३६ ३६ ३६) इतनी सरसौं, बहुरि च्यारि सरसौ का ग्यारहवा भाग ($\frac{४}{११}$) इतनी सरसौं का ऊपरि ढेर होइ । इनिका फलावना गोल घनरूप क्षेत्रफल के करण सूत्रनि करि वा अन्य राशि के करण सूत्रनि करि होइ है, सो त्रिलोकसारादिक सौ जानना । इनि दोऊ राशि कौ जोड दीजिए, तब एक हजार नव सै सत्ताणवै कोडाकोडि कोडाकोडि कोडाकोडि ग्यारा लाख गुणतीस हजार तीन सै चौरासी कोडाकोडि कोडाकोडिकोडि इक्यावन लाख इकतीस हजार छ सै छत्तीस कोडाकोडि कोडाकोडि छत्तीस लाख छत्तीस हजार तीन सै त्रेसठि कोडाकोडि कोडि तरेसठि लाख तरेसठि हजार छ सै छत्तीस कोडाकोडि छत्तीस लाख छत्तीस हजार तीन सै तरेसठि कोडि

तरेसठि लाख तरेसठि हजार छ सै छत्तीस सरसौ अर च्यारि सरसौ का ग्यारहवा भाग (१९१७, ११२९३८४, ५१३१६३६, ३६३६३६३, ६३६३६३६, ३६ ३६ ३६३ ६३ ६३ ६३६ । $\frac{४}{११}$) इतनी सरसौ करि अनवस्था कुड सिघाऊ भरचा। सो भरि करि अन्य एक सरसौ कौ शलाका कुड में नाखि, तिस अनवस्था कुड की सर्व सरसौनि कौ मनुष्य है, सो बुद्धि करि अथवा देव है, सो हस्तादि करि ग्रहण करि जबूंद्वीपादिक द्वीप-समुद्रनि विषै अनुक्रम तै एक द्वीप विषै एक समुद्र विषै गेरता गया, वे सरिस्यो जहा द्वीप विषै वा समुद्र विषै पूर्ण होइ, तहा तिस द्वीप वा समुद्र की सूची प्रमाण चौडा अर औडा पूर्वोक्त हजार ही योजन अैसा दूसरा अनवस्था कुड तहा ही करना।

सूची कहा कहिए ?

विवक्षित के सन्मुख अत के दोऊ तटनि के बीचि जेता चौडाई का परिणाम होइ, सोई सूची जानना। जैसै लवण समुद्र की सूची पाच लाख जोजन है। जिस द्वीप की वा समुद्र की सूची कहिए, तिस तै पहिले द्वीप वा समुद्र ते वाकी सूची के मध्य आय गये। अैसा वहा कीया हुवा अनवस्था कुड कौ सरसोनि करि सिघाऊ भरना। भरि करि अन्य एक सरिसौ उस ही शलाका कुड विषै गेरणी। अर इस दूसरे अनवस्था कुड की सरिसोनि कौ लेइ, तहा तै आगै एक द्वीप विषै, एक समुद्र विषै गेरते जाइए, तेऊ जहा द्वीप वा समुद्र विषै पूर्ण होइ तिस सहित पूर्व के द्वीप समुद्र तिनि का व्यासरूप जो सूची, तीहि प्रमाण चौडा अर औडा पूर्वोक्त हजार जोजन अैसा तीसरा अनवस्था कुड सिघाऊ सरिसोनि करि भरना। भरि करि अन्य एक सरिसौ उस ही शलाका कुड मे गेरि, इस तीसरे अनवस्था कुड की सरिसौ लेइ, तहा तै आगै एक द्वीप विषै एक समुद्र विषै गेरणी। वह जहा पूर्ण होइ, तहा तिस की सूची प्रमाण चौथा अनवस्था कुड करना, ताकौ सरिसो करि सिघाऊ भरना। भरि करि अन्य एक सरिसौ शलाका कुड विषै गेरिए, इनि सरसो को तहा तै आगै एक द्वीप विषै एक समुद्र विषै गेरणी, अैसै ही व्यास करि बधता-बधता अनवस्था कुड करि एक-एक सरिसौ शलाका कुड विषै गेरतै जहा शलाका कुड भरि जाइ, तब एक सरिसौ प्रतिशलाका कुड विषै गेरिए। अैसै एक नव आदि अक प्रमाण जितनी सरिसौ पहिला अनवस्था कुड विषै माई थी, तितने प्रमाण अनवस्था कुड भए शलाका कुड एक बार सिघाऊ भरचा गया। बहुरि इस शलाका कुड कौ रीता

कीया अर पिछला अनवस्था कुड की सरिसी तहा तै आगै एक द्वीप विषै एक समुद्र विषै गेरता जहा पूर्ण भई, तहा फेरि उसकी सूची प्रमाण चौडा अनवस्था कुड करि एक सरिसौ जो रीता कीया था शलाका कुड, तिस विषै गेरी । ऐसे ही पूर्ववत् व्यास करि वधता-वधता तितना ही अनवस्था कुड कीजिए, तब दूसरी बार शलाका कुड पूर्ण होइ । तब प्रतिशलाका कुड विषै एक सरिसी और गेरणी । पीछै फेरी शलाका कुड रीता करि तैसे ही भरणा । जब भरे, तब एक सरिसौ प्रतिशलाका कुड विषै और गेरणी । ऐसे ही जब एक, नव आदिक प्रमाण कौं एक नवादिक अकनि तै गुणै जो परिणाम होइ, तितने अनवस्था कुड जब होइ, तब प्रतिशलाका कुड सपूर्ण भरै, तब ही एक सरिसौ महाशलाका कुड विषै गेरणी । वहुरि वे शलाका कुड वा प्रतिशलाका कुड दोऊ रीते करणे । वहुरि पूर्वोक्त रीति करि एक-एक अनवस्था कुड करि एक-एक सरिसौ शलाका कुड विषै गेरणी । जब शलाका कुड भरे, तब एक सरिसौ प्रतिशलाका कुड विषै गेरणी । ऐसे करते-करते प्रतिशलाका कुड फेरी सपूर्ण भरै, तब दूसरी सरिसौ महाशलाका कुड विषै फेरी गेरणी । वहुरि वैसे ही शलाका प्रतिशलाका कुड रीता करि उस ही रीति सौ प्रतिशलाका कुड भरे, तब सपूर्ण तीसरी सरिसौं महाशलाका कुड विषै गेरणी । ऐसे करते-करते एक नव नै आदि देकरि जे अकनि का घन कीये जो परिणाम होइ, तितने अनवस्था कुड जब होइ, तब महाशलाका कुड भी सपूर्ण भरे, तब प्रतिशलाका का शलाका, अनवस्था कुड भी भरै । इहा जे एक नव नै आदि देकरि अकनि का घन प्रमाण अनवस्था कुड कहे, ते सर्व ऊडे तौ हजार योजन ही जानने । बहुरि इनिका व्यास, अपना द्वीप वा समुद्र की सूची प्रमाण वधता-वधता जानना । सो लक्ष योजन का जेथवा द्वीप वा समुद्र होइ, तितनी बार दूणा कीये तिस द्वीप वा समुद्र का व्यास आवै है । बहुरि व्यास कौ चौगुणा करि तामै तीन लाख योजन घटाये सूची का प्रमाण आवै है । तातै तहा प्रथम अनवस्था कुड का व्यास का प्रमाण लाख योजन है । बहुरि पहला कुड मे जितनी सरिसो माई थी, तितनी ही बार लक्ष योजन का दूणा-दूणा कीये जहा द्वीप वा समुद्र विषै वे सरिसौ पूर्ण भई थी, तिस द्वीप वा समुद्र के व्यास का परिमाण आवै है । बहुरि व्यास का परिमाण कौ चौगुणा करि तीहि मे तीन लाख योजन घटाइए, तब तिस ही द्वीप वा समुद्र का सूची परिमाण आवै । जो सूची परिमाण आवै, सो ही दूसरा कुड का व्यास परिमाण जानना । बहुरि पहिला वा दूसरा कुड विषै जितनी सरिसौ माई, तितनी बार लक्ष योजन कौ दूणा-दूणा करि

जो परिमाण आवै, ताकौ चौगुणा करि तीन लाख योजन घटाइए, तब तीसरा अनवस्था कुड का व्यास परिमाण आवै है। बहुरि पहिला वा दूसरा वा तीसरा अनवस्था कुड विषै जेती सरिसो माई होइ, तेती बार लक्ष योजन कौ दूणा-दूणा करि जो परिमाण आवै, ताकौ चौगुणा करि तीन लाख योजन घटाए, चौथे अनवस्था कुड का व्यास परिमाण आवै, ऐसै बधता-बधता व्यास परिमाण अत का अनवस्था कुड पर्यन्त जानना। तहा जो अत का अनवस्था कुड भया, तीहि विषै जेती सरिसों का परिमाण होइ, तितना जघन्य परीतासख्यात का प्रमाण जानना। इहा शलाका कुड विषै एक सरिसो गेरै जो एक अनवस्था कुड होइ, तो शलाका कुड विषै एक, नव आदि अक प्रमाण सरिसो गेरै केते अनवस्था कुड होइ ? ऐसै त्रैराशिक करिये, तब प्रमाण राशि एक, फल राशि एक, इच्छा राशि एक नवादि अक प्रमाण। तहा फल राशि करि इच्छा कौ गुणि प्रमाण का भाग दीए लब्ध राशि एक नवादि अक प्रमाण हो है। बहुरि प्रतिशलाका कुड विषै एक सरिसौ गेरै एक नवादि अक प्रमाण अनवस्था कुड होइ, तो प्रतिशलाका कुड विषै एक नवादि अक प्रमाण सरिसो गेरै केते होइ ? ऐसै त्रैराशिक कीए प्रमाण १ फल १९=इच्छा १९== लब्धराशि एक नवादि अकनि का वर्ग प्रमाण हो है। बहुरि महाशलाका कुड विषै एक सरिसो गेरै, अनवस्था कुड एक नवादि (अकनि) का वर्ग प्रमाण होइ, तो महा-शलाका कुड विषै एक नवादि अक प्रमाण सरिसौ गेरै केते अनवस्था कुड होइ ? ऐसै त्रैराशिक कीए, प्रमाण १, फल १९= वर्ग इच्छा १९= लब्धराशि एक नवादि अकनि का घन प्रमाण हो है। सो इतना अनवस्था कुड होइ है, ऐसा अनवस्था कुडनि का प्रमाण जानना। वहुरि जघन्य परीतासख्यात के ऊपरि एक-एक बधता क्रम करि एक घाटि उत्कृष्ट परीतासख्यात पर्यन्त मध्य परीतासंख्यात के भेद जानने। वहुरि एक घाटि जघन्य युक्तासख्यात परिमाण उत्कृष्ट परीतासख्यात जानना।

अब जघन्य युक्तासख्यात का परिमाण कहिए है – जघन्य परीतासख्यात का विरलन कीजिए। विरलन कहा ? जेता वाका परिमाण होइ, तितना ही एक-एक करि जुदा-जुदा स्थापन कीजिये। बहुरि एक-एक की जायगा एक-एक परीतासख्यात माडिए, पीछै सबनि कौ परस्पर गुणिए, पहिला जघन्य परीतासंख्यात कौ दूसरा जघन्य परीतासख्यात करि गुणिए, जो परिमाण आवै, ताहि तीसरा जघन्य परीता-सख्यात करि गुणिये। बहुरि जो परिमाण आवै, तीनै चौथा करि गुणिए, ऐसे अत

ताई परस्पर गुणै जो परिमाण आवै, सो परिमाण जघन्य युक्तासख्यात का जानना। याही कौ अक सदृष्टि करि दिखाइए है –

जघन्य परीतासंख्यात का परिमाण च्यारि (४) याका विरलन कीया १, १
४ ४ ४ ४
१, १। बहुरि एक-एक के स्थानक, सोहि दीया १ १ १ १ परस्पर गुणन कीया, तब दोय सै छप्पन भया। असे ही जानना। सो इस ही जघन्य युक्तासख्यात का नाम आवली है, जाते एक आवली के समय जघन्य युक्तासख्यात परिमाण है। बहुरि याके ऊपरि एक-एक बधता एक घाटि उत्कृष्ट युक्तासख्यात पर्यन्त मध्यम युक्तासख्यात के भेद जानने। बहुरि एक घाटि जघन्य असख्यातासख्यात परिमाण उत्कृष्ट युक्ता-सख्यात जानना।

अब जघन्य असंख्यातासख्यात कहिए है – जघन्य युक्तासख्यात कौं जघन्य युक्तासख्यात करि एक बार परस्पर गुणै, जो परिमाण आवै, सो जघन्य असख्याता-सख्यात जानना। याके ऊपरि एक-एक बधता एक घाटि उत्कृष्ट असख्यातासख्यात पर्यन्त मध्यम असख्यातासख्यात जानने। एक घाटि जघन्य परीतानत प्रमाण उत्कृष्ट असख्यातासख्यात जानना।

अब जघन्य परीतानत कहिए है – जघन्य असख्यातासख्यात परिमाण तीन राशि करना – एक शलाका राशि, एक विरलन राशि, एक देय राशि। तहा विरलन राशि का तौ विरलन करना, बखेरि करि जुदा-जुदा एक-एक रूप करना, अर एक-एक के ऊपरि एक-एक देय राशि धरना।

भावार्थ – यहु जघन्य असख्यातासंख्यात प्रमाण स्थानकनि विषै जघन्य असख्यातासख्यात जुदे-जुदे माडने। बहुरि तिनिकौ परस्पर गुणिए, असै करि उस शलाका राशि मैं स्यो एक घटाइ देना। बहुरि असे कीए जो परिमाण आया, तितने परिमाण दोय राशि करना, एक विरलन राशि, एक देय राशि। तहा विरलन राशि का विरलन करि एक-एक ऊपरि एक-एक देय राशि कौ स्थापन करि, परस्पर गुणिए। असै करि उस शलाका राशि मैं स्यो एक और घटाइ देना। बहुरि ऐसे कीए जो परिमाण आया, तितने प्रमाण विरलन-देय स्थापि, विरलन राशि का विरलन करि एक-एक प्रति देय राशि कौ देइ परस्पर गुणिये, तब शलाका राशिसु एक और काढि लेना, असै करते-करते जब यह पहिली बार किया शलाका राशि सर्व सपूर्ण होइ, तब तहा जो किछू परिमाण हुवा, सो यहु महाराशि असख्यातासख्यात का मध्य

भेद है, सो तितने-तितने परिमाण तीन राशि बहुरि करना – एक शलाका राशि, एक विरलन राशि, एक देय राशि । तहां विरलन राशि का विरलन करि एक-एक के स्थान के देय राशि का स्थापन करि परस्पर गुणीये, तब शलाका राशि में सू एक काढि लेना बहुरि जो परिमाण आया, ताका विरलन करि एक-एक प्रति तिस ही परिमाण को स्थापन करि परस्पर गुणिये, तब एक और शलाका राशि मे सूं काढि लेना । असें करते-करते जब दूसरी बार भी किया हुआ शलाका राशि सपूर्ण होइ, तब असें करता जो परिमाण मध्यम असख्यातासख्यात का भेदरूप आया, तिस परिमाण तीन राशि स्थापन करनी – शलाका, विरलन, देय । तहा विरलन राशि कौ बखेरि एक-एक स्थानक विषै देय राशि कौ स्थापन करि परस्पर गुणिये, तब तीसरी शलाका राशि में सौ एक काढि लेना । बहुरि असें करतें जो परिमाण आया था, तिस परिमाण राशि का विरलन करि एक-एक स्थानक विषै तिस परिमाण ही का स्थापन करि परस्पर गुणिये, तब शलाका राशि मे स्यो एक और काढि लेना । असें करते-करते जब तीसरी बार भी शलाका राशि सपूर्ण भया, तब शलाका त्रय निष्ठापन हुवा कहिये । आगै भी जहा शलाका त्रय निष्ठापन कहियेगा, तहा असा ही विधान जानना । विशेष इतना जो शलाका, विरलन, देय का परिमाण वहा जैसा होइ, तैसा जानना । अब असें करते जो मध्यम असख्यातासख्यात का भेदरूप राशि उपज्या, तीहि विषै ये छह राशि मिलावना । लोक प्रमाण धर्म द्रव्य के प्रदेश, लोक प्रमाण अधर्म द्रव्य के प्रदेश, लोक प्रमाण एक जीव के प्रदेश, लोक प्रमाण लोकाकाश के प्रदेश, तातै असख्यातगुणा अप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पति कायिक जीवनि का परिमाण, तातै असंख्यात लोकगुणा तो भी सामान्यपनै असख्यातलोक प्रमाण सप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पति कायिक जीवनि का परिमाण – ये छहो राशि पूर्वोक्त प्रमाण विषै जोडने । जोडे जो परिमाण होइ, तीहि परिमाण शलाका, विरलन देय राशि करनी । पीछे अनुक्रम तै पूर्वोक्त प्रकार करि शलाका त्रय निष्ठापन करना असैं करतै जो कोई महाराशि मध्य असख्यातासख्यात का भेदरूप भया, तीहि विषै च्यारि राशि और मिलावने । बीस कोडाकोडी सागर प्रमाण उत्सर्पिणी, अवसर्पिणी दोय कालरूप कल्पकाल के संख्यात पल्यमात्र समय, बहुरि असख्यात लोकमात्र अनुभाग बध कौ कारणभूत जे परिणाम, तिनिके स्थान, बहुरि इनि तै असख्यात लोकगुणे तो भी असंख्यात लोकमात्र अनुभाग बध कौ कारणभूत जे परिणाम, तिनिके स्थान, बहुरि इनितै असख्यात लोकगुणे तो भी असख्यात लोकमात्र मन,

वचन, काय योगनि के अविभाग प्रतिच्छेद, असै ये च्यारि राशि पूर्वोक्त परिमाण विषै मिलावने। मिलाये जो परिमाण होइ, तीहि महाराशि प्रमाण शलाका, विरलन, देय राशि करि अनुक्रम तै पूर्वोक्त प्रकार शलाका त्रय निष्ठापन करना। असै करतै जो परिमाण होइ, सो जघन्य परीतानत है। बहुरि याके ऊपरि एक-एक बधता एक घाटि उत्कृष्ट परीतानत पर्यन्त मध्यम परीतानत जानना। बहुरि एक घाटि जघन्य युक्तानत परिमाण उत्कृष्ट परीतानत जानना।

अब जघन्य युक्तानत कहिये है – जघन्य परीतानत का विरलन करि-करि बखेरि एक-एक स्थान विषै एक-एक जघन्य परीतानत का स्थापन करि परस्पर गुणै जो परिमाण आवै, सो जघन्य युक्तानत जानना। सो यहु अभव्य राशि समान है। अभव्य जीव राशि जघन्य युक्तानत परिमाण है। बहुरि याके ऊपरि एक-एक बधता एक घाटि उत्कृष्ट युक्तानंत पर्यन्त मध्यम युक्तानंत के भेद जानना। बहुरि एक घाटि जघन्य अनतानन्त परिमाण उत्कृष्ट युक्तानन्त जानना।

अब जघन्य अनतानत कहिये है – जघन्य युक्तानत कौ जघन्य युक्तानत करि एक ही बार गुणै जघन्य अनतानत होइ है। बहुरि याके ऊपरि एक-एक बधता एक घाटि केवलज्ञान के अविभाग प्रतिच्छेद प्रमाण उत्कृष्ट अनतानत पर्यन्त मध्यम अनंतानत जानने। सो याके भेदनि कौ जानता सता असै विधान करै – जघन्य अनतानत परिमाण शलाका, विरलन, देयरूप तीन राशि करि अनुक्रम तै शलाका त्रय निष्ठापन पूर्वोक्त प्रकार करि करना। असै करतै जो मध्यम अनतानत भेदरूप परिमाण होइ, तीहि विषै ए छह राशि और मिलावना। जीव राशि के अनतवे भाग सिद्ध राशि, बहुरि तातै अनतगुणा असा पृथ्वी, अप्, तेज, वायु, प्रत्येक वनस्पति, त्रस राशि रहित ससारी जीव राशि मात्र निगोद राशि, बहुरि प्रत्येक वनस्पति सहित निगोद राशि प्रमाण वनस्पति राशि, बहुरि जीव राशि तै अनतगुणा पुद्गल राशि, बहुरि यातै अनन्तानन्त गुणा व्यवहार काल के समयनि की राशि, बहुरि यातै अनता-नन्त गुणा अलोकाकाश के प्रदेशनि की राशि – असै छहो राशि के परिमाण पूर्व परिमाण विषै मिलावने। बहुरि मिलाए जो परिमाण होइ, तीहिं प्रमाण शलाका, विरलन, देय करि क्रम तै पूर्ववत् शलाका त्रय निष्ठापन कीये जो कोई मध्यम अनता-नत का भेदरूप परिमाण पावै, तीहिं विषै धर्मद्रव्य, अधर्मद्रव्य के अगुरुलघु गुण का अविभाग प्रतिच्छेदनि का परिमाण अनतानत है, सो जोडिए। यौ करतै जो मह ।

परिमाण होइ, तीहि प्रमाण शलाका, विरलन, देय करि क्रम तै पूर्वोक्त विधि करि शलाका त्रय निष्ठापन कीये जो कोई मध्यम अनतानत का भेदरूप महा परिमाण होइ, तिस परिमाण कौ केवलज्ञान शक्ति का अविभाग प्रतिच्छेदनि का समूहरूप परिमाण विषै घटाइ, पीछे ज्यू का त्यू मिलाइये, तब केवलज्ञान के अविभाग प्रतिच्छेदनि का प्रमाण स्वरूप उत्कृष्ट अनतानत होइ है।

इहां प्रश्न – जो पूर्वोक्त परिमाण कौ पहिलै केवलज्ञान में सौ काढि, पीछै फेरि मिलाया सो कौन कारण ?

ताका समाधान - केवलज्ञान का परिमाण असा नाही जो पूर्वोक्त परिमाण के गुणनादि क्रम करि जाण्या जाय। अर उस परिमाण कौ केवलज्ञान मे मिलाइये तौ केवलज्ञान तै अधिक प्रमाण होइ, सो है नाही। बहुरि किछू न कहिए तौ गणित विषै सबध टूटे, तातै पूर्वोक्त परिमाण कौ पहिलै केवलज्ञान मे सौ घटाइ, पीछै मिलाइ, केवलज्ञान मात्र उत्कृष्ट अनतानत कह्या है। ऐसै ये इकईस भेद सख्यामान के कहे ।

अब सख्या के विशेषरूप जे चौदह धारा, तिनिका कथन कीजिए है – १ सर्व धारा, २ समधारा, ३ विषमधारा, ४. कृतिधारा, ५ अकृति धारा, ६ घनधारा, ७ अघनधारा, ८ कृति मात्रिकधारा, ९ अकृति मात्रिकधारा, १० घन मातृकधारा ११ अघन मातृकधारा, १२ द्विरूप वर्गधारा, १३ द्विरूपघनधारा, १४ द्विरूपघनाघनधारा – ऐसे ये चौदह धारा जाननी ।

तहा कहे जे सर्व सख्यातादि भेद, ते एक आदि तै होहि असे जे सर्व सख्यात विशेषरूप सो सर्वधारा है।

अवशेष तेरह धारा याही विषै उत्पन्न जाननी । या धारा का प्रथम स्थान एक प्रमाण, दूसरा स्थान दोय प्रमाण, तीसरा स्थान तीन प्रमाण – असै एक-एक बधता केवलज्ञान पर्यन्त जानने । केवलज्ञान शब्द करि उत्कृष्ट अनतानत जानने। इस धारा विषै सर्व ही सख्या के विशेष आये, तातै याके सर्वस्थान केवलज्ञान परिमाण जानने।

बहुरि जिस विषै समरूप सख्या के विशेष पाइये, सो समधारा है। याका आदि स्थान दोय, दूसरा स्थान च्यारि, तीसरा स्थान छह, असै दोय-दोय बधता

केवलज्ञान पर्यंत जानने । याके सर्वस्थान केवलज्ञान का आधा परिणाम है । सर्व-धारा विषै सर्वसख्यात के विशेष थे, तिनिमे आधे तौ समरूप है, आधे विषमरूप हैं, तातै याके स्थान केवलज्ञान का आधे प्रमाण कहे ।

बहुरि जिस विषै विषमरूप सख्या विशेष पाइये, सो विषमधारा है । याका आदि स्थान एक, दूसरा स्थान तीन, तीसरा स्थान पाच, अैसै दोय-दोय बधता एक घाटि केवलज्ञान पर्यत जानने । याके सर्वस्थान आधा केवलज्ञान प्रमाण है ।

बहुरि जिस विषै वर्गरूप सख्या विशेष पाइये, सो कृतिधारा है । याका प्रथम स्थान एक, जातै एक का वर्ग एक ही है । बहुरि दूसरा स्थान च्यारि, जातै दोय का वर्ग च्यारि हो है । बहुरि तीसरा स्थान नव, जातै तीनि का वर्ग नव है । बहुरि चौथा स्थान सोलह, जातै च्यारि का वर्ग सोलह है । अैसै ही पचादिक के वर्ग पचीस नै आदि देकरि याके स्थान केवलज्ञान पर्यंत जानने । याके सर्वस्थान केवल-ज्ञान का वर्गमूल परिमाण जानने । जिस परिमाण का वर्ग कीये केवलज्ञान का परिमाण होइ, इतने याके स्थान है ।

बहुरि जिस विषै वर्गरूप सख्या विशेष न पाइये, सो अकृतिधारा है । सर्व धारा के स्थानकनि मे स्यो कृतिधारा के स्थान दूरि कीए अवशेष सर्वस्थान इस धारा के जानने । याका पहिला स्थानक दोय, दूसरा तीन, तीसरा पाच, चौथा छह, (पाचवा सात, छठा आठ) इत्यादि एक घाटि केवलज्ञान पर्यंत जानने । याके सर्व-स्थान केवलज्ञान का वर्गमूल करि हीन केवलज्ञान परिमाण जानने ।

बहुरि जिस विषै घनरूप सख्या विशेष पाइये, सो घनधारा है । याका पहिला स्थान एक, जातै एक का घन एक ही है । बहुरि दूसरा स्थान आठ, जातै दोय का घन आठ हो है । बहुरि तीसरा स्थान सत्ताईस, जातै तीन का घन सत्ताईस हो है । चौथा स्थान चौसठि, जातै च्यारि का घन चौसठि हो है । अैसै पचादिक का घन सवासौ नै आदि देकरि याके स्थान केवलज्ञान के आसन्न घन पर्यत जानने ।

केवलज्ञान का आसन्न घन कहा कहिये ?

सो अकसदृष्टि करि दिखाइये है – केवलज्ञान का परिमाण पैसठि हजार पाच सै छत्तीस (६५५३६) । याका आधा कीजिए, तब घनधारा का स्थान होइ (३२७६८) । याका घनमूल बत्तीस (३२) । बहुरि याके ऊपरि तेतीस नै आदि

देकरि चालीस पर्यंत घनमूल के स्थान है, जातें चालीस का घन कीए चौसठि हजार होइ, सो आसन्न घन जानना । जातै इकतालीस का घन कीजिए, तौ अड़सठि हजार नव सै इकवीस होइ, सो केवलज्ञान के परिमाण सौ बधता होइ, सो संभवै नाहीं । तातै केवलज्ञान के नीचै जो परिमाण घनरूप होइ, ताको केवलज्ञान का आसन्न घन कहिए । इस आसन्न घन का जो घनमूल, ताका जो परिमाण, तितने इस धारा के स्थान जानने ।

कोउ कहै कि केवलज्ञान के अर्धपरिमाण कौ घनस्थान तुम कैसे जान्या ?

ताका समाधान – द्विरूप वर्गधारा के जे स्थान कहैगे, तिनि विषै पहिला, तीसरा, पाचवा नै आदि देकरि जे विषम स्थान है, तिनिका तौ चौथा भाग परिमाण घनधारा का स्थान जानना । जैसे द्विरूप वर्गधारा का पहिला स्थान च्यारि, ताका चौथा भाग एक, सो घनधारा का स्थान है । बहुरि तीसरा स्थान दोय सै छप्पन, ताका चौथा भाग चौसठि, सो घनधारा का स्थान है, असा सर्वत्र जानना । बहुरि जे दूसरा, चौथा, छठा नै आदि देकरि समस्थान है, तिनिका आधा प्रमाण घनस्थान जानना । जैसे दूसरा स्थान सोलह, ताका आधा आठ, सौ घनधारा का स्थान है । चौथा स्थान पैसठि हजार पाच सै छत्तीस, ताका आधा बत्तीस हजार सात सै अड-सठि, सो भी घनस्थान है । यातै यहु केवलज्ञान भी द्विरूप वर्गधारा के समस्थान विषै है, तातै याका आधा परिमाण कौ घनस्थान कह्या ।

बहुरि प्रश्न – जो केवलज्ञान कौ द्विरूप वर्गधारा के समस्थान विषै कैसैं जान्या ?

ताका समाधान – केवलज्ञान की वर्गशलाका का भी परिमाण द्विरूप वर्ग-धारा के ही विषै कह्या है अर द्विरूप वर्गधारा के जे स्थान है, तिनि विषै प्रमाण समरूप ही है, तातै जानिए है । असे घनधारा कही ।

बहुरि जिस विषै घनरूप सख्या विशेष न पाइए, सो अघनधारा है । सर्वधारा विषै जे स्थान है, तिनि विषै घनधारा के स्थान घटाए अवशेष सर्वस्थान इस धारा के जानने । याका प्रथम स्थान दोय, दूसरा स्थान तीन, इत्यादिक केवलज्ञान पर्यन्त जानना । याके सर्वस्थान घनधारा के स्थान का परिमाण करि हीन केवलज्ञान परिमाण जानने ।

बहुरि जिनिका वर्ग होइ अैसे सख्या विशेष जिस धारा विषै पाइए, सो कृति मातृकधारा है, सो एक ते आदि देकरि सर्व ही का वर्ग होइ है, परतु याका अतस्थान केवलज्ञान का वर्गमूल ही जानना। केवलज्ञान के वर्गमूल तै एक भी अधिक का जो वर्ग करिए तौ केवलज्ञान तै अधिक का परिमाण होइ, तातै याके स्थान एक सो लगाइ एक-एक वधता केवलज्ञान के वर्गमूल पर्यंत जानने। याके सर्वस्थान केवलज्ञान का वर्गमूल परिमाण जानने।

बहुरि जिनिका वर्ग न होइ अैसे सख्या जिस धारा विषै पाइए, सो अकृतिमातृक धारा है। सो एक अधिक केवलज्ञान का वर्गमूल कौं आदि देकरि एक-एक बधता केवलज्ञान पर्यंत जानना। इनका वर्ग न हो है। याके सर्वस्थान केवलज्ञान के वर्ग-मूल करि हीन केवलज्ञान मात्र जानने। अकसदृष्टि करि केवलज्ञान का प्रमाण सोलह, ताका वर्गमूल च्यारि, सो च्यारि पर्यंत का तौ वर्ग होय अर पचम तै आदि दै करि सोलह पर्यंत का वर्ग न होइ, जो कीजिये तो केवलज्ञान तै अधिक परिमाण होइ, सो है नाही।

बहुरि जिनिका घन होइ सकै अैसे सख्या विशेष जिस धारा विषै पाइये सो घन मातृकधारा है, सो एक ते आदि देकरि सर्व का घन होइ, परतु याका अत स्थान केवलज्ञान का जो आसन्न घन, ताका घनमूल परिमाण ही जानना। याके सर्व-स्थान केवलज्ञान के आसन्न घन का घनमूल समान जानने।

बहुरि जिनका घन न होइ सकै अैसे सख्या विशेष जिस धारा मे पाइये, सो अघन मातृकधारा है, सो केवलज्ञान का एक अधिक आसन्न घनमूल तै लगाइ एक-एक बधता केवलज्ञान पर्यंत याके स्थान जानने। अकसदृष्टि करि केवलज्ञान पैंसठि-हजार पाच सै छत्तीस प्रमाण (६५५३६), याका आसन्न घन चौंसठि हजार (६४०००) ताका घनमूल चालीस (४०), सो चालीस पर्यंत का घन होइ, इकतालीस तै लगाइ केवलज्ञान पर्यंत याका घन न होइ, जो कीजिये तौ केवलज्ञान तै अधिक परिमाण होइ, सो है नाही।

बहुरि द्विरूप का वर्ग सौं लगाइ पूर्व-पूर्व का वर्ग करतै जे सख्या विशेष होइ, ते जिस धारा विषै पाइये, सो द्विरूपवर्गधारा है। याका प्रथम स्थान दोय का वर्ग च्यारि, बहुरि च्यारि का वर्ग दूसरा सोलह, बहुरि याका वर्ग तीसरा स्थान छप्पन अधिक दोय सौ (२५६)। बहुरि याका वर्ग चौथा स्थान पणट्टी, सो पैसठि हजार

पाच सै छत्तीस (६५५३६) प्रमाण का नाम पणट्ठी कहिये है। बहुरि याका वर्ग पाचवा स्थान बादाल, सो बियालीस चौराणवै, छिनवै, बहत्तरि, छिनवै ये अक लिखे जो प्रमाण होइ, ताकौ बादाल कहिये (४२ ६४ ६६ ७२ ६६)।

बहुरि याका वर्ग छठा स्थान एकट्ठी, सो एक, आठ, च्यारि च्यारि, छह, सात, च्यारि-च्यारि, बिदी, सात, तीन, सात, बिदी, नव, पाच; पाच, एक, छह, एक, छह इनि अकनि करि जो प्रमाण होइ ताकूँ एकट्ठी कहिये है (१ ८ ४ ४ ६ ७ ४ ४ ० ७ ३ ७ ० ६ ५ ५ १ ६ १ ६)। बहुरि याका वर्ग सातवा स्थान असै ही पहला-पहला स्थाननि का वर्ग कीए एक-एक स्थान होइ। तहा सख्यात स्थान भए जघन्य परीतासख्यात की वर्गशलाका होइ।

सो वर्गशलाका कहा कहिए?

दोय के वर्ग तै लगाइ जितनी बार वर्ग कीए विवक्षित राशि होइ, तितनी ही विवक्षित राशि की वर्गशलाका जाननी। तातै द्विरूप वर्गधारा आदि तीन धारानि विषै जितने स्थान भए जो राशि होइ, तीहि राशि की तितनी वर्गशलाका है। जैसै पणट्ठी की वर्ग शलाका च्यारि, बादाल की पाच, इत्यादि जाननी। बहुरि जघन्य परीता-सख्यात की वर्गशलाका स्थान तै लगाइ सख्यात स्थान भए, तब जघन्य परीता-सख्यात के अर्धच्छेदनि का परिमाण होइ।

सो अर्धच्छेद कहा कहिए?

विवक्षित राशि का जेती बार आधा-आधा होइ, तितने तिस राशि के अर्धच्छेद जानने। जैसै सोलह कौ एक बार आधा कीये आठ होइ, दूसरा आधा कीये च्यारि होइ, तीसरा आधा कीये दोय होइ, चौथा आधा कीये एक होइ, असे च्यारि बार आधा भया, तातै सोलह का अर्धच्छेद च्यारि जानने। असे ही चौसठि के अर्धच्छेद छह होइ। असै सर्व के अर्धच्छेद जानने। बहुरि तिस जघन्य परीतासख्यात के अर्धच्छेदरूप स्थान तै सख्यात वर्ग स्थान गये जघन्य परीतासख्यात का वर्गमूल होइ, यातै एक स्थान गये इस वर्गमूल का वर्ग कीये जघन्य परीतासख्यात होइ। बहुरि यातै सख्यात स्थान गये जघन्य युक्तासख्यात होइ, सोई आवली का परिमाण है। इहा वर्गशलाकादिक न कहे, ताका कारण आगे कहियेगा। बहुरि यातै एक स्थान जाइये, याका एक बार वर्ग कीजिये, तब प्रतरावली होइ, जातै आवली के वर्ग ही कौ प्रतरावली कहिये है।

बहुरि इहातै असख्यात स्थान जाइ अद्धापल्य का वर्ग शलाका राशि होइ है। बहुरि यातै असख्यात स्थान जाइ, अद्धापल्य का अर्धच्छेद राशि होइ। बहुरि यातै असख्यात स्थान जाइ अद्धापल्य का वर्गमूल होइ। बहुरि यातै असख्यात स्थान गये सूच्यगुल होइ। बहुरि यातै एक स्थान गये प्रतरागुल होइ। बहुरि यातै असख्यात स्थान गये जगत् श्रेणी का घनमूल होइ। बहुरि यातै असख्यात सख्यात स्थान गये क्रम तै जघन्य परीतानत का वर्गशलाका राशि अर अर्द्धच्छेद राशि अर वर्गमूल होइ। यातै एक स्थान गये जघन्य परीतानत होइ। बहुरि यातै असख्यात स्थान गये जघन्य युक्तानत होइ। बहुरि यातै एक स्थान गये जघन्य अनतानत होइ। बहुरि यातै अनतानन्त अनतानत स्थान गये क्रम तै जीव राशि का वर्गशलाका राशि अर अर्द्धच्छेद राशि अर वर्गमूल होइ। यातै एक स्थान गये जीव राशि होइ। बहुरि अब इहा तै आगै जे राशि कहिए है, तिनिका वर्गशलाका राशि, अर्धच्छेद राशि, वर्गमूल सबका असै कहि लेना। सो जीवराशि तै अनतानत वर्गस्थान गए पुद्गल परमाणुनि का परिमाण होइ। यातै अनतानत वर्गस्थान गए तीनि काल के समयनि का परिमाण होइ। यातै अनतानत स्थान गये श्रेणीरूप आकाश के प्रदेशनि का परिमाण होइ, सो यहु लोक-अलोकरूप सब अकाश के लबाईरूप प्रदेशनि का परिमाण है। यामै चौडाई-ऊचाई न लीनी। बहुरि यातै एक स्थान गये प्रतराकाश के प्रदेशनि का परिमाण है, सो यहु लोक-अलोकरूप सर्व आकाश के प्रदेशनि का लबाईरूप वा चौडाईरूप प्रदेशनि का परिमाण है, यामै ऊचाई न लीनी। ऊचाई सहित घनरूप सर्व आकाश के प्रदेशनि का प्रमाण द्विरूप घनधारा विषै है, इस धारा विषै नाही है। बहुरि यातै अनतानत स्थान जाइ धर्म द्रव्य, अधर्म द्रव्य के अगुरुलघु गुणनि का अविभाग प्रतिच्छेदनि का प्रमाण होइ। जिसका भाग न होइ असा कोई शक्ति का सूक्ष्म अश, ताका नाम अविभाग प्रतिच्छेद है। बहुरि यातै अनतानत वर्गस्थान गये एक जीव के अगुरुलघु गुण के षट्स्थान पतित वृद्धि-हानि रूप अविभाग प्रतिच्छेदनि का प्रमाण होइ है। बहुरि यातै अनतानत वर्गस्थान गये सूक्ष्म निगोदिया के जो लब्ध्यक्षर नामा जघन्य ज्ञान होइ है, ताके अविभाग प्रतिच्छेदनि का परिमाण होइ। बहुरि यातै अनतानंत वर्गस्थान गए असयत सम्यग्दृष्टी तिर्यच के जो जघन्य सम्यक्त्व-रूप क्षायिक लब्धि हो है, ताके अविभाग प्रतिच्छेदनि का प्रमाण होइ। बहुरि यातै अनतानत स्थान गए केवलज्ञान का वर्गशलाका राशि होइ। बहुरि यातै अनतानत वर्गस्थान गए केवलज्ञान का अर्धच्छेद राशि होइ। बहुरि यातै अनतानत वर्गस्थान

गये केवलज्ञान का अष्टम वर्गमूल होइ । बहुरि यातै एक-एक स्थान गए क्रम तै केवलज्ञान का सप्तम, षष्ठम, पचम, चतुर्थ, तृतीय, द्वितीय, प्रथम वर्गमूल होइ।

जो विवक्षित राशि का वर्गमूल होइ, ताकौ प्रथम वर्गमूल कहिए । बहुरि उस प्रथम वर्गमूल का वर्गमूल कू द्वितीय वर्गमूल कहिए। बहुरि तिस द्वितीय वर्गमूल का भी वर्गमूल होइ, ताकौ तृतीय वर्गमूल कहिए । असै ही चतुर्थादिक वर्गमूल जानने । बहुरि उस प्रथम वर्गमूल तै एक स्थान जाइए, वाका वर्ग कीजिए, तब गुण-पर्याय सयुक्त जे त्रिलोक के मध्यवर्ती त्रिलोक सबधी जीवादिक पदार्थनि का समूह, ताका प्रकाशक जो केवलज्ञान सूर्य, ताकी प्रभा के प्रतिपक्षी कर्मनि के सर्वथा नाश तै प्रकट भए समस्त अविभाग प्रतिच्छेदनि का समूहरूप सर्वोत्कृष्ट भाग प्रमाण उपजै है, सोई उत्कृष्ट क्षायिक लब्धि है । इहा ही इस धारा का अत स्थान है। यह ही सर्वोत्कृष्ट परिमाण है । यातै कोऊ अधिक परिमाण नाही । असै यहु द्विरूप वर्गधारा कही । याके वर्गरूप सर्वस्थान केवलज्ञान की वर्गशलाका परिमाण जानने ।

अब इहा केतेइक नियम दिखाइए है – जो राशि विरलन देय क्रम करि निपजै, सो राशि जिस धारा विषै कही होइ, तिस धारा विषै ही तीहि राशि की वर्गशलाका वा अर्धच्छेद न होइ । जैसै विरलन राशि सोलह (१६), ताका विरलन करि एक-एक प्रति सोलहौ जायगा देय राशि जो सोलह सो स्थापि, परस्पर गुणन कीए एकट्ठी प्रमाण होइ, सो एकट्ठी प्रमाण राशि द्विरूप वर्गधारा विषै पाइये है । याके अर्धच्छेद चौसठि (६४), वर्गशलाका छह, सो इस धारा मे न पाइये, असै ही सूच्यगुल वा जगत्श्रेणी इत्यादिक का जानना । असा नियम इस द्विरूप वर्गधारा विषै अर द्विरूप घनधारा अर द्विरूप घनाघनधारा विषै जानना । तहातै सूच्यगुलादिक द्विरूप वर्गधारा विषै अपनी-अपनी देय राशि के स्थान तै ऊपरि विरलन राशि के जेते अर्धच्छेद होइ, तितने वर्गस्थान गये उपजे है । तहा सूच्यगुल का विरलन राशि पल्य का अर्धच्छेद प्रमाण है, देय राशि पल्य प्रमाण है । बहुरि जगच्छ्रेणी की विरलन राशि पल्य का अर्धच्छेदनि का असख्यातवा भागमात्र जानना, देय राशि घनागुलमात्र जानना। तहा अपना-अपना विरलन राशि का विरलन करि एक-एक बखेरि तहा एक-एक प्रति देय राशि कौ देइ परस्पर गुणै जो-जो राशि उपजै है, सो आगै कथन करेंगे। बहुरि द्विरूप वर्गधारादिक तीनि धारानि विषै पहला-पहला वर्गस्थान तै ऊपरला-ऊपरला वर्गस्थान विषै अर्धच्छेद-अर्धच्छेद तौ दूणे-दूणे जानने अर वर्गशलाका एक-एक अधिक जाननी । जैसे दूसरा

वर्गस्थान सोलह, ताका अर्धच्छेद च्यारि अर तीसरा वर्गस्थान दोय सै छप्पन, ताका अर्धच्छेद आठ, असै ही दूणे-दूणे जानने। बहुरि वर्गशलाका सोलह की दोय, दोय सै छप्पन की तीन असै एक अधिक जाननी। बहुरि तीहि ऊपरला स्थानक के निकटवर्ती जेथवा ऊपरला स्थानक होइ, तेथवा अन्य धारा विषै स्थान होइ, तौ तहा तिस पहिले स्थान तै अर्धच्छेद तिगुणे होइ, जैसे द्विरूप वर्गधारा का द्वितीय स्थान सोलह, ताके अर्धच्छेद च्यारि, अर तातै ऊपरिला द्विरूप घनधारा का तीसरा स्थान च्यारि हजार छिनवै, ताके अर्धच्छेद बारह, असै सर्वत्र जानना। बहुरि वर्गशलाका दोऊ की समान जाननी, जैसे दोय सै छप्पन की भी तीन वर्गशलाका, च्यारि हजार छिनवै की भी तीन वर्गशलाका हो है। बहुरि राशि के जेते अर्धच्छेद होइ, तिनि अर्धच्छेदनि के जेते अर्धच्छेद होइ, तितनी राशि की वर्गशलाका जाननी। जैसे राशि का प्रमाण सोलह, ताके अर्धच्छेद च्यारि, याहू के अर्धच्छेद दोय, राशि सोलह, ताकी वर्गशलाका दोय है, असै सर्वत्र जानना। बहुरि जेती वर्गशलाका होइ, तितनी जायगा दोय-दोय मांडि परस्पर गुणिए, तब अर्धच्छेदनि का परिमाण आवै। जैसे सोलह की वर्गशलाका दोय, सो दोय जायगा दोय-दोय माडि परस्पर गुणिए, तब च्यारि होइ, सो सोलह के च्यारि अर्धच्छेद है, सो यहु नियम द्विरूप वर्गधारा विषै ही है। बहुरि जेते अर्धच्छेद होइ, तितना दुवा माडि परस्पर गुणिए, तब राशि का परिमाण होइ। जैसे च्यारि अर्धच्छेद के च्यारि जायगा दुवा माडि परस्पर गुणिए, तब जो राशि सोलह, तीहिका परिमाण आवै।

वर्गशलाका कहा ?

जेती बार वर्ग कीये राशि होइ, सो वर्गशलाका है। अथवा द्विरूप धारा विषै अर्धच्छेदनि का अर्धच्छेद प्रमाण वर्गशलाका हो है।

बहुरि अर्धच्छेद कहा ?

राशि का जेता बार आधा-आधा होइ, सो अर्धच्छेद राशि है। इत्यादि यथा सभव जानना।

बहुरि द्विरूप का घन कौ आदि देकरि पहला-पहला वर्ग करते सख्या विशेष जिस धारा विषै होइ, सो द्विरूप घनधारा है। सो दोय का घन आठ हो है, सो तो याका पहिला स्थान। बहुरि याका वर्ग चौसठि, सो दूसरा स्थान। बहुरि याका वर्ग च्यारि हजार छिनवै, सो तीसरा स्थान, सो यहु सोलह का घन है। बहुरि

याका वर्ग दोय सै छप्पन का घन सो चौथा स्थान । बहुरि पणट्ठी का घन पाचवा स्थान । बादाल का घन छठा स्थान । ऐसै पहला-पहला स्थानक का वर्ग कीए एक-एक स्थान होइ, सो ऐसै सख्यात स्थान गए जघन्य परीतासंख्यात का घन होइ । यातै सख्यात स्थान गए आवली का घन होइ । यातै एक स्थान गए प्रतरावली का घन होइ । यातै असख्यात असंख्यात स्थान गए क्रम तै पल्य की वर्गशलाका का घन अर अर्धच्छेद का घन अर वर्गमूल का घन होइ । यातै एक स्थान गए पल्य का घन होइ । बहुरि यातै असख्यात स्थान गए घनागुल होइ । यातै असख्यात स्थान गए जगच्छ्रेणी होइ । यातै एक स्थान गए जगत्प्रतर होइ । यातै अनंतानंत-अनतानंत स्थान गए क्रम तै जीवराशि की वर्गशलाका का घन अर अर्धच्छेद का घन अर वर्ग-मूल का घन होइ । यातै एक स्थान गये जीवराशि का घन होइ । यातै अनतानत स्थान गए श्रेणीरूप सर्व आकाश की वर्गशलाका का घन होइ । तातै अनतानत वर्ग स्थान जाइ, ताही का अर्धच्छेद का घन होइ । तातै अनतानत वर्गस्थान जाइ, ताही का प्रथम मूल का घन होइ । तातै एक स्थान जाइ श्रेणी आकाश का घन होइ, सोई सर्व आकाश के प्रदेशनि का परिमाण है ।

बहुरि यातै अनतानत स्थान गए केवलज्ञान का द्वितीय वर्गमूल का घन होइ, सो याही कौ अत स्थान जानना । प्रथम वर्गमूल अर द्वितीय वर्गमूल कौं परस्पर गुणै जो परिमाण होइ, सोई द्वितीय वर्गमूल का घन जानना । जैसै सोलह का प्रथम वर्गमूल च्यारि, द्वितीय वर्गमूल दोय, याका परस्पर गुणन कीए आठ होइ, सोई द्वितीय वर्गमूल जो दोय, ताका घन भी आठ ही होइ, बहुरि द्वितीय वर्गमूल के अनतरि वर्ग केवलज्ञान का प्रथम मूल, ताका घन कीए केवलज्ञान तै उलघन होइ, सो केवलज्ञान तै अधिक सख्या का अभाव है, तातै सोई अत स्थान कह्या । ऐसै या धारा के सर्वस्थान दोय घाटि केवलज्ञान की वर्गशलाका मात्र जानने । द्विरूपवर्ग-धारा विषै जिस राशि का जहा वर्ग ग्रहण कीया, तहा तिसका घन इस धारा विषै जानना । बहुरि दोय रूप का घन का जो घन, ताकौ आदि देकरि पहला-पहला स्थान का वर्ग करते जो सख्या विशेष होइ, ते जिस धारा विषै पाइये, सो द्विरूप घनाघन-धारा है । सो दोय का घन आठ, ताका घन पाच सै बारा, सो याका आदि स्थान जानना । बहुरि याका वर्ग दोय लाख बासठि हजार एक सौ चवालीस (२६२१४४), सो याका दूसरा स्थान जानना । ऐसै ही पहला-पहला स्थान का वर्ग करतै याके स्थान होहि । ऐसै असख्यात वर्ग स्थान गये लोकाकाश के प्रदेशनि का परिमाण

होइ । बहुरि यातै असख्यात वर्गस्थान गये अग्निकायिक जीवनि की गुणकार शलाका होहि । जेती बार गुणन कीये अग्निकायिक जीवनि का परिमाण होइ, तितनी गुणकार शलाका जाननी । सो याके परिमाण दिखावने के निमित्त कहिये – लोकाकाश के प्रदेश प्रमाण जुदा-जुदा तीन राशि करना शलाका, विरलन, देय । तहा विरलन राशि कौ एक-एक स्थान विषै देय राशि कौ स्थापन करि परस्पर गुणन करना । असै कीये सतै शलाका राशि मे स्यो एक काढि लेना । इहा जो राशि भया, ताकी गुणकार शलाका एक भई अर वर्ग शलाका पल्य के असख्यातवे भागमात्र हुई, जातै विरलन राशि के अर्धच्छेद देय राशि के अर्धच्छेद के अर्धच्छेदनि विषै जोडे विवक्षित राशि की वर्गशलाका का प्रमाण होइ है । बहुरि अर्धच्छेद राशि असख्यात लोक प्रमाण भया, जातै देय राशि के अर्धच्छेदनि करि विरलन राशि कौ गुणै विवक्षित राशि का अर्धच्छेदनि का प्रमाण हो है । बहुरि उत्पन्न भया राशि सो असख्यात लोक प्रमाण हो है । बहुरि यौ करतै जो राशि भया, तीहि प्रमाण विरलन देय राशि करि विरलन राशि का विरलन करना, एक-एक प्रति देय राशि कौ देना, पीछे परस्पर गुणन करना, तब शलाका राशि मे स्यो एक और काढि लेना । इहा गुणकार शलाका दोय भई, अर वर्गशलाका राशि अर अर्धच्छेद राशि अर यो करता जो राशि उत्पन्न भया, सो ये तीनो ही असख्यात लोक प्रमाण भये । बहुरि जहा ताई वह लोकमात्र शलाका राशि एक-एक काढने तै पूर्ण होइ, तहा ताई असै ही करना । असै करतै जो राशि उपज्या, ताकी गुणकार शलाका तौ लोकमात्र भई, और सर्व तीनो राशि असख्यात लोकमात्र असख्यात लोकमात्र भये । बहुरि जो यहु राशि का प्रमाण भया, तीहि प्रमाण जुदा-जुदा शलाका, विरलन, देय, असे तीन राशि स्थापि, तहा विरलन राशि कौ एक-एक बखेरि, एक-एक प्रति देय राशि कौ देइ, परस्पर गुणनि करि दूसरी वार स्थाप्या हुआ शलाका राशि तै एक और काढि लेना । इहा जो राशि उपज्या, ताकी गुणकार शलाका एक अधिक लोकप्रमाण है, अवशेष तीनो राशि असख्यात लोकमात्र असख्यात लोकमात्र हैं । बहुरि जो राशि भया तीहि प्रमाण विरलन देय राशि स्थापि, विरलन राशि कौ बखेरि, एक-एक प्रति देय राशि कौ देइ, परस्पर गुणन कर दूसरा शलाका राशि तै एक और काढि लेना, तब गुणकार शलाका दोय अधिक लोक प्रमाण भई । अवशेष तीनो राशि असख्यात लोकमात्र असख्यात लोकमात्र भई । बहुरि याही प्रकार दोय घाटि उत्कृष्ट सख्यात लोकमात्र गुणकार शलाका प्राप्त करि इन विषै पूर्वोक्त दोय अधिक लोकमात्र गुणकार शलाका जोडिये । तब गुणकार शलाका भी असख्यात लोकप्रमाण

भई, तब इहा तै लगाइ गुणाकार शलाका, वर्गशलाका, अर्धच्छेद राशि, उत्पन्न भई राशि चारि (४)। ये च्यारौ विशेष करि हीनाधिक है। तथापि सामान्य-पनै असख्यात लोक असख्यात लोकप्रमाण जानना। असै क्रम तै जाइ दूसरी बार स्थापी हुई शलाका राशि कौ भी एक-एक काढने तै पूर्ण करै। बहुरि तहा उत्पन्न भया जो राशि, तीहि प्रमाण शलाका विरलन, देय जुदा-जुदा तीन राशि स्थापना। पूर्वोक्त प्रकार तै इस तीसरी बार स्थाप्या हुवा शलाका राशि कौ भी पूर्ण करि बहुरि तहा जो राशि उत्पन्न भया, तीहि प्रमाण शलाका, विरलन, देय, तीन राशि स्थापना। तहा जो पूर्व कही तीन गुणकार शलाका राशि, तिनिका प्रमाण इस चौथी बार स्थाप्या हुवा शलाका राशि मे स्यो घटाये जो अवशेष प्रमाण रहै, सो पूर्वोक्त प्रकार करि एक-एक काढने तै जब पूर्ण होइ, तब तहा जो उत्पन्न राशि होइ, तीहि प्रमाण अग्निकायिक जीवराशि है। असै देखि—

'आउड्ढराशिवार लोगे अण्णोण्णसंगुणे तेओ'

असा आचार्यनि करि कह्या है। याका अर्थ यहु – जो साढा तीन बार शलाका राशि करि लोक कौ परस्पर गुणै अग्निकायिक जीवराशि हो है। या प्रकार अग्निकायिक जीवराशि की गुणकार शलाका तै ऊपरि असख्यात-असख्यात वर्ग-स्थान जाइ ताका वर्गशलाका, अर्धच्छेद राशि अर प्रथम मूल होइ, ताकौ एक बार वर्गरूप कीये तेजस्कायिक जीवनि का प्रमाण होइ है। बहुरि यातै असख्यात असख्यात वर्गस्थान जाइ तेजस्कायिक की स्थिति की वर्गशलाका अर अर्धच्छेद अर प्रथम मूल होइ है। यातै एक स्थान जाइ तेजस्कायिक की स्थिति हो है, सो स्थिति कहा कहिये ? अन्य काय तै आय करि तेजस्काय विषै जीव उपज्या, तहा उत्कृष्टपनै जेते काल और काय न धरै, तेजस्काय ही के पर्यायनि को धार्‌या करै, तिस काल के समयनि का प्रमाण जानना।

बहुरि यातै असख्यात-असख्यात वर्गस्थान जाइ अवधि सबधी उत्कृष्ट क्षेत्र की वर्गशलाका, अर्धच्छेद अर प्रथम मूल हो है। ताकौ एक बार वर्गरूप कीये, अवधि सबधी उत्कृष्ट क्षेत्र हो है, सो कहा ?

सर्वावधि ज्ञान के जेता क्षेत्र पर्यंत जानने की शक्ति, ताके प्रदेशनि का प्रमाण हो है, सो यहु क्षेत्र असख्यात लोकप्रमाण है।

इहा कोऊ कहै अवधिज्ञान तो रूपी पदार्थनि कौ जानै, सो रूपी पदार्थ एक लोक प्रमाण क्षेत्र विषै ही है। इहा इतना क्षेत्र कैसे कह्या ?

ताका समाधान – जैसे अहमिंद्रनि कै सप्तम नरक पृथ्वी पर्यंत गमन शक्ति है, तथापि इच्छा विना कदाचित् गमन न हो है। तैसे सर्वावधि विषै असी शक्ति है – इतने क्षेत्र विषै जो रूपी पदार्थ होइ तौ तितने कौ जानै, परतु तहा रूपी पदार्थ नाही, तातै सो शक्ति व्यक्त न हो है।

बहुरि तातै असख्यात-असख्यात स्थान जाइ स्थिति बधाध्यवसाय स्थाननि की वर्गशालाका अर अर्धच्छेद अर प्रथम मूल हो है। याकौ एक बार वर्गरूप कीये स्थितिबधाध्यवसाय स्थान हो है, ते कहा ?

सो कहिये है ज्ञानावरणादिक कर्मनि का ज्ञान कौ आवरना इत्यादिक स्वभाव करि संयुक्त रहने का जो काल, ताकौ स्थिति कहिये। तिसके बध कौ कारणभूत जे परिणामनि के स्थान, तिनिका नाम स्थितिबधाध्यवसाय स्थान है।

बहुरि तातै असख्यात-असख्यात वर्गस्थान जाइ अनुभागबधाध्यवसाय स्थाननि की वर्गशालाका अर अर्धच्छेद अर प्रथम मूल हो है। ताकौ एक बार वर्ग-रूप कीये अनुभागबधाध्यवसाय स्थान हो है। ते कहा ?

सो कहिये है – ज्ञानावरणादि कर्मनि का वर्ग, वर्गणा, स्पर्धक, गुणहानि स्थानरूप तिष्ठता जो अविभाग प्रतिच्छेदनि का समूहरूप अनुभाग, ताके बध कौ कारणभूत जे परिणाम, तिनके स्थाननि का नाम अनुभागबधाध्यवसाय स्थान है। स्थितिबधाध्यवसाय स्थान अर अनुभागबधाध्यवसाय स्थाननि का विशेष व्याख्यान आगै कर्मकाड के अत अधिकार विषै लिखेगे। बहुरि तातै असख्यात-असख्यात वर्गस्थान जाइ निगोद शरीरनि की उत्कृष्ट सख्या का वर्गशलाका अर अर्धच्छेद अर प्रथम मूल हो है।

यातै एक स्थान जाइ निगोद शरीरनि की उत्कृष्ट सख्या हो है। स्कध, अडर आवास, पुलवी, देह - ए पाच असख्यात लोक तै लगाइ असख्यात लोक गुणे क्रम तै है। तातै पाच जायगा असख्यात लोक माडि परस्पर गुणै जो प्रमाण होइ, तेती लोक विषै निगोद शरीरनि की उत्कृष्ट सख्या है। बहुरि तातै असख्यात लोक असख्यात लोक मात्र वर्गस्थान जाइ निगोद काय स्थिति की वर्गशलाका अर अर्धच्छेद अर प्रथम मूल हो है, याका एक बार वर्ग कीए निगोद काय की स्थिति हो है, सो निगोद शरीररूप परिणमे जे पुद्गल स्कध, ते उत्कृष्टपनै निगोद शरीरपना कौं जेते काल न

छोडै, तिस काल के समयनि का प्रमाण जानना । इहां निगोद जीव निगोद पर्याय कौ छोडि अन्य पर्याय उत्कृष्टपनै यावत् काल न धरै, तिस काल का ग्रहण न करना, जातै सो काल अढाई पुद्गल परिवर्तन परिमाण है, सो अनंत है, तातै ताका इहा ग्रहण नाही । बहुरि तातै असख्यात असख्यात वर्गस्थान जाइ, उत्कृष्ट योग स्थाननि के अविभाग प्रतिच्छेदनि का वर्गशलाका अर अर्धच्छेद अर प्रथम मूल हो है । याका एक बार वर्ग कीए एक-एक समान प्रमाणरूप चय करि अधिक असे जो जगतश्रेणी के असख्यातवें भाग प्रमाण योग स्थान है, तिनिविषै जो उत्कृष्ट योग स्थान है, ताके अविभाग प्रतिच्छेदनि का प्रमाण हो है । ते लोक प्रमाण जे एक जीव के प्रदेश, तिनिविषै कर्म-नोकर्म पर्यायरूप परिणमने को योग्य जे तेइस वर्गणानि विषै कार्माण वर्गणा अर आहार वर्गणा, तिनिकौ तिस कर्म-नोकर्म पर्यायरूप परिणमने विषै प्रकृतिबध अर प्रदेशबध का कारणभूत जानने । बहुरि तातै अनतानत वर्गस्थान जाइ केवलज्ञान का चौथा मूल का घन का घन हो है, सो केवलज्ञान का प्रथम मूल अर चतुर्थ मूल कौ परस्पर गुणे जो प्रमाण होइ, तीहि मात्र है । जैसे अकसदृष्टि करि केवलज्ञान का प्रथम पणट्ठी (६५५३६), ताका प्रथम मूल दोय सै छप्पन, चतुर्थ मूल दोय, इनिकौ परस्पर गुणे पाच सै बारह होई, चतुर्थ मूल दोय का घन आठ, ताका घन पाच सै बारह हो है, सो यहु द्विरूप घनाघनधारा का अतस्थान है. यातै अधिक का घनाघन कीए केवलज्ञान ते उल्लंघन हो है, सो है नही । बहुत कहने करि कहा ? द्विरूप वर्गधारा विषै जिस-जिस स्थान विषै जिस-जिस राशि का वर्ग ग्रहण कीया, तिस-तिस राशि को तिस-तिस स्थान विषै नव जायगा माडि, परस्पर गुणे इस द्विरूप घनाघन धारा विषै प्रमाण हो है । इस धारा के सर्वस्थान च्यारि घाटि केवलज्ञान का वर्गशलाका मात्र है । असै इहा सर्वधारा अर द्विरूपवर्गादिक तीन धारानि का प्रयोजन जानि विशेष कथन कह्या ।

अब शेष सम, विषम, कृति, अकृति, कृतिमूल, अकृतिमूल, घन, अघन, घनमूल अघनमूल इन धारानि का विशेष प्रयोजन न जानि सामान्य कथन कीया, जो इनिका विशेष जान्या चाहै ते त्रिलोकसार विषै बृहद्धारा परिकर्म नाम ग्रथ विषै जानहु ।

अब उपमा मान आठ प्रकार का वर्णन करिए है। अथ एक, दोय गणना करि कहने कौ असमर्थ रूप असा जो राशि, ताका कोई उपमा करि प्रतिपादन, सो उपमा मान है । तिसरूप प्रमाण (तिस उपमा मान के) आठ प्रकार हैं । १. पल्य, २ सागर,

३ सूच्यगुल, ४ प्रतरागुल, ५ घनागुल, ६ जगत श्रेणी, ७ जगत्प्रतर ८ जगद्धन। तहा पल्य तीन प्रकार है – व्यवहार पल्य, उद्धार पल्य, अद्धा पल्य । तहा पहिला पल्य करि बालनि की सख्या कहिए है । दूसरा करि द्वीप-समुद्रनि की सख्या वर्णिए है । तीसरा करि कर्मनि की वा देवादिकनि की स्थिति वर्णित है । अब परिभाषा का कथनपूर्वक तिनि पल्यनि का स्वरूप कहिए है ।

जो तीक्ष्ण शस्त्रनि करि भी छेदने भेदने मोडने को समर्थ न हूजे अैसा है, बहुरि जल-अग्नि आदिनि करि नाश कौं न प्राप्त हो है, बहुरि एक-एक तो रस, वर्ण, गध अर दोय स्पर्श अैसे पाच गुण सयुक्त है; बहुरि शब्दरूप स्कध का कारण है, आप शब्द रहित है, बहुरि स्कध रहित भया है, बहुरि आदि-मध्य-अत जाका कह्या न जाइ अैसा है, बहुरि बहु प्रदेशनि के अभाव तै अप्रदेशी है, बहुरि इद्रियनि करि जानने योग्य नही है, बहुरि जाका विभाग न होइ अैसा है – अैसा जो द्रव्य, सो परमाणु कहिए। सो परमाणु अंतरग बहिरग कारणनि तै अपने वर्ण, रस,गध, स्पर्शनि करि सदा काल पूरे कहिए जुडै अर गलै कहिए बिखरै, तब स्कधवान आपकौं करै है, तातै पुद्गल अैसा नाम है ।

बहुरि तिनि अनतानत परमाणुनि करि जो स्कध होइ, सो अवसन्नासन्न नाम धारक है । बहुरि तातै सन्नासन्न, तृटरेणु, त्रसरेणु, उत्तम भोगभूमिवालौं का बाल का अग्रभाग, रथरेणु, मध्यम भोगभूमिवालो का बाल का अग्रभाग, जघन्य भोगभूमिवालो का बाल का अग्रभाग, कर्मभूमिवालो का बाल का अग्रभाग, लीख, सरिसौं, यव, अगुल ए बारह पहिला पहिला तै क्रम करि आठ-आठ गुणे है ।

तहा अगुल तीन प्रकार है उत्सेधागुल, प्रमाणागुल, आत्मागुल । तहा पूर्वोक्त क्रम करि उपज्या सो उत्सेधागुल है । याकरि नारकी, तिर्यच, मनुष्य, देवनि के शरीर वा भवनवासी आदि च्यारि प्रकार देवनि के नगर अर मदिर इत्यादिकनि का प्रमाण वर्णन करिए है । बहुरि तिस उत्सेधागुल तै पाच सौ गुणा जो भरत क्षेत्र का अवसर्पिणी काल विषै पहला चक्रवर्ती का अगुल है, सोई प्रमाणागुल है । याकरि द्वीप, समुद्र, पर्वत, वेदी, नदी, कुड, जगती, वर्ष इत्यादिकनि का प्रमाण वर्णिए है । बहुरि भरत,ऐरावत क्षेत्र के मनुष्यनि का अपने-अपने वर्तमान काल विषै जो अगुल सो आत्मागुल है । याकरि झारी, कलश, आरसा, धनुष, ढोल, जूडा, शय्या, गाडा, हल,मूसल, शक्ति, शौल, सिंहासन, बाण, चमर, दुदुभि, पीठ, छत्र, मनुष्यनि के मदिर

वा नगर वा उद्यान इत्यादिकनि का प्रमाण वर्णिए है । ऐसे जहाँ जैसा सभवै, तहा तैसा ही अगुल करी निपज्या प्रमाण जानना ।

बहुरि छह अगुलनि करि पद होइ है। बहुरि तातै दोय पाद की एक विलस्ति, दोय विलस्ति का एक हाथ, दोय हाथ का बीख, दोय वीख का एक धनुष, बहुरि दोय हजार धनुषनि करि एक कोश, तिन च्यारि कोशनि करि एक योजन हो है । सो प्रमाणागुलनि करि निपज्या असा एक योजन प्रमाण औडा वा चौडा असा एक गर्त – खाडा करना ।

चौडा १ योजन औंडा १ योजन
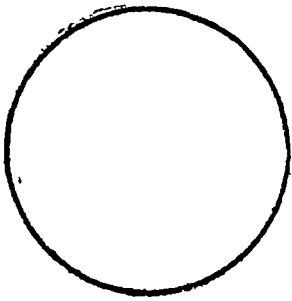
सो गर्त उत्तम भोगभूमि विषै निपज्या जो जन्म तै लगाइ एक आदि सात दिन पर्यंत ग्रहे जे मीढा का युगल, तिनिके बालनि का अग्रभाग, तिनिकी लबाई चौडाईनि करि अत्यत गाढा भूमि समान भरना, सिघाऊ न भरना । केते बाल माये सो प्रमाण ल्याइये है —

विक्खंभवग्गदहगुण, करणी वट्टस्स परिरयो होदि ।
विक्खंभचउत्थाभे, परिरयगुणिदे हवे गुणियं ।।

इस करण सूत्र कर गोल क्षेत्र का फल प्रथम ही ल्याइए है। या सूत्र का अर्थ – व्यास का वर्ग कौ दश गुणा कीए वृत्त क्षेत्र का करणिरूप परिधि हो है । जिस राशि का वर्गमूल ग्रहण करना होइ, तिस राशि कौ करण कहिए । बहुरि व्यास का चौथा भाग करि परिधि कौ गुणै क्षेत्रफल हो है । सो इहा व्यास एक योजन, ताका वर्ग भी एक योजन, ताकौ दश गुणा कीए दश योजन प्रमाण करणिरूप परिधि होइ सो याका वर्गमूल ग्रहण करना । सो नव का मूल तीन अर अवशेष एक रह्या, ताकौ दूणा मूल का भाग देना, सो एक का छठा भाग भया । इनिकौ समच्छेद करि मिलाए उगणीस का छठा भाग प्रमाण परिधि भया $\left(\frac{१९}{६}\right)$ याकौ व्यास का चौथा भाग पाव योजन $\left(\frac{१}{४}\right)$, ताकरि गुणै उगणीस का चौबीसवा भाग प्रमाण $\left(\frac{१९}{२४}\right)$ क्षेत्रफल भया । बहुरि याकौ वेध एक योजन करि गुणै, उगणीस का चौबीसवा भाग प्रमाण ही घन क्षेत्रफल भया । अब इहाँ एक योजन के आठ हजार (८०००) धनुष, एक धनुष का छिनवै (९६) अगुल, एक प्रमाण अगुल के पाच सै (५००) उत्सेधागुल,

आगै एक-एक के आठ-आठ यव, जू, लीख, कर्मभूमिवालो का वाल का अग्रभाग, जघन्य भोगभूमिवालो का वालाग्र, मध्यम भोगभूमिवालो का वालाग्र, उत्तम भोग भूमिवालो का बालाग्र होइ है। सो इहाँ घन राशि का गुणकार-भागहार घनरूप ही हो है। तातै इन सबनि का घनरूप गुणकार करनै कौं उगणीस का चौवीसवा भाग माडि आगै आठ हजार आदि तीन-तीन जायगा माडि परस्पर गुणन करना। १९/२४

८००० । ८००० । ८००० । ९६ । ९६ । ९६ । ५०० । ५०० । ५०० । ८ । सो राशि का गुणकार वा भागहार का अपवर्तनादि विधान करि गुणै व्यवहार पल्य के सर्व वालनि के खडनि का प्रमाण अक अनुक्रम करि बाही तरफ तै लगाइ पहले अठारह बिंदी अर पीछै दोय, नव, एक, दोय, एक, पाच, नव, च्यारि, सात, सात, सात, एक, तीन, बिंदी, दोय, आठ, बिंदी, तीन, बिंदी, तीन, छह, दोय, पाच, च्यारि, तीन, एक, च्यारि ए अक लिखने ४१३४५२६३०३०८२०३१७७७४९५१२१९२०००००००००००००००००० । इनि अकनि करि च्यारि सै तेरा कोडाकोडि कोडाकोडि कोडाकोडि पैतालिस लाख छब्बीस हजार तीन सै तीन कोडाकोडि कोडाकोडि कोडि आठ लाख वीस हजार तीन सै सत्रह कोडाकोडि कोडाकोडि सतहत्तरि लाख गुणचास हजार पाच सै बारा कोडाकोडि कोडि उगणीस लाख बीस हजार कोडाकोडि प्रमाण हो है, इतने रोम खड सो व्यवहार पल्य के जानने। बहुरि तिस एक-एक रोम खड कौ सौ-सौ वर्ष गए काढिए, जितने काल विषै वे सर्व रोम पूर्ण होइ, सो सर्व व्यवहार पल्य का काल जानना।

सो इहा एक वर्ष के दो अयन, एक अयन का तीन ऋतु, एक ऋतु का दोय मास, एक मास का तीस अहोरात्र, एक अहोरात्र के तीस मुहूर्त, एक मुहूर्त की सख्यात आवली, एक आवली के जघन्य युक्तासख्यात प्रमाण समय, सो क्रम तै गुणन कीये तिस काल के समयनि का प्रमाण हो है।

बहुरि तिस एक-एक रोम के अग्रभाग का असख्यात कोडि वर्ष के जेते समय होइ, तितने-तितने खड कीए दूसरा उद्धार पल्य के रोम खड होइ है। इहा याके समय भी इतने ही जानने। सो ए कितने है? सो ल्याइये है – विरलन राशि कौं देय राशि का अर्धच्छेदनि करि गुणै उत्पन्न राशि के अर्धच्छेदनि का प्रमाण हो है। तातै अद्धापल्य का अर्धच्छेद राशि कौ अद्धापल्य का अर्धच्छेद राशि ही करि गुणै सूच्यगुल का

अर्धच्छेद राशि हो है । बहुरि याकौ तिगुणी कीए घनागुल का अर्धच्छेद राशि हो है। बहुरि याकरि अद्धापल्य का अर्धच्छेद राशि का असख्यातवा भाग कौ गुणै जगत् श्रेणी का अर्धच्छेद राशि हो है । यामैं तीन घटाए एक राजू के अर्धच्छेदनि के प्रमाण हो है । इहा एक अर्धच्छेद तो बीचि मेरु के मस्तक विषै प्राप्त भया । तीहि सहित लाख योजननि के सख्यात अर्धच्छेद भये एक योजन रहै । अर एक योजन के सात लाख अडसठि हजार अगुल होइ, सो इनके सख्याते अर्धच्छेद भये एक अगुल होय, सो ये सर्व मिलि संख्याते अर्धच्छेद भए, तिनिकरि अधिक एक सूच्यगुल रही थी, ताके अर्धच्छेदनि का जो प्रमाण होइ, सो घटाइए, तब समस्त द्वीप-समुद्रनि की सख्या हो है । सो घटावना कैसै होइ ? इहा तिगुणा सूच्यगुल का अर्धच्छेद प्रमाण गुणकार है, सो इतने घटावने होइ, तहा अद्धापल्य के अर्धच्छेदनि का असख्यातवां भाग प्रमाण मे सौं एक घटाइए तौ इहा सख्यात अधिक सूच्यगुल का अर्धच्छेद घटावना होइ, तो कितना घटाइए ? असै त्रैराशिक करि किछू अधिक त्रिभाग घटाइए, असै साधिक एक का तीसरा भाग कर हीन पल्य के अर्धच्छेद का असख्यातवा भाग कों पल्य के अर्धच्छेद के वर्ग तै तिगुणा प्रमाणकरि गुणै समस्त द्वीप-समुद्रनि की सख्या हो है । सो इतने ए द्वीप-समुद्र अढाई उद्धार सागर प्रमाण है,तिनके पचीस कोडाकोडि पल्य भए, सो इतने पल्य की पूर्वोक्त संख्या होइ, तौ एक उद्धार पल्य की केतो होइ ? असै त्रैराशिक कीए पूर्वोक्त द्वीप-समुद्रनि की सख्या कौ पचीस कोडाकोडि का भाग दीजिए, तहा जो प्रमाण आवै तितनी उद्धार पल्य के रोम खडनि की सख्या जानना । बहुरि इनि एक-एक रोम खडनि के असख्यात वर्ष के जेते समय होहि, तितने खड कीए जेते होइ, तितने अद्धापल्य के रोम खंड है, ताके समय भी इतने ही हैं । जातै एक-एक समय विषै एक-एक रोम खड काढै सर्व जेते कालकरि पूर्ण होइ, सो अद्धा पल्य का काल है।

ते असख्यात वर्ष के समय कितने है ?

सो कहिए है – उद्धार पल्य के सर्व रोम खडनि का प्रत्येक असख्यात वर्ष समय प्रमाण खड कीए एक अद्धा पल्य प्रमाण होइ, तो एक रोम खडनि के खडनि का केता प्रमाण होइ ? असैं त्रैराशिक करि जितना लब्ध राशि का प्रमाण होइ, तितने एक उद्धार पल्य का रोम खड के खडनि का प्रमाण जानना । बहुरि अद्धा पल्य है, सो द्विरूप वर्गधारा मे अपने अर्धच्छेद राशि तै ऊपरि असख्यात वर्गस्थान जाइ उपजै है । याको तिगुणा पल्य का अर्धच्छेद राशि का वर्ग कौ किंचिदून पल्य का अर्धच्छेदनि का असख्यातवा भाग करि गुणै जो प्रमाण आवै, ताकौं पचीस कोडाकोडि

का भाग दीए जो प्रमाण होइ, ताका भाग दीए जितने पावै, तितने असख्यात वर्षनि के समय जानने । इस प्रमाण करि तिस उद्धार पल्य के रोम खडनि कौ गुणें श्रद्धा पल्य के रोमनि की सख्या आवै है । अैसै तीन प्रकार पल्य कहे । जैसे खास विषै अन्न भरिए, तैसे इहा गर्त विषै रोम भरि प्रमाण कह्या, ताते याका नाम पल्योपम कह्या है ।

बहुरि इनिकौं प्रत्येक दश कोडाकोडि करि गुणें अपने-अपने नाम का सागर होइ । दश कोडाकोडि व्यवहार पल्य करि व्यवहार सागर, उद्धार पल्य करि उद्धार सागर, अद्धा पल्य करि अद्धा सागर जानना ।

इहा लवण समुद्र की उपमा है, ताते याका नाम सागरोपम है, सो याकी उत्पत्ति कहिए है – लवण समुद्र की छेहड की सूची पाच लाख योजन ५००००० (५ ल) आदिकी सूची एक लाख योजन (१०००००) इनिकौं मिलाय ६ ल आधा व्यास का प्रमाण लाख योजन करि गुणिये, तब ६ ल ल । बहुरि याके वर्ग को दशगुणा करिये, तब करणिरूप सूक्ष्म क्षेत्र होइ ६ ल ल ६ ल ल १० । याका वर्गमूल प्रमाण लवण समुद्र का सूक्ष्म क्षेत्रफल है । बहुरि तिस करणिरूप लवण समुद्र के क्षेत्रफल कौ पल्य का गर्त एक योजन मात्र, ताका करणिरूप सूक्ष्म क्षेत्रफल एक योजन का वर्ग दशगुणा कौ योजन का चौथा भाग के वर्ग का भाग दीए जो होइ, तीहि प्रमाण है । ताका भाग देना $\frac{६ ल ल}{\frac{१}{४}}$ $\frac{६ ल ल}{\frac{१}{४}}$ $\frac{१०}{१०}$ । सो इहा दश करणि करि दश करणि का अपवर्तन करना । बहुरि भागहार का भागहार राशि का गुणकार होइ, इस न्याय करि भागहार दोय जायगा च्यारि करि राशि का दोय जायगा छक्का का गुणकार करना २४ ल ल २४ ल ल, तब पल्य गर्तनि के प्रमाण का वर्ग होइ । याका वर्गमूल ग्रहै सर्व गर्तनि का प्रमाण लाख गुणा चोबीस लाख प्रमाण हो है । याकौ हजार योजन का औडापन करि गुणें सर्व लवण समुद्र विषै पल्यगर्त सारिखे गर्तनि का प्रमाण हो है – २४ लल १००० । याकी अपने-अपने विवक्षित पल्य के रोम खडनि करि गुणें गर्तनि के रोमनि का प्रमाण हो है । बहुरि छह रोम जितना क्षेत्र रोकै, तितने क्षेत्र का जल निकासने विषै पचीस समय व्यतीत होय, तौ सर्व रोमनि के क्षेत्र का जल निकासने मे केते समय होय ? अैसै त्रैराशिक करना । तहा प्रमाण राशि रोम छह (६), फल राशि समय पचीस (२५), इच्छा राशि सर्व

गर्तनि के रोमनि का प्रमाण। तहा फल करि इच्छा कौ गुणि प्रमाण का भाग दीए समयनि का प्रमाण आवै। बहुरि पूर्वोक्त अपना-अपना समयनि का प्रमाणकरि एक पल्य होय, तौ इतने इहा समय भए, तिनके केते पल्य होय ? औसै त्रैराशिक कीए, दश कोडाकोडि पल्यनि का प्रमाण हो है। तातै दश कोडाकोडि पल्यनि के समूह का नाम सागर कह्या है। बहुरि अद्धा पल्य का अर्धच्छेद राशि का विरलन करि एक-एक करि बखेरि एक-एक रूप प्रति अद्धा पल्य कौ देइ परस्पर गुणन कीए सूच्यगुल उपजै है। एक प्रमाणागुल का प्रमाण लबा, एक प्रदेश प्रमाण चौडा-ऊचा क्षेत्र का इतने प्रदेश जानने। जैसै पल्य का प्रमाण सोलह, ताके अर्धच्छेद च्यारि, तिनिका विरलन करि। १। १। १। १। एक-एक प्रति-प्रति पल्य सोलह को देइ, १६। १६। १६। १६।
१ १ १ १
परस्पर गुणै पणट्ठी प्रमाण (६५५३६) होइ, तैसै इहा जानना। बहुरि सूच्यगुल का जो वर्ग सो प्रतरागुल है। एक अगुल चौडा, एक अगुल लम्बा, एक प्रदेश ऊचा क्षेत्र का इतना प्रदेशनि का प्रमाण है। जैसै पणट्ठी कौ पणट्ठी करि गुणै बादाल होइ, तैसै इहा सूच्यंगुल कौ सूच्यंगुल करि गुणै प्रतरागुल हो है। बहुरि सूच्यगुल का घन, सो घनागुल है। एक अगुल चौडा, एक अंगुल लम्बा, एक अंगुल ऊंचा क्षेत्र का इतना प्रदेशनि का प्रमाण है। जैसै बादाल को पणट्ठी करि गुणै पणट्ठी का घन होई, तैसै प्रतरागुल को सूच्यगुल करि गुणै घनागुल हो है। बहुरि अद्धापल्य के जेते अर्धच्छेद, तिनिका असख्यातवा भाग का जो प्रमाण, ताकौ विरलनि करि एक-एक प्रति घनागुल देय परस्पर गुणै जगत्श्रेणी उपजै है। क्षेत्रखडन विधान करि हीनाधिक कौ समान कीये, लोक का लम्बा श्रेणीबद्ध प्रदेशनि का प्रमाण इतना है। जातै जगत्श्रेणी का सातवा भाग राजू है। सात राजू का घनप्रमाण लोक है। जैसै पल्य का अर्धच्छेद च्यारि, ताका असख्यातवा भाग दोय, सो दोय जायगा पणट्ठी गुणा बादाल कौ माडि परस्पर गुणै विवक्षित प्रमाण होइ, तैसै इहा भी जगत्श्रेणी का प्रमाण जानना। बहुरि जगत्श्रेणी का वर्ग, सो जगत्प्रतर है। क्षेत्रखडन विधान करि हीनाधिक समान कीए लम्बा-चौडा लोक के प्रदेशनि का इतना प्रमाण है।

भावार्थ यहु – यह जगत्श्रेणी को जगत्श्रेणी करि गुणै प्रतर हो है। बहुरि जगत्श्रेणी का घन सो लोक है। लम्बा, चौडा, ऊंचा, सर्व लोक के प्रदेशनि का प्रमाण इतना है।

भावार्थ यहु – जगत्प्रतर कौ जगत्श्रेणी करि गुणै लोक का प्रमाण हो है।

अब इनके अर्धच्छेद अर वर्गशलाकनि का प्रमाण कहिए है – तहा प्रथम अद्धा पल्य के अर्धच्छेद द्विरूप वर्गधारा विषै अद्धा पल्य के स्थान तै पहिले असख्यात वर्ग स्थान नीचै उतरि जो राशि भया, तीहि प्रमाण है। बहुरि अद्धा पल्य की वर्गशलाका तिसही द्विरूप वर्गधारा विषै तिस पल्य ही के अर्धच्छेद स्थान तै पहले असख्यात वर्गस्थान नीचै उतरि उपजी है। बहुरि सागरोपम के अर्धच्छेद सर्वधारा विषै पाइए है, ते पल्य के अर्धच्छेदनि विषै गुणकार जो दश कोडाकोडि, ताके सख्यात अर्धच्छेद जोडै जो प्रमाण होइ, तितने है। बहुरि ताकी वर्गशलाका इहा पल्य राशि तै गुणकार सख्यात ही का है, तातै न बनै है। बहुरि सूच्यगुल है सो द्विरूप वर्गधारा विषै प्राप्त है, सो यहु राशि विरलन देय का अनुक्रम करि उपज्या है, तातै याके अर्धच्छेद अर वर्गशलाका सर्वधारा आदि यथासभव धारानि विषै प्राप्त है, द्विरूप वर्गधारा आदि तीन धारानि विषै प्राप्त नाही है। तहा विरलन राशि पल्य के अर्धच्छेद, इनिकौ देय राशि पल्य, ताके अर्धच्छेदनि करि गुणै, जो प्रमाण होइ, तितने तौ सूच्यगुल के अर्धच्छेद है। बहुरि द्विरूप वर्गधारा विषै पल्यरूप स्थान तै ऊपरि सूच्यगुल का विरलन राशि जो पल्य के अर्धच्छेद, ताके जेते अर्धच्छेद हैं तितने वर्ग-स्थान जाइ सूच्यगुल स्थान उपजै हैं। तातै पल्य की वर्गशलाका का प्रमाण तै सूच्य-गुल की वर्गशलाका का प्रमाण दूणा है। तातै पल्य पर्यन्त एक बार पल्य की वर्ग-शलाका प्रमाण स्थान भए पीछै पल्य के अर्धच्छेदनि के अर्धच्छेदनि का जो प्रमाण होय, सोई पल्य की वर्गशलाका का प्रमाण, सो पल्य तै ऊपरि दूसरी बार पल्य की वर्गशलाका प्रमाण स्थान भए सूच्यगुल हो है। तातै दूणी पल्य की वर्गशलाका प्रमाण सूच्यगुल की वर्गशलाका कही। अथवा विरलन राशि पल्य का अर्धच्छेद, तिनिके जेते अर्धच्छेद, तिनिविषै देय राशि पल्य, ताका अर्धच्छेदनि के अर्धच्छेदनि कौ जोडै, सूच्यगुल की वर्गशलाका हो है। सो पल्य के अर्धच्छेदनि का अर्धच्छेद प्रमाण पल्य की वर्गशलाका है। सो इहा भी दूणी भई, सो या प्रकार भी पल्य की वर्गशलाका तै दूणी सूच्यगुल की वर्गशलाका है। बहुरि प्रतरागुल है, सो द्विरूप वर्गधारा विषै प्राप्त है। ताकी वर्गशलाका अर्धच्छेद यथा योग्य धारानि विषै प्राप्त जानने। तहा **'वग्गादुवरिमवग्गे दुगुणा-दुगुणा हवंति अद्धछिदा'** इस सूत्र करि वर्ग तै ऊपरला वर्ग स्थान विषै दूणा-दूणा अर्धच्छेद कहे, तातै इहा सूच्यगुल के अर्धच्छेदनि तै दूणे प्रतरागुल के अर्धच्छेद जानने। अथवा गुण्य अर गुणकार का अर्धच्छेद जोडै राशि का अर्ध-च्छेद होइ, तातै इहा सूच्यगुल गुण्य कौ सूच्यगुल का गुणकार है, तातै दोय सूच्यगुल

के अर्धच्छेद मिलाए भी सूच्यगुल के अर्धच्छेदनि ते दूणे प्रतरागुल के अर्धच्छेद हो है। बहुरि **'वग्गसला रूवहिया'** इस सूत्र करि वर्गशलाका ऊपरला स्थान विषै एक अधिक होइ, तातै इहा सूच्यगुल के अनतर प्रतरागुल का वर्गस्थान है, तातै सूच्यगुल की वर्गशलाका तै एक अधिक प्रतरागुल की वर्गशलाका है । बहुरि घनागुल है, सो द्विरूप घनधारा विषै प्राप्त है, सो यहु अन्य धारा विषै उत्पन्न है, सो **'तिगुणा तिगुणा परट्ठाणे'** इस सूत्र करि अन्य धारा का ऊपरला स्थान विषै तिगुणा-तिगुणा अर्धच्छेद होहि, तातै सूच्यगुल के अर्धच्छेदनि तै तिगुणे घनागुल के अर्धच्छेद है । अथवा तीन जायगा सूच्यगुल माडि परस्पर गुणै, घनागुल हो है । तातै गुण्य-गुणकार रूप तीन सूच्यगुल, तिनका अर्धच्छेद जोडै भी घनागुल के अर्धच्छेद तितने ही हो है । बहुरि **'परसम'** इस सूत्र करि अन्य धारा विषै वर्गशलाका समान हो है । सो इहा द्विरूप वर्गधारा विषै जेथवा स्थान विषै सूच्यगुल है, तेथवा ही स्थान विषै द्विरूप घनधारा विषै घनागुल है । तातै जेती सूच्यगुल की वर्गशलाका, तितनी ही घनागुल की वर्गशलाका जानना । बहुरि जगत्श्रेणी है, सो द्विरूप घनधारा विषै प्राप्त है, सो याके अर्धच्छेद वर्गशलाका अन्य धारा विषै उपजै है । तहा **'विरलज्जमाणरासिं दिण्णस्सद्धछिदीहिं संगुणिदे लद्धछेदा होंति'** इस सूत्र करि विरलनरूप राशि कौ देय राशि का अर्धच्छेदनि करि गुणै लब्ध राशि के अर्धच्छेद होहि । तातै इहा विरलन राशि पल्य का अर्धच्छेदनि का असख्यातवा भाग, ताको देय राशि घनागुल, ताके अर्धच्छेदनि करि गुणै जो प्रमाण होइ, तितने जगत् श्रेणी के अर्धच्छेद है । बहुरि दूणा जघन्य परीतासख्यात का भाग अद्धा पल्य की वर्गशलाका कौ दीए जो प्रमाण होइ, तितना विरलन राशि का अर्धच्छेद है । ताकौ देय राशि घनागुल की वर्गशलाका विषै जोडै जो प्रमाण होइ, तितनी जगत्श्रेणी की वर्गशलाका है । अथवा जगत्श्रेणी विषै देय राशि घनागुल, तीहिरूप द्विरूप घनधारा का स्थान तै ऊपरि विरलन राशि पल्य का अर्धच्छेदनि का असख्यातवा भाग, ताके जेते अर्धच्छेद होइ, तितने वर्गस्थान जाइ जगत्श्रेणीरूप स्थान उपजै है । तातै भी जगत्श्रेणी की वर्गशलाका पूर्वोक्त प्रमाण जाननी ।

सो जगत्श्रेणी विषै विरलन राशि का प्रमाण कितना है ?

सो कहिए है, अद्धा पल्य का जो अर्धच्छेद राशि ताका प्रथम वर्गमूल, द्वितीय वर्गमूल इत्यादि क्रम तै दूणा जघन्य परीतासख्यात के जेते अर्धच्छेद होहि, तितने

वर्गमूल करने, सो द्विरूप वर्गधारा के स्थाननि विषै पल्य का अर्धच्छेदरूप स्थान तै नीचै तितने स्थान आइ अत विषै जो वर्गमूलरूप स्थान होइ, ताके अर्धच्छेद दूणा जघन्य परीतासख्यात का भाग पल्य की वर्गशलाका को दीये जो प्रमाण होइ, तितने होइ । बहुरि **'तम्मित्तदुगे गुणेरासी'** इस सूत्र करि अर्धच्छेदनि का जेता प्रमाण, तितने दुवे माडि परस्पर गुणै राशि होइ, सो इहा पल्य की वर्गशलाका का प्रमाण भाज्य है, सो तितने दुवे माडि परस्पर गुणै तो पल्य का अर्धच्छेद राशि होय, अर दूणा जघन्य परीतासख्यात का प्रमाण भागहार है, सो तितने दुवे माडि परस्पर गुणै यथासभव असख्यात होइ । असै तिस अत के मूल का प्रमाण पल्य के अर्धच्छेदनि के असख्यातवे भाग प्रमाण जानना, सोई इहा जगत्श्रेणी विषै विरलन राशि है । बहुरि जगत्प्रतर है, सो द्विरूप घनधारा विषै प्राप्त है, सो याके अर्धच्छेद वर्गशलाका अन्य धारानि विषै प्राप्त जानने । तहा जगत्श्रेणी के अर्धच्छेदनि तै दूणे जगतप्रतर के अर्धच्छेद है । **'वग्गसला रूवहिया'** इस सूत्र करि जगत्श्रेणी की वर्गशलाका तै एक अधिक जगत् प्रतर की वर्गशलाका है । बहुरि घनरूप लोक, सो द्विरूप घनाघन धारा विषै उपजै है । तहा **'तिगुणा तिगुणा परट्ठाणे'** इस सूत्र करि द्विरूप घनधारा विषै प्राप्त जो जगत्-श्रेणी, ताके अर्धच्छेदनि तै लोक के अर्धच्छेद तिगुणे जानने । अथवा तीन जायगा जगत्श्रेणी माडि परस्पर गुणै लोक होइ, सो गुण्य-गुणकार तीन जगत्श्रेणी के अर्ध-च्छेद जोडै भी तितने ही लोक के अर्धच्छेद हो है । बहुरि **'परसम'** इस सूत्र करि जगत् श्रेणी की वर्गशलाका मात्र ही लोक की वर्गशलाका है । इहा प्रयोजनरूप गाथा सूत्र कहिये है । उक्त च –

> गुणयारद्धच्छेदा, गुणिज्जमाणस्स अद्धच्छेदजुदा ।
> लद्धस्सद्धच्छेदा, अहियस्सच्छेदणा णत्थि ॥

याका अर्थ – गुणकार के अर्धच्छेद गुण्यराशि के अर्धच्छेद सहित जोडै लब्ध-राशि के अर्धच्छेद होहि । जैसै गुणकार आठ, ताके अर्धच्छेद तीन अर गुण्य सोलह, ताके अर्धच्छेद च्यारि, इनिकौ जोडै लब्धराशि एक सो अठ्ठाईस के अर्धच्छेद सात हो है । असै ही गुणकार दश कोडाकोडि के सख्यात अर्धच्छेद गुण्यराशि पल्य, ताके अर्ध-च्छेदनि मे जोडै, लब्धराशि सागर के अर्धच्छेद हो है । बहुरि अधिक के छेद नाही हैं, काहेतै सो कहिये है, अर्धच्छेदनि के अर्धच्छेद प्रमाण वर्गशलाका होइ, सो इहा पल्य के अर्धच्छेदनि तै सख्यात अर्धच्छेद सागर के अधिक कहे । सो इनि अधिक अर्धच्छेदनि के

अर्धच्छेद होइ, परन्तु वर्गशलाकारूप प्रयोजन की सिद्धि नाही, तातै अधिक के अर्धच्छेद नाही करने असा कह्या, याही तै सागर की वर्गशलाका का अभाव है । उक्त च –

भज्जस्सद्धछेदा, हारद्धछेदरणाहि परिहीणा ।
अद्धच्छेदसलागा, लद्धस्स हवति सव्वत्थ ।।

अर्थ – भाज्यराशि के अर्धच्छेद भागहार के अर्धच्छेदनि करि हीन करिए, तब लब्धराशि की अर्धच्छेद शलाका सर्वत्र हो है । जैसै एक सौ अट्ठाईस के भाज्य के अर्धच्छेद सात, इनमे भागहार आठ के तीन अर्धच्छेद घटाए लब्धराशि सोलह के च्यारि अर्धच्छेद हो है, असै ही अन्यत्र जानना ।

विरलज्जमाणरासिं, दिण्णस्सद्धच्छिदीहिं संगुणिदे ।
अद्धच्छेदा होंति हु, सव्वत्थुपण्णरासिस्स ।।

अर्थ – विरलन राशि कौ देय राशि के अर्धच्छेदनि करि गुणै उत्पन्न राशि के अर्धच्छेद सर्वत्र हो है । जैसै विरलन राशि च्यारि, ताकौ देय राशि सोलह के अर्धच्छेद च्यारि करि (गुणै) उत्पन्न राशि पणट्टी के सोलह अर्धच्छेद हो है । असै इहा भी पल्य अर्धच्छेद प्रमाण विरलन राशि कौ देय राशि पल्य, ताके अर्धच्छेदनि करि गुणै उत्पन्न राशि सूच्यगुल के अर्धच्छेद हो है । असै ही अन्यत्र जानना ।

विरलिदरासिच्छेदा, दिण्णद्धच्छेदच्छेदसंमिलिदा ।
वग्गसलागपमाणं, होंति समुप्पण्णरासिस्स ।।

अर्थ – विरलन राशि के अर्धच्छेद देयराशि के अर्धच्छेदनि के अर्धच्छेदनि करि सहित जोडै उत्पन्न राशि की वर्गशलाका का प्रमाण हो है । जैसै विरलन राशि च्यारि के अर्धच्छेद दोय अर देय राशि सोलह के अर्धच्छेद च्यारि, तिनिके अर्धच्छेद दोय, इनको मिलाए उत्पन्न राशि पणट्ठी की वर्गशलाका च्यारि हो है । असै ही विरलन राशि पल्य के अर्धच्छेद, तिनिके अर्धच्छेद तिनिविषै देय राशि पल्य, ताके अर्धच्छेदनि के अर्धच्छेद जोडै उत्पन्न राशि सूच्यगुल के वर्गशलाका का प्रमाण हो है। असै ही अन्यत्र जानना ।

दुगुणपरित्तासखेणवहरिदद्धारपल्लवग्गसला ।
विदंगुलवग्गसला, सहिया सेढिस्स वग्गसला ।।

अर्थ – दूणा जघन्य परीतासख्यात का भाग अद्धापल्य की वर्गशलाका कौ दीए जो प्रमाण होइ, तीहि करि सयुक्त घनागुल की वर्गशलाका का जो प्रमाण, तितनी जगत्श्रेणी की वर्गशलाका हो है ।

विरलिदरासीदो पुण, जेत्तियमेत्ताणि अहियरूवाणि ।
तेंसि अण्णोण्णहदी, गुणयारो लद्धरासिस्स ।।

अर्थ – विरलन राशि तै जेते अधिक रूप होइ, तिनिका परस्पर गुणन कीए लब्ध राशि का गुणकार होइ । जैसे च्यारि अर्धच्छेदरूप विरलन राशि अर तीन अर्धच्छेद अधिक राशि, तहा विरलन राशि के अर्धच्छेद प्रमाण दुवा माडि परस्पर गुणै २×२×२×२ सोलह १६ लब्ध राशि होइ । अर अधिक राशि तीन अर्धच्छेद प्रमाण दुवा माडि २×२×२ परस्पर गुणै आठ गुणकार होय, सो लब्धि राशि कौ गुणकार करि गुणै सात अर्धच्छेद जाका पाइए, अैसा एक सौ अट्ठाईस होइ । अैसै ही पल्य के अर्धच्छेद विरलन राशि, सो इतने दूवा माडि परस्पर गुणै लब्ध राशि पल्य होइ अर अधिक राशि सख्यात अर्धच्छेद, सो इतने दुवे माडि परस्पर गुणै दश कोडाकोडि गुणकार होइ । सो पल्य कौ दश कोडाकोडि करि गुणै सागर का प्रमाण हो है । अैसै ही अन्यत्र जानना ।

विरलिदरासीदो पुण, जेत्तियमेत्ताणि हीणरूवाणि ।
तेंसि अण्णोण्णहदी, हारो उप्पण्णरासिस्स ।।

अर्थ – विरलन राशि तै जेते हीनरूप होइ, तिनिका परस्पर गुणन कीए उत्पन्न राशि का भागहार होइ । जैसै विरलन राशि अर्धच्छेद सात अर हीनरूप अर्धच्छेद तीन, तहा विरलन राशिमात्र दुवा माडि २×२×२×२×२×२×२ परस्पर गुणै एक सौ अट्ठाईस उत्पन्न राशि होइ । बहुरि हीनरूप प्रमाण दुवा माडि २×२×२ परस्पर गुणै आठ भागहार राशि होइ, सो उत्पन्न राशि कौ भागहाररूप राशि का भाग दीए च्यारि अर्धच्छेद जाका पाइए अैसा सोलह हो है, अैसै ही अन्यत्र जानना । अैसै मान वर्णन कीया ।

सो अैसै मान भेदनि करि द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव का परिमाण कीजिए है, सो जहा द्रव्य का परिमाण होइ, तहा तितने पदार्थ जुदे-जुदे जानने ।

बहुरि जहा क्षेत्र का परिमाण होय, तहा तितने प्रदेश जानने ।

जहा काल का परिमाण होइ, तहा तितने समय जानने ।

जहा भाव का परिमाण होइ, तहा तितने अविभाग प्रतिच्छेद जानने ।

इहा दृष्टात कहिए है – जैसे हजार मनुष्य हैं, असा कहिए तहा वे हजार जुदे-जुदे जानने, तैसे द्रव्य परिमाण विषै जुदे-जुदे पदार्थ जानने ।

बहुरि जैसे यहु वस्त्र वीस हाथ है, तहा उस वस्त्र विषै वीस अंश जुदे-जुदे नाही, परन्तु एक हाथ जितना क्षेत्र रोकै, ताकी कल्पना करि वीस हाथ कहिए है । तैसे क्षेत्र परिमाण विषै जितना क्षेत्र परमाणु रोकै, ताकौ प्रदेश कहिए, ताकी कल्पना करि क्षेत्र का परिमाण कहिए हैं ।

बहुरि जैसे एक वर्ष के तीन सै छयासठि दिन-रात्रि कहिए, तहा अखंडित काल प्रवाह विषै अश है नाही, परन्तु सूर्य के उदय-अस्त होने की अपेक्षा कल्पना करि कहिए है । तैसे काल परिमाण विषै जितने काल करि परमाणु मद गति करि एक प्रदेश तै दूसरे प्रदेश कौ जाइ, तीहि काल को समय कहिए । तीहि अपेक्षा कल्पना करि काल का परिमाण कहिए है ।

बहुरि जैसे यहु सोला वानी का सोना है, तहा उस सोना विषै सोला अश है नाही, तथापि एक वान के सोना विषै जैसे वरणादिक पाइए है, तिनकी अपेक्षा कल्पना करि कहिए है । तैसे भाव परिणाम विषै केवलज्ञानगम्य अति सूक्ष्म जाका दूसरा भाग न होइ, असा कोई शक्ति का अश ताकौ अविभाग प्रतिच्छेद कहिए, ताकी कल्पना करि भाव का परिमाण कहिए । मुख्य परिमाण तौ असे जानना, विशेष जैसा विवक्षित होइ, सो जानना ।

बहुरि जहा क्षेत्र परिमाण विषै आवली का परिमाण कहिए, तहा आवली के जेते समय होइ, तितने तहा प्रदेश जानने ।

बहुरि काल परिमाण विषै जहा लोक परिमाण कहे, तहा लोक के जितने प्रदेश होइ, तितने समय जानने, इत्यादि असै जानने । बहुरि जहा सख्यात, असख्यात अनत सामान्यपनै कहे, तहा तिनिका भेद यथायोग्य जानना ।

सर्वभेद कहने मे न आवै, ज्ञानगम्य है, तातै कौन रीति सौ कहिए ?

परन्तु जैसे लोक विषै कहिए याके लाखा रुपैया छै, तहां असा जानिए, कोड्यो नाही, हजारो नाहीं, तैसे हीनाधिक भाव करि स्थूलपणै परिमाण जानना,

सूक्ष्मपणै परिमाण ज्ञानगम्य है । या प्रकार इस ग्रन्थ विषै जहा-तहा मान का प्रयोजन जानि मान वर्णन कीया है ।

अब पर्याप्ति प्ररूपणा का प्रारम्भ करता सता प्रथम ही दृष्टातपूर्वक जीवनि के तिनि पर्याप्तनि करि पूर्णता-अपूर्णता दिखावै है –

जह पुण्णापुण्णाइं, गिहघडवत्थादियाइं दव्वाइं ।
तह पुण्णिदरा जीवा, पज्जत्तिदरा मुणेयव्वा ॥११८॥

यथा पूर्णापूर्णानि, गृहघटवस्त्रादिकानि द्रव्याणि ।
तथा पूर्णेतरा जीवा., पर्याप्तेतरा मंतव्याः ॥११८॥

टीका – जैसै लोक विषै गृह, घट, वस्त्र इत्यादिक पदार्थ व्यजन पर्यायरूप, ते पूर्ण अर अपूर्ण दीसै है, जे अपने कार्यरूप शक्ति करि सम्पूर्ण भए, तिनिकौ पूर्ण कहिए । बहुरि जिनका आरभ भया किछू भए किछू न भये ते अपने कार्यरूप शक्ति करि सपूर्ण न भए, तिनिकौं अपूर्ण कहिए ।

तैसै पर्याप्त, अपर्याप्त नामा नामकर्म की प्रकृति के उदय करि सयुक्त जीव भी अपनी-अपनी पर्याप्तिनि करि पूर्ण अर अपूर्ण हो है । जो सर्व पर्याप्तिनि की शक्ति करि सपूर्ण होइ, सो पूर्ण कहिए । वहुरि जो सर्व पर्याप्तिनि की शक्ति करि पूर्ण न होइ, सो अपूर्ण कहिये ।

आगै ते पर्याप्ति कौन ? अर कौंनके केती पाइए ? सो विशेष कहै है –

आहार-सरीरिंदिय, पज्जत्ती आणपाण-भास-मणो ।
चत्तारि[1] पच[2] छप्पि[3] य, एइंन्दिय-वियल-सण्णीण[4] ॥११९॥

आहारशरीरेंद्रियाणि, पर्याप्त. आनप्राणभाषामनांसि ।
चतस्र. पच षडपि च, एकेद्रिय-विकल-सज्ञिना ॥११९॥

---

१ षट्खण्डागम – धवला, पुस्तक–१, पृष्ठ ३१६, सूत्र न ७४,७५
२ ,, ,, ,, ,, ,, ३१५ सूत्र न ७२,७३
३ ,, ,, ,, ,, ,, ३१३, ३१४ सूत्र न ७०,७१
४ द्रव्यसग्रह गाथा न. १२ की सस्कृत टीका में भी यह उद्धृत है ।

टीका – १ आहार पर्याप्ति २ शरीर पर्याप्ति ३ इद्रिय पर्याप्ति, ४. आनपान कहिए श्वासोश्वास पर्याप्ति, ५. भाषा पर्याप्ति, ६ मन. पर्याप्ति असै छह पर्याप्ति है। इनिविषै एकेद्रिय कै तौ भाषा अर मन विना पहिली च्यारि पर्याप्ति पाइये है। बेद्री, तेद्री, चौइद्री, असैनी पचेद्री इनि विकल चतुष्क कै मन विना पाच पर्याप्ति पाइए है। सैनी पचेद्रिय कै छहो पर्याप्ति पाइए है।

तहा औदारिक, वैक्रियिक, आहारक इनिविषै किस ही शरीररूप नाम कर्म की प्रकृति का उदय होने का प्रथम समय सौ लगाइ करि जो तीन शरीर वा छह पर्याप्तिरूप पर्याय परिणमने योग्य जे पुद्गलस्कध, तिनिकौ खल-रस भागरूप परिणामावने की पर्याप्ति नामा नामकर्म के उदय तै भई असी जो आत्मा के शक्ति निपजै, जैसे तिल कौं पेलि करि खलि अर तेलरूप परिणामावै है, तैसै केई पुद्गल नै तौ खलरूप परिणमावै, केई पुद्गल नै रसरूप परिणमावै है – असी शक्ति होने कौ आहार पर्याप्ति कहिए।

बहुरि खल-रस भागरूप परिणए पुद्गल, तिनिविषै जिनकौ खलरूप परिणमाए थे, तिनिकौ तौ हाड-चर्म इत्यादि स्थिर अवयवरूप परिणामावै अर जिनिकौ रसरूप परिणमाए थे, तिनिको रुधिर-शुक्र इत्यादिक द्रव अवयवरूप परिणमावै – असी जो शक्ति होइ, ताकौ शरीर पर्याप्ति कहिए है।

बहुरि इद्रियरूप मति, श्रुतज्ञान अर चक्षु, अचक्षु दर्शन का आवरण अर वीर्यान्तराय, इनिकै क्षयोपशम करि निपजी जो आत्मा कै यथायोग्य द्रव्येद्रिय का स्थानरूप प्रदेशनि तै वर्णादिक ग्रहणरूप उपयोग की शक्ति जाति नामा नामकर्म के उदय तै निपजै, सो इद्रिय पर्याप्ति कहिए हैं।

बहुरि तेवीस जाति का वर्गणानि विषै आहार वर्गणारूप पुद्गल स्कधनि की श्वासोश्वासरूप परिणामावने की शक्ति, श्वासोश्वास नामकर्म के उदय तै निपजै, सो श्वासोश्वास पर्याप्ति कहिए।

बहुरि स्वर नामा नाम कर्म के उदय तै भाषा वर्गणारूप पुद्गल स्कधनि कौ सत्य, असत्य, उभय, अनुभय भाषारूप परिणामावने को शक्ति होइ, सो भाषा पर्याप्ति कहिए।

बहुरि मनोवर्गणारूप जे पुद्गल स्कध, तिनिकौ अगोपाग नामा नामकर्म का वल तै द्रव्यमनरूप परिणामावने की शक्ति होय, तीहि द्रव्यमन का आधार तै मन

का आवरण अर वीर्यान्तराय के क्षायोपशम विशेष करि गुण-दोष का विचार, अतीत का याद करना, अनागत विषै याद रखना, इत्यादिकरूप भावमन के परिणमावने की शक्ति होइ, ताकौ मन पर्याप्ति कहिए है । असै छह पर्याप्ति जानना ।

पज्जत्तीपट्ठवणं, जुगवं तु कमेण होदि णिट्ठवणं।
अन्तो मुहुत्तकालेणहियकमा तत्तियालावा ॥१२०॥

पर्याप्तिप्रस्थापन, युगपत्तु क्रमेण भवति निष्ठापनम् ।
अतर्मुहूर्तकालेन, अधिकक्रमास्तावदालापात् ॥१२०॥

टीका – जेते-जेते अपने पर्याप्ति होइ, तिनि सबनि का प्रतिष्ठापन कहिए प्रारभ, सो तो युगपत् शरीर नामा नामकर्म का उदय के पहिले ही समय हो है। बहुरि निष्ठापन कहिए तिनिकी सपूर्णता, सो अनुक्रम करि हो है । सो निष्ठापन का काल अतर्मुहूर्त-अतर्मुहूर्त करि अधिक है, तथापि तिनि सबनि का काल सामान्य आलाप करि अतर्मुहूर्त ही कहिए, जातै अतमुहूर्त के भेद बहुत है ।

कैसे निष्ठापन का काल है ?

सो कहै है – आहार पर्याप्ति का निष्ठापन का काल सबनि तै स्तोक है, तथापि अतर्मुहूर्त मात्र है । बहुरि याकौ सख्यात का भाग दीए जो काल का परिमाण आवै, सो भी अतर्मुहूर्त है । सो यहु अतर्मुहूर्त उस आहार पर्याप्ति का अतर्मुहूर्त मे मिलाये जो परिमाण होइ, सो शरीर पर्याप्ति का निष्ठापन काल जानना । सो यहु भी अतर्मुहूर्त ही जानना । बहुरि याहु का सख्यातवा भाग प्रमाण अतर्मुहूर्त याही मे मिलाये इद्रिय पर्याप्ति का काल होइ, सो भी अतर्मुहूर्त ही है। बहुरि याका सख्यातवा भाग प्रमाण अतर्मुहूर्त याही मे मिलाए श्वासोश्वास पर्याप्ति काल होइ, सो भी अतर्मुहूर्त ही है । असै एकेंद्रिय पर्याप्ति कै तौ ए च्यारि ही पर्याप्ति इस अनुक्रम करि सपूर्ण होइ है । बहुरि श्वासोश्वास पर्याप्ति काल का सख्यातवॉ भाग का प्रमाण अतर्मुहूर्त याही मे मिलाए भाषा पर्याप्ति का काल होइ, सो भी अतर्मुहूर्त ही है । असै विकलेंद्रिय पर्याप्ति जीवनि कै ए पाच पर्याप्ति इस अनुक्रम करि सपूर्ण होइ हैं। बहुरि भाषा पर्याप्ति काल का सख्यातवा भाग प्रमाण अतर्मुहूर्त याही मे मिलाए मन पर्याप्ति का काल होइ, सो भी अतर्मुहूर्त ही है । असै सज्ञी पचेंद्रिय पर्याप्ति कै छह पर्याप्ति इस अनुक्रम करि पूर्ण हो है । असै इनिका निष्ठापन काल कह्या ।

आगे पर्याप्ति, निर्वृत्ति अपर्याप्ति काल का विभाग कहै है —

पज्जत्तस्स य उदये, णियणियपज्जत्तिणिट्ठिदो होदि ।
जाव शरीरमपुण्णं, णिव्वत्तिअपुण्णगो ताव ॥ १२१ ॥

पर्याप्तस्य च उदये, निजनिजपर्याप्तिनिष्ठितो भवति ।
यावत् शरीरमपूर्णं, निर्वृत्यपूर्णकस्तावत् ॥ १२१ ॥

टीका – पर्याप्ति नामा नामकर्म के उदय होते अपने-अपने एकेंद्रिय कै च्यारि, विकलेंद्रिय कै पाच, सैनी पचेंद्रिय कै छह पर्याप्तिनि करि **'निष्ठिताः'** कहिए सपूर्ण शक्ति युक्त होइ, तेई यावत् काल शरीर पर्याप्ति दूसरा, ताकरि पूर्ण न होइ, तावत् काल एक समय घाटि शरीर पर्याप्ति सबधी अतर्मुहूर्त पर्यन्त निर्वृत्ति अपर्याप्ति कहिए । जातै निर्वृत्ति कहिए शरीर पर्याप्ति की निष्पत्ति, तीहि करि जे अपर्याप्त कहिए सपूर्ण न भए, ते निर्वृत्ति अपर्याप्त कहिए है ।

आगै लब्धि अपर्याप्त का स्वरूप कहै है –

उदये दु अपुण्णस्स य, सगसगपज्जत्तियं ण णिट्ठवदि ।
अन्तोमुहुत्तमरणं, लद्धिअपज्जत्तगो सो दु ॥ १२२ ॥

उदये तु अपूर्णस्य च, स्वकस्वकपर्याप्तिर्न निष्ठापयति ।
अन्तर्मुहूर्तमरणं, लब्ध्यपर्याप्तकः स तु ॥ १२२ ॥

टीका – अपर्याप्ति नामा नामकर्म के उदय होते सतै, अपने-अपने एकेंद्रिय विकलेंद्रिय, सैनी जीव च्यारि, पाच, छह पर्याप्ति, तिनिकौ न **'निष्ठापयति'** कहिए सम्पूर्ण न करै, उसास का अठारहवा भाग प्रमाण अतर्मुहूर्त ही विषै मरण पावै, ते जीव लब्धि अपर्याप्त कहिए । जातै लब्धि कहिए अपने-अपने पर्याप्तिनि की सपूर्णता की योग्यता, तीहि करि **'अपर्याप्त'** कहिए निष्पन्न न भए, ते लब्धि अपर्याप्त कहिए ।

आगै एकेंद्रियादिक सज्ञी पर्यन्त लब्धि अपर्याप्तक जीवनि का निरतर जन्म वा मरण का कालप्रमाण कौ कहै है –

तिण्णिसया छत्तीसा, छावट्ठिसहस्सगाणि मरणाणि ।
अन्तोमुहुत्तकाले, तावदिया चेव खुद्दभवा ॥ १२३ ॥

त्रीणि शतानि षट्त्रिंशत्, षट्षष्टिसहस्रकानि मरणानि ।
अंतर्मुहूर्तकाले, तावतश्चैव क्षुद्रभवा ॥ १२३ ॥

टीका – क्षुद्रभव कहिए लब्धि अपर्याप्तक जीव, तिनिकौ जो बीचि विषै पर्याप्तिपनौ विना पाया निरंतरपनै उत्कृष्ट होइ, तौ अंतर्मुहूर्त काल विषै छयासठि हजार तीन सौ छत्तीस (६६३३६) मरण होइ, बहुरि इतने ही भव कहिए जन्म होइ ।

आगे ते जन्म-मरण एकेंद्रियादि जीवनि के केते-केते संभवै अर तिनिके काल का प्रमाण कहा ? सो विशेष कहिए है –

सीदी सट्ठी तालं, वियले चउवीस होंति पंचक्खे ।
छावट्ठिं च सहस्सा, सयं च बत्तीसमेयक्खे ॥१२४॥

अशीतिः षष्टिः चत्वारिंशत्, विकले चतुर्विंशतिर्भवति पंचाक्षे ।
षष्टिश्च सहस्राणि, शतं च द्वात्रिंशमेकाक्षे ॥ १२४ ॥

टीका – पूर्वै कहे थे लब्धि अपर्याप्तकनि के निरंतर क्षुद्रभव, तिनिविषै एकेंद्रियनि के छयासठि हजार एक सौ बत्तीस निरंतर क्षुद्रभव हो है, सो कहिए है – कोऊ एकेंद्रिय लब्धि अपर्याप्तक जीव, सो तिस क्षुद्रभव का प्रथम समय तै लगाइ सास के अठारहवे भाग अपनी आयु प्रमाण जीय करि मरै, बहुरि एकेंद्रिय भया तहा तितनी ही आयु कौ भोगि, मरि करि बहुरि एकेंद्रिय होइ । असै निरंतर लब्धि अपर्याप्ति करि क्षुद्रभव एकेंद्रिय के उत्कृष्ट होइ तौ छयासठि हजार एक सौ बत्तीस होइ, अधिक न होइ । असै ही लब्धि अपर्याप्तक बेइंद्रिय कै असी (८०) होइ । तेइंद्रिय लब्धि अपर्याप्तक के साठि (६०) होइ । चौइंद्रिय लब्धि अपर्याप्तक कै चालीस (४०) होइ । पचेंद्रिय लब्धि अपर्याप्त के चौबीस होई, तीहिविषै भी मनुष्य के आठ (८) असैनी तिर्यंच के आठ, (८) सैनी तिर्यंच के आठ (८) असै पचेंद्रिय के चौबीस (२४) होइ । असै लब्धि अपर्याप्तकनि का निरंतर क्षुद्रभवनि का परिमाण कह्या ।

अब एकेंद्रिय लब्धि अपर्याप्तक के निरन्तर क्षुद्रभव कहे, तिनकी संख्या स्वामीनि की अपेक्षा कहै है –

पुढविदगागणिमारुद, साहारणथूलसुहमपत्तेया ।
एदेसु अपुण्णेसु य, एक्केक्के बार खं छक्कं ॥ १२५ ॥

पृथ्वीदकाग्निमारुतसाधारणस्थूलसूक्ष्मप्रत्येकाः ।
एतेषु अपूर्णेषु च एकैकस्मिन् द्वादश खं षट्कम् ॥ १२५ ॥

टीका – पृथ्वी, अप, तेज, वायु, साधारण वनस्पति इनि – पांचो के सूक्ष्म-बादर करि दश भेद भये अर एक प्रत्येक वनस्पती – इनि ग्यारह लब्धि अपर्याप्तकनि विषै एक-एक भेद विषै बारह, बिदी, छह इनि अकनिकरि छह हजार बारह (६०१२) निरंतर क्षुद्रभव जानने । पूर्वं निरतर क्षुद्रभव एकेद्रिय के छ्यासठि हजार एक सौ बत्तीस कहे । तिनिकौ ग्यारह का भाग दीए एक-एक के छह हजार बारह क्षुद्र भवनि का प्रमाण आवै है । असै लब्धि अपर्याप्त के निरंतर क्षुद्रभव कहे, तहां तिनकी सख्या वा काल का निर्णय करने कौ च्यारि प्रकार अपवर्तन त्रैराशिक करि दिखावै हैं । सो त्रैराशिक का स्वरूप ग्रथ का पीठबध विषै कह्या था, सो जानना । सो यहा दिखाइये है – जो एक क्षुद्रभव का काल सास का अठारहवा भाग होइ, तो छ्यासठि हजार तीन सौ छत्तीस निरतर क्षुद्रभवनि का कितना काल होइ ? तहां प्रमाण राशि १, फलराशि एक का अठारहवा भाग $\frac{१}{१८}$ अर इच्छा राशि छ्यासठि हजार तीन सै छत्तीस (६६३३६), तहा फल कौ इच्छा करि गुणै प्रमाण का भाग दिए लब्ध राशि विषै छत्तीस सै पिच्यासी अर एक का त्रिभाग ३६८५$\frac{१}{३}$ इतना उस्वास भए; असै सब क्षुद्रभवनि का काल का परिमाण भया । यहा इतने प्रमाण अंतर्मुहूर्त्त जानना । जातै असा वचन है, उक्तम् च–

आढ्यानलसानुपहतमनुजोच्छ्वासैस्त्रिसप्तसप्तत्रिप्रमितैः ।
आहुर्मुहूर्तमंतर्मुहूर्तमष्टाष्टवर्जितैस्त्रिभागयुतैः ॥

याका अर्थ – सुखी, धनवान, आलस रहित, निरोगी मनुष्य का सैतीस सै तेहत्तरि (३७७३) उस्वासनि का एक मुहूर्त, तहा अठचासी उस्वास अर एक उस्वास का तीसरा भाग (हीन) घटाए सर्व क्षुद्रभवनि का काल अतर्मुहूर्त होइ । बहुरि उक्तम् च–

आयुरंतर्मुहूर्तः स्यादेषोस्याष्टादशांशकः ।
उच्छ्वासस्य जघन्य च नृतिरश्चां लब्ध्यपूर्णके ॥

याका अर्थ – लब्धि अपर्याप्तक मनुष्य तिर्यचनि का आयु एक उस्वास का अठारहवां भाग प्रमाण अतर्मुहूर्त मात्र है । सो असै कह्या सास का अठारहवा भाग

काल का एक क्षुद्रभव होइ, तौ छत्तीस सौ पिच्यासी अर एक का त्रिभाग प्रमाण उसासनि का कितना क्षुद्रभव होइ? इहा प्रमाण राशि १/१८, फलराशि १, इच्छाराशि ३६८५ १/३ यथोक्त करतै लब्ध राशि छयासठि हजार तीन सौ छत्तीस (६६३३६) क्षुद्रभवनि का परिमाण आया। बहुरि जो छयासठि हजार तीन सौ छत्तीस क्षुद्रभवनि का काल छत्तीस सौ पिच्यासी अर एक का त्रिभाग इतना उस्वास होइ, तौ एक क्षुद्रभवनि का कितना काल होइ? इहा प्रमाण राशि ६६३३६, फलराशि ३६८५ १/३, इच्छा राशि १, यथोक्त करता लब्ध राशि एक सास का अठारहवा भाग १/१८ एक क्षुद्रभव का काल भया। बहुरि छत्तीस सौ पिच्यासी अर एक का त्रिभाग ३६८५ १/३ इतना सास का छयासठि हजार तीन सौ छत्तीस क्षुद्रभव होइ, तौ सास का अठारहवा भाग का कितना क्षुद्रभव होइ ? इहा प्रमाण राशि ६३८५ १/३, फल राशि ६६३३६, इच्छा राशि एक का अठारहवा भाग १/१८, यथोक्त करता लब्ध राशि १ क्षुद्रभव हुआ। इहा सर्व फल राशि कौ इच्छा राशि करि गुणना, प्रमाण राशि का भाग देना, तब लब्ध राशि प्रमाण हो है। असे एक क्षुद्रभव का काल समस्त क्षुद्रभव, समस्त क्षुद्रभव का काल इनिकौं क्रम तै प्रमाण राशि करने तै च्यारि प्रकार त्रैराशिक किया है। और भी जायगा जहा त्रैराशिक का वर्णन होइ, तहा असे ही यथासभव जानना।

आगै समुद्घातकेवली के अपर्याप्तपनै का सभव कहै है –

पज्जत्तसरीरस्स य, पज्जत्तुदयस्स कायजोगस्स।
जोगिस्स अपुण्णत्तं, अपुण्णजोगोत्ति णिद्दिट्ठ ॥१२६॥

पर्याप्तशरीरस्य च, पर्याप्त्युदयस्य काययोगस्य ।
योगिनोऽपूर्णत्वमपूर्णयोगः इति निर्दिष्टम् ॥१२६॥

टीका – सपूर्ण परम औदारिक शरीर जाकै पाइए, बहुरि पर्याप्ति नामा नामकर्म का उदय करि सयुक्त, बहुरि काययोग का धारी – असा जो सयोगकेवली भट्टारक, ताके समुद्घात करतै कपाट का करिवा विषै अर सहार विषै अपूर्ण काययोग कह्या है। जातै तहा सज्ञी पर्याप्तवत् पर्याप्तिनि का आरभ करि क्रम तै निष्ठा-

पन करै है । तातै औदारिक मिश्र काययोग का धारी केवली भगवान, सो कपाट युगल का काल विषै अपर्याप्तपना कौ भजै है, ऐसा सिद्धात विषै कह्या है ।

आगे लब्धि अपर्याप्तकादि जीवनि कै गुणस्थाननि का सभवने-असभवने का विशेष कहै हैं –

लद्धिअपुण्णं मिच्छे, तत्थवि विदिये चउत्थ-छट्ठे य ।
णिव्वत्तिअपज्जत्ती, तत्थ वि सेसेसु पज्जत्ती ।। १२७ ।।

लब्ध्यपूर्णं मिथ्यात्वे, तत्रापि द्वितीये चतुर्थषष्ठे च ।
निर्वृत्यपर्याप्तिस्तत्रापि शेषेषु पर्याप्तिः ।। १२७ ।।

टीका – लब्धि अपर्याप्तक जीव मिथ्यादृष्टि गुणस्थान विषै ही पाइए है, और गुणस्थान वाकै सभवै नाही, जातै सासादनपना आदि विशेष गुणनि का ताकै अभाव है । बहुरि तीहि पहिला मिथ्यादृष्टि विषै, दूसरा सासादन विषै, चौथा असयत विषै, छठा प्रमत्त विषै – इनि चारो गुणस्थाननि विषै निर्वृत्ति अपर्याप्तक पाइए है । तहा पहला वा चौथा सू तो मरि करि जीव चारो गतिनि विषै उपजै है । अर सासादन सौ मरिकरि नरक विना तीनि गतिनि विषै उपजै है । सो इनि तीनो गुणस्थान विषै जन्म का प्रथम समय तै लगाइ यावत् औदारिक, वैक्रियिक शरीर पर्याप्त पूर्ण न होइ, तावत् एक समय घाटि शरीर पर्याप्ति का काल पर्यत निर्वृत्ति अपर्याप्तक है । बहुरि प्रमत्त गुणस्थान विषै यावत् आहारक शरीर पर्याप्ति पूर्ण न होइ, तावत् एक समय घाटि आहारक शरीर पर्याप्ति काल पर्यत निर्वृत्ति अपर्याप्तक है । बहुरि इन कहे चारो गुणस्थाननि विषै अर अवशेष रहे मिश्रादिक सयोगी पर्यन्त नव गुणस्थान विषै पर्याप्तक जीव पाइए है, जातै ताका कारणभूत पर्याप्ति नामा नामकर्म का उदय सर्वत्र सभवै है ।

भावार्थ – लब्धि अपर्याप्तकनि के गुणस्थान एक पहिला, निर्वृत्ति अपर्याप्तकनि के गुणस्थान च्यारि – पहिला, दूसरा, चौथा, छठ्ठा, पर्याप्तनि के गुणस्थान सर्वसयोगी पर्यन्त जानना ।

आगे अपर्याप्त काल विषै सासादन अर असयत गुणस्थान जहा नियम करि न सभवै, सो कहै है –

हेट्ठिमछप्पुढवीणं, जोइसिवणभवणसव्वइत्थीणं ।
पुण्णिदरे णहि सम्मो, ण सासणो णारयापुण्णे ।। १२८ ।।

अधस्तनषट्पृथ्वीना, ज्योतिष्कवानभवनसर्वस्त्रीणाम् ।
पूर्णेतरस्मिन् नहि सम्यक्त्व न सासनो नारकापूर्णे ।। १२८ ।।

टीका – नरक गति विषै रत्नप्रभा विना छह पृथ्वी सबधी नारकीनि कै अर ज्योतिषी, व्यतर, भवनवासी देवनि के अर सर्व ही स्त्री – देवागना, मनुष्यणी, तिर्यंचनी, तिनिकै निर्वृत्ति अपर्याप्त दशा विषै सम्यक्त्व न पाइए । जातै तीहि दशा विषै सम्यक्त्व ग्रहणे कौ योग्य काल नाही । अर सम्यक्त्व सहित मरै तिर्यंच मनुष्य, सो तहा उपजै नाही । वहुरि सम्यक्त्व तै भ्रष्ट होइ जो जीव मिथ्यादृष्टि वा सासादन होइ, तो तिनिका यथासभव तहा नरकादि विषै उपजने का विरोध है नाही । बहुरि सर्व ही सातो पृथ्वी के नारकी, तिनिकै निर्वृत्ति अपर्याप्त दशा विषै सासादन गुणस्थान न पाइए, अैसा नियम जानना । जातै नरक विषै उपज्या जीव कै तिस काल विषै सासादनपने का अभाव है ।

इति श्री आचार्य नेमिचन्द्रसिद्धातचक्रवर्तिविरचित गोम्मटसार द्वितीय नाम पचसग्रह ग्रथ जीवतत्त्वप्रदीपिका नामा सस्कृत टीका के अनुसार इस **सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका** नामा भाषाटीका विषै जीवकाण्ड विषै प्ररूपित जे वीस प्ररूपणा तिनिविषै **पर्याप्त प्ररूपण** नामा **तीसरा** अधिकार पूर्ण भया ।। ३ ।।

चौथा अधिकार : प्राण प्ररूपणा

अभिनंदन वंदौ सदा, त्रेसठि प्रकृति खिपाय ।
जगतनमतपद पाय, जिनधर्म कह्यो सुखदाय ।।

अथ प्राण प्ररूपणा कौं निरूपै है —

बाहिरपाणेहिं जहा, तहेव अब्भंतरेहिं पाणेहिं ।
पाणंति जेहि जीवा, पाणा ते होंति णिद्दिट्ठा ।। १२९ ।।

बाह्यप्राणैर्यथा, तथैवाभ्यंतरैः प्राणैः ।
प्राणति यैर्जीवाः, प्राणास्ते भवन्ति निर्दिष्टा ।। १२९ ।।

टीका –जिनि अभ्यंतर भाव प्राणनि करि जीव है, ते प्राणति कहिए जीवै है; जीवन के व्यवहार योग्य हो है, कौनवत् ? जैसै बाह्य द्रव्य प्राणनि करि जीव जीवै है, जातै यथा शब्द दृष्टांतवाचक है, तातै जे आत्मा के भाव है, तेई प्राण है असा कह्या है। असे कहने ही करि प्राण शब्द का अर्थ का जानने का समर्थपणा हो है, तातै तिस प्राण का लक्षण जुदा न कह्या है । तहा पुद्गल द्रव्य करि निपजे जे द्रव्य इंद्रियादिक, तिनके प्रवर्तनरूप तो द्रव्य प्राण है । बहुरि तिनिका कारणभूत ज्ञानावरण अर वीर्यान्तराय के क्षयोपशमादिक तै प्रकट भए चैतन्य उपयोग के प्रवर्तनरूप भाव प्राण है ।

इहां प्रश्न – जो पर्याप्ति अर प्राण विषै भेद कहा ?

ताका समाधान – पच इद्रियनि का आवरण का क्षयोपशम तै निपजे असे पाच इद्रिय प्राण है । बहुरि तिस क्षयोपशम तै भया जो पदार्थनि के ग्रहण का समर्थपना, ताकरि जन्म का प्रथम समय तै लगाइ अतर्मुहूर्त ऊपरि निपजै असी इद्रिय पर्याप्ति है । इहा कारण-कार्य का विशेष है ।

बहुरि मन सम्बन्धी ज्ञानावरण का क्षयोपशम का निकट तै प्रगट भई असी मनोवर्गणा करि निपज्या द्रव्य मन करि निपजी जो जीव की शक्ति, सो अनुभया पदार्थ को ग्रहण करि उपजी, सो अतर्मुहूर्त मनःपर्याप्ति काल के अन्ति सपूर्ण भई,

असी मन पर्याप्ति है । बहुरि अनुभया पदार्थ का ग्रहण करना अर अनुभया पदार्थ का ग्रहण करने का योग्यपना का होना, सो मन प्राण है ।

बहुरि नोकर्मरूप शरीर का सचयरूप शक्ति की जो सपूर्णता, सो जीव के योग्य काल विषै प्राप्त भई जो भाषा वर्गणा, तिनिकी विशेष परिणमन की करणहारी, सो भाषा पर्याप्ति है ।

बहुरि स्वर नामा नामकर्म का उदय है सहकारी जाका, असी भाषा पर्याप्ति पूर्ण भए पीछे वचन का विशेषरूप उपयोगादिक का परिणमावना, तीहि स्वरूप वचन प्राण है ।

बहुरि कायवर्गणा का अवलबन करि निपजी जो आत्मा के प्रदेशनि का समुच्चयरूप होने की शक्ति, सो कायबल प्राण है ।

बहुरि खल भाग, रस भागरूप परिणए नोकर्मरूप पुद्गलनि कौं हाड आदि स्थिररूप अर रुधिर आदि अस्थिररूप अवयव करि परिणमावने की शक्ति का सपूर्ण होना, सो जीव के शरीर पर्याप्ति है ।

बहुरि उस्वास-निस्वास के निकसने की शक्ति का निपजना, सो आनपान पर्याप्ति है । बहुरि सासोस्वास का परिणमन, सो सासोस्वास प्राण है । असे कारण-कार्यादि का विशेष करि पर्याप्ति अर प्राणनि विषै भेद जानना ।

आगे प्राण के भेदनि कौं कहै है –

पचवि इंदियपाणा, मणवचकायेसु तिण्णि बलपाणा ।
आणापाणप्पाणा, आउगपाणेण होंति दह पाणा ॥१३०॥

पचापि इद्रियप्राणा', मनोवच'कायेषु त्रयो बलप्राणा' ।
आनपानप्राणा, आयुष्कप्राणेन भवति दश प्राणा ॥१३०॥

टीका – पाच इद्रिय प्राण है – १ स्पर्शन, २ रसन, ३ घ्राण, ४ चक्षु, ५ श्रोत्र । बहुरि तीन बलप्राण हैं – १ मनोबल, २ वचनबल ३ कायबल । बहुरि एक आनपान कहिए सासोस्वास प्राण है । बहुरि एक आयु प्राण है । ऐसे प्राण दश हैं, अधिक नाही है ।

आगे तिनि द्रव्य-भाव प्राणनि का उपजने की सामग्री कौं कहैं हैं –

वीरियजुदमदिखउवसमुत्था णोइंदियेंदियेसु बला ।
देहुदये कायाणा, वचीबला आउ आउदये ।। १३१ ।।

वीर्ययुतमतिक्षयोपशमोत्था नोइन्द्रियेंद्रियेषु बलाः ।
देहोदए कायानौ, वचोबल आयुः आयुरुदये ।।१३१।।

टीका – स्पर्शन, रसन, घ्राण, चक्षु, श्रोत्र करि निपजे पाच इद्रिय प्राण अर नो इंद्रिय करि निपज्या एक मनोबल प्राण, ए छहो तो मतिज्ञानावरण अर वीर्यान्तिराय, तिनके क्षयोपशम तै हो है । बहुरि शरीर नामा नामकर्म के उदय होतै काय-बल अर सासोस्वास प्राण हो है । बहुरि शरीर नामा नामकर्म का उदय होतै अर स्वर नामा कर्म का उदय होतै वचनबल प्राण हो है । बहुरि आयुकर्म का उदय हौतै आयु प्राण हो है । अैसै प्राणनि के उपजने की सामग्री कही ।

आगे ए प्राण कौन-कौन के पाइए सो भेद कहै है –

इंदियकायाऊणि य, पुण्णापुण्णेसु पुण्णगे आणा ।
बीइंदियादिपुण्णे, वचीमणो सण्णिपुण्णेव ।।१३२।।

इन्द्रियकायायूषि च, पूर्णापूर्णेषु पूर्णके आनः ।
द्वीन्द्रियादिपूर्णे, वचो मनः संज्ञिपूर्णे एव ।। १३२ ।।

टीका – इद्रिय प्राण, कायबल प्राण, आयु प्राण – ए तो तीन प्राण पर्याप्ति वा अपर्याप्ति दोऊ दशा विषै समान पाइए है । बहुरि सासोस्वास प्राण पर्याप्ति दशा विषै ही पाइए, जातै ताका कारण उच्छ्वास निश्वास नामा नाम कर्म का उदय पर्याप्त काल विषै सभवै है । बहुरि वचनबल प्राण बेइद्रियादिक पचेन्द्रिय पर्यंत जीवनि कै पर्याप्त दशा ही विषै पाइए है, जातै ताका कारणभूत स्वर नामा नामकर्म का उदय अन्यत्र न सभवै है । बहुरि मनबल प्राण सैनी पचेद्रिय के पर्याप्त दशा विषै ही पाइए है, जातै ताका कारण वीर्यान्तिराय अर मन आवरण का क्षयोपशम, सो अन्यत्र न सभवै है ।

आगै एकेंद्रियादिक जीवनि के केते-केते प्राण पाइए, सो कहै है –

दस सण्णीणं पाणा, सेसेगूणंतिमस्स बेऊणा ।
पज्जत्तेसिदरेसु य, सत्त दुगे सेसगेगूणा ।। १३३ ।।

दश संज्ञिनां प्राणाः शेषैकोनमंतिमस्य व्द्यूनाः ।
पर्याप्तिष्वितरेषु च, सप्त द्विके शेषकैकोनाः ।।१३३।।

टीका – पहिले कह्या जो प्राणनि के स्वामीनि का नियम, ताही करि असें भेद पाइए है, सो कहिए है । सैनी पचेद्री पर्याप्त के तौ दश प्राण सर्व ही पाइए । पीछै अवशेष असज्ञी आदि द्वीद्रिय पर्यन्त पर्याप्त जीवनि के एक-एक घाटि प्राण पाइए । तहा असैनी पचेद्रिय के मन विना नव प्राण पाइए । चौइद्रिय के मन अर कर्ण इद्रिय विना आठ प्राण पाइए , तेइद्रिय के मन, कर्ण, नेत्र इद्रिय विना सात प्राण पाइए । द्वीन्द्रिय के मन, कर्ण, नेत्र, नासिका विना छह प्राण पाइए । बहुरि अंतिम एकेंद्रिय विषै द्वीन्द्रिय के प्राणनि तै दोय घटावना, सो मन, कर्ण, नेत्र, नासिका अर रसना इद्रिय अर वचनबल, इनि विना एकेद्रिय के च्यारि ही प्राण पाइए हैं । असें ए प्राण पर्याप्त दशा की अपेक्षा कहे ।

अब इतर जो अपर्याप्त दशा, ताकी अपेक्षा कहिए है – सैनी वा असैनी पचेद्रिय के तौ सात-सात प्राण हैं । जातै पर्याप्तकाल विषै सभवै असे सासोस्वास, वचन बल, मनोबल ए तीन प्राण तहा न होइ । बहुरि चौइद्रिय कै श्रोत्र विना छह पाइए, तेद्री के नेत्र विना पाच पाइए, बेद्री के नासिका विना च्यारि पाइए, एकेद्री के रसना विना तीन पाइए, असें प्राण पाइए है ।

इति श्री आचार्य नेमिचन्द्र सिद्धातचक्रवर्तिविरचित गोम्मटसार द्वितीय नाम पचसग्रह ग्रथ की जीवतत्त्वप्रदीपिका नामा सस्कृत टीका के अनुसार **सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका** नामा इस भाषाटीका विषै प्ररूपित जे वीस प्ररूपणा तिनि विषै **प्राण प्ररूपणा** नामा **चौथा** अधिकार सपूर्ण भया ।। ४ ।।

पाँचवां अधिकार : संज्ञा प्ररूपणा

मंगलाचरण

गुण अनंत पाए सकल, रज रहस्य अरि जीति ।
दोषरहित जगस्वामि सो, सुमति नमौं जुत प्रीति ।।

अथ संज्ञा प्ररूपणा कहै है —

इह जाहि बाहयावि य, जीवा पावंति दारुणं दुक्खं ।
सेवंतावि य उभये, ताओ चत्तारि सण्णाओ ।। १३४ ।।

इह याभिर्बाधिता अपि च, जीवाः प्राप्नुवति दारुणं दुःखं ।
सेवमाना अपि च, उभयस्मिन ताश्चतस्रः संज्ञाः ।। १३४ ।।

टीका – आहार, भय, मैथुन, परिग्रह इनिके निमित्त तै जो वाछा होइ, ते च्यारि सज्ञा कहिए । सो जिनि सज्ञानि करि बाधित, पीडित हुए जीव ससार विषै विषयनि कौ सेवते भी इहलोक अर परलोक विषै तिनि विषयनि की प्राप्ति वा अप्राप्ति होतै दारुण भयानक महा दुःख कौं पावै है, ते च्यारि सज्ञा जाननी। वाछा का नाम सज्ञा है । वांछा है, सो सर्व दुःख का कारण है ।

आगै आहार सज्ञा उपजने के बाह्य, अभ्यतर कारण कहै है –

आहारदंसणेण य, तस्सुवजोगेण ओमकोठाए ।
सादिदरुदीरणाए, हवदि हु आहारसण्णा हु ।। १३५ ।।

आहारदर्शनेन च, तस्योपयोगेन अवमकोष्ठतया ।
सातेतरोदीरणया, भवति हि आहारसंज्ञा हि ।। १३५ ।।

टीका – विशिष्ट अन्नादिक च्यारि प्रकार आहार का देखना, बहुरि आहार का यादि करना, कथा सुनना इत्यादिक उपयोग का होना, बहुरि कोठा जो उदर, ताका खाली होनो क्षुधा होनी ए तौ बाह्य कारण है । बहुरि असाता वेदनीय कर्म का तीव्र उदय होना वा उदीरणा होनी अतरग कारण है । इनि कारणनि तै आहार

सज्ञा हो है । आहार कहिए अन्नादिक, तीहिविषै सज्ञा कहिए वाछा, सो आहार सज्ञा जाननी ।

आगै भय सज्ञा उपजने के कारण कहै है –

अइभीमदंसणेण य, तस्सुवजोगेण ओमसत्तीए ।
भयकम्मुदीरणाए, भयसण्णा जायदे चदुहिं ।।१३६।।

अतिभीमदर्शनेन, च, तस्योपयोगेन अवमसत्वेन ।
भयकर्मोदीरणया, भयसज्ञा जायते चतुर्भिः ।।१३६।।

टीका – अतिभयकारी व्याघ्र आदि वा क्रूर मृगादिक वा भूतादिक का देखना वा उनकी कथादिक का सुनना, उनकौ यादि करना इत्यादिक उपयोग का होना, बहुरि अपनी हीन शक्ति का होना ए तौ बाह्य कारण है । बहुरि भय नामा नोकषायरूप मोह कर्म, ताका तीव्र उदय होना, यहु अतरग कारण है । इनि कारणनि करि भय सज्ञा हो है । भय करि भई जो भागि जाना, छिपि जाना इत्यादिक रूप वाछा, सो भय संज्ञा कहिए ।

आगै मैथुन सज्ञा उपजने के कारण कहै है –

पणिदरसभोयणेण य, तस्सुवजोगे कुसीलसेवाए ।
वेदस्सुदीरणाए, मेहुसण्णा हवदि एवं ।। १३७ ।।

प्रणीतरसभोजनेन च, तस्योपयोगे कुशीलसेवया ।
वेदस्योदीरणया, मैथुनसज्ञा भवति एव ।। १३७ ।।

टीका – वृष्य जो कामोत्पादक गरिष्ठ भोजन, ताका खाना अर काम कथा का सुनना अर भोगे हुवे काम विषयादिक का यादि करना इत्यादिकरूप उपयोग होना, बहुरि कुशीलवान कामी पुरुषनि करि सहित सगति करनी, गोष्ठी करनी ए तौ बाह्य कारण है । बहुरि स्त्री, पुरुष, नपु सक वेदनि विषै किसी ही वेदरूप नोकषाय की उदीरणा, सो अतरग करण है । इनि कारणनि तै मैथुन सज्ञा हो है । मैथुन जो कामसेवनरूप स्त्री-पुरुष का युगल सम्बन्धी कर्म, तीहिंविषै वाछा, मैथुनसज्ञा जाननी ।

आगै परिग्रह सज्ञा उपजने के कारण कहै हैं –

उवयरणदंसणेण य, तस्सुवजोगेण मुच्छिदाए य ।
लोहस्सुदीरणाए परिग्गहे जायदे सण्णा ।। १३८ ।।

उपकरणदर्शनेन च, तस्योपयोगेन मूर्छिताये च ।
लोभस्योदीरणया परिग्रहे जायते संज्ञा ।। १३८ ।।

टीका – धन-धान्यादिक बाह्य परिग्रहरूप उपकरण सामग्री का देखना अर तीहि धनादिक की कथा का सुनना, यादि करना इत्यादिक उपयोग होना, मूर्छित जो लोभी, ताकै परिग्रह उपजावने विषै आसक्तता, ताका इस जीव सहित सम्बन्धी होना इत्यादिक बाह्य कारण है । बहुरि लोभ कषाय की उदीरणा, सो अंतरग कारण है । इनि कारणनि करि परिग्रह सज्ञा हो है । परिग्रह जो धन-धान्यादिक, तिनिके उपजावने आदिरूप वाछा, सो परिग्रह सज्ञा जाननी ।

आगै ए संज्ञा कौनके पाइए, सो भेद कहै है –

णट्ठपमाए पढमा, सण्णा णहि तत्थ कारणाभावा ।
सेसा कम्मत्थित्तेणुवयारेणत्थि णहि कज्जे ।।१३९।।

नष्टप्रमादे प्रथमा, संज्ञा नहि तत्र कारणाभावात् ।
शेषाः कर्मास्तित्वेन उपचारेण संति नहि कार्ये ।।१३९।।

टीका – नष्ट भये है प्रमाद जिनिके, ऐसे जे अप्रमत्तादि गुणस्थानवर्ती जीव, तिनिकै प्रथम आहार सज्ञा नाही है । जातै आहार सज्ञा का कारणभूत जो असाता वेदनीय की उदीरणा, ताकी व्युच्छित्ति प्रमत्त गुणस्थान ही विषै भई है, तातै कारण के अभाव तै कार्य का भी अभाव है । ऐसै प्रमाद रहित जीवनि कै पहिली सज्ञा नाही है । बहुरि इनि कै जो अवशेष तीन सज्ञा हैं, सो भी उपचार मात्र है, जातै उन सज्ञानि का कारणभूत जे कर्म, तिनि का उदय पाइए है, तीहि अपेक्षा है । बहुरि ते भय, मैथुन, परिग्रह सज्ञा अप्रमादी जीवनि के कार्यरूप नाही है ।

इति श्री आचार्य नेमिचद्रविरचित गोम्मटसार द्वितीय नाम पचसग्रह ग्रथ की जीवतत्त्वप्रदीपिका नामा सस्कृत टीका के अनुसारि **सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका** नामा भाषा टीका विषै जीवकाण्ड विषै प्ररूपित जे वीस प्ररूपणा, तिनिविषै **सज्ञा प्ररूपणा** नाम **पंचम** अधिकार सम्पूर्ण भया ।।५।।

———

छठवां अधिकार : गति प्ररूपणा

पद्मप्रभ जिनकौं भजौं, जीति घाति सब कर्म ।
गुण समूह फुनि पाय जिनि, प्रगट कियो हितधर्म ।।

आगें अरहतदेव कौ नमस्काररूप मगलपूर्वक मार्गणा महा अधिकार प्ररूपण की प्रतिज्ञा करै है –

धम्मगुणमग्गणाहयमोहारिबलं जिणं णमंसित्ता ।
मग्गणमहाहियारं, विविहहियारं भणिस्सामो ।।१४०।।

धर्मगुणमार्गणाहतमोहारिबलं जिनं नमस्कृत्वा ।
मार्गणामहाधिकारं, विविधाधिकारं भणिष्यामः ।।१४०।।

टीका – हम जो ग्रथकर्ता, ते नानाप्रकार का गति, इद्रियादिक अधिकार सयुक्त जो मार्गणा का महा अधिकार ताहि कहैगे, असी आचार्य प्रतिज्ञा करी । कहा करिकै ? जिन जो अर्हन्त भट्टारक, तिसहि नमस्कार करिकै । कैसा है जिन भगवान ? रत्नत्रय स्वरूप धर्म, सोही भया धनुप, बहुरि ताका उपकारी जे ज्ञानादिक धर्म, ते ही भए गुण कहिये चिल्ला, बहुरि ताके आश्रयभूत जे चौदह मार्गणा, तेही भए मार्गण कहिए बाण, तिनिकरि हत्या है मोहनीय कर्मरूप अरि कहिये वैरी का बल जानै, ऐसा जिन-देव है ।

आगें मार्गणा शब्द की निरुक्ति ने लिया लक्षण कहै हैं –

जाहि व जासु व जीवा, मग्गिज्जंते जहा तहा दिट्ठा ।
ताओ चोदस जाणे, सुयणाणे मग्गणा होंति ।।१४१।।[1]

याभिर्वा यासु वा, जीवा मृग्यंते यथा तथा दृष्टाः ।
ताश्चतुर्दश जानीहि, श्रुतज्ञाने मार्गणा भवंति ।।१४१।।

---

१ षट्खण्डागम – धवला पुस्तक १, पृष्ठ १३३, गाथा ८५

टीका – जैसै श्रुतज्ञान विषै उपदेश्या तैसै ही जीव नामा पदार्थ, जिनकरि वा जिनिविषै जानिए, ते चौदह मार्गणा है। पूर्वै तौ सामान्यता करि गुणस्थान जीव-समास, पर्याप्ति, प्राण, सज्ञा इनिकरि त्रिलोक के मध्यवर्ती समस्त जीव लक्षण करि वा भेद करि विचारे।

बहुरि अब विशेषरूप गति-इद्रियादि मार्गणानि करि तिन ही कौ विचारै है, अैसै हे शिष्य, तू जानि। गति आदि जे मार्गणा जब एक जीव कै नारकादि पर्ययिनि की विवक्षा लीजिए, तब तौ जिनि मार्गणानि करि जीव जानिए अैसै तृतीया विभक्ति करि कहिए। बहुरि जब एक द्रव्य प्रति पर्यायिनि के अधिकरण की विवक्षा 'इनि विषै जीव पाइए हैं' अैसी लीजिए, तब जिनि मार्गणानि विषै जीव जानिए अैसै सप्तमी विभक्ति करि कहिए। जातै विवक्षा के वश तै कर्ता, कर्म इत्यादि कारकनि की प्रवृत्ति है ऐसा न्याय का सद्भाव है।

आगै तिनि चौदह मार्गणानि के नाम कहै है –

गइइंदियेसु काये, जोगे वेदे कसायणाणेय।
संजमदंसणलेस्सा-भविया-सम्मत्तसण्णि-आहारे ॥१४२॥

गतींद्रियेषु काये, योगे वेदे कषायज्ञाने च।
संयमदर्शनलेश्याभव्यतासम्यक्त्वसंज्ञ्याहारे ॥ १४२ ॥

टीका – १ गति, २. इद्रिय, ३ काय, ४ योग, ५ वेद, ६. कषाय, ७ ज्ञान, ८ सयम, ९ दर्शन, १० लेश्या, ११. भव्य, १२ सम्यक्त्व, १३. संज्ञी, १४ आहार अैसै ए गति आदि पद है। ते तृतीया विभक्ति वा सप्तमी विभक्ति का अत लीए है। तातै गति करि वा गति विषै इत्यादिक अैसै व्याख्यान करने। सो इनिकरि वा इनिविषै जीव मार्ग्यन्ते कहिए जानिये, ते चौदह मार्गणा जैसै अनुक्रम करि नाम है, तैसै कहैगे।

आगै तिनिविषै आठ सातर मार्गणा है, तिनिका स्वरूप, सख्या, विधान निरूपण के अर्थि गाथा तीन कहै है –

उवसमसुहुमाहारे, वेगुव्वियमिस्स णरअपज्जत्ते।
सासणसम्मे मिस्से, सांतरगा मग्गणा अट्ठ ॥ १४३ ॥

सत्तदिणाछम्मासा, वासपुधत्तं च बारसमुहुत्ता ।
पल्लासंखं तिण्हं, वरमवरं एगसमयो दु ॥१४४॥

उपशमसूक्ष्माहारे, वैगूर्विकमिश्रनरापर्याप्ते ।
सासनसम्यक्त्वे मिश्रे, सातरका मार्गणा अष्ट ॥१४३॥

सप्तदिनानि षण्मासा, वर्षपृथक्त्वं च द्वादश मुहूर्ताः ।
पल्यासंख्य त्रयाणा, वरमवरमेकसमयस्तु ॥ १४४ ॥

टीका – नाना जीवनि की अपेक्षा विवक्षित गुणस्थान वा मार्गणास्थान नै छोडि, अन्य कोई गुणस्थान वा मार्गणास्थान मे प्राप्त होइ, बहुरि उस ही विवक्षित गुणस्थान वा मार्गणास्थान कौ यावत् काल प्राप्त न होइ, तिसकाल का नाम अतर है ।

सो उपशम सम्यग्दृष्टी जीवनि का लोक विषै नाना जीव अपेक्षा अतर सात दिन है । तीन लोक विषै कोऊ जीव उपशम सम्यक्त्वी न होइ तो उत्कृष्टपनै सात ताईं न होइ, पीछै कोऊ होय ही होय । ऐसै ही सब का अतर जानना ।

बहुरि सूक्ष्म सापराय सयमी, तिनिका उत्कृष्ट अतर छह महीना है । पीछै कोऊ होय ही होय ।

बहुरि आहारक अर आहारकमिश्र काययोगवाले, तिनिका उत्कृष्ट अतर वर्ष पृथक्त्व का है । तीन तै ऊपर अर नव तै नीचै पृथक्त्व सज्ञा है, तातै यहा तीन वर्ष के ऊपर अर नव वर्ष के नीचै अतर जानना । पीछै कोई होय ही होय ।

बहुरि वैक्रियिकमिश्र काययोगवाले का उत्कृष्ट अतर बारह मुहूर्त का है, पीछै कोऊ होय ही होय ।

बहुरि लब्धि अपर्याप्तक मनुष्य अर सासादन गुणस्थानवर्ती जीव अर मिश्र गुणस्थानवर्ती जीव, इनि तीनो का अतर एक-एक का पल्य के असख्यातवे भाग मात्र जानना, पीछै कोई होय ही होय । ऐसै ए सातर मार्गणा आठ है । इनि सबनि का जघन्य अतर एक समय जानना ।

पढमुवसमसहिदाए, विरदाविरदीए चोद्दसा दिवसा ।
विरदीए पण्णरसा, विरहिदकालो दु बोधव्वो ॥१४५॥

प्रथमोपशमसहितायाः, विरताविरतेश्चतुर्दश दिवसाः ।
विरतेः पंचदश, विरहितकालस्तु बोद्धव्यः ।। १४५ ।।

टीका – विरह काल कहिए उत्कृष्ट अतर, सो प्रथमोपशम सम्यक्त्व करि सयुक्त जे विरताविरत पंचम गुणस्थानवर्ती जीव, तिनिका चौदह दिन का जानना । बहुरि तिस प्रथमोपशम सम्यक्त्व सयुक्त षष्टमादि गुणस्थानवर्ती, तिनिका पद्रह दिन जानना । वा दूसरा सिद्धान्त की अपेक्षा करि चौबीस दिन जानना । असै नाना जीव अपेक्षा अतर कह्या । बहुरि इनि मार्गणानि का एक जीव अपेक्षा अन्तर अन्य ग्रन्थ के अनुसारि जानना ।

यहा प्रसग पाइ कार्यकारी जानि, तत्त्वार्थसूत्र की टीका के अनुसारि काल अन्तर का कथन करिए है ।

तहा प्रथम काल का वर्णन दोय प्रकार – नाना जीव अपेक्षा अर एक जीव अपेक्षा ।

तहा विवक्षित गुणस्थाननि का वा मार्गणास्थाननि विषै सभवते गुणस्थाननि का सर्व जीवनि विषै कोई जीव कै जेता काल सद्भाव पाइए, सो नाना जीव अपेक्षा काल जानाना । अर तिनही का विवक्षित एक जीव कै जेते काल सद्भाव पाइए, सो एक जीव अपेक्षा काल जानना ।

तिनिविषै प्रथम नाना जीव अपेक्षा काल कहिए है, सो सामान्य-विशेष करि दोय प्रकार । तहा गुणस्थाननि विषै कहिए सो सामान्य अर मार्गणा विषै कहिए सो विशेष जानना ।

तहा सामान्य करि मिथ्यादृष्टि, असयत, प्रमत्त, अप्रमत्त, सयोग केवलनि का सर्व काल है । इनिका कबहू अभाव होता नाही । बहुरि सासादन का जघन्य एक समय, उत्कृष्ट पल्य का असख्यातवा भाग । बहुरि मिश्र का जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट पल्य का असख्यातवा भाग । बहुरि च्यारो उपशम श्रेणी वालो का जघन्य एक समय उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त । इहा जघन्य एक समय मरण अपेक्षा कह्या है । बहुरि च्यारो क्षपकश्रेणीवाले अर अयोग केवलीनि का जघन्य वा उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त मात्र काल है ।

अब विशेष करि कहिए है । तहा गति मार्गणा विषै सातो पृथ्वीनि के नारकीनि विषै मिथ्यादृष्टचादि च्यारि गुणस्थाननि का सामान्यवत् काल है । तिर्यञ्च गति विषै मिथ्यादृष्टचादि पच गुणस्थाननि विषै सामान्यवत् काल है । मनुष्यगति विषै सासादन का जघन्य एक समय, उत्कृष्ट अतर्मुहूर्त अर मिश्र का जघन्य वा उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त अर अन्य सर्व गुणस्थाननि विषै सामान्यवत् काल है । देवगति विषै मिथ्यादृष्टचादि च्यारि गुणस्थाननि का सामान्यवत् काल है ।

बहुरि इद्रिय मार्गणा अर काय मार्गणा विषै इद्रिय-काय अपेक्षा सर्वकाल है। गुणस्थान अपेक्षा एकेद्री, विकलेद्री, अर पच स्थावरनि विषै मिथ्यादृष्टि का सर्वकाल है । अर पचेद्रिय वा त्रस विषै सर्व गुणस्थाननि का सामान्यवत् काल है ।

बहुरि योग मार्गणा विषै तीनो योगनि मिथ्यादृष्टचादि सयोगी पर्यन्तनि का अर अयोगी का सामान्यवत् काल है । विशेष इतना – मिश्र का जघन्य काल एक समय ही है । अर क्षपकनि का जघन्य एक समय, उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त मात्र काल है ।

बहुरि वेद मार्गणा विषै तीन वेदनि विषै अर वेदरहित विषै मिथ्यादृष्टचादि अनिवृत्तिकरण पर्यन्तनि का वा (ऊपरि) सामान्यवत् काल है ।

बहुरि कषाय मार्गणा विषै च्यारि कषायनि विषै मिथ्यादृष्टचादि अप्रमत्त पर्यंतनि का मनोयोगीवत् अर दोय उपशमक वा क्षपक अर केवल लोभयुत सूक्ष्मसापराय अर अकषाय, इनिका सामान्यवत् काल है ।

बहुरि ज्ञान मार्गणा विषै तीन कुज्ञान, पाच सुज्ञाननि विषै अपने-अपने गुणस्थाननि का सामान्यवत् काल है ।

बहुरि सयम मार्गणा विषै सात भेदनि विषै अपने-अपने गुणस्थाननि का सामान्यवत् काल है ।

बहुरि दर्शन मार्गणा विषै च्यारि भेदनि विषै अपने-अपने स्थाननि का सामान्यवत् काल है ।

बहुरि लेश्या रहितनि विषै अपने-अपने गुणस्थाननि का सामान्यवत् काल है।

बहुरि भव्य मार्गणा विषै दोऊ भेदनि विषै अपने-अपने गुणस्थाननि का सामान्यवत् काल है ।

बहुरि सम्यक्त्व मार्गणा विषै छह भेदनि विषै अपने-अपने गुणस्थाननि का सामान्यवत् काल है। विशेष इतना – औपशमिक सम्यक्त्व विषै असयत, देशसयत का जघन्य अतर्मुहूर्त उत्कृष्ट पल्य का असख्यातवा भाग अर प्रमत्त, अप्रमत्त का जघन्य एक समय, उत्कृष्ट अतर्मुहूर्त काल है।

बहुरि सज्ञी मार्गणा विषै दोऊ भेदनि विषै अपने-अपने गुणस्थाननि का सामान्यवत् काल है।

बहुरि आहार मार्गणा विषै आहारक विषै मिथ्यादृष्ट्यादि सयोगी पर्यन्तनि का सामान्यवत् काल है। अनाहारक विषै मिथ्यादृष्टि का सर्वकाल, सासादन असयत का जघन्य एक समय, उत्कृष्ट आवली का असंख्यातवा भाग, सयोगी का जघन्य तीन समय, उत्कृष्ट सख्यात समय, अयोगी का सामान्यवत् काल है।

अब एक जीव अपेक्षा काल कहिए है, तहा प्रथम सामान्य करि मिथ्यादृष्टि का काल विषै तीन भग – अनादि अनंत, अनादि सात, सादि सात। तहा सादि सात काल जघन्य अंतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट देशोन अर्धपुद्गल परिवर्तन मात्र है। किंचित हीन का नाम देशोन जानना। बहुरि सासादन का जघन्य एक समय, उत्कृष्ट छह आवली, मिश्र का जघन्य वा उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त, बहुरि असयत का जघन्य अंतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट साधिक तेतीस सागर, सयतासयत का जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट देशोन कोडि पूर्व; प्रमत्त-अप्रमत्त का जघन्य एक समय, उत्कृष्ट अतर्मुहूर्त, च्यारौ उपशम श्रेणीवालो का जघन्य एक समय, उत्कृष्ट अतर्मुहूर्त, च्यारौ क्षपक श्रेणीवाले वा अयोगिनि का जघन्य वा उत्कृष्ट अतर्मुहूर्त, सयोगी का जघन्य अतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट देशोन कोडि पूर्व काल है।

अब विशेष करि कहिए है – गति मार्गणा विषै सातौ पृथ्वीनि के नारकीनि विषै मिथ्यादृष्टि का काल जघन्य अतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट क्रम तै एक, तीन, सात, दश, सतरह, बाईस, तेतीस सागर। सासादन मिश्र का सामान्यवत्, असयत का जघन्य अतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट देशोन, मिथ्यादृष्टि का उत्कृष्ट कालप्रमाण काल है।

तिर्यंचगति विषै – मिथ्यादृष्टि का जघन्य अतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट असख्यात पुद्गल परिवर्तन मात्र अनंत काल है। सासादन, मिश्र, सयतासयत का सामान्यवत्, तहां असयत का जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट तीन पल्य काल है।

मनुष्यगति विषै – मिथ्यादृष्टि का जघन्य अंतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट पृथक्त्व कोटि पूर्व अधिक तीन पल्य। सासादन का, मिश्र का सामान्यवत्। असयत का जघन्य अंतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट साधिक तीन पल्य, अवशेषनि का सामान्यवत् काल है।

देवगति विषै – मिथ्यादृष्टि का जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट एकतीस सागर, सासादन, मिश्र का सामान्यवत्, असयत का जघन्य अंतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट तेतीस सागर काल है।

बहुरि इद्रिय मार्गणा विषै एकेद्रिय का जघन्य क्षुद्रभव, उत्कृष्ट असख्यात पुद्गल परिवर्तन मात्र है। बहुरि विकलत्रय का जघन्य क्षुद्रभव, उत्कृष्ट सख्यात हजार वर्ष। पचेद्रिय विषै मिथ्यादृष्टि का जघन्य अंतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट पृथक्त्व कोडि पूर्व अधिक हजार सागर। अवशेषनि का सामान्यवत् काल है।

बहुरि काय मार्गणा विषै पृथ्वी, अप, तेज, वायु का जघन्य क्षुद्रभव, उत्कृष्ट असख्यात लोक प्रमाण काल है। वनस्पतिकाय का एकेंद्रियवत् काल है।

त्रसकाय विषै मिथ्यादृष्टि का जघन्य अंतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट पृथक्त्व कोडि पूर्व अधिक दोय हजार सागर, अवशेषनि का सामान्यवत् काल है। इहा छह के ऊपरि नव के नीचे, ताका नाम पृथक्त्व जानना। अर उस्वास का अठारहवा भाग मात्र क्षुद्रभव जानना।

बहुरि योग मार्गणा विषै वचन, मन योग विषै मिथ्यादृष्टि, असयत, सयतासयत, प्रमत्त, अप्रमत्त च्यारो उपशमक, क्षपक, सयोगिनि का जघन्य एक समय, उत्कृष्ट अतर्मुहूर्त, सासादन-मिश्र का सामान्यवत् काल है। काय योग विषै मिथ्यादृष्टि का जघन्य एक समय, उत्कृष्ट असख्यात पुद्गल परिवर्तन, अवशेषनि का मनोयोगवत् काल है। अयोगि विषै सामान्यवत् काल है।

वेद मार्गणा विषै तीनो वेदनि विषै मिथ्यादृष्टि आदि अनिवृत्तिकरण पर्यंत अर अवेदीनि विषै सामान्यवत् काल है। विशेष इतना – जो स्त्री वेद विषै मिथ्यादृष्टि का उत्कृष्ट काल पृथक्त्व सौ पल्य प्रमाण अर असयत का उत्कृष्ट काल देशोन पचावन पल्य है। बहुरि पुरुष वेद विषै मिथ्यादृष्टि का उत्कृष्ट काल पृथक्त्व सौ सागर प्रमाण है। अर नपुसक वेद विषै मिथ्यादृष्टि का उत्कृष्ट काल असख्यात पुद्गल परिवर्तन मात्र अर असयत का उत्कृष्ट काल देशोन तेतीस सागर काल है।

बहुरि कषाय मार्गणा विषै च्यारो कषायनि विषै मिथ्यादृष्टयादि अप्रमत्त पर्यंत का मनोयोगवत् अर दोऊ उपशमक वा क्षपक वा सूक्ष्म लोभ अर अकषाय इनिका सामान्यवत् काल है ।

बहुरि ज्ञान मार्गणा विषै तीन कुज्ञाननि विषै वा पाच सुज्ञाननि विषै अपने-अपने गुणस्थाननि का सामान्यवत् काल है । विशेष इतना – विभग विषै मिथ्यादृष्टि का काल देशोन तेतीस सागर है ।

बहुरि सयम मार्गणा विषै सात भेदनि विषै अपने-अपने गुणस्थाननि का सामान्यवत् काल है ।

बहुरि दर्शन मार्गणा विषै च्यारि भेदनि विषै अपने-अपने गुणस्थाननि का सामान्यवत् काल है । विशेष इतना – चक्षुदर्शन विषै मिथ्यादृष्टि का उत्कृष्ट काल दोय हजार सागर है ।

बहुरि लेश्या मार्गणा विषै छह भेदनि विषै वा अलेश्यानि विषै अपने-अपने गुणस्थाननि का सामान्यवत् काल है । विशेष इतना – कृष्ण, नील, कापोत विषै मिथ्यादृष्टि का उत्कृष्ट काल क्रम तै साधिक तेतीस, सतरह, सात सागर अर असयत का उत्कृष्ट काल क्रम तै देशोन तेतीस, सतरह, सात सागर है । अर पीत-पद्म विषै मिथ्यादृष्टि वा असयत का उत्कृष्ट काल क्रम तै दोय, अठारह सागर है । सयतासयत का जघन्य एक समय, उत्कृष्ट अतर्मुहूर्त काल है । बहुरि शुक्ल लेश्या विषै मिथ्यादृष्टि का उत्कृष्ट काल साधिक इकतीस सागर, सयतासयत का जघन्य एक समय, उत्कृष्ट अतर्मुहूर्त काल है ।

बहुरि भव्य मार्गणा विषै भव्य विषै मिथ्यादृष्टि का अनादि सात वा सादि सात काल है । तहा सादि सात जघन्य अतर्मुहूर्त उत्कृष्ट देशोन अर्ध पुद्गल परिवर्तन मात्र है । अवशेषनि का सामान्यवत् काल है । अभव्य विषै अनादि अनत काल है ।

बहुरि सम्यक्त्व मार्गणा विषै छहौ भेदनि विषै अपने-अपने गुणस्थाननि का सामान्यन्वत् काल है । विशेष इतना – उपशम सम्यक्त्व विषै असयत, सयतासयत का जघन्य वा उत्कृष्ट काल अतर्मुहूर्त मात्र है ।

बहुरि सज्ञी मार्गणा विषै सज्ञी विषै मिथ्यादृष्टि आदि अनिवृत्तिकरण पर्यन्तनि का पुरुष वेदवत्, अवशेषनि का सामान्यवत् काल है । असज्ञी विषै मिथ्यादृष्टि का

जघन्य क्षुद्रभव, उत्कृष्ट असख्यात पुद्गल परिवर्तन काल है। दोऊ व्यपदेशरहितनि विषै सामान्यवत् काल है।

बहुरि आहार मार्गणा विषै आहारक विषै मिथ्यादृष्टि का जघन्य अतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट असख्यातासख्यात कल्पकाल प्रमाण जो अगुल का असख्यातवा भाग, तीहि प्रमाण काल है। अवशेषनि का सामान्यवत् काल है। अनाहारक विषै मिथ्यादृष्टि जघन्य एक समय, उत्कृष्ट तीन समय। सासादन, असयत का जघन्य एक समय, उत्कृष्ट दोय समय, सयोगी का जघन्य वा उत्कृष्ट तीन समय, अयोगी का सामान्यवत् काल है।

इहा मार्गणास्थाननि विषै काल कह्या, तहा असा जानना – विवक्षित मार्गणा के भेद का काल विषै विवक्षित, गुणस्थान का सद्भाव जेते काल पाइए, ताका वर्णन है। मार्गणा के भेद का वा तिस विषै गुणस्थान का पलटना भए, तिस काल का अभाव हो है।

अब अतर निरूपण करिए है – सो दोय प्रकार, नाना जीव अपेक्षा अर एक जीव अपेक्षा। तहा विवक्षित गुणस्थाननि विषै वा गुणस्थान अपेक्षा लीए मार्गणास्थान विषै कोई ही जीव जेते काल न पाइए, सो नाना जीव अपेक्षा अतर जानना। बहुरि विवक्षित स्थान विषै जो जीव वर्तै था, सोई जीव अन्य स्थान को प्राप्त होई करि बहुरि तिस ही स्थान को प्राप्त होई, तहा बीचि विषै जेता काल का प्रमाण, सो एक जीव अपेक्षा अतर जानना।

तहा प्रथम नाना जीव अपेक्षा कहिए है, सो सामान्य विशेष करि दोय प्रकार। तहा सामान्य करि मिथ्यादृष्टि, असयत, देशसयत, प्रमत्त, अप्रमत्त, सयोगीनि का अतर नाही है। सासादन का वा मिश्र का जघन्य एक समय, उत्कृष्ट पल्य का असख्यातवा भाग मात्र अतर है। च्यारि उपशमकनि का जघन्य एक समय, उत्कृष्ट पृथक्त्व वर्ष अतर है। च्यारि क्षपकनि का वा अयोगी का जघन्य एक समय, उत्कृष्ट छह मास अतर है।

बहुरि विशेष करि गति मार्गणा विषै नारकी, तिर्यंच, मनुष्य, देवनि विषै क्रम तै मिथ्यादृष्ट्यादि च्यारि, पाँच, चौदह, च्यारि गुणस्थाननि विषै सामान्यवत् अतर है।

बहुरि इंद्रिय मार्गणा विषै एकेंद्रिय विकलेन्द्रिय का अतर नाही है । पंचेंद्रिय विषै सर्व गुणस्थाननि का सामान्यवत् अंतर है ।

बहुरि काय मार्गणा विषै पंच स्थावरनि का अतर नाही है । त्रस विषै सर्व गुणस्थाननि का सामान्यवत् अतर है ।

बहुरि योग मार्गणा विषै तीनो योगनि विषै आदि के तेरह गुणस्थाननि का वा अयोगी का सामान्यवत् अतर है ।

बहुरि वेद मार्गणा विषै तीनों वेदनि विषै आदि के नव गुणस्थाननि वा अवेदीनि का सामान्यवत् अतर है । विशेष इतना दोऊ क्षपकनि का उत्कृष्ट अतर स्त्री-नपुसक वेद विषै पृथक्त्व वर्ष मात्र अर पुरुष वेद विषै साधिक वर्ष प्रमाण है ।

बहुरि कषाय मार्गणा विषै च्यारि कषायनि विषै वा अकषायनि विषै अपने-अपने गुणस्थाननि का सामान्यवत् अंतर है । विशेष इतना – दोय क्षपकनि का उत्कृष्ट अतर साधिक वर्षमात्र है ।

बहुरि ज्ञान मार्गणा विषैं तीन कुज्ञान, पाच सुज्ञाननि विषै अपने-अपने गुणस्थाननि का सामान्यवत् अतर है । विशेष इतना – अवधि, मन पर्ययज्ञान विषै क्षपकनि का उत्कृष्ट अतर साधिक वर्षमात्र हैं ।

बहुरि सयम मार्गणा विषै सात भेदनि विषै अपने-अपने गुणस्थाननि का सामान्यवत् अतर है ।

बहुरि दर्शन मार्गणा विषै च्यारि भेदनि विषै अपने-अपने गुणस्थाननि का सामान्यवत् अतर है । विशेष इतना – अवधि दर्शन विषै क्षपकनि का अतर साधिक वर्षमात्र है ।

बहुरि लेश्या मार्गणा विषै छहो भेदनि विषै वा अलेश्या विषै अपने-अपने गुणस्थाननि का सामान्यवत् अतर है ।

बहुरि भव्य मार्गणा विषै दोय भेदनि विषै अपने-अपने गुणस्थाननि का सामान्यवत् अतर है ।

बहुरि सम्यक्त्व मार्गणा विषै छह भेदनि विषै अपने-अपने गुणस्थाननि का सामान्यवत्त अतर है । विशेष इतना – उपशम सम्यक्त्व विषै असयतादिक का जघन्य

अतर एक समय है। अर उत्कृष्ट अतर असयत का सात दिन-राति, देश सयत का चौदह दिन-राति, प्रमत्त-अप्रमत्त का पद्रह दिन-राति अतर है।

बहुरि सज्ञी मार्गणा विपै दोय भेदनि विषै वा दोऊ व्यपदेशरहितनि विपै अपने-अपने गुणस्थाननि का सामान्यवत् अतर है।

बहुरि आहार मार्गणा विषै दोऊ भेदनि विपै अपने-अपने गुणस्थाननि का सामान्यवत् अतर है। विशेष इतना – अनाहारक विपै असयत का जघन्य एक समय, उत्कृष्ट पृथक्त्व मास।

सयोगी का जघन्य एक समय, उत्कृष्ट पृथक्त्व वर्षमात्र अतर है।

अब एक जीव अपेक्षा अतर कहिए है,

सो सामान्य-विशेष करि दोय प्रकार। तहाँ सामान्य करि मिथ्यादृष्टि का अतर जघन्य अतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट देशोन दूणा छचासठि सागर। बहुरि सासादन का जघन्य पल्य का असख्यातवे भाग, उत्कृष्ट देशोन अर्ध पुद्गल परिवर्तन। बहुरि मिश्र, असयत, देशसयत, प्रमत्त, अप्रमत्त, च्यारि उपशमक, इनिका जघन्य अतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट देशोन अर्ध पुद्गल परिवर्तन। बहुरि च्यारि क्षपक, सयोगी, अयोगी इनिका अतर नाही है।

बहुरि विशेष करि गति मार्गणा विषै नारक विपै मिथ्यादृष्टि आदि असयत पर्यतनि का जघन्य अतर सामान्यवत्। उत्कृष्ट अतर सात पृथ्वीनि विषै क्रम तै एक, तीन, सात, दश, सतरह, बाईस, तेतीस देशोन सागर जानना।

बहुरि तिर्यञ्चनि विषै मिथ्यादृष्ट्यादि देशसयत पर्यंतनि का सामान्यवत् अतर है। विशेष इतना – मिथ्यादृष्टि का उत्कृष्ट अतर देशोन तीन पल्य है।

बहुरि मनुष्य गति विषै मिथ्यादृष्ट्यादि च्यारि उपशमक पर्यंत जघन्य अतर सामान्यवत्। उत्कृष्ट अतर मिथ्यादृष्टि का तिर्यचवत्। सासादन, मिश्र, असयत का पृथक्त्व कोडि पूर्व अधिक तीन पल्य, देशसयत, प्रमत्त, अप्रमत्त। च्यारि उपशमक का पृथक्त्व कोडि पूर्व प्रमाण है। अर क्षपक, सयोगी, अयोगीनि का सामान्यवत् है।

बहुरि देव विषै मिथ्यादृष्ट्यादि असंयत पर्यंतनि का जघन्य अतर सामान्यवत्। उत्कृष्ट अतर देशोन इकतीस सागर है।

बहुरि इद्रिय मार्गणा विषै एकेद्रिय का जघन्य अंतर क्षुद्रभव, उत्कृष्ट अतर पृथक्त्व कोडि पूर्व अधिक दोय हजार सागर । विकलेंद्रिय का जघन्य अतर क्षुद्रभव, उत्कृष्ट अतर असख्यात पुद्गल परिवर्तन मात्र है । यहु अतर एकेंद्रियादिक पर्यायनि का कह्या है, गुणस्थान मिथ्यादृष्टि ही है, ताका तहा अतर है नाही । पचेंद्रिय विषै मिथ्यादृष्टि का सामान्यवत्, सासादनादि च्यारि उपशमक पर्यंतनि का जघन्य अतर सामान्यवत्, उत्कृष्ट अतर पृथक्त्व कोडि पूर्व अधिक हजार सागर है । अवशेषनि का सामान्यवत् अतर है ।

बहुरि काय मार्गणा विषै पृथ्वी, अप, तेज, वायुकाय का जघन्य क्षुद्रभव उत्कृष्ट असख्यात पुद्गल परिवर्तन अर वनस्पति का जघन्य क्षुद्रभव, उत्कृष्ट असख्यात लोक मात्र अतर है । यहु अतर पृथ्वीकायिकादि का कह्या है, गुणस्थान मिथ्यादृष्टि है । ताका तहा अतर है नाही ।

त्रसकायिक विषै मिथ्यादृष्टि का सामान्यवत्, सासादनादि च्यारि उपशमक पर्यंतनि का जघन्य सामान्यवत्, उत्कृष्ट पृथक्त्व कोडि पूर्व अधिक दोय हजार सागर अतर है । अवशेषनि का सामान्यवत् अतर है ।

बहुरि योग मार्गणा विषै मन, वचन, काय योगनि विषै सभवते गुणस्थाननि का वा अयोगी का अतर नाही, जातै एक ही योग विषै गुणस्थानातर को प्राप्त होइ करि विवक्षित गुणस्थान विषै प्राप्त होता नाही ।

बहुरि वेद मार्गणा विषै स्त्री, पुरुष, नपुसक वेदनि विषै मिथ्यादृष्टि आदि दोऊ उपशमक पर्यत जघन्य अतर सामान्यवत् है । उत्कृष्ट अतर स्त्रीवेद विषै मिथ्या-दृष्टि का देशोन पचावन पल्य, औरनि का पृथक्त्व सौ पल्य पुरुषवेद विषै मिथ्यादृष्टि का सामान्यवत्, औरनि का पृथक्त्व सौ सागर । नपुसकवेद विषै मिथ्यादृष्टि का तेतीस सागर देशोन, औरनि का सामान्यवत् अतर है । दोय क्षपकनि का सामान्यवत् अतर है । बहुरि वेदरहितनि विषै उपशम अनिवृत्तिकरण, सूक्ष्म सापराय का जघन्य वा उत्कृष्ट अतर अतर्मुहूर्त है, औरनि का अतर नाही है ।

बहुरि कषाय मार्गणा विषै क्रोध, मान, माया, लोभ विषै मिथ्यादृष्टचादि उपशम अनिवृत्तिकरण पर्यत का मनोयोगवत्, दोय क्षपकनि का अर केवल लोभ विषै सूक्ष्मसापराय के उपशम वा क्षपक का अर अकषाय विषै उपशातकषायादि का अंतर नाही है ।

बहुरि ज्ञान मार्गणा विषै कुमति, कुश्रुत, विभग विषै मिथ्यादृष्टि सासादन का अतर नाही । मति, श्रुत, अवधि विषै असयत का अतर जघन्य अतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट देशोन कोडि पूर्व । देश संयत का जघन्य अतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट साधिक छ्यासठि सागर। प्रमत्त-अप्रमत्त का जघन्य अतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट साधिक तेतीस सागर । च्यारि उपशमकनि का जघन्य अतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट साधिक छ्यासठि सागर । च्यारि क्षपकनि का सामान्यवत् अतर है । बहुरि मन पर्यय विषै प्रमत्तादि क्षीण कषाय पर्यंतनि का सामान्यवत् अतर है । विशेष इतना – प्रमत्त-अप्रमत्त का अतर्मुहूर्त, च्यारि उपशमकनि का देशोन कोडि पूर्व प्रमाण उत्कृष्ट अतर है । बहुरि केवलज्ञान विषै सयोगी, अयोगी का सामान्यवत् अतर है ।

बहुरि सयम मार्गणा विषै सामायिक, छेदोपस्थापन विषै प्रमत्त-अप्रमत्त का जघन्य वा उत्कृष्ट अतर अतर्मुहूर्त है । दोऊ उपशमक का जघन्य अतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट देशोन कोडि पूर्व अर दोऊ क्षपकनि का सामान्यवत् अतर है । परिहारविशुद्धि विषै प्रमत्त-अप्रमत्त विषै जघन्य वा उत्कृष्ट अतर अतर्मुहूर्त है । सूक्ष्मसापराय विषै उपशमक वा क्षपक का अर यथाख्यात विषै उपशात कषायादिक का अर सयतासयत विषै देश सयत का अतर नाही है । असयम विषै मिथ्यादृष्टि का जघन्य अतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट देशोन तेतीस सागर । सासादन, मिश्र, असयत का सामान्यवत् अतर है ।

बहुरि दर्शन मार्गणा विषै चक्षु, अचक्षुदर्शन विषै मिथ्यादृष्टचादि क्षीणकषाय पर्यन्तनि का सामान्यवत् अतर है । विशेष इतना – चक्षुदर्शन विषै सासादनादि च्यारि उपशमक पर्यतनि का उत्कृष्ट अतर देशोन दोय हजार सागर है । अवधिदर्शन विषै अवधिज्ञानवत् अतर है । केवलदर्शन विषै सयोगी, अयोगी का अतर नाही है ।

बहुरि लेश्या मार्गणा विषै कृष्ण, नील, कापोत विषै मिथ्यादृष्टचादि असयत पर्यतनि का जघन्य अतर सामान्यवत् है । उत्कृष्ट अतर क्रम तै देशोन तेतीस, सतरह, अर सात सागर प्रमाण है । पीत, पद्म विषै मिथ्यादृष्टचादि असयत पर्यतनि का जघन्य अतर सामान्यवत्, उत्कृष्ट अतर क्रम तै साधिक दोय अर अठारह सागर है । देशसयत, प्रमत्त, अप्रमत्त का अतर नाही है । शुक्ल लेश्या विषै मिथ्यादृष्टचादि असयत पर्यतनि का जघन्य अतर सामान्यवत् है, उत्कृष्ट अतर देशोन इकतीस सागर है । देशसयत, प्रमत्त का अतर नाही है । अप्रमत्त, तीन उपशमक का जघन्य वा उत्कृष्ट अतर अतर्मुहूर्त है । उपशात कषाय, च्यारि क्षपक, सयोगीनि का अतर नाही है । अलेश्या विषै अयोगीनि का अतर नाही है ।

बहुरि भव्य मार्गणा विषै भव्य विषै सर्व गुणस्थाननि का सामान्यवत् अंतर है। अभव्य विषै मिथ्यादृष्टि का अंतर नाही है।

बहुरि सम्यक्त्व मार्गणा विषै क्षायिक सम्यक्त्व विषै असंयतादि च्यारि उपशमक पर्यंतनि का जघन्य अंतर अंतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट असंयत का देशोन कोडि पूर्व, औरनि का साधिक तेतीस सागर अंतर है। च्यारि क्षपक, सयोगी, अयोगी का अंतर नाही है। क्षायोपशमिक विषै असंयतादि अप्रमत पर्यंतनि का जघन्य अंतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट असंयत का देशोन कोडि पूर्व, देशसंयत का देशोन छयासठि सागर, प्रमत्त-अप्रमत्त का साधिक तेतीस सागर अंतर है। औपशमिक विषै असंयतादि तीन उपशमक पर्यंतनि का जघन्य वा उत्कृष्ट अंतर अंतर्मुहूर्तमात्र है। उपशांत कषाय का अंतर नाही है। मिश्र, सासादन, मिथ्यादृष्टि विषै अपने-अपने गुणस्थाननि का अंतर नाही है।

बहुरि सञ्ज्ञी मार्गणा विषै सञ्ज्ञी विषै मिथ्यादृष्टि का सामान्यवत्, सासादनादि च्यारि उपशमक पर्यन्तनि का जघन्य सामान्यवत्, उत्कृष्ट पृथक्त्व सौ सागर, च्यारि क्षपकनि का सामान्यवत् अंतर है। असञ्ज्ञी विषै मिथ्यादृष्टि का अंतर नाही है। उभयरहित विषै सयोगी, अयोगी का अंतर नाही है।

बहुरि आहारक मार्गणा विषै आहारक मिथ्यादृष्टि का सामान्यवत्, सासादनादि च्यारि उपशमक पर्यंतनि का जघन्य सामान्यवत्, उत्कृष्ट असंख्यातासंख्यात कल्पकाल मात्र सूच्यंगुल का असंख्यातवा भाग अंतर है। च्यारि क्षपक सयोगीनि का अंतर नाही है। अनाहारक विषै मिथ्यादृष्टि, सासादन, असंयत, सयोगी, अयोगी का अंतर नाही है।

इहा मार्गणास्थान विषै अंतर कह्या है, तहा असा जानना – विवक्षित मार्गणा के भेद का काल विषै विवक्षित गुणस्थान का अंतराल जेते काल पाइए, ताका वर्णन है। मार्गणा के भेद का पलटना भए अथवा मार्गणा के भेद का सद्भाव होतै विवक्षित गुणस्थान का अंतराल भया था, ताकी बहुरि प्राप्ति भए, तिस अंतराल का अभाव हो है। ऐसै प्रसंग पाइ काल का अर अंतर का कथन कौ कीया है, सो जानना।

आगै इनि चौदह मार्गणानि विषै गति मार्गणा का स्वरूप कौ कहै है —

गइउदयजपज्जाया, चउगइगमणस्स हेउ वा हु गई।
णारयतिरिक्खमाणुस, देवगइ त्ति य हवे चदुधा ॥१४६॥

गत्युदयजपर्यायः, चतुर्गतिगमनस्य हेतुर्वा हि गतिः ।
नारकतिर्यग्मानुषदेवगतिरिति च भवेत् चतुर्धा ।।१४६।।

गम्यते कहिये गमन करिए, सो गति है ।

इहां तर्क – जो ऐसै कहै गमन क्रियारूप परिणया जीव कौं पावने योग्य द्रव्यादिक कौ भी गति कहना सभवै ।

तहा समाधान – जो ऐसे नाही है, जो गतिनामा नामकर्म के उदय तै जो जीव के पर्याय उत्पन्न होइ, तिसही कौ गति कहिए । सो गति च्यारि प्रकार – १ नारक गति २ तिर्यंच गति ३ मनुष्यगति ४ देव गति ए च्यारि गति है ।

आगे नारक गति कौं निर्देश करै है –

ण रमंति जदो णिच्चं, दव्वे खेत्ते य काल-भावे य ।
अण्णोण्णेहिं य जह्मा, तह्मा ते णारया भणिया।।[1] १४७।।

नरमंते यतो नित्यं, द्रव्य क्षेत्रे च कालभावे च ।
अन्योन्यैश्च यस्मात्तस्मात्ते नारता (का) भणिताः ।।१४७।।

टीका – जा कारण तै जे जीव द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव विषै अथवा परस्पर मे रमे नाही–जहा क्रीडा न करै, तहा नरक सबधी अन्न-पानादिक वस्तु, सो द्रव्य कहिए । बहुरि तहाकी पृथ्वी सो क्षेत्र कहिए । बहुरि तिस गति सबधी प्रथम समय तै लगाइ अपनी आयु पर्यत जो काल, सो काल कहिए । तिनि जीवनी के चैतन्यरूप परिणाम, सो भाव कहिए । इनि च्यारोनि विषै जे कबहू रति न मानै । बहुरि अन्य भव सबधी वैर करि इस भव मे उपजे क्रोधादिक, तिनिकरि नवीन-पुराणे नारकी परस्पर रमै नाहि है 'रति कहिए प्रीतिरूप कब ही तातै' 'न रता.' कहिए नरत, तेई 'नारत' जानने । जातै स्वार्थ विषै अण् प्रत्यय का विधान है, तिनकी जो गति, सो नारतगति जानना । अथवा नरकविषै उपजै ते नारक, तिनिकी जो गति, सो नारक गति जाननी । अथवा हिंसादिक आचरण विषै निरता कहिए प्रवर्तै, अैसे जो निरत, तिनकी जो गति, सो निरतगति जाननी । अथवा नर कहिए प्राणी, तिनिकौं कायति कहिए पीडै दु ख देइ,

---

१ षटखडागम – धवला पुस्तक १, पृष्ठ २०३ गाथा १२६

अैसे जे नरक कहिए पापकर्म, ताका अपत्य कहिए तीहि का उदय तै निपजे जे नारक तिनकी जो गति, सो नारक गति जाननी। अथवा द्रव्य, क्षेत्र, काल, भावनि विषै वा परस्पर रत कहिए प्रीतिरूप नाही तै नरत, तिनकी जो गति सो नरतगति जाननी। **निर्गत** कहिए गया है **अय** कहिए पुण्यकर्म, जिनितै अैसे जे निरय, तिनिकी जो गति सो निरय गति जाननी। अैसे निरुक्ति करि नारकगति का लक्षण कह्या।

आगै तिर्यचगति का स्वरूप कहै है –

तिरियंति कुडिलभावं, सुविउलसंण्ण णिगिट्ठिमण्णाणा।
अच्चंतपावबहुला, तह्मा तेरिच्छया भणिया[1] ॥१४८॥

तिरोचति कुटिलभावं, सुविवृतसंज्ञा निकृष्टमज्ञाना ।
अत्यंतपापबहुलास्तस्मात्तैरश्चिका भणिताः ॥१४८॥

टीका – जातै जो जीव **सुविवृतसंज्ञाः** कहिए प्रकट है आहार नै आदि देकरि सज्ञा जिनकै अैसे है। बहुरि प्रभाव, सुख, द्युति, लेश्या की विशुद्धता इत्यादिक करि हीन है, तातै निकृष्ट है। बहुरि हेयोपादेय का ज्ञान रहित है, तातै अज्ञान है। बहुरि नित्यनिगोद की अपेक्षा अत्यत पाप की हैं बहुलता जिनिकै अैसे है, तातै तिरोभाव जो कुटिलभाव, मायारूप परिणाम ताहि **अर्चति** कहिए प्राप्त होइ, ते तिर्यंच कहे है। बहुरि तिर्यच ही **तैरश्च** कहिए। इहा स्वार्थ विषै अण् प्रत्यय का विधान हो है। अैसे जो तिर्यक् पर्याय, सोही तिर्यग्गति है, अैसा कह्या है।

आगै मनुष्य गति का स्वरूप कहै है –

मण्णंति जदो णिच्चं, मणेण णिउणा मणुक्कडा जह्मा।
मण्णुब्भवा य सव्वे, तह्मा ते माणुसा भणिदा[2] ॥१४९॥

मन्यंते यतो नित्यं, मनसा निपुणा मनसोत्कटा यस्मात् ।
मनूद्भवाश्च सर्वे, तस्मात्ते मानुषा भणिताः ॥१४९॥

टीका – जातै जे जीव नित्य ही **मन्यंते** कहिए हेयोपादेय के विशेष कौं जानै है। अथवा **मनसा निपुणाः** कहिए अनेक शिल्पी आदि कलानि विषै प्रवीण है। अथवा

---

१ षटखडागम – धवला पुस्तक १, पृष्ठ २०३, गाथा १२६

२ षटखडागम – धवला पुस्तक १, पृष्ठ २०४, गाथा १३०

'मनसोत्कटाः' कहिए अवधारना आदि दृढ उपयोग के धारी है। अथवा 'मनोरुद्भवाः' कहिए कुलकरादिक तै निपजे है, ताते ते जीव सर्व ही मनुष्य हैं, असे आगम विषै कहै है।

आगे तिर्यंच, मनुष्य गति के जीवनि का भेद दिखावै है –

सामण्णा पंचिंदी, पज्जत्ता जोणिणी अपज्जत्ता ।
तिरिया णरा तहावि य, पंचिंदियभंगदो हीणा ॥१५०॥

सामान्याः पंचेंद्रियाः, पर्याप्ता योनिमत्यः अपर्याप्ताः ।
तिर्यंचो नरास्तथापि च, पंचेंद्रियभंगतो हीनाः ॥१५०॥

टीका - तिर्यंच पाच प्रकार – १ सामान्य तिर्यंच २ पचेंद्री तिर्यंच ३ पर्याप्त तिर्यंच ४ योनिमती तिर्यंच ५ अपर्याप्त तिर्यंच। तहा सर्व ही तिर्यंच भेदनि का समुदायरूप, सो तौ सामान्य तिर्यंच है। बहुरि जो एकेंद्रियादिक विना केवल पचेंद्री तिर्यंच, सो पचेंद्री तिर्यंच है। बहुरि जो अपर्याप्त विना केवल पर्याप्त तिर्यंच, सो पर्याप्त तिर्यंच है। बहुरि जो स्त्रीवेदरूप तिर्यंचणी, सो योनिमती तिर्यंच है। बहुरि जो लब्धि अपर्याप्त तिर्यंच है, सो अपर्याप्त तिर्यंच है। असे तिर्यंच पच प्रकार हैं।

बहुरि तैसे ही मनुष्य है। इतना विशेष – जो पचेंद्रिय भेद करि हीन है, ताते सामान्यादिरूप करि च्यारि प्रकार है। जाते मनुष्य सर्व ही पचेंद्री है, ताते जुदा भेद तिर्यंचवत् न होइ। ताते १ सामान्य मनुष्य २ पर्याप्त मनुष्य ३ योनिमती मनुष्य ४ अपर्याप्त मनुष्य ए च्यारि भेद मनुष्य के जानने।

तहा सर्व मनुष्य भेदनि का समुदायरूप, सो सामान्य मनुष्य है। केवल पर्याप्त मनुष्य, सो पर्याप्त मनुष्य है। स्त्रीवेदरूप मनुष्यणी, सो योनिमती मनुष्य है। लब्धि अपर्याप्तक मनुष्य सो अपर्याप्त मनुष्य है।

आगे देवगति कौ कहै है –

दिव्वंति जदो णिच्चं, गुणेहिं अट्ठेहिं दिव्वभावेहिं ।
भासंतदिव्वकाया, तह्मा ते वण्णिया देवा[1] ॥१५१॥

---

१ षट्खडागम – धवला पुस्तक १, पृष्ठ २०४, गाथा १३१

दीव्यंति यतो नित्यं, गुणैरष्टाभिर्दिव्यभावैः ।
भासमानदिव्यकायाः, तस्मात्ते वर्णिता देवाः ।।१५१।।

टीका – जाते जे जीव नित्य ही दीव्यंति कहिए कुलाचल समुद्रादिकनि विषै क्रीडा करै हैं, हर्ष करै है, मदनरूप हो है–कामरूप हो है । बहुरि अणिमा कौ आदि देकरि मनुष्य अगोचर दिव्यप्रभाव लीए गुण, तिनिकरि प्रकाशमान है । बहुरि-धातु-मल रोगादिक दोष, तिनिकरि रहित है । देदीप्यमान, मनोहर शरीर जिनिका असे है । तातै ते जीव देव है, असै आगम विषै कह्या है । असै निरुक्तिपूर्वक लक्षण करि च्यारि गति कही ।

यहा जे जीव सातौ नरकनि विषै महा दुःख पीडित है, ते नारक जानने । बहुरि एकेंद्री, बेद्री, तेद्री, चौइद्री, असज्ञी पचेद्री पर्यत सर्व ही अर जलचरादि पचेद्री ते सर्व तिर्यच जानने । बहुरि आर्य, म्लेच्छ, भोगभूमि, कुभोगभूमि विषै उत्पन्न मनुष्य जानने । भवनवासी, व्यतर ज्योतिषी, वैमानिक भेद लीए देव जानने ।

आगै संसार दशा का लक्षण रहित जो सिद्धगति ताहि कहै हैं –

जाइजरामरणभया, संजोगविजोगदुक्खसण्णाओ ।
रोगादिगा य जिस्से, ण संति सा होदि सिद्धगई[1] ।।१५२।।

जातिजरामरणभयाः, सयोगवियोगदुःखसज्ञाः ।
रोगादिकाश्च यस्या, न संति सा भवति सिद्धगतिः ।।१५२।।

टीका – जन्म, जरा, मरण, भय, अनिष्ट सयोग, इष्टवियोग, दुख, सज्ञा, रोगादिक नानाप्रकार वेदना जिहिविषै न होइ सो समस्तकर्म का सर्वथा नाश तै प्रकट भया सिद्ध पर्यायरूप लक्षण कौं धरै, सो सिद्धगति जाननी । इस गति विषै ससारीक भाव नाही, तातै ससारीक गति की अपेक्षा गति मार्गणा च्यारि प्रकार ही कही ।

मुक्तिगति की अपेक्षा तीहिं मुक्तिगति का नाम कर्मोदयरूप लक्षण नाही है । ताते याकी गतिमार्गणा विषै विवक्षा नाही है ।

आगै गतिमार्गणा विषै जीवनि की सख्या कहै है । तहा प्रथम ही नरक गति विषै गाथा दोयकरि कहै है–

---

१ षट्खडागम – धवला पुस्तक १, पृष्ठ २०४, गाथा १३२

सामण्णा णेरइया, घणअंगुलबिदियमूलगुणसेढी ।
बिदियादि वारदसअड, छत्तिदुणिजपदहिदा सेढी ॥१५३॥

सामान्या नैरयिका, घनांगुलद्वितीयमूलगुण श्रेणी ।
द्वितीयादिः द्वादश दशाष्टषट्त्रिद्विनिजपदहिता श्रेणी ॥१५३॥

टीका – सामान्य सर्व सातौ ही पृथ्वी के मिले हुवे नारकी जगत श्रेणी कौं घनागुल का द्वितीय वर्गमूल करि गुणै, जो परिमाण होइ, तिहि प्रमित है । इहा घनागुल का वर्गमूल करि उस प्रथम वर्गमूल का दूसरी बार वर्गमूल कीजिए, सो घनागुल का द्वितीय वर्गमूल जानना । जैसै अकसदृष्टि करि घनागुल का प्रमाण सोलह, ताका वर्गमूल च्यारि, ताका द्वितीय वर्गमूल दोय होय, ताकरि जगत श्रेणी का प्रमाण दोय सै छप्पन कौं गुणै, पाचसै बारह होय, तैसै इहा यथार्थ परिमाण जानना । बहुरि दूसरी पृथ्वी के नारकी जगत श्रेणी का बारह्वा वर्गमूल, ताका भाग जगत श्रेणी कौ दीए जो प्रमाण होइ, तीहि प्रमित है । इहा जगत श्रेणी का वर्गमूल करिए सो प्रथम मूल, बहुरि उसका वर्गमूल कीजिए, सो द्वितीय वर्गमूल, बहुरि उस द्वितीय वर्गमूल का वर्गमूल कीजिए सो तृतीय वर्गमूल, इत्यादिक असै ही इहा अन्य वर्गमूल जानना । बहुरि तीसरी पृथ्वी के नारकी जगत श्रेणी का दशवा वर्गमूल का भाग जगत श्रेणी कौ दीए जो प्रमाण आवै तितने जानने । बहुरि चौथी पृथ्वी के नारकी जगत श्रेणी का आठवा वर्गमूल का भाग जगत श्रेणी कौ दीए जो परिमाण आवै, तितने जानने । बहुरि असै ही पाचवी पृथ्वी, छठी पृथ्वी, सातवी पृथ्वी के नारकी अनुक्रम तै जगत श्रेणी का छठा, तीसरा, दूसरा वर्गमूल का भाग जगत श्रेणी कौ दीए, जो जो परिमाण आवै, तितने तितने जानने । जैसे दोय सै छप्पन का प्रथम वर्गमूल सोलह, द्वितीय वर्गमूल च्यारि, तृतीय वर्गमूल दोय, इनिका भाग क्रम तै दोय सै छप्पन कौ दीए सोलह, चौसठि, एक सौ अट्ठाईस होइ । तैसे इहा भी यथासभव परिमाण जानना ।

हेट्ठिमछप्पुढवीणं, रासिविहीणो दु सव्वरासी दु ।
पढमावणिह्मि रासी, णेरइयाणं तु णिद्दिट्ठो ॥१५४॥

अधस्तनषट्पृथ्वीना, राशिविहीनस्तु सर्वराशिस्तु ।
प्रथमावनौ राशिः, नैरयिकाणां तु निर्दिष्टः ॥१५४॥

टीका – नीचली जे दूसरी वशा पृथ्वी सौ लगाइ सातवी पृथ्वी पर्यंत छह पृथ्वी के नारकीनि का जोड दीए साधिक जगत श्रेणी का बारह्वा मूल करि भाजित जगत श्रेणी प्रमाण होइ सो पूर्वै सामान्य सर्वनारकीनि का परिमाण कह्या, तामैं घटाएं, जितने रहै, तितने पहिली धम्मा पृथ्वी के नारकी जानने । इहा घटावनेरूप त्रैराशिक ऐसै करना । सामान्य नारकीनि का प्रमाण विषै जगच्छ्रेणी गुण्य है । बहुरि घनागुल का द्वितीय वर्गमूल गुणकार है, सो इस प्रमाण विषै जगच्छ्रेणीमात्र घटावना होइ, तौ गुणकार का परिमाण मे स्यो एक घटाइए तौ जो जगच्छ्रेणी का बारह्वा वर्गमूल करि भाजित साधिक जगच्छ्रेणीमात्र घटावना होइ, तौ गुणकार मे स्यों कितना घटै, इहा प्रमाणराशि जगत श्रेणी, फलराशि एक, इच्छाराशि जगत श्रेणी का बारह्वा वर्गमूल करि भाजित जगत श्रेणी, सो इहा फल करि इच्छा कौ गुणै प्रमाण का भाग दीए साधिक एक का बारह्वां भाग जगत श्रेणी के वर्गमूल का भाग आया । सो इतना घनागुल का द्वितीय वर्गमूल मे स्यो घटाइ अवशेष करि जगत श्रेणी कौ गुणै, धर्मा पृथ्वी के नारकीनि का प्रमाण हो है ।

आगै तिर्यंच जीवा की सख्या दोय गाथा करि कहै है—

संसारी पंचक्खा, तप्पुण्णा तिगदिहीणया कमसो ।
सामण्णा पंचिंदी, पंचिंदियपुण्णतेरिक्खा ॥१५५॥

संसारिणः पंचाक्षाः, तत्पूर्णाः त्रिगतिहीनकाः क्रमशः ।
सामान्याः पंचेंद्रियाः, पंचेंद्रियपूर्णतैरश्चाः ॥१५५॥

टीका – ससारी जीवनि का जो परिमाण तीहिविषै नारकी, मनुष्य, देव इनि तीनौ गतिनि के जीवनि का परिमाण घटाए, जो परिमाण रहै, तितने प्रमाण सर्व सामान्य तिर्यच राशि जानने । बहुरि आगै इद्रिय मार्गणाविषै जो सामान्य पचेंद्रिय जीवनि का परिमाण कहिएगा, तामैसौ नारकी, मनुष्य, देवनि का परिमाण घटाए, पचेंद्रिय तिर्यचनि का प्रमाण हो है ।

बहुरि आगै पर्याप्त पचेंद्रियनि का प्रमाण कहिएगा, तामेस्यो पर्याप्त नारकी, मनुष्य, देवनि का परिमाण घटाए, पचेंद्रिय पर्याप्त तिर्यंचनि का परिमाण हो है ।

छस्सयजोयणकदिहदजगपदरं जोणिणीण परिमाणं ।
पुण्णूणा पंचक्खा, तिरियअपज्जत्तपरिसंखा ।।१५६।।

षट्शतयोजनकृतिहृतजगत्प्रतरं योनिमतीनां परिमाण ।
पूर्णोनाः पंचाक्षाः, तिर्यगपर्याप्तपरिसंख्या ।। १५६ ।।

टीका – छस्से योजन के वर्ग का भाग जगत प्रतर कौ दीए, जो परिमाण होइ, सो योनिमती द्रव्य तिर्यंचणीनि का परिमाण जानना । छस्सै योजन लबा, छस्सै योजन चौडा, एक प्रदेश ऊचा असा क्षेत्र विषै जितने आकाश प्रदेश होई, ताको भाग जगत प्रतर कौ देना, सो इनि योजननिकी प्रतरागुल कीजिए, तब चौगुणा पणट्ठी कौं इक्यासी हजार कोडि करि गुणिए, इतने प्रतरागुल होइ तिनिका भाग जगत प्रतर कौ दीजिए, तब एक भाग प्रमाण द्रव्य तिर्यंचणी जाननी । बहुरि पचेंद्रिय तिर्यंचनि का परिमाण विषै पचेंद्रिय पर्याप्त तिर्यंचनि का प्रमाण घटाए, अवशेष अपर्याप्त पचेंद्रियनि का परिमाण हो है ।

आगे मनुष्य गति के जीवनि की सख्या तीन गाथानि करि कहै हैं–

सेढी सूईअंगुलआदिमतदियपदभाजिदेगूणा ।
सामण्णमणुसरासी, पंचमकदिघणसमा पुण्णा ।।१५७।।

श्रेणी सूच्यगुलादिमतृतीयपदभाजितैकोना ।
सामान्यमनुष्यराशिः, पंचमकृतिघनसमाः पूर्णाः ।।१५७।।

टीका – जगतश्रेणी कौ सूच्यगुल के प्रथम वर्गमूल का भाग दीजिए, जो परिमाण आवै, ताकौ सूच्यगुल का तृतीय वर्गमूल का भाग दीजिए, जो परिमाण आवै, तामै एक घटाए, जितने अवशेष रहै, तितने सामान्य सर्व मनुष्य जानने । बहुरि द्विरूप वर्गधारा सबधी पचम वर्गस्थान बादाल है, ताका घन कीजिए, जितने होइ तितने पर्याप्त मनुष्य जानने । ते कितने है ? –

तल्लीनमधुगविमलं, धूमसिलागाविचोरभयमेरू ।
तटहरिखझसा होंति हु, माणुसपज्जत्तसंखंका ।।१५८।।

तल्लीनमधुगविमलं, धुमसिलागाविचोरभयमेरू ।
तटहरिखझसा भवंति हि, मानुषपर्याप्तसंख्याकाः ।।१५८।।

टीका – इहा अक्षर संज्ञा करि वामभाग तै अनुक्रम करि अक कहै हैं । सो अक्षर सज्ञा करि अक कहने का सूत्र उक्त च कहिए है–आर्या–

कटपयपुरस्थवर्णैर्नवनवपंचाष्टकल्पितैः क्रमशः ।
स्वरञनशून्यं संख्या मात्रोपरिमाक्षरं त्याज्यं ।।

याका अर्थ – ककार को आदि देकरि नव अक्षर, तिनिकरि अनुक्रम तै एक, दोय, तीन इत्यादिक अक जानने । जैसै ककार लिख्या होइ, तहा एका जानना, खकार होइ तहा दूवा जानना । गकार लिख्या होइ तहा तीया जानना । अैसै ही झकार पर्यंत नव ताईं अक जानने । क ख ग घ ङ च छ ज झ । बहुरि अैसै ही टकार
१ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८ ९
ने आदि देकरि । नव अक्षरनि तै एक, दोय, तीन आदि नव पर्यंत अक जानने
ट ठ ड ढ ण त थ द ध । बहुरि ऐसे ही पकारने आदि देकरि पच अक्षरनि तै एक, दोय
१ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८ ९
आदि पच अक जानने । प फ ब भ म । बहुरि ऐसे ही यकार ने आदि देकरि अष्ट
१ २ ३ ४ ५
अक्षरनि तै एक आदि अष्ट पर्यंत अक जानने । य र ल व श ष स ह । बहुरि जहा
१ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८
अकार आदि स्वर लिखे हो वा ञकार वा नकार लिख्या होइ, तहा बिंदी जानना । बहुरि अक्षर के जो मात्रा होइ तथा कोई ऊपरि अक्षर लिख्या होइ, तौ उनका कछू प्रयोजन नाही लेना । सो इस सूत्र अपेक्षा इहा अक्षर सज्ञा करि अक कहे है । आगै भी श्रुतज्ञानादि का वर्णन विषै ऐसे ही जानना । सो इहा **त** कहिए छह, **ल** कहिए तीन, **ली** कहिए तीन, **न** कहिए बिंदी, **म** कहिए पाच, **धु** कहिए नव, **ग** कहिए तीन, इत्यादि अनुक्रम तै च्यारि, पाच, तीन, नव, पाच, सात, तीन, तीन, च्यारि, छह, दोय, च्यारि, एक, पाच, दोय, छह, एक, आठ, दोय, दोय, नव, सात ए अक जानने । **'अंकानां वामतो गतिः'** ताते ए अक बाई तरफ तै लिखने । '७, ९२२८१६२, ५१४२६४३, ३७५९३५४, ३९५०३३६' सो ए सात कोडाकोडि कोडाकोडि बाणवै लाख अठाईस हजार एक सौ बासठि कोडा कोडि कोडि इकावन लाख बियालीस हजार छ सौ तियालीस कोडाकोडि सैतीस लाख गुणसठि हजार तीन सौ चौवन कोडि गुणतालीस लाख पचास हजार तीन सौ छत्तीस पर्याप्त मनुष्य जानने । इनिके अक दाहिणी तरफ सौ अक्षर सज्ञा करि अन्यत्र भी कहे है –

साधूरराजकीर्तेरेणाको भारतीविलोलसमधीः ।
गुणवर्गधर्मनिगलितसख्यावन्मानवेषु वर्णक्रमाः ।।

सो इहा सा कहिए सात, घू कहिए नव, र कहिए दोय, रा कहिए दोय, ज कहिए आठ, की कहिए एक, र्ते कहिए छह, इत्यादि दक्षिण भाग तै अक जानने ।

पज्जत्तमणुस्साणं, तिचउत्थो माणुसीण परिमाणं ।
सामण्णा पूण्णूणा, मणुवअपज्जत्तगा होंति ।।१५९।।

पर्याप्तमनुष्याणां, त्रिचतुर्थो मानुषीणा परिमाणं ।
सामान्याः पूर्णोना, मानवा अपर्याप्तका भवति ।।१५९।।

टीका – पर्याप्त मनुष्यनि का प्रमाण कह्या, ताका च्यारि भाग कीजिए, तामै तीन भाग प्रमाण मनुषिणी द्रव्य स्त्री जाननी । बहुरि सामान्य मनुष्य राशि मे स्यो पर्याप्त मनुष्यनि का परिमाण घटाए, अवशेष अपर्याप्त मनुष्यनि का परिमाण हो है । इहा 'प्राङ्मानुषोत्तरान्मनुष्या.' इस सूत्र करि पैंतालीस लाख योजन व्यास धरै मनुष्य लोक है । ताका 'विक्खभवग्गदहगुण' इत्यादि सूत्र करि एक कोडि बियालीस लाख तीस हजार दोय सै गुणचास योजन, एक कोश, सतरह सै छयासठि धनुष, पाच अगुल प्रमाण परिधि हो है । बहुरि याकौ व्यास की चौथाई ग्यारह लाख पचीस हजार योजन करि गुणे, सोलह लाख नव सै तीन कोडि छह लाख चौवन हजार छ सै एक योजन अर एक लाख योजन का दोय सै छप्पन भाग विषै उगणीस भाग इतना क्षेत्रफल हो है । बहुरि याके अगुल करने सो एक योजन के सात लाख अडसठि हजार अगुल हैं । सो वर्गराशि का गुणकार वर्गरूप होइ, इस न्याय करि सात लाख अडसठि हजार का वर्ग करि तिस क्षेत्रफल कौं गुणे नव हजार च्यारि सै बियालीस कोडाकोडि कोडि इक्यावन लाख च्यारि हजार नव सै अडसठि कोडाकोडि उगणीस लाख तियालीस हजार च्यारि सै कोडि प्रतरागुल हैं । बहुरि ए प्रमाणागुल हैं, सो इहा उत्सेधागुल न करने, जातै चौथा काल की आदि विषै वा उत्सर्पिणी काल का तीसरा काल का अन्तविषै वा विदेहादि क्षेत्र विषै आत्मागुल का भी प्रमाण प्रमाणागुल के समान ही है । सो इनि प्रतरागुलनि के प्रमाण तै भी पर्याप्त मनुष्य सख्यात गुणे हैं । तथापि आकाश की अवगाहन की विचित्रता जानि सदेह न करना ।

आगे देवगति के जीवनि की सख्या च्यारि गाथानि करि कहै है –

तिण्णिसयजोयणाणं, बेसदछप्पण्णअंगुलाणं च ।
कदिहदपदरं वेंतर, जोइसियाणं च परिमाणं ।।१६०।।

त्रिशतयोजनानां, द्विशतषट्पंचाशदंगुलानां च ।
कृतिहतप्रतरं व्यंतरज्योतिष्काणां च परिमाणम् ।।१६०।।

टीका – तीन सै योजन के वर्ग का भाग जगत्प्रतर कौ दीए, जो परिमाण होइ, तितना व्यतरनि का प्रमाण जानना । तीन सै योजन लबा, तीन सै योजन चौडा, एक प्रदेश ऊचा ऐसा क्षेत्र का जितने आकाश का प्रदेश होइ, ताका भाग दीजिए, सो याका प्रतरागुल कीए, पैसठि हजार पाच सै छत्तीस कौ इक्यासी हजार कोडि गुणा करिए इतने प्रतरागुल होइ, तिनिका भाग जगत्प्रतर कौ दीए व्यतरनि का प्रमाण होइ है ।

बहुरि दोय सै छप्पन अंगुल के वर्ग का भाग जगत्प्रतर कौ भाग दीएं, जो परिमाण आवै, तितना ज्योतिषीनि का परिमाण जानना । दोय सै छप्पन अगुल चौडा इतना ही लम्बा एक प्रदेश ऊचा, अैसा क्षेत्र का जितना आकाश का प्रदेश होइ ताका भाग दीजिए, सो याका प्रतरागुल पैसठि हजार पाच सै छत्तीस है । ताका भाग जगत्प्रतर कौ दीए ज्योतिषी देवनि का परिमाण हो है ।

घणअंगुलपढमपदं, तदियपदं सेढिसंगुणं कमसो ।
भवणे सोहम्मदुगे, देवाणं होदि परिमाणं ।।१६१।।

घनांगुलप्रथमपदं, तृतीयपदं श्रेणिसंगुणं क्रमशः ।
भवने सौधर्मद्विके, देवानां भवति परिमाणम् ।।१६१।।

टीका – घनागुल का जो प्रथम वर्गमूल, तिहिनै जगत्श्रेणी करि गुणै, जो परिमाण होइ, तितने भवनवासीनि का परिमाण जानना ।

बहुरि घनागुल का जो तृतीय वर्गमूल तिहिनै जगत्श्रेणी करि गुणै जो परिमाण होइ, तितने सौधर्म अरु ईशान स्वर्ग का वासी देवनि का परिमाण जानना ।

तत्तो एगारणवसगपणचउरिणयमूलभाजिदा सेढी ।
पल्लासंखेज्जदिमा, पत्तेयं आणदादिसुरा[1] ॥१६२॥

तत एकादशनवसप्तपंचचतुर्निजमूलभाजिता श्रेणी ।
पल्यासंख्यातकाः, प्रत्येकमानतादिसुराः ॥ १६२ ॥

टीका – बहुरि तहा ते ऊपरि सनत्कुमार-माहेद्र, बहुरि ब्रह्म–ब्रह्मोत्तर, बहुरि लांतव – कापिष्ठ, शुक्र – महाशुक्र, बहुरि शतार – सहस्रार इनि पाच युगलनि विषै अनुक्रमतै जगत्श्रेणी का ग्यारहवा, नवमा, सातवा, पाचवा, चौथा जो वर्गमूल, तिनिका भाग जगत्श्रेणी कौ दीए, जितना-जितना परिमाण आवै, तितना-तितना तहा के वासी देवनि का प्रमाण जानना ।

बहुरि ता ऊपरि आनत-प्राणत युगल, बहुरि आरण–अच्युत युगल, बहुरि तीन अधोग्रैवेयक, तीन मध्य ग्रैवेयक, तीन उपरिम ग्रैवेयक, बहुरि नव अनुदिश विमान, बहुरि सर्वार्थसिद्धि विमान विना च्यारि अनुत्तर विमान इन एक-एक विषै देव पल्य के असख्यातवै भाग प्रमाण जानने ।

तिगुणा सत्तगुणा वा, सव्वट्ठा माणुसीपमाणादो ।
सामण्णदेवरासी, जोइसियादो विसेसहिया ॥१६३॥

त्रिगुणा सप्तगुणा वा, सर्वार्था मानुषीप्रमाणतः ।
सामान्यदेवराशिः, ज्योतिष्कतो विशेषाधिकः ॥१६३॥

टीका – बहुरि सर्वार्थसिद्धि के वासी अहमिंद्र देव, मनुषिणीनि का जो परिमाण, पर्याप्त मनुष्यनि का च्यारि भाग मे तीन भाग प्रमाण कह्या था, तातै तिगुणा जानना । बहुरि कोई आचार्य का अभिप्रायतै सात गुणा है । बहुरि ज्योतिषी देवनि का परिमाण विषै भवनवासी, कल्पवासी, देवनि का प्रमाण करि साधिक असा ज्योतिषी देवनि के सख्यातवै भाग, जो व्यतर राशि, सो जोडै, सर्व सामान्य देवनि का परिमाण हो है ।

इति श्री आचार्य नेमिचद्र सिद्धातचक्रवर्ती विरचित गोम्मटसार द्वितीय नाम पचसग्रह ग्रथ की जीवतत्त्वप्रदीपिका नाम सस्कृतटीका के अनुसारि इस **सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका** नामा भाषाटीका विषै प्ररूपित जे वीस प्ररूपणा, तिनिविषैं **गतिप्ररूपणा** नामा छठा अधिकार सपूर्ण भया ॥६॥

---

१ षट्खडागम – धवला पुस्तक ३, पृष्ठ १७, गाथा १३ ।

सातवां अधिकार : इन्द्रिय-मार्गणा-प्ररूपणा

॥ मंगलाचरण ॥

लोकालोकप्रकाशकर, जगत पूज्य श्रीमान ।
सप्तम तीर्थंकर नमौं, श्रीसुपार्श्व भगवान ॥

अथ इद्रियमार्गणा का आरभ करै है । तहा प्रथम इद्रिय शब्द का निरुक्ति पूर्वक अर्थ कहै है –

अहमिंदा जह देवा, अविसेसं अहमहंति मण्णंता ।
ईसंति एक्कमेक्कं, इंदा इव इंदिये जाण [1] ॥१६४॥

अहमिंद्रा यथा देवा, अविशेषमहमहमिति मन्यमानाः ।
ईशते एकैकमिंद्रा, इव इंद्रियाणि जानीहि ॥१६४॥

टीका – जैसै ग्रैवेयकादिक विषै उपजे, असे अहमिंद्र देव, ते चाकर ठाकुर के (सेवक स्वामी के) भेद रहित 'मै ही मै हौ' ऐसे मानते सते, जुदे-जुदे एक-एक होइ, आज्ञादिक करि पराधीनतातै रहित होते सते, ईश्वरता कौ धरै है । प्रभाव कौ धरै है । स्वामीपना कौ धरै हैं । तैसै स्पर्शनादिक इद्रिय भी अपने-अपने स्पर्शादिविषय विषै ज्ञान उपजावने विषै कोई किसी के आधीन नाही, जुदे-जुदे एक-एक इद्रिय पर की अपेक्षा रहित ईश्वरता कौ धरै है । प्रभाव कौ धरै है । तातै अहमिंद्रवत् इन्द्रिय है । असे समानतारूप निरुक्ति करि सिद्ध भया, असा इन्द्रिय शब्द का अर्थ कौ हे शिष्य ! तू जानि ।

आगै इन्द्रियनि के भेद स्वरूप कहै है—

मदिआवरणखओवसमुत्थविसुद्धी हु तज्जबोहो वा ।
भाविंदियं तु दव्वं, देहुदयजदेहचिण्हं तु ॥१६५॥

मत्यावरणक्षयोपशमोत्थविशुद्धिर्हि तज्जबोधो वा ।
भावेंद्रियं तु द्रव्यं, देहोदयजदेहचिह्नं तु ॥१६५॥

---

[1] षट्खडागम – धवला पुस्तक १, पृष्ठ १३८, गाथा ८५ ।

टीका – इद्रिय दोय प्रकार है – एक भावेंद्रिय, एक द्रव्येंद्रिय ।

तहा लब्धि-उपयोगरूप तौ भावेंद्रिय है । तहा मतिज्ञानावरण के क्षयोपशम तै भई जो विशुद्धता इद्रियनि के जे विषय, तिनके जानने की शक्ति जीव कै भई, सो ही है लक्षण जाका, सो लब्धि कहिए ।

बहुरि मतिज्ञानावरण के क्षयोपशम तै निपज्या ज्ञान, विषय जानने का प्रवर्तनरूप सो, उपयोग कहिए । जैसे किसी जीव कै सुनने की शक्ति है । परतु उपयोग कही और जायगा लगि रह्या है, सो विना उपयोग किछू सुनै नाही । बहुरि कोऊ जान्या चाहै है अर क्षयोपशम शक्ति नाही, तौ कैसे जानै ? ताते लब्धि अर उपयोग दोऊ मिलै विषय का ज्ञान होइ । ताते इनिकौ भावेंद्रिय कहिए ।

भाव कहिए चेतना परिणाम, तीहिस्वरूप जो इद्रिय, सो भावेंद्रिय कहिए ।

जाते इद्र जो आत्मा, ताका जो लिंग कहिए चिह्न, सो इद्रिय है । असी निरुक्ति करि भी लब्धि-उपयोगरूप भावेंद्रिय का ही दृढपना हो है ।

बहुरि निर्वृत्ति अर उपकरण रूप द्रव्येंद्रिय है । तहा जिनि प्रदेशनि करि विषयनि कौं जानै, सो निर्वृत्ति कहिए । बहुरि वाके सहकारी निकटवर्ती जे होइ, तिनिकौ उपकरण कहिए । सो जातिनामा नामकर्म के उदय सहित शरीरनामा नाम-कर्म के उदयतै निपज्या जो निर्वृत्ति-उपकरणरूप देह का चिह्न, एकेंद्रियादिक का शरीर का यथायोग्य अपने-अपने ठिकाने आकार का प्रकट करनद्वारा पुद्गल द्रव्य-स्वरूप इद्रिय, सो द्रव्येंद्रिय है । असै इद्रिय द्रव्य-भाव भेद करि दोय प्रकार है । तहा लब्धि-उपयोग भावेंद्रिय है ।

तहा विषय के ग्रहण करने की शक्ति, सो लब्धि है । अर विषय के ग्रहणरूप व्यापार, सो उपयोग है ।

अब इद्रिय शब्द की निरुक्ति करि लक्षण कहै है—

'प्रत्यक्षनिरतानि इंद्रियाणि' अक्ष कहिए इन्द्रिय, सो अक्ष अक्ष प्रति जो प्रवर्तै, सो प्रत्यक्ष कहिए । असा प्रत्यक्षरूप विषय अथवा इंद्रिय ज्ञान तिहिं विषै निरतानि कहिए व्यापार रूप प्रवर्तै, ते इद्रिय है ।

इहां तर्क – जो इस लक्षण विषै विशेष के अभाव तै तिन इद्रियनि के संकर व्यतिकररूप करि प्रवृत्ति प्राप्त होय, जो परस्पर इंद्रियनि का स्वभाव मिलि जाय, सो सकर कहिए । अपने स्वभावतै जुदापना का होना, सो व्यतिकर कहिए ।

तहां समाधान – जो इहा **'प्रत्यक्षे नियमिते रतानि इद्रियाणि'** अपने-अपने नियमरूप प्रत्यक्ष विषै जे रत, ते इद्रिय है, अैसा लक्षण का प्रतिपादन है । तातै नियमरूप कहने करि अपना-अपना विशेष का ग्रहण भया । अथवा सकर व्यतिकर दोष निवारणे के अर्थि **'स्वविषयनिरतानि इंद्रियाणि'** स्वविषय कहिए अपना-अपना विषय, तिहि विषै **'नि'** कहिए निश्चय करि-निर्णय करि रतानि कहिए प्रवर्तै, ते इद्रिय है, अैसा कहना ।

इहां तर्क – जो सशय, विपर्यय विषै निर्णयरूप रत नाही हैं । तातै इस लक्षण करि सशय, विपर्ययरूप विषय ग्रहण विषै आत्मा कै अतीद्रियपना होइ ।

तहां समाधान – जो रूढि के बल तै निर्णय विषै वा संशय विपर्यय विषै दोऊ जायगा तिस लक्षण की प्रवृत्ति का विरोध नाही । जैसे **'गच्छतीति गौ'** गमन करै, ताहि गो कहिए; सो समभिरूढ–नय करि गमन करतै वा शयनादि करतै भी गो कहिए । तैसे इहा भी जानना । अथवा **'स्ववृत्तिनिरतानि इद्रियाणि'** स्ववृत्ति कहिए सशय, विपर्यय रूप वा निर्णयरूप अपना प्रवर्तन, तीहि विषै **निरतानि** कहिये व्यापार रूप प्रवर्तै, ते इद्रिय हैं, अैसा लक्षण कहना ।

इहा तर्क – जो अैसा लक्षण कीए अपने विषय का ग्रहण रूप व्यापार विषै जब न प्रवर्तै, तीहिं अवस्था विषै अतीद्रियपना कहना होइ ।

तहा समाधान – अैसे नाही, जातै पूर्वै ही उत्तर दीया है । रूढि करि विषय-ग्रहण व्यापार होतै वा न होतै पूर्वोक्त लक्षण सभवै है । अथवा **'स्वार्थनिरतानि इंद्रियाणि'** अर्यंते कहिए जानिए, सो अर्थ, सो अपने विषै वा विषयरूप अर्थ विषै जे निरत, ते इद्रिय है । सो इस लक्षण विषै कोऊ दोष नाही, तातै इहा किछू तर्क रूप कहना ही नाही । अथवा **'इंदनात् इंद्रियाणि'** इदनात् कहिए स्वामीपना तै इद्रिय है । स्पर्श, रस, गध, वर्ण, शब्द इनिका जाननेरूप ज्ञान का आवरणभूत जे कर्म, तिनिका क्षयोपशमतै अपना-अपना विषय जाननेरूप स्वामित्व कौं धरै द्रव्येंद्रिय है कारण जिनिका, ते इद्रिय है । अैसा अर्थ जानना । **उक्तं च**—

यदिंद्रस्यात्मनो लिंगं यदि वेंद्रेण कर्मणा ।
सृष्टं जुष्टं तथा दृष्ट दत्त चेति तदिंद्रियम् ।।

याका अर्थ – इन्द्र जो है आत्मा, ताका चिह्न, सो इन्द्रिय है । अथवा इन्द्र जो कर्म, ताकरि निपज्या वा सेया वा तैसें देख्या वा दीया, सो इन्द्रिय है ।

मलविद्धमणिव्यक्तिर्यथानेकप्रकारतः ।
कर्मविद्धात्मविज्ञप्तिस्तथानेकप्रकारत ।।

याका अर्थ – जैसे मल संयुक्त मणि की व्यक्ति अनेक प्रकार तें हो है । तैसें कर्म सयुक्त आतमा की जानने रूप क्रिया अनेक प्रकारतें होय है–ऐसें इद्रिय शब्द की निरुक्ति का अनेक प्रकार करि वर्णन कीया । बहुरि तिनि इद्रियनि विषै निर्वृत्ति दोय प्रकार – अभ्यतर, बाह्य ।

तहा जो निज-निज इद्रियावरण की क्षयोपशमता की विशेषता लीए आत्मा के प्रदेशनि का सस्थान, सो अभ्यतर-निर्वृत्ति है ।

बहुरि तिस ही क्षेत्र विषै जो शरीर के प्रदेशनि का सस्थान, सो बाह्य-निर्वृत्ति है ।

बहुरि उपकरण भी दोय प्रकार है – अभ्यतर, बाह्य ।

तहा इन्द्रिय पर्याप्ति करि आई जो नो-कम वर्गणा, तिनिका स्कधरूप जो स्पर्शादिविषय ज्ञान कौं सहकारी होइ, सो तौ अभ्यनर-उपकरण है । अर ताके आश्रयभूत जो चामडी आदि, सो बाह्य-उपकरण है । ऐसा विशेष जानना ।

आगे इनि इन्द्रियनि करि सयुक्त जीवनि कौं कहे है –

फासरसगंधरूवे, सद्दे णाणं च चिण्हयं जेसिं ।
इगिबितिचदुपंचदिय, जीवा णियभेयभिण्णा ओ[1] ।।१६६।।

स्पर्शरसगधरूपे, शब्दे ज्ञान च चिह्नकं येषाम् ।
एकद्वित्रिचतु.पचेंद्रियजीवाः निजभेदभिन्ना ओः ।।१६६।।

---

१ 'ओ' इति शिष्यसबोधनार्थ प्राकृते अव्ययम् । म प्र

टीका – जिनि जीवनि का स्पर्श विषै ज्ञान है, असा चिह्न होइ, ते एकेंद्रिय है। बहुरि जिनिका स्पर्श अर रस विषै ज्ञान है, असा चिह्न होइ ते जीव द्वीद्रिय है। बहुरि जिनिका स्पर्श, रस, गध विषै ज्ञान है, असा चिह्न होइ, ते जीव तेइन्द्रिय है। बहुरि जिनिका स्पर्श, रस, गध, वर्ण विषै ज्ञान है, असा चिह्न होइ, ते जीव चतुरिंद्रिय है। बहुरि जिनिका स्पर्श, रस, गध, वर्ण, शब्द विषै ज्ञान है, असा चिह्न होइ, ते जीव पचेंद्रिय हैं। ते सर्व जीव अपने-अपने भेद करि जुदे है – ऐसे जानने।

आगे एकेंद्रियादिक जीवनि के केती-केती इंद्री सभवै है, सो कहै है—

एइंदियस्स फुसणं, एक्कं वि य होदि सेसजीवाणं।
होंति कमउड्ढियाइं, जिब्भाघाणच्छिसोत्ताइं[1] ॥१६७॥

एकेंद्रियस्य स्पर्शनमेकमपि च भवति शेषजीवानां।
भवंति क्रमवर्धितानि, जिह्वाघ्राणाक्षिश्रोत्राणि ॥१६७॥

टीका – इंद्रिय पच है। तिनि विषै सर्व शरीर कौ स्पर्शन कहिए। जिह्वा कौ रसना कहिए, नासिका कौ घ्राण कहिए, नेत्र कौ चक्षु कहिए, कर्ण कौ श्रोत्र कहिए।

तहा एकेंद्रिय जीव के एक स्पर्शन इद्री ही है। बहुरि अवशेष जीवनि कै एक-एक बधता इन्द्रिय अनुक्रमते जानने। सो बेइद्री के रसना इद्री बध्या, तेइद्री के घ्राण इद्री बध्या, चतुरिंद्रिय कै चक्षु इन्द्रिय बध्या, पचेंद्रिय कै श्रोत्र इद्रिय बध्या। जातै एक है इन्द्रिय जिनिकै, ते जीव एकेंद्रिय है। दोय है इन्द्रिय जिनिकै, ते द्वीद्रिय है। तीन हैं इन्द्रिय जिनिकै, ते त्रीद्रिय है। च्यारि है इन्द्रिय जिनकै, ते चतुरिंद्रिय है। पाच है इन्द्रिय जिनकै, ते पचेंद्रिय है। ऐसे निरुक्ति हो है।

आगे स्पर्शनादि इन्द्रियनि के विषयभूत क्षेत्र का परिमाण कहै है –

धणुवीसडदसयकदी, जोयणछादालहीणतिसहस्सा।
अट्ठसहस्स धणूणं, विसया दुगुणा असण्णि त्ति ॥१६८॥

धनुर्विंशत्यष्टदशककृतिः योजनषट्चत्वारिंशद्धीनत्रिसहस्राणि।
अष्टसहस्रं धनुषां, विषया द्विगुणा असञ्ज्ञीति ॥ १६८ ॥

---

१ षट्खडागम – धवला पुस्तक १, पृष्ठ २६१, गाथा १४२।

टीका – एकेंद्रिय जीव के स्पर्शन इन्द्रिय के विषय का क्षेत्र, वीस की कृति (वर्ग) च्यारि सै धनुष प्रमाण जानना । बहुरि बेइन्द्रियादिक असैनी पचेंद्रिय पर्यंत कै दूणा-दूणा जानना, सो द्वीद्रिय कै आठ सै धनुष । त्रीद्रिय कै सोला सै धनुष । चतुरिद्रिय कै बत्तीस से धनुष । असैनी पंचेंद्रिय कै चौसठि सै धनुष-स्पर्शन इन्द्रिय का विषय-क्षेत्र जानना । इतना-इतना क्षेत्र पर्यंत तिष्ठता जो स्पर्शनरूप विषय ताकौं जानै ।

बहुरि द्वीद्रिय जीव कै रसना इन्द्रिय का विषय-क्षेत्र, आठ की कृति चौसठि धनुष प्रमाण जानना । आगै दूणा-दूणा, सो तेइन्द्रिय कै एक सौ अठाईस धनुष । चतुरिद्रिय कै दोय सै छप्पन धनुष । असैनी पचेंद्रिय कै पाच सै बारा धनुष-रसना इद्रिय का विषयभूत क्षेत्र का परिमाण जानना ।

बहुरि ते इन्द्रिय कै घ्राण इन्द्रिय का विषयभूत क्षेत्र दश की कृति, सौ धनुष प्रमाण जाना । आगै दूणा-दूणा सो, चौइद्री कै दोय सै धनुष । असैनी पचेंद्रिय कै च्यारि सै धनुष । घ्राण इन्द्रिय का विषयभूत क्षेत्र का प्रमाण जानना ।

बहुरि चौ इन्द्रिय कै नेत्र इन्द्रिय का विषय क्षेत्र छियालीस घाटि तीन हजार योजन जानना । यातै दूणा पाच हजार नौ सै आठ योजन असैनी पचेद्रिय कै नेत्र इन्द्रिय का विषयभूत क्षेत्र जानना । बहुरि असैनी पचेद्रिय कै श्रोत्र इन्द्रिय का विषय क्षेत्र का परिमाण आठ हजार धनुष प्रमाण जानना ।

सण्णिस्स बार सोदे, तिण्ह णव जोयणाणि चक्खुस्स ।
सत्तेतालसहस्सा बेसदतेसट्ठिमदिरेया ।। १६६ ।।

सञ्ज्ञिनो द्वादश श्रोत्रे, त्रयाणां नव योजनानि चक्षुष ।
सप्तचत्वारिंशत्सहस्राणि द्विशतत्रिषष्ट्यतिरेकाणि ।।१६९।।

टीका – सैनी पचेद्रिय कै स्पर्शन, रसना, घ्राण इनि तीनौ इन्द्रियनि का नव-नव योजन विषय क्षेत्र है । बहुरि नेत्र इन्द्रिय का विषय क्षेत्र सैतालीस हजार दोय सै तरेसठि योजन, बहुरि सात योजन का बीसवा भागकरि अधिक है । बहुरि श्रोत्र इन्द्रिय का विषयक्षेत्र बारह योजन है ।

तिण्णिसयसट्ठिविरहिद, लक्खं दशमूलताडिदे मूलं ।
णवगुणिदे सट्ठिहिदे, चक्खुप्फासस्स अद्धाणं ।।१७०।।

त्रिशतषष्टिविरहितलक्षं दशमूलताडिते मूलम् ।
नवगुणिते षष्टिहृते, चक्षुःस्पर्शस्य अध्वा ।।१७०।।

टीका – सूर्य का चार (भ्रमण) क्षेत्र पाच सै बारा योजन चौडा है, तामैं एक सै अस्सी योजन तौ जबूद्वीप विषै है । अर तीन से बत्तीस योजन लवण समुद्र विषै है । सो जब सूर्य श्रावण मास कर्कसक्राति विषै अभ्यतर परिधि विषै आवै, तब जंबूद्वीप का अन्त सौ एक सौ अस्सी योजन उरै भ्रमण करै है, सो इस अभ्यतर परिधि का प्रमाण कहै है – लाख योजन जबूद्वीप का व्यास मे सौ दोनो तरफ का चार क्षेत्र का परिमाण तीन सै साठि योजन घटाया, तब निन्याणवै हजार छ सै च्यालीस योजन व्यास रह्या । याका परिधि के निमित्त **'विक्खंभवग्गदहगुण'** इत्यादि सूत्र अनुसारि याका वर्ग करि ताकौ दश गुणा कहिए, पीछै जो परिमाण होइ, ताका वर्गमूल ग्रहण कीजिए, यो करतै तीन लाख पन्द्रह हजार निवासी योजन प्रमाण याका परिधि भया, सो दोय सूर्यनि की अपेक्षा साठि मुहूर्त मे इतने क्षेत्र विषै भ्रमण होइ, तौ अभ्यतर परिधि विषै दिन का प्रमाण अठारह मुहूर्त, सो मध्याह्न समय सूर्य मध्य आवै तब अयोध्या की बराबर होइ, तातै नौ मुहूर्त मै कितने क्षेत्र मे भ्रमण होइ, ऐसै त्रैराशिक करना । इहा प्रमाणराशि साठि (६०), फलराशि (३ १५,०८९), इच्छाराशि ९ स्थापि, उस परिधि के प्रमाण कौ नौ करि गुणे, साठि का भाग दीजिए, तहा लब्ध प्रमाण सैंतालीस हजार दोय सै त्रैसठि योजन अर सात योजन का वीसवा भाग इतना चक्षु इन्द्रिय का उत्कृष्ट विषय क्षेत्र जानना ।

भावार्थ याका यहु है – जो अयोध्या का चक्री अभ्यतर परिधि विषै तिष्ठता सूर्य कौ इहातै पूर्वोक्त प्रमाण योजन परै देखै है । तातै इतना चक्षु इन्द्रिय का उत्कृष्ट विषय क्षेत्र कह्या है ।

एकेंद्रियादि पंचेंद्रिय जीवनि के स्पर्शनादि इन्द्रियनि के उत्कृष्ट विषय ज्ञान का यंत्र

इंद्रियनि के नाम	एकेंद्रिय	द्वीद्रिय	त्रीद्रिय	चतुरिंद्रिय		असज्ञी पचेंद्रिय		सज्ञी पचेंद्रिय
०	धनुष	धनुष	धनुष	धनुष	योजन	धनुष	योजन	योजन
स्पर्शन	४००	८००	१६००	३२००	०	६४००	०	९
रसन	०	६४	१२८	२५६	०	५१२	०	९
घ्राण	०	०	१००	२००	०	४००	०	९
चक्षु	०	०	०	०	२९५४	०	५९०८	४७२६३ ७/२० प्रमाण योजन
श्रोत्र	०	०	०	०	०	८०००	०	१२

आगे इन्द्रियनि का आकार कहै हैं—

चक्खू सोद घाणं, जिब्भायारं मसूरजवणाली ।
अतिमुत्तखुरप्पसमं, फासं तु अणेयसंठाणं ॥१७१॥

चक्षुःश्रोत्रघ्राणजिह्वाकार मसूरयवनाल्यः ।
अतिमुक्तक्षुरप्रसमं, स्पर्शन तु अनेकसस्थानम् ॥१७१॥

टीका – चक्षु इंद्री तौ मसूर की दालि का आकार है । बहुरि श्रोत्र इन्द्री जव की जो नाली, तीहिके आकार है । बहुरि घ्राण इन्द्रिय अतिमुक्तक जो कदब का फूल, ताके आकार है । बहुरि जिह्वा इन्द्रिय खुरपा के आकार है । बहुरि स्पर्शन इन्द्रिय अनेक आकार है, जातै पृथ्वी आदि वा बेद्री आदि जीवनि का शरीर का आकार अनेक प्रकार हैं । तातै स्पर्शन इन्द्रिय का भी आकार अनेक प्रकार कह्या, जातै स्पर्शन इन्द्रिय सर्व शरीर विषै व्याप्त है ।

आगे निर्वृत्तिरूप द्रव्येंद्रिय स्पर्शनादिकनि का आकार कह्या, सो कितने-कितने क्षेत्र प्रदेश कौ रोकै–असा अवगाहना का प्रमाण कहै है –

अंगुलअसंखभागं, संखेज्जगुणं तदो विसेसहियं ।
तत्तो असंखगुणिदं, अंगुलसंखेज्जयं तत्तु ॥१७२॥

अंगुलासंख्यभागं, संख्यातगुणं ततो विशेषाधिक ।
ततोऽसंख्यगुणितमंगुलसंख्यातं तत्तु ॥ १७२ ॥

टीका – घनागुल के असख्यातवे भाग प्रमाण आकाश प्रदेशनि कौ चक्षु इन्द्रिय रोकै है । सो घनागुल कौ पल्य का असख्यातवा भाग करि तौ गुणीए अर एक अधिक पल्य का असख्यातवा भाग का अर दोय वार सख्यात का अर पल्य का असख्यातवा भाग का भाग दीजिये, जो प्रमाण आवै, तितना चक्षु इन्द्रिय की अवगाहना है । बहुरि यातै संख्यातगुणा श्रोत्र इन्द्रिय की अवगाहना है । यहा इस गुणकार करि एक बार सख्यात कै भागहार का अपवर्तन करना । बहुरि याको पल्य का असख्यातवा भाग का भाग दीए, जो परिमाण आवै, तितना उस ही श्रोत्रइद्रिय की अवगाहना विषै मिलाए, घ्राण इन्द्रिय की अवगाहना होइ । सो इहा इस अधिक प्रमाण करि एक अधिक पल्य का असख्यातवा भाग का भागहार अर पल्य का असख्यातवा भाग गुणकार का अपवर्तन करना । बहुरि याकौ पल्य का असख्यातवा भाग करि गुणीए, तब जिह्वा इन्द्रिय की अवगाहना होइ । इस गुणकार करि पल्य का असख्यातवा भागहार का अपवर्तन करना । ऐसै यहु जिह्वा इन्द्रिय की अवगाहना घनागुल के सख्यातवे भाग मात्र जानना ।

आगे स्पर्शन इन्द्रिय के प्रदेशनि की अवगाहना का प्रमाण कहै है –

सुहमणिगोदअपज्जत्तयस्स जादस्स तदियसमयह्मि ।
अंगुलअसंखभागं, जहण्णमुक्कस्सयं मच्छे ॥१७३॥

सूक्ष्मनिगोदापर्याप्तकस्य जातस्य तृतीयसमये ।
अगुलासंख्यभागं, जघन्यमुत्कृष्टकं मत्स्ये ॥१७३॥

टीका – स्पर्शन इन्द्रिय की जघन्य अवगाहना सूक्ष्म निगोदिया लब्धि अपर्याप्तक के उपजनै तै तीसरा समय विषै जो जघन्य शरीर का अवगाहना घनांगुल के

असख्यातवे भाग मात्र हो है, सोइ है । बहुरि उत्कृष्ट अवगाहना स्वयभू रमण समुद्र विषै महामच्छ का उत्कृष्ट शरीर सख्यात घनागुल मात्र हो है, सो है –

आगे इन्द्रियज्ञानवाले जीवनि कौ कहि । अब अतीद्रिय ज्ञानवाले जीवनि का निरूपण करे है –

ण वि इंदियकरणजुदा, अवग्गहादीहिं गाहया अत्थे ।
णेव य इंदियसोक्खा, अणिंदियाणंतणाणसुहा[1] ॥१७४॥

नापि इद्रियकरणयुता, अवग्रहादिभि. ग्राहकाः अर्थे ।
नैव च इद्रियसौख्या, अनिंद्रियानतज्ञानसुखाः ॥१७४॥

टीका – जे जीव नियम करि इन्द्रियनि के करण भोहै टिमकारना आदि व्यापार, तिनिकरि सयुक्त नाही है, तातै ही अवग्रहादिक क्षयोपशम ज्ञान करि पदार्थ का ग्रहण न करै है । बहुरि इन्द्रियजनित विषय सबध करि निपज्या सुख, तिहिकरि सयुक्त नाही है, ते अर्हत वा सिद्ध अतीद्रिय अनत ज्ञान वा अतीद्रिय अनत सुखकरि विराजमान जानने, जातै तिनिका ज्ञान अर सुख सो शुद्धात्मतत्त्व की उपलब्धि तै उत्पन्न भया है ।

आगे एकेद्रियादि जीवनि की सामान्यपनै सख्या कहै है –

थावरसंखपिपीलिय, भमरमणुस्सादिगा सभेदा जे ।
जुगवारमसंखेज्जा, णंताणंता णिगोदभवा ॥१७५॥

स्थावरशखपिपीलिकाभ्रमरमनुष्यादिका. सभेदा ये ।
युगवारमसख्येया, अनंतानंता निगोदभवाः ॥१७५॥

टीका – स्थावर जो पृथ्वी, अप, तेज, वायु, प्रत्येक वनस्पती ए – पच प्रकार तौ एकेद्री । बहुरि सख, कौडी, लट इत्यादि बेद्री । बहुरि कीडी, मकोडा इत्यादि तेद्री । बहुरि भ्रमर, माखी, पतग इत्यादि चौ इन्द्री । बहुरि मनुष्य, देव, नारकी अर जलचरादि तिर्यंच, ते पचेद्री । ए जुदे-जुदे एक-एक असख्यातासख्यात प्रमाण हैं । बहुरि निगोदिया जो साधारण वनस्पती रूप एकेद्री ते अनतानत है ।

१. षट्खडागम – धवला पुस्तक १, पृष्ठ २५१, गाथा १४० ।

आगे विशेष सख्या कहै है । तहा प्रथम ही एकेंद्रिय जीवनि की सख्या कहै है —

तसहीणो संसारी, एयक्खा ताण संखगा भागा ।
पुण्णाणं परिमाणं, संखेज्जदिमं अपुण्णाणं ।।१७६।।

त्रसहीनाः संसारिणः, एकाक्षाः तेषां संख्यका भागाः ।
पूर्णानां परिमाणं, संख्येयकमपूर्णानाम् ।। १७६ ।।

टीका – सर्व जीव-राशि प्रमाण मैं स्यौं सिद्धनि का प्रमाण घटाए, ससारी-राशि होइ । सोइ ससारी जीवनि का परिमाण मै स्यौ त्रस जीवनि का परिमाण घटाए, एकेंद्रिय जीवनि का परिमाण हो है । बहुरि तीहि एकेंद्रिय जीवनि का परिमाण कौं सख्यात का भाग दीजिये, तामै एक भाग प्रमाण तौ अपर्याप्त एकेंद्रियनि का परिमाण है । बहुरि अवशेष बहुभाग प्रमाण पर्याप्त एकेंद्रियनि का परिमाण है ।

आगे एकेंद्रियनि के भेदनि की सख्या का विशेष कहै है –

बादरसुहमा तेसिं पुण्णापुण्णे त्ति छव्विहाणं पि ।
तक्कायमग्गणाये, भणिज्जमाणक्कमो णेयो ।।१७७।।

बादरसूक्ष्मास्तेषां, पूर्णापूर्ण इति षड्विधानामपि ।
तत्कायमार्गणायां, भणिष्यमाणक्रमो ज्ञेयः ।।१७७।।

टीका – सामान्य एकेंद्रिय राशि के बादर अर सूक्ष्म ए दोय भेद । बहुरि एक-एक भेद के पर्याप्त – अपर्याप्त ए दोय-दोय भेद – ऐसै च्यारि भए, तिनिका परिमाण आगे कायमार्गणा विषै कहिएगा, सो अनुक्रम जानना सो कहिए है । सामान्य पनै एकेंद्रिय का जो परिमाण, ताकौ असख्यात लोक का भाग दीजिए, तामै एक भाग प्रमाण तौ बादर एकेंद्रिय जानने । अर अवशेष बहुभाग प्रमाण सूक्ष्म एकेंद्रिय जानने । बहुरि बादर एकेंद्रियनिकै परिमाण कौ असख्यात लोक का भाग दीजिए। तामै एक भाग प्रमाण तौ पर्याप्त है । अर अवशेष बहुभाग प्रमाण अपर्याप्त है । बहुरि सूक्ष्म एकेंद्रिय का परिमाण कौ सख्यात का भाग दीजिए, तामै एक भाग प्रमाण तौ अपर्याप्त हैं । बहुरि अवशेष भाग प्रमाण पर्याप्त है । बादर विषै तौ पर्याप्त थोरे है, अपर्याप्त घने है । बहुरि सूक्ष्म विषै पर्याप्त घने हैं, अपर्याप्त थोरे हैं, ऐसा भेद जानना ।

आगै त्रस जीवनि की सख्या तीन गाथानि करि कहै है—

बितिचपमाणमसंखेणवहिदपदरंगुलेण हिदपदरं।
हीणकमं पडिभागो, आवलियासंखभागो दु ॥१७८॥

द्वित्रिचतुः पचमानमसंख्येनावहितप्रतरांगुलेनहितप्रतरम् ।
हीनक्रमं प्रतिभाग, आवलिकासख्यभागस्तु ॥१७८॥

टीका – द्वीद्रिय, त्रीद्रिय, चतुरिंद्रिय, पचेद्रिय – इनि सर्व त्रसनि का मिलाया हुवा प्रमाण, प्रतरागुल कौ असख्यात का भाग दीजिए, जो प्रमाण आवै, ताका भाग जगत्प्रतर कौ दीए यो करतै जितना होइ, तितना जानना। इहा द्वीद्रिय राशि का प्रमाण सर्वतै अधिक है। बहुरि तातै त्रीद्रिय विशेष घाटि है। तातै चौइद्रिय विशेष घाटि है। तातै पचेद्रिय विशेष घाटि है, सो घाटि कितने-कितने है – असा विशेष का प्रमाण जानने के निमित्त भागहार अर भागहार का भागहार आवली का असख्यातवा भाग मात्र जानना।

सो भागहार का अनुक्रम कैसे हैं ? सो कहिये है—

बहुभागे समभागो, चउण्णमेदोसिमेक्कभागह्मि।
उत्तकमो तत्थ वि बहुभागो बहुगस्स देओ दु ॥१७९॥

बहुभागे समभागश्चतुर्णामितेषामेकभागे।
उत्क्रमस्तत्रापि बहुभागो बहुकस्य देयस्तु ॥१७९॥

टीका – त्रस जीवनि का जो परिमाण कह्या, तीहिनै आवली का असख्यातवा भाग का भाग दीजिये। तामै एक भाग तौ जुदा राखिये अर जे अवशेष बहु भाग रहे, तिनिके च्यारि वट (बटवारा) कीजिये, सो एक-एक वट द्वीद्रिय, त्रीद्रिय, चतुरिद्रिय, पचेद्रियनि कौं बरोबरि दीजिये। बहुरि जो एक भाग जुदा राख्या था, ताकौ आवली का असख्यातवा भाग कौं भाग दीजिये। तामै एक भाग तौ जुदा राखिए अर अवशेष बहुभाग द्वीद्रियनि कौ दीजिये। जातै सर्व विषै बहुत प्रमाण द्वीद्रिय का है। बहुरि जो एक भाग जुदा राख्या था, ताकौ बहुरि आवली का असख्यातवा भाग का भाग दीजिए। तामै एक भाग तौ जुदा राखिये, बहुरि अवशेष भाग ते-इद्रियनि कौं दीजिए। बहुरि जो एक भाग जुदा राख्या था, ताकौं बहुरि आवली

का असख्यातवा भाग का भाग दीजिये । तामै बहु भाग तौ चौइद्रियनि कौ दीजिए । अर एक भाग पचेद्रिय कौ दीजिए । अैसे दीए हूवे परिमाण कहै ते नीचै स्थापिए । बहुरि पूर्वै जे बराबरि च्यारि बट किए थे, तिनिकौ ऊपरि स्थापिए । बहुरि अपने-अपने नीचै ऊपरि के परिमाण कौ मिलाए, द्वीद्रियादि जीवनि का परिमाण हो है ।

तिबिपचपुण्णपमाणं, पदरंगुलसंखभागहिदपदरं ।
हीणकमं पुण्णूणा, बितिचपजीवा अपज्जत्ता ॥१८०॥

त्रिद्विपंचचतुः पूर्णप्रमाणं, प्रतरांगुलासंख्यभागहितप्रतरम् ।
हीनक्रमं पूर्णोना, द्वित्रिचतुः पंचजीवा अपर्याप्ताः ॥१८०॥

टीका – बहुरि पर्याप्त त्रसजीव प्रतरागुल का सख्यातवा भाग का भाग जगत्प्रतर कौं दीए, जो परिमाण आवै, तितने है, तिनि विषै घने तौ तेइंद्रिय है । तीहिंस्यो घाटि द्वीद्रिय है । तिहिस्यो घाटि पचेद्रिय है । तिहिंसौ घाटि चौइद्रिय है, सो इहा भी पूर्वोक्त **'बहुभागे समभागो'** इत्यादि सूत्रोक्त प्रकार करि सामान्य पर्याप्त त्रस-राशि कौ आवली का असख्यातवा भाग का भाग देइ, एक भाग जुदा राखि अवशेष बहुभागनि के च्यारि समान भाग करि, एक-एक भाग तेद्री, बेद्री, पचेद्री, चौद्रीनि कौ दैना । बहुरि तिस एक भाग कौ भागहार आवली का असख्यातवा भाग का भाग देइ, एक भाग जुदा राखि, बहुभाग तेइद्रियनि कौ देना । बहुरि तिस एक भाग कौ भागहार का भाग देइ, एक भाग जुदा राखि, बहुभाग द्वीद्रियनि कौं दैना । बहुरि तिस एक भाग कौ भागहार का भाग देइ, एक भाग जुदा राखि, बहुभाग पचेद्रियनि दैना । अर एक भाग चौइद्रियनि कौ देना । अैसे अपना-अपना समभाग ऊपरि स्थापि, देय भाग नीचै स्थापि, जोडै, तेद्री आदि पर्याप्त जीवनि का प्रमाण हो है । बहुरि पूर्वै जो सामान्यपनै बेइद्रिय आदि जीवनि का प्रमाण कह्या था, तामै सौ इहा कह्या जो अपना-अपना पर्याप्त का परिमाण सो घटाय दीए, अपना-अपना बेद्री आदि पचेद्री पर्यंत अपर्याप्त जीवनि का परिमाण हो है । सो अपर्याप्तनि विषै घने तौ बेइद्रिय, तिहिस्यो घाटि तेइद्रिय, तिहिसौ घाटि चौइद्रिय, तिहिसौ घाटि पचेद्रिय है–अैसे इनिका परीमाण कह्या ।

—

आठवां अधिकार : काय-मार्गणा प्ररूपणा

॥ मंगलाचरण ॥

चंद्रप्रभ जिन कौं भजौं चंद्रकोटि सम जोति ।
जाकै केवल लब्धि नव समवसरण जुत होति ॥

अथ काय-मार्गणा कौं कहै है –

जाई अविणाभावी, तसथावरउदयजो हवे काओ ।
सो जिणमदह्मि भणिओ, पुढवीकायादिछब्भेओ ॥१८१॥

जात्यविनाभावित्रसस्थावरोदयजो भवेत्कायः ।
स जिनमते भणितः, पृथ्वीकायादिषड्भेदः ॥१८१॥

टीका – एकेंद्रियादिक जाति नामा नामकर्म का उदय सहित जो त्र-स्थावर नामा नामकर्म का उदय करि निपज्या त्रस-स्थावर पर्याय जीव कै होइ, सो काय कहिए । सो काय छह प्रकार जिनमत विषै कह्या है । पृथ्वीकाय १, अपकाय २, तेजकाय ३, वायुकाय ४, वनस्पतीकाय ५, त्रसकाय ६–ए छह भेद जानना ।

कायते कहिए ए त्रस है, ए स्थावरहै, असा कहिए, सो काय जानना । तहा जो भयादिक तै उद्वेगरूप होइ भागना आदि क्रिया सयुक्त हो है, सो त्रस कहिए । बहुरि जो भयादिक आए स्थिति क्रिया युक्त होइ, सो स्थावर कहिए । अथवा चीयते कहिए पुद्गल स्कधनि करि संचयरूप कीजिये, पुष्टता कौं प्राप्त कीजिए, सो काय औदारिकादि शरीर का नाम काय है । बहुरि काय विषै तिष्ठता जो आत्मा की पर्याय, ताकौं भी उपचार करि काय कहिए । जातै जीव विपाकी जो त्रस-स्थावर प्रकृति, तिनिकै उदय तै जो जीव की पर्याय होइ, सो काय है । ऐसा व्यवहार की सिद्धि है । बहुरि पुद्गलविपाकी शरीर नामा नाम कर्म की प्रकृति के उदय तै भया शरीर, ताका इहा काय शब्द करि ग्रहण नाही है ।

आगे स्थावरकाय के पाच भेद कहै हैं –

पुढवी आऊतेऊ, वाऊ कम्मोदयेण तत्थेव ।
णियवण्णचउक्कजुदो, ताणं देहो हवे णियमा ॥१८२॥

पृथिव्यप्तेजोवायुकर्मोदयेन तत्रैव ।
निजवर्णचतुष्कयुतस्तेषां देहो भवेन्नियमात् ॥१८२॥

टीका – पृथ्वी, अप, तेज, वायु विशेष धरै जो नाम कर्म की स्थावर प्रकृति के भेदरूप उत्तरोत्तर प्रकृति, ताके उदय करि जीवनि के तहा ही पृथिवी, अप, तेज, वायु रूप परिणये जे पुद्गलस्कध, तिनि विषै अपने-अपने पृथिवी आदि रूप वर्णादिक चतुष्क संयुक्त शरीर नियम करि हो है । असै होतै पृथिवीकायिक, अप्कायिक, तेज–कायिक, वातकायिक जीव हो हैं ।

तहा पृथिवी विशेष लीए स्थावर पर्याय जिनकै होइ, ते पृथिवीकायिक कहिये । अथवा पृथिवी है काय कहिये शरीर जिनका, ते पृथिवीकायिक कहिए । असै ही अपकायिक, तेजकायिक, वातकायिक जानने । तिर्यंच गति, एकेंद्री जाति औदारिक शरीर, स्थावर काय इत्यादिक नामकर्म की प्रकृतिनि के उदय अपेक्षा असी निरुक्ति सभवै है ।

बहुरि जो जीव पूर्व पर्याय को छोडि, पृथ्वी विषै उपजने कौं सन्मुख भया होइ, सो विग्रह गति विषै अतराल मे यावत् रहै, तावत् वाकौ पृथ्वी जीव कहिये । जातै इहा केवल पृथिवी का जीव ही है, शरीर नाही ।

बहुरि जो पृथिवीरूप शरीर कौ धरै होइ, सो पृथिवीकायिक कहिए । जातै वहा पृथिवी का शरीर वा जीव दोऊ पाइए है ।

बहुरि जीव तौ निकसि गया होइ, वाका शरीर ही होइ, ताकौं पृथिवीकाय कहिये । जातै वहा केवल पृथिवी का शरीर ही पाइए है । असै तीन भेद जानने ।

बहुरि अन्य ग्रथिनि विषै च्यारि भेद कहे है । तहा ए तीनो भेद जिस विषै गर्भित होइ, सो सामान्य रूप पृथिवी असा एक भेद जानना । जातै पूर्वोक्त तीनो भेद पृथिवी के ही हैं । असै ही अप्जीव, अप्कायिक, अप्काय । बहुरि तेज.जीव, तेज:कायिक, तेज काय । बहुरि वातजीव, वातकायिक, वातकायरूप तीन-तीन भेद जानने ।

बादरसुहुमदयेण य, बादरसुहमा हवंति तद्देहा ।
घादसरीरं थूलं, अघाददेहं हवे सुहुमं ॥१८३॥

बादरसूक्ष्मोदयेन च, बादरसूक्ष्मा भवंति तद्देहाः ।
घातशरीरं स्थूलं, अघातदेहं भवेत्सूक्ष्मम् ॥१८३॥

टीका – पूर्वे कहे जे पृथिवीकायिकादिक जीव, ते बादर नामा नाम कर्म की प्रकृति के उदय तै बादर शरीर धरै, बादर हो है । बहुरि सूक्ष्म नामा नामकर्म की प्रकृति के उदय तै सूक्ष्म होइ । जातै बादर, सूक्ष्म प्रकृति जीवविपाकी हैं । तिनके उदय करि जीव कौं बादर-सूक्ष्म कहिए । बहुरि उनका शरीर भी बादर सूक्ष्म ही हो है । तहा इद्रिय विषय का सयोग करि निपज्या सुख-दु ख की ज्यो अन्य पदार्थ करि आपका घात होइ, रुकै वा आप करि और पदार्थ का घात होइ, रुकि जाय, असा घात शरीर ताको स्थूल वा बादर-शरीर कहिए । बहुरि जो किसी कौं घातै नाही वा आपका घात अन्य करि जाकै न होइ, असा अघात-शरीर, सो सूक्ष्म-शरीर कहिए । बहुरि तिनि शरीरनि के धारक जे जीव, ते घात करि युक्त है शरीर जिनिका ते घातदेह तौ बादर जानने । बहुरि अघातरूप है देह जिनका, ते अघातदेह सूक्ष्म जानने । असे शरीरनि कै रुकना वा न रुकना सभवै है ।

तद्देहमंगुलस्स, असंखभागस्स विंदमाणं तु ।
आधारे थूला ओ, सव्वत्थ णिरंतरा सुहुमा ॥१८४॥

तद्देहमगुलस्यासंख्यभागस्य वृंदमानं तु ।
आधारे स्थूला ओ, सर्वत्र निरतराः सूक्ष्माः ॥१८४॥

टीका – तिनि बादर वा सूक्ष्म पृथ्वीकायिक, अपकायिक, तेज कायिक, वातकायिक जीवनि के शरीर घनागुल के असख्यातवै भाग प्रमाण हैं । जातै पूर्वे जीवसमासाधिकार विषै अवगाहन का कथन कीया है । तहा सूक्ष्म वायुकायिक अपर्याप्तक की जघन्य शरीर अवगाहना तै लगाइ बादर पर्याप्त पृथिवीकायिक की उत्कृष्ट अवगाहना पर्यंत बियालीस स्थान कहे, तिनि सबनि विषै घनागुल कौं पल्य के असख्यातवा भाग का भागहार सभवै है । अथवा तहा ही **'वीपुण्णजहण्णोत्तिय असंखसखं गुणं तत्तो'** इस सूत्र करि बियालीसवा स्थान कौ असख्यात का गुणकार

कीए अगले स्थान विषै सख्यात घनांगुल प्रमाण अवगाहना हो है। तातै तिस वियालीसवा स्थान विषै घनागुल कौं असख्यात का भागहार प्रकट ही सिद्धि भया। तहा सूक्ष्म अपर्याप्त वातकाय की जघन्य अवगाहना वा पृथ्वीकाय वादर पर्याप्त की उत्कृष्ट अवगाहना का प्रमाण, तहा ही जीवसमासाधिकार विषै कह्या है, सो जानना। बहुरि **'आधारे थूलाओ'** आधारे कहिए अन्य पुद्गलनि का आश्रय, तीहि विषै वर्तमान शरीर संयुक्त जे जीव, ते सर्व स्थूलः कहिए वादर जानने। यद्यपि आधार करि तिनके शरीर का वादर स्वभाव रुकना न हो है; तथापि नीचै गिरना रूप जो गमन, ताका रुकना हो है, सो तहा प्रतिघात सभवै है। तातै पूर्वोक्त घातरूप लक्षण ही वादर शरीरनि का दृढ भया।

बहुरि सर्वत्र लोक विषै, जल विषै वा स्थल विषै वा आकाश विषै निरंतर आधार की अपेक्षा रहित जिनकै शरीर पाइए, ते जीव सूक्ष्म हैं। जल-स्थल रूप आधार करि तिनिकै शरीर के गमन का नीचै ऊपरि इत्यादि कही भी रुकना न हो है। अत्यत सूक्ष्म परिणमन तै ते जीव सूक्ष्म कहिए है। **अंतरयति** कहिए अतराल करै है, असा जो अतर कहिए आधार, तातै रहित ते निरतर कहिए। इस विशेषण करि भी पूर्वोक्त ही लक्षण दृढ भया। 'ओ' असा सबोधन पद जानना। याका अर्थ यहु– जो हे शिष्य! असै तू जानि। बहुरि यद्यपि वादर अपर्याप्त वायुकायिकादि जीवनि की अवगाहना स्तोक है। बहुरि यातै सूक्ष्म पर्याप्त वायुकायिकादिक पृथ्वी-कायिक पर्यंत जीवनि की जघन्य वा उत्कृष्ट अवगाहना असख्यात गुणी है। तथापि सूक्ष्म नामकर्म के उदय की समर्थता तै अन्य पर्वतादिक तै भी तिनिका रुकना न हो है; निकसि जाय है। जैसे जल का विंदु वस्त्रतै निकसि जाय, रुकै नाही, तैसै सूक्ष्म शरीर जानना।

बहुरि वादर नामकर्म के उदय के वश तै अन्यकरि रुकना हो है। जैसे सरिसौं वस्त्र तै निकसै नाही, तैसै वादर शरीर जानना।

बहुरि यद्यपि ऋद्धि कौं प्राप्त भए मुनि, देव इत्यादिक, तिनिका शरीर वादर है; तौ भी ते वज्र पर्वतादिक तै रुकै नाही; निकसि जाय है, सो यहु तपजनित अतिशय की महिमा है, जातै तप, विद्या, मणि, मंत्र, औषधि इनिकी शक्ति के अतिशय का महिमा अचित्य है, सो दीखै है। असा ही द्रव्यत्व का स्वभाव है। बहुरि स्वभाव विषै विरुद्ध तर्क नाही। यहु समस्त वादी मानै हैं। सो इहां अतिशयवानो का ग्रहण

नाही । तातै अतिशय रहित वस्तु का विचार विषै पूर्वोक्त शास्त्र का उपदेश ही बादर सूक्ष्म जीवनि का सिद्ध भया ।

उदये दु वणप्फदिकम्मस्स य जीवा वणप्फदी होंति ।
पत्तेयं सामण्णं, पदिट्ठिदिदरे त्ति पत्तेयं ॥१८५॥

उदये तु वनस्पतिकर्मणश्च जीवा वनस्पतयो भवंति ।
प्रत्येक सामान्यं, प्रतिष्ठितेतरे इति प्रत्येकं ॥१८५॥

टीका – वनस्पती रूप विशेष कौं धरै स्थावर नामा नामकर्म की उत्तरोत्तर प्रकृति के उदय होतै, जीव वनस्पतीकायिक हो है । ते दोय प्रकार – एक प्रत्येक शरीर, एक सामान्य कहिए साधारण शरीर । तहा एक प्रति नियम रूप होइ, एक जीव प्रति एक शरीर होइ, सो प्रत्येक-शरीर है । प्रत्येक है शरीर जिनिका, ते प्रत्येक-शरीर जीव जानने । बहुरि समान का भाव, सो सामान्य, सामान्य है शरीर जिनिका ते सामान्य-शरीर जीव हैं ।

भावार्थ– बहुत जीवनि का एक ही शरीर साधारण समानरूप होइ, सो साधारण-शरीर कहिए । ऐसा शरीर जिनिकै होइ ते साधारणशरीर जानने । तहा प्रत्येक-शरीर के दोय भेद – एक प्रतिष्ठित, एक अप्रतिष्ठित । इहा गाथा विषै इति शब्द प्रकारवाची जानना । तहा प्रत्येक वनस्पती के शरीर बादर निगोद जीवनि करि आश्रित सयुक्त होइ, ते प्रतिष्ठित जानने । जे बादर निगोद के आश्रित होइ, ते अप्रतिष्ठित जानने ।

मूलग्गपोरबीजा, कंदा तह खंदबीजबीजरुहा ।
समुच्छिमा य भणिया, पत्तेयाणंतकाया य ॥१८६॥

मूलाग्रपर्वबीजाः, कदास्तथा स्कंधबीजबीजरुहाः ।
सम्मूर्छिमाश्च भणिता, प्रत्येकानंतकायाश्च ॥१८६॥

टीका – जिनिका मूल जो जड, सोइ बीज होइ, ते आदा, हलद आदि मूल-बीज जानने । बहुरि जिनिका अग्र, जो अग्रभाग सो ही बीज होइ ते आर्यक आदि अग्रबीज जानने । बहुरि जिनिका पर्व जो पेली, सो ही बीज होइ, ते साठा आदि पर्वबीज जानने । बहुरि कद है, बीज जिनिका, ते पिंडालु, सूरण आदि कदबीज

जानने। बहुरि स्कध, जो पेड, सो ही है बीज जिनिका ते सालरि, पलास आदि स्कध-बीज जानने। बहुरि जे बीज ही तै लगै ते गेहू, शालि आदि बीजरुह जानने। बहुरि जे मूल आदि निश्चित बीज की अपेक्षा तै रहित, आपै आप उपजै ते सम्मूर्छिम कहिए, समततै भए पुद्गल स्कध, तिनि विषै उपजै, असै दोब आदि सम्मूर्छिम जानने।

असै ए कहे ते सर्व ही प्रत्येक वनस्पती है। ते अनत जे निगोद जीव, तिनके '**कायः**' कहिए शरीर जिनिविषै पाइए असे '**अनंतकायाः**' कहिए प्रतिष्ठित-प्रत्येक है। बहुरि चकार तै अप्रतिष्ठित-प्रत्येक है। असै प्रतिष्ठित कहिए साधारण शरीरनि करि आश्रित है, प्रत्येक शरीर जिनका ते प्रतिष्ठित प्रत्येक-शरीर है। बहुरि तिनकरि आश्रित नाही है, प्रत्येक-शरीर जिनिका, ते अप्रतिष्ठित प्रत्येक-शरीर है। असे ए मूलबीज आदि सर्मूछिम पर्यत सर्व दोय-दोय अवस्था लीए जानने। बहुरि कोऊ जानैगा कि इनिविषै सर्मूछिम कै तौ सर्मूछिम जन्म होगा, अन्यकै गर्भादिक होगा, सो नाही है। ते सर्व ही प्रतिष्ठित, अप्रतिष्ठित प्रत्येक-शरीरी जीव सर्मूछिम ही है। बहुरि प्रतिष्ठित प्रत्येक-शरीर की सर्वोत्कृष्ट भी अवगाहना घनागुल के असख्यात भाग मात्र ही है। तातै पूर्वोक्त आदा आदि देकरि एक-एक स्कध विषै असख्यात प्रतिष्ठित प्रत्येक शरीर पाइए है। कैसै ? घनागुल कौ दोय बार पल्य का असख्यातवा भाग, अर नव बार सख्यात का भाग दीए, जो प्रमाण होइ, तितने क्षेत्र विषै जो एक प्रतिष्ठित प्रत्येक-शरीर होइ, तो सख्यात घनागुल प्रमाण आदा, मूला आदि स्कध विषै केते पाइए ? असै त्रैराशिक कीए, लब्ध राशि दोय बार पल्य का असख्यातवा भाग, दश बार सख्यात माडि, परस्पर गुणै, जितना प्रमाण होइ, तितने एक-एक आदा आदि स्कध विषै प्रतिष्ठित प्रत्येक-शरीर पाइए है। बहुरि एक स्कध विषै अप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पती जीवनि के शरीर यथासभव असख्यात भी होइ, वा सख्यात भी होइ। बहुरि जेते प्रत्येक शरीर है, तितने ही तहा वनस्पती जीव जानने, जातै तहा एक-एक शरीर प्रति एक-एक ही जीव होने का नियम है।

बीजे जोणीभूदे, जीवो चंकमदि सो व अण्णो वा।
जे वि य मूलादीया, ते पत्तेया पढमदाए ॥१८७॥

बीजे योनीभूते, जीवः चंक्रामति स वा अन्यो वा।
येऽपि च मूलादिकास्ते प्रत्येकाः प्रथमतायाम् ॥१८७॥

टीका – बीजे कहिए पूर्वे जे कहे, मूल को आदि देकरि, बीज पर्यंत बीज़जीव उपजने का आधारभूत पुद्गल स्कध, सो योनीभूते कहिए, जिस विषै जीव उपजे असी शक्ति सयुक्त होते सतै जल वा कालादिक का निमित्त पाइ, सोई जीव वा और जीव आनि उपजै है ।

भावार्थ – पूर्वे जो बीज विषै जीव तिष्ठै था, सो जीव तौ निकसी गया अर उस बीज विषै असी शक्ति रही जो इस विषै जीव आनि उपजै, तहा जलादिक का निमित्त होतै पूर्वे जो जीव उस बीज कौं अपना प्रत्येक शरीर करि पीछे अपना आयु के नाश तै मरण पाइ निकसि गया था, सोई जीव बहुरि तिस ही अपने योग्य जो मूलादि बीज, तीहि विषै आनि उपजै है । अथवा जो वह जीव और ठिकानै उपज्या होइ, तौ इस बीज विषै अन्य कोई शरीरातर विषै तिष्ठता जीव अपना आयु के नाश तै मरण पाइ, आनि उपजै है । किछु विरोध नाही ।

जैसै गेहू विषै जीव था, सो निकसि गया । बहुरि याकौं बोया, तब उस ही विषै सोई जीव वा अन्य जीव आनि उपज्या, सो यावत् काल जीव उपजने की शक्ति होइ तावत् काल योनीभूत कहिए । बहुरि जब ऊगने की शक्ति न होइ तब अयोनीभूत कहिए, असा भेद जानना । बहुरि जे मूलनै आदि देकरि वनस्पति काय प्रत्येक रूप प्रतिष्ठित प्रसिद्ध है । तेऊ प्रथम अवस्था विषै जन्म के प्रथम समय तै लगाइ अतर्मुहूर्त काल पर्यंत अप्रतिष्ठित प्रत्येक ही रहै हैं । पीछे निगोदजीव जब आश्रय करे है, तब सप्रतिष्ठित प्रत्येक होय है ।

आगे श्री माधवचद्र नामा आचार्य त्रैविद्यदेव सो सप्रतिष्ठित, अप्रतिष्ठित जीवनि का विशेष लक्षण तीन गाथानि करि कहै है—

गूढसिरसंधिपव्व, समभंगमहीरुह (यं) च छिण्णरुहं ।
साहारण सरीर, तव्विवरीय च पत्तेयं ॥१८८॥

गूढशिरासधिपर्व, समभंगमहीरुक च छिन्नरुहम् ।।
साधारणं शरीर, तद्विपरीतं च प्रत्येकम् ॥१८८॥

टीका – जिस प्रत्येक वनस्पती शरीर का सिरा, सधि, पर्व, गूढ होइ, बाह्य दीखै नाही, तहा सिरा तौ लबी लकीरसी जैसै काकडी विषै होइ । बहुरि सधि वीचि

मे छेहा जैसे दाड्यौ वा नारगी विषै हो है । बहुरि पर्व, गांठि जैसे साठा विषै हो है, सो कच्ची अवस्था विषै जाके ए बाह्य दीखै नाही, ऐसा वनस्पती बहुरि समभग कहिए जाका टूक ग्रहण कीजिये, तो कोऊ तातू लगा न रहै, समान बराबरि टूटै असा । बहुरि **अहीरुहं** कहिए जाके विषै सूत सारिखा तातू न होइ असा । बहुरि **छिन्नरुहं** कहिए जो काट्या हुवा ऊगै असा वनस्पती सो साधारण है । इहा प्रतिष्ठित प्रत्येक साधारण जीवनि करि आश्रित की उपचार करि साधारण कह्या है । बहुरि **तद्विपरीतं** कहिये पूर्वोक्त गूढ, सिरा आदि लक्षण रहित नालियर, आम्रादि शरीर अप्रतिष्ठित प्रत्येक शरीर जानना । गाथा विषै कह्या है जो चकार सो इस भेद कौ सूचै है ।

मूले कंदे छल्ली, पवाल सालदलकुसुम फलबीजे ।
समभंगे सदि णंता, असमे सदि होंति पत्तेया ॥१८९॥

मूले कदे त्वक्प्रवालशालादलकुसुमफलबीजे ।
समभंगे सति नांता, असमे सति भवंति प्रत्येकाः ॥१८९॥

टीका – मूल कहिये जड, कद कहिये पेड, छल्ली कहिए छालि, प्रवाल कहिए कोपल, अकुरा, शाला कहिए छोटी डाहली, शाखा कहिए बडी डाहली, दल कहिए पान, कुसुम कहिए फूल, फल कहिए फल, बीज कहिये जातै फेरि उपजे, सो बीज, सो ए समभग होइ, तो अनंत कहिए; अनतकायरूप प्रतिष्ठित प्रत्येक है । बहुरि जो मूल आदि वनस्पती समभग न होइ, सो अप्रतिष्ठित प्रत्येक है । जीहि वनस्पति का मूल, कद, छाल इत्यादिक समभग होइ, सो प्रतिष्ठित प्रत्येक है । अर जाका समभग न होइ सो अप्रतिष्ठित प्रत्येक है । तोड्या थका तातू कोई लग्या न रहै, बराबरि टूटै, सो समभग कहिए'।

कंदस्स व मूलस्स व, सालाखंदस्स वावि बहुलतरी ।
छल्ली साणंतजिया, पत्तेयजिया तु तणुकदरी ॥१९०॥

कंदस्य वा मूलस्य वा, शालास्कंधस्य वापि बहुलतरी ।
त्वक् सा अनंतजीवा, प्रत्येकजीवास्तु तनुकतरी ॥१९०॥

टीका – जिस वनस्पती का कद की वा मूल की वा क्षुद्र शाखा की वा स्कध की छालि मोटी होइ, सो अनंतकाय है । निगोद जीव सहित प्रतिष्ठित प्रत्येक

है । बहुरि जिस वनस्पती का कदादिक की छालि पतली होइ, सो अप्रतिष्ठित प्रत्येक है ।

आगै श्री नेमिचद्र सिद्धातचक्रवर्ती साधारण वनस्पती का स्वरूप सात गाथानि करि कहै है—

साहारणोदयेण णिगोदसरीरा हवंति सामण्णा ।
ते पुण दुविहा जीवा, बादर सुहमा त्ति विण्णेया ॥१६१॥

साधारणोदयेन निगोदशरीरा भवति सामान्याः ।
ते पुर्नाद्वविधा जीवा, बादर–सूक्ष्मा इति विज्ञेयाः ॥१९१॥

टीका – साधारण नामा नामकर्म की प्रकृति के उदय तै निगोद शरीर के धारक साधारण जीव हो है । **नि** – कहिये नियतज अनते जीव, तिनिकौ **गो** कहिये एक ही क्षेत्र कौ, **द** कहिये देइ, सो निगोद शरीर जानना । सो जिनकै पाइए ते निगोदशरीरी हैं । बहुरि तेई सामान्य कहिये साधारण जीव है । बहुरि ते बादर अर सूक्ष्म असे भेद तै दोय प्रकार पूर्वोक्त बादर सूक्ष्मपना लक्षण के धारक जानने ।

साहारणमाहारो, साहारणमाणपाणगहणं च ।
साहारणजीवाणं, साहारणलक्खणं भणियं[1] ॥१६२॥

साधारणमाहारः, साधारणमानपानग्रहणं च ।
साधारणजीवाना, साधारणलक्षणं भणितम् ॥१९२॥

टीका – साधारण नामा नामकर्म के उदय के वशवर्ती, जे साधारण जीव, तिनिके उपजते पहला समय विषै आहार पर्याप्ति हो है, सो साधारण कहिए अनत जीवनि कै युगपत एक काल हो है । सो आहार पर्याप्ति का कार्य यहु जो आहार वर्गणारूप जे पुद्गल स्कध, तिनिकौ खल-रस भागरूप परिणमावै है । बहुरि तिनही आहार वर्गणारूप पुद्गल स्कधनि कौं शरीर के आकार परिणमावनेरूप है कार्य जाका, असा शरीर पर्याप्ति, सो भी तिनि जीवनि के साधारण हो है । बहुरि तिनही कौ स्पर्शन इद्रिय के आकार परिणमावना है कार्य जाका, असा इन्द्रिय पर्याप्ति, सो भी साधारण हो है । बहुरि सासोस्वास ग्रहणरूप है कार्य जाका, असा आनपान

१ षट्खडागम – धवला पुस्तक १, पृष्ठ २७२, गाथा १४५

पर्याप्ति, सो भी साधारण हो है। बहुरि एक निगोद शरीर है, तीहि विषै पूर्वे अनत जीव थे। बहुरि दूसरा, तीसरा आदि समय विषै नये अनत जीव उस ही विषै अन्य आनि उपजै, तौ तहा जैसे वे नये उपजे जे जीव आहार आदि पर्याप्ति कौ धरै है, तैसे ही पूर्वे पूर्व समय विषै उपजे थे जे अनतानत जीव, ते भी उन ही की साथि आहारादिक पर्याप्तिनि कौ धरै है सदृश युगपत् सर्व जीवनि के आहारादिक हो है। तातै इनिकौ साधारण कहिये है। सो यह साधारण का लक्षण पूर्वाचार्यनि करि कह्या हूवा जानना।

[1] जत्थेक्क मरइ जीवो, तत्थ दु मरणं हवे अणंताणं।
वक्कमइ जत्थ एक्को, वक्कमणं तत्थ णंताणं ॥१९३॥

यत्रैको म्रियते जीवस्तत्र तु मरणं भवेदनंतानाम्।
प्रक्रामति यत्र एकः, प्रक्रमणं तत्रानंतानाम् ॥१९३॥

टीका – एक निगोद शरीर विषै जिस काल एक जीव अपना आयु के नाश तै मरै, तिसही काल विषै जिनकी आयु समान होइ, ऐसै अनतानत जीव युगपत् मरै है। बहुरि जिस काल विषै एक जीव तहा उपजै है, उस ही काल विषै उस ही जीव की साथि समान स्थिति के धारक अनतानत जीव उपजै है, ऐसे उपजना मरना का समकालपना कौ भी साधारण जीवनि का लक्षण कहिए है। बहुरि द्वितीयादि समयनि विषै उपजे अनतानत जीवनि का भी अपना आयु का नाश होतै साथि ही मरना जानना। ऐसे एक निगोद शरीर विषै समय-समय प्रति अनतानत जीव साथि ही मरै है, साथि ही उपजै है। निगोद शरीर ज्यो का त्यो रहै है, सो निगोद शरीर की उत्कृष्ट स्थिति असख्यात कोडाकोडी सागरमात्र है। सो असख्यात लोकमात्र समय प्रमाण जानना। सो स्थिति यावत् पूर्ण न होइ तावत् ऐसै ही जीवनि का उपजना, मरना हुवा करै है।

इतना विशेष – जो कोई एक बादर निगोद शरीर विषै वा एक सूक्ष्म निगोद शरीर विषै अनतानंत जीव केवल पर्याप्त ही उपजै है। तहा अपर्याप्त नाही उपजै है। बहुरि कोई एक शरीर विषै केवल अपर्याप्त ही उपजै है, तहा पर्याप्त नाही उपजै है। एक शरीर विषै पर्याप्त-अपर्याप्त दोऊ नाही उपजै है। जातै तिन जीवनि के समान कर्म के उदय का नियम है।

---

१ 'जत्थेवु वक्कमदि', इति षट्खडागम – धवला पुस्तक १, पृष्ठ २७२, गाथा १४६।

बहुरि एक साधारण जीव कै कर्म का ग्रहण शक्तिरूप लक्षण धरै, जो काय योग, ताकरि ग्रह्या हूवा, जो पुद्गल-पिंड, ताका उपकार कार्य, सो तिस शरीर विषै तिष्ठते अनतानत अन्य जीवनि का अर तिस जीव का उपकारी हो है। बहुरि अनतानत साधारण जीवनि का जो काय योग रूप शक्ति, ताकरि ग्रहे हूये पुद्गलपिडनि का कार्यरूप उपकार, सो कोई एक जीव का वा तिन अनतानत साधारण जीवनि का उपकारी समान एकै साथिपनै हो है। बहुरि एक वादर निगोद शरीर विषै वा सूक्ष्म निगोद शरीर विषै क्रम तै पर्याप्त वादर निगोद जीव वा सूक्ष्म निगोद जीव उपजै हैं। तहा पहले समय अनतानत उपजै हैं। बहुरि दूसरे समय तिनतै असख्यात गुणा घाटि उपजै हैं। असै ही आवली का असख्यातवा भाग प्रमाण काल पर्यंत समय-समय प्रति निरतर असख्यात गुणा घाटि क्रमकरि जीव उपजै हैं। तातै परै जघन्य एक समय, उत्कृष्ट आवली का असख्यातवा भाग प्रमाण काल का अतराल हो है। तहा कोऊ जीव न उपजै है। तहा पीछै बहुरि जघन्य एक समय, उत्कृष्ट आवली का असख्यातवा भाग प्रमाण काल पर्यंत निरतर असख्यात गुणा घाटि क्रम करि तिस निगोद शरीर विषै जीव उपजै है। असै अन्तर सहित वा निरतर निगोद शरीर विषै जीव उपजै हैं। सो यावत् प्रथम समय विषै उपज्या साधारण जीव का जघन्य निर्वृत्ति अपर्याप्त अवस्था का काल अवशेष रहै, तावत् असै ही उपजना होइ। बहुरि पीछै तिनि प्रथमादि समयनि विषै उपजे सर्व साधारण जीव, तिनिकै आहार, शरीर, इद्रिय, सासोस्वास, पर्याप्तिनि की सपूर्णता अपने-अपने योग्य काल विषै होइ है।

खंधा असंखलोगा, अंडरआवासपुलविदेहा वि।
हेट्ठिल्लजोणिगाओ, असंखलोगेण गुणिदकमा ।१६४॥

स्कंधा असंख्यलोकाः, अंडरावासपुलविदेहा अपि।
अधस्तनयोनिका, असख्यलोकेन गुणितक्रमाः ॥१९४॥

टीका – बादर निगोद जीवनि के शरीर की सख्या जानने निमित्त उदाहरणपूर्वक यहु कथन करिए है। इस लोकाकाश विषै स्कध यथा योग्य असख्यात लोक प्रमाण है। जे प्रतिष्ठित प्रत्येक जीवनि के शरीर, तिनिकौं स्कध कहिये हैं। सो यहु यथा योग्य असख्यात करि लोक के प्रदेश गुणे, जो प्रमाण होइ, तितनें प्रतिष्ठित प्रत्येक शरीर इस लोक विषै जानने। बहुरि एक-एक स्कध विषै असख्यात लोक प्रमाण अडर है।

इहां प्रश्न – जो एक स्कंध विषै असख्यात लोक प्रमाण अंडर कैसै सभवै ?

ताका समाधान – यहु अवगाहन की समर्थता है । जैसै जगत श्रेणी का घन प्रमाण लोक के प्रदेशनि विषै अनतानंत पुद्गल परमाणू पाइए । जैसै जहा एक निगोद जीव का कार्माण स्कध है, तहा ही अनंतानंत जीवनि के कार्माण शरीर पाइये है । तैसै ही एक-एक स्कध विषै असख्यात लोक प्रमाण अंडर है । जे प्रतिष्ठित प्रत्येक शरीर के अवयवरूप विशेष है । जैसै मनुष्य शरीर विषै हस्तादिक हो है, तैसै स्कंध विषै अन्डर जानने । बहुरि एक-एक अन्डर विषै असख्यात लोक प्रमाण आवास पाइए है । ते आवास भी प्रतिष्ठित प्रत्येक के शरीर के अवयव रूप विशेप ही जानने । जैसै हस्त विषै अगुरी आदि हो हैं । बहुरि एक-एक आवास विषै असख्यात लोक प्रमाण पुलवी है । ते पुणि प्रतिष्ठित प्रत्येक शरीर के अवयव रूप विशेष ही जानने । जैसै एक अंगुली विषै रेखा आदि हो है । बहुरि एक-एक पुलवी विषै असंख्यात लोक प्रमाण बादर निगोद के शरीर जानने । अैसै ए अंडरादिक अधस्तन योनि कहे । इनि विषै अधस्तन जो पीछै कह्या भेद, ताकी सख्या की उत्पत्ति कौ कारण ऊपरि का भेद जानना । अैसै तहा एक स्कध विषै असख्यात लोक प्रमाण अन्डर है, तौ असख्यात लोक प्रमाण स्कधन विषै केते अडर है ? अैसै त्रैराशिक करि लब्धराशि असख्यात लोक गुणे असख्यात लोक प्रमाण अडर जानने । बहुरि अैसै ही आवासादि विषै त्रैराशिक कीए तिनतै असख्यात लोक गुणे आवास जानने । बहुरि तिनतै असख्यात लोक गुणे पुलवी जानने । बहुरि तिनतै असख्यात लोक गुणे बादर निगोद शरीर जानने । ते सर्व निगोद शरीर पाच जायगा असख्यात लोक माडि, परस्पर गुणै, जेता प्रमाण होइ तितने जानने ।

जंबूदीवं भरहो, कोसलसागेदतग्घराइं वा ।
खंधंडरआवासा, पुलविसरीराणि दिट्ठंता ॥१९५॥

जंबूद्वीपो भरतः कोशल साकेततद्गृहाणि वा ।
स्कंधांडरावासाः, पुलविशरीराणि दृष्टांताः ॥१९५॥

टीका – स्कधनि का दृष्टांत जबूद्वीपादिक जानने । जैसै मध्य लोक विषै जबूद्वीपादिक द्वीप है, तैसै लोक विषै स्कंध है । बहुरि अडरनि का दृष्टांत भरतादि क्षेत्र जानने । जैसै एक जंबूद्वीप विषै भरतक्षेत्र आदि क्षेत्र पाइए, तैसै स्कध विषै

अंडर जानने । बहुरि आवासनि का दृष्टांत कोशल आदि देश जानने । जैसें भरतक्षेत्र विषै कोशल देश आदि अनेक देश पाइए, तैसें अंडर विषै आवास जानने । बहुरि पुलवीनि का दृष्टांत अयोध्यादि नगर जानने । जैसें एक कोशलदेश विषै अयोध्या नगर आदि अनेक नगर पाइए, तैसें आवास विषै पुलवी जानने । बहुरि शरीरनि का दृष्टांत अयोध्या के गृहादिक जानने, जैसें अयोध्या विषै मंदरादिक पाइए, तैसें पुलवी विषै बादर निगोद शरीर जानने । बहुरि वा शब्द करि यहु दृष्टांत दीया । ऐसें ही और कोऊ उचित दृष्टांत जानने ।

एगणिगोदसरीरे, जीवा दव्वप्पमाणदो दिट्ठा ।
सिद्धेहिं अणंतगुणा, सव्वेण वितीदकालेण[1] ॥१९६॥

एकनिगोदशरीरे, जीवा द्रव्यप्रमाणतो दृष्टाः ।
सिद्धैरनंतगुणाः सर्वेण व्यतीतकालेन ॥१९६॥

टीका – एक निगोद शरीर विषै वर्तमान निगोद जीव, ते द्रव्यप्रमाण, जो द्रव्य अपेक्षा संख्या, तातै अनंतानंत है, सर्व जीव राशि कौं अनंत का भाग दीजिए, तामै एक भाग प्रमाण सिद्ध हैं । सो अनादिकाल तै जेते सिद्ध भए, तिनितै अनंता गुणे है । बहुरि अवशेष बहुभाग प्रमाण संसारी है । तिनके असंख्यातवै भाग प्रमाण एक निगोद शरीर विषै जीव विद्यमान है, ते अक्षयानंत प्रमाण हैं । ऐसें परमागम विषै कहिए है ।

बहुरि तैसें ही अतीतकाल के समयनि तै अनंत गुणे हैं । इस करि काल अपेक्षा एक शरीर विषै निगोदजीवनि की संख्या कही ।

बहुरि ऐसें ही क्षेत्र, भाव अपेक्षा तिनकी संख्या आगम अनुसारि जोडिए । तहां क्षेत्र प्रमाण तै सर्व आकाश के प्रदेशनि के अनंतवै भाग वा लोकाकाश के प्रदेशनि तै अनंत गुणे जानने ।

भाव प्रमाण तै केवल ज्ञान के अविभाग प्रतिच्छेदनि के अनंतवै भाग अर सर्वावधि ज्ञान गोचर जे भाव, तिनितै अनंत गुणे जानने । ऐसें एक निगोद शरीर विषै जीवनि का प्रमाण कह्या ।

१ षट्खण्डागम – धवला पुस्तक १, पृष्ठ २७३, गाथा १४७ तथा पृष्ठ ३९६ गाथा २१० तथा धवला पुस्तक ४, पृष्ठ ४७६ गाथा ४३

इहां प्रश्न – जो छह महीना अर साठ समय के मांही छ: सै आठ जीव कर्म नाश करि सिद्ध होइ, सो असै सिद्ध वधते जाहि ससारी घटते जाहि, तातै तुम सदा काल सिद्धनि तै अनंत गुणे एक निगोद शरीर विषै जीव कैसे कहो हो ? सर्व जीव राशि तै अनत गुणा अनागत काल का समय समूह है । सो यथायोग्य अनंतवा भाग प्रमाण काल गए, संसारी-राशि का नाश अर सिद्ध-राशि का बहुत्त्व होइ, तातै सर्वदा काल सिद्धनि तै निगोद शरीर विषै निगोद जीवनि का प्रमाण अनंत गुणा सभवै नाही ?

ताका समाधान – कहै हैं – रे तर्किक भव्य! ससारी जीवनि का परिमाण अक्षयानत है । सो केवली केवल ज्ञान दृष्टि करि अर श्रुतकेवली श्रुतज्ञान दृष्टि करि असै ही देखा है । सो यह सूक्ष्मता तर्क गोचर नाही, जातै प्रत्यक्ष प्रमाण अर आगम प्रमाण करि विरुद्ध होइ, सो तर्क अप्रमाण है जैसे किसी ने कह्या अग्नि उष्ण नाही; जाते अग्नि है, सो पदार्थ है, जो जो पदार्थ है, सो सो उष्ण नाही, जैसै जल उष्ण नाही है, असी तर्क करी, परि यहु तर्क प्रत्यक्ष प्रमाण करि विरुद्ध है । अग्नि प्रत्यक्ष उष्ण है, तातै यहु तर्क प्रमाण नाही । बहुरि किसीने कह्या धर्म है परलोक विषै दु खदायक है, जातै धर्म है, सो पुरुषाश्रित है । जो जो पुरुषाश्रित है, सो सो परलोक विषै दु खदायक है, जैसै अधर्म है, असी तर्क करी, परि यहु तर्क आगम प्रमाण करि खडित है । आगम विषै धर्म परलोक विषै सुख दायक कह्या है, तातै प्रमाण नही । असै ही जे केवली प्रत्यक्ष अर आगमोक्त कथन तातै विरुद्ध तेरी तर्क प्रमाण नाही ।

इहां बहुरि तर्क करी–जो तर्क करि विरोधी आगम कैसै प्रमाण होइ ?

ताका समाधान–जो प्रत्यक्ष प्रमाण अर अन्य तर्क प्रमाण करि सभवता जो आगम, ताकै अविरुद्धपणा करि प्रमाणपना हो है । तौ सो अन्य तर्क कहा ? सो कहिए है- सर्व भव्य ससारी राशि अनतकाल करि भी क्षय कौ प्राप्त न होइ, जातै यहु राशि अक्षयानत है । जो जो अक्षयानंत है, सो सो अनंतकाल करि भी क्षयकौ प्राप्त न होइ । जैसै तीन काल के समयनि का परिमाण कह्या कि इतना है, परि कबहू अत नाही वा सर्वद्रव्यनि का अगुरुलघु के अविभाग प्रतिच्छेद के समूह का परिमाण कह्या, परि अत नही । तैसै संसारी जीवनी का भी अक्षयानत प्रमाण जानना । असा यहु अनुमान तै आया जो तर्क, सो प्रमाण है ।

बहुरि प्रश्न–जो अनतकाल करि भी क्षय न होना साध्य, सो अक्षयानत के हेतु तै दृढ कीया। तातै इहा हेतु कै साध्यसमत्व भया ?

ताका समाधान–भव्यराशि का अक्षयानतपना आप्त के आगम करि सिद्ध है। तातै साध्यसमत्व का अभाव है। बहुत कहने करि कहा ? सर्व तत्त्वनि का वक्ता पुरुष जो है आप्त, ताकी सिद्धि होतै तिस आप्त के वचनरूप जो आगम, ताकी सूक्ष्म, अतरित, दूरि पदार्थनि विषै प्रमाणता की सिद्धि हो है। तातै तिस आगमोक्त पदार्थनि विषै मेरा चित्त निस्सदेह रूप है। बहुत वादी होने करि कहा साध्य है ?

बहुरि आप्त की सिद्धि कैसै ?

सो कहिए है 'विश्वतश्चक्षुरुत विश्वतो मुखः' असा वेद का वचन करि, बहुरि 'प्रणम्य शंभुं' इत्यादि नैयायिक वचन करि, बहुरि 'बुद्धो भवेयं' इत्यादि बौद्ध वचन करि, बहुरि मोक्षमार्गस्य नेतारं, इत्यादि जैन वचन करि, बहुरि अन्य अपना-अपना मत का देवता का स्तवनरूप वचननि करि सामान्यपनै सर्व मतनि विषै आप्त मानै है। बहुरि विशेषपनै सर्वज्ञ, वीतरागदेव स्याद्वादी ही आप्त है। तौका युक्ति करि साधन कीया है। सो विस्तार तै स्याद्वादरूप जैन न्यायशास्त्र विषै आप्त की सिद्धि जाननी। असे हो निश्चयरूप जहाँ खडने वाला प्रमाण न सभवै है, तातै आप्त अर आप्त करि प्ररूपित आगम की सिद्धि हो है। तातै आप्त आगम करि प्ररूपित ज्यो मोक्षतत्त्व अर बधतत्त्व सो अवश्य प्रमाण करना असे आगम प्रमाण तै एक शरीर विषै निगोद जीवनि कै सिद्ध-राशि तै अनत गुणापनो संभवै है। बहुरि अक्षयानत-पना भी सर्व मतवाले मानै है। कोऊ ईश्वर विषै मानै है। कोऊ स्वभाव विषै मानै है। तातै कह्या हूवा कथन प्रमाण है॥

अत्थि अणंता जीवा, जेहिं ण पत्तो तसाण परिणामो।
भावकलंकसुपउरा, णिगोदवासं ण मुंचंति[1] ॥१९७॥

सति अनंता जीवा, यैर्न प्राप्तस्त्रसाना परिणामः।
भावकलकसुप्रचुरा, निगोदवास न मुंचंति॥ १९७॥

---

१ षट्खण्डागम धवला पुस्तक १, पृष्ठ २७३, गाथा १४८ षट्खण्डागम-धवला पुस्तक ४ पृष्ठ ४७७ गाथा ४२ किन्तु तत्र भावकल-कंपउरा इति पाठ।

टीका – इस गाथा विषै नित्यनिगोद का लक्षण कह्या है । अनादि ससार विषै निगोद पर्याय ही कौ भोगवते अनते जीव नित्यनिगोद नाम धारक सदाकाल है । ते कैसे हैं ? जिनि करि त्रस जे बेइंद्रियादिक, तिनिका परिणाम जो पर्याय, सो कबहू न पाया । बहुरि भाव जो निगोद पर्याय, तिहिनै कारणभूत जो कलंक कहिये कषायनि का उदय करि प्रगट भया अशुभ लेश्यारूप, तींहि करि प्रचुरा कहिये अत्यत सबंधरूप हैं । असै ए नित्यनिगोद जीव कदाचित् निगोदवास कौ न छोडै है । याहीतै निगोद पर्याय कै आदि अंत रहितपना जानि, अनंतानंत जीवनि कै नित्य निगोदपना कह्या । नित्य विशेषण करि अनित्य निगोदिया चतुर्गति निगोदरूप आदि अत निगोद पर्याय सयुक्त केई जीव है, असा सूचै है । जातै **णिच्चचदुग्गदिणिगोद** इत्यादिक परमागम विषै निगोद जीव दोय प्रकार कहै है ।

भावार्थ – जे अनादि तै निगोद पर्याय ही कौ धरै है, ते नित्यनिगोद जीव है । बहुरि बीचि अन्य पर्याय पाय, बहुरि निगोद पर्याय धरै, ते इतर निगोद जीव जानना । सो वे आदि अंत लीये है । बहुरि जिनिके प्रचुर भाव कलक है, ते निगोद-वास कौं न छांडै, सो इहा प्रचुर शब्द है ,सो एकोदेश का अभावरूप है, सकल अर्थ का वाचक है; तातै याकरि यहु जान्या, जिनकै भाव कलंक थोरा हो है, ते जीव कदा-चित् नित्यनिगोद तै निकसि, चतुर्गति मे आवै हैं । सो छह महीना अर आठ समय मैं छ सै आठ जीव नित्यनिगोद मै सौं निकसै है ,सो ही छह महीना आठ समय मै छ सै आठ जीव ससार सौ निकसि करि मुक्ति पहुँचै है ।। १९७ ।।

आगै त्रसकाय की प्ररूपणा दोय गाथा करि कहै है—

बिहि तिहि चदुहिं पंचहिं, सहिया जे इंदिएहिं लोयह्मि ।
ते तसकाया जीवा, णेया वीरोवदेसेण ।।१९८ ।।

द्वाभ्यां त्रिभिश्चतुर्भिः पंचभिः सहिता ये इंद्रियैर्लोके ।
ते त्रसकाया जीवा, ज्ञेया वीरोपदेशेन ।। १९८ ।।

टीका – दोय इद्री स्पर्शन–रसन, तिनि करि सयुक्त द्वीद्रिय, बहुरि तीन इद्रिय स्पर्शन–रसन–घ्राण, तिनि करि सयुक्त त्रीद्रिय, बहुरि च्यारि इद्रिय स्पर्शन–रसन घ्राण–चक्षु, इनि करि सयुक्त चतुरिद्रिय बहुरि पाच इद्रिय स्पर्शन–रसन–घ्राण–चक्षु–श्रोत्र, इनि करि संयुक्त पचेद्रिय, ए कहे जे जीव, ते त्रसकाय जानने । असै श्री वर्धमान

तीर्थंकर परमदेव के उपदेश तै परपराय क्रम करि चल्या आया सप्रदाय करि शास्त्र का अर्थ धरि करि हमहू कहे है, ते जानने ।।

उववादमारणंतिय, परिणदतसमुज्झिऊण सेसतसा ।
तसणालिबाहिरह्मि य, णत्थि त्ति जिणेहिं णिद्दिट्ठ ।। १६६ ।।

उपपादमारणांतिकपरिणतत्रसमुज्झित्वा शेषत्रसाः ।
त्रसनालीबाह्ये च, न संतीति जिनैर्निर्दिष्टम् ।। १९९ ।।

टीका – विवक्षित पर्याय का पहला समय विषै पर्याय की प्राप्ति, सो उपपाद कहिए । बहुरि मरण जो प्राण त्याग अर अत जो पर्याय का अत जाकै होइ, सो मरणातकाल, वर्तमान पर्याय के आयु का अत अतर्मुहूर्त मात्र जानना । तीहि मरणातकाल विषै उपज्या, सो मारणातिकसमुद्घात कहिए । आगामी पर्याय के उपजने का स्थान पर्यंत आत्मप्रदेशनि का फैलना, सो मारणातिकसमुद्घात जानना । असा उपपादरूप परिणम्या अर मारणातिक समुद्घातरूप परिणम्या अर चकार तै केवल समुद्घात रूप परिणम्या जो त्रस, तीहि विना स्थाननि विषै अवशेष स्वस्थान-स्वस्थान अर विहारवत्स्वस्थान अर अवशेष पाच समुद्घातरूप परिणमे सर्व ही त्रस-जीव, त्रसनाली बारै जो लोक क्षेत्र, तीहि विषै न पाइए है, असा जिन जे अर्हंतादिक, तिनिकरि कह्या है । तातै जैसै नाली होइ, तैसै त्रस रहने का स्थान, सो त्रसनाली जाननी । त्रस नाली इस लोक के मध्यभाग विषै चौदह राजु ऊची, एक राजू चौडी-लबी सार्थक नाम धारक जाननी । त्रस जीव त्रसनाली विषै ही हैं । बहुरि जो जीव त्रसनाली के बाह्य वातवलय विषै तिष्ठता स्थावर था, उसनै त्रस का आयु बाधा । बहुरि सो पूर्वं वायुकायिक स्थावर पर्याय कौ छोडि, आगला विग्रहगति का प्रथम समय विषै त्रस नामा नामकर्म का उदय अपेक्षा करि त्रसनाली के बाह्य त्रस हूवा, तातै उपपादवाले त्रस का अस्तित्व त्रसनाली बाह्य कह्या । बहुरि कोई जीव त्रसनाली के माहि त्रस है, बहुरि त्रसनाली बाहिर तनुवातवलय सबधी वायुकायिक स्थावर का बध किया था । सो आयु का अतर्मुहूर्त अवशेष रहै, तब आत्मप्रदेशनि का फैलाव जहा का बध किया था, तिस स्थानक त्रसनाली के बाह्य तनुवातवलय पर्यन्त गमन करै । तातै मारणातिक समुद्घातवाले त्रस का अस्तित्व त्रसनाली बाह्य कह्या ।

बहुरि केवली दड-कपाटादि आकार करि त्रसनाली बाह्य अपने प्रदेशनि का फैलावनरूप समुद्घात करै है । तातै केवलसमुद्घात वाले त्रस का अस्तित्व त्रसनाली

बाह्य कह्या । इनि बिना और त्रस का अस्तित्व त्रसनाली बाह्य नाही है, ऐसा अभिप्राय शास्त्र के कर्ता का जानना ।

आगै वनस्पतीवत् अन्य भी जीवनि कै प्रतिष्ठित, अप्रतिष्ठितपना का भेद दिखावै है—

पुढवीआदिचउण्हं, केवलिआहारदेवणिरयंगा ।
अपदिट्ठिदा णिगोदहिं, पदि्ठदठिदंगा हवे सेसा ॥२००॥

पृथिव्यादिचतुर्णां, केवल्याहारदेवनिरयांगानि ।
अप्रतिष्ठितानि निगोदैः, प्रतिष्ठितांगा भवंति शेषा ॥२००॥

टीका – पृथ्वी आदि चारि प्रकार जीव पृथ्वी – अप – तेज – वायु इनि का शरीर, बहुरि केवली का शरीर, बहुरि आहारक शरीर, बहुरि देवनि का शरीर, बहुरि नारकीनि का शरीर ए सर्व निगोद शरीरनि करि अप्रतिष्ठित है, आश्रित नाही । इनि विषै निगोद शरीर न पाइए है । बहुरि अवशेष रहे जे जीव, तिनि के शरीर प्रतिष्ठित जानने । इनि विषै निगोद शरीर पाइए है । तातै अवशेष सर्व निगोद शरीरनि करि प्रतिष्ठित है, आश्रित है । तहा सप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पती, द्वीद्रिय, त्रीद्रिय, चतुरिंद्रिय, पचेद्रिय, तिर्यंच अर पूर्वै कहे तिनि बिना अवशेष मनुष्य इनि सबनि कै शरीर विषै निगोद पाइए है ।

आगै स्थावरकायिक, त्रसकायिक जीवनि के शरीर का आकार कहैं है—

मसुरंबुबिंदुसूई–कलावधयसण्णिहो हवे देहो ।
पुढवीआदिचउण्हं, तरुतसकाया अणेयविहा ॥२०१॥

मसूरांबुबिंदुसूचीकलापध्वजसन्निभो भवेद्देहः ।
पृथिव्यादिचतुर्णां, तरुत्रसकाया अनेकविधाः ॥ २०१ ॥

टीका – पृथिवीकायिक जीवनि का शरीर मसूर अन्न समान गोल आकार धरै है । बहुरि अपकायिक जीवनि का शरीर जल की बूद के समान गोल आकार धरै है । बहुरि अग्निकायिक जीवनि का शरीर सुईनि का समूह के समान लंबा अर ऊर्ध्व विषै चौड़ा बहुमुखरूप आकार धरै है । बहुरि वातकायिक जीवनि का शरीर

ध्वजा समान लबा, चोकोर आकार धरै है। असै इनिके आकार कहे। तथापि इनिकी अवगाहना घनागुल के असख्यातवे भागमात्र है, ताते जुदे-जुदे दीसै नाही। जो पृथ्वी आदि इद्रियगोचर है, सो घने शरीरनि का समुदाय है, असा जानना। बहुरि तरु, जे वनस्पतीकायिक अर द्वीद्रियादिक त्रसकायिक, इनि के शरीर अनेक प्रकार आकार धरै है, नियम नाही। ते घनागुल का असख्यातवा भाग तै लगाइ, सख्यात घनागुल पर्यंत अवगाहना धरै है, असै जानना।

आगे काय मार्गणा के कथन के अनतर काय सहित ससारी जीवनि का दृष्टातपूर्वक व्यवहार कहै है—

जह भारवहो पुरिसो, वहइ भर गेहिऊण कावलियं।
एमेव वहइ जीवो, कम्मभरं कायकावलियं ॥ २०२ ॥

यथा भारवहः पुरुषो, वहति भार गृहीत्वा कावटिकम्।
एवमेव वहति जीवः, कर्मभार कायकावटिकम् ॥ २०२ ॥

टीका – लोक विषै जैसै बोझ का वहनहारा कोऊ पुरुष, कावडिया सो कावडि मे भर्या जो बोझ–भार, ताहि लेकरि विवक्षित स्थानक पहुचावै है। तैसै ही यहु ससारी जीव, औदारिक आदि नोकर्मशरीर विषै भर्या हूवा ज्ञानावरणादिक द्रव्यकर्म का भार, ताहि लेकरि नानाप्रकार योनिस्थानकनि कौ प्राप्त करै है। बहुरि जैसै सोई पुरुष कावडि का भार कौ गेरि, कोई एक इष्ट स्थानक विषै विश्राम करि तिस भार करि निपज्या दुःख के वियोग करि सुखी होइ तिष्ठै है। तैसै कोई भव्य, जीव, कालादि लब्धिनि करि अगीकार कीनी जो सम्यग्दर्शनादि सामिगी, तीहि करि युक्त होता सता, ससारी कावडि का विषै भर्या कर्म भार कौ छाडि, तिस भार करि निपज्या नाना प्रकार दुःख-पीडा का वियोग करि, इस लोक का अग्रभाग विषै सुखी होई तिष्ठै है। असा हित उपदेश रूप आचार्य का अभिप्राय है।

आगै दृष्टातपूर्वक कायमार्गणा रहित जे सिद्ध, तिनिका उपाय सहित स्वरूप कौ कहै है —

---

१ — षटखण्डागम – धवला पुस्तक १ पृष्ठ स १४०, गाथा ८७।

जह कंचणमग्गि-गयं, मुंचइ किट्टेण कालियाए य ।
तह कायबंध-मुक्का, अकाइया झाण-जोगेण[1] ॥२०३॥

यथा कांचनमग्निगतं, मुच्यते किट्टेन कालिकया च ।
तथा कायबंधमुक्ता, अकायिका ध्यानयोगेन ॥२०३॥

टीका – जैसै लोक विषै मल युक्त सोना, सो अग्नि कौ प्राप्त संता, अतरग पारा आदि की भावना करि सवार्‌या हुवा बाह्य मल तौ कीटिका अर अतरग मल श्वेतादि रूप अन्य वर्ण, ताकरि रहित हो है । देदीप्यमान सोलहबान निज स्वरूप की लब्धि कौ पाइ, सर्व जननि करि सराहिए है । तैसै ध्यानयोग जो धर्म्म ध्यान, शुक्ल ध्यान रूप भावना, ताकरि अर बहिरग तपरूपी अग्नि का सस्कार करि, निकट भव्य जीव है, ते भी औदारिक, तैजस शरीर सहित कार्माण शरीर का सबध रूप करि मुक्त होइ । अकायिकाः कहिए शरीर रहित सिद्ध परमेष्ठी, ते अनत ज्ञानादि स्वरूप की उपलब्धि कौ पाइ, लोकाग्र विषै सर्व इन्द्रादि लोक करि स्तुति, नमस्कार, पूजनादि करि सराहिए है । काय जिनिकै पाइए ते कायिक, शरीरधारक ससारी जानने । तिनतै विपरीत काय रहित अकायिक मुक्त जीव जानने ।

आगै श्री माधवचद्र त्रैविद्यदेव ग्यारह गाथा सूत्रनि करि पृथिवीकायिक आदि जीवनि की सख्या कहै है—

आउड्ढरासिवारं, लोगे अण्णोण्णसंगुणे तेऊ ।
भूजलवाऊ अहिया, पडिभागोऽसंखलोगो दु ॥२०४॥

सार्धत्रयराशिवारं, लोके अन्योन्यसंगुणे तेजः ।
भूजलवायवः अधिकाः, प्रतिभागोऽसंख्यलोकस्तु ॥२०४॥

टीका – जगत्श्रेणी घन प्रमाण लोक के प्रदेश, तीहि प्रमाण शलाका, विरलन, देय—ए तीनि राशि करि तहा विरलनराशि का विरलन करि, एक-एक जुदा-जुदा बखेरि, तहा एक-एक प्रति देयराशि कौ स्थापि, वर्गितसवर्ग करना । जाका वर्ग कीया, ताका समतपनै वर्ग करना । सो इहा परस्पर गुणने का नाम वर्गितसवर्ग

---

[1] षट्खडागम – धवला पुस्तक १, पृष्ठ २६६, गाथा १४४ ।

है । ताहि करि शलाकाराशि मै स्यो एक घटावना । बहुरि असै करतै जो राशि उपज्या, ताहि विरलन करि एक-एक प्रति सोई राशि देइ, वर्गितसवर्ग करि शलाकाराशि मै सौ एक और घटावना । असै लोक प्रमाण शलाका राशि यावत् पूर्ण होइ तावत् करना । असै करतै जो राशि उपज्या, तीहि प्रमाण शलाका, विरलन, देयराशि, स्थापि, विरलनराशि का विरलन करि, एक-एक प्रति देयराशि कौ देइ, वर्गितसवर्ग करि दूसरी बार स्थाप्या हूवा, शलाकाराशि मैं सौ एक घटावना । बहुरि तहा उपज्या हूवा राशि का विरलन करि, एक-एक प्रति सोई राशि स्थापि, वर्गितसवर्ग करि, तिस शलाकाराशि मै सौ एक और घटावना । असै दूसरी बार स्थाप्या हूवा शलाकाराशि कौ भी समाप्त करि, तहा अत विषै जो महाराशि भया, तीहि प्रमाण शलाका, विरलन, देय, स्थापि, विरलनराशि का विरलन करि, एक-एक प्रति देयराशि कौ देइ, वर्गितसवर्ग करि, तीसरी बार स्थाप्या शलाकाराशि तै एक घटावना । बहुरि तहा जो राशि भया, ताका विरलन करि, एक-एक प्रति सोई राशि देइ, वर्गितसवर्ग करि, तिस शलाकाराशि तै एक और काढना । असै तीसरी बार स्थाप्या हूवा शलाकाराशि कौ समाप्त करि, तहा अत विषै उपज्या महाराशि, तिहि प्रमाण शलाका, विरलन, देय, स्थापि, विरलनराशि कौ बखेरि, एक-एक प्रति देयराशि कौं देइ वर्गितसवर्ग करि, चौथी बार स्थाप्या हूवा शलाकाराशि तै एक काढना । बहुरि तहा जो राशि भया, ताकौ विरलन करि, एक-एक प्रति तिस ही कौ देइ, वर्गितसवर्ग करि, तिस शलाकाराशि मै सौ एक और काढना । असै ही क्रम करि पहिली बार, दूसरी बार, तीसरी बार जो स्थापे शलाकाराशि, तिनिकौ जोडै, जो प्रमाण होइ, तितने चौथी बार स्थाप्या हूवा शलाकाराशि मैं सौ घटाए, अवशेष जितना प्रमाण रह्या, तिनकौ एक-एक घटावने करि, पूर्ण होतै अत विषै जो महाराशि उपज्या, तीहि प्रमाण तेजस्कायिक जीवराशि है । इस राशि का परस्पर गुणकार शलाकाराशि, वर्ग शलाकाराशि, अर्द्धच्छेद राशि तिनिका प्रमाण वा अल्पबहुत्व पूर्वं द्विरूप घनाघन धारा का कथन करतै कह्या है, तैसै इहा भी जानना । असै सामान्यपणै साढा तीन बार वा विशेषपणै किंचित् घाटि, च्यारि शलाकाराशि, पूर्ण जैसै होइ, तैसै लोक का परस्पर गुणन कीए, जो राशि होइ, तितने अग्निकायिक जीवराशि का प्रमाण है । बहुरि इनि तै पृथ्वीकायिक के जीव अधिक है । इनि तै अपकाय के जीव अधिक है । इनितै वातकाय के जीव अधिक है । इहा अधिक कितने है ? असा जानने के निमित्त भागहार असख्यात लोक

प्रमाण जानना । सो कहिए है- असंख्यात लोकमात्र अग्निकायिक जीवनि का परिमाण ताकौ यथायोग्य छोटा असंख्यात् लोक का भाग दीए, जेता परिमाण आवै, तितने अग्निकायिक के जीवनि का परिमाण विषै मिलाये, पृथ्वीकायिक जीवनि का परिमाण हो है । बहुरि इस पृथ्वीकायिक राशि कौ असंख्यात् लोक का भाग दीए, जेता परिमाण आवै, तितने पृथ्वीकायिक राशि विषै मिलाये, तितना अपकायिक जीवनि का परिमाण हो है । बहुरि अपकायिक राशि कौ असंख्यात लोक का भाग दीए, जो परिमाण आवै, तितना अपकायिक राशि विषै मिलाए, वातकायिक जीवनि का परिमाण हो है, ऐसै अधिक-अधिक जानने ।

अपदिट्ठिदपत्तेया, असंखलोगप्पमाणया होंति ।
तत्तो पदिट्ठिदा पुण, असंखलोगेण संगुणिदा ॥२०५॥

अप्रतिष्ठितप्रत्येका, असंख्यलोकप्रमाणका भवंति ।
ततः प्रतिष्ठिताः पुनः, असंख्यलोकेन संगुणिताः ॥२०५॥

टीका – अप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पतीकायिक जीव यथायोग्य असंख्यात लोक प्रमाण है । बहुरि इनि कौ असंख्यात लोक करि गुणै, जो परिमाण होइ, तितने प्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पतीकायिक जीव जानने । दोऊनि कौ मिलाए सामान्य प्रत्येक वनस्पतीकायिक जीवनि का प्रमाण हो है ।

तसरासिपुढविआदी, चउक्कपत्तेयहीणसंसारी ।
साहारणजीवाणं, परिमाणं होदि जिणदिट्ठं ॥२०६॥

त्रसराशिपृथिव्यादि चतुष्कप्रत्येकहीनसंसारी ।
साधारणजीवाना, परिमाणं भवति जिनदिष्टम् ॥२०६॥

टीका – आगै कहिए है - आवली का असंख्यातवा भाग करि भाजित प्रतरागुल का भाग जगत्प्रतर कौ दीए, जो होइ, तितना त्रसराशि का प्रमाण अर पृथ्वी-अप-तेज-वायु इनि च्यारिनि का मिल्या हूवा साधिक चौगुणा तेजकायिक राशि प्रमाण, बहुरि इस प्रतिष्ठित-अप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पती का मिल्या हूवा परिमाण, ऐसै इनि तीन राशिनि कौ ससारी जीवनि का परिमाण मे घटाए, जो अवशेष रहै, तितना साधारण वनस्पती, जे निगोद जीव, तिनिका परिमाण अनतानत जानना, ऐसा जिनदेव ने कह्या ।

सगसगअसखभागो, बादरकायाण होदि परिमाणं ।
सेसा सुहुमपमाणं, पडिभागो पुव्वणिद्दिट्ठो ।।२०७।।

स्वकस्वकासख्यभागो, बादरकायाना भवति परिमाणम् ।
शेषाः सूक्ष्मप्रमाण, प्रतिभागः पूर्वनिर्दिष्ट· ।। २०७ ।।

टीका – पृथिवी, अप, तेज, वायु, साधारण वनस्पतीकायिकनि का जो पूर्वे परिमाण कह्या, तिस अपने-अपने परिमाण कौं असख्यात का भाग देना । तहा एक भाग प्रमाण तौ अपना-अपना बादर कायकनि का प्रमाण है । अवशेष बहुभाग प्रमाण सूक्ष्म कायकनि का प्रमाण है । पृथ्वीकायिक के परिमाण कौ असख्यात का भाग दीजिए । तहा एक भाग प्रमाण बादर पृथ्वीकायकनि का परिमाण है । अवशेष बहुभाग परिमाण सूक्ष्म पृथ्वीकायिकनि का परिमाण है । ऐसै ही सब का जानना । इहा भी भागहार का परिमाण पूर्वे कह्या था, असख्यात लोक प्रमाण सोई है । तातै इहा भी अग्निकायादिक विषै पूर्वोक्त प्रकार अधिक-अधिकपना जानना ।

सुहुमेसु सखभागं, सखा भागा अपुण्णगा इदरा ।
जस्सि अपुण्णद्धादो, पुण्णद्धा सखगुणिदकमा ।।२०८।।

सूक्ष्मेषु सख्यभाग., सख्या भागा अपूर्णका इतरे ।
यस्मादपूर्णाद्धात, पूर्णाद्धा सख्यगुणितक्रमा ।।२०८।।

टीका – पृथ्वी, अप, तेज, वायु, साधारण वनस्पती, इनिका पूर्वे जो सूक्ष्म जीवनि का परिमाण कह्या, तीहि विषै अपने-अपने सूक्ष्म जीवनि का परिमाण कौं सख्यात का भाग दोजिए, तहा एक भाग प्रमाण तौ अपर्याप्त है । बहुरि अवशेष बहुभाग प्रमाण पर्याप्त है । सूक्ष्म जीवनि विषै अपर्याप्त राशि तै पर्याप्त राशि का प्रमाण बहुत जानना । सो कारण कहै है, जातै अपर्याप्त अवस्था का काल अतर्मुहूर्त मात्र है । इस काल तै पर्याप्त अवस्था का काल सख्यातगुणा है, सो दिखाइए है । कोमल पृथ्वीकायिक का उत्कृष्ट आयु बारह हजार वर्ष प्रमाण है । बहुरि कठिन पृथ्वी कायिक का बाईस हजार वर्ष प्रमाण है । जलकायिक का सात हजार वर्ष प्रमाण है । तेजकायिक का तीन दिन प्रमाण है । वातकायिक का तीन हजार वर्ष प्रमाण है । वनस्पती कायिक का दश हजार वर्ष प्रमाण है ।

इहा प्रसंग पाइ विकलत्रय विषै बेद्री का बारा वर्ष, तेंद्री का गुणचास दिन, चौद्री का छह महिना प्रमाण है। असै उत्कृष्ट आयु, बल का परिमाण कह्या। तीहि विषै अतर्मुहूर्त काल विषै तौ अपर्याप्त अवस्था है। अवशेष काल विषै पर्याप्त अवस्था है। तातै अपर्याप्त अवस्था का काल तै पर्याप्त अवस्था का काल सख्यातगुणा जानना। तहा पृथ्वी कायिक का पर्याप्त-अपर्याप्त दोऊ कालनि विषै जो सर्व सूक्ष्म जीव पाइए तौ अतर्मुहूर्त प्रमाण अपर्याप्त काल विषै केते पाइए ? असै प्रमाण राशि पर्याप्त-अपर्याप्त दोऊ कालनि के समयनि का समुदाय, फलराशि सूक्ष्म जीवनि का प्रमाण, इच्छाराशि अपर्याप्त काल का समयनि का प्रमाण, तहा फल करि इच्छा कौ गुणि, प्रमाण का भाग दीए, लब्धराशि का परिमाण आवै, तितने सूक्ष्म पृथ्वीकायिक अपर्याप्त जीव जानने। बहुरि प्रमाण राशि, फलराशि, पूर्वोक्त इच्छा-राशि पर्याप्त काल कीए लब्धराशि का जो परिमाण आवै, तितने सूक्ष्म पृथ्वी-कायिक पर्याप्त जीवनि का परिमाण जानना। ताही तै सख्यात का भाग दीए, एक भाग प्रमाण अपर्याप्त कहे। अवशेष (बहु) भाग प्रमाण पर्याप्त कहे है। असै ही सूक्ष्म अपकायिक, तेजकायिक, वातकायिक, साधारण वनस्पतिकायिक विषै अपना-अपना सर्व काल कौ प्रमाणराशि करि, अपने-अपने प्रमाण कौ फलराशि करि पर्याप्त वा अपर्याप्त काल कौ इच्छाराशि करि लब्धराशि प्रमाण पर्याप्त वा अपर्याप्त जीवनि का प्रमाण जानना। इहा पर्याप्त वा अपर्याप्त काल की अपेक्षा जीवनि का परिमाण सिद्ध हूवा है।

पल्लासंखेज्जवहिद, पदरंगुलभाजिदे जगप्पदरे ।
जलभूणिपवादरया, पुण्णा आवलिअसंखभजिदकमा ॥२०९॥

पल्यासंख्यावहितप्रतरांगुलभाजिते जगत्प्रतरे ।
जलभूनिपबादरकाः, पूर्णा आवल्यसंख्यभाजितक्रमाः ॥२०९॥

टीका – पल्य के असख्यातवा भाग का भाग प्रतरागुल कौ दीये, जो परिमाण आवै, ताका भाग जगत्प्रतर कौ दीए, जो परिमाण आवै, तितना बादर अपकायिक पर्याप्त जीवनि का प्रमाण जानना। बहुरि इस राशि कौ आवली का असख्यातवा भाग का भाग दीए, जो परिमाण आवै, तितना बादर पृथ्वीकायिक पर्याप्त जीवनि का प्रमाण जानना। बहुरि इस राशि कौ भी आवली का असख्यातवा भाग का भाग दीए, जो परिमाण आवै, तितना बादर प्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पती पर्याप्त

जीवनि का प्रमाण जानना । बहुरि इस राशि कौं भी आवली का असंख्यातवा भाग का भाग दीए, जो परिमाण आवै, तितना बादर अप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पती पर्याप्त जीवनि का प्रमाण जानना ।

इहां 'णि' इस आदि अक्षर तै निगोद शब्द करि प्रतिष्ठित प्रत्येक जानने, जातै साधारण का कथन आगे प्रगट कहै है —

विंदावलिलोगाणमसंखं संखं च तेउवाऊणं ।
पज्जत्ताण पमाणं, तेहिं विहीणा अपज्जत्ता ।।२१०।।

वृंदावलिलोकानामसंख्यं संख्यं च तेजोवायूनाम् ।
पर्याप्तानां प्रमाणं, तैर्विहीना अपर्याप्ताः ।।२१०।।

टीका – आवली के जेते समय हैं, तिनिका घन कीए, जो प्रमाण होइ, ताकौ वृंदावली कहिए । ताकौ असंख्यात का भाग दीए, जो परिमाण आवै, तितना बादर अग्निकायिक पर्याप्त जीवनि का प्रमाण जानना । बहुरि लोक कौं संख्यात का भाग दीए, जो परिमाण आवै, तितना बादर वातकायिक पर्याप्त जीवनि का प्रमाण जानना । सूक्ष्म जीवनि का प्रमाण पूर्वै कह्या है, तातै इहां बादर ही ग्रहण करने ।

बहुरि पूर्वै जो पृथ्वी, अप, तेज, वायु, प्रतिष्ठित-अप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पतीरूप बादर जीवनि का परिमाण कह्या था, तीहि विषै अपना-अपना पर्याप्त जीवनि का परिमाण घटाए, अवशेष रहै, तितने-तितने बादर अपर्याप्त जीव जानने ।

साहारणबादरेसु, असंखं भागं असंखगा भागा ।
पुण्णाणमपुण्णाणं, परिमाणं होदि अणुकमसो ।।२११।।

साधारणबादरेषु असंख्यं भागं संख्यका भागाः ।
पूर्णानामपूर्णानां, परिमाणं भवत्यनुक्रमशः ।।२११।।

टीका – बादर साधारण वनस्पती का जो परिमाण कह्या था, ताकौं असंख्यात का भाग दीजिए । तहां एक भाग प्रमाण तौ बादर निगोद पर्याप्त जीवनि का प्रमाण जानना । बहुरि अवशेष असंख्यात बहुभाग प्रमाण बादर निगोद अपर्याप्त जीवनि का प्रमाण जानना । ऐसैं अनुक्रम तैं इहां काल की अपेक्षा अल्प-बहुत

नाही कह्या है। बादरनि विषै पर्याप्तपना दुर्लभ है। तातै पर्याप्त थोरे, अपर्याप्त घने है, असा आचार्यनि का अनुक्रम जानि कथन कीया है। असा आचार्यनि का अभिप्राय जानना।

आवलिअसंखसंखेणवहिदपदरंगुलेण हिदपदरं।
कमसो तसतप्पुण्णा, पुण्णूणतसा अपुण्णा हु ॥२१२॥

आवल्यसंख्यसंख्येनावहितप्ररांगुलेन हितप्रतरम्।
क्रमशस्त्रसतत्पूर्णाः पूर्णोनत्रसा अपूर्णा हि ॥२१२॥

टीका – आवली का असख्यातवा भाग का भाग प्रतरांगुल कौ दीए, जो परिमाण आवै, ताका भाग जगत्प्रतर कौ दीए, जो परिमाण आवै, तितना सर्व त्रसराशि का प्रमाण जानना। बहुरि सख्यात का भाग प्रतरागुल कौ दीए, जो परिमाण आवै, ताका भाग जगत्प्रतर कौ दीए, जो परिमाण आवै, तितना पर्याप्त त्रस जीवनि का प्रमाण जानना। बहुरि सामान्य त्रस जीवनि का परिमाण मै स्यौ पर्याप्त त्रसनि का परिमाण घटाए, जो परिमाण अवशेष रहै, तितना अपर्याप्त त्रस जीवनि का प्रमाण जानना। इहा भी पर्याप्तपना दुर्लभ है। तातै पर्याप्त त्रस थोरे है, अपर्याप्त त्रस बहुत है, असा जानना।

आगै बादर अग्निकायिक आदि छह प्रकार जीवनि का परिमाण का विशेष निर्णय करने के निमित्त दोय गाथा कहै है –

आवलिअसंखभागेणवहिदपल्लूणसायरद्धछिदा।
बादरतेपणिभूजलवादाणं चरिमसायरं पुण्णं ॥२१३॥

आवल्यसंख्यभागेनावहितपल्योनसागरार्धच्छेदाः।
बादरतेपनिभूजलवातानां चरमः सागरः पूर्णः ॥२१३॥

टीका – बादर अग्निकायिक, अप्रतिष्ठित-प्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पती, पृथ्वी, अप, वायु इन छहौ राशि के अर्धच्छेदो का परिमाण प्रथम कहिए है। अर्धच्छेद का स्वरूप पूर्वै धारानि का कथन विषै कह्या ही था, सो इहा एक बार आवली का असख्यातवा भाग का भाग पल्य कौ दीए, जो एक भाग का परिमाण आवै, तितना सागर मे सो घटाइए, तब बादर अग्निकायिक जीवनि का जो परिमाण, ताके अर्ध-

च्छेदनि का परिमाण होइ । बहुरि दोय बार आवली का असख्यातवा भाग का भाग पल्य कौ दीए, जो परिमाण आवै, तितना सागर मे सो घटाइए, तब बादर अप्रतिष्ठित प्रत्येक राशि के अर्धच्छेदनि का परिमाण होइ । बहुरि तीन बार आवली का असख्यातवा भाग का भाग पल्य कौ दीए, जो परिमाण आवै, तितना सागर मे सो घटाइए, तब बादर प्रतिष्ठित प्रत्येकराशि के अर्धच्छेदनि का परिमाण होइ। बहुरि च्यारि बार आवली का असख्यातवा भाग का भाग पल्य कौ दीए, जो परिमाण आवै, तितना सागर मे सो घटाए, पृथ्वीकायिक राशि के अर्धच्छेदनि का परिमाण होइ । बहुरि पांच बार आवली का असख्यातवा भाग का भाग पल्य कौ दीए, जो परिमाण आवै, तितना सागर मे सो घटाए, अपकायिक राशि के अर्धच्छेदनि का परिमाण होइ । बहुरि वातकायिक राशि के अर्धच्छेदनि का परिमाण सपूर्ण सागर प्रमाण जानना । जातै सूत्र विषै असा कह्या है **'अंत विषै सपूर्ण सागर है'** ।

ते वि विसेसेणहिया, पल्लासंखेज्जभागमेत्तेण ।
तम्हा ते रासीओ, असंखलोगेण गुणिदकमा ॥२१४॥

तेऽपि विशेषेणाधिकाः, पल्यासख्यातभागमात्रेण ।
तस्मात्ते राशयोऽसख्यलोकेन गुणितक्रमाः ॥२१४॥

टीका – जा कारण तै जे अर्धच्छेद राशि, ते बादर तेजकायिक राशि के अर्धच्छेद राशि तै लगाइ, अप्रतिष्ठित प्रत्येक आदि राशिनि के अर्धच्छेद पाचौ आवली के असख्यातवे भाग मात्र अपना-अपना एक-एक विशेष करि क्रम तै अधिक हैं । तहा अग्निकायिक राशिनि के अर्धच्छेदनि तै अप्रतिष्ठित प्रत्येकराशि के अर्धच्छेद पल्य कौ एक घाटि आवली का असख्यातवा भाग करि गुणिए अर दोय बार आवली का असख्यातवा भाग का भाग दीजिए, जो प्रमाण होइ, तितने अधिक हैं । बहुरि अप्रतिष्ठित प्रत्येक राशि के अर्धच्छेदनि तै प्रतिष्ठित प्रत्येक राशि के अर्धच्छेद पल्य कौं एक घाटि आवली का असख्यातवा भाग करि गुणिए अर तीन बार आवली का असख्यातवा भाग का भाग दीए, जो प्रमाण होइ, तितने अधिक है। बहुरि प्रतिष्ठित प्रत्येक राशि के अर्धच्छेदनि तै बादर पृथ्वीकायिक राशि के अर्धच्छेद पल्य कौ एक घाटि आवली का असख्यातवा भाग करि गुणिए अर च्यारि बार आवली का असख्यातवा भाग का भाग दीजिए, जो प्रमाण होइ, तितने अधिक है । बहुरि बादर पृथ्वी-

कायिक राशि के अर्धच्छेदनि तै वादर जलकायिक राशि के अर्धच्छेद पल्य कौ एक घाटि आवली का असख्यातवां भाग करि गुणिए, अर पाच वार आवली का असख्यातवा भाग का भाग दीजिए; जो प्रमाण होइ तितने अधिक हैं। बहुरि वादर जलकायिक राशि के अर्धच्छेदनि तै बादर वातकायिक राशि के अर्धच्छेद पल्य कौ एक करि गुणिए, अर पाच बार आवली का असख्यातवा भाग का भाग दीजिए, जो प्रमाण आवै, तितने अधिक है, ऐसै अधिक-अधिक अर्धच्छेद जानने।

अब इस कथन कौ अकसदृष्टि करि प्रगट दिखाइए है। पल्य का प्रमाण पैंसठि हजार पाच सै छत्तीस (६५,५३६) आवली का असख्यातवा भाग का प्रमाण आठ, सागर का प्रमाण छह लाख पचपन हजार तीन सै साठि (६,५५,३६०) तहा एक बार, दोय बार, तीन बार, च्यारि बार, पाच बार, आठ का भाग पणट्ठी कौ दीए, इक्यासी सै बाणवै, एक हजार चौबीस, एक सौ अठाईस, सोलह, दोय (८१९२। १०२४।१२८।१६।२) इतने पाइए। सो ए क्रम तै आठ-आठ गुणे घाटि हैं। बहुरि इतने-इतने छह लाख पचावन हजार तीन सै साठि विषै घटाए, अंत विषै सपूर्ण है। तातै किछू भी न घटाए, अग्निकायिकादि राशि के अर्धच्छेदनि का प्रमाण होइ। ६४७१६८। ६५४३३६। ६५५२३२। ६५५३४४। ६५५३५८। ६५५३६०।

इहा अधिक प्रमाण ल्यावने कौ पणट्ठी कौ सात करि गुणै, दोय, तीन, च्यारि, पाच वार आठ का भाग दीए अत विषै एक करि गुणि, पाच वार आठ का भाग दीए, इकहत्तरिसै अडसठ, आठ सै छिनवै, एक सौ बारह, चौदह, दोय (७१६८। ८९६। ११२। १४। २) अनुक्रम तै अधिक का प्रमाण आवै है। ऐसे ही पूर्वोक्त कथन का भावार्थ जानना।

बहुरि इहा जितना-जितना अर्धच्छेदनि का अधिक का प्रमाण कह्या, तितना तितना दूवा माडि परस्पर गुणै, जो-जो यथासभव असख्यात लोकमात्र प्रमाण होइ, तीहि तीहि करि गुण्या हूवा अनुक्रम तै अग्निकायिकादि तै अप्रतिष्ठित प्रत्येकादि राशि जानने। जातै ऐसै सूत्र पूर्वं गणित कथन विषै कह्या है –

> विरलिदरासीदो पुण, जेत्तियमेत्ताणि अहियरूवाणि।
> तेसिं अण्णोण्णहदी, गुणयारो लद्धरासिस्स ॥

इस सूत्र के अभिप्राय तै जेते-जेते पूर्व राशि के अर्धच्छेदनि तै उत्तर राशि के अर्धच्छेद अधिक कहे, तितने-तितने दूवे माडि, परस्पर गुणै, जो-जो प्रमाण होइ,

तितने-तितने प्रमाण करि, पूर्वराशि कौ गुणै, उत्तर राशि का प्रमाण होइ। सो इहा सामान्यपनै गुणकार का प्रमाण सर्वत्र असख्यात लोकमात्र है। इहा पूर्वोक्त प्रमाण दूवानि कौ परस्पर गुणै असख्यात लोक कैसै होइ ? सो इस कथन कौ प्रकट अकसदृष्टि करि अर अर्थसदृष्टि करि दिखाइए है। जैसै सोलह दूवानि कौ परस्पर गुणै, पणट्ठी होइ, तौ चौसठि दूवानि कौं परस्पर गुणै, कितने होइ, ऐसै त्रैराशिक करिए। तहा प्रमाणराशि विषै देयराशि दोय विरलनराशि सोलह,फलराशि पणट्ठी (६५५३६) इच्छाराशि विषै देयराशि दोय विरलनराशि चौसठि।

अब इहा लब्धराशि का प्रमाण ल्यावने कौ करण सूत्र कहै हैं –

दिण्णच्छेदेणवहिद-इट्ठच्छेदेहिं पयदविरलणं भजिदे।
लद्धमिदइट्ठरासीणण्णोण्णहदीए होदि पयदधणं ॥२१५॥

देयच्छेदेनावहितेष्टच्छेदैः प्रकृतविरलन भाजिते।
लब्धमितेष्टराश्यन्योन्यहत्या भवति प्रकृतधनम् ॥२१५॥

टीका – देयराशि के अर्धच्छेद का प्रमाण करि, जे फलराशि के अर्धच्छेद प्रमाणराशि विषै विरलनराशि रूप कहे, तिनिका भाग दीए, जो प्रमाण आवै, तीहि करि इच्छाराशि रूप प्रकृतराशि विषै जो विरलनराशि का प्रमाण कह्या, ताकौ भाग दीए, जो प्रमाण आवै, तितना जायगा फलराशिरूप जो इष्टराशि, ताकौ माडि परस्पर गुणै, जो प्रमाण आवै, तितना लब्धराशिरूप प्रकृतिधन का प्रमाण हो है। सो इहा देयराशि दोय, ताका अर्धच्छेद एक, तीहिंका जे फलराशि पणट्ठी के अर्धच्छेद प्रमाणराशि विषै विरलनराशिरूप कहे सोलह, तिनिकौ भाग दीए, सोलह ही पाए। इनिका साध्यभूत राशि का इच्छाराशि विषै कह्या, जो विरलनराशि चौंसठि, ताकौं भाग दीए, च्यारि पाए। सो च्यारि जायगा फलराशिरूप पणट्ठी माडि ६५५३६। ६५५३६। ६५५३६। ६५५३६। परस्पर गुणै, लब्धराशि एकट्ठी प्रमाण हो है। ऐसै ही यथार्थ कथन जानना।

जो पूर्वै गणित कथन विषै लोक के अर्धच्छेदनि का जेता परिमाण कह्या है, तितने दूवे माडि परस्पर गुणै, लोक होइ, तौ इहा अग्निकायिक राशि के अर्धच्छेद प्रमाण दूवे माडि, परस्पर गुणै कितने लोक होहि ? ऐसै त्रैराशिक करि इहा प्रमाणराशि विषै देयराशि दोय, विरलनराशि लोक का अर्धच्छेदराशि, अर फलराशि

लोक अर इच्छाराशि विषै देयराशि दोय, विरलनराशि अग्निकायिकराशि के अर्धच्छेद प्रमाण जानना । तहा लब्धराशि ल्यावने कौ देयराशि दोय, ताका अर्धच्छेद एक, ताका भाग फलराशि (जो) लोक, ताका अर्धच्छेदरूप प्रमाणराशि विषै विरलनराशि है, ताकौ भाग दीए लोक का अर्धच्छेद मात्र पाए । इनका साध्यभूत अग्निकायिक राशि का अर्धच्छेदरूप जो इच्छाराशि, ताविषै विरलनराशि अग्निकायिक राशि के अर्धच्छेद, तिनकौ भाग दीएं, जो प्रमाण आया, सो किछू घाटि सख्यात पल्य कौ लोक का अर्धच्छेदराशि का भाग दीए, जो प्रमाण होइ तितना यहु प्रमाण आया । सो इतने लोक माडि, परस्पर गुणै, जो असख्यात लोक मात्र परिमाण भया, सोई लब्धिराशिरूप बादर अग्निकायिकराशि का प्रमाण इहा जानना । इहां किंचिदून संख्यात पल्य प्रमाण लोकनि कौ परस्पर गुणै, जो महत असख्यात लोक मात्र परिमाण आया, सो तौ भाज्यराशि जानना । अर लोक का अर्धच्छेद प्रमाण लोकनि कौ परस्पर गुणै, जो छोटा असंख्यात लोकमात्र परिमाण आया, सो भागहार जानना । भागहार का भाग भाज्य कौ दीए, जो प्रमाण होइ, तितना बादर अग्निकायिक जीवनि का प्रमाण जानना । बहुरि इहा अग्निकायिकराशि विषै जो भागहार कह्या, सो अगले अप्रतिष्ठित प्रत्येक आदि राशिनि विषै जो भागहार का प्रमाण पूर्वोक्त प्रकार कीए आवै, तिनि सबनि तै असख्यात लोक गुणा जानना । जातै सागर मे स्यौ जो-जो राशि घटाया, सो-सो क्रमतै आवली का असख्यातवा भाग गुणा घाटि । तातै प्रमाणराशि फलराशि पूर्वोक्तवत् स्थापि अर इच्छाराशि विषै विरलनराशि अपने-अपने अर्धच्छेद प्रमाण स्थापि, पूर्वोक्त प्रकार त्रैराशि करि अप्रतिष्ठित प्रत्येक आदि राशि भी सामान्यपनै असख्यात लोकमात्र है । तथापि उत्तर उत्तरराशि असख्यात लोक गुणा जानना । भागहार जहा घटता होइ, तहा राशि बधता होइ, सो इहा भागहार असख्यात लोक गुणा घटता क्रमतै भया, तातै राशि असख्यात लोक गुणा भया । इहा असख्यात लोक वा आवली का असख्यातवा भाग की सदृष्टि स्थापि अर्थसदृष्टि का स्थापन है । सो आगै सदृष्टि अधिकार विषै लिखेगे ।

इति आचार्य श्रीनेमिचद्र विरचित गोम्मटसार द्वितीय नाम पंचसग्रह ग्रथ की जीवतत्त्व प्रदीपिका नाम सस्कृतटीका के अनुसारि सम्यग्ज्ञान चन्द्रिका नामा इस भाषा टीका विषै जीवकाड विषै प्ररूपित जे बीस प्ररूपणा, तिनिविषै कायप्ररूपणा नामा आठवा अधिकार सपूर्ण भया ।।८।।

नववां अधिकार : योग-मार्गणा-प्ररूपणा

।। मंगलाचरण ।।

कुदकुसुमसम दंतजुत, पुष्पदंत जिनराय ।
वंदौ ज्योति अनंतमय, पुष्पदंतवतकाय ।।९।।

आगे शास्त्रकर्ता योगमार्गणा का निरूपण करे है । तहा प्रथम ही योग का सामान्य लक्षण कहै हैं –

पुग्गलविवाइदेहोदयेण मणवयणकायजुत्तस्स ।
जीवस्स जा हु सत्ती, कम्मागमकारणं जोगो ।।२१६।।

पुद्गलविपाकिदेहोदयेन मनोवचनकाययुक्तस्य ।
जीवस्य या हि शक्तिः, कर्मागमकारण योगः ।।२१६।।

टीका – ससारी जीव कै कर्म, जो ज्ञानावरणादिक-कर्म अर उपलक्षण तै औदारिकादिक नोकर्म, तिनि का आगम कहिए कर्म–नोकर्म वर्गणारूप पुद्गलस्कधनि का कर्म–नोकर्मरूप परिणमना, ताकौं कारणभूत जो शक्ति बहुरि उस शक्ति का धारी जो आत्मा, ताके प्रदेशनि का चचलरूप होना, सो योग कहिए है ।

कैसा है जीव ? पुद्गलविपाकी जो यथासभव अगोपाग नाम प्रकृति वा देह जो शरीर नाम प्रकृति ताका उदय जो फल देना रूप परिणमना, ताकरि मन वा भाषा वा शरीररूप जे पर्याप्ति, तिनिकौ धरै है ।

मनोवर्गणा, भाषावर्गणा, कायवर्गणा का अवलबन करि सयुक्त है । इहा अगोपाग वा शरीर नामा नामकर्म के उदय ते शरीर, भाषा, मन पर्याप्तिरूप परिणम्या काय, भाषा, मन वर्गणा का अवलबन युक्त आत्मा, ताकौ लोकमात्र सर्व प्रदेशनि विषै प्राप्त जो पुद्गलस्कधनि कौ कर्म-नोकर्मरूप परिणमावने कौ कारणभूत शक्ति-समर्थता, सो भाव-योग है ।

बहुरि उस शक्ति का धारी आत्मा के प्रदेशनि विषै किछू चलनरूप सकप होना सो द्रव्य-योग है ।

इहा यहु अर्थ जानना जैसैं अग्नि के सयोग करि लोहे के जलावने की शक्ति हो है। तैसैं अगोपाग शरीर नामा नामकर्म के उदय करि मनो वर्गणा वा भाषा वर्गणा का आए पुद्गल स्कध अर आहार वर्गणा का आए नोकर्म पुद्गल स्कंध, तिनि का सबधकरि जीव के प्रदेशनि के कर्म-नोकर्म ग्रहण की शक्ति-समर्थता हो है।

आगे योगनि का विशेष लक्षण कहै है–

मणवयणाण पउत्ती, सच्चासच्चुभयअणुभयत्थेसु।
तण्णामं होदि तदा, तेहिं दु जोगा हु तज्जोगा ॥२१७॥

मनोवचनयोः प्रवृत्तयः, सत्यासत्योभयानुभयार्थेषु।
तन्नाम भवति तदा, तैस्तु योगाद्धि तद्योगाः ॥२१७॥

टीका – सत्य, असत्य, उभय, अनुभय रूप जे पदार्थ, तिनि विषै जो मन, वचन की प्रवृत्ति होइ, उनके जानने कौ वा कहने कौ जीव की प्रयत्नरूप प्रवृति होइ, सो सत्यादिक पदार्थ का सबध तै, तो सत्य, असत्य, उभय, अनुभय है, विशेषण जिनि का, अैसे च्यारि प्रकार मनोयोग अर च्यारि प्रकार वचनयोग जानने। तहा यथार्थ जैसा का तैसा साचा ज्ञानगोचर जो पदार्थ होइ, ताकौ सत्य कहिए। जैसैं जल का जानना के गोचर जल होइ जातै स्नान-पानादिक जल सबधी क्रिया उसतै सिद्ध हो है, तातै सत्य कहिए।

बहुरि अयथार्थ अन्यथारूप पदार्थ जो मिथ्याज्ञान के गोचर होइ, ताकौ असत्य कहिए। जैसैं जल का जानना के गोचर भाडली (मृगजल) होइ, जातै स्नान-पानादिक जल संवधी क्रिया भाडली स्यो सिद्ध न हो है, तातै असत्य कहिए।

बहुरि यथार्थ वा अयथार्थ रूप पदार्थ जो उभय ज्ञान गोचर होइ, ताकौ उभय कहिए। जैसैं कमडलु विषै घट का ज्ञान होइ, जातै घट की ज्यौं जलधारणादि क्रिया कमडलु स्यो सिद्ध हो है, तातै सत्य है। वहुरि घटका-सा आकार नाही है, तातै असत्य है, अैसैं यहु उभय जानना।

बहुरि जो यथार्थ अयथार्थ का निर्णय करि रहित पदार्थ, जो अनुभय ज्ञान गोचर होइ, ताकौ अनुभय कहिए। सत्य-असत्यरूप कहने योग्य नाही, जैसैं यह किछू प्रतिभासै है, अैसैं सामान्यरूप पदार्थ प्रतिभास्या, तहा उस पदार्थ करि कौन

क्रिया सिद्ध हो है, अैसा विशेष निर्णय न भया, तातै सत्य भी न कह्या जाय, वहुरि सामान्यपनै प्रतिभास्या तातै असत्य भी न कह्या जाय तातै याकौं अनुभय कहिए।

अैसै च्यारि प्रकार पदार्थनि विषै मन की वा वचन की प्रवृत्ति होइ सो च्यारि प्रकार मनोयोग वा च्यारि प्रकार वचनयोग जानने।

इहा घट विषै घट कौ विकल्प, सो सत्य, अर घट विषै पट का विकल्प, सो असत्य, अर कुडी विषै जलधारण करि घट का विकल्प, सो उभय अर सबोधन आदि विषै हे देवदत्त! इत्यादि विकल्प सो अनुभय जानना।

आगै सत्य पदार्थ है गोचर जाकै, अैसा मनोयोग सो सत्य मनोयोग, इत्यादिक विशेष लक्षण च्यारि गाथानि करि कहै है –

सब्भावमणो सच्चो, जो जोगो तेण सच्चमणजोगो।
तव्विवरीओ मोसो, जाणुभयं सच्चमोसोस्तेन त्ति [१] ॥२१८॥

सद्भावमनः सत्यं, यो योगः स तु सत्यमनोयोगः।
तद्विपरीतो मृषा, जानीहि उभयं सत्यमृषेति ॥२१८॥

टीका – 'सद्भावः' कहिए सत्पदार्थ हो है गोचर जाका, अैसा जो मन सत्य पदार्थ के ज्ञान उपजावनेकी शक्ति लीए भाव-मन होइ, तीहि सत्यमन करि निपज्या जो चेष्टा प्रवर्त्तन रूप योग, सो सत्यमनोयोग कहिये।

वहुरि अैसे ही विपरीत असत्य पदार्थरूप विषय के ज्ञान उपजावने की शक्ति रूप जो भाव-मन, ताकरि जो चेष्टा प्रवर्तन रूप योग होइ, सो असत्यमनोयोग कहिए।

बहुरि युगपत् सत्य-असत्य रूप पदार्थ के ज्ञान उपजावने की शक्तिरूप जो भाव-मन, ताकरि जो प्रवर्तन रूप योग होइ, सो उभयमनोयोग कहिये–अैसै हे भव्य! तू जानि।

ण य सच्चमोसजुत्तो, जो दु मणो सो असच्चमोसमणो।
जो जोगो तेण हवे, असच्चमोसो दु मणजोगो [२] ॥२१९॥

१—षटखडागम-धवला पुस्तक १, पृ स २८३, गा स १५३। कुछ पाठभेद–सब्भावो सच्चमणो, तव्विवरीदो, सच्चमस्स ति।

२ — षटखडागम – धवला पुस्तक–१ पृष्ठ स २८४, गा स. १५७।

न च सत्यमृषायुक्तं, यत्तु मनस्तदसत्यमृषामनः ।
यो योगस्तेन भवेत्, असत्यमृषा तु मनोयोगः ।।२१९।।

टीका – जो मन सत्य अर मृषा कहिए असत्य, तीहि करि युक्त न होइ बहुरि सत्य असत्य का निर्णय करि रहित जो अनुभय पदार्थ, ताके ज्ञान उपजावने की शक्तिरूप जो भाव मन, तीहि करि निपज्या जो प्रवर्तनरूप योग, सो सत्य-असत्य रहित अनुभय मनोयोग कहिए । असें च्यारि प्रकार मनोयोग कह्या ।।२१९।।

दसविहसच्चे वयणे, जो जोगो सो दु सच्चवचिजोगो ।
तव्विवरीओ मोसो, जाणुभयं सच्चमोसो त्ति[१] ।।२२०।।

दशविधसत्ये वचने, यो योगः स तु सत्यवचोयोगः ।
तद्विपरीतो मृषा, जानीहि उभयं सत्यमृषेति ।।२२०।।

टीका – सत्य अर्थ का कहनहारा सो सत्य वचन है । जनपद नै आदि देकरि दस प्रकार सत्यरूप जो पदार्थ, तीहि विषै वचनप्रवृत्ति करने कौ समर्थ, स्वरनामा नामकर्म के उदय तै भया भाषा पर्याप्ति करि निपज्या, जो भाषा वर्गणा आलबन लीएं, आत्मा के प्रदेशनि विषै शक्तिरूप भाववचन करि उत्पन्न भया जो प्रवृत्तिरूप विशेष, सो सत्यवचन योग कहिए ।

बहुरि तीहिस्यो विपरीत असत्य पदार्थ विषै वचनप्रवृत्ति कौ कारण जो भाव वचन, तीहि करि जो प्रवर्तनरूप योग होइ, सो असत्य वचन कहिए ।

बहुरि कमडलु विषै यहु घट है इत्यादिक सत्य-असत्य पदार्थ विषै वचन प्रवृत्ति कौ कारण जो भाव वचन, तीहि करि जो प्रवर्तनरूप योग होइ, सो उभय वचन योग कहिए, असें हे भव्य ! तू जानि ।

जो णेव सच्चमोसो, सो जाण असच्चमोसवचिजोगो ।
अमणाणं जा भासा, सण्णीणामंतणी आदी[२] ।।२२१।।

यो नैव सत्यमृषा, स जानीहि असत्यमृषावचोयोगः ।
अमनसां या भाषा, संज्ञिनामामंत्रण्यादिः ।।२२१।।

---

१ – षट्खडागम-धवला पुस्तक १, पृ २८८, गा स १५८
२ – षट्खडागम-धवला पुस्तक १, पृ २८८, गा स. १५९.

टीका – जो सत्य असत्यरूप न होइ अैसा पदार्थ विषै वचनप्रवृत्ति कौं कारण जो भाव वचन, तीहि करि जो प्रवर्तनरूप योग होइ, सो सत्य असत्य निर्णय रहित अनुभय वचन योग जानना । ताका उदाहरण – उत्तर आधा सूत्र करि कहैं है । जो बेइद्रियादिक असैनी पचेद्रिय पर्यंत जीवनि कै केवल अनक्षररूप भाषा है, सो सर्व अनुभय वचन योग जानना । वा सैनी पचेद्रिय जीवनि के आगै कहिए है, जो आमत्रणी आदि अक्षररूप भाषा, सो सर्व अनुभय वचन योग जानना ।

आगै जनपद आदि दस प्रकार सत्य कौ उदाहरण पूर्वक तीनि गाथानि करि कहै है –

जणवदसम्मदिठवणा, णामे रूवे पडुच्चववहारे ।
संभावणे य भावे, उवमाए दसविहं सच्चं ।।२२२।।

जनपदसम्मतिस्थापनानाम्नि रूपे प्रतित्यव्यवहारयोः ।
संभावनायां च भावे, उपमायां दशविधं सत्यम् ।।२२२।।

टीका – जनपद विषै, सवृति वा सम्मति विषै, स्थापना विषै, नाम विषै, रूप विषै, प्रतीत्य विषै, व्यवहार विषै, सभावना विषै, भाव विषै, उपमा विषै अैसे दस स्थाननि विषै दस प्रकार सत्य जानना ।

भत्तं देवी चंदप्पह, पडिमा तह य होदि जिणदत्तो ।
सेदो दिग्घो रज्झदि, कूरो त्ति य जं हवे वयणं ।।२२३।।

भक्त देवी चद्रप्रभप्रतिमा तथा च भवति जिनदत्त ।
श्वेतो दीर्घो रध्यते, कूरमिति च यद्भवेद्वचनम् ।।२२३।।

टीका – दस प्रकार सत्य कह्या, ताका उदाहरण अनुक्रम तै कहिए हैं ।

देशनि विषै, व्यवहारी मनुष्यनि विषै प्रवृत्तिरूप वचन सो जनपद सत्य कहिए । जैसे ओदन कौं महाराष्ट्र देश विषै भातू वा भेटू कहिए । अध्रदेश विषै वटक वा मुकूडु कहिए । कर्णाट देश विषै कूलु कहिए । द्रविड देश विषै चोरु कहिए, इत्यादिक जानना ।

बहुरि जो सवृति कहिए कल्पना वा सम्मति कहिए बहुत जीवनि करि तैसै ही मानना सर्व देशनि विषै समान रूढिरूप नाम, सो संवृति सत्य कहिए वा इस

हो कौ सम्मतिसत्य कहिए। जैसे किसी विषै पटरानीपना न पाइए अर वाका नाम देवी कहिए।

बहुरि जो अन्य विषै अन्य का स्थापन करि, तिस मुख्य वस्तु का नाम कहना; सो स्थापनासत्य कहिए। जैसे रत्नादिक करि निर्मापित चद्रप्रभ तीर्थंकर की प्रतिमा कौ चद्रप्रभ कहिए।

बहुरि देशादिक की अपेक्षा भातु इत्यादिक नाम सत्य है। तैसे अन्य अपेक्षा रहित केवल व्यवहार निमित्त जिसका जो नाम होइ, सो कहना, सो नामसत्य कहिए। जैसे किसी का नाम जिनदत्त है, सो जिन भगवान करि दीया होइ, ताकौ जिनदत्त कहिए, सो इहा दानक्रिया की अपेक्षा बिना ही जिनदत्त नाम कहिए।

बहुरि जो पुद्गल के अनेक गुण होत सतै रूप की मुख्यता लीए वचन कहिए सो रूपसत्य कहिए। जैसे यहु पुरुष सफेद है, असा कहिए। तहा वाके केशादिक श्याम वा रसादिक अन्य गुण वाकै पाइए है, परि उनकी मुख्यता न करी।

बहुरि जो विवक्षित वस्तु तै अन्य वस्तु की अपेक्षा करि तिस विवक्षित वस्तु कौ हीनाधिक मान वचन कहिए, सो प्रतीत्यसत्य कहिए। याही का नाम आपेक्षिक सत्य है। जैसे यहु दीर्घ है असा कहिए, सो तहा किसी छोटे की अपेक्षा याकौ दीर्घ कह्या बहुरि यहु ही यातै दीर्घ की अपेक्षा छोटा है, परन्तु वाकी विवक्षा न लीन्ही। असे ही स्थूल सूक्ष्मादिक कहना, सो प्रतीत्यसत्य जानना।

बहुरि जो नैगमादि नय की अपेक्षा प्रधानता लीए वचन कहिए, सो व्यवहार-सत्य जानना। जैसे नैगम नय की प्रधानता करि असा कहिए कि 'भात पचै है' सो भात तौ पचै पीछै होगा, अब तौ चावल ही है। तथापि थोरे ही काल मे भात होना है, तातै नैगम नय की विवक्षा करि भात पर्याय परिणमने योग्य द्रव्य अपेक्षा सत्य कहिए। आदि शब्द करि सग्रहनयादिक का भी व्यवहार विधान जानना।

नयनि का व्यवहार की अपेक्षा जैसे सर्व पदार्थ सत्त्व रूप है वा असत्त्व रूप हैं इत्यादिक वचन सो व्यवहारसत्य है। नैगमादि नय तै सग्रह नयादिक का व्यवहार हो है, जातै याकौ व्यवहारसत्य कहिए।

सक्को जंबूदीवं, पल्लट्टदि पाववज्जवयणं च ।
पल्लोवमं च कमसो, जणपदसच्चादिदिट्ठता ॥२२४॥

शक्रो जंबूद्वीपं, परिवर्तयति पापवर्जवचनं च ।
पल्योपमं च क्रमशो, जनपदसत्यादिदृष्टांताः ॥२२४॥

टीका – असभवपरिहार पूर्वक वस्तु के स्वभाव का विधानरूप लक्षरण धरै, जो सभावना तीहि रूप वचन सो सभावना सत्य कहिए । जैसे इद्र जबूद्वीप पलटावने कौ समर्थ है, ऐसा कहिए । तहा जबूद्वीप कौं पलटाने की शक्ति सभवै नाही । ताका परिहार करि केवल वामे ऐसी शक्ति ही पाइए है, ऐसा जबूद्वीप पलटावने की क्रिया की अपेक्षा रहित वचन सो सत्य है । जैसे बीज विषै अकूरा उपजावने की शक्ति है, सो यहु क्रिया की अपेक्षा लीए वचन है । जातै असभव का परिहार करि वस्तु स्वभाव का विधानरूप जो सभावना, ताके नियम करि क्रिया की सापेक्षता नाही है । जातै क्रिया है, सो अनेक बाह्य कारण मिलै उपजै है ।

बहुरि अतीद्रिय जो पदार्थ, तिनि विषै सिद्धात के अनुसारि विधि निषेध का संकल्परूप जो परिणाम, सो भाव कहिए । तीहि नै लीए जो वचन, सो भावसत्य कहिए । जैसे जो सूकि गया होइ वा अग्नि करि पच्या होइ वा घरटी, कोल्हू इत्यादिक यत्रकरि छिन्न कीया होइ अथवा खटाई वा लूण करि मिश्रित हूवा होइ वा भस्मीभूत हूवा होइ वस्तु, ताकौ प्रासुक कहिए । याके सेवन तै पापबध नाही । इत्यादिक पापवर्जनरूप वचन, सो भावसत्य कहिए । यद्यपि इनि वस्तुनि विषै इद्रिय अगोचर सूक्ष्म जीव पाइए हैं, तथापि आगम प्रमाण तै प्रासुक अप्रासुक का सकल्परूप भाव के आश्रित ऐसा वचन सो सत्य है, जातै समस्त अतीद्रिय पदार्थ के ज्ञानीनि करि कह्या हुवा वचन सत्य है । चकार करि ऐसा ही और भावसत्य जानना ।

बहुरि जो किसी प्रसिद्ध पदार्थ की समानता किसी पदार्थ कौं कहिए सो उपमा है । तीहि रूप वचन सो उपमासत्य कहिए । जैसे उपमा प्रमाण विषै पल्योपम कह्या, तहा धान भरणे का जो खास (गोदाम) ताको पल्य कहिए, ताकी उपमा जाकौं होइ ऐसी सख्या कौ पल्योपम कह्या, सो इहा उपमासत्य है । असख्याता-सख्यात रोम खडनि के आश्रयभूत वा तीहिं प्रमाण समयनि के आश्रयभूत जो सख्या

विशेष, ताके कोइ प्रकार खाडा विषै रोम भरने करि, पल्य की समानता का आश्रय करि, पल्योपम कहिए है। चकार करि सागर आदि उपमासत्य के विशेष जाननें।

अैसे अनुक्रम तै जनपदादिक सत्य के भोजनादिक उदाहरण क्रम तै कहे।

आगै अनुभय वचन के आमंत्रणी आदि भेदनि के निरूपण के निमित्त दोय गाथा कहै है -

आमंतणि आणवणी, याचणिया पुच्छणी य पण्णवणी।
पच्चक्खाणी संसयवयणी इच्छाणुलोमा य ॥२२५॥

आमंत्रणी आज्ञापनी, याचनी आपृच्छनी च प्रज्ञापनी।
प्रत्याख्यानी संशयवचनी इच्छानुलोम्नी च ॥२२५॥

टीका - 'हे देवदत्त ! तू आव' इत्यादि बुलावनेरूप जो भाषा, सो आमंत्रणी कहिए। बहुरि 'तू इस कार्य कौ करि' इत्यादि कार्य करवाने की आज्ञारूप जो भाषा सो आज्ञापनी कहिए। बहुरि 'तू मोकौ यहु वस्तु देहु' इत्यादि मागनेरूप जो भाषा सो याचनी कहिए। बहुरि 'यहु कहा है ?' इत्यादि प्रश्नरूप जो भाषा सो आपृच्छनी कहिए। बहुरि 'हे स्वामी मेरी यहु वीनती है' इत्यादि किंकर की स्वामी सौ वीनतीरूप जो भाषा, सो प्रज्ञापनी कहिए। बहुरि 'मै इस वस्तु का त्याग कीया' इत्यादि त्यागरूप जो भाषा, सो प्रत्याख्यानी कहिए। बहुरि जैसे 'यहु बुगलो की पकति है कि ध्वजा है' इत्यादि सदेहरूप जो भाषा, सो सशयवचनी कहिए। बहुरि जैसे 'यहु है तैसे मोकौ भी होना' इत्यादि इच्छानुसारि जो भाषा, सो इच्छानुवचनी कहिए।

णवमी अणक्खरगदा, असच्चमोसा हवंति भासाओ।
सोदाराणं जह्मा, वत्तावत्तं ससंजणया ॥२२६॥

नवमी अनक्षरगता, असत्यमृषा भवंति भाषाः।
श्रोतॄणां यस्मात् व्यक्ताव्यक्तांशसंज्ञापिकाः ॥२२६॥

टीका - आठ भाषा तो आगै कही अर नवमी अनक्षररूप वेइंद्रियादिक असैनी जीवनि के जो भाषा हो है, अपने-अपने समस्यारूप सकेत की प्रकट करणहारी, सो

अनुभय भाषा जाननी । असे सत्य असत्य लक्षण रहित आमत्रणी आदि अनुभय भाषा जाननी । इनि विषे सत्य असत्य का निर्णय नाही, सो कारण कहै हैं । जातै असे वचननि का सुननेवाला के सामान्यपना करि तौ अर्थ का अवयव प्रगट हूवा, तातै असत्य न कही जाइ । बहुरि विशेषपना करि अर्थ का अवयव प्रगट न हूवा तातै सत्य भी न कह्या जाय, तातै अनुभय कहिए । जैसे कही 'तू आव' सो इहा सभी सुननेवाला नै सामान्यपनै जान्या कि बुलाया है, परतु वह आवैगा कि न आवैगा असा विशेष निर्णय तौ उस वचन मे नाही । तातै इसकौ अनुभय कहिए । असे सब का जानना । अन्य भी अनुभय वचन के भेद है । तथापि इन भेदनि विषे गर्भित जानने । अथवा असे ही उपलक्षण तै असी ही व्यक्त अव्यक्त वस्तु का अश की जनावनहारी और भी अनुभय भाषा जुदी जाननी ।

इहा कोऊ कहैगा कि अनक्षर भाषा का तौ सामान्यपना भी व्यक्त नाही हो है, याकौ अनुभय वचन कैसे कहिए ?

ताकौ उत्तर – कि अनक्षर भाषावाले जीवनि का सकेतरूप वचन हो है । तिस तै उनका वचन करि उनके सुख-दुख आदि का अवलबन करि हर्षादिक रूप अभिप्राय जानिए है । तातै अनक्षर शब्द विषे भी सामान्यपना की व्यक्तता सभवै है ।

आगे ए मन वचन योग के भेद कहे, तिनिका कारण कहै है—

मणवयणाणं मूलणिमित्त खलु पुण्णदेहउदओ दु ।
मोसुभयाण मूलणिमित्त खलु होदि आवरण ॥२२७॥

मनोवचनयोर्मूलनिमित्त खलु पूर्णदेहोदयस्तु ।
मृषोभययोर्मूलनिमित्त खलु भवत्यावरणम् ॥२२७॥

टीका – सत्यमनोयोग वा अनुभयमनोयोग बहुरि सत्यवचनयोग वा अनुभयवचनयोग, इनिका मुख्य कारण पर्याप्त नामा नामकर्म का उदय अर शरीर नामा नामकर्म का उदय जानना । जातै सामान्य है, सो विशेष विना न हो है । तातै मन वचन का सामान्य ग्रहण हूवा, तहा उस ही का विशेष जो है, सत्य अर अनुभय, ताका ग्रहण सहज ही सिद्ध भया । अथवा असत्य-उभय का आगे

निकट ही कथन है । तातै इहा अवशेष रहे सत्य-अनुभय, तिनि का ही ग्रहण करना । बहुरि आवरण का मद उदय होतै असत्यपना की उत्पत्ति नाही हो है । तातै असत्य वा उभय मनोयोग अर वचनयोग का मुख्य कारण आवरण का तीव्र अनुभाग का उदय जानना । इसहू विषै इतना विशेष है, तीव्रतर आवरण के अनुभाग का उदय असत्य मन-वचन कौ कारण है । अर तीव्र आवरण के अनुभाग का उदय उभय मन-वचन कौ कारण है ।

इहा कोऊ कहै कि असत्य वा उभय मन-वचन का कारण दर्शन वा चारित्र मोह का उदय क्यौ न कहौ ?

ताका समाधान – कि असत्य अर उभय मन, वचन, योग मिथ्यादृष्टीवत् असयत सम्यग्दृष्टी कै वा सयमी कै भी पाइए । तातै तू कहै सो बनै नाही । तातै सर्वत्र मिथ्यादृष्टी आदि जीवनि के सत्य-असत्य योग का कारण मद वा तीव्र आवरण के अनुभाग का उदय जानना । केवली कै सत्य-अनुभय योग का सद्भाव सर्व आवरण के अभाव तै जानना । अयोग केवली कै शरीर नामा नामकर्म का उदय नाही । तातै सत्य अर अनुभय योग का भी सद्भाव नाही है ।

इहा प्रश्न उपजै है कि–केवली कै दिव्यध्वनि है, ताकै सत्य-वचनपना वा अनुभय वचनपना कैसै सिद्धि हो है ?

ताका समाधान–केवली कै दिव्यध्वनि हो है, सो होते ही तौ अनक्षर हो है, सो सुनने वालो के कर्णप्रदेश कौ यावत् प्राप्त न होइ तावत् काल पर्यंत अनक्षर ही है । तातै अनुभय वचन कहिए । बहुरि जब सुनने वालो के कर्ण विषै प्राप्त हो है, तब अक्षर रूप होइ, यथार्थ वचन का अभिप्राय रूप सशयादिक कौ दूर करै है । तातै सत्य वचन कहिए । केवली का अतिशय करि पुद्गल वर्गणा तैसै ही परिणमि जाय है ।

आगै सयोग केवली कै मनोयोग कैसै सभवै है ? सो दोय गाथानि करि कहै है –

मणसहियाणं वयणं, दिट्ठं तप्पुव्वमिदि सजोगम्हि ।
उत्तो मणोवयारेणिंदियणाणेण हीणम्मि ॥२२८॥

मनःसहिताना वचन, दृष्टं तत्पूर्वमिति सयोगे ।
उक्तो मन उपचारेणेंद्रियज्ञानेन हीने ॥२२८॥

टीका – इन्द्रिय ज्ञान जो मतिज्ञान, तीहि करि रहित असा जु सयोग केवली, तीहि विषै मुख्यपनै तौ मनो योग है नाही, उपचारतै है । सो उपचार विषै निमित्त का प्रयोजन है, सो निमित्त इहा यहु जानना – जैसै हम आदि छद्मस्थ जीव मन करि सयुक्त, तिनिके मनोयोग पूर्वक अक्षर, पद, वाक्य, स्वरूप वचनव्यापार देखिए है । तातै केवली कै भी मनोयोग पूर्वक वचन योग कह्या ।

इहा प्रश्न – कि छद्मस्थ हम आदि अतिशय रहित पुरुषनि विषै जो स्वभाव देखिए, सो सातिशय भगवान केवली विषै कैसै कल्पिए ?

ताका समाधान – सादृश्यपना नाही है, इस ही वास्ते छद्मस्थ कै मनोयोग मुख्य कह्या । अर केवली कै कल्पनामात्र उपचाररूप मनोयोग कहा है ।

सो इस कहने का भी प्रयोजन कहै है—

अंगोवगुदयादो, दव्वमणट्ठं जिणदचंदह्मि ।
मणवग्गणखंधाणं, आगमणादो दु मणजोगो ॥२२९॥

अगोपागोदयात्, द्रव्यमनोऽर्थं जिनेंद्रचंद्रे ।
मनोवर्गणास्कधानामागमनात् तु मनोयोगः ॥२२९॥

टीका – जिन है इद्र कहिए स्वामी जिनिका, असे जो सम्यग्दृष्टी, तिनिकै चद्रमा समान ससार-आताप अर अज्ञान अधकार का नाश करनहारा, असा जो सयोगी जिन, तीहि विषै अगोपाग नामा नामकर्म के उदय तै द्रव्यमन फूल्या आठ पाखडी का कमल के आकार हृदय स्थानक के मध्य पाईए है । ताके परिणमने कौं कारणभूत मन वर्गणा का आगमन तै द्रव्य मन का परिणमन है । तातै प्राप्तिरूप प्रयोजन तै पूर्वोक्त निमित्त तै मुख्यपनै भावमनोयोग का अभाव है । तथापि मन-योग उपचार मात्र कह्या है । अथवा पूर्व गाथा विषै कह्या था, आत्मप्रदेशनि कै कर्म नोकर्म का ग्रहणरूप शक्ति, सो भावमनोयोग, बहुरि याही तै उत्पन्न भया मनोवर्गणारूप पुद्गलनि का मनरूप परिणमना, सो द्रव्यमनोयोग, सो इस गाथा सूत्र करि सभवै है । तातै केवली के मनोयोग कह्या है । तु शब्द करि केवली कै

पूर्वोक्त उपचार कह्या, तिसके प्रयोजनभूत सर्व जीवनि की दया, तत्त्वार्थ का उपदेश शुक्लध्यानादि सर्व जानने ।

आगै काययोग का निरूपण प्रारभै है । तहा प्रथम ही काय योग का भेद औदारिक काययोग, ताकौ निरुक्तिपूर्वक कहै है –

पुरुमहदुदारुरालं, एयट्ठो संविजाण तम्हि भवं ।
औरालियं तमु (त्तिउ)च्चइ औरालियकायजोगो सो[1] ।।२३०।।

पुरुमहदुदारमुरालमेकार्थः संविजानीहि तस्मिन्भवम् ।
औरालिकं तदुच्यते औरालिककाययोगः सः ।।२३०।।

टीका – पुरु वा महत् वा उदार वा उराल वा स्थूल ए एकार्थ है । सो स्वार्थ विषै ठण् प्रत्यय तै जो उदार होइ वा उराल होइ, सो औदारिक कहिए वा औरालिक भी कहिए अथवा भव अर्थ विषै ठण् प्रत्यय तै जो उदार विषै वा उराल विषै उत्पन्न होइ, सो औदारिक कहिए वा औरालिक भी कहिए । बहुरि सचयरूप पुद्गलपिड, सो औदारिक काय कहिए । औदारिक शरीर नामा नामकर्म के उदय तै निपज्या औदारिक शरीर के आकार स्थूल पुद्गलनि का परिणमन, सो औदारिक काय जानना । वैक्रियिक आदि शरीर सूक्ष्म परिणमै है, तिनिकी अपेक्षा यहु स्थूल है, तातै औदारिक कहिए है ।

इहां प्रश्न – उपजै है कि सूक्ष्म पृथ्वीकायिकादि जीवनि कै स्थूलपना नाही है, तिनिकौ औदारिक शरीर कैसै कहिए है ?

ताकां समाधान – इन हूतै वैक्रियिकादिक शरीर सूक्ष्म परिणमै है, तातै तिनकी अपेक्षा स्थूलपना आया । अथवा परमागम विषै असी रूढि है, तातै समभिरूढि करि सूक्ष्म जीवनि कै औदारिक शरीर कह्या, सो औदारिक शरीर के निमित्त आत्मप्रदेशनि कै कर्म-नोकर्म ग्रहण की शक्ति, सो औदारिक काय योग कहिए है । अथवा औदारिक वर्गणारूप पुद्गल स्कधनि कौ औदारिक शरीररूप परिणमावने कौ कारण, जो आत्मप्रदेशनि का चचलपना, सो औदारिक काययोग हे भव्य ! तू जानि । अथवा औदारिक काय सोई औदारिककाय योग है । इहा कारण

---

1 – षट्खडागम धवला पुस्तक १, पृ २९३ गाथा स १६० पाठभेद–त विजाण तिगुत्त ।

विषै कार्य का उपचार जानना । इहा उपचार है सो निमित्त अर प्रयोजन धरै है। तहा औदारिक काय तै जो योग भया, सो औदारिक काय योग कहिए, सो यहु तौ निमित्त । बहुरि तिस योग तै ग्रहे पुद्गलनि का कर्म-नोकर्मरूप परिणमन, सो प्रयोजन सभवै है । तातै निमित्त अर प्रयोजन की अपेक्षा उपचार कह्या है ।

आगै औदारिक मिश्रकाययोग कौं कहै है –

ओरालिय उत्तत्थं, विजाण मिस्सं तु अपरिपुण्णं तं ।
जो तेण संपजोगो, ओरालियमिस्सजोगो सो[1] ॥२३१॥

औरालिकमुक्तार्थं, विजानीहि मिश्रं तु अपरिपूर्णं तत् ।
यस्तेन संप्रयोगः, औरालिकमिश्रयोगः सः ॥२३१॥

टीका – पूर्वोक्त लक्षण लीए जो औदारिक शरीर, सो यावत् काल अतर्मुहूर्त पर्यंत पूर्ण न होइ, अपर्याप्त होइ, तावत् काल औदारिक मिश्र नाम अनेक कै मिलने का है, सो इहा अपर्याप्त काल सबधी तीन समयनि विषै सभवता जो कार्माणयोग, ताकी उत्कृष्ट कार्माण वर्गणा करि सयुक्त है, तातै मिश्र नाम है । अथवा परमागम विषै असे ही रूढि है । जो अपर्याप्त शरीर कौ मिश्र कहिए, सो तीहि औदारिक मिश्र करि सहित सप्रयोग कहिए, ताके अर्थि प्रवर्त्या जो आत्मा कै कर्म–नोकर्म ग्रहणे की शक्ति धरै प्रदेशनि का चचलपना, सो योग है । सो शरीर पर्याप्ति की पूर्णता के अभाव तै औदारिक वर्गणा स्कधनि कौ संपूर्ण शरीररूप परिणमावने कौ असमर्थ है । असा औदारिक मिश्र काययोग तू जानि ।

आगै विक्रियिक काय योग कौ कहै हैं–

विविहगुणइड्ढिजुत्तं, विक्किरियं वा हु होदि वेगुव्वं ।
तिस्से भवं च णेयं, वेगुव्वियकायजोगो सो[2] ॥२३२॥

विविधगुणर्द्धियुक्तं, विक्रिय वा हि भवति विगूर्वम् ।
तस्मिन् भवं च ज्ञेयं, वैगूर्विककाययोगः सः ॥२३२॥

---

१ षट्खडागम – धवला पुस्तक १ पृष्ठ २९३, गा स १६१
२ षट्खडागम – धवला पुस्तक १, पृष्ठ २९३, गाथा १६२ ।

टीका – विविध नानाप्रकार शुभ अशुभरूप अणिमा, महिमा आदि गुण तिनकी ऋद्धि जो महतता, तीहि करि सयुक्त देव–नारकीनि का शरीर, सो वैगूर्व कहिए वा वैगूर्विक कहिए वा वैक्रियिक कहिए। तहा विगूर्व कहिए नानाप्रकार गुण, तिस विषै भया सो वैगूर्व है। अथवा विगूर्व है प्रयोजन जाका, सो वैगूर्विक है। इहा ठण् प्रत्यय आया है। अथवा विविध नानाप्रकार जो क्रिया, अनेक अणिमा आदि विकार सो विक्रिया। तहा भया होइ, वा सो विक्रिया जाका प्रयोजन होइ, सो वैक्रियिक है। असी निरुक्ति जानना। जो वैगूर्विक शरीर के अर्थि तिस शरीररूप परिणमने योग्य जो आहार वर्गणारूप स्कधनि के ग्रहण करने की शक्ति धरै, आत्म-प्रदेशनि का चचलपना, सो वैगूर्विक काय योग जानना।

अथवा वैक्रियिक काय, सोई वैक्रियिक काय योग है। इहा कारण विषै कार्य का उपचार जानना। सो यहु उपचार निमित्त अर प्रयोजन पूर्ववत् धरै है। तहा वैक्रियिक काय तै जो योग भया, सो वैक्रियिक काय योग है। यहु निमित्त अर तिहि योग तै कर्म–नोकर्म का परिणमन होना, सो प्रयोजन सभवै।

आगै देव–नारकी कै तौ कह्या और भी किसी-किसी कै वैक्रियिक काय योग सभवै है, सो कहै है —

बादरतेऊवाऊ, पंचिदियपुण्णगा विगुव्वंति।
ओरालियं सरीरं, विगुव्वणप्पं हवे जेसिं ॥२३३॥

बादरतेजोवायुपंचेद्रियपूर्णका विगूर्वंति ।
औरालिकं शरीरं, विगूर्वणात्मकं भवेद्येषाम् ॥२३३॥

टीका – बादर तेजकायिक वा वातकायिक जीव, बहुरि कर्मभूमि विषै जे उत्पन्न भए चक्रवर्ति कौ आदि देकरि सैनी पचेद्री पर्याप्त तिर्यच वा मनुष्य, बहुरि भोगभूमिया तिर्यंच वा मनुष्य ते औदारिक शरीर कौ विक्रियारूप परिणमावै है। जिनिका औदारिक शरीर ही विक्रिया लीए पाइए है। ते जीव अपृथक् विक्रिया रूप परिणमै है। अर भोगभूमिया, चक्रवर्ति पृथक् विक्रिया भी करै है।

जो अपने शरीर तै भिन्न अनेक शरीरादिक विकाररूप करै, सो पृथक् विक्रिया कहिए।

बहुरि जो अपने शरीर ही कौ अनेक विकाररूप करै, सो अपृथक् विक्रिया कहिए।

आगै वैक्रियिक मिश्रकाय योग कहै है—

वेगुव्वियउत्तत्थं, विजाण मिस्सं तु अपरिपुण्णं तं।
जो तेण संपयोगो, वेगुव्वियमिस्सजोगो सो [१] ॥२३४॥

वैर्गूविकमुक्तार्थं, विजानीहि मिश्रं तु अपरिपूर्णं तत्।
यस्तेन संप्रयोगो, वैर्गूविकमिश्रयोगः सः ॥२३४॥

टीका – पूर्वोक्त लक्षण ने लीए जो वैर्गूविक वा वैक्रियिक शरीर, सो यावत् काल अतर्मुहूर्त पर्यंत पूर्ण न होइ–शरीर पर्याप्ति की सपूर्णता का अभाव करि वैक्रियिक काययोग उपजावने कौ असमर्थ होइ, तावत् काल वैक्रियिक मिश्र कहिए। मिश्रपना इहा भी औदारिक मिश्रवत् जानना। तीहि वैक्रियिक मिश्र करि सहित सप्रयोग कहिए कर्म–नोकर्म ग्रहण की शक्ति कौ प्राप्त अपर्याप्त कालमात्र आत्मा के प्रदेशनि का चचल होना, सो वैक्रियिक मिश्र काययोग कहिए। अपर्याप्त योग का नाम मिश्र योग जानना।

आगै आहारक काययोग कौ पाच गाथानि करि कहै है—

आहारस्सुदएण य, पमत्तविरदस्स होदि आहारं।
असंजमपरिहरणट्ठं, संदेहविणासणट्ठं च ॥२३५॥

आहारस्योदयेन च, प्रमत्तविरतस्य भवति आहारकम्।
असयमपरिहरणार्थं, सदेहविनाशनार्थं च ॥२३५॥

टीका – प्रमत्त विरति षष्ठम गुणस्थानवर्ती मुनि, ताके आहारक शरीर नामा नामकर्म के उदय तै आहार वर्गणारूप पुद्गल स्कधनि का आहारक शरीर-रूप परिणमने करि आहारक शरीर हो है। सो किसै अर्थि हो है ? अढाई द्वीप विषै तीर्थयात्रादिक निमित्त वा असयम दूरि करने के निमित्त वा ऋद्धियुक्त होतै

१ षट्खडागम – धवला पुस्तक १, पृष्ठ २९४, गाथा १६३।

भी श्रुतज्ञानावरण वीर्यांतराय का क्षयोपशम की मदता होतैं कौऊ धर्म्यध्यान का विरोधी शास्त्र का अर्थ विषै सदेह उपजै ताकै दूरि करने के निमित्त आहारक शरीर उपजै है ।

णियखेत्ते केवलिदुगविरहे णिक्कम्मणपहुदिकल्लाणे ।
परखेत्ते संवित्ते, जिणजिणघरवंदणट्ठं च ॥२३६॥

निजक्षेत्रे केवलिद्विकविरहे निष्क्रमणप्रभृतिकल्याणे ।
परक्षेत्रे संवृत्ते, जिनजिनगृहवंदनार्थं च ॥२३६॥

टीका – निज क्षेत्र जहा अपनी गमनशक्ति होइ, तहा केवली श्रुतकेवली न पाइए । बहुरि परक्षेत्र, जहा अपने औदारिक शरीर की गमन शक्ति न होइ, तहा केवली श्रुतकेवली होइ अथवा तहा तपज्ञान निर्वाण कल्याणक होइ, तौ तहा असयम दूर करने के निमित्त वा सदेह दूर करने के निमित्त वा जिन अर जिन-मदिर तिन की वंदना करने के निमित्त, गमन करने कौ उद्यमी भया, जो प्रमत्त सयमी, ताकै आहारक शरीर हो है ।

उत्तमअंगम्हि हवे, धादुविहीणं सुहं असंहणणं ।
सुहसंठाणं धवलं, हत्थपमाणं पसत्थुदयं ॥२३७॥

उत्तमांगे भवेत्, धातुविहीनं शुभमसंहननम् ।
शुभसंस्थानं धवलं हस्तप्रमाण प्रशस्तोदय ॥२३७॥

टीका – सो आहारक शरीर कैसा हो है ? रसादिक सप्त धातु करि रहित हो है । बहुरि शुभ नामकर्म के उदय तै प्रशस्त अवयव का धारी शुभ हो है । बहुरि सहनन जो हाडो का बंधान तीहि करि रहित हो है । बहुरि शुभ जो सम चतुरस्रसस्थान वा अगोपाग का आकार, ताका धारक हो है । बहुरि चद्रकातमणि समान श्वेत वर्ण हो है । बहुरि एक हस्त प्रमाण हो है । इहा चौवीस व्यवहारा-गुल प्रमाण एक हस्त जानना । बहुरि प्रशस्त जो आहारक शरीर बधनादिक पुण्य-रूप प्रकृति, तिनि का है उदय जाकै, असा हो है । असा आहारक शरीर उत्तमाग जो है मुनि का मस्तक, तहा उत्पन्न हो है ।

अव्वाघादी अंतोमुहुत्तकालट्ठिदी जहण्णिदरे ।
पज्जत्तीसंपुण्णे, मरणं पि कदाचि संभवई ॥२३८॥

अव्याघाति अंतर्मुहूर्तकालस्थिती जघन्येतरे ।
पर्याप्तिसंपूर्णायां, मरणमपि कदाचित् संभवति ॥२३८॥

टीका – सो आहारक शरीर अव्याबाध है, वैक्रियिक शरीर की ज्यो कोई वज्र पर्वतादिक करि रुकि सकै नाही । आप किसी कौं रोकै नाही । बहुरि जाकी जघन्य वा उत्कृष्ट अतर्मुहूर्त काल प्रमाण स्थिति है, असा है । बहुरि जब आहारक शरीर पर्याप्ति पूर्ण होइ, तब कदाचित् कोई आहारक काययोग का धारी प्रमत्त मुनि का आहारक काययोग का काल विषै अपने आयु के क्षय तै मरण भी सभवै है ।

आहरदि अणेण मुणी, सुहमे अत्थे सयस्स संदेहे ।
गत्ता केवलिपासं, तह्मा आहारगो जोगो [1] ॥२३९॥

आहारत्यनेन मुनिः, सूक्ष्मानर्थान् स्वस्य संदेहे ।
गत्वा केवलिपार्श्वं तस्मादाहारको योगः ॥२३९॥

टीका – आहारक ऋद्धि करि सयुक्त प्रमत्त मुनि, सो पदार्थनि विषै आप के सदेह होतै, ताके दूरि करने के अर्थि केवली के चरण के निकट जाइ, आप तै अन्य जो केवली, तीहिकरि जो सूक्ष्म यथार्थ अर्थ कौ आहरति कहिए ग्रहण करै, सो आहारक कहिए । आहारस्वरूप होइ, ताकौं आहारक कहिए । सो ताकै तो शरीर पर्याप्ति पूर्ण होतै, आहार वर्गणानि करि आहारक शरीर योग्य पुद्गल स्कधनि के ग्रहण करने की शक्ति धरै, आत्मप्रदेशनि का चचलपना, सो आहारक काययोग जानना ।

आगै आहारक मिश्र काययोग कौ कहैं हैं—

आहारयमुत्तत्थं, विजाण मिस्सं तु अपरिपुण्ण तं ।
जो तेण संपजोगो, आहारयमिस्सजोगो सो [2] ॥२४०॥

---

१ षट्खण्डागम - धवला पुस्तक १, पृष्ठ २९६ गाथा १६४ ।

२ षट्खण्डागम–धवला पुस्तक १, पृष्ठ २९६, गाथा १६५ ।

आहारकमुक्तार्थं विजानीहि मिश्रं तु अपरिपूर्णं तत् ।
यस्तेन संप्रयोगः आहारकमिश्रयोगः सः ॥२४०॥

टीका – पूर्वोक्त लक्षण लीए आहारक शरीर, सो यावत् काल अतर्मुहूर्तपर्यंत पूर्ण न होइ, आहार वर्गणारूप पुद्गल स्कंधनि का आहारक शरीररूप परिणमावने कौ असमर्थ होइ, तावत् काल आहारक मिश्र कहिए । इहा पूर्वं जो औदारिक शरीररूप वर्गणा है, ताके मिलाप तै मिश्रपना जानना । तीहि आहारक मिश्र करि सहित जो सप्रयोग कहिए अपूर्ण शक्तियुक्त आत्मा के प्रदेशनि का चचलपना, सो आहारक मिश्रकाययोग हे भव्य ! तू जानि ।

आगै कार्माण काय योग कौ कहै है—

कम्मेव य कम्मभवं, कम्मइयं जो दु तेण संजोगो ।
कम्मइयकायजोगो, इगिविगतिगसमयकालेसु[1] ॥२४१॥

कर्मैव च कर्मभवं, कार्मणं यस्तु तेन संयोगः ।
कार्मणकाययोगः, एकद्विकत्रिकसमयकालेषु ॥२४१॥

टीका – कर्म कहिए ज्ञानावरणादिरूप पुद्गल स्कध, सोइ कार्माण शरीर जानना । अथवा कर्म जो कार्माण शरीर नामा नामकर्म, ताके उदय करि भया, सो कार्माण शरीर कहिए । तीहि कार्माण स्कध सहित वर्तमान जो **संप्रयोगः** कहिए आत्मा के कर्मग्रहणशक्ति धरै प्रदेशनि का चचलपना, सो कार्माणकाय योग है । सो विग्रह गति विषै एक समय वा दोय समय वा तीन समय काल प्रमाण हो है । अर केवल समुद्घात विषै प्रतरद्विक अर लोक पूर्ण इनि तीन समयनि विषै हो है । और काल विषै कार्माण योग न हो है । याही तै यहु जान्या, जो कार्माण विना और जे योग कहे, ते रुकै नाही, तौ अतर्मुहूर्त पर्यत एक योग का परिणमन उत्कृष्ट रहै, पीछै और योग होइ । बहुरि जो अन्य करि रुकै, तौ एक समयकौ आदि देकरि अतर्मुहूर्त पर्यत एक योग का परिणमन यथासभव जानना । सो एक जीव की अपेक्षा तौ अैसै है । अर नाना जीव की अपेक्षा **'उपसम सुहुम'** इत्यादि गाथानि करि आठ सातर मार्गणा विना अन्य मार्गणानि का सर्व काल सद्भाव कह्या ही है ।

---

१ षट्खडागम – धवला पुस्तक १, पृष्ठ २६७, गाथा १६६ ।

आगे योगनि की प्रवृत्ति का विधान दिखावै है—

वेगुव्विय-आहारयकिरिया ण समं पमत्तविरदह्मि ।
जोगोवि एक्ककाले, एक्केव य होदि णियमेण ॥२४२॥

वैगूर्विकाहारकक्रिया न समं प्रमत्तविरते ।
योगोऽपि एककाले, एक एव च भवति नियमेन ॥२४२॥

टीका – प्रमत्त विरत षष्ठम गुणस्थानवर्ती मुनि कै समकाल विषै युगपत् वैक्रियिक काययोग की क्रिया अर आहारक योग की क्रिया नाही । असा नाही कि एक ही काल विषै आहारक शरीर कौ धारि, गमनागमनादि कार्य कौ करै अर विक्रिया ऋद्धि कौ धारि, विक्रिया सबधी कार्य कौ भी करै, दोऊ मे स्यौ एक ही होइ । यातै यहु जान्या कि गणधरादिकनि कै और ऋद्धि युगपत् प्रवर्तै तौ विरुद्ध नाही । बहुरि तैसै ही अपने योग्य अतर्मुहूर्त मात्र एक काल विषै एक जीव कै युगपत् एक ही योग होइ, दोय वा तीन योग युगपत् न होइ, यहु नियम है । जो एक योग का काल विषै अन्य योग सबधी गमनादि क्रिया की प्रवृत्ति देखिए है, सो पूर्वै जो योग भया था, ताके सस्कार तै हो है । जैसै कुभार पहिले चाक दड करि फेर्या था, पीछे कुभार उस चाक कौ छोडि अन्य कार्य कौ लाग्या, वह चाक सस्कार के बल तै केतेक काल आप ही फिर्या करै, सस्कार मिटि जाय, तब फिरै नाही । तैसै आत्मा पहिले जिस योगरूप परिणया था, सो उसको छोडि अन्य योगरूप परिणया, वह योग सस्कार के बल तै आप ही प्रवर्तै है । सस्कार मिटै जैसै छोड्या हूवा बाण गिरै, तैसै प्रवर्तना मिटै है । तातै सस्कार तै एक काल विषै अनेक योगनि की प्रवृत्ति जानना । बहुरि प्रमत्तविरति कै सस्कार की अपेक्षा भी एक काल वैक्रियिक वा आहारक योग की प्रवृत्ति न हो है । असै आचार्य करि वर्णन किया है, सो जानना ।

आगै योग रहित आत्मा के स्वरूप कौ कहै है—

जेसिं ण सति जोगा सुहासुहा पुण्णपावसजणया ।
ते होति अजोगिजिणा, अणोवमाणतबलकलिया[१] ॥२४३॥

येषां न संति योगाः, शुभाशुभाः पुण्यपापसजनका ।
ते भवंति अयोगिजिनाः, अनुपमानंतबलकलिताः ॥२४३॥

---

१ षट्खडागम – धवला पुस्तक १, पृष्ठ २८२, गाथा १५५ ।

टीका – जिन आत्मनि के पुण्य पापरूप कर्म प्रकृति के बंध कौं उपजावन हारे शुभरूप वा अशुभरूप मन, वचन, काय के योग न होहिं ते अयोगी जिन, चौदह्वा अंत गुणस्थानवर्ती वा गुणस्थानातीत सिद्ध भगवान जानने ।

कोऊ जानेगा कि योगनि के अभाव तै उनके बल का अभाव है । जैसै हम सारिखे जीवनि कै योगनि के आश्रयभूत बल देखिए है ।

तहा कहिए है । कैसे है–सिद्ध ? **'अनुपमानंतबलकलिताः'** कहिए जिनके बल कौ हम सारिखे जीवनि का बल की उपमा न बनै है । बहुरि केवलज्ञानवत् अक्षयानंत अविभाग प्रतिच्छेद लीए है, असा बल–वीर्य, जो सर्व द्रव्य-गुण-पर्याय का युगपत् ग्रहणै की समर्थता, तीहि करि व्याप्त है । तीहि स्वभाव परिणए है । योगनि का बल कर्माधीन है । तातै प्रमाण लीए है, अनंत नाही । परमात्मा का बल केवलज्ञानादिवत् आत्मस्वभावरूप है । तातै प्रमाण रहित अनंत है, असा जानना ।

आगै शरीर का कर्म अर नोकर्म भेद दिखावै हैं –

ओरालियवेगुव्विय, आहारयतेजणामकम्मुदये ।
चउणोकम्मसरीरा, कम्मेव य होदि कम्मइयं ।।२४४।।

औरालिकवैगूर्विकाहारकतेजोनामकर्मोदये ।
चतुर्नोकर्मशरीराणि, कर्मैव च भवति कार्मणम् ।।२४४।।

टीका – औदारिक, वैक्रियिक, आहारक, तैजसरूप जो नामकर्म की प्रकृति तिनके उदय तै जे ए औदारिक आदि च्यारि शरीर होइ, ते नोकर्म शरीर जानने । **नो** शब्द का दोय अर्थ है, एक तौ निषेधरूप अर एक ईषत् स्तोकरूप । सो इहा कार्माण की ज्यो ए च्यारि शरीर आत्मा के गुण कौ घातै नाही वा गत्यादिकरूप पराधीन न करि सकै । तातै कर्म तै विपरीत लक्षण धरने करि इनिकौ अकर्म शरीर कहिए । वा कर्म शरीर के ए सहकारी है । तातै ईषत् कर्म शरीर कहिए । असै इनिकौ नोकर्म शरीर कहै । जैसै मन को नो-इंद्रिय कहिए है, तैसै नोकर्म जानने । बहुरि कार्माण शरीर नामा नामकर्म के उदय तै ज्ञानावरणादिक कर्म स्कंधरूप कर्म, सोई कर्म शरीर जानना ।

आगै जे ए औदारिकादिक शरीर कहे, तिनिका समयप्रबद्धादिक की संख्या दोय गाथानि करि कहिए हैं –

परमाणूहिं अणंतहिं, वग्गणसण्णा हु होदि एक्का हु ।
ताहिं अणंतहिं णियमा, समयपबद्धो हवे एक्को ॥२४५॥

परमाणुभिरनंतैः वर्गणासंज्ञा हि भवत्येका हि ।
ताभिरनंतैर्नियमात्, समयप्रबद्धो भवेदेकः ॥२४५॥

टीका – सिद्धराशि के अनतवे भाग अर अभव्यराशि स्यौं अनतगुणा ऐसा जो मध्य अनतानत का भेद, तीहि प्रमाण पुद्‌गल परमाणूनि करि जो एक स्कध होइ, सो वर्गणा, ऐसा नाम जानना । सख्यात वा असख्यात परमाणूनि करि वर्गणा न हो है । जातै यद्यपि आगै पुद्‌गल वर्गणा के तेईस भेद कहैगे । तहा अणुवर्गणा, सख्याताणुवर्गणा, असख्याताणुवर्गणा आदि भेद है । तथापि इहा औदारिक आदि शरीरनि का प्रकरण विषै आहारवर्गणा वा तैजसवर्गणा वा कार्माणवर्गणा का ही ग्रहण जानना । बहुरि सिद्धनि के अनतवे भाग वा अभव्यनि तै अनतगुणी ऐसी मध्य अनतानत प्रमाण वर्गणा, तिनि करि एक समयप्रबद्ध हो है । समय विषै वा समय करि यहु जीव कर्म-नोकर्मरूप पूर्वोक्त प्रमाण वर्गणानि का समूहरूप स्कध करि सबध करै है । तातै याकौं समयप्रबद्ध कहिए है । ऐसा वर्गणा का वा समय-प्रबद्ध का भेद स्याद्वादमत विषै है, अन्यमत विषै नाही । यहु विशेष नियम शब्द करि जानना ।

इहा कोऊ प्रश्न करै कि एक ही प्रमाण कौं सिद्धराशि का अनतवा भाग वा अभव्यराशि तै अनतगुणा ऐसै दोय प्रकार कह्या, सो कौन कारण ?

ताका समाधान – कि सिद्धराशि का अनतवा भाग के अनत भेद हैं । तहा अभव्यराशि तै अनतगुणा जो सिद्धराशि का अनतवा भाग होइ, सो इहा प्रमाण जानना । ऐसै अल्प-बहुत्व करि तिस प्रमाण का विशेष जानने के अर्थि दोय प्रकार कह्या है । अन्य किछू प्रयोजन नाही ।

ताणं समयपबद्धा, सेडिअसंखेज्जभागगुणिदकमा ।
णंतेण य तेजदुगा, परं परं होदि सुहमं खु ॥२४६॥

तेषां समयप्रबद्धाः, श्रेण्यसंख्येयभागगुणितक्रमाः ।
अनंतेन च तेजोद्विकाः, परं परं भवति सूक्ष्मं खलु ॥२४६॥

टीका – तिन पच शरीरनि के समयप्रवद्ध सर्व ही परस्पर समान नाही है । उत्तरोत्तर अधिक परमाणूनि का समूह लीए है, सो कहिए है । परमाणूनि का प्रमाण करि औदारिक शरीर का समयप्रवद्ध सर्व तै स्तोक है । यातै श्रेणी का असख्यातवा भाग गुणा परमाणू प्रमाण वैक्रियिक का समयप्रबद्ध है । बहुरि यातै भी श्रेणिका असख्यातवा भाग गुणा परमाणू प्रमाण आहारक का समयप्रवद्ध है । असै आहारक पर्यंत जगतश्रेणी का असख्यातवा भाग की गुणकार की विवक्षा जाननी । तातै परै आहारक के समयप्रवद्ध तै अनतगुणा परमाणू प्रमाण तैजस का समयप्रवद्ध है । वहुरि यातै भी अनतगुणा परमाणू प्रमाण कार्माण का समय प्रवद्ध है । इहा 'अनंतेन तेजोद्विकं' इस करि तैजसकार्माण विषै अनतानत गुणा प्रमाण जानना ।

वहुरि इहा कोऊ आशका करै कि जो उत्तरोत्तर अधिके-अधिके परमाणू कहे, तो उत्तरोत्तर स्थूलता भी होयगी ?

तहा कहिए है–**परं परं सूक्ष्मं भवति** कहिए उत्तरोत्तर सूक्ष्म है । औदारिक तै वैक्रियिक सूक्ष्म है । वैक्रियिक तै आहारक सूक्ष्म है । आहारक तै तैजस सूक्ष्म है । तैजस तै कार्माण सूक्ष्म है । यद्यपि परमाणू तौ अधिक-अधिक है, तथापि स्कध का बधन मे विशेष है । तातै उत्तरोत्तर सूक्ष्म है । जैसै कपास के पिड तै लोह के पिड मे अधिकपना होतै भी कपास के पिड तै लोह का पिड क्षेत्र थोरा रोकै, तैसै जानना ।

आगै औदारिकादिक शरीरनि का समयप्रवद्ध अर वर्गणा, ते कितने-कितने क्षेत्र विषै रहै ? असा अवगाहना भेदनि कौं कहै है –

ओगाहणाणि ताणं, समयपबद्धाण वग्गणाणं च ।
अंगुलअसंखभागा, उवरुवरिमसंखगुणहीणा ॥२४७॥

अवगाहनानि तेषां, समयप्रबद्धानां वर्गणानां च ।
अंगुलासंख्यभागा, उपर्युपरि असंख्यगुणहीनानि ॥२४७॥

टीका – तिनि औदारिकादिक शरीर संबंधी समयप्रबद्ध वा वर्गणा, तिनिका अवगाहनाक्षेत्र घनांगुल के असंख्यातवें भागमात्र है । तथापि ऊपरि-ऊपरि असंख्यात-गुणा घाटि क्रम तै जानना । सोई कहिए है – औदारिक शरीर के समयप्रबद्धनि-का अवगाहनाक्षेत्र सूच्यंगुल का असंख्यातवा भाग का भाग घनांगुल कौं दीए, जो परिमाण आवै, तितना जानना । बहुरि याकौं सूच्यंगुल का असंख्यातवा भाग का भाग दीजिये तब औदारिक शरीर की वर्गणा के अवगाहना क्षेत्र का प्रमाण होइ । बहुरि यातै सूच्यंगुल का असंख्यातवा भाग प्रमाण, जो असंख्यात, तिहिं असंख्यात-गुणा घटता क्रम तै वैक्रियिकादि शरीर के समयप्रबद्ध का वा वर्गणा की अवगाहना का परिमाण हो है । वैक्रियिक शरीर का समयप्रबद्ध की अवगाहना कौ सूच्यंगुल का असंख्यातवा भाग करि गुणि, औदारिक समयप्रबद्ध की अवगाहना हो है । वैक्रि-यिक शरीर की वर्गणा की अवगाहना कौं सूच्यंगुल का असंख्यातवा भाग करि गुणें, औदारिक की वर्गणा की अवगाहना हो है । अैसै ही वैक्रियिक तै आहारक की, आहारक तै तैजस की, तैजस तै कार्माण की समयप्रबद्ध वा वर्गणा की अवगाहना असंख्यातगुणी क्रम तै घाटि जाननी ।

इस ही अर्थ कौ श्री माधवचंद्र त्रैविद्य देव कहै हैं –

तस्समयबद्धवग्गणओगाहो सूइअंगुलासंख–
भागहिदबिंदअंगुलमुवरुवरिं तेन भजिदकमा ।।२४८।।

तत्समयबद्धवर्गणावगाह सूच्यंगुलासंख्य–
भागहितवृंदांगुलमुपर्युपरि तेन भजितक्रमाः ।।२४८।।

टीका – तिनि सयमप्रबद्ध वा वर्गणा की अवगाहना का परिमाण सूच्यंगुल का असंख्यातवा भाग का भाग घनांगुल कौ दीए जो परिमाण होइ, तितना जानना । बहुरि ऊपरि-ऊपरि पूर्व-पूर्व तै सूच्यंगुल के असंख्यातवे भाग मात्र जानने । गुणहानि का अर भाग देने का एक अर्थ है । सो वैक्रियिक का समयप्रबद्ध वर्गणा की अवगाहना को सूच्यंगुल का असंख्यातवा भाग करि गुणें, औदारिक का समयप्रबद्ध वर्गणा की अवगाहना होइ । अथवा औदारिक का समयप्रबद्ध वर्गणा की अवगाहना कौं सूच्यं-गुल का असंख्यातवा भाग का भाग दीये वैक्रियिक शरीर का समयप्रबद्ध वर्गणा का परिमाण होइ । दोऊ एकार्थ हैं, अैसै ही सब का जानना ।

आगे विस्रसोपचय का स्वरूप कहै है –

जीवादो णंतगुणा, पडिपरमाणुम्हि विस्ससोवचया ।
जीवेण य समवेदा, एक्केक्कं पडिसमाणा हु ॥२४९॥

जीवतोऽनंतगुणाः प्रतिपरमाणौ विस्रसोपचयाः ।
जीवेन च समवेता एकैकं प्रति समानाः हि ॥२४९॥

टीका – कर्म वा नोकर्म के जितने परमाणु है, तिनि एक-एक परमाणूनि प्रति जीवराशि तै अनतानत गुणा विस्रसोपचयरूप परमाणू जीव के प्रदेशनि स्यो एक क्षेत्रावगाही है । विस्रसा कहिए अपने ही स्वभाव करि आत्मा के परिणाम विना ही **उपचीयते** कहिए कर्म–नोकर्म रूप विना परिणए अैसे कर्म–नोकर्म रूप स्कध, तीहि विषै स्निग्ध-रूक्ष गुण का विशेष करि मिलि, एक स्कधरूप होहि; ते विस्रसोपचय कहिए, अैसा निरुक्ति करि ही याका लक्षण आया, तातै जुदा लक्षण न कह्या । विस्रसोपचयरूप परमाणू कर्म–नोकर्मरूप होने को योग्य है । उन ही कर्म नोकर्म के स्कध विषै एकक्षेत्रावगाही होइ सबधरूप परिणमि करि एक स्कधरूप हो है । वर्तमान कर्म नोकर्मरूप परिणए है नाही, असै विस्रसोपचयरूप परमाणू जानने । ते कितने है ? सो कहिए हैं—

जो एक कर्म वा नोकर्म सबधी परमाणू के जीवराशि तै अनत गुणे विस्रसोपचयरूप परमाणू होइ, तौ किछू घाटि ड्योढ गुणहानि का प्रमाण करि गुणित समयप्रबद्ध प्रमाण सर्वसत्त्वरूप कर्म वा नोकर्म के परमाणूनि के केते विस्रसोपचय परमाणू होहि, अैसे त्रैराशिक करना । इहा प्रमाणराशि एक, फलराशि अनतगुणा जीवराशि, इच्छाराशि किचिदून द्व्यर्धगुणहानि गुणित समयप्रबद्ध । तहा इच्छा कौ फलराशि करि गुणि, प्रमाण का भाग दीए, लब्धराशिमात्र आत्मा के प्रदेशनि विषै तिष्ठते सर्व विस्रसोपचय परमाणूनि का प्रमाण जानना । बहुरि इस विस्रसोपचय परमाणूनि का परिमाण विषै किंचिदून द्व्यर्धगुणहानि गुणित समयप्रबद्ध मात्र कर्म–नोकर्मरूप परमाणूनि का परिमाण कौं मिलाए, विस्रसोपचय सहित कर्म नोकर्म का सत्त्व हो है ।

आगै कर्म–नोकर्मनि का उत्कृष्ट सचय का स्वरूप वा स्थान वा लक्षण प्ररूपै है—

उक्कस्सट्ठिदिचरिमे, सगसगउक्कस्ससंचओ होदि ।
पणदेहाणं वरजोगादिससामग्गिसहियाणं ॥२५०॥

उत्कृष्टस्थितिचरमे, स्वकस्वकोत्कृष्टसचयो भवति ।
पंचदेहाना वरयोगादिस्वसामग्रीसहितानाम् ॥२५०॥

टीका – उत्कृष्ट योग आदि अपने-अपने उत्कृष्ट बध होने की सामग्री करि सहित जे जीव, तिनिकै औदारिकादिक पच शरीरनि का उत्कृष्ट सचय जो उत्कृष्टपनै परमाणूनि का सबध, सो अपनी-अपनी उत्कृष्ट स्थिति का अत समय विषै हो है । तहा स्थिति के पहले समय तै लगाइ एक-एक समय विषै एक-एक समयप्रबद्ध बधै । बहुरि आगे कहिए है, तिसप्रकार एक-एक समयप्रबद्ध का एक-एक निषेक की निर्जरा होइ, अवशेष सचयरूप होते सतै अत समय विषै किछू घाटि, ड्योढगुणहानि करि समयप्रबद्ध कौ गुणै, जो परिमाण होइ, तितना उत्कृष्ट पनै सत्त्व हो है ।

आगै श्री माधवचंद्र त्रैविद्य देव उत्कृष्ट सचय होने की सामग्री कहैं है—

आवासया हु भवअद्धाउस्सं जोगसंकिलेसो य ।
ओकट्टुक्कट्टणया, छच्चेदे गुणिदकम्मंसे ॥२५१॥

आवश्यकानि हि भवाद्धा आयुष्यं योगसंक्लेशौ च ।
अपकर्षणोत्कर्षणके, षट् चैते गुणितकर्माशे ॥२५१॥

टीका – गुणितकर्मांश कहिए उत्कृष्ट सचय जाकै होइ, असा जो जीव, तीहि विषै उत्कृष्ट सचय कौ कारण ए छह अवश्य होइ । तातै उत्कृष्ट सचय करने वाले जीव कै ए छह आवश्यक कहिए । १ भवाद्धा, २ आयुर्बल, ३ योग, ४ सक्लेश, ५ अपकर्षण, ६ उत्कर्षण ए छह जानने । इनिका स्वरूप विस्तार लीए आगे कहिएगा ।

अब पच शरीरनि का बध, उदय, सत्त्वादिक विषै परमाणूनि का प्रमाण का विशेष जानने कौ स्थिति आदि कहिए है । तहा औदारिकादिक पच शरीरनि की उत्कृष्ट स्थिति का परिमाण कहै है—

पल्लतिय उवहीणं, तेत्तीसंतोमुहुत्त उवहीण ।
छावट्ठी कम्मट्ठिदि, बंधुक्कस्सट्ठिदी ताणं ॥२५२॥

पल्यत्रयमुदधीनां, त्रयस्त्रिंशदंतर्मुहूर्त उदधीनाम् ।
षट्षष्टिः कर्मस्थिति, बंधोत्कृष्टस्थितिस्तेषाम् ।।२५२।।

टीका – तिनि औदारिक आदि पच शरीरनि की बधरूप उत्कृष्ट स्थिति विषै औदारिक शरीर की उत्कृष्ट स्थिति तीन पल्य है । वैक्रियिक शरीर की तेतीस सागर है । आहारक शरीर की अतर्मुहूर्त है । तैजस शरीर की छ्यासठि सागर है । कार्माण की स्थितिबध विषै जो उत्कृष्ट कर्म की स्थिति सो जाननी । सो सामान्य-पनै सत्तर कोडाकोडी सागर है । विशेषपनै ज्ञानावरण, दर्शनावरण, वेदनीय, अत-राय की तीस कोडाकोडी, मोहनीय की सत्तर कोडाकोडी; नाम-गोत्र की बीस कोडाकोडी; आयु की तेतीस सागर प्रमाण जाननी । असै पच शरीरनि की उत्कृष्ट स्थिति कही ।

अब इहा यथार्थ ज्ञान के निमित्त अकसदृष्टि करि दृष्टात कहिए है –

जैसै समयप्रबद्ध का परिमाण तरेसठि सै (६३००) परमाणू स्थिति अड-तालीस समय होइ, तैसै इहा पंच शरीरनि की समयप्रबद्ध के परमाणूनि का परिमाण अर स्थिति के जेते समय होहि, तिनि का परमाणू का परिमाण पूर्वोक्त जानना ।

आगै इनि पचशरीरनि की उत्कृष्ट स्थितिनि विषै गुणहानि आयाम का परिमाण कहै है –

अंतोमुहुत्तमेत्तं, गुणहाणी होदि आदिमतिगाणं ।
पल्लासंखेज्जदिमं, गुणहाणी तेजकम्माणं ।।२५३।।

अंतर्मुहूर्तमात्रा, गुणहानिर्भवति आदिमत्रिकानां ।
पल्यासख्यात भागा गुणहानिस्तेजः कर्मणोः ।।२५३।।

टीका – पूर्व-पूर्व गुणहानि तै उत्तर-उत्तर गुणहानि विषै गुणहानि का वा निषेकनि का द्रव्य दूणा-दूणा घटता होइ है । तातै गुणहानि नाम जानना । सो जैसै अडतालीस समय की स्थिति विषै आठ-आठ समय प्रमाण एक-एक गुणहानि का आयाम हो है । तैसै आदि के तीन शरीर औदारिक, वैक्रियिक, आहारक तिनकी तौ उत्कृष्ट स्थिति सबधी गुणहानि यथायोग्य अतर्मुहूर्त प्रमाण है । अपने-अपने योग्य अतर्मुहूर्त के जेते

समय होइ, तितना गुणहानि का आयाम जानना । आयाम नाम लबाई का है । सो इहा समय-समय सबधी निषेक क्रम तें होइ । तातें आयाम असी सज्ञा कही । बहुरि तैजसकार्माण की उत्कृष्ट स्थिति सबधी गुणहानि अपने-अपने योग्य पल्य के असख्यातवे भाग प्रमाण है । तहा पल्य की जो वर्गशलाका, ताके जेते अर्धच्छेद होइ, तितने पल्य के अर्धच्छेदनि मे घटाए, जो अवशेष रहै, ताकौ असख्यात करि गुणें, जो परिणाम होइ, तितनी तैजस की सर्व नानागुणहानि है । इस परिमाण का भाग तैजस शरीर की उत्कृष्ट स्थिति सख्यात पल्य प्रमाण है । ताकौं दीए जो परिमाण आवै, तीहि प्रमाण पल्य के असख्यात वें भागमात्र तैजस शरीर की गुणहानि का आयाम है । बहुरि पल्य की वर्गशलाका के जेते अर्धच्छेद होइ, तिनिकौ पल्य के अर्धच्छेदनि मे घटाए जो अवशेष रहै, तितनी कार्माण की सर्वनानागुणहानि है । इस परिमाण का भाग कार्माण की उत्कृष्ट स्थिति सख्यातपल्यप्रमाण है । ताकौं दीए जो परिमाण आवै, तीहि प्रमाण पल्य के असख्यातवे भागमात्र कार्मण शरीर की गुणहानि का आयाम है । असें गुणहानि आयाम कह्या ।

बहुरि जैसे आठ समय की एक गुणहानि होइ, तौ अडतालीस समय की केती गुणहानि होइ ? असें त्रैराशिक कीए सर्वस्थिति विषै नानागुणहानि का प्रमाण छह आवै । तैसें जो औदारिक शरीर की एक अतर्मुहूर्तमात्र एकगुणहानि शलाका है । तौ तीन पल्य की नानागुणहानि कितनी है ? असें त्रैराशिक करिए । तहा प्रमाणराशि अतर्मुहूर्त के समय, फलराशि एक, इच्छाराशि तीन पल्य के समय तहा फलराशि करि इच्छा राशि कौ गुणि, प्रमाण राशि का भाग दीए, लब्ध प्रमाण तीन पल्य कौं अतर्मुहूर्त का भाग दीए, जो परिमाण आवै, तितना आया, सो उत्कृष्ट औदारिक शरीर की स्थिति विषै नानागुणहानि का प्रमाण जानना ।

असें ही वैक्रियिक शरीर विषै प्रमाणराशि अतर्मुहूर्त, फलराशि एक, इच्छाराशि तेतीस सागर कीयें तेतीस सागर कौ अतर्मुहूर्त का भाग दीये, जो प्रमाण आवै, तितना नानागुणहानि का प्रमाण जानना ।

बहुरि आहारक शरीर विषै प्रमाणराशि छोटा अतर्मुहूर्त, फलराशि एक, इच्छाराशि वडा अतर्मुहूर्त कीए, अतर्मुहूर्त कौ स्वयोग्य छोटा अतर्मुहूर्त का भाग दीए जो परिमाण आवै, तितना नानागुणहानि शलाका का प्रमाण जानना ।

बहुरि तैजस शरीर विषै प्रमाणराशि पूर्वोक्त गुणहानि आयाम, फलराशि एक, इच्छाराशि छ्यासठ सागर कीए पल्य की वर्गशलाका का अर्धच्छेद करि हीन पल्य का अर्धच्छेदनि तै असख्यात गुणा नानागुणहानि का प्रमाण हो है ।

बहुरि कार्माण शरीर विषै प्रमाणराशि पूर्वोक्त गुणहानि आयाम, फलराशि एक, इच्छाराशि मोह की अपेक्षा सत्तरि कोडाकोडि सागर कीए पल्य की वर्ग शलाका का अर्धच्छेद करि हीन पल्य का अर्धच्छेदमात्र नानागुणहानि का प्रमाण जानना ।

अब औदारिक आदि शरीरनि का गुणहानि आयाम साधिए है– जैसै जो छह नानागुणहानि का अडतालीस समय प्रमाणस्थिति आयाम होइ, तौ एकगुणहानि का कितना आयाम होइ ? असै त्रैराशिक करिये । इहा प्रमाणराशि छह, फलराशि अडतालीस, इच्छाराशि एक भया । तहा लब्ध राशिमात्र एकगुणहानि आयाम का प्रमाण आठ आया, तैसै अपना-अपना नानागुणहानि प्रमाण का अपना-अपना स्थिति प्रमाण आयाम होइ, तौ एकगुणहानि का केता आयाम होइ ? असै त्रैराशिक करिए । तहा लब्धराशि मात्र गुणहानि का आयाम हो है ।

तहा औदारिक विषै प्रमाणराशि अतर्मूहूर्त करि भाजित तीन पल्य, फलराशि तीन पल्य इच्छाराशि एक कीए लब्धराशि अतर्मुहूर्त हो है ।

बहुरि वैक्रियिक विषै प्रमाणराशि अतर्मुहूर्त करि भाजित तेतीस सागर, फलराशि तेतीस सागर इच्छाराशि एक कीए लब्धराशि अतर्मुहूर्त हो है ।

बहुरि आहारक विषै प्रमाणराशि सख्यात, फलराशि अतर्मुहूर्त, इच्छाराशि एक कीए लब्धराशि छोटा अतर्मुहूर्त हो है ।

बहुरि तैजस विषै प्रमाणराशि पल्य की वर्ग शलाका का अर्धच्छेदनि करि हीन पल्य के अर्धच्छेदनि तै असख्यातगुणा, फल छ्यासठि सागर, इच्छा एक कीए लब्ध राशि सख्यात पल्य कौ पल्य की वर्गशालाका का अर्धच्छेदनि करि हीन पल्य के अर्धच्छेदनि तै असख्यात गुणे प्रमाण का भाग दीए, जो प्रमाण आवै, तितना जानना ।

बहुरि कार्माण विषै प्रमाणराशि पल्य की वर्गशलाका का अर्धच्छेदनि करि हीन पल्य के अर्धच्छेद मात्र, फलराशि सत्तरि कोडाकोडी सागर इच्छाराशि एक

कीए लब्धराशि सख्यात पल्य कौ पल्य की वर्गशलाका के अर्धच्छेदनि करि हीन पल्य के अर्धच्छेदराशि का भाग दीए, जितना आवे तितना जानना । ऐसे लब्धराशि मात्र एकगुणहानि का आयाम जानना । इतने-इतने समयनि के समूह का नाम एकगुण-हानि है । सर्व स्थिति विषै जेती गुणहानि पाइए, तिस प्रमाण का नाम नानागुण-हानि है, असा इहा भावार्थ जानना ।

बहुरि नानागुणहानि का जेता प्रमाण तितने दूवे माडि, परस्पर गुणे, जितना प्रमाण होइ, सो अन्योन्याभ्यस्तराशि जानना । जैसे नानागुणहानि का प्रमाण छह सो छह का विरलन करि एक-एक जायगा दोय के अक माडि, परस्पर गुणे चौसठि होइ, सोई अन्योन्याभ्यस्तराशि का प्रमाण जानना । तैसे ही औदारिक आदि शरीरनि की स्थिति विषै जो-जो नानागुणहानि का प्रमाण कह्या, ताका विरलन करि एक-एक बखेरि अर एक-एक जायगा दोय-दोय देइ, परस्पर गुणे, अपना-अपना अन्योन्याभ्यस्तराशि का प्रमाण हो है । तहा लोक के जेते अर्धच्छेद हैं, तितने दूवेनि कौं परस्पर गुणे, लोक होइ । तौ इहा नानागुणहानि प्रमाण दूवे मांडि, परस्पर गुणे, केते लोक होइ ? असे त्रैराशिक करना । तहा लब्धराशि ल्यावने के अर्थि सूत्र कहिए है—

दिण्णच्छेदेणवहिद, इट्ठच्छेदेहिं पयदविरलणं भजिदे ।
लद्धमिदइट्ठरासी, णण्णोण्णहदीए होदि पयदधणं ।।२१४।।

असा कायमार्गणा विषै सूत्र कह्या था, ताकरि इहा देयराशि दोय, ताका अर्धच्छेद एक ताका भाग इष्टच्छेद लोक के अर्धच्छेद कौ दीए, इतने ही रहे, इनि लोक के अर्धच्छेदनि के प्रमाण का भाग औदारिक शरीर की स्थिति सबधी नानागुणहानि के प्रमाण कौं दीए, जो प्रमाण आवै, तितने इष्टराशिरूप लोक माडि, परस्पर गुणे, जो लब्धि प्रमाण होइ, तितना औदारिक शरीर की स्थिति विषै अन्योन्याभ्यस्तराशि का प्रमाण असख्यातलोकमात्र हो है । बहुरि तैसे ही वैक्रियिक शरीर विषै नानागुणहानि का प्रमाण कौ लोक का अर्धच्छेद राशि का भाग दीएं, जो प्रमाण आवै, तितने लोक माडि परस्पर गुणे, वैक्रियिक शरीर की स्थिति विषै अन्योन्याभ्यस्त विषै राशि हो है । सो यहु औदारिक शरीर की स्थिति सबधी अन्योन्याभ्यस्तराशि तै असख्यात लोक गुणा जानना । काहे तै ? जातै अतर्मुहूर्त करि भाजित तीन पल्य तै अंतर्मुहूर्त करि भाजित तेतीस सागर कौं एक सौ दश कोडाकोडी का गुणाकार सभवै

है । सो यहा एक घाटि एक सौ दश कोडाकोडी गुणा जो औदारिक शरीर की नानागुणहानि का प्रमाण, तितना औदारिक शरीर की नानागुणहानि का प्रमाण तै वैक्रियिक शरीर की नानागुणहानि का प्रमाण अधिक भया सो –

विरलनरासीदो पुण, जेत्तियमेत्ताणि अहियरूवाणि ।
तेसिं अण्णोण्णहदी, गुणयारो लद्धरासिस्स ।।

इस सूत्र करि इस अधिक प्रमाणमात्र दूवे माडि, परस्पर गुणै, जो असख्यातलोकमात्र परिमाण आया, सोई औदारिक का अन्योन्याभ्यस्तराशि तै वैक्रियिक का अन्योन्याभ्यस्तराशि विषै गुणकार जानना । अथवा जो अतर्मुहूर्त करि भाजित तीन पल्य प्रमाण औदारिक शरीर सबंधी नानागुणहानि का अन्योन्याभ्यस्तराशि असख्यात लोकमात्र होइ, तौ एक सौ दश कोडाकोडि गुणा अतर्मुहूर्त करि भाजित तीन पल्य प्रमाण वैक्रियिक शरीर की नानागुणहानि का अन्योन्याभ्यस्तराशि कितनी होई ? असा त्रैराशिक कीए **'दिण्णच्छेदेणवहिद'** इत्यादि सूत्र करि एक सौ दश कोडाकोडि बार औदारिक शरीर सबधी अन्योन्याभ्यस्तराशि माडि, परस्पर गुणै, वैक्रियिक शरीर सबधी अन्योन्याभ्यस्तराशि हो है । तातै भी औदारिक सबधी अन्योन्याभ्यस्तराशि तै वैक्रियिक सबधी अन्योन्याभ्यस्तराशि विषै असख्यातलोक का गुणकार सिद्ध भया ।

बहुरि आहारक शरीर की नानागुणहानि सख्यात है, सो सख्यात का विरलन करि एक-एक प्रति दोय देइ, परस्पर गुणै, यथायोग्य सख्यात होइ, सो आहारक शरीर का अन्योन्याभ्यस्तराशि जानना ।

बहुरि तैजस शरीर की स्थिति सबधी नानागुणहानि शलाका कार्माण शरीर की स्थिति सबधी नानागुणहानि शलाका तै असख्यात गुणी है, सो पल्य की वर्गशलाका का अर्धच्छेद पल्य अर्धच्छेदनि मे घटाए, जो प्रमाण होइ, तातै असख्यातगुणी जाननी । सो इहा सुगमता के अर्थि, याकौ पल्य का अर्धच्छेदराशि का भाग देना तहा पल्य की वर्गशलाका का अर्धच्छेदराशि कौं असख्यात करि गुणिए, अर पल्य का अर्धच्छेदराशि का भाग दीजिए, इतना घटावने योग्य जो ऋणराशि, ताकौं जुदा राखिए, अवशेष ऋण रहित राशि पल्य का अर्धच्छेदराशि कौ असख्यातगुणा दीजिए पल्य का अर्धच्छेदराशि का भाग दीजिए, इतना रह्या, सो इहा भाज्यराशि विषै अर भागहारराशि विषै पल्य का अर्धच्छेदराशि कौ समान जानि, अपवर्तन

करना । अवशेष गुणकाररूप असख्यात रहि गया, सो इस असख्यात का जेता प्रमाण होइ तितना ही पल्य माडि, परस्पर गुणन करना, जाते असख्यातगुणा पल्य का अर्धच्छेद प्रमाण दूवा माडि, परस्पर गुणे, जेता प्रमाण होइ, तितना ही पल्य का अर्धच्छेद राशि का भाग दीए, अवशेष गुणकार मात्र असख्यात रह्या, तितना पल्य माडि, परस्पर गुणे प्रमाण हो है । जैसे पल्य का प्रमाण सोलह, ताके अर्धच्छेद च्यारि, असख्यात का प्रमाण तीन, सो तीनि करि च्यारि कौ गुणे, वारह होइ । सो बारह जायगा दूवा माडि, परस्पर गुणे, च्यारि हजार छिनवै होइ । सोई बारह कौं च्यारि का भाग दीए, गुणकार मात्र तीन रह्या, सो तीन जायगा सोलह माडि, परस्पर-गुणे, च्यारि हजार छिनवै होइ । ताते सुगमता के अर्थि पूर्वोक्त राशि कौं पल्य का अर्धच्छेद राशि का भाग देइ, लब्धिराशि असख्यात प्रमाण पल्य माडि, परस्पर गुणन कीया । सो इहा यह गुणकाररूप असख्यात है । सो पल्य का अर्धच्छेदनि के असख्यातवे भाग मात्र जानना । पल्य का अर्धच्छेदराशि समान जानना । जो पल्य का अर्धच्छेद समान यहु असख्यात होइ, तौ इतने पल्य माडि, परस्पर गुणे, तैजस शरीर की स्थिति सबधी अन्योन्याभ्यस्तराशि सूच्यगुल प्रमाण होइ, सो है नाही, ताते शास्त्र विषै क्षेत्र प्रमाण करि सूच्यगुल के असख्यातवे भाग मात्र काल प्रमाण करि असख्यात कल्पकाल मात्र तैजस शरीर की स्थिति सबधी अन्योन्याभ्यस्तराशि का प्रमाण कह्या है । ताते पल्य का अर्धच्छेद का असख्यातवा भाग मात्र असख्यात का विरलन करि एक-एक प्रति पल्य कौ देइ, परस्पर गुणे, सूच्यगुल का असख्यातवा भाग मात्र प्रमाण हो है । सो द्विरूप वर्गधारा विषै पल्यराशिरूप स्थान तै ऊपरि इहा विरलन-राशिरूप असख्यात के जेते अर्धच्छेद होहि, तितने वर्गस्थान गए यहु राशि हो है । बहुरि –

विरलनरासीदो पुण, जेत्तियमेत्ताणि हीणरूवाणि ।
तेसिं अण्णोण्णहदी, हारो उप्पण्णरासिस्स ।।

इस सूत्र के अभिप्राय तै जो ऋणरूप राशि जुदा स्थाप्या था, ताका अपवर्तन कीए, एक का असख्यातवा भाग भया । याकौं पल्य करि गुणे, पल्य का असख्यातवा भाग भया, जाते असख्यात गुणा पल्य की वर्गशलाका का अर्धच्छेद प्रमाण दूवा माडि, परस्पर गुणे, भी इतना ही प्रमाण है । ताते सुगमता के अर्थि इहा पल्य का अर्धच्छेद राशि का भाग देइ, एक का असख्यातवा भाग पाया, ताकरि पल्य का

गुणन कीया है। सो अैसैं करतैं जो पल्य का असख्यातवा भाग भया, ताका भाग पूर्वोक्त सूच्यगुल का असख्यातवा भाग कौ देना। सो भाग दीए भी आलाप करि सूच्यगुल का असख्यातवा भाग ही रह्या। सोई तैजस शरीर की स्थिति सम्बन्धी अन्योन्याभ्यस्तराशि जानना। बहुरि कार्माण शरीर की स्थिति सम्बन्धी नाना-गुणहानि शलाका पल्य की वर्गशलाका का अर्धच्छेद करि हीनपल्य का अर्धच्छेद प्रमाण है। इसका विरलन करि, एक-एक प्रति दोय देइ परस्पर गुणै, ताका अन्यो-न्याभ्यस्तराशि पल्य की वर्गशलाका का भाग पल्य कौ दीए, जो प्रमाण होइ, तितना जानना। जातैं इहा पल्य का अर्धच्छेद प्रमाण दूवा माडि, परस्पर गुणै, पल्य होइ, सो तौ भाज्य भया। अर **'विरलनरासीदो पुणजेत्तिय मेत्ताणि हीणरूवाणि'** इत्यादि सूत्र करि हीनराशिरूप पल्य की वर्गशलाका का अर्धच्छेद प्रमाण दूवा माडि, परस्पर गुणै पल्य की वर्गशलाका होइ, सो भागहार जानना। बहुरि जैसैं गुणहानि आयाम आठ, ताकौ दूणा कीए दोगुणहानि का प्रमाण सोलह हो है। तैसैं औदारिक आदि शरीरनि का जो-जो गुणहानि आयाम का प्रमाण है, ताकौ दूणा कीएं, अपनी-अपनी दोगुणहानि हो है। याही का दूसरा नाम निषेकहार जानना।

अैसैं द्रव्यस्थिति, गुणहानि, नानागुणहानि, अन्योन्याभ्यस्तराशि, दोगुण-हानि का कथन करि, अवस्थिति के समय सम्बन्धी परमाणूनि का प्रमाणरूप निषे-कनि का कथन करिए है।

तहा प्रथम अक सदृष्टि करि दृष्टात कहिए है। द्रव्य तरेसठि सै (६३००) स्थिति अडतालीस (४८), गुणहानि आयाम आठ (८), नानागुणहानि छह (६), दोगुणहानि सोलह (१६), अन्योन्याभ्यस्तराशि चौसठि (६४)।

तहा औदारिक आदि शरीरनि के समय प्रबद्ध प्रकृति, स्थिति, अनुभाग, प्रदेशरूप च्यारि प्रकार बध धरैं हैं।

तहा प्रकृतिबध, प्रदेशबध योग तैं हो है, स्थितिबध, अनुभागबध कषाय तैं हो है। तहा विवक्षित कोई एक समय विषै बध्या कार्माण का समय प्रबद्ध की उत्कृष्ट स्थिति सत्तरि कोडाकोडि सागर की बधी, तिस स्थिति कै पहले समय तैं लगाय सात हजार वर्ष पर्यंत तौ आबाधाकाल है। तहा कोई निर्जरा न होइ। तातैं इहाँ कोई निषेक रचना नाही। अवशेष स्थिति का प्रथम समय तैं लगाइ अत समय पर्यंत अपना-अपना काल प्रमाण स्थिति धरैं, जे परमाणूनि के पुज, ते निषेक कहिए। तिनकी रचना अंकसदृष्टि करि प्रथम दिखाइए है।

विवक्षित एक समय विषै बध्या कार्माण का समयप्रवद्ध, ताका परमाणूनि का प्रमाण रूप द्रव्य तरेसठि सै है। तहा –

रूऊणण्णोण्णब्भवहिददव्वं तु चरिम गुणदव्वं।
होदि तदो दुगुण कमा आदिमगुणहाणि दव्वोत्ति ।।

इस सूत्र अनुसारि एक घाटि अन्योन्याभ्यस्तराशि का भाग सर्वद्रव्य कौं दीए अत की गुणहानि का द्रव्य होइ। तातै दूणा-दूणा प्रथमगुणहानि पर्यंत द्रव्य जानना। सो इहा अन्योन्याभ्यस्तराशि चौसठि मे स्यो एक घटाइ, अवशेष ६३ का भाग सर्वद्रव्य ६३०० कौ दीए, सौ (१००) पाए, सोई नानागुणहानि छह, तिनि-विषै अत की छठी गुणहानि का द्रव्य जानना। तातै दूणा-दूणा प्रथम गुणहानि पर्यंत द्रव्य जानना। असै होतै एक घाटि नानागुणहानि शलाका प्रमाण दूवा माडि, परस्पर गुणै, जो अन्योन्याभ्यस्तराशि का आधा प्रमाण होइ, ताकरि अत की गुण-हानि के द्रव्य कौ गुणै, प्रथमगुणहानि का द्रव्य हो है। सो एक घाटि नानागुण-हानि पाच, तीह प्रमाण दूवा माडि, परस्पर गुणै बत्तीस होइ, सोई अन्योन्याभ्यस्त-राशि चौसठि का आधाप्रमाण, ताकरी अतगुणहानि का द्रव्य सौ कौ गुणै प्रथम-गुणहानि का द्रव्य बत्तीस सै हो है। सर्व गुणहानि का द्रव्य अत तै लगाइ आदि पर्यंत एक सै, दोय सै, च्यारि सै, आठ सै, सोलह सै, बत्तीस सै प्रमाण जानना। बहुरि तहा प्रथम गुणहानि का द्रव्य बत्तीस सै। तहा '**अद्धाणेण सव्वधणे, खंडिदे मज्झिमधणमागच्छदि**' इस सूत्र करि 'अध्वान' जो गुणहानि आयाम प्रमाण गच्छ, ताका स्वकीय गुणहानि सबधी द्रव्य कौ भाग दीए, मध्य समय सबधी मध्यधन आवै है। सो इहा बत्तीस सै कौ गच्छ आठ का भाग दीए (मध्यधन) च्यारि सै हो है। बहुरि "**रूऊण अद्धाण अद्धेणूणेणिसेयहारेण मज्झिमधणमवहरिदेपचय**" इस सूत्र के अनुसारि एक घाटि गच्छ का आधा प्रमाण करि हीन जो निषेकहार कहिए दो गुणहानि, ताकरि मध्यधन कौ भाजित कीए, चय का प्रमाण आवै है। स्थान-स्थान प्रति जितना-जितना बधै वा घटै ताका नाम चय जानना। सो इहा एक घाटि गच्छ सात, ताका आधा साढा तीन, सो निषेकहार सोलह मे घटाए, साढा बारह ताका भाग मध्यधन च्यारि सै कौ दीए, बत्तीस पाए। सोई प्रथम गुणहानि विषै चय का प्रमाण जानना। बहुरि इस चय कौ निषेकहार, जो दोगुणहानि, ताकरि गुणै प्रथम गुणहानि का प्रथम निषेक होइ, सो इहा बत्तीस कौ सोलह करि गुणै, प्रथम गुणहानि का प्रथम निषेक पाच सै बारह प्रमाणरूप हो है।

भावार्थ – जो तरेसठि सै परमाणू का समय प्रबद्ध बंध्या था, ताकी स्थिति विषै आबाधाकाल भए पीछै, पहले समय तिन परमाणूनि विषै पाच सै बारह परमाणू निर्जरे है। ऐसै अन्य समय संबधी निषेकनि विषै उक्त प्रमाण परमाणूनि की निर्जरा होने का क्रम जानना। बहुरि **'तत्तोविसेसहीणकमं'** तातै ऊपरि-ऊपरि तिस गुणहानि के अत निषेक पर्यंत एक-एक चय घटता अनुक्रम जानना। तहा प्रथम निषेक तै एक घाटि गच्छप्रमाण चय घटै, एक अधिक गुणहानि आयाम करि गुणित चय प्रमाण अत निषेक हो है। सो इहा द्वितीयादि निषेकनि के विषै बत्तीस-बत्तीस घटावना। तहा एक घाटि गच्छ सात, तीहि प्रमाण चय के भये दोय सै चौबीस, सो इतने प्रथम निषेकनि तै घटै, अत निषेक विषै दोय सै अठ्यासी प्रमाण हो है। सो एक अधिक गुणहानि नव, ताकरि चच बत्तीस कौ गुणै भी दोय सै अठ्यासी हो है। ऐसै प्रथम गुणहानि विषै निषेक रचना जाननी। ५१२, ४८०, ४४८, ४१६, ३८४, ३५२, ३२०, २८८।

बहुरि ऐसै ही द्वितीय गुणहानि का द्रव्य सोलह सै, ताकौ गुणहानि आयाम-रूप गच्छ का भाग दीए, मध्यधन दोय सै होइ, याको एक घाटि गुणहानि आयाम का आधा प्रमाण करि हीन निषेकहार साढा बारह, ताका भाग दीए, द्वितीय गुणहानि विषै चय का प्रमाण सोलह होइ। बहुरि याको दो गुणहानि सोलह करि गुणै, द्वितीय गुणहानि का प्रथम निषेक दोय सै छप्पन प्रमाण हो है। ऊपरि-ऊपरि द्वितीयादि निषेक, अपना एक-एक चय करि घटता जानना। तहा एक घाटि गच्छ प्रमाण चय घटै, एक अधिक गुणहानि आयाम करि गुणित, अपना चय प्रमाण अत का निषेक एक सौ चवालीस प्रमाण हो है। बहुरि तृतीय गुणहानि विषै द्रव्य आठ सै कौ गुणहानि का भाग दीए, मध्यमधन सौ (१००), याकौ एक घाटि गुणहानि का आधा करि हीन दोगुणहानि का भाग दीए, चय का प्रमाण आठ, याकौ दोगुणहानि करि गुणि प्रथम निषेक एक सौ अट्ठाईस, यातै ऊपरि अपना एक-एक चय घटता होइ, एक घाटि गच्छ प्रमाण चय घटै, एक अधिक गुणहानि आयाम करि, गुणित स्वकीय चयमात्र अतनिषेक बहत्तरि हो है।

ऐसै ही इस क्रम करि चतुर्थ आदि गुणहानि विषै प्राप्त होइ, अत गुणहानि विषै द्रव्य सौ (१००), ताकौ पूर्वोक्त प्रकार गुणहानि का भाग दीए मध्यधन साढा बारह, याकौ एक घाटि गुणहानि का आधा प्रमाण करि हीन दोगुणहानि का भाग

दीए, चय का प्रमाण एक, याकौ दोगुणहानि करि गुणे, प्रथम निषेक का प्रमाण सोलह, तातै ऊपरि अपना एक-एक चय घटता होइ । एक घाटि गच्छ प्रमाण चय घटै, एक अधिक गुणहानि करि गुणित स्वकीय चय मात्र स्थिति के अंतनिषेक का प्रमाण नव हो है । ऐसे द्वितीयादिक अंतगुणहानि पर्यंत विषै द्रव्यादिक हैं । ते गुणकाररूप हानि का अनुक्रम लीए है । तातै गुणहानि ऐसा नाम सार्थक जानना ।

इहां तर्क – जो प्रथम गुणहानि विषै तौ पूर्व गुणहानि के अभाव तै गुणहानिपना नाही ?

ताका समाधान – कि मुख्यपनै ताका गुणहानि नाम नाही है । तथापि ऊपरि की गुणहानि कौ गुणहानिपना कौ कारणभूत जो चय, ताका हीन होने का सद्भाव पाईए है । तातै उपचार करि प्रथम कौ भी गुणहानि कहिए । गुणकार रूप घटता, जहा परिमाण होइ, ताका नाम गुणहानि जानना । ऐसे एक-एक समय प्रबद्ध की सर्वगुणहानिनि विषै प्राप्त सर्वनिषेकनि की रचना जाननी । बहुरि ऐसे प्रथमादि गुणहानिनि के द्रव्य वा चय वा निषेक ऊपरि-ऊपरि गुणहानि विषै आधे-आधे जानने । इतना विशेष यहु जानना–जो अपना-अपना गुणहानि का अंत निषेक विषै अपना-अपना एक चय घटाए, ऊपरि-ऊपरि का गुणहानि का प्रथम निषेक होइ, जैसे प्रथम गुणहानि का अंत निषेक दोय सै अठ्यासी विषै अपना चय बत्तीस घटाए, द्वितीय गुणहानि का प्रथम निषेक दोय सौ छप्पन हो है । ऐसे ही अन्यत्र जानना ।

❀ अंक सदृष्टि करि निषेक की रचना ❀

	प्रथम गुणहानि	द्वितीय गुणहानि	तृतीय गुणहानि	चतुर्थ गुणहानि	पंचम गुणहानि	षष्ठम गुणहानि
	२८८	१४४	७२	३६	१८	९
	३२०	१६०	८०	४०	२०	१०
	३५२	१७६	८८	४४	२२	११
	३८४	१९२	९६	४८	२४	१२
	४१६	२०८	१०४	५२	२६	१३
	४४८	२२४	११२	५६	२८	१४
	४८०	२४०	१२०	६०	३०	१५
	५१२	२५६	१२८	६४	३२	१६
जोड	३२००	१६००	८००	४००	२००	१००

अैसैं उत्कृष्ट स्थिति अपेक्षा कार्माण का अक सदृष्टि करि वर्णन किया। अब यथार्थ वर्णन करिए है –

कार्माण का समयप्रबद्ध विषै जो पूर्वोक्त परमाणूनि का प्रमाण, सो द्रव्य जानना। ताकौ पूर्वोक्त प्रमाण अन्योन्याभ्यस्तराशि विषै एक घटाइ, अवशेष का भाग दीए, अंत गुणहानि का द्रव्य हो है। यातै प्रथम गुणहानि पर्यंत दूना-दूना द्रव्य जानना। तहा अन्योन्याभ्यस्तराशि का आधा प्रमाण करि, अतगुणहानि के द्रव्य कौं गुणै, प्रथम गुणहानि का द्रव्य हो है। याकौ पूर्वोक्त गुणहानि आयामप्रमाण का भाग दीए, मध्यमधन होइ है। याकौ एक घाटि गुणहानि आयाम का आधा प्रमाण करि हीन दूना गुणहानि के प्रमाण का भाग दीए, प्रथम गुणहानि सबधी चय हो है। याकौ दो गुणहानि करि गुणै, प्रथम गुणहानि का प्रथम निषेक हो है। बहुरि तातै अपना-अपना अत निषेक पर्यंत एक-एक चय घटता होइ। एक घाटि गुणहानि आयाम मात्र चय घटै, एक अधिक गुणहानि करि गुणित अपना चय प्रमाण अत निषेक हो है। याही प्रकार द्वितीयादि गुणहानि विषै अपना-अपना द्रव्य की निषेक रचना जाननी। तहा अत गुणहानि विषै द्रव्य का गुणहानि आयाम का भाग दीए, मध्य धन होइ। याकौ एक घाटि गुणहानि का आधा करि हीन दो गुणहानि का भाग दीए, चय होइ। याकौ दो गुणहानि करि गुणै, प्रथम निषेक होइ। तातै ऊपरि अपना एक-एक चय घटता होइ। एक घाटि गुणहानि आयाम मात्र चय घटै, एक अधिक गुणहानि करि अपना चय कौ गुणै, जो प्रमाण होइ, तिह प्रमित अत निषेक हो है। अैसै कार्माण शरीर की सर्वोत्कृष्ट स्थिति विषै प्राप्त एक समयप्रवद्ध सबधी समस्त गुणहानि की रचना जाननी। अैसै प्रथमादि गुणहानि तै द्वितीयादि गुणहानि के द्रव्य वा चय वा निषेक क्रम तै आधे-आधे जानने। आबाधा रहित स्थिति विषै गुणहानि आयाम का जेता प्रमाण तितना समय पर्यंत तो प्रथम गुणहानि जाननी। तहा विवक्षित समयप्रबद्ध के प्रथम समय विषै जेते परमाणू निर्जरैं, तिनिके समूह का नाम प्रथम निषेक जानना। दूसरे समय जेते परमाणू निर्जरैं, तिनके समूह का नाम द्वितीय निषेक जानना। अैसे प्रथम गुणहानि का अत पर्यंत जानना। पीछै ताके अनतर समय तै लगाइ गुणहानि आयाम मात्र समय पर्यंत द्वितीय गुणहानि जाननी। तहा भी प्रथमादि समयनि विषै जेते परमाणू निर्जरैं, तिनिके समूह का नाम प्रथमादि निषेक जानने। अैसै क्रम तै स्थिति के अत समय विषै जेते परमाणू निर्जरैं, तिनिके समूह का नाम अत गुणहानि का अत निषेक जानना।

बहुरि जैसे कार्माणशरीर का वर्णन कीया, तैसे ही औदारिक आदि तैजस पर्यंत नोकर्मशरीर के समयप्रबद्धनि की पूर्वोक्त अपना-अपना स्थिति, गुणहानि, नाना गुणहानि, दो गुणहानि, अन्योन्याभ्यस्तराशि का प्रमाण आदि करि, इहा आबाधाकाल है नाही, ताते अपनी-अपनी स्थिति का प्रथम समय ही ते लगाय निषेक रचना करनी। जाते औदारिक आदि शरीरनि का तैसे ही आगे वर्णन कीजिये हैं।

आगे औदारिक आदि के समयप्रबद्धनि का बंध, उदय, सत्त्व, अवस्था विषै द्रव्य का प्रमाण निरूपे है –

एक्कं समयपबद्धं, बंधदि एक्कं उदेदि चरिमम्मि।
गुणहाणीण दिड्ढं, समयपबद्धं हवे सत्तं ॥२५४॥

एकं समयप्रबद्धं, बध्नाति एकमुदेति चरमे।
गुणहानीनां द्व्यर्धं, समयप्रबद्धं भवेत् सत्त्वम् ॥२५४॥

टीका – औदारिक आदि शरीरनि विषै तैजस अर कार्माण इनि दोऊनि का जीव के अनादि ते निरतर सबध है। ताते इनिका सदाकाल उदय अर सत्व सभवै हैं। ताते जीव मिथ्यादर्शन आदि परिणाम के निमित्त ते समय-समय प्रति तैजस सबधी अर कार्माण सबंधी एक-एक समयप्रबद्ध कौ बाधै है। पुद्गलवर्गणानि कौ तैजस शरीर रूप अर ज्ञानावरणादिरूप आठ प्रकार कर्मरूप परिणमावै है। बहुरि इनि दोऊ शरीरनि का समय-समय प्रति एक-एक समयप्रबद्ध उदयरूप हो है। अपना फल देनेरूप परिणतिरूप परिमाण करि फल देइ, तैजस शरीरपना कौं वा कार्माण शरीरपना कौं छोडि गलै है, निर्जरै है। बहुरि विवक्षित समयप्रबद्ध की स्थिति का अत निषेक सबधी समय विषै किंचिदून द्व्यर्धगुणहानि करि गुणित समय प्रबद्ध प्रमाण सत्त्व हो है। इतने परमाणू सत्तारूप एकठे हो हैं। सर्वदा सबध ते परमार्थ करि इनि दोऊनि का सत्वद्रव्य, समय-समय प्रति सदा ही इतना संभवै है।

बहुरि औदारिक, वैक्रियिक शरीरनि के समय प्रबद्धनि विषै विशेष है, सो कहिए है। तिनि औदारिक वा वैक्रियिक शरीरनि के ग्रहण का प्रथम समय ते लगाइ अपने आयु का अत समय पर्यंत शरीर नामा नामकर्म के उदय सयुक्त जीव, सो समय-समय प्रति एक-एक तिस शरीर के समय प्रबद्ध कौं बाधै है। पुद्गलवर्गणानि

कौ तिस शरीररूप परिणमावै है । उदय कितना है ? सो कहै है – शरीर ग्रहण का प्रथम समय विषै बध्या जो समयप्रबद्ध, ताका पहला निषेक उदय हो है ।

इहां प्रश्न – जो गाथा विषै समय-समय प्रति एक-एक समयप्रबद्ध का उदय कह्या है । इहा एक निषेक का उदय कैसे कहो हो ?

ताकां समाधान – कि निषेक है सो समयप्रबद्ध का एकदेश है । ताकौ उपचार करि समयप्रबद्ध कहिए है । बहुरि दूसरा समय विषै पहिले समय बध्या था जो समयप्रबद्ध, ताका तो दूसरा निषेक अर दूसरे समय बध्या जो समयप्रबद्ध ताका पहिला निषेक, असै दोय निषेक उदय हो है । बहुरि असै ही तीसरा आदि समय विषै एक-एक बधता निषेक उदय हो है । असै क्रम करि अत समय विषै उदय अर सत्त्वरूप सचय सो युगपत् द्वयर्धगुण हानि करि गुणित समयप्रबद्ध प्रमाण हो है । बहुरि आहारक शरीर का तिस शरीर ग्रहण का समय प्रथम तै लगाय अपना अतर्मुहूर्त मात्र स्थिति का अत समय विषै किंचिदून द्वयर्धगुणहानि करि गुणित समय प्रबद्धप्रमाण द्रव्य का उदय अर सत्त्वरूप सचय सो युगपत् हो है इतना विशेष जानना । इहा समय-समय प्रति बधै सो समयप्रबद्ध कहिए । तातै समय-समय प्रति समयप्रबद्ध का बधना तौ सभवै अर समयप्रबद्ध का उदय अर किंचिदून द्वयर्धगुणहानिगुणित समयप्रबद्धमात्र सत्त्व कैसै हो है, सो वर्णन इहा ही आगै करेंगे ।

आगै औदारिक, वैक्रियिक शरीरनि विषै विशेष कहै हैं—

णवरि य दुसरीराणं, गलिदवसेसाउमेत्तठिदिबंधो ।
गुणहाणीण दिवड्ढं, संचयमुदयं च चरिमम्हि ॥२५५॥

नवरि च द्विशरीरयोर्गलितावशेषायुर्मात्रस्थितिबधः ।
गुणहानीनां द्वयर्धं, संचयमुदयं च चरमे ॥२५५॥

टीका – औदारिक, वैक्रियिक शरीरनि का शरीर ग्रहण का प्रथम समय तै लगाइ अपनी स्थिति का अत समय पर्यंत बधै है, जे समयप्रबद्ध तिनि का स्थिति-बध गलितावशेष आयुमात्र जानना । जितना अपना आयु प्रमाण होइ, तीहि विषै जो व्यतीत भया, सो गलित कहिए । अवशेष रह्या सो गलितावशेष आयु कहिए है, तीहि प्रमाण जानना । सोई कहिए है–शरीर ग्रहण का प्रथम समय विषै जो समय

प्रबद्ध बध्या, ताका स्थितिबध सपूर्ण अपना आयुमात्र हो है । बहुरि दूसरे समय जो समयप्रबद्ध बध्या, ताका स्थितिबध एक समय घाटि अपना आयु प्रमाण हो है। बहुरि तीसरे समय बंध्या जो समयप्रबद्ध, ताका स्थितिबध दोय समय घाटि अपना आयु प्रमाण हो है । ऐसे ही चौथा आदि उत्तरोत्तर समयनि विषै बधे जे समयप्रबद्ध तिनिका स्थितिबध एक-एक समय घटता होता अत समय विषै बध्या हुवा समयप्रबद्ध का स्थितिबध, एक समयमात्र हो है । जातै प्रथम समय तै लगाइ अत समय पर्यंत बधे जे समयप्रबद्ध, तिनकी अपने आयु का अत कौ उलघि स्थिति न सभवै है। ऐसै जिस-जिस समयप्रबद्ध की जितनी-जितनी स्थिति होइ, तिस-तिस समयप्रबद्ध को तितनी-तितनी स्थितिमात्र निषेक रचना जाननी । अत विषै एक समय की स्थिति समयप्रबद्ध की कही । तहा एक निषेक सपूर्ण समयप्रबद्धमात्र जानना । बहुरि अंत समय विषै गलितावशेष समयप्रबद्ध किंचिदूनद्वयर्द्धगुणहानिमात्र सत्वरूप एकठे हो हैं । जे समयप्रबद्ध बधे, तिनि के निषेक पूर्वै गले, निर्जरारूप भए, तिनितै अवशेष निषेकरूप जे समयप्रबद्ध रहे, तिनिकौ गलितावशेष कहिए । ते सर्व एकठे होइ किछू घाटि ड्योढ गुणहानिमात्र समयप्रबद्ध सत्तारूप एकठे अत समय विषै होहि हैं। बहुरि तीहि अत समय विषै ही तिनि सबनि का उदय हो है । आयु के अत भए पीछै ते रहै नाही । तातै तीहि समय सर्व निर्जरे हैं, ऐसै देव–नारकीनि कै तौ वैक्रियिक शरीर का अर मनुष्य–तिर्यंचनि कै औदारिक शरीर का अत समय विषै किंचिदून द्वयर्धगुणहानिमात्र समयप्रबद्धनि का सत्त्व और उदय युगपत् जानना ।

आगै किस स्थान विषै सामग्रीरूप कैसी आवश्यक सयुक्त जीव विषै उत्कृष्ट सचय हो है, सो कहै हैं—

ओरालियवरसंचं, देवुत्तरकुरुवजादजीवस्स ।
तिरियमणुस्सस्स हवे चरिमदुचरिमे तिपल्लठिदिगस्स ।।२५६।।

औरालिकवरसचयं, देवोत्तरकुरूपजातजीवस्य ।
तिर्यग्मनुष्यस्य भवेत्, चरमद्विचरमे त्रिपल्यस्थितिकस्य ।।२५६।।

टीका – औदारिक आदि शरीरनि की जहा जीव कै उत्कृष्टपनै बहुत परमाणू एकठे होइ, तहा उत्कृष्ट सचय कहिए । तहा जो जीव तीन पल्य आयु धरै, देवकुरु वा उत्तरकुरु भोगभूमि का तिर्यंच वा मनुष्य होइ उपज्या, तहा उपजने

के पहिले समय तिस जीव कौ तहा योग्य जो उत्कृष्ट योग, ताकरि आहार ग्रहण कीया, बहुरि ताकौ योग्य जो उत्कृष्ट योग की वृद्धि, ताकरि वर्धमान भया, बहुरि सो जीव उत्कृष्ट योग स्थाननि कौ बहुत बार ग्रहण करै है; अर जघन्य योगस्थाननि कौं बहुत बार ग्रहण न करै है, तिस जीव कौं योग्य उत्कृष्ट[1] योगस्थान, तिनिकौं बहुत बार प्राप्त होइ है, अर तिस जीव कौ योग्य जघन्य योगस्थान, तिनिकौ बहुत बार प्राप्त न हो है। बहुरि अधस्तन स्थितिनि के निषेक का जघन्य पद करै है। याका अर्थ यहु—जो ऊपरि के निषेक सबधी जे परमाणू, तिन थोरे परमाणूनि कौ अपकर्षण करि, स्थिति घटाइ, नीचले निषेकनि विषै निक्षेपण करै है, मिलावै है। बहुरि उपरितन स्थिति के निषेकनि का उत्कृष्टपद करै है। याका अर्थ यहु—जो नीचले निषेकनि विषै तिष्ठते परमाणू, तिनि बहुत परमाणूनि का उत्कर्षण करि, स्थिति कौ बधाइ, ऊपरि के निषेकनि विषै निक्षेपण करै है, मिलावै है। बहुरि अतर विषै गमनविकुवरणा कौ न करै है; अंतर विषै नखच्छेद न करै है। याका अर्थ मेरे जानने मे नीकै न आया है। तातै स्पष्ट नाही लिख्या है; बुद्धिमान जानियो। बहुरि तिस जीव के आयु विषै वचनयोग का काल स्तोक होइ, मनोयोग का काल स्तोक होइ। बहुरि वचनयोग स्तोक बार होइ। मनोयोग स्तोक बार होइ।

भावार्थ – काययोग का प्रवर्तन बहुत बार होइ, बहुत काल होइ। असै आयु का अतर्मुहूर्त अवशेष रहै, आगै कर्मकाण्ड विषै योगयवमध्य रचना कहैगे। ताका ऊपरला भाग विषै जो योगस्थान पाइए है। तहा अतर्मुहूर्तकाल पर्यंत तिष्ठ्या पीछै आगै जो जीव यवमध्य रचना कहैगे, तहा अत की गुणहानि सबधी जो योगस्थान, तहा आवली का असख्यातवा भागमात्र काल पर्यंत तिष्ठ्या। बहुरि आयु का द्विचरम समय विषै अर अत समय विषै उत्कृष्ट योगस्थान कौ प्राप्त भया। तहां तिस जीव कै तिन अत के दोऊ समयनि विषै औदारिक शरीर का उत्कृष्ट सचय हो है। बहुरि वैक्रियिक शरीर का भी वैसे ही कहना। विशेष इतना जो अतर विषै नखच्छेद न करै है, यहु विशेषण न सभवै है।

वेगुव्वियवरसंचं, बावीससमुद्द आरणदुगम्हि।
जह्मा वरजोगस्स य, वारा अण्णत्थ ण हि बहुगा ॥२५७॥

---

१ – ग, ख, ग इन तीन प्रति मे यहां अनुत्कृष्ट शब्द मिलता है।

वैगूर्विकवरसंचयं, द्वाविंशतिसमुद्र आरणद्विके ।
यस्माद्वरयोगस्य च, वारा अन्यत्र नहि बहुकाः ।।२५७।।

टीका – वैक्रियिक शरीर का उत्कृष्ट संचय, सो आरण-अच्युत दोय स्वर्गनि के ऊपरला पटल संबधी बाईस सागर आयु संयुक्त देव, तिन विषै संभवै है। अन्यत्र नीचले, ऊपरले पटलनि विषै वा सर्व नारकीनि विषै न संभवै है, जातै आरण-अच्युत बिना अन्यत्र वैक्रियिक शरीररूप योग का बहुत बार प्रवर्तन न हो है। चकार तै तिस योग्य अन्य सामग्री, सो भी अन्यत्र बहुत बार न संभवै है।

आगै तैजस शरीर अर कार्मण शरीरनि का उत्कृष्ट संचयस्थान का विशेष कहै है –

तेजासरीरजेट्ठं, सत्तमचरिमम्हि बिदियवारस्स ।
कम्मस्स वि तत्थेव य, णिरये बहुबारभमिदस्स ।।२५८।।

तैजसशरीरज्येष्ठं, सप्तमचरमे द्वितीयवारस्य ।
कार्मणस्यापि तत्रैव च, निरये बहुवारभ्रमितस्य ।।२५८।।

टीका – तैजसशरीर का भी उत्कृष्ट संचय औदारिकशरीरवत् जानना। विशेष इतना जो सातवी नरक पृथ्वी विषै दूसरी बार जो जीव उपज्या होइ। सातवी पृथ्वी विषै उपजि, मरि, तिर्यंच होइ, फेरि सातवी पृथ्वी विषै उपज्या होइ, तिस ही जीवकै हो है।

बहुरि आहारक शरीर का भी उत्कृष्ट संचय औदारिकशरीरवत् जानना। विशेष इतना जो आहारक शरीर कौ उपजावनहारा प्रमत्तसंयमी ही कै हो है।

बहुरि कार्माणशरीर का उत्कृष्ट संचय सो सातवी नरकपृथ्वी विषै नारकिन विषै जो जीव बहु बार भ्रम्या होइ, तिस ही कै होइ है। किस प्रकार हो है ? सो कहैं हैं–कोई जीव बादर पृथ्वी कायनि विषै अंतर्मुहूर्त घाटि, पृथक्त्व कोडिपूर्व करि अधिक दोय हजार सागर हीन कर्म की स्थिति कौ प्राप्त भया। तहा तिस बादर पृथ्वीकाय संबधी अपर्याप्त पर्याय थोरे धरै, पर्याप्त पर्याय बहुत धरै, तिनिका एकट्ठा किया हुवा पर्याप्त काल बहुत भया। अपर्याप्त काल थोरा भया। ऐसै इनिकौं पालता संता जब-जब आयु बाधै, तब-तब जघन्य योग करि बाधै, यहु यथायोग्य उत्कृष्ट योग

करि आहार ग्रहण करै । अर उत्कृष्ट योगनि की वृद्धि करि बधै । बहुरि यथायोग्य उत्कृष्ट योगनि कौ बहुत बार प्राप्त होइ, जघन्य योगस्थाननि कौ बहुत बार प्राप्त न होइ । बहुरि सक्लेश परिणामरूप परिणया यथायोग्य मदकषायरूप विशुद्धता करि विशुद्ध होइ, पूर्वोक्त प्रकार अधस्तन स्थितिनि के निषेक का जघन्यपद करै । उपरितन स्थितिनि के निषेक का उत्कृष्ट पद करै है । असै भ्रमण करि, बादर त्रसपर्याय विषै उपज्या, तहा भ्रमता तिस जीव कै पर्याप्त पर्याय थोरे, अपर्याप्त पर्याय बहुत भएं, तिनिका एकठा कीया पर्याप्तकाल बहुत भया । अपर्याप्तकाल थोरा भया । असै भ्रमण करि पीछला पर्याय का ग्रहण विषै सातवी नरक पृथ्वी के नारक जे बिले, तिनि विषै उपज्या । तहा तिस पर्याय के ग्रहण का प्रथम समय विषै यथा-योग्य उत्कृष्ट योग करि आहार ग्रहण कीया । बहुरि उत्कृष्ट योगवृद्धि करि बध्या । बहुरि थोरा अतर्मुहूर्त काल करि सर्व पर्याप्ति पूर्ण कीए । बहुरि तिस नरक विषै तेतीस सागर काल पर्यंत योग आवश्यक अर सक्लेश आवश्यक कौ प्राप्त भया । असै भ्रमण करि आयु का स्तोक काल अवशेष रहै, योगयवमध्य रचना का ऊपरला भागरूप योगस्थान विषै अतर्मुहूर्त काल पर्यंत तिष्ठि, अर पीछै जीव यवमध्य रचना की अत गुणहानिरूप योगस्थान विषै आवली का असख्यातवा भागमात्र काल पर्यंत तिष्ठि आयु का अत तै तीसरा, दूसरा समयनि विषै उत्कृष्ट सक्लेश कौ पाइ, अत समय विषै उत्कृष्ट योगस्थान कौ पाइ, तिस पर्याय का अत समय विषै जीव तिष्ठ्या ताकै कार्माण शरीर का उत्कृष्ट सचय होइ है । असै औदारिक आदि शरीरनि का का उत्कृष्ट सचय होने की सामग्री का विशेष कह्या ।

भावार्थ – पूर्वै उत्कृष्ट सचय होने विषै छह आवश्यक कहे थे, ते इहा यथासभव जानि लेना । पर्याय सबधी काल तौ **भवाद्ध** है । अर आयु का प्रमाण सो **आयुष्य** है । यथासभव योगस्थान होना, सो **योग** है । तीव्र कषाय होना सो **संक्लेश** है । ऊपरले निषेकनि के परमाणू नीचले निषेकनि विषै मिलावना, सो **अपकर्षण** है । नीचले निषेकनि का परमाणू ऊपरि के निषेकनि विषै मिलावना, सो **उत्कर्षण** है । असै ए छह आवश्यक यथासभव जानने ।

बहुरि **एक प्रश्न उपजै** है कि एक समय विषै जीव करि बाध्या जो एक समयप्रबद्ध, ताके आबाधा रहित अपनी स्थिति का प्रथम समय तै लगाइ, अत समय पर्यंत समय-समय प्रति एक-एक निषेक उदय आवै है । पूर्वै गाथा विषै समय-समय प्रति एक-एक समयप्रबद्ध का उदय का आवना कैसै कह्या है ?

ताका समाधान – जो समय-समय प्रति वधे समय प्रवद्धनि का एक-एक निषेक एकठे होइ, विवक्षित एक समय विषै समय प्रवद्धमात्र हो है।

कैसे ? सो कहिएहै – अनादिवध का निमित्तकरि वध्या विवक्षित समयप्रवद्ध, ताका जिस काल विषै अत निषेक उदय हो है, तिस काल विषै, ताके अनतरि वध्या समयप्रवद्ध का अत तै दूसरा निषेक उदय हो है। ताके अनतरि वध्या समयप्रवद्ध का अत तै तीसरा निषेक उदय हो है। ऐसे चौथा आदि समयनि विषै वध, समय-प्रवद्धनि का अत तै चौथा आदि निषेकनि का उदय क्रम करि आबाधाकाल रहित विवक्षित स्थिति के जेते समय तितने स्थान जाय, अत विषै जो समयप्रवद्ध वध्या, ताका आदि निषेक उदय हो है। ऐसे सबनि की जोडै, विवक्षित एक समय विषै एक समयप्रवद्ध उदय आवै है।

अकसदृष्टि करि जैसे जिन समयप्रवद्धनि के सर्व निषेक गलि गए, तिनिका तौ उदय है ही नाही। बहुरि जिस समयप्रवद्ध के सैतालीस निषेक पूर्वे गले, ताका अत नव का निषेक वर्तमान समय विषै उदय आवै है। बहुरि जाके छियालीस निषेक पूर्वे गले, ताका दश का निषेक उदय हो है। ऐसे ही क्रम तै जाका एकहू निषेक पूर्वे न गल्या, ताका प्रथम पाच सै बारा का निषेक उदय हो है। ऐसे वर्तमान कोई एक समय विषै सर्व उदय रूप निषेक। ९ १० ११ १२ १३ १४ १५ १६। १८ २० २२ २४ २६ २८ ३० ३२। ३६ ४० ४४ ४८ ५२ ५६ ६० ६४। ७२ ८० ८८ ९६ १०४ ११२ १२० १२८। १४४ १६० १७६ १९२ २०८ २२४ २४० २५६। २८८ ३२० ३५२ ३८४ ४१६ ४४८ ४८० ५१२। ऐसे इनिकौं जोडै सपूर्ण समय प्रवद्धमात्र प्रमाण हो है।

आगामी काल विषै जैसे नवीन समयप्रवद्ध के निषेकनि का उदय का सद्भाव होता जाइगा, तैसे पुराणे समयप्रवद्ध के निषेकनि के उदय का अभाव होता जायगा। जैसे आगामी समय विषै नवीन समयप्रवद्ध का पाच सै बारा का निषेक उदय आवैगा, तहा वर्तमान समय विषै जिस समयप्रवद्ध का पाच सै बारा का निषेक उदय था, ताका पाच सै बारा का निषेक का अभाव होइ, दूसरा च्यारि सै असी का निषेक उदय होगा। बहुरि जिस समयप्रवद्ध का वर्तमान समय विषै च्यारि सै असी का निषेक उदय था, ताका तिस निषेक का अभाव होइ, च्यारि सै अडतालीस के निषेक का उदय होगा। ऐसे क्रम तै जिस समयप्रवद्ध का वर्तमान समय विषै नव

का निषेक उदय था, ताका आगामी समय विषै सर्व अभाव होगा। अैसै ही क्रम समय प्रति जानना। तातै समय-समय प्रति एक-एक समयप्रबद्ध का एक-एक निषेक मिलि, एक-एक समयप्रबद्ध का उदय हो है। बहुरि गलै पीछै अवशेष रहैं, सर्व निषेक, तिनिकौ जोडै, किंचित् ऊन द्व्यर्धगुणहानि गुणित समयप्रबद्ध प्रमाण सत्त्व हो है। कैसे ? सो कहिए हैं – जिस समयप्रबद्ध का एकहू निषेक गल्या नाही, ताके सर्व निषेक नीचे पंक्ति विषै लिखिए। बहुरि ताके ऊपरि जिस समयप्रबद्ध का एक निषेक गल्या होइ, ताके आदि निषेक बिना अवशेष निषेक पंक्ति विषै लिखिए। बहुरि ताके ऊपर जिस समय प्रबद्ध के दोय निषेक गले होइ, ताके आदि के दोय निषेक बिना अवशेष निषेक पंक्ति विषै लिखिए। अैसै ही ऊपरि-ऊपरि एक-एक निषेक घटता लिखि, सर्व के ऊपरि जिस समय प्रबद्ध के अन्य निषेक गलि, एक अवशेष रह्या होइ, ताका अंत निषेक लिखना। अैसै करते त्रिकोण रचना हो है।

षष्ठम गुणहानि	पंचम गुणहानि	चतुर्थ गुणहानि	तृतीय गुणहानि	द्वितीय गुणहानि	प्रथम गुणहानि
९	११८	३३६	७७२	१६४४	३३८८
१९	१३८	३७६	८५२	१८०४	३७०८
३०	१६०	४२०	९४०	१९८०	४०६०
४२	१८४	४६८	१०३६	२१७२	४४४४
५५	२१०	५२०	११४०	२३८०	४८६०
६९	२३८	५७६	१२५२	२६०४	५३०८
८४	२६८	६३६	१३७२	२८४४	५७८८
१००	३००	७००	१५००	३१००	६३००
जोड ४०८	१६१६	४०३२	८८६४	१८५२८	३७८५६

अंकसंदृष्टि करि जैसै नीचै ही नीचै अडतालीस निषेक लिखे, ताके ऊपर पाच सै बारा का बिना सैंतालीस निषेक लिखे। ताके ऊपरि पाच सै बारा अर च्यारि सै असी का बिना छियालीस निषेक लिखे। अैसै ही क्रम तै ऊपरि ही ऊपरि नव का निषेक लिख्या, अैसै लिखते त्रिकूटी रचना हो है। तातै इस त्रिकोण यंत्र का जोडा हूवा सर्व द्रव्य, प्रमाण सत्त्व द्रव्य जानना। सो कितना हो है ? सो कहिए है – किंचिदून द्व्यर्धगुणहानि गुणित समयप्रबद्ध प्रमाण हो है। पूर्वै जो गुणहानि

आयाम का प्रमाण कह्या, तामै आधा गुणहानि आयाम का प्रमाण मिलाए, व्द्यर्ध-गुणहानि हो है। तामै किछू घाटि सख्यात गुणी पल्य की वर्गशलाका करि अधिक जो गुणहानि का अठारहवा भाग का प्रमाण सो घटावना, घटाए जो प्रमाण होइ, ताका नाम इहा किंचिदून व्द्यर्धगुणहानि जानना। ताकरि समयप्रबद्ध के विषै जो परमाणूनि का प्रमाण कह्या, ताकौ गुणै, जो प्रमाण होइ, सोइ त्रिकोण यत्र विषै प्राप्त सर्व निषेकनि के परमाणू जोडै, प्रमाण हो है। जैसै अक सदृष्टि करि कीया हूवा त्रिकोणयत्र, ताकी सर्वपक्ति के अकनि कौं जोडै, इकहत्तरी हजार तीन सै च्यारि हो है। अर गुणहानि आयाम आठ, तामैं आधा गुणहानि आयाम च्यारि मिलाए, व्द्यर्धगुणहानि का प्रमाण बारह होइ, ताकरि समयप्रबद्ध तरेसठि सौ कौ गुणै, पिचहत्तरि हजार छ सै होइ। इहा त्रिकोण यत्र का जोड घटता भया। तातै किंचिदून द्वयर्धगुणहानि गुणित समयप्रबद्ध प्रमाण सत्त्व कह्या। तहा व्द्यर्धगुणहानि विषै ऊनका प्रमाण दार्ष्टांत विषै महत्प्रमाण है। तातै पूर्वोक्त जानना।

इहा अकसदृष्टि दृष्टात विषै गुणहानि का अठारहवा भाग करि गुणित समयप्रबद्ध का प्रमाण अठाईस सै, तामैं गुणहानि आठ, नानागुणहानि छै करि गुणित समयप्रबद्ध का तरेसठिवा भाग, अडतालीस सै, तामैं किंचित् अधिक आधा समय-प्रबद्ध का प्रमाण तेतीस सै च्यारि घटाइ, अवशेष चौदह सै छिनवे जोडै, वियालीस सै छिनवे भए, सो व्द्यर्धगुणहानि गुणित समयप्रबद्ध विषै घटाए, त्रिकोण यत्र का जोड हो है।

बहुरि इस त्रिकोण यत्र का जोड इतना कैसै भया ? सो जोड देने का विधान हीन-हीन सकलन करि वा अधिक-अधिक सकलन करि वा अनुलोम-विलोम सकलन करि तीन प्रकार कह्या है। तहा घटता-घटता प्रमाण लीए निषेकनि का क्रम तै जोडना, सो हीन-हीन सकलन कहिए। बधता-बधता प्रमाण लीए निषेकनि का क्रम तै जोडना, सो अधिक-अधिक सकलन कहिए। हीन प्रमाण लीए वा अधिक प्रमाण लीए निषेकनि का जैसै होइ तैसै जोडना, सो अनुलोम-विलोम सकलन कहिए सो ऐसै जोड देने का विधान आगै सदृष्टि अधिकार विषै लिखैगे, तहा जानना। इहा जोड विषै सदृष्टि समझने मे न आवती, तातै नाही लिख्या है। ऐसै आयु विना कर्मप्रकृतिनि का समय-समय प्रति बध, उदय, सत्त्व का लक्षण कह्या।

बहुरि आयु का अन्यथा लक्षण है, जातै आयु का अपकर्षण कालनि विषै वा असंक्षेप अत काल विषै ही बध हो है। बहुरि आबाधा काल पूर्व भव विषै व्यतीत हो है। तातै आयु की जितनी स्थिति, तितनी ही निषेकनि की रचना जाननी। आबाधाकाल घटावना नाही। बहुरि आयुकर्म का उत्कृष्ट सचय कोडि पूर्व वर्ष प्रमाण आयु का धारी जलचर जीव कै हो है। तहा कर्मभूमिया मनुष्य कोटि पूर्व वर्ष प्रमाण आयु का धारी यथायोग्य सक्लेश वा उत्कृष्ट योग करि पर भव सबधी कोटिपूर्व वर्ष का आयु जलचर विषै उपजने का बाध्या, सो आगै कहिएगी योग यवमध्य रचना, ताका ऊपरि स्थान विषै अतर्मुहूर्त तिष्ठ्या, बहुरि अत जीव गुण-हानि का स्थान विषै आवली का असख्यातवा भागमात्र काल तिष्ठ्या, क्रम तै काल गमाइ, कोडिपूर्व आयु का धारी जलचर विषै उपज्या। अतर्मुहूर्त करि सर्व पर्याप्तनि करि पर्याप्त भया। अतर्मुहूर्त करि बहुरि परभव सबधी जलचर विषै उपजने का कोडिपूर्व आयु कौ बाधै है। तहा दीर्घ आयु का बध काल करि यथायोग्य सक्लेश करि उत्कृष्ट योग करि उत्कृष्ट योग करि बाधै है। सो योग यवरचना का अत स्थानवर्ती जीव बहुत बार साता कौ काल करि युक्त होता अपने काल विषै पर भव सबधी आयु कौ घटावै, ताकै आयु-वेदना द्रव्य का प्रमाण उत्कृष्ट हो है, सो द्रव्य रचना सस्कृत टीका तै जाननी। या प्रकार औदारिक आदि शरीरनि का बध, उदय, सत्त्व विशेष जानने के अर्थि वर्णन कीया।

आगै श्री माधवचद्र त्रैविद्यदेव बारह गाथानि करि योग मार्गणा विषै जीवनि की सख्या कहै है –

बादरपुण्णा तेऊ, सगरासीए असंखभागमिदा।
विक्किरियसत्तिजुत्ता, पल्लासंखेज्जया वाऊ ॥२५९॥

बादरपूर्णाः, तैजसाः, स्वकराशेरसंख्यभागमिताः।
विक्रियाशक्तियुक्ताः, पल्यासख्याता वायवः ॥२५९॥

टीका – बादर पर्याप्त तेजकायिक जीव, तिनि विषै उन ही जीवनि का जो पूर्वै परिमाण आवली के घन का असख्यातवा भागमात्र कह्या था, तिस राशि कौ असख्यात का भाग दीए, जो प्रमाण होइ, तितने जीव विक्रिया शक्ति करि सयुक्त जानने।

बहुरि बादर पर्याप्त वातकायिक जीव लोक के सख्यातवे भाग प्रमाण कहे थे। तिनि विषै पल्य का असख्यातवा भाग प्रमाण जीव, विक्रिया शक्ति युक्त जानने। जातै 'बादरतेऊवाऊपचेंदियपुण्णगा विगुव्वंति' इस गाथा करि बादर पर्याप्त अग्निकायिक अर पवनकायिक जीवनि कै वैक्रियिक योग का सद्भाव कह्या है।

पल्लासंखेज्जाहयविंदंगुलगुणिदसेढिमेत्ता हु।
वेगुव्वियपंचक्खा, भोगभुमा पुह विगुव्वंति ॥२६०॥

पल्यासंख्याताहतवृंदांगुलगुणित श्रेणिमात्रा हि।
वैगूर्विकपचाक्षा, भोगभुमाः पृथक् विगूर्वंति ॥२६०॥

टीका – पल्य का असख्यातवा भाग करि घनागुल कौ गुणै, जो परिमाण होइ, ताकरि जगच्छ्रेणी गुणै, जो परिमाण आवै, तितने वैक्रियिक योग के धारक पर्याप्त पचेद्री तिर्यच वा मनुष्य जानने। तहा भोगभूमि विषै उपजे तिर्यंच वा मनुष्य अर कर्मभूमि विषै चक्रवर्ती ए पृथक् विक्रिया कौ भी करै हैं। इनि विना सर्व कर्मभूमियानि कै अपृथक् विक्रिया ही है।

जो मूलशरीर तै जुदा शरीरादि करना, सो पृथक् विक्रिया जाननी।

अपने शरीर ही कौं अनेकरूप करना, सो अपृथक् विक्रिया जाननी।

देवेहिं सादिरेया, तिजोगिणो तेहिं हीण तसपुण्णा।
बियजोगिणो तदूणा, ससारी एक्कजोगा हु ॥२६१॥

देवैः सातिरेकाः, त्रियोगिनस्तैर्हीनाः त्रसपूर्णाः।
द्वियोगिनस्तदूना, ससारिणः एकयोगा हि ॥२६१॥

टीका – देवनि का जो परिमाण साधिक ज्योतिष्कराशि मात्र कह्या था, तीहि विषै घनागुल का द्वितीय मूल करि गुणित जगच्छ्रेणी प्रमाण नारकी अर संख्यात पणट्ठी प्रतरागुल करि भाजित जगत्प्रतर प्रमाण सज्ञी पर्याप्त तिर्यंच अर बादाल का घन प्रमाण पर्याप्त मनुष्य इनिकौं मिलाए, जो परिमाण होइ, तितनै त्रियोगी जानने। इनिकै मन, वचन, काय तीनो योग पाइए हैं।

बहुरि जो पूर्वं पर्याप्त त्रस जीवनि का प्रमाण कह्या था, तामैं त्रियोगी जीवनि का परिमाण घटाए, जो अवशेष परिमाण रहै; तितने द्वियोगी जीव जानने। इनिकै वचन, काय दोय ही योग पाइए हैं।

बहुरि संसारी जीवनि का जो परिमाण, तामैं द्वियोगी अर त्रियोगी जीवनि का परिमाण घटाए जो अवशेष परिमाण रहै, तितने जीव एक योगी जानने। इनिकै एक काययोग ही पाइए है; ऐसै प्रगट जानना।

अंतोमुहुत्तमेत्ता, चउमणजोगा कमेण संखगुणा।
तज्जोगो सामण्णं, चउवचिजोगा तदो दु संखगुणा॥२६२॥

अंतर्मुहूर्तमात्राः, चतुर्मनोयोगाः क्रमेण संख्यगुणाः।
तद्योगः सामान्यं, चतुर्वचोयोगाः ततस्तु संख्यगुणाः॥२६२॥

टीका – च्यारि प्रकार मनोयोग प्रत्येक अतर्मुहूर्त प्रमाण स्थिति लीए है। तथापि अनुक्रम तै संख्यात गुणे जानने। सोई कहिए है – सत्य मनोयोग का काल सबतै थोरा है; सो भी अंतर्मुहूर्त प्रमाण है; ताकी सदृष्टि–एक अतर्मुहूर्त। बहुरि यातै संख्यातगुणा काल असत्य मनोयोग का है, ताकी सदृष्टि–च्यारि अतर्मुहूर्त। इहां सख्यात की सहनानी च्यारि जाननी। बहुरि यातै सख्यात गुणा उभय मनोयोग का काल है, ताकी सदृष्टि – सोलह अतर्मुहूर्त। बहुरि यातै सख्यातगुणा अनुभय मनोयोग का काल है, ताकी सदृष्टि–चौसठि अतर्मुहूर्त। ऐसै च्यारि मनोयोग का काल का जोड दीए जो परिमाण हूवा, सो सामान्य मनोयोग का काल है, तिहि की सदृष्टि – पिच्यासी अतर्मुहूर्त। बहुरि सामान्य मनोयोग का काल तै सख्यातगुणा च्यारि वचनयोग काल है। तथापि क्रम तै सख्यातगुणा है, तौ भी प्रत्येक अतर्मुहूर्त मात्र ही है। तहा सामान्य मनोयोग का कालतै सख्यातगुणा सत्य वचनयोग का काल है, ताकी सदृष्टि–चौगुणा पिच्यासी (४×८५) अतर्मुहूर्त। बहुरि यातै सख्यात गुणा असत्य वचनयोग का काल है – ताकी सदृष्टि सोलहगुणा पिच्यासी (१६×८५) अतर्मुहूर्त। बहुरि यातै सख्यातगुणा उभय वचनयोग का काल है – ताकी सदृष्टि–चौसठिगुणा पिच्यासी (६४×८५) अतर्मुहूर्त। बहुरि यातै सख्यात गुणा अनुभय वचनयोग का काल है, ताकी दृष्टि–दोय सै छप्पन गुणा पिच्यासी (२५६×८५) अतर्मुहूर्त।

तज्जोगो सामण्णं, काश्रो संखाहदो तिजोगमिदं ।
सव्वसमासविभजिदं, सगसगगुणसंगुणे दु सगरासी ।।२६३।।

तद्योगः सामान्यं, कायः संख्याहतः त्रियोगिमितम् ।
सर्वसमासविभक्तं, स्वकस्वकगुणसंगुणे तु स्वकराशिः ।।२६३।।

टीका – बहुरि जो चार्यो वचन योगनि का काल कह्या, ताका जोड दीए, जो परिमाण होइ, सो सामान्य वचन योग का काल है, ताकी सदृष्टि तीन सै चालीस गुणा पिच्यासी (३४० × ८५) अतर्मुहूर्त । यातै सख्यात गुणा काल काययोग का जानना । ताकी सदृष्टि तेरह सै साठि गुणा पिच्यासी (१३६० × ८५) अतर्मुहूर्त । ऐसै इनि तीनो योगनि के काल का जोड दीए, सतरह सै एक गुणा पिच्यासी (१७०१ × ८५) अतर्मुहूर्त प्रमाण भया । ताके जेते समय होहि, तिस प्रमाण करि त्रियोग कहिए । पूर्वे जो त्रियोगी जीवनि का परिमाण कह्या था, ताकौं भाग दीजिए जो एक भाग का परिमाण श्रावै, ताकौ सत्यमनोयोग के काल के जेते समय, तिन-करि गुणै, जो परिमाण श्रावै, तितने सत्य मनोयोगी जीव जानने । बहुरि ताही कौं श्रसत्य मनोयोग काल के जेते समय, तिन करि गुणै, जो परिमाण श्रावै, तितने श्रसत्य मनोयोगी जीव जानने । ऐसै ही काययोग पर्यंत सर्व का परिमाण जानना । इहा सर्वत्र त्रैराशिक करना । तहा जो सर्व योगनि का काल विषै पूर्वोक्त त्रियोगी सर्व जीव पाइए, तौ विवक्षित योग के काल विषै केते जीव पाइए ? ऐसै तीनो योगनि का जोड दिए जो काल भया, सो प्रमाण राशि, त्रियोगी जीवनि का परिमाण फल राशि, श्रर जिस योग की विवक्षा होइ तिसका काल इच्छा राशि, ऐसै करि कै फल-राशि कौ इच्छाराशि करि गुणि प्रमाणराशि का भाग दीए, जो-जो परिमाण श्रावै, तितने-तितने जीव विवक्षित योग के धारक जानने ।

बहुरि द्वियोगी जीवनि विषै वचनयोग का काल श्रतर्मुहूर्त मात्र, ताकी सदृष्टि । एक अतर्मुहूर्त, यातै सख्यातगुणा काययोग का काल, ताकी सदृष्टि च्यारि श्रतर्मुहूर्त, इनि दोऊनि के काल कौ जोड, जो प्रमाण होइ, ताका भाग द्वियोगी जीव राशि कौ दीए, जो एक भाग का परिमाण होइ, ताकौ श्रपना-श्रपना काल करि गुणै, श्रपना-श्रपना राशि हो है । तहा किछू घाटि त्रसराशि के प्रमाण कौं सदृष्टि श्रपेक्षा पाच करि भाग देइ, एक करि गुणै, द्वियोगीनि विषै वचन योगीनि का

प्रमाण हो है । पाच का भाग देइ, च्यारि करि गुणें द्वियोगीनि विषै काययोगीनि का प्रमाण हो है ।

कम्मोरालियमिस्सयओरालद्धासु संचिदअणंता ।
कम्मोरालियमिस्सय, ओरालियजोगिणो जीवा ।।२६४।।

कार्मणौदारिकमिश्रकौरालाद्धासु संचितानंताः ।
कार्मणौरालिकमिश्रकौरालिकयोगिनो जीवाः ।।२६४।।

टीका – कार्माण काययोग, औदारिकमिश्र काययोग, औदारिक काययोग इनि के कालनि विषै सचित कहिए एकठे भए, जे कार्माण काययोगी, औदारिक मिश्र काययोगी, औदारिक काययोगी जीव, ते प्रत्येक जुदे-जुदे अनतानत जानने, सोई कहिए है ।

समयत्तयसंखावलिसंखगुणावलिसमासहिदरासी ।
सगगुणगुणिदे थोवो, असंखसंखाहदो कमसो ।।२६५।।

समयत्रयसंख्यावलिसंख्यगुणावलिसमासहितराशिम् ।
स्वकगुणगुणिते स्तोकः, असंख्यसंख्याहतः क्रमशः ।।२६५।।

टीक – कार्मण काययोग का काल तीन समय है, जातै विग्रह गति विषै अनाहारक तीनि समयनि विषै कार्माण काय योग ही सभवै है । बहुरि औदारिक मिश्र काययोग का काल सख्यात आवली प्रमाण है, जातै अतर्मुहूर्त प्रमाण अपर्याप्त अवस्था विषै औदारिकमिश्र का काल है । बहुरि तातै सख्यातगुणा औदारिक काययोग का काल है, जातै तिनि दोऊ कालनि बिना अवशेष सर्व औदारिक योग का ही काल है; सो इनि सर्व कालनि का जोड दीएं जो समयनि का परिमाण भया, ताकौ द्विसयोगी त्रिसयोगी राशि करि हीन ससारी जीव राशिमात्र एक योगी जीव राशि के परिमाण कौ भाग दीए जो एक भाग विषै परिमाण आवै, तीहि कौ कार्माण काल करि गुणें, जो परिमाण होइ, तितने कार्माण काययोगी है । अर तिस ही एक भाग कौ औदारिक मिश्र काल करि गुणें, जो परिमाण होइ, तितने औदारिक मिश्र योगी जानने । बहुरि तिस ही एक भाग कौ औदारिक के काल करि गुणें, जो परिमाण होइ, तितने औदारिक काययोगी जानने ।

इहां कार्माण काययोगी तौ सब तै स्तोक है। इनि तै असख्यात गुणे औदारिकमिश्र काययोगी है। इन तै सख्यातगुणे औदारिक काययोगी हैं। इहा भी जो तीनू काययोग के काल विषै सर्व एक योगी जीव पाइए, तौ कार्माण शरीर आदि विवक्षित के काल विषै केते पाइए ? असै त्रैराशिक हो है। तहा तीनो काययोगनि का काल सो प्रमाणराशि, एक योगी जीवनि का परिमाण सो फलराशि, कार्मणादिक विवक्षित का काल सो इच्छाराशि, फलराशि कौं इच्छाराशि करि गुणै, प्रमाण राशि का भाग दीए, जो-जो प्रमाण पावै, तितने-तितने विवक्षित योग के धारक जीव जानने। **क्रमश** इस शब्द करि आचार्य ने कह्या है कि धवल नामा प्रथम सिद्धात के अनुसारि यह कथन कीया है। या करि अपना उद्धतता का परिहार प्रगट कीया है।

सोवक्कमाणुवक्कमकालो संखेज्जवासठिदिवाणे।
आवलिअसंखभागो, संखेज्जावलिपमा कमसो ॥२६६॥

सोपक्रमानुपक्रमकालः संख्यातवर्षस्थितिवाने।
आवल्यसंख्यभागः, संख्यातावलिप्रमः क्रमशः ॥२६६॥

टीका – वैक्रियिक मिश्र अर वैक्रियिक काययोग के धारक जे जीव, तिनकी सख्या च्यारि गाथानि करि कहै है। सख्यात वर्ष की है स्थिति जिनकी असे जे मुख्यता करि दश हजार वर्ष प्रमाण जघन्य स्थिति के धारकवान कहिए व्यतर देव, तिनि विषै उनकी स्थिति के दोय भाग हैं, एक सोपक्रम काल, एक अनुपक्रम काल।

तहा उपक्रम कहिए उत्पत्ति, तीहि सहित जो काल, सो सोपक्रम काल कहिए। सो आवली के असख्यातवे भागमात्र है, जो व्यतर देव उपजिवो ही करै, वीचि कोई समय अतर नही पडै, तौ आवली का असख्यातवा भाग प्रमाण काल पर्यंत उपजिवो करै।

बहुरि जो उत्पत्ति रहित काल होइ, सो अनुपक्रम काल कहिए। सो सख्यात आवली प्रमाण है। बारह मुहूर्तमात्र जानना। जो कोई ही व्यतर देव न उपजै, तौ बारह मुहूर्त पर्यंत न उपजै, पीछै कोई उपजै ही उपजै, असै अनुक्रम तै काल जानने।

तहिं सव्वे सुद्धसला, सोवक्कमकालदो दु संखगुणा ।
तत्तो संखगुणूणा, अपुण्णकालम्हि सुद्धसला ॥२६७॥

तस्मिन् सर्वाः शुद्धशलाकाः, सोपक्रमकालतस्तु संख्यगुणाः ।
ततः संख्यगुणोना, अपूर्णकाले शुद्धशलाकाः ॥२६७॥

टीका – तीहि दश हजार वर्ष प्रमाण जघन्य स्थिति विषै सर्व पर्याप्त वा अपर्याप्त काल सबधी अनुपक्रम काल रहित कौ केवल शुद्ध उपक्रम काल की शलाका कहिए । जेती बार सभवै तेता प्रमाण, सो उपक्रम काल तै सख्यात गुणी है । बहुरि अपर्याप्त काल सबधी शुद्ध उपक्रम शलाका तातै सख्यात गुणी घाटि है, जो जघन्य स्थिति विषै शुद्ध उपक्रम शलाका का परिमाण कह्या था, ताके सख्यातवे भाग अपर्याप्त काल सबधी शुद्ध उपक्रम शलाका जानना । सोई दिखाइए है—

सोपक्रम–अनुपक्रम काल दोऊ कालनि की मिलाई हुई एक शलाका होइ, तौ दश हजार वर्ष प्रमाण स्थिति की केती शलाका होइ ? असै त्रैराशिक करिए । तहां सोपक्रम अर अनुपक्रम काल कौ मिलाए, आवली का असख्यातवा भाग अधिक संख्यात आवली प्रमाण तौ प्रमाणराशि भया, अर फलराशि एक शलाका, अर इच्छाराशि दश हजार वर्ष, तहा फल करि इच्छाराशि कौ गुणि, प्रमाण का भाग दीए, किचिदून सख्यातगुणा सख्यात प्रमाण मिश्र शलाका हो है । जघन्य स्थिति विषै एती बार उपक्रम वा अनुपक्रम का काल वर्तै है । बहुरि प्रमाणराशि शलाका एक, फलराशि उपक्रम काल आवली का असख्यातवा भाग, इच्छाराशि मिश्रशलाका किचिदून सख्यात गुणा सख्यात कीएं, तीहि जघन्य स्थिति प्रमाण काल विषै शुद्ध उपक्रम शलाका का काल का परिमाण किंचिदून सख्यात गुणा संख्यात गुणित आवली का असख्यातवा भागमात्र हो है । बहुरि प्रमाण जघन्य स्थिति, फल शुद्ध उपक्रम शलाका का काल, इच्छा अपर्याप्त कीए, अपर्याप्त काल सबधी शुद्ध उपक्रम शलाका का काल सख्यात गुणा आवली का असख्यातवा भागमात्र होइ । अथवा अन्य प्रकार कहै है – प्रमाण एक शुद्ध उपक्रम शलाका का काल, फल एक शलाका, इच्छा सर्व शुद्ध उपकम काल करिए पर्याप्त–अपर्याप्त सर्व काल सबधी शुद्ध उपक्रम शलाका किंचिदून सख्यात गुणी सख्यात जाननी । बहुरि प्रमाण एक शलाका, फल शुद्ध उपक्रम शलाका का काल आवली का असख्यातवा भागमात्र, इच्छा सर्व शुद्ध शलाका किंचिदून सख्यात गुणित सख्यात करिए, लब्धराशि विषै सर्व जघन्य स्थिति सवधी

शुद्ध उपक्रम काल आवली का असख्यातवा भाग कौ किंचिदून सख्यात गुणा सख्यात करि गुणे, जेता प्रमाण आवै, तितना हो है। बहुरि प्रमाण एक शलाका, फल एक शलाका काल आवली का असख्यातवा भागमात्र काल, इच्छा अपर्याप्त काल सबधी शलाका सख्यात करिए, तहा लब्धिराशि विषै अपर्याप्तकाल सबंधी शुद्ध उपक्रम शलाका का काल सख्यात गुणा आवली का असंख्यातवा भागमात्र हो है। इहा दोय प्रकार वर्णन किया, तहा दोऊ जायगा जघन्य उपजने का अतर एक समय है, ताकौं विचारि शुद्ध उपक्रम शलाका साधी है, ऐसा जानना। अनुपक्रम काल करि रहित जो उपक्रम काल, सो शुद्ध उपक्रम काल जानना।

तं सुद्धसलागाहिदणियरासिमपुण्णकाललद्धाहिं।
सुद्धसलागाहिं गुणे, वेंतरवेगुव्वमिस्सा हु ॥२६८॥

त शुद्धशलाकाहितनिजराशिमपूर्णकाललब्धाभिः।
शुद्धशलाकाभिर्गुणे, व्यतरवैगूर्वमिश्रा हि ॥२६८॥

टीका – तीहिं जघन्य स्थिति प्रमाण सर्व काल सबधी शुद्ध उपक्रम शलाका का परिमाण, किंचिदून सख्यातगुणा सख्यात करि गुणित आवली का असख्यातवा भागमात्र कह्या, ताका भाग व्यतर देवनि का जो पूर्वै परिमाण कह्या था, ताकौं दीजिए जो परिमाण आवै, ताकौ अपर्याप्त काल सबधी शुद्ध उपक्रम शलाका का प्रमाण सख्यात गुणा आवली का असख्यातवा भागमात्र, ताकरि गुणे, जो परिमाण आवै, तितने वैक्रियिक मिश्र योग के धारक व्यतर देव जानने। सो ए व्यतर देवनि का जो पूर्वै परिमाण कह्या था, ताके सख्यातवे भाग वैक्रियिक मिश्र योग के धारक व्यतर देव है। सख्यात वर्ष प्रमाण स्थिति के धारक व्यतर घने उपजै है, तातै उन ही की मुख्यताकरि इहा परिमाण कह्या है।

तहिं सेसदेवणारयमिस्सजुदे सव्वमिस्सवेगुव्वं।
सुरणिरयकायजोगा, वेगुव्वियकायजोगा हु ॥२६९॥

तस्मिन् शेषदेवनारकमिश्रयुते सर्वमिश्रवैगूर्वम्।
सुरनिरयकाययोगा, वैगूर्विककाययोगा हि ॥२६९॥

टीका – तीहिं वैक्रियिक मिश्र काययोग के धारक व्यतर देवनि का परिमाण विषै अवशेष जे भवनवासी, ज्योतिषी, वैमानिक देव अर सर्व नारकी वैक्रियिक मिश्र

योग के धारक, तिनिका परिणाम मिलाए, सर्व वैक्रियिकमिश्र काययोग के धारक जीवनि का परिमाण हो है। व्यतर देवा बिना अन्य देव वा नारकी, तिनकै अनुपक्रम काल जो न उपजने का काल, सो बहुत है। तातै सबनि तै वैक्रियिकमिश्र योग के धारक व्यंतर देव बहुत हैं। इस वास्तै औरनि कौ उन विषै मिलाय करि परिमाण कह्या। बहुरि काययोग के धारक देव अर नारकी, तिनिका परिमाण मिलाए वैक्रियिक काययोग के धारक जीवनि का परिमाण हो है। पूर्वै जो त्रियोगी जीवनि का परिमाण विषै काययोगी जीवनि का परिमाण कह्या था, तामैं स्यो तिर्यंच, मनुष्य सबंधी औदारिक, आहारक काययोग के धारक जीवनि का परिमाण घटाए, जो परिमाण रहै, तितने वैक्रियिक काययोग के धारक जीव जानने। मिश्र योग के धारक जीव एक काययोगी ही है, सो उनका परिमाण एक योगीनि का प्रमाण विषै गर्भित जानना।

आहारकायजोगा, चउवण्णं होंति एकसमयम्हि।
आहारमिस्सजोगा, सत्तावीसा दु उक्कस्सं ॥२७०॥

आहारकाययोगाः, चतुष्पंचाशत् भवंति एकसमये।
आहारमिश्रयोगाः, सप्तविंशतिस्तूत्कृष्टम् ॥२७०॥

टीका – उत्कृष्टपनै एक समय विषै युगपत् आहारक काययोग के धारक चौवन (५४) हो है। बहुरि आहारक मिश्र काययोग के धारक सत्ताईस (२७) हो है। उत्कृष्टपनै अर एक समय विषै असै ए दोय विशेषण मध्य दीपक समान है। जैसैं बीचि धर्या हुआ दीपक दोऊ तरफ प्रकाश करै है, तैसै इनि दोऊ विशेषणनि तै जो पूर्वै गति आदि विषै जीवनि की सख्या कहि आए, अर आगै वेदादिक विषै जीवनि की सख्या कहिएगी, सो सब उत्कृष्टपनै युगपत् अपेक्षा जाननी। जो उत्कृष्टपनै समय विषै युगपत् होइ, तो उक्त सख्या प्रमाण जीव होहिं। उक्त सख्या तै हीन होइ तौ होइ, परन्तु अधिक कदाचित् न होइ। ऐसी विवक्षातै इहा कथन जानना। बहुरि जघन्यपने तै वा नाना काल की अपेक्षा सख्या का विशेष अन्य जैनागम तै जानना असै योगमार्गणा विषै जीवनि की संख्या कही है।

इति श्री आचार्य नेमिचद्र सिद्धान्त चक्रवर्ती विरचित गोम्मटसार द्वितीय नाम पचसग्रह ग्रथ की जीवतत्त्वप्रदीपिका नामा सस्कृत टीका के अनुसारि **सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका** नामा भाषा टीका विषै जीवकाण्ड विषै प्ररूपित जे बीस प्ररूपणा, तिनि विषै **योग** प्ररूपणा है नाम जाका असा **नवमा** अधिकार सम्पूर्ण भया ॥९॥

दसवां अधिकार : वेद-मार्गणा-प्ररूपणा

।। मंगलाचरण ।।

दूरि करत भव ताप सब, शीतल जाके बैन ।
तीन भवननायक नमौं, शीतल जिन सुखदैन ।।

आगे शास्त्र का कर्ता आचार्य छह गाथानि करि वेदमार्गणा कौं प्ररूपै हैं –

पुरिसिच्छिसंढवेदोदयेण पुरिसिच्छिसंढओ भावे ।
णामोदयेण दव्वे, पाएण समा कहिं विसमा ।। २७१ ।।

पुरुषस्त्री षंढवेदोदयेन पुरुषस्त्रीषंढाः भावे ।
नामोदयेन द्रव्ये, प्रायेण समाः क्वचिद् विषमाः ।।२७१।।

टीका – चारित्र मोहनीय का भेद नोकषाय, तीहरूप पुरुषवेद, स्त्रीवेद, नपुसकवेद नामा प्रकृति, तिनिके उदय तै भाव जो चैतन्य उपयोग, तीहि विषै पुरुष, स्त्री, नपुसकरूप जीव हो है । बहुरि निर्माण नामा नामकर्म के उदय करि सयुक्त अगोपाग का विशेपरूप नामकर्म की प्रकृति के उदय तै, द्रव्य जो पुद्गलीक पर्याय, तीहिंविषै पुरुष, स्त्री, नपुसक रूप शरीर हो है । सो ही कहिए है–पुरुषवेद के उदयतै स्त्री का अभिलाषरूप मैथुन सज्ञा का धारी जीव, सो भाव पुरुष हो है । बहुरि स्त्री वेद के उदय तै पुरुष का अभिलाषरूप मैथुन सज्ञा का धारक जीव, सो भाव स्त्री हो है । बहुरि नपुसकवेद के उदय तै पुरुष अर स्त्री दोऊनि का युगपत् अभिलाषरूप मैथुन सज्ञा का धारक जीव, सो भाव नपुसक हो है ।

बहुरि निर्माण नामकर्म का उदय सयुक्त पुरुष वेदरूप आकार का विशेष लीए, अगोपाग नामा नामकर्म का उदय तै मूछ, डाढी, लिंगादिक चिह्न सयुक्त शरीर का धारक जीव, सो पर्याय का प्रथम समय तै लगाय अन्त समय पर्यंत द्रव्य पुरुष हो है ।

बहुरि निर्माण नाम का उदय सयुक्त स्त्री वेदरूप आकार का विशेष लीए अगोपाग नामा नामकर्म के उदयतै रोम रहित मुख, स्तन, योनि इत्यादि चिह्न सयुक्त

शरीर का धारक जीव, सो पर्याय का प्रथम समय तै लगाइ अंत समय पर्यंत द्रव्य स्त्री होइ है ।

बहुरि निर्माण नामा नामकर्म का उदय तै संयुक्त नपुसक वेदरूप आकार का विशेष लीए अगोपाग नामा नामप्रकृति के उदय तै मूछ, डाढी इत्यादि वा स्तन, योनि इत्यादिक दोऊ चिह्न रहित शरीर का धारक जीव, सो पर्याय का प्रथम समय तै लगाइ अंत समय पर्यंत द्रव्य नपुसक हो है ।

सो प्रायेण कहिए बहुलता करि तौ समान वेद हो है । जैसा द्रव्यवेद होइ तैसा ही भाव वेद होइ बहुरि कही समान वेद न हो है, द्रव्यवेद अन्य होइ, भाव वेद अन्य होइ । तहा देव अर नारकी अर भोग भूमिया तिर्यंच, मनुष्य इनिकै तौ जैसा द्रव्य वेद है, तैसा ही भाव वेद है । बहुरि कर्मभूमिया तिर्यंच अर मनुष्य विषै कोई जीवनि कै तौ जैसा द्रव्य वेद हो है, तैसा ही भाव वेद है, बहुरि केई जीवनि कै द्रव्य वेद अन्य हो है अर भाव वेद अन्य हो है । द्रव्य तै पुरुष है अर भाव तै पुरुष का अभिलाषरूप स्त्री वेदी है । वा स्त्री अर पुरुष दोऊनि का अभिलाषरूप नपुसकवेदी है । असै ही द्रव्य तै स्त्रीवेदी है अर भाव तै स्त्रीका अभिलाषरूप पुरुषवेदी है । वा दोऊनि का अभिलाषरूप नपुसक वेदी है । बहुरि द्रव्य तै नपुसक वेदी है । भाव तै स्त्री का अभिलाषरूप पुरुष वेदी है । वा पुरुप का अभिलाषरूप स्त्री वेदी है । असा विशेष जानना, जातै आगम विषै नवमा गुणस्थान का सवेद भाग पर्यंत भाव तै तीन वेद है । अर द्रव्य तै एक पुरुष वेद ही है, असा कथन कह्या है ।

वेदस्सुदीरणाए, परिणामस्स य हवेज्ज संमोहो ।
संमोहेण ण जाणदि, जीवो हि गुणं व दोषं वा ॥२७२॥

वेदस्योदीरणाया, परिणामस्य च भवेत्संमोहः ।
संमोहेन न जानाति, जीवो हि गुणं वा दोषं वा ॥२७२॥

टीका – मोहनीय कर्म की नोकषायरूप वेद नामा प्रकृति, ताका उदीरणा वा उदय, तीहि करि आतमा के परिणामनि कौ रागादिरूप मैथुन है नाम जाका असा सम्मोह कहिए चित्त विक्षेप, सो उपजै है । तहा बिना ही काल आए कर्म का फल निपजै, सो उदीरणा कहिए । काल आए फल निपजै, सो उदय कहिए । बहुरि उस सम्मोह के उपजने तै जीव गुण कौ वा दोष कौ न जानै, असा अविवेक रूप

अनर्थ वेद के उदय तैं भया सम्मोह तैं हो है । तातैं ज्ञानी जीव कौं परमागम भावना का बल करि यथार्थ स्वरूपानुभवन आदि भाव तैं ब्रह्मचर्य अंगीकार करना योग्य है, असा आचार्य का अभिप्राय है ।

पुरुगुणभोगे सेदे, करेदि लोयम्मि पुरुगुणं कम्मं ।
पुरु उत्तमे य जह्मा, तह्मा सो वण्णिओ पुरिसो[1] ॥२७३॥

पुरुगुणभोगे शेते, करोति लोके पुरुगुणं कर्म ।
पुरूत्तमे च यस्मात्, तस्मात् स वर्णितः पुरुषः ॥२७३॥

टीका – जातैं जो जीव **पुरुगुण** जो उत्कृष्ट सम्यग्ज्ञानादिक, तीहिं विषै शेते कहिए स्वामी होइ प्रवर्तै ।

बहुरि पुरुभोग जो उत्कृष्ट इद्रादिक का भोग, तीहिं विषैं शेते कहिए भोक्ता होय प्रवर्तै ।

बहुरि **पुरुगुण** कर्म जो धर्म, अर्थ, काम, मोक्षरूप पुरुषार्थ, तीहिंनै शेते कहिए करै ।

बहुरि पुरु जो उत्तम परमेष्ठी का पद तीहिं विषैं शेते कहिए तिष्ठै । तातैं सो द्रव्य भाव लक्षण सयुक्त द्रव्य – भाव तैं पुरुष कह्या है । पुरुष शब्द की निरुक्ति करि वर्णन कीया है ।

धातुनि के अनेक अर्थ है । तातैं शीङ् स्वप्ने इस धातु का स्वामी होना, भोगवना, करना, तिष्ठना असैं अर्थ कहे, विरोध न उपजावै है । बहुरि इहा पृषोदर शब्द की ज्यो अक्षर विपर्यास जानने । तालवी, शकार का, मूर्धनी षकार करना । अथवा 'षोऽतकर्मणि' इस धातु तें निपज्या पुरुष शब्द जानना ।

छादयदि सयं दोसे, णयदो छाददि परं वि दोसेण ।
छादणसीला जह्मा, तह्मा सा वण्णिया इत्थी[2] ॥२७४॥

छादयति स्वक दोषैः नयतः छादयति परमपि दोषेण ।
छादनशीला यस्मात् तस्मात् सा वर्णिता स्त्री ॥२७४॥

---

१. षट्खडागम – धवला पुस्तक १, पृष्ठ ३४३, गाथा १७१ ।
२ षट्खडागम – धवला पुस्तक १, पृष्ठ ३४३, गाथा १७० ।

टीका – जातै जो स्वय कहिए आपकौ **दोषैः** कहिए मिथ्यात्व अज्ञान, असयम, क्रोधादिक, तिनि करि **स्तृणाति** कहिए आच्छादित करै है । बहुरि नाही केवल आप ही कौ आच्छादित करै है, जातै पर जु है पुरुषवेदी जीव, ताहि कोमल वचन कटाक्ष सहित विलोकन, सानुकूल प्रवर्तन इत्यादि प्रवीणतारूप व्यापारनि तै अपने वश करि दोष जे है हिंसादिक पाप, तिनि करि **स्तृणाति** कहिए आच्छादै है, असा आच्छादन रूप ही है स्वभाव जाका तातै, सो द्रव्य भाव करि स्त्री असा नाम कह्या है । असी स्त्री शब्द की निरुक्ति करि वर्णन कीया ।

यद्यपि तीर्थंकर की माता आदि सम्यग्दृष्टिणी स्त्रीनि विषै दोष नाही, तथापि वे स्त्री थोरी अर पूर्वोक्त दोष करि सयुक्त स्त्री घनी । तातै प्रचुर व्यवहार अपेक्षा असा लक्षण आचार्य ने स्त्री का कह्या ।

णेवित्थी णेव पुमं, णउंसओ उहय-लिंग-विदिरित्तो ।
इठ्टावग्गिसमाणग-वेदणगरुओ कलुस-चित्तो[1] ।।२७५।।

नैव स्त्री नैव पुमान्, नपुसक उभयलिगव्यतिरिक्तः ।
इष्टापाकाग्निसमानकवेदनागुरुकः कलुषचित्तः ।।२७५।।

टीका – जो जीव पूर्वोक्त पुरुष वा स्त्रीनि के लक्षण के अभाव तै पुरुष नाही वा स्त्री नाही; तातै दौऊ ही वेदनि के डाढी, मूछ वा स्तन, योनि इत्यादि चिह्न, तिनिकरि रहित है । बहुरि इष्ट का पाक जो ईंट पचावने का पजावा, ताकी अग्नि समान तीव्र काम पीडा करि गरवा भर्या है । बहुरि स्त्री वा पुरुष दोऊनि का अभिलाषरूप मैथुन सज्ञा करि मैला है चित्त जाका, असा जीव नपुसक है ऐसा आगम विषै कह्या है । यहु नपुसक शब्द की निरुक्ति करि वर्णन कीया । स्त्री पुरुष का अभिलाषरूप तीव्र कामवेदना लक्षण धरै, भावनपुसक है, असा तात्पर्य जानना ।।२७५।।

तिणकारिसिट्ठपागग्गि-सरिस-परिणाम-वेयणुम्मुक्का ।
अवगय-वेदा जीवा, सग-संभवणंत-वरसोक्खा[2] ।।२७६।।

---

१. षट्खडागम – धवला पुस्तक १, पृष्ठ ३४४ गाथा स १७२
पाठभेद – उहय – उभय, इट्ठावग्गि – इट्ठावाग, वेदण – वेयण ।
२ षट्खडागम – धवला पुस्तक १, पृष्ठ ३४४, गाथा १७३ ।
पाठभेद --कारिस तणिट्ट—वागग्गि ।

तृणकारीषेष्टपाकाग्निसदृशपरिणामवेदनोन्मुक्ताः ।
अपगतवेदा जीवाः, स्वकसंभवानंतवरसौख्याः ।।२७६।।

टीका – पुरुष वेदी का परिणाम, तिणाकी अग्नि समान है । स्त्री वेदी का परिणाम कारीष का अग्नि समान है । नपुसक वेद का परिणाम पजावाकी अग्नि समान है । असे तीनो ही जाति के परिणामनि की जो पीडा, तीहि करि जे रहित भए हैं, असे भाववेद अपेक्षा अनिवृत्तिकरण का अपगत वेदभाग तै लगाय, अयोगी पर्यंत अर द्रव्य भाव वेद अपेक्षा गुणस्थानातीत सिद्ध भगवान जानने ।

कोऊ जानैगा जहा काम सेवन नाही, तहा सुख भी नाही ?

ताकौ कहैं है–कैसे है ते अवेदी ? अपने ज्ञान दर्शन लक्षण विराजमान आत्मतत्त्व तै उत्पन्न भया जो अनाकुल अतीद्रिय अनत सर्वोत्कृष्ट सुख, ताके भोक्ता हैं । यद्यपि नवमा गुणस्थान के अवेद भाग ही तै वेद उदय तै उत्पन्न कामवेदनारूप सक्लेश का अभाव है । तथापि मुख्यपनै सिद्धनि ही कै आत्मीक सुख का सद्भाव दिखाइ वर्णन कीया । परमार्थ तै वेदनि का अभाव भए पीछे ज्ञानोपयोग की स्वस्थतारूप आत्म जनित आनन्द यथायोग्य सबनि कै पाइये है ।

आगै श्री माधवचन्द्र त्रैविद्यदेव वेद मार्गणा विषै जीवनि की सख्या पाच गाथानि करि कहै हैं –

जोइसियवाणजोणिणितिरिक्खपुरुसा य सण्णिणो जीवा ।
तत्तेउपम्मलेस्सा, संखगुणूणा कमेणेदे ।।२७७।।

ज्योतिष्कवानयोनितिर्यक्पुरुषाश्च सञ्ज्ञिनो जीवाः ।
तत्तेजः पद्मलेश्याः, सख्यगुणोनाः क्रमेणैते ।।२७७।।

टीका – पैसठि हजार पाच सै छत्तीस प्रतरागुल का भाग जगत्प्रतर कौ दीए, जो परिमाण आवै, तितने ज्योतिषी हैं । तातै सख्यात गुणे घाटि व्यतर है । सख्यात गुणे घाटि कहो वा सख्यातवा भाग कहो दोऊ एकार्थ है । बहुरि तातै सख्यात गुणे घाटि योनिमती तिर्यंच है । तिर्यंच गति विषै द्रव्य स्त्री इतनी है । बहुरि तातै सख्यात गुणे घाटि द्रव्य पुरुष वेदी तिर्यंच हैं । बहुरि तातै सख्यात गुणे घाटि सैनी पचेंद्री तिर्यंच है । बहुरि तातै सख्यात गुणा घाटि पीत लेश्या का धारक सैनी पचेंद्री तिर्यंच हैं ।

बहुरि तीह स्यो संख्यात गुणा घाटि पद्म-लेश्या का धारक सैनी पचेद्री तिर्यंच हैं। असै ए सब सख्यात गुणा घाटि कह्या ।

इगिपुरिसे बत्तीसं, देवी तज्जोगभजिददेवोघे ।
सगगुणगारेण गुणे, पुरुसा महिला य देवेसु ।।२७८।।

एकपुरुषे द्वात्रिंशद्देव्यः तद्योगभक्तदेवौघे ।
स्वकगुणकारेण गुणे, पुरुषा महिलाश्च देवेषु ।।२७८।।

टीका – देवगति विषै एक पुरुष के बत्तीस देवागना होइ । कोई ही देव कै बत्तीस सौ घाटि देवागना नाही । अर इद्रादिकनि के देवागना तिनतै सख्यात गुणी बहुत है । तथापि जिनके बहुत देवागना है, असे देव तौ थोरे है । अर बत्तीस देवागना जिनके है, असै प्रकीर्णकादिक देव घने तिनतै असख्यात गुणे है । तातै एक एक देव कै बत्तीस-बत्तीस देवागना की विवक्षा करि अधिक की न करि कही । सो बत्तीस देवागना अर एक देव मिलाए तैतीस भए, सो पूर्वै जो देवनि का परिमाण कह्या था, ताकौ तैतीस का भाग दीए जो एक भाग का परिमाण आवै, ताकौ एक करि गुणै तितना ही रह्या, सो इतने तौ देवगति विषै पुरुष जानने । अर याकौ बत्तीस गुणा कीए जो परिमाण होइ, तितनी देवागना जाननी ।

भावार्थ – देवराशि का तेतीस भाग मे एक भाग प्रमाण देव है, बत्तीस भाग प्रमाण देवागना है ।

देवेहिं सादिरेया, पुरिसा देवीहिं साहिया इत्थी ।
तेहिं विहीण सवेदो, रासी संढाण परिमाणं ।।२७९।।

देवैः सातिरेकाः, पुरुषाः देवीभि साधिकाः स्त्रियः ।
तैर्विहीनः सवेदो, राशिः षंढानां परिमाणम् ।।२७९।।

टीका – पुरुष वेदी देवनि का जो परिमाण कह्या, तीहि विषै पुरुष वेदी तिर्यंच, मनुष्यनि का परिमाण मिलाए, सर्व पुरुष वेदी जीवनि का परिमाण हो है। बहुरि देवागना का जो परिमाण कह्या तीहि विषै तिर्यंचणी वा मनुष्यणी का परिमाण मिलाए सर्व स्त्रीवेदी जीवनि का परिमाण हो है। बहुरि नवमा गुणस्थान का वेद रहित भाग तै लगाइ अयोग केवली पर्यंत जीवनि का सख्या रहित सर्व

संसारी जीवनि का परिमाण मे स्यो पुरुष वेदी अर स्त्री वेदी जीवनि का परिमाण घटाए जो अवशेष प्रमाण रहै, तितने नपुसकवेदी जीव जानने ।

गब्भण पुइत्थिसण्णी, सम्मुच्छणसण्णिपुण्णगा इदरा ।
कुरुजा असण्णिगब्भजणपुइत्थीवाणजोइसिया ॥२८०॥

थोवा तिसु संखगुणा, तत्तो आवलिअसंखभागगुणा ।
पल्लासंखेज्जगुणा, तत्तो सव्वत्थ संखगुणा ॥२८१॥

गर्भनपुस्त्रीसंज्ञिनः, सम्मूर्छनसंज्ञिपूर्णका इतरे ।
कुरुजा असंज्ञिगर्भजनपुस्त्रीवानज्योतिष्काः ॥२८०॥

स्तोकाः त्रिषु संख्यगुणाः, तत आवल्यसंख्यभागगुणाः ।
पल्यासंख्येयगुणाः, ततः सर्वत्र संख्यगुणाः ॥२८१॥

टीका – सैनी पचेंद्री गर्भज नपुसक वेदी, बहुरि सैनी पचेद्री गर्भज पुरुष वेदी, बहुरि सैनी पचेंद्री गर्भज स्त्री वेदी, बहुरि सम्मूर्छन सैनी पचेद्रिय पर्याप्त नपुसक वेदी, बहुरि सम्मूर्छन सैनी पचेद्री अपर्याप्त नपुसक वेदी, बहुरि भोग-भूमिया गर्भज सैनी पचेद्री पर्याप्त पुरुष वेदी वा स्त्री वेदी, बहुरि असैनी पचेंद्री गर्भज नपुसक वेदी, बहुरि असैनी पचेद्री गर्भज पुरुष वेदी, बहुरि असैनी पचेंद्री गर्भज स्त्री वेदी, बहुरि व्यतरदेव, अर ज्योतिषदेव-ए ग्यारा जीवराशि अनुक्रम तै ऊपरि-ऊपरि लिखनी ।

पूर्वै जो ग्यारा राशि कहे, तिनि विषै नीचली राशि सैनी पंचेद्री गर्भज नपुंसक वेदी सो सर्व तै स्तोक है । आठ बार सख्यात अर आवली का असख्यातवा भाग अर पल्य का असख्यातवा भाग अर पैसठि हजार पाच सै छत्तीस प्रतरागुल, इनिका भाग जगत्प्रतर कौ दीए, जो परिमाण आवै, तितने जानने ।

बहुरि याके ऊपरि सैनी पचेंद्री गर्भज पुरुष वेदी स्यो लगाइ, तीन राशि अनुक्रम तै सख्यात गुणा जानना ।

बहुरि चौथी राशि तै पचम राशि समूर्छन सैनी पचेद्री अपर्याप्त नपुंसक वेदी आवली का असख्यातवा भाग गुणा जानना ।

बहुरि इस पंचम राशि तै षष्ठराशि पल्य का असख्यातवा भाग गुणा जानना ।

बहुरि यातै असैनी पचेद्री गर्भज नपुंसक वेदी स्यो लगाइ, ज्योतिषी पर्यंत सप्तम, अष्टम, नवम, दशम, एकादशम राशि अनुक्रम तै सख्यात गुणा जानना । ऐसे वेद मार्गणा विषै जीवनि की सख्या कही ।

इति आचार्य श्रीनेमिचद्र सिद्धातचक्रवर्ती विरचित गोम्मटसार द्वितीय नाम पचसग्रह ग्रथ
की जीवतत्त्वप्रदीपिका नाम सस्कृत टीका के अनुसारि सम्यग्ज्ञान चन्द्रिका
नामा भाषा टीका के विषै जीवकाड विषै प्ररूपित जे वीसप्ररूपणा
तिनि विषै वेदमार्गणा प्ररूपणा नामा दशमा
अधिकार समाप्त भया ।

ससारी जीवनि का परिमाण मे स्यो पुरुष वेदी अर स्त्री वेदी जीवनि का परिमाण घटाए जो अवशेष प्रमाण रहै, तितने नपु सकवेदी जीव जानने ।

गब्भण पुइत्थिसण्णी, सम्मुच्छणसण्णिपुण्णगा इदरा ।
कुरुजा असण्णिगब्भजणपुइत्थीवाणजोइसिया ॥२८०॥

थोवा तिसु संखगुणा, तत्तो आवलिअसंखभागगुणा ।
पल्लासंखेज्जगुणा, तत्तो सव्वत्थ संखगुणा ॥२८१॥

गर्भनपुस्त्रीसंज्ञिनः, सम्मूर्छनसज्ञिपूर्णका इतरे ।
कुरुजा असंज्ञिगर्भजनपुस्त्रीवानज्योतिष्काः ॥२८०॥

स्तोकाः त्रिषु संख्यगुणाः, तत आवल्यसंख्यभागगुणाः ।
पल्यासंख्येयगुणाः, ततः सर्वत्र संख्यगुणाः ॥२८१॥

टीका – सैनी पचेंद्री गर्भज नपु सक वेदी, बहुरि सैनी पचेंद्री गर्भज पुरुष वेदी, बहुरि सैनी पचेंद्री गर्भज स्त्री वेदी, वहुरि सम्मूर्छन सैनी पचेंद्रिय पर्याप्त नपु सक वेदी, बहुरि सम्मूर्छन सैनी पचेंद्री अपर्याप्त नपु सक वेदी, बहुरि भोग-भूमिया गर्भज सैनी पचेंद्री पर्याप्त पुरुप वेदी वा स्त्री वेदी, बहुरि असैनी पचेंद्री गर्भज नपु सक वेदी, बहुरि असैनी पचेंद्री गर्भज पुरुष वेदी, बहुरि असैनी पचेंद्री गर्भज स्त्री वेदी, बहुरि व्यतरदेव, अर ज्योतिषदेव-ए ग्यारा जीवराशि अनुक्रम तै ऊपरि-ऊपरि लिखनी ।

पूर्वै जो ग्यारा राशि कहे, तिनि विषै नीचली राशि सैनी पंचेंद्री गर्भज नपुँसक वेदी सो सर्व तै स्तोक है । आठ बार सख्यात अर आवली का असख्यातवा भाग अर पल्य का असख्यातवा भाग अर पैंसठि हजार पाच सै छत्तीस प्रतरागुल, इनिका भाग जगत्प्रतर कौ दीए, जो परिमाण आवै, तितने जानने ।

बहुरि याके ऊपरि सैनी पचेंद्री गर्भज पुरुष वेदी स्यो लगाइ, तीन राशि अनुक्रम तै सख्यात गुणा जानना ।

बहुरि चौथी राशि तै पचम राशि समूर्छन सैनी पचेंद्री अपर्याप्त नपुंसक वेदी आवली का असख्यातवा भाग गुणा जानना ।

वहुरि इस पंचम राशि तै षष्ठराशि पल्य का असंख्यातवा भाग गुणा जानना ।

वहुरि यातै असैनी पंचेद्री गर्भज नपुंसक वेदी स्यो लगाइ, ज्योतिषी पर्यंत सप्तम, अष्टम, नवम, दशम, एकादशम राशि अनुक्रम तै सख्यात गुणा जानना । असै वेद मार्गणा विषै जीवनि की सख्या कही ।

इति आचार्य श्रीनेमिचद्र सिद्धातचक्रवर्ती विरचित गोम्मटसार द्वितीय नाम पचसग्रह ग्रथ
की जीवतत्त्वप्रदीपिका नाम सस्कृत टीका के अनुसारि सम्यग्ज्ञान चन्द्रिका
नामा भाषा टीका के विषै जीवकाड विषै प्ररूपित जे वीसप्ररूपणा
तिनि विषै वेदमार्गणा प्ररूपणा नामा दशमा
अधिकार समाप्त भया ।

ग्याहरवां अधिकार : कषाय-मार्गणा-प्ररूपणा

॥ मंगलाचरण ॥

पावन जाकौ श्रेयमग, मत जाकौ श्रियकार ।
आश्रय श्री श्रेयांस कौ, करहु श्रेय मम सार ॥

आगे शास्त्रकर्ता आचार्य चौदह गाथानि करि कषाय मार्गणा का निरूपण करै है –

सुहदुक्खसुबहुसस्सं, कम्मक्खेत्तं कसेदि जीवस्स ।
संसारदूरमेरं, तेण कसाओ त्ति णं बेंति[1] ॥२८२॥

सुखदुःखसुबहुसस्यं, कर्मक्षेत्रं कृषति जीवस्य ।
संसारदूरमर्यादं, तेन कषाय इतीमं ब्रुवंति ॥२८२॥

टीका – जा कारण करि संसारी जीव कै कर्म जो हैं ज्ञानावरणादिक मूल, उत्तर-उत्तरोत्तर प्रकृतिरूप शुभ-अशुभ कर्म, सोई भया क्षेत्र कहिए, अन्न उपजने का आधार भूत स्थान, ताहि कृषति कहिए हलादिक तै जैसे खेत कौं संवारिए, तैसे जो संवारे है, फल निपजावने योग्य करै है, तीहिं कारण करि क्रोधादि जीव के परिणाम कषाय हैं, असा श्रीवर्धमान भट्टारक के गौतम गणधरादिक कहै हैं। तातै महाधवल[※] द्वितीय नाम कषायप्राभृत आदि विषै गणधर सूत्र के अनुसारि जैसे कषायनि का स्वरूप, संख्या, शक्ति, अवस्था, फल आदि कहे हैं। तैसे ही मैं कहोगा। अपनी रुचिपूर्वक रचना न करौंगा। असा आचार्य का अभिप्राय जानना।

कैसा है कर्मक्षेत्र ? इंद्रियनि का विषय संबंध तै उत्पन्न भया हर्ष परिणाम-रूप नानाप्रकार सुख अर शारीरिक, मानसिक पीडा रूप नाना प्रकार दुख सोई बहुसस्य कहिए बहुत प्रकार अन्न, सो जीहिं विषै उपज्या है असा है।

बहुरि कैसा है कर्मक्षेत्र ? अनादि अनंत पंच परावर्तन रूप संसार है, मर्यादा सीमा जाकी असा है।

---

१ षट्खंडागम – धवला पुस्तक १, पृ १४३, गा सं ९०

※ यह जयधवल द्वितीय नाम कषायप्राभृत है।

भावार्थ – जैसे किसी का किंकर पालती सो खेत विषै बोया हूवा बीज, जैसे बहुत फल कौ प्राप्त होइ वा बहुत सीव पर्यंत होइ, तैसे हलादिक तै धरती का फाडना इत्यादिक कृषिकर्म कौ करै है ।

तैसे संसारी जीव का किंकर क्रोधादि कषाय नामा पालती, सो प्रकृति, प्रदेश, स्थिति, अनुभाग रूप कर्म का बध, सो ही भया खेत, तीहि विषै मिथ्यात्वादिक परिणाम रूप बीज, जैसे कालादिक की सामग्री पाइ, अनेक प्रकार सुख-दु ख रूप बहुत फल कौ प्राप्त होइ वा अनत ससार पर्यंत फल कौ प्राप्त होइ । तैसे कार्य कौ करै, तातै इन क्रोधादिकनि का कषाय असा नाम कह्या, **'कृषि विलेखने'** इस धातु का अर्थ करि कषाय शब्द का निरुक्तिपूर्वक निरूपण आचार्य करि कीया है ।

सम्मत्तदेससयलचरित्तजहक्खाद–चरणपरिणामे ।
घादंति वा कषाया, चउसोलअसंखलोगमिदा ॥२८३॥

सम्यक्त्वदेशसकलचरित्रयथाख्यातचरणपरिणामान् ।
घातयंति वा कषायाः, चतुः षोडशासख्यलोकमिताः ॥२८३॥

टीका – अथवा **'कषंतीति कषायाः'** जे हतै, घात करै, तिनिकौ कषाय कहिए । सो ए क्रोधादिक है, ते सम्यक्त्व वा देश चारित्र वा यथाख्यात चारित्र रूप आत्मा के विशुद्ध परिणामनि कौं घातै है । तातै इनिका कषाय असा नाम है । यहु कषाय शब्द का दूसरा अर्थ अपेक्षा लक्षण कह्या ।

तहा अनतानुबधी क्रोधादिक है, तो तत्त्वार्थ श्रद्धानरूप सम्यक्त्व कौ घातै है, जातै अनत ससार का कारण मिथ्यात्व वा अनत ससार अवस्थारूप काल, ताहि **अनुबंध्नंति** कहिए सबधरूप करै, तिनकौं अनतानुबधी कहिए ।

बहुरि अप्रत्याख्यानावरण क्रोधादिक कहे, ते अणुव्रतरूप देश चारित्र कौ घातै है, जातै अप्रत्याख्यान कहिए ईषत् प्रत्याख्यान किंचित् त्यागरूप अणुव्रत, ताकौ **आवृण्वंति** कहिए आवरै, नष्ट करै, ताकौ अप्रत्याख्यानावरण कहिए ।

बहुरि प्रत्याख्यानावरण क्रोधादिक है, ते महाव्रतरूप सकल चारित्र कौं घातै हैं, जातै प्रत्याख्यान कहिए सकल त्यागरूप महाव्रत, ताकौ **आवृण्वंति** कहिए आवरै, नष्ट करै, ताकौ प्रत्याख्यानावरण कहिए ।

बहुरि सज्वलन क्रोधादिक है, ते सकल कषाय का अभावरूप यथाख्यात चारित्र कौं घातै है, जातै 'स' कहिए समीचीन, निर्मल यथाख्यात चारित्र, ताकौं **'ज्वलंति'** कहिए दहन करै, तिनकौ सज्वलन कहिए। इस निरुक्ति तै संज्वलन का उदय होते सतै भी सामायिकादि अन्य चारित्र होने का अविरोध सिद्ध हो है।

अैसा यह कषाय सामान्यपनै एक प्रकार है। विशेषपनै अनंतानुबधी, अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण, सज्वलन भेद तै च्यारि प्रकार है। बहुरि इनके एक-एक के क्रोध, मान, माया, लोभ करि च्यारि-च्यारि भेद कीजिए तब सोलह प्रकार हो हैं। अनतानुबधी क्रोध, मान, माया, लोभ, अप्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ, प्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ, सज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ अैसे सोलह भेद भए।

बहुरि उदय स्थानको के विशेष की अपेक्षा असंख्यात लोक प्रमाण है, जातै कषायनि का कारणभूत जो चारित्रमोह, ताकि प्रकृति के भेद असख्यात लोक प्रमाण है ।

सिल-पुढवि-भेद-धूली-जल-राइ-समाणओ हवे कोहो ।
णारय-तिरिय-णरामर-गईसु उप्पायओ कमसो [१] ॥२८४॥

शिलापृथ्वीभेदधूलिजलराशिसमानको भवेत् क्रोधः ।
नारकतिर्यग्नरामरगतिषूत्पादकः क्रमशः ॥२८४॥

टीका–शिला भेद, पृथ्वी भेद, धूलि रेखा, जल रेखा समान क्रोध कषाय सो अनुक्रम तै नारक, तिर्यंच, मनुष्य, देव गति विषै जीव कौ उपजावन हारा है। सोई कहिए हैं–

जैसै शिला, जो पाषाण का भेद खड होना, सो बहुत घने-काल गए बिना मिलै नाही, तैसै बहुत घने काल गए बिना क्षमारूप मिलन कौ न प्राप्त होइ, अैसा जो उत्कृष्ट शक्ति लीए क्रोध, सो जीव कौ नरक गति विषै उपजावै है।

बहुरि जैसै पृथ्वी का भेद-खड होना, सो घने काल गए विना मिलै नाहीं, तैसै घने काल गए बिना, जो क्षमारूप मिलने कौं न प्राप्त होइ अैसा जो अनुत्कृष्ट शक्ति लीएं क्रोध, सो जीव कौ तिर्यंच गति विषै उपजावै है।

---

१ षट्खडागम–धवला पुस्तक १, पृ ३५२, गा स १७४

वहुरि जैसें धूलि विषै करी हुइ लीक, सो थोरा काल गएं बिना मिलै नाही, तैसें थोरा काल गए बिना जो क्षमारूप मिलन कौ प्राप्त न होइ, असा अजघन्य शक्ति लिएं क्रोध, सो जीव कौ मनुष्य गति विषै उपजावै है ।

बहुरि जैसें जल विषै करी हुई लीक, बहुत थोरा काल गए बिना मिलै नाही, तैसें बहुत थोरा काल गए बिना जो क्षमारूप मिलन को प्राप्त न होइ, असा जो जघन्य शक्ति लीए क्रोध, सो जीव कौ देव गति विषै उपजावै है । तिस-तिस उत्कृष्टादि शक्ति युक्त क्रोधरूप परिणम्या जीव, सो तिस-तिस नरक आदि गति विषै उपजने कौ कारण आयु-गति आनुपूर्वी आदि प्रकृतिनि कौं बांधै है; असा अर्थ जानना ।

इहा राजि शब्द रेखा वाचक जानना; पंक्ति वाचक न जानना । बहुरि इहा शिला भेद आदि उपमान अर उत्कृष्ट शक्ति आदि क्रोधादिक उपमेय, ताका समानपना अतिघना कालादि गए बिना मिलना न होने की अपेक्षा जानना ।

सेलट्ठि-कट्ठ-वेत्ते, णियभेएणणुहरंतओ माणो ।
णारय-तिरिय-णरामर-गईसु उप्पायओ कमसो[1] ॥२८५॥

शैलास्थिकाष्ठवेत्रान् निजभेदेनानुहरन् मानः ।
नारकतिर्यग्नरामरगतिषूत्पादकः क्रमशः ॥२८५॥

टीका – शैल, अस्थि, काष्ठ, बेत समान जो अपने भेदनि करि उपमीयमान च्यारि प्रकार मान कषाय, सो क्रम तै नारक, तिर्यंच, मनुष्य, देव गति विषै जीव कौ उपजावै है । सो कहिए है –

जैसैं शैल जो पाषाण सो बहुत घने काल बिना नमावने योग्य न होइ, तैसैं बहुत घने काल बिना जो विनयरूप नमन कौ प्राप्त न होइ, असा जो उत्कृष्ट शक्ति लीए मान, सो जीवनि कौ नरक गति विषै उपजावै है ।

बहुरि जैसैं अस्थि जो हाड, सो घने काल बिना नमावने योग्य न होइ, तैसैं घने काल बिना जो विनयरूप नमन कौ प्राप्त न होइ । असा जो अनुत्कृष्ट शक्ति लीए मान, सो जीव कौ तिर्यंच गति विषै उपजावै है ।

---

१ षट्खडागम धवला पुस्तक १, पृ० ३५२, गा० स० १७५

बहुरि जैसे काठ थोरा काल बिना नमावने योग्य न होइ, तैसे थोरा काल बिना जो विनयरूप नमन कौ प्राप्त न होइ। असा जो अजघन्य शक्ति लीए मान, सो जीव कौ मनुष्य गति विषै उप जावै है।

बहुरि जैसे बैत की लकडी बहुत थोरे काल विना नमावने योग्य न होइ, तैसे बहुत थोरा काल बिना जो विनयरूप नमन कौ प्राप्त न होइ। असा जो जघन्य शक्ति लीए मान, सो जीव कौ देव गति विषै उपजावै है। इहा भी पूर्वोक्त प्रकार प्रकृति बध होना वा उपमा, उपमेय का समानपना जानना।

वेणूवमूलोरब्भ-सिंगे गोमुत्तए य खोरप्पे।
सरिसी माया णारय-तिरिय-णरामर-गईसु खिवदि जियं[१] ॥२८६॥

वेणूपमूलोरभ्रकशृंगेण गोमूत्रेण च क्षुरप्रेण।
सदृशी माया नारकतिर्यग्नरामरगतिषु क्षिपति जीवम् ॥२८६॥

टीका – वेणूयमूल, उरभ्रकशृ ग, गोमूत्र, क्षुर समान माया ठिगनेरूप परिणति, सो क्रम तै नारक, तिर्यंच, मनुष्य, देव गति विषै जीव कौ उपजावै है। सोई कहिए है –

जैसे वेणूयमूल, जो बास की जड की गाठ सो बहुत घने काल बिना सरल न होइ, तैसे बहुत घने काल बिना जो सरल न होइ, असा जो उत्कृष्ट शक्ति कौं लीए माया, सो जीव कौ नरक गति विषै उपजावै है।

बहुरि जैसे उरभ्रकशृ ग, जो मीढे का सीग, सो घने काल बिना सरल न होइ, तैसे घने काल बिना जो सरल न होइ, असा जो अनुत्कृष्ट शक्ति लीए माया, सो जीव कौं तिर्यंच गति विषै उपजावै है।

बहुरि जैसे गोमूत्र, जो गायमूत्र की धारा, सो थोरा काल बिना सरल न होइ, तैसे थोरा काल बिना सरल न होइ, असी अजघन्य शक्ति लीए माया, सो जीव कौं मनुष्य गति विषै उपजावै है।

बहुरि जैसे खुर, जो पृथ्वी ऊपरि वृषभादिक का खोज, सो बहुत थोरा काल बिना सरल न होइ, तैसे बहुत थोरा काला बिना जो सरल न होइ, असी जो जघन्य शक्ति लीए माया, सो जीव कौं देव गति विषै उपजावै है। इहा भी पूर्वोक्त प्रकार प्रकृति बन्ध होना वा उपमा उपमेय का समानपना जानना।

---

१ – षट्खडागम–धवला पुस्तक १, पृ ३५२ गाथा स १७६।

किमिराय-चक्क-तणु-मल-हरिद्द-राएण सरिसओ लोहो ।
णारय-तिरिक्ख-माणुस-देवेसुप्पायओ कमसो[1] ॥२८७॥

क्रिमिरागचक्रतनुमलहरिद्रारागेण सदृशो लोभः ।
नारकतिर्यग्मानुषदेवेषु उत्पादकः क्रमशः ॥२८७॥

टीका – क्रिमिराग, चक्रमल, तनुमल, हरिद्राराग समान जो लोभ विषयाभिलाषरूप परिणाम, सो क्रम तै नरक, तिर्यंच, मनुष्य, देव गति विषै उपजावै है । सोई कहिए है –

जैसै क्रिमिराग कहिए किरमिची रंग, सो बहुत घने काल गये बिना नष्ट न होइ, तैसै जो बहुत घने काल बिना नष्ट न होइ, अैसा जो उत्कृष्ट शक्ति लीए लोभ, सो जीव कौ नरक गति विषै उपजावै है ।

बहुरि जैसै चक्रमल जो पहिये का मैल, सो घने काल बिना नष्ट न होइ, तैसै घने काल बिना नष्ट न होइ, अैसा जो अनुत्कृष्ट शक्ति लीए लोभ, सो जीवकौं तिर्यंच गति विषै उपजावै है ।

बहुरि जैसै तनुमल, जो शरीर का मैल, सो थोरा काल बिना नष्ट न होइ, तैसै थोरा काल बिना नष्ट न होइ अैसा जो अजघन्य शक्ति लीए लोभ, सो जीव कौ मनुष्य गति विषै उपजावै है ।

बहुरि जैसै हरिद्राराग कहिए हलद का रग सो बहुत थोरा काल बिना नष्ट न होइ, तैसै बहुत थोरे काल बिना नष्ट न होइ, अैसा जो जघन्य शक्ति लीए लोभ, सो जीव कौ देव गति विषै उपजावै है । अैसै जिन-जिन कषायनि तै जो-जो गति का उपजना कह्या, तिन-तिन कषायनि तै तिस ही तिस गति सबधी आयु वा आनुपूर्वी इत्यादिक का बध जानना ।

णारय-तिरिक्ख-णर-सुर-गईसु उप्पण्णपढमकालम्हि ।
कोहो माया माणो, लोहुदओ अणियमो वाऽपि ॥२८८॥

नारकतिर्यग्नरसुरगतिषूत्पन्नप्रथमकाले ।
क्रोधो माया मानो, लोभोदयः अनियमो वाऽपि ॥२८८॥

---

१ – षट्खडागम-धवला, पुस्तक १, पृ. ३५२, गा स १७७.

टीका – नरक, तिर्यंच, मनुष्य, देव विषै उत्पन्न भया, जीव कै पहिला समय विषै क्रम तै क्रोध, मान, माया लोभ का उदय हो है । नारकी उपजै तहा उपजते ही पहले समय क्रोध कषाय का उदय होइ । असै तिर्यंच कै माया का, मनुष्य कै मान का, देव कै लोभ का उदय जानना । सो असा नियम कषायप्राभृत दूसरा सिद्धात का कर्ता यतिवृषभ नामा आचार्य, ताके अभिप्राय करि जानना ।

बहुरि महाकर्म प्रकृति प्राभृत प्रथम सिद्धात का कर्ता भूतबलि नामा आचार्य, ताके अभिप्राय करि पूर्वोक्त नियम नाही । जिस तिस कोई एक कषाय का उदय हो है । असै दोऊ आचार्यनि का अभिप्राय विषै हमारे सदेह है, सो इस भरत क्षेत्र विषै केवली श्रुतकेवली नाही, वा समीपवर्ती आचार्यनि कै उन आचार्यनि तै अधिक ज्ञान का धारक नाही, तातै जो विदेह विषै गये तीर्थंकरादिक के निकटि शास्त्रार्थ विषै सशय, विपर्यय, अनध्यवसाय का दूर होने करि निर्णय होइ, तब एक अर्थ का निश्चय होइ तातै हमौने दोऊ कथन कीए है ।

अप्पपरोभय-बाधण बंधासंजम-णिमित्त-कोहादी ।
जेंसि णत्थि कसाया, अमला अकसाइणो जीवा[1] ॥२८६॥

आत्मपरोभयबाधनबंधासंयमनिमित्तक्रोधादयः ।
येषा न संति कषाया, अमला अकषायिणो जीवाः ॥२८९॥

टीका – आपकौं व परकौं वा दोऊ कौं बधन के वा बाधा के वा असयम के कारणभूत असै जु क्रोधादिक कषाय वा पुरुष वेदादिरूप नोकषाय, ते जिनके न पाइये, ते द्रव्यकर्म, भावकर्म, नोकर्म मल करि रहित सिद्ध भगवान अकषायी जानने। उपशात कषाय से लेकर च्यारि गुणस्थानवर्ती जीव भी अकषाय निर्मल हैं । तिनकै गुणस्थान प्ररूपणा ही करि अकषायपना की सिद्धि जाननी । तहा कोऊ जीव कै तौ क्रोधादि कषाय असै हो है, जिनतै आप तै आप को बाधै, आप ही आप के मस्तकादिक का घात करै । आप ही आप कै हिंसादि रूप असयम परिणाम करै । बहुरि कोई जीव के क्रोधादि कषाय असै हो हैं, जिनतै और जीवनि कौं बाधै, मारै, उनके असयम परिणाम करावै । बहुरि कोई जीव कै क्रोधादि कषाय असै हो हैं, जिनतै आप का वा और जीवनि का बाधना, घात करना, असयम होना होइ, सो असै ए कषाय अनर्थ के मूल हैं ।

---

१ षट्खडागम–धवला पुस्तक १, पृ० ३५३, गाथा स० १७८.

कोहादिकसायाणं, चउचउदसवीस होंति पदसंखा ।
सत्तीलेस्साआउगबंधाबंधगदभेदेहिं ॥२९०॥

क्रोधादिकषायाणां, चत्वारः चतुर्दश विंशतिः भवंति पदसंख्याः ।
शक्तिलेश्यायुष्कबंधाबंधगतभेदैः ॥२९०॥

टीका – क्रोध-मान-माया-लोभ कषाय, तिनकी शक्ति स्थान के भेद करि च्यारि संख्या है । लेश्या स्थान के भेद करि चौदह सख्या है । आयुर्बल के बंधने के अबंधने के स्थान भेद करि बीस संख्या है ।

ते स्थान आगे कहिए हैं –

सिल-सेल-वेणुमूल-क्किमिरायादी कमेण चत्तारि ।
कोहादिकसायाणं, सत्ति पडि होंति णियमेण ॥२९१॥

शिलाशैलवेणुमूलक्रिमिरागादीनि क्रमेण चत्वारि ।
क्रोधादिकषायाणां, शक्ति प्रति भवंति नियमेन ॥२९१॥

टीका – क्रोधादिक जे कषाय, तिनिकै शक्ति कहिए अपना फल देनें की सामर्थ्य, ताकी अपेक्षा तै निश्चय करि च्यारि स्थान है । ते अनुक्रम तै तीव्रतर, तीव्र, मद, मंदतर, अनुभागरूप वा उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, अजघन्य, जघन्य अनुभाग रूप जानने । तहा शिलाभेद, शैल, वेणुमूल, क्रिमिराग ए तौ उत्कृष्ट शक्ति के उदाहरण जानने । आदि शब्द तै पूर्वोक्त अनुत्कृष्टादि शक्ति के उदाहरण दृष्टातमात्र कहे है, ते सर्व जानने । ए दृष्टात प्रगट व्यवहार का अवधारण करि है । अर परमागम का व्यवहारी आचार्यनि करि मदबुद्धी शिष्य समझावने के अर्थि व्यवहार रूप कीए है । जातै दृष्टात के बल करि ही मदबुद्धी समझै हैं । तातै दृष्टात की मुख्यता करि जे दृष्टात के नाम, तेई शक्तिनि के नाम प्रसिद्ध कीएं है ।

किण्हं सिलासमाणे, किण्हादी छक्कमेण भूमिम्हि ।
छक्कादी सुक्को त्ति य, धूलिम्मि जलम्मि सुक्केक्का ॥२९२॥

कृष्णा शिलासमाने, कृष्णादयः षट् क्रमेण भूमौ ।
षट्कादिः शुक्लेति च धूलौ जले शुक्लैका ॥२९२॥

टीका – शिला भेद समान जो क्रोध का उत्कृष्ट शक्ति स्थान, तीहि विषै एक कृष्ण लेश्या ही है । यद्यपि इस उत्कृष्ट शक्ति स्थान विषै षट्स्थान पतित सक्लेश-हानि लीए असख्यातलोक प्रमाण कषायनि के उदय स्थान है । बहुरि तथापि ते सर्व स्थान कृष्णलेश्या ही के है, कृष्णलेश्या ही के उत्कृष्ट, मध्यम, भेदरूप जानने ।

षट्स्थान पतित सक्लेश–हानि का स्वरूप असा जानना – जेते कषायनि के अविभाग प्रतिच्छेद पहिलै थे, तिनसौ घाटि होने लगे ते अनत भागहानि, असख्यात भागहानि, सख्यात भागहानि, सख्यात गुणहानि, असख्यात गुणहानि, अनत गुणहानि रूप घटे । असै तीव्र कषाय घटने का नाम षट्स्थान पतित सक्लेश हानि कहिए। कषायनि के अविभाग प्रतिच्छेद अनत है । तिनकी अपेक्षा षट्स्थान पतित हानि सभवै है । अर स्थान भेद असख्यात लोक प्रमाण ही हैं । नियम शब्द करि, ताका अत स्थान विषै उत्कृष्ट शक्ति की व्युच्छित्ति हो है । बहुरि भूमि भेद समान क्रोध का अनुत्कृष्ट शक्ति स्थान, तीहि विषै अनुक्रम तै छहो लेश्या पाइए हैं । सो कहिए है – भूमि भेद समान क्रोध का अनुत्कृष्ट शक्तिस्थान का पहिला उदय स्थान तै लगाइ, षट्स्थान पतित सक्लेशहानि लीए, असख्यात लोक प्रमाण उदय स्थानकनि विषै तौ केवल कृष्णलेश्या ही है । कृष्ण लेश्या ही का मध्य भेद पाइए है, जातै अन्य लेश्या का लक्षण तहा नाही ।

बहुरि इहा तै आगै षट्स्थान पतित सक्लेश-हानि को लीए असख्यात लोक प्रमाण स्थानकनि विषै मध्यम कृष्णलेश्या, उत्कृष्ट नील लेश्या पाइए है । जातै इहा तिनि दोऊ लेश्यानि का लक्षण सभवै है । बहुरि इनि तै आगै षट्स्थान पतित सक्लेश-हानि लीए असख्यात लोक प्रमाण उदय स्थानकनि विषै मध्यम कृष्णलेश्या, मध्यम नील लेश्या, उत्कृष्ट कपोत लेश्या पाइए है, जातै इहा तिनि तीनो लेश्यानि के लक्षण सभवै है । बहुरि इनितै आगै षट्स्थान पतित सक्लेश-हानि लीए असख्यात लोक प्रमाण उदयस्थानकनि विषै मध्यम कृष्णलेश्या, मध्यम नील लेश्या, मध्यम कपोत [लेश्या, मध्यम पीत लेश्या अर जघन्य पद्म लेश्या, जघन्य पीत लेश्या पाइए है,]❀ जातै इहा तिनि च्यार्यो [पाचौं] लेश्यानि के लक्षण सभवै है । बहुरि इनतै षट्स्थान पतित सक्लेश-हानि लीए असख्यात लोक प्रमाण उदयस्थानकनि विषै मध्यम कृष्ण, नील, कपोत, पीत लेश्या अर जघन्य पद्म लेश्या पाइए है, जातै इहा तिनि पच लेश्यानि का लक्षण सभवै है । बहुरि इनितै षट्स्थान पतित सक्लेश-हानि लीए

❀ 'ख' प्रति मे इतना और दिया गया है ।

असंख्यात लोक प्रमाण स्थानकनि विषै मध्यम कृष्ण, नील, कपोत, पीत, पद्म लेश्या अर जघन्य शुक्ल लेश्या पाइए है । जातै इहा तिनि छहौ लेश्यानि का लक्षण सभवै है । अैसै क्रोध का अनुत्कृष्ट शक्तिस्थान का जे स्थान भेद, तिनि विषै क्रम तै छहौ लेश्या के स्थानक जानने । इहा अतस्थान विषै उत्कृष्टशक्ति की व्युच्छित्ति हुई । बहुरि धूली रेखा समान क्रोध का अजघन्य शक्तिस्थान, ताके स्थानकनि विषै छह लेश्या तै एक एक घाटि शुक्ल लेश्या पर्यत लेश्या पाइए है । सोई कहिए है – धूली रेखा समान क्रोध का प्रथम स्थान तै लगाइ, षट्स्थान पतित सक्लेश-हानि को लीए असख्यात लोक प्रमाण स्थानकनि विषै जघन्य कृष्ण लेश्या, मध्यम नील, कपोत, पीत, पद्म, शुक्ल लेश्या पाइए है; जातै इहा छहो लेश्यानि के लक्षण सभवै है । इहा अतस्थान विषै कृष्णलेश्या का विच्छेद हुवा । बहुरि इहा तै आगै इस ही शक्ति का षट्स्थान पतित सक्लेश-हानि लीए असख्यात लोक प्रमाण स्थानकनि विषै जघन्य नील लेश्या, मध्यम कपोत, पीत, पद्म, शुक्ल लेश्या पाइए है । जातै इहा तिनि पच लेश्यानि का लक्षण सभवै है । इहा अतस्थानकनि विषै नील लेश्या का विच्छेद हुवा ।

बहुरि इहा तै आगै षट्स्थान पतित सक्लेश-हानि लीए असंख्यात लोक प्रमाण स्थानकनि विषै जघन्य कपोत लेश्या मध्यम पीत, पद्म, शुक्ल, लेश्या पाइए है, जातै इहा तिनि च्यारि लेश्यानि के लक्षण सभवै है । इहा अतस्थान विषै कपोत लेश्या का विच्छेद हुवा । अैसै सक्लेश परिणामनि की हानि होते सते जो मदकषायरूप परिणाम भया, ताकौ विशुद्ध परिणाम कहिए । ताके अनते अविभाग प्रतिच्छेद है, सो तिनकी अनत भागवृद्धि, असख्यात भागवृद्धि, सख्यात भागवृद्धि, सख्यात गुणवृद्धि, असख्यात गुणवृद्धि, अनतगुण वृद्धिरूप जो वृद्धि, सो षट्स्थान पतित विशुद्धवृद्धि कहिए, सो उस च्यारि लेश्या का स्थान तै आगै षट्स्थान पतित विशुद्धवृद्धि लीए असख्यात लोक प्रमाण स्थानकनि विषै उत्कृष्ट पीत लेश्या, मध्यम पद्म, शुक्ल लेश्या पाइए है, जातै इहां तीन तिनि लेश्यानि ही का लक्षण सभवै है । इहा अतस्थानकनि विषै पीतलेश्या का विच्छेद हुवा ।

बहुरि इहा तै षट्स्थान पतित विशुद्ध वृद्धि लीए असख्यात लोक प्रमाण स्थानकनि विषै उत्कृष्ट पद्मलेश्या, मध्यम शुक्ललेश्या ही पाइए है । जातै इहा तिनि दोय ही लेश्यानि के लक्षण सभवै है । इहा अतस्थान विषै पद्मलेश्या का विच्छेद हुवा ।

बहुरि इहा तै पट्स्थान पतित विशुद्धि वृद्धि लीए असख्यात लोक प्रमाण स्थानकनि विषै मध्यम शुक्ललेश्या ही पाइए है, जातै इहा तिस ही लेश्या के लक्षण पाइए है। असै धूली रेखा समान क्रोध का अजघन्य शक्तिस्थान के जे उदयरूप स्थानक, तिनि विषै लेश्या कही। इहा अतस्थान विषै अजघन्य शक्ति की व्युच्छित्ति भई। बहुरि इहा तै आगे जल रेखा समान क्रोध का जघन्य शक्तिस्थान, ताके षट्-स्थान पतित विशुद्धि वृद्धि लीए असख्यात लोक प्रमाण स्थानकनि विषै मध्यम शुक्ल-लेश्या पाइए है। बहुरि याही के अतस्थान विषै उत्कृष्ट शुक्ल लेश्या पाइए है, असै च्यारि प्रकार शक्तियुक्त क्रोध विषै लेश्या अपेक्षा चौदह स्थानक कहे। उत्कृष्ट शक्ति स्थान विषै एक, अनुत्कृष्ट शक्तिस्थानकनि विषै छह, अजघन्य शक्तिस्थानक विषै छह, जघन्य शक्तिस्थानक विषै एक असै चौदह कहे।

इहा किसी कै भ्रम होइगा कि ए च्यारि शक्तिस्थानक कहे, इन ही का अनतानुवधी आदि नाम है ?

सो नाही, जो तैसै कहिए तौ षष्ठगुणस्थान विषै सज्वलन ही है, तहा एक शुक्ललेश्या ही सभवै, जातै इहा जघन्य शक्तिस्थान विषै एक शुक्ल लेश्या ही कही है, सो षष्ठ गुणस्थान विषै तौ लेश्या तीन हैं। तातै अनतानुवधी इत्यादि भेद सम्य-क्त्वादि घातने की अपेक्षा है, ते अन्य जानने। बहुरि ये शक्तिस्थान के भेद तीव्र, मद अपेक्षा है, ते अन्य जानने। सो जैसै ए क्रोध के चौदह स्थान लेश्या अपेक्षा कहे, तैसै ही उत्कृष्टादिक शक्तिस्थानकनि विषै मान के वा माया के वा लोभ के भी जानने।

सेलगकिण्हे सुण्णं, णिरयं च य भूगएगबिट्ठाणे।
णिरय इगिबितिआऊ, तिट्ठाणे चारि सेसपदे ॥२९३॥

शैलगकृष्णे शून्यं, निरय च च भूगैकद्विस्थाने।
निरयमेकद्वित्र्यायुस्त्रिस्थाने चत्वारि शेषपदे ॥२९३॥

टीका – शिला भेद समान उत्कृष्ट क्रोध का शक्तिस्थान विषै असख्यात-लोक प्रमाण उदयस्थान कहे, तिनि विषै केई स्थान असै हैं जिनिविषै कोऊ आयु बधै नाही। सो यत्र विषै तहा शून्य लिखना। जातै जहा अति तीव्र कषाय होइ, तहा आयु का वध होइ नाही। बहुरि तहा ही ऊपरि के कई स्थान थोरे कषाय

लीए हैं। तिनिविषै एक नरकायु ही बधै है, सो इहा एक का अक लिखना। बहुरि तातै अनतगुण घटता सक्लेश लीए पृथ्वी भेद समान कषाय विषै के जे कृष्णलेश्या के स्थान है वा कृष्ण वा नील दोय लेश्या के जे स्थान है, तिनिविषै एक नरक आयु ही बधै है। सो तिनि दोय स्थाननि विषै एक-एक का अक लिखना। बहुरि तिस ही विषै केइ अगले स्थान कृष्ण, नील, कपोत तीन लेश्या के है, सो तिनिविषै केई स्थाननि विषै तौ एक नरकायु ही का बध हो है। बहुरि केई अगले स्थाननि विषै नरक वा तिर्यच दोय आयु बधै है। बहुरि केई अगले स्थाननि विषै नरक, तिर्यंच मनुष्य तीन आयु बधै है। सो तीन लेश्या के स्थान विषै एक, दोय, तीन का अक लिखना। बहुरि तिस ही पृथ्वी के भेद समान शक्तिस्थान विषै केई कृष्ण नील, कपोत, पीत इनि च्यारि लेश्या के स्थान है। केइक कृष्णादि पद्म लेश्या पर्यंत पच के स्थान है। केइक कृष्णादिक शुक्ल लेश्या पर्यंत षट्लेश्या के स्थान है। सो इन तीनू ही जायगा नरक, तिर्यच, मनुष्य, देव सबधी च्यार्यो ही आयु बधै है, सो तीनो जायगा च्यारि-च्यारि का अक लिखना।

धूलिगछक्कट्ठाणे, चउराऊतिगदुगं च उवरिल्लं।
पणचदुठाणे देवं, देवं सुण्णं च तिट्ठाणे ॥२९४॥

धूलिगषट्कस्थाने, चतुरायूषि त्रिकद्विकं चोपरितनम्।
पंचचतुर्थस्थाने देवं देव शून्यं च तृतीयस्थाने ॥२९४॥

टीका - बहुरि पूर्वोक्त स्थान तै अनतानतगुणा घाटि सक्लेश लीए धूलि रेखा समान शक्तिस्थान विषै केई कृष्णादि शुक्ललेश्या पर्यत षटलेश्या के स्थान है। तिनि विषै केई स्थाननि विषै तौ नरकादिक च्यार्यो आयु बधे हैं। केई अगले स्थाननि विषै नरकायु बिना तीन आयु ही बधै है। केई अगले स्थाननि विषै मनुष्य, देव दोय ही आयु बधै हैं। सो तहा च्यारि, तीन, दोय के अक लिखने। बहुरि तिस ही धूलि रेखा समान शक्तिस्थान विषै केई कृष्ण लेश्या बिना पच लेश्या के स्थान है। केई कृष्ण नील बिना च्यारि लेश्या के स्थान है। इनि दोऊ जायगा एक देवायु ही बधै हैं। सो दोऊ जायगा एक-एक का अक लिखना। बहुरि तिस ही धूलि रेखा समान शक्तिस्थान विषै केई पीतादि तीन शुभलेश्या सबधी स्थान है। तिनिविषै केई स्थाननि विषै तौ एक देवायु ही बधै है, तहा एक का अक लिखना। बहुरि केई

अगले स्थान तीव्र विशुद्धता को लीए हैं, तहां किसी ही आयु का बंध न हो है, सो तहां शून्य लिखना ।

सुण्णं दुगइगिठाणे, जलम्हि सुण्णं असंखभजिदकमा ।
चउ-चोदस-वीसपदा, असंखलोगा हु पत्तेयं ॥२९५॥

शून्यं द्विकैकस्थाने, जले शून्यमसंख्यभजितक्रमाः ।
चतुश्चतुर्दशविंशतिपदा असंख्यलोका हि प्रत्येकम् ॥२९५॥

टीका – बहुरि तिस ही धूलि रेखा समान शक्तिस्थान विषै केई स्थान पद्म, शुक्ल दोय लेश्या संबंधी हैं । केई स्थान एक शुक्ल लेश्या संबंधी हैं । सो इनि दोऊ ही जायगा किसी ही आयु का बंध नाही, सो दोऊ जायगा शून्य लिखना । बहुरि तातै अनंतगुणी बधती विशुद्धता लीए जल रेखा समान शक्तिस्थान के सर्व स्थान केवल शुक्ल लेश्या संबंधी है । तिनि विषै किसी ही आयु का बंध नाही हो है । सो तहां शून्य लिखना । जातै अति तीव्र विशुद्धता आयु के बंध का कारण नाही हैं, असै कषायनि के शक्तिस्थान च्यारि कहे । अर लेश्या स्थान चौदह कहे । अर आयु के बंधने के वा न बंधने के स्थान वीस कहे । ते सर्व ही स्थान असंख्यात लोक प्रमाण असंख्यात लोक प्रमाण, असंख्यात लोक प्रमाण जानने । परन्तु उत्कृष्ट स्थान तै लगाइ जघन्य स्थान पर्यंत असंख्यात गुणे घाटि जानने । असंख्यात के भेद घने हैं । तातै सामान्यपनै सर्व ही असंख्यात लोक प्रमाण कहे । सोई कहिए है – सर्व कषायनि के उदयस्थान असंख्यातलोक प्रमाण हैं । तिनिकौं यथा योग्य असंख्यात लोक का भाग दीजिए, तिनिविषै एक भाग विना अवशेष बहुभाग प्रमाण शिला भेद समान उत्कृष्ट शक्ति संबंधी उदय स्थान हैं । ते भी असंख्यात लोक प्रमाण बहुरि जो वह एक भाग अवशेष रह्या, ताकौ असंख्यात लोक का भाग दीए एक भाग विना अवशेष बहुभाग प्रमाण पृथ्वी भेद समान अनुत्कृष्ट शक्ति संबंधी उदयस्थान है । ते भी असंख्यात लोक प्रमाण है । बहुरि जो एक भाग अवशेष रह्या, ताकौं असंख्यात लोक का भाग दीए, एक का भाग बिना अवशेष भाग प्रमाण धूलि रेखा समान अजघन्य शक्तिस्थान संबंधी उदयस्थान है । ते भी असंख्यात लोक प्रमाण हैं । बहुरि अवशेष एक भाग रह्या, तीहि प्रमाण जल रेखा समान जघन्य शक्ति संबंधी उदय स्थान है, ते भी असंख्यात लोक प्रमाण है ।

अैसे च्यारि शक्तिस्थान विषै उदयस्थान का प्रमाण कह्या । अब चौदह लेश्या स्थाननि विषै उदयस्थाननि का प्रमाण कहिए है – पहिलै कृष्ण लेश्या स्थाननि विषै जेते शिला भेद समान उत्कृष्ट शक्तिस्थान विषै उदयस्थान है । ते-ते सर्व तिस उत्कृष्ट शक्ति कौ प्राप्त कृष्ण लेश्या का उत्कृष्ट स्थान तै लगाइ यथा-योग्य कृष्ण लेश्या के मध्य स्थान पर्यंत षट्स्थानपतित सक्लेश-हानि लीए, असख्यात-लोकमात्रस्थान है, ते उत्कृष्ट शक्ति के स्थान समान जानने ।

बहुरि इनि तै असख्यात गुणे घाटि पृथ्वी भेद समान शक्तिस्थान विषै प्राप्त कृष्ण लेश्या के स्थान असख्यात लोक प्रमाण है, जातै ते स्थान पृथ्वी भेद समान शक्ति स्थान विषै जेते उदय स्थान है, तिनिकौं यथा योग्य असख्यात लोक का भाग दीए एक भाग बिना बहुभाग मात्र है ।

बहुरि तिनितै असख्यात गुणे घाटि, तहा ही कृष्ण, नील दोय लेश्या के स्थान असख्यात लोक प्रमाण ते तिस अवशेष एक भाग कौ यथा योग्य असख्यात लोक का भाग दीए, बहुभाग मात्र है । एक भाग बिना अवशेष भाग मात्र प्रमाण की बहुभाग सज्ञा जाननी ।

बहुरि तिनितै असख्यात गुणे घाटि, तहा ही कृष्ण, नील, कपोत तीन लेश्या के स्थान असख्यात लोक प्रमाण है, ते तिस अवशेष एक भाग कौ योग्य असख्यात लोक का भाग का दीए, बहुभाग मात्र है ।

बहुरि तिनितै असख्यात गुणे घाटि तहा ही कृष्णादि च्यारि लेश्या के स्थान असख्यात लोक प्रमाण है । ते अवशेष एक भाग कौ योग्य असख्यात लोक का भाग दीयै बहुभाग मात्र है ।

बहुरि तिनितै असख्यात गुणे घाटि, तहा ही कृष्णादि पच लेश्या के स्थान असख्यात लोक प्रमाण है । ते अवशेष एक भाग कौ योग्य असख्यात लोक का भाग दीए बहुभाग मात्र है । बहुरि तिनितै असख्यात लोक गुणे घाटि तहा ही कृष्णादि छह लेश्या के स्थान असख्यात लोक प्रमाण है । ते तिस अवशेष एक भाग मात्र है । इहा पूर्व स्थान तै बहुभागरूप असख्यात लोकमात्र गुणकार घट्या, तातै असख्यात गुणा घाटि कह्या है । बहुरि तिनितै असख्यात गुणे घाटि धूलि रेखा समान शक्तिस्थान विषै प्राप्त कृष्णादि छह लेश्या के स्थान असख्यात लोक प्रमाण

है । ते धूलि रेखा समान शक्तिस्थान सबधी सर्व स्थाननि के प्रमाण कौ योग्य असख्यात लोक का भाग दीए, एकभाग विना बहुभाग मात्र है । बहुरि तिनितै असख्यात गुणे घाटि, तहा ही कृष्ण रहित पच लेश्या के स्थान असख्यात लोक प्रमाण है । ते तिस अवशेष एक भाग कौ योग्य असख्यात लोक का भाग दीए बहुभाग मात्र है । बहुरि तिनितै असख्यात गुणे घाटि तहा ही कृष्ण नील रहित च्यारि लेश्या के स्थान असख्यात लोक प्रमाण है । ते तिस अवशेष एकभाग कौ योग्य असख्यातलोक का भाग दीए बहुभाग मात्र हैं । बहुरि तिनितै असख्यात गुणे घाटि, तहा ही तीन शुभ लेश्या के स्थान असख्यात लोक मात्र है । ते अवशेष एक भाग कौ योग्य असख्यात लोक का भाग दीए बहुभाग मात्र है । बहुरि तिनितै असख्यात गुणे घाटि, पीत रहित दोय शुभ लेश्या के स्थान असख्यात लोक प्रमाण है । ते तिस एक भाग को योग्य असख्यात लोक का भाग दीए, बहुभाग मात्र है । बहुरि तिनतै असख्यात गुणे घाटि तहा ही केवल शुक्ल लेश्या के स्थान असख्यात लोक प्रमाण है । ते तिस अवशेष एकभाग मात्र जानने । इहा बहुभाग रूप असख्यात लोक मात्र गुणकार घट्या, तातै असख्यात गुणा घाटि कह्या है । बहुरि तिनितै असख्यात गुणे घाटि जल रेखा समान शक्ति विषै प्राप्त सर्व शुक्ल लेश्या के स्थान असख्यात लोक प्रमाण है । ते जल रेखा शक्ति विषै प्राप्त स्थाननि का प्रमाणमात्र है । इहा धूलि रेखा समान शक्ति के सर्व स्थाननि विषै जे केवल शुक्ल लेश्या के स्थान कहे, तहा भागहार अधिक हैं । परन्तु गुणकारभूत असख्यात लोक का तहा बहुभाग है । इहा एक भाग है । तातै असख्यात गुणा घाटि कह्या है । अब आयु के बध-अबन्ध के वीस स्थान, तिनि विषै उदय स्थाननि का प्रमाण कहिए है –

प्रथम शिला भेद समान उत्कृष्ट शक्ति विषै प्राप्त कृष्ण लेश्या के स्थान, तिनि विषै कृष्ण लेश्या का उत्कृष्ट स्थान तै लगाइ, असख्यात लोक प्रमाण आयु के अबन्ध स्थान हैं । ते उत्कृष्ट शक्ति विषै प्राप्त सर्व स्थाननि का प्रमाण कौ असख्यात लोक का भाग दीए, बहुभाग मात्र है । बहुरि तिनितै असख्यात गुणे घाटि, तहा ही नरकायु बन्धने कौ कारण असख्यात लोक प्रमाण स्थान है । ते तिस अवशेष एक भाग मात्र है । पूर्वं बहुभाग इहा एक भाग तातै असख्यातगुणा घाटि कह्या है । बहुरि तिनितै असख्यात गुणे घाटि पृथ्वी भेद समान अनुत्कृष्ट शक्ति विषै प्राप्त कृष्ण लेश्या के पूर्वोक्त सर्व स्थान, ते नरकायु बन्ध कौ कारण असख्यात लोक

प्रमाण है। बहुरि तिनितै असख्यात गुणे घाटि, तहा ही कृष्णनील लेश्या के पूर्वोक्त सर्व स्थान ते नरकायु बन्ध कौ कारण असख्यात लोक प्रमाण है । बहुरि तिनितै असंख्यात गुणे घाटि तहा ही कृष्णादि तीनि लेश्या के स्थाननि विषै नरकायु बन्ध कौ कारण स्थान, ते तिन कृष्णादि तीन लेश्या स्थाननि के प्रमाण कौ योग्य असख्यात लोक का भाग दीए बहुभाग मात्र असख्यात लोकप्रमाण है । बहुरि तिनतै असख्यात गुणे घाटि तहा ही कृष्णादि तीन लेश्या के स्थाननि विषै नरक, तिर्यंच आयु के बन्ध कौ कारण स्थान, ते तिस अवशेष एक भाग कौ योग्य असख्यात लोक का भाग दीए, बहुभाग मात्र असख्यात लोक प्रमाण है । बहुरि तिनितै असख्यात गुणे घाटि, तहा कृष्णादि तीन लेश्या के स्थाननि विषै नरक, तिर्यंच, मनुष्य आयुबन्ध के कारण स्थान, ते अवशेष एक भाग मात्र असख्यात लोक प्रमाण है । बहुरि तिनितै असख्यातगुणे घाटि, तहा ही पूर्वोक्त कृष्णादि च्यारि लेश्या के स्थान, सर्व ही च्यार्यो आयुबन्ध के कारण, ते असख्यात लोक प्रमाण है । बहुरि तिनितै असख्यातगुणे घाटि, तहा ही पूर्वोक्त कृष्णादि पच लेश्या के स्थान, सर्व ही च्यार्यो आयुबन्ध के कारण, ते असख्यात लोक प्रमाण है । बहुरि तिनितै असाख्यात गुणे घाटि, तहा ही पूर्वोक्त कृष्णादि छहौ लेश्या के स्थान सर्व ही च्यार्यो आयुबन्ध के कारण, ते असाख्यात लोक प्रमाण है । पूर्व स्थान विषै गुणकार बहुभाग था, इहा एक भाग रह्या, तातै असाख्यात गुणा घाटि कह्या है । बहुरि तिनतै असाख्यात गुणे घाटि, धूलि रेखा समान शक्ति विषै प्राप्त षट्लेश्या स्थाननि विषै च्यार्यो आयुबन्ध के कारण स्थान, ते तिन अजघन्य शक्ति विषै प्राप्त षट्लेश्या स्थाननि के प्रमाण कौ असख्यात लोक का भाग दीए, बहुभाग मात्र असख्यात लोक प्रमाण है । बहुरि तिनितै असख्यात गुणे घाटि, तहा ही षट्लेश्या के स्थाननि विषै नरक बिना तीन आयुबन्ध के कारण स्थान, ते तिस अवशेष एकभाग कौ असख्यात का भाग दीए, बहुभागमात्र असख्यात लोक प्रमाण हैं । बहुरि तिनितै असख्यात गुणे घाटि, तहा ही षट्लेश्या के स्थान विषै मनुष्य देवायु बन्ध के कारण स्थान, ते तिस अवशेष एकभाग मात्र असख्यात लोक प्रमाण है । इहा पूर्वं बहुभाग थे, इहा एक भाग है । तातै असख्यात गुणा घाटि कह्या । बहुरि तिनितै असख्यात गुणे घाटि, तहा ही पूर्वोक्त कृष्ण बिना पच लेश्या के स्थान सर्व ही देवायु के बन्ध के कारण है । ते असख्यात लोक प्रमाण जानने । बहुरि तिनितै असाख्यात गुणे घाटि, तहा ही पूर्वोक्त कृष्ण, नील रहित च्यारि लेश्या कै

स्थान सर्व ही देवायु वन्ध की कारण हैं। ते असख्यात लोक प्रमाण जानने। बहुरि तिनितै असख्यात गुणे घाटि, तहा ही शुभ तीन लेश्या के स्थाननि विषै देवायु वन्ध की कारण स्थान, ते तिस अजघन्य शक्ति विषै प्राप्त त्रिलेश्या स्थाननि का प्रमाण की योग्य असख्यात लोक का भाग दीए, वहुभाग मात्र असख्यात लोक प्रमाण है। बहुरि तिनितै असख्यात गुणे घाटि, तहा ही शुभ तीन लेश्या के स्थाननि विषै किसी ही आयु बन्ध की कारण नाही; असे स्थान तिस अवशेष एक भागमात्र असख्यात लोक प्रमाण जानने। बहुरि तिनितै असख्यात गुणे घाटि, तहा ही पूर्वोक्त पद्म शुक्ल दोय लेश्या के स्थान सर्व ही आयु वन्ध की कारण नाही। ते असख्यात लोक प्रमाण है। यातै पूर्व स्थान विषै भागहार असख्यात गुणा घटता है। तातै असख्यात गुणा घाटि कह्या है। बहुरि तिनितै असख्यात गुणे घाटि, तहा ही पूर्वोक्त शुक्ल लेश्या के स्थान सर्व ही आयुवन्ध कौ कारण नाही। ते असख्यात लोक प्रमाण है। पूर्वै बहुभाग का गुणकार था, इहा एक भाग का गुणकार भया। तातै असख्यात गुणा घटता कह्या है। बहुरि तिनितै असख्यात गुणे घाटि, पूर्वोक्त जल रेखा समान शक्ति विषै प्राप्त शुक्ल लेश्या के स्थान, सर्व ही किसी ही आयु वन्ध कौं कारण नाही। ते असख्यात लोक प्रमाण है। पूर्व स्थान विषै जे भागहार कहे, तिनतै तिस ही भागहार का गुणकार असख्यात गुणा है, तातै असख्यात गुणा घाटि कह्या है। असै च्यारि पद चौदह पद बीस पद क्रम तै असख्यात गुणा घाटि कहे, तथापि असख्यात के बहुभेद हैं। तातै सामान्यपनै सबनि कौं असख्यात लोक प्रमाण कहे। विशेषपनै यथासभव असख्यात का प्रमाण जानना। असै ही भागहार विषै भी यथासभव असख्यात का प्रमाण जानना।

आगै श्री माधवचद्र त्रैविद्यदेव, तीन गाथानि करि कषाय-मार्गणा विषै जीवनि की सख्या कहै है –

पुह पुह कसायकालो, णिरये अंतोमुहुत्तपरिमाणो।
लोहादी संखगुणो, देवेसु य कोहपहुदीदो ॥२९६॥

पृथक् पृथक् कषायकालः, निरये अंतर्मुहूर्तपरिमाणः।
लोभादिः सख्यगुणः देवेषु च क्रोधप्रभृतितः ॥२९६॥

काषायनि के शक्तिस्थान च्यारि, लेश्यास्थान चौदह, आयुबंधाबंधस्थान बीस, तिनिका यंत्र ।

शक्तिस्थान ४	शिलाभेद समान १		पृथ्वी भेद समान १								धूलिरेखासमान १									जलरेखा समान १
लेश्यास्थान १४	१ कृष्ण		१ कृष्ण	२ कृष्णादि	३ कृष्णादि			४ कृष्णादि	५ कृष्णादि	६ कृष्णादि	६ कृष्णादि			५ कृष्ण विना	४ कृष्ण नील विना	३ पीतादि		२ पद्म शुक्ल	१ शुक्ल	१ शुक्ल
आयुबंधाबंधस्थान २०	० अबंध	१ नरकायु	१ नरकायु	१ नरकायु	१ नरकायु	२ नरकतिर्यंचायु	३ नरकतिर्यंचमनुष्यायु	४ सर्व	४ सर्व	४ सर्व	४ सर्व सर्व	३ मनुष्यदेवायुतिर्यंचायु	२ मनुष्यदेवायु	१ देवायु	१ देवायु	१ देवायु	० अबंध	० अबंध	० अबंध	० अबंध

टीका – नरक गति विषै नारकीनि कै लोभादि कषायनि का उदय काल अंतर्मुहूर्त मात्र है । तथापि पूर्व-पूर्व कषाय तै पिछले-पिछले कषाय का काल संख्यात गुणा है । अंतर्मुहूर्त के भेद घने, तातै हीनाधिक होतै भी अंतर्मुहूर्त ही कहिए । सोई कहिए है – सर्व तै स्तोक अंतर्मुहूर्त प्रमाण लोभ कषाय का काल है । यातै संख्यात गुणा माया कषाय का काल है । यातै संख्यात गुणा मान कषाय का काल है । यातै संख्यात गुणा क्रोध कषाय का काल है ।

बहुरि देव गति विषै क्रोधादि कषायनि का काल प्रत्येक अंतर्मुहूर्त मात्र है । तथापि उत्तरोत्तर संख्यात गुणा है । सोई कहिए है – स्तोक अंतर्मुहूर्त प्रमाण तौ क्रोध कषाय का काल है । तातै संख्यात गुणा मान कषाय का काल है । तातै संख्यात गुणा माया कषाय का काल है । तातै संख्यात गुणा लोभ कषाय का काल है ।

भावार्थ – नरक गति विषै क्रोध कषायरूप परिणति बहुतर हो है । और कषायनिरूप क्रम तै स्तोक रहै है ।

देव गति विषै लोभ कषायरूप परिणति बहुतर रहै है । और कषायनिरूप क्रम तै स्तोक-स्तोक रहै है ।

सव्वसमासेणवहिदसगसगरासी पुणो वि संगुणिदे ।
सगसगगुणगारेहिं य, सगसगरासीण परिमाणं ॥२९७॥

सर्वसमासेनावहितस्वकस्वकराशौ पुनरपि संगुणिते ।
स्वकस्वकगुणकारैश्च, स्वकस्वकराशीनां परिमाणम् ॥२९७॥

टीका – सर्व च्यार्‍यो कषायनि का जो काल कह्या, ताके जेते समय होहि, तिनिका समास कहिए, जोड दीए, जो परिमाण आवै, ताका भाग अपनी-अपनी गति संबंधी जीवनि के प्रमाण कौ दीए, जो एक भाग विषै प्रमाण होइ, ताहि अपना-अपना कषाय के काल का समयनि के प्रमाणरूप गुणकार करि गुणै, जो-जो परिमाण होइ, सोई अपना-अपना क्रोधादिक कषाय संयुक्त जीवनि का परिमाण जानना । अपि शब्द समुच्चय वाचक है, तातै नरक गति वा देव गति विषै ऐसै ही करना । सोई दिखाइए है –च्यार्‍यो कषायनि का काल के समयनि का जोड दीए,

जो परिमाण होइ, तितने काल विषै जो नरक गति विषै जीवनि का जो परिमाण कह्या, तितने सर्व जीव पाइए, तौ लोभ कषाय के काल का समयनि का जो परिमाण होइ है. तितने काल विषै केते जीव पाइए ? ऐसै त्रैराशिक कीए, प्रमाणराशि सर्वकषायनि का काल, फलराशि सर्व नारकराशि, इच्छाराशि लोभकषाय का काल तहा प्रमाणराशि का भाग फलराशि कौ देइ, इच्छाराशि करि गुणे जो लब्धराशि का परिमाण आवै, तितने जीव लोभकषाय वाले नरक गति विषै जानने । बहुरि ऐसै ही प्रमाणराशि, फलराशि, पूर्वोक्त इच्छाराशि मायादि कषायनि का काल कीए, लब्धराशि मात्र अनुक्रमतै मायावाले, मानवाले, क्रोधवाले जीवनि का परिमाण नरक गति विषै जानना ।

इहा दृष्टात – जैसै लोभ का काल का प्रमाण एक (१), माया का च्यारि (४), मान का सोलह (१६), क्रोध का चौसठि (६४) सब का जोड दीए पिच्यासी भए । नारकी जीवनि का परिमाण सतरा सै (१७००), ताहि पिच्यासी का भाग दीए, पाए बीस(२०), ताकौ एक करि गुणे बीस(२०)हुवा, सो लोभ कषायवालो का परिमाण है । च्यारि करि गुणे असी (८०) भए सो मायावालो का परिमाण है । सोला करि गुणे तीन सौ बीस (३२०) हुवा सो, मानवालो का परिमाण है चौसठि करि गुणे बार सै असी (१२८०) भए सो, क्रोधवालो का परिमाण है, ऐसै दृष्टात करि यथोक्त नरक गति विषै जीव कहे । ऐसै ही देव गति विषै जेता जीवनि का परिमाण है, ताहि सर्व कषायनि के काल का जोड्या हूवा समयनि का परिमाण का भाग दीए, जो परिमाण आवै, ताहि अनुकमतै क्रोध, मान, माया, लोभ का काल का परिमाण करि गुणे, अनुक्रमतै क्रोधवाले, मानवाले, मायावाले, लोभवाले जीवनि का परिमाण देव गति विषै जानना ।

णरतिरिय लोह-माया-कोहो माणो बिइंदियादिव्व ।
आवलिअसंखभज्जा, सगकालं वा समासेज्ज ॥२९८॥

नरतिरश्चोः लोभमायाक्रोधो मानो द्वींद्रियादिवत् ।
आवल्यसख्यभाज्याः, स्वककालं वा समासाद्य ॥२९८॥

टीका – मनुष्य-तिर्यच गति विषै लोभ, माया, क्रोध, मानवाले जीवनि की सख्या पूर्वै इद्रिय-मार्गणा का अधिकार विषै जैसै बेद्री, तेद्री, चौइंद्री, पचेंद्री विषै

जीवनि की संख्या 'बहु भागे समभागो' इत्यादि गाथा करि कही थी । तैसें इहा भी संख्या का साधन करना । सोई कहिये है – मनुष्यगति विषै जो जीवनि का परिमाण है, तामैं कषाय रहित मनुष्यनि का प्रमाण घटाएं, जो अवशेप रहै, ताकौं आवली का असख्यातवा भाग का भाग दीए, तहा एक भाग जुदा राखि, अवशेष बहुभाग का प्रमाण रह्या, ताके च्यारि भाग करि च्यार्यो कषायनि के स्थाननि विषै समान देने । बहुरि जो एक भाग रह्या, ताकौ आवली का असख्यातवां भाग का भाग दीजिए, तहा एक भाग कौ जुदा राखि, अवशेप बहुभाग रहे, तिनिकौ लोभ कषाय के स्थान समान भाग विषै जो प्रमाण था, तामैं जोडै, जो परिमाण होइ, तितने लोभकषाय वाले मनुष्य जानने । बहुरि तिस अवशेष एक भाग कौं आवली का असख्यातवा भाग का भाग दीजिए, तहा एक भाग कौ जुदा राखि, अवशेष बहुभाग रहे, तिनिकौ माया कषाय के स्थान समान भाग विषै जो परिमाण था, तामैं मिलाए, जो परिमाण होइ, तितने मायाकषाय वाले मनुष्य जानने । बहुरि तिस अवशेष एक भाग कौ आवली का असख्यातवा भाग का भाग दीजिए, तहा एक भाग कौ जुदा राखि, अवशेष बहुभाग रहै, तिनिकौ क्रोधकषाय के स्थान समान भाग विषै जो परिमाण था, तिस विषै मिलाए, क्रोधकषाय वाले मनुष्यनि का परिमाण होइ । बहुरि तिस अवशेष एक भाग का जेता परिमाण होइ, ताकौं मानकषाय के स्थान समान भाग विषै जो परिमाण था, तामैं मिलाए, मानकषाय वाले मनुष्यनि का परिमाण होइ, ऐसे ही तिर्यंच गति विषै जानना । विशेष इतना जो वहा मनुष्य गति के जीवनि का परिमाण विषै भाग दीया था । इहा तिर्यंच गति के जीवनि का जो देव, नारक, मनुष्यराशि करि हीन सर्व ससारी जीवराशि मात्र परिमाण, ताकौं भाग देना, अन्य सर्व विधान तैसे ही जानना । ऐसे कषायनि विषै तिर्यंच जीवनि का परिमाण जानिए । अथवा अपना-अपना कषायनि का काल की अपेक्षा जीवनि की सख्या जानिए, सो दिखाइए है । च्यार्यौ कषायनि का काल के समयनि का जो अतर्मुहूर्त मात्र परिमाण है, ताकौ आवली का असख्यातवा भाग का भाग दीजिए । तहा एक भाग कौ जुदा राखि, अवशेष के च्यारि भाग करि, च्यारौ जायगा समान दीजिए । बहुरि अवशेष एक भाग कौ आवली का असख्यातवा भाग का भाग देइ, एक भाग कौं जुदा राखि, अवशेष बहुभाग रहे, तिनिकौ समान भाग विषै जो परिमाण था, तामे मिलाए, लोभकषाय के काल का परिमाण होइ । बहुरि तिस अवशेष एक भाग को तैसे भाग देइ, एक भाग बिना अवशेष बहुभाग समान भाग का प्रमाण विषै मिलाए, माया का काल होइ । बहुरि तिस अवशेष एक भाग कौ तैसे भाग

देइ, एक भाग कौ जुदा राखि, अवशेष बहुभाग समान भाग संबंधी परिमाण विषै मिलाएं क्रोध का काल होइ। बहुरि जो अवशेष एक भाग रह्या, ताकौ समान भाग सबधी परिमाण विषै मिलाए, मानकषाय का काल होइ।

अब इहा त्रैराशिक करना – जो च्यारि कषायनि के काल का परिमाण विषै सर्व मनुष्य पाइए, तौ लोभ कषाय का काल विषै केते मनुष्य पाइए ?

इहा प्रमाणराशि च्यारो कषायनि का समुच्चयरूप काल का परिमाण अर फलराशि मनुष्य गति के जीवनि का परिमाण अर इच्छाराशि लोभ कषाय के काल का परिमाण। तहा फलराशि कौं इच्छाराशि करि गुणि, प्रमाण राशि का भाग दीए, जो लब्धराशि का प्रमाण आवै, तितने लोभकषायवाले मनुष्य जानने। ऐसै ही प्रमाण फलराशि पूर्वोक्त कीए, माया क्रोध मान काल कौ इच्छाराशि कीए, लब्धराशि मात्र मायावाले वा क्रोधवाले वा मानवाले मनुष्यनि की सख्या जाननी। बहुरि याही प्रकार तिर्यंच गति विषै भी लोभवाले, मायावाले, क्रोधवाले, मानवाले जीवनि की सख्या का साधन करना। विशेष इतना जो उहां फलराशि मनुष्यनि का परिमाण था, इहा फलराशि तिर्यंच जीवनि का परिमाण जानना। अन्य विधान तैसै ही करना। ऐसै कषायमार्गणा विषै जीवनि की सख्या है।

इति आचार्य श्री नेमिचद्र सिद्धातचक्रवर्ती विरचित गोम्मटसार द्वितीय नाम पचसग्रह
ग्रन्थ की जीवतत्त्वप्रदीपिका नामा सस्कृत टीका के अनुसारि सम्यग्ज्ञानचद्रिका
नाम भाषाटीका विषै जीवकाड विषै प्ररूपित जे बीस प्ररूपणा
तिनि विषै कषायमार्गणा प्ररूपणा नाम ग्यारमा
अधिकार सम्पूर्ण भया ॥११॥
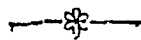
बारहवां अधिकार : ज्ञानमार्गणाधिकार

मंगलाचरण

वंदौ वासव पूज्यपद, वास पूज्य जिन सोय।
गर्भादिक मे पूज्य जो, रत्न द्रव्य तै होय ।।

आगे श्री नेमिचद्र सिद्धातचक्रवर्ती ज्ञान मार्गणा का प्रारभ करें हैं । तहा प्रथम ही निरुक्ति लीए, ज्ञान का सामान्य लक्षण कहै है –

जाणइ तिकालविसए, दव्वगुणे पज्जए य बहुभेदे[1] ।
पच्चक्खं च परोक्खं, अणेण णाणे त्ति णं बेंति ।।२९९।।

जानाति त्रिकालविषयान्, द्रव्यगुणान् पर्यायांश्च बहुभेदान् ।
प्रत्यक्षं च परोक्षमनेन ज्ञानमिति इदं ब्रुवंति ।।२९९।।

टीका – त्रिकाल संबधी हुए, हो हैं, होहिंगे असें जीवादि द्रव्य वा ज्ञानादि गुण वा स्थावरादि पर्याय नाना प्रकार हैं । तहा जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश, काल ए द्रव्य है । बहुरि ज्ञान, दर्शन, सम्यक्त्व, सुख, वीर्य आदि वा स्पर्श, रस, गध, वर्ण आदि वा गतिहेतुत्व, स्थितिहेतुत्व, अवगाहनहेतुत्व, वर्तनाहेतुत्व आदि गुण है । बहुरि स्थावर, त्रस आदि वा अणु, स्कधपना आदि वा अन्य अर्थ, व्यजन आदि भेद लीए अनेक पर्याय है । तिनकौ प्रत्यक्ष वा परोक्ष जीव नामा पदार्थ, इस करि जाने है, ताते याकौ ज्ञान कहिए । 'ज्ञायते अनेनेति ज्ञानं' असी ज्ञान शब्द की निरुक्ति जाननी । इहा जाननरूप क्रिया का आतमा कर्ता, तहा करणस्वरूप ज्ञान, अपने विषयभूत अर्थनि का जाननहारा जीव का गुण है – असें अरहतादिक कहैं हैं । असाधारण कारण का नाम करण है । बहुरि यहु सम्यग्ज्ञान है, सोई प्रत्यक्ष वा परोक्षरूप प्रमाण है । जो ज्ञान अपने विषय कौ स्पप्ट विशद जाने, ताकौं प्रत्यक्ष कहिए । जो अपने विषय कौ अस्पप्ट - अविशद जाने, ताकौं परोक्ष कहिए । सो इस प्रमाण का स्वरूप वा सख्या वा विषय वा फल वा लक्षण बहुरि ताके अन्यथा वाद

---

१ षट्खडागम धवला पुस्तक १, गाथा स ९१, पृष्ठ १४५ ।
पाठभेद–तिकालविसए–तिकालसहित–णाणे णाण ।

का निराकरण वा स्याद्वाद मत के प्रमाण का स्थापन विशेषपने जैन के तर्कशास्त्र हैं, तिनि विषै विचारना ।

इहा अहेतुवादरूप आगम विषै हेतुवाद का अधिकार नाही । तातै सविशेष न कह्या । हेतु करि जहा अर्थ कौ दृढ कीजिए ताका नाम हेतुवाद है, सो न्यायशास्त्रनि विषै हेतुवाद है । इहा तो जिनागम अनुसारि वस्तु का स्वरूप कहने का अधिकार जानना ।

आगै ज्ञान के भेद कहैं हैं –

पंचेव होंति णाणा, मदि-सुद-ओही-मणं च केवलयं ।
खयउवसमिया चउरो, केवलणाणं हवे खइयं ॥३००॥

पंचैव भवंति ज्ञानानि, मतिश्रुतावधिमनश्च केवलम् ।
क्षायोपशमिकानि चत्वारि, केवलज्ञानं भवेत् क्षायिकम् ॥३००॥

टीका – मति, श्रुति, अवधि, मनःपर्यय, केवल ए सम्यग्ज्ञान पच ही है, हीन अधिक नाही । यद्यपि संग्रहनयरूप द्रव्यार्थिक नय करि सामान्यपनै ज्ञान एक ही है । तथापि पर्यायार्थिक नय करि विशेष कीए पच भेद ही है । तिनि विषै मति, श्रुति, अवधि, मन पर्यय ए च्यारि ज्ञान क्षायोपशमिक है ।

जातै मतिज्ञानावरणादिक कर्म वा वीर्यान्तराय कर्म, ताके अनुभाग के जे सर्वघातिया स्पर्धक हैं, तिनिका उदय नाहीं, सोई क्षय जानना । बहुरि जे उदय अवस्था कौ न प्राप्त भए, ते सत्तारूप तिष्ठै है, सोई उपशम जानना । उपशम वा क्षय करि उपजै, ताकौं क्षयोपशम कहिए अथवा क्षयोपशम है प्रयोजन जिनिका, ते क्षायोपशमिक कहिए । यद्यपि क्षायोपशमिक विषै तिस आवरण के देशघातिया स्पर्धकनि का उदय पाइए है । तथापि वह तिस ज्ञान का घात करने कौ समर्थ नाही है, तातै ताकी मुख्यता न करी ।

याका उदाहरण कहिए है – अवधिज्ञानावरण कर्म सामान्यपनै देशघाती है । तथापि अनुभाग का विशेष कीए, याके केई स्पर्धक सर्वघाती है; केई स्पर्धक देशघाती है । तहा जिनिकै अवधिज्ञान किछू भी नाहीं, तिनिकै सर्वघाती स्पर्धकनि का उदय जानना । बहुरि जिनिकै अवधिज्ञान पाइए है अर आवरण उदय पाइए है, तहा

देशघाती स्पर्धकनि का उदय जानना। बहुरि केवलज्ञान क्षायिक ही है, जातै केवल ज्ञानावरण, वीर्यांतराय का सर्वथा नाश करि केवलज्ञान प्रकट हो है। क्षय होतें उपज्या वा क्षय है प्रयोजन जाका, ताकौं क्षायिक कहिए। यद्यपि सावरण अवस्था विषै आत्मा कै शक्तिरूप केवलज्ञान है, तथापि व्यक्तरूप आवरण के नाश करि ही है, तातै व्यक्तता की अपेक्षा केवलज्ञान क्षायिक कह्या, जातै व्यक्त भएं ही कार्य सिद्धि संभवै है।

आगे मिथ्याज्ञान उपजने का कारण वा स्वरूप वा स्वामित्व वा भेद कहै है–

अण्णाणतियं होदि हु, सण्णाणतियं खु मिच्छ अणउदये।
णवरि विभागं णाणं, पंचिंदियसण्णिपुण्णेव ॥३०१॥

अज्ञानत्रिकं भवति खलु, सज्ज्ञानत्रिकं खलु मिथ्यात्वानोदये।
नवरि विभंगं ज्ञानं, पंचेंद्रियसंज्ञिपूर्ण एव ॥३०१॥

टीका – जे सम्यग्दृष्टी कै मति, श्रुति, अवधि ए तीन सम्यग्ज्ञान हैं, सज्ञी पचेंद्री पर्याप्त वा निर्वृत्ति अपर्याप्त जीव कै विशेष ग्रहणरूप ज्ञेयाकार सहित उपयोग रूप है लक्षण जिनिका असे हैं, तेई तीनो मिथ्यात्व वा अनतानुबधी कोई कषाय के उदय होतै तत्त्वार्थ का अश्रद्धान रूप परिणया जीव कै तीनो मिथ्याज्ञान हो हैं। कुमति, कुश्रुति, विभग ए नाम हो हैं। **णवरि** असा प्राकृत भाषा विषै विशेष अर्थ कौं लीए अव्यय जानना। सो विशेष यहु – जो अवधि ज्ञान का विपर्ययरूप होना सोई विभग कहिए। सो विभग अज्ञान सैनी पचेंद्री पर्याप्त ही कै हो है। याही तै कुमति, कुश्रुति, एकेंद्रिय आदि पर्याप्त अपर्याप्त सर्व मिथ्यादृष्टी जीवनि कै अर सासादन गुणस्थानवर्ती सर्व जीवनि कै संभवै है।

आगे सम्यग्दृष्टि नामा तीसरा गुणस्थान विषै ज्ञान का स्वरूप कहै हैं–

मिस्सुदये सम्मिस्सं, अण्णाणतियेण णाणतियमेव।
संजमविसेससहिए, मणपज्जवणाणमुद्दिट्ठं ॥३०२॥

मिश्रोदये संमिश्रं, अज्ञानत्रयेण ज्ञानत्रयमेव।
संयमविशेषसहिते, मनःपर्ययज्ञानमुद्दिष्टम् ॥३०२॥

टीका – मिश्र कहिए सम्यग्मिथ्यात्व नामा मोहनीय कर्म की प्रकृति, ताके उदय होतै, तीनो अज्ञान करि मिल्या तीनो सम्यग्ज्ञान इहा हो है, जातै जुदा कीया जाता नाही, तातै सम्यग्मिथ्यामति, सम्यग्मिथ्याश्रुत, सम्यग्मिथ्या अवधि असै इहा नाम हो है। जैसे इहा एक काल विषै सम्यग्रूप वा मिथ्यारूप मिल्या हुवा श्रद्धान पाइए है। तैसे ही ज्ञानरूप वा अज्ञानरूप मिल्या हुवा ज्ञान पाइए है। इहा न तौ केवल सम्यग्ज्ञान ही है, न केवल मिथ्याज्ञान है, मिथ्याज्ञान करि मिल्या सम्यग्ज्ञान-रूप मिश्र जानने।

बहुरि मन पर्यय ज्ञान विशेष सयम का धारक छठा गुणस्थान तै बारहवा गुणस्थान पर्यंत सात गुणस्थानवर्ती तप विशेष करि वृद्धिरूप विशुद्धताके धारी महा-मुनि, तिन ही कै पाइए है, जातै अन्य देशसयतादि विषै तैसा तप का विशेष न सभवै है।

आगै मिथ्याज्ञान का विशेष लक्षण तीन गाथानि करि कहै है –

विस-जंत-कूड-पंजर-बंधादिसु विणुवएस-करणेण।
जा खलु पवद्दए मइ, मइ-अण्णाणं त्ति णं बेति ॥३०३॥[1]

विषयंत्रकूटपंजरबंधादिषु विनोपदेशकरणेन।
या खलु प्रवर्तते मति, मत्यज्ञानमितीदं ब्रुवंति ॥३०३॥

टीका – परस्पर वस्तु का सयोग करि मारने की शक्ति जिस विषै होइ असा तैल, कर्पूरादिक वस्तु, सो विष कहिए।

बहुरि सिह, व्याघ्रादि क्रूर जीवनि के धारन के अर्थि जाकै अभ्यतर छैला आदि रखिए। अर तिस विषै तिस क्रूर जीव कौ पाव धरते ही किवाड जुडि जाय, असा सूत्र की कल करि सयुक्त होइ, काष्ठादिक करि रच्या हुवा हो है, सो यन्त्र कहिए।

बहुरि माछला, काछिवा, मूसा, कोल इत्यादिक जीवनि कै पकडने के निमित्त काष्ठादिकमय बनै, सो कूट कहिए।

बहुरि तीतर, लवा, हिरण इत्यादि जीवनि के पकडने के निमित्त फद कौ लीए जो डोरि का जाल बनै, सो पींजर कहिए।

---

१. पट्खडागम – धवला पुस्तक १, गाथा १७९, पृष्ठ ३६०।

बहुरि हाथी, ऊंट आदि के पकडने निमित्त खाडा के ऊपरि गाठि का विशेष लीए जेवरा की रचनारूप विशेष, सो बंध कहिए ।

आदि शब्द करि पखीनि का पाख लगने निमित्त ऊचे दड के ऊपरि चिगटास लगावना, सो बध वा हरिणादिक का सीग के अग्रभाग सूत्र की गाठि देना इत्यादि विशेष जानने । असे जीवनि के मारणे, बाधने के कारणरूप कार्यनि विषै अन्य के उपदेश विना ही स्वयमेव बुद्धि प्रवर्तै, सो कुमति ज्ञान कहिए ।

उपदेश तै प्रवर्तै तो कुश्रुत ज्ञान हो जाइ । तातै विना ही उपदेश असा विचाररूप विकल्प लीए हिसा, अनृत, स्तेय, अब्रह्म, परिग्रह का कारण आर्तरौद्र ध्यान कौ कारण शल्य, दड, गारव आदि अशुभोपयोगो का कारण जो मन, इद्रिय करि विशेष ग्रहणरूप मिथ्याज्ञान प्रवर्तै; सो मति अज्ञान सर्वज्ञदेव कहै है ।

आभीयमासुरक्खं, भारह-रामायणादि-उवएसा ।
तुच्छा असाहणीया, सुय-अण्णाणं त्ति णं बेंति ॥३०४॥[1]

आभीतमासुरक्षं भारतरामायणाद्युपदेशाः ।
तुच्छा असाधनीयाः श्रुताज्ञानमिति इदं ब्रुवंति ॥३०४॥

टीका – आभीताः कहिए (समतपनै) भयवान, जे चौरादिक, तिनिका शास्त्र सो आभीत है । बहुरि असु जे प्राण, तिनिकी चौरादिक तै रक्षा जिनि तै होइ, असे कोटपाल, राजादिक, तिनिका जो शास्त्र सो असुरक्ष है । बहुरि कौरव पाडवो का युद्धादिक वा एक भार्या के पच भर्ता इत्यादिक विपरीत कथन जिस विषै पाइए, असा शास्त्र सो भारत है । बहुरि रामचन्द्र के बानरो की सेना, रावण राक्षस है, तिनिका परस्पर युद्ध होना इत्यादिक अपनी इच्छा करि रच्या हुवा शास्त्र, सो रामायण है । आदि शब्द तै जो एकातवाद करि दूषित अपनी इच्छा के अनुसारि रच्या हुवा शास्त्र, जिनिविषै हिसारूप यज्ञादिक गृहस्थ का कर्म है, जटा धारण, त्रिदड धारणादिरूप तपस्वी का कर्म है, सोलह पदार्थ है, वा छह पदार्थ हैं, वा भावन, विधि, नियोग, भूत ए च्यारि है, वा पचीस तत्त्व है, वा अद्वैत ब्रह्म का स्वरूप है वा सर्व शून्य है इत्यादि वर्णन पाइए है, ते शास्त्र 'तुच्छा' कहिए परमार्थ

---

१. षट्खडागम – धवला पुस्तक १, गाथा १८०, पृष्ठ ३६० ।

तै रहित हैं । बहुरि 'असाधनीया' कहिए प्रमाण करने योग्य नाही । याही तै सत पुरुषनि कौ आदरने योग्य नाही । असै शास्त्राभ्यासनि तै भया जो श्रुतज्ञान की सी आभासा लीए कुज्ञान, सो श्रुत अज्ञान कहिए । जातै प्रमाणीक इष्ट अर्थ तै विपरीत अर्थ याका विषय हो है । इहां मति, श्रुत अज्ञान का वर्णन उपदेश लीए किया है ।

अर सामान्यपनै तौ स्व-पर भेदविज्ञान रहित इंद्रिय, मन जनित जानना, सो सर्व कुमति, कुश्रुत है ।

विवरीयमोहिणाणं, खओवसमियं च कम्मबीजं च ।
वेभंगो त्ति पउच्चइ, समत्तणाणीण समयम्हि ॥३०५॥[1]

विपरीतमवधिज्ञानं, क्षायोपशमिकं च कर्मबीजं च ।
विभंग इति प्रोच्यते, समाप्तज्ञानिनां समये ॥३०५॥

टीका – मिथ्यादृष्टी जीवनि कै अवधिज्ञानावरण, वीर्यांतराय के क्षयोपशम तै उत्पन्न भया, असा द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव की मर्यादा लीए रूपी पदार्थ है विषय जाका, असा आप्त, आगम, पदार्थनि विषै विपरीत का ग्राहक, सो विभंग नाम पावै है । **वि** कहिए विशिष्ट जो अवधिज्ञान, ताका **भंग** कहिए विपरीत भाव, सो विभग कहिए, सो तिर्यंच-मनुष्य गति विषै तौ तीव्र कायक्लेशरूप द्रव्य संयमादिक करि उपजै है, सो गुणप्रत्यय हो है ।

बहुरि देवनरक गति विषै भवप्रत्यय हो है । सो सब ही विभंगज्ञान मिथ्यात्वादि कर्मबंध का बीज कहिए कारण है । **चकार** तै कदाचित् नारकादिक गति विषै पूर्वभव सम्बन्धी दुराचार के दुःख फल कौ जानि, कही सम्यग्दर्शनज्ञानरूप धर्म का भी बीज हो है, असा विभंगज्ञान, समाप्तज्ञानी - जो संपूर्ण ज्ञानी केवली, तिनिके मत विषै कह्या है ।

आगै स्वरूप वा उपजने का कारण वा भेद वा विषय, इनिका आश्रय करि मतिज्ञान का निरूपण नव गाथानि करि कहै है –

अहिमुह-णियमिय-बोहणमाभिणिबोहियमणिंदि-इंदियजं ।
[3] अवगहईहावायाधारणगा होंति पत्तेयं ॥३०६॥[2]

---

१ षट्खंडागम – धवला पुस्तक १, गाथा १८१, पृष्ठ ३६१ ।
२ षट्खंडागम – धवला पुस्तक १, गाथा १८२, पृष्ठ ३६१ ।
३ पाठभेद – बहु ओग्गहाईणा खलुकय-छत्तीस-त्ति-सय-भेय ।

अभिमुखनियमितबोधनमाभिनिबोधिकमनिंद्रियेंद्रियजं ।
अवग्रहेहावायधारणका भवंति प्रत्येकं ॥३०६॥

टीका – स्थूल, वर्तमान जिस क्षेत्र विषै इद्रिय-मन की प्रवृत्ति होइ, तहा तिष्ठता असा जो इद्रिय - मन के ग्रहण योग्य पदार्थ, सो अभिमुख कहिए। बहुरि इस इंद्रिय का यहु ही विषय है, असा नियमरूप जो पदार्थ, सो नियमित कहिए, असे पदार्थ का जो जानना, सो अभिनिबोध कहिए। **अभि** कहिए अभिमुख अर '**नि**' कहिए नियमित जो अर्थ, ताका **निबोध** कहिए जानना, असा अभिनिबोध, सोई आभिनिबोधिक है। इहा स्वार्थ विषै ठण् प्रत्यय आया है। सो यह आभिनिबोधिक मतिज्ञान का नाम जानना। इद्रियनि कै स्थूल रूप स्पर्शादिक अपने विषय के ज्ञान उपजावने की शक्ति है। बहुरि सूक्ष्म, अतरित, दूर पदार्थ के ज्ञान उपजावने की शक्ति नाही है। तहा सूक्ष्म पदार्थ तौ परमाणु आदिक, अतरित पदार्थ अतीत अनागत काल सबधी, दूर पदार्थ मेरु-गिरि, स्वर्ग, नरक, पटल आदि दूर क्षेत्रवर्ती जानने। असे मतिज्ञान का स्वरूप कह्या है।

सो मतिज्ञान कैसा है ?

अनिद्रिय जो मन, अर इद्रिय स्पर्शन, रसन, घ्राण, चक्षु, श्रोत्र, इनि करि उपजै है। मतिज्ञान उपजने के कारण इद्रिय अरु मन हैं। कारण के भेद तै कार्य विषै भी भेद कहिए, तातै मतिज्ञान छह प्रकार है। तहा एक-एक के च्यारि-च्यारि भेद हैं – अवग्रह, ईहा, अवाय, धारणा। सो मन तै वा स्पर्शन तै वा रसना तै वा घ्राण तै वा चक्षु तै वा श्रोत्र तै ए अवग्रहादि च्यारि-च्यारि उत्पन्न होइ, तातै चौबीस भेद भए।

अवग्रह, ईहा, अवाय, धारणा का लक्षण शास्त्रकर्ता आगे स्वयमेव कहैंगे।

वेंजणअत्थअवग्गहभेदा हु हवंति पत्तपत्तत्थे ।
कमसो ते वावरिदा, पढमं ण हि चक्खुमणसाणं ॥३०७॥

व्यंजनार्थावग्रहभेदौ, हि भवतः प्राप्ताप्राप्तार्थे ।
क्रमशस्तौ व्यापृतौ, प्रथमो नहि चक्षुर्मनसोः ॥३०७॥

टीका – मतिज्ञान का विषय दोय प्रकार एक व्यजन, एक अर्थ । तहा जो विषय इद्रियनि करि प्राप्त होइ, स्पर्शित होइ, सो व्यजन कहिए । जो प्राप्त न होइ, सो अर्थ कहिए । तिनिका विशेष ग्रहणरूप व्यजनावग्रह अरु अर्थावग्रह भेद प्रवर्ते है ।

इहां प्रश्न – जो तत्त्वार्थ सूत्र की टीका विषै तौ अर्थ असा कीया है – जो व्यजन नाम अव्यक्त शब्दादिक का है, इहा प्राप्त अर्थ कौ व्यंजन कह्या सो कैसे है ?

ताका समाधान – व्यजन शब्द के दोऊ अर्थ हो है । **विगतं अंजनं व्यंजनं'** दूरि भया है अजन कहिए व्यक्त भाव जाकै, सो व्यजन कहिए । सो तत्त्वार्थ सूत्र की टीका विषै तौ इस अर्थ का मुख्य ग्रहण कीया है । अर **'व्यज्यते म्रक्ष्यते प्राप्यते इति व्यंजनं'** जो प्राप्त होइ ताकौ व्यजन कहिए । सो इहा यहु अर्थ मुख्य ग्रहण कीया है । जातै अजु धातु गति, व्यक्ति, म्रक्षण अर्थ विषै प्रवर्ते है । तातै व्यक्ति अर्थ का अर म्रक्षण अर्थ का ग्रहण करने तै कर्णादिक इद्रियनि करि शब्दादिक अर्थ प्राप्त हूवे भी यावत् व्यक्त न होइ, तावत् व्यंजनावग्रह है, व्यक्त भए अर्थावग्रह हो है । जैसे नवा माटी का शरावा, जल की बूँदनि करि सीचिए, तहा एक दोय बार आदि जल की बूद परै व्यक्त न होइ; शोषित होइ जाय; बहुत बार जल की बूद परै, व्यक्त होइ, तैसे कर्णादिक करि प्राप्त हुवा जो शब्दादिक, तिनिका यावत् व्यक्तरूप ज्ञान न होइ, जो मैंने शब्द सुन्या, असा व्यक्त ज्ञान न होइ, तावत् व्यजनावग्रह कहिए । बहुरि बहुत समय पर्यंत इद्रिय अर विषय का सयोग रहै, व्यक्तरूप ज्ञान भए अर्थावग्रह कहिए । बहुरि नेत्र इद्रिय अर मन, ए दूरही तै पदार्थ कौ जानै है, तातै इनि दोऊनि कै व्यजनावग्रह नाही, अर्थावग्रह ही है ।

इहां प्रश्न – जैसे कर्णादिक करि दूरि तै शब्दादिक जानिए है, तैसे ही नेत्र करि वर्ण जानिए है, वाकौ प्राप्त कह्या, अर याकौ अप्राप्त कह्या सो कैसे है ?

ताका समाधान – दूरि जो शब्द हो है, ताकौ यहु नाही जानै है । जो दूरि भया शब्द, ताके निमित्त तै आकाश विषै जे अनेक स्कध तिष्ठै है । ते शब्दरूप परिणए है । तहा कर्ण इद्रिय के समीपवर्ती भी स्कध शब्दरूप परिणए है, सो तिनिका कर्ण इद्रिय करि स्पर्श भया है, तब शब्द का ज्ञान हो है । असे ही दूरि तिष्ठता सुगध, दुर्गंध वस्तु के निमित्त तै पुद्गल स्कध तत्काल तद्रूप परिणवै है । तहा जो नासिका इद्रिय के समीपवर्ती स्कध परिणए है, तिनिके स्पर्श तै गध का ज्ञान हो है । असे ही अग्न्यादिक के निमित्त तै पुद्गल स्कध उष्णादिरूप परिणवै है, तहा जो

स्पर्शन इंद्रिय के समीपवर्ती स्कंध परिणए हैं; तिनिके स्पर्श तै स्पर्श ज्ञान हो है। ऐसै ही आम्लादि वस्तु के निमित्त तै स्कंध तद्रूप परिणवै है, तहा रसना इंद्रिय के समीपवर्ती जो स्कंध परिणए, तिनिके संयोग तै रस का ज्ञान हो है। बहुरि यहु श्रुत ज्ञान के बल करि, जाके निमित्त तै शब्द आदि भए ताकौं जानि, ऐसा मानै है कि मैं दूरवर्ती वस्तु को जान्या, ऐसै दूरवर्ती वस्तु के जानने विषै भी प्राप्त होना सिद्ध भया। अर समीपवर्ती कौं तो प्राप्त होकर जानै ही है। इहा शब्दादिक परमाणु अर कर्णादिक इंद्रिय परस्पर प्राप्त होइ, अर यावत् जीव के व्यक्त ज्ञान न होइ तावत् व्यंजनावग्रह है, व्यक्तज्ञान भए अर्थावग्रह हो है। बहुरि मन अर नेत्र दूर ही तै जानै हैं, ऐसा नाही, जो शब्दादिक की ज्यो जानै है, तातै पदार्थ तौ दूरि तिष्ठै है ही, जब इन नै ग्रहै, तब व्यक्त ही ग्रहै, तातै व्यंजनावग्रह इनि दोऊनि कै नाही, अर्थावग्रह ही है। उक्तं च–

पुट्ठं सुणेदि सद्दं, अपुट्ठं पुण पस्सदे रूवं।
गंधं रसं च फासं, बद्धं पुट्ठं वियाणादि ॥१॥

बहुरि नैयायिकमतवाले ऐसा कहैं हैं – मन अर नेत्र भी प्राप्त होइ करि ही वस्तु कौं जानै हैं। ताका निराकरण जैनन्याय के शास्त्रनि विषै अनेक प्रकार कीया है। बहुरि व्यंजन जो अव्यक्त शब्दादिक, तिनि विषै स्पर्शन, रसन, घ्राण, श्रोत्र इंद्रियनि करि केवल अवग्रह ही हो है, ईहादिक न हो हैं। जातै ईहादिक तौ एकदेश वा सर्वदेश व्यक्त भए ही हो हैं। व्यंजन नाम अव्यक्त का है, तातै च्यारि इंद्रियनि करि व्यंजनावग्रह के च्यारि भेद हैं।

विसयाणं विसईणं, संजोगाणंतरं हवे णियमा।
अवगहणाणं गहिदे, विसेसकंखा हवे ईहा ॥३०८॥

विषयाणां विषयिणां, संयोगानंतरं भवेन्नियमात्।
अवग्रहज्ञानं गृहीते, विशेषाकांक्षा भवेदीहा ॥३०८॥

टीका – विषय जो शब्दादिक पदार्थ अर विषयी जे कर्णादिक इंद्रिया, इनिका जो संयोग कहिये योग्य क्षेत्र विषै तिष्ठनेरूप संबंध, ताकौं होतै संतै ताके अनंतर ही वस्तु का सत्तामात्र निर्विकल्प ग्रहण जो यहु है, इतना प्रकाशरूप, सो दर्शन नियम-

करि हो है। ताके अनन्तर पीछै ही देख्या जो पदार्थ ताके वर्ण संस्थानादि विशेष ग्रहणरूप अवग्रह नामा ज्ञान हो है।

इहां प्रश्न – जो गाथा विषै तौ पहिलैं दर्शन न कह्या, तुम कैसैं कहो हो ?

ताका समाधान – जो अन्य ग्रंथनि मैं कह्या है – **'अक्षार्थयोगे सत्तालोकोर्थाकारविकल्पधीरवग्रहः'** इंद्रिय अर विषय के संयोग होतै प्रथम सत्तावलोकन मात्र दर्शन हो है, पीछै पदार्थ का आकार विशेष जाननेरूप अवग्रह हो है – ऐसा अकलंकाचार्य करि कह्या है। बहुरि **'दंसणपुव्वं णाणं छद्मत्थाणं हवेदि णियमेण'** छद्मस्थ जीवन के नियम तै दर्शन पूर्वक ही ज्ञान हो है ऐसा नेमिचंद्राचार्यने द्रव्य - संग्रह नामा ग्रंथ मे कह्या है। बहुरि तत्त्वार्थ सूत्र की टीकावाले नै ऐसा ही कह्या है, तातै इहां ज्ञानाधिकार विषै दर्शन का कथन न कीया तौ भी अन्य ग्रंथनि तै ऐसै ही जानना। सो अवग्रह करि तौ इतना ग्रहण भया।

जो यहु श्वेत वस्तु है, बहुरि श्वेत तौ बुगलनि की पंक्ति भी हो है, ध्वजा रूप भी हो है; परि बुगलेनि की पंकतिरूप विषय कौ अवलंबि यहु बुगलेनि की पंकति ही होसी वा ध्वजारूप विषय कौं अवलंबि यहु ध्वजा होसी ऐसा विशेष वांछारूप जो ज्ञान, ताकौं ईहा कहिए। बहुरि बुगलनि की यहु पंकति ही होसी कि ध्वजा होसी ऐसा संशयरूप ज्ञान का नाम ईहा नाहीं है। वा बुगलनि पंकति विषै यहु ध्वजा होसी ऐसा विपर्यय ज्ञान का नाम ईहा नाहीं है; जातै इहां सम्यग्ज्ञान का अधिकार है। सम्यग्ज्ञान प्रमाण है। अर संशय, विपर्यय है, सो मिथ्याज्ञान है। तातै संशय विपर्यय का नाम ईहा नाहीं। जो वस्तु है, ताका यथार्थरूप ऐसा ज्ञान करना कि यहु अमुक ही वस्तु होसी, ऐसैं होसीरूप जो प्रतीति, ताका नाम ईहा है। अवग्रह तै ईहा विषै विशेष ग्रहण भया, तातै याके वाके विषै मतिज्ञानावरण के क्षयोपशम का तारतम्य करि भेद जानना।

ईहणकरणेण जदा, सुणिण्णओ होदि सो अवाओ दु।
कालांतरे वि णिण्णिद-वत्थु-समरणस्स कारणं तुरियं ॥३०९॥

ईहनकरणेन यदा, सुनिर्णयो भवति स अवायस्तु।
कालांतरेऽपि निर्णीतवस्तुस्मरणस्य कारणं तुर्यम् ॥३०९॥

टीका – ईहा के करने करि ताके पीछै जिस वस्तु की ईहा भई थी, ताका भले प्रकार निर्णय रूप जो ज्ञान, ताकौ अवाय कहिए ।

जैसे पाखनि का हलावना आदि चिह्न करि यहु निश्चय कीया जो बुगलनि की पकति ही है, निश्चयकरि और किछू नाही, असा निर्णय का नाम अवाय है । तु शब्द करि पूर्वै जो ईहा विषै वाछित वस्तु था, ताही का भले प्रकार निर्णय, सो अवाय है । बहुरि जो वस्तु किछू और है, अर और ही वस्तु का निश्चय करि लीया है, तो वाका नाम अवाय नाही, वह मिथ्याज्ञान है ।

बहुरि तहा पीछै वार-बार निश्चयरूप अभ्यास तै उपज्या जो सस्कार, तीहि स्वरूप होइ, केते इक काल कौं व्यतीत भए भी यादि आवने कौ कारणभूत जो ज्ञान सो धारणा नाम चौथा ज्ञान का भेद हो है । असे ही सर्व इद्रिय वा मन संबधी अवग्रह, ईहा, अवाय, धारणा भेद जानने ।

बहु बहुविहं च खिप्पाणिस्सिदणुत्तं धुवं च इदरं च ।
तत्थेक्केक्के जादे, छत्तीसं तिसयभेदं तु ।।३१०।।

बहु बहुविधं च क्षिप्रानिःसृदनुक्तं ध्रुवं च इतरच्च ।
तत्रैकैकस्मिन् जाते, षट्त्रिशत्त्रिशतभेदं तु ।।३१०।।

टीका – अर्थरूप वा व्यजनरूप जो मतिज्ञान का विषय, ताके बारह भेद हैं – बहु, बहुविध, क्षिप्र, अनिसृत, अनुक्त, ध्रुव, ए छह । बहुरि इतर जे छहौ इनके प्रतिपक्षी एक, एकविध, अक्षिप्र, निसृत, उक्त, अध्रुव ए छह; असे बारह भेद जानने । सो व्यजनावग्रह के च्यारि इद्रियनि करि च्यारि भेद भए, अर अर्थ के अवग्रह, ईहा, अवाय, धारणा तै पच इद्रिय छठा मन करि चौवीस भेद भए । मिलाए ते अठाईस भेद भए । सो व्यजन रूप बहु विषय का च्यारि इद्रियनि करि अवग्रह हो है । सो च्यारि भेद तौ ए भए । अर अर्थ रूप वहु विषय का पच इद्रिय, छठा मन करि गुणे अवग्रह, ईहा, अवाय, धारणा हो है । तातै चौवीस भए । असे एक, वहु विषय सबधी अठाईस भेद भए । असे ही बहुविध आदि भेदनि विषै अठाईस-अठाईस भेद हो हैं । सब कौं मिलाए बारह विषयनि विषै मतिज्ञान के तीन सै छत्तीस (३३६) भेद हो हैं । जो एक विषय विषै अठाईस मतिज्ञान के भेद होइ तौ बारह विषयनि

विषै केते होहि, अैसै त्रैराशिक कीए, लब्धराशि मात्र तीन सै छत्तीस मतिज्ञान के भेद हो है ।

बहुवत्तिजादिगहणे, बहुबहुविहमियरमियरगहणम्हि ।
सगणामादो सिद्धा, खिप्पादी सेदरा य तहा ॥३११॥

बहुव्यक्तिजातिग्रहणे, बहुबहुविधमितरदितरग्रहणे ।
स्वकनामतः सिद्धाः, क्षिप्रादयः सेतराश्च तथा ॥३११॥

टीका – जहा बहुत व्यक्ति का ग्रहणरूप मतिज्ञान होइ, ताके विषय कौं बहु कहिए । बहुरि जहा बहुजाति का ग्रहणरूप मतिज्ञान होइ, ताके विषय कौ बहुविध कहिए । बहुरि अैसे ही इतर का ग्रहण विषै जहा एक व्यक्ति का ग्रहण रूप मतिज्ञान होइ, ताके विषय कौं एक कहिए । बहुरि जहा एक जाति का ग्रहणरूप मतिज्ञान होइ, ताके विषय कौ एकविध कहिए ।

इहां उदाहरण दिखाइए है – जैसै खाडी गऊ, सावली गऊ, मूडी गऊ इत्यादिक अनेक गऊनि की व्यक्ति कौ बहु कहिए । बहुरि गऊ, भैस, घोडे इत्यादि अनेक जाति कौ बहुविध कहिए । बहुरि एक खाडी गऊ अैसी गऊ की एक व्यक्ति कौ एक कहिए । बहुरि खाडी, मूडी, सावली गऊ है, अैसी एक जाति कौ एकविध कहिए । एक जाति विषै अनेक व्यक्ति पाइए है । अैसै बारह भेदनि विषै च्यारि तौ कहे ।

बहुरि अवशेष क्षिप्रादिक च्यारि अर इनिके प्रतिपक्षी च्यारि, ते अपने नाम ही तै प्रसिद्ध है । सोही कहिए है – क्षिप्र शीघ्र कौ कहिए । जैसै शीघ्र पडती जलधारा वा जलप्रवाह । बहुरि अनिसृत, गूढ कौ कहिए, जैसै जल विषै मगन हूवा हाथी । बहुरि अनुक्त, विना कहे कौ कहिए, जैसै विना ही कहे किछू अभिप्राय ही तै जानने मे आवै । बहुरि ध्रुव अचल कौ वा बहुत काल स्थायी कौ कहिए, जैसै पर्वतादिक । बहुरि अक्षिप्र, ढीले कौ कहिए । जैसै मद चालता घोटकादिक । बहुरि निसृत, प्रगट कौ कहिए, जैसै जल तै निकस्या हूवा हाथी । बहुरि उक्त, कहे कौ कहिए, जैसें काहूनै कह्या यहु घट है । बहुरि अध्रुव, चंचल वा विनाशीक कौ कहिए, जैसै क्षणस्थायी बिजुरी आदि । अैसै बाहर प्रकार मतिज्ञान के विषय है ।

भावार्थ – जाकौ जानिए यहु शीघ्र प्रवर्ते है, सो क्षिप्र कहिए । बहुरि जाकौं जानिए यह गूढ है, सो अनिसृत कहिए । बहुरि जाकौ बिना कहै जानिए, सो अनुक्त कहिए । बहुरि जाकौ जानिए यहु ध्रुव है, सो ध्रुव कहिए इत्यादिक मतिज्ञान के विषय है । इनिकौं मतिज्ञान करि जानिए हैं ।

वत्थुस्स पदेसादो, वत्थुग्गहणं तु वत्थुदेसं वा ।
सयलं वा अवलंबिय, अणिस्सिदं अण्णवत्थुगई ॥३१२॥

वस्तुनः प्रदेशात्, वस्तुग्रहणं तु वस्तुदेशं वा ।
सकलं वा अवलंब्य, अनिसृतमन्यवस्तुगतिः ॥३१२॥

टीका – किसी वस्तु का प्रदेश कहिए, एकोदेश अंश प्रगट हैं । तातै जो वह एकोदेश अंश जिस वस्तु बिना न होइ, ऐसै अप्रगट वस्तु का ग्रहण कीजिए; सो अनिसृतज्ञान है । अथवा एक किसी वस्तु का एकोदेश अंश कौं वा सर्वांग वस्तु ही कौं अवलंबि करि, ग्रहण करि अन्य कोई अप्रकट वस्तु का ग्रहण करना, सो भी अनिसृत ज्ञान है । इनिके उदाहरण आगे कहै है —

पुक्खरगहणे काले, हत्थिस्स य वदणगवयगहणे वा ।
वत्थुंतरचंदस्स य, धेणुस्स य बोहणं च हवे ॥३१३॥

पुष्करग्रहणे काले, हस्तिनश्च वदनगवयग्रहणे वा ।
वस्त्वंतरचंद्रस्य च, धेनोश्च बोधनं च भवेत् ॥३१३॥

टीका – पुष्कर कहिए जल तैं बाहिर प्रगट दीसती ऐसी जल विषै डूब्या हूवा हस्ती की सूंडि, ताकौ जानने तै ऐसी प्रतीति हो है कि इस जल विषै हस्ती मगन है; जातै हस्ती बिना सूंडि न हो है । जिस बिना जो न होइ, ताकौं तिसका साधन कहिए, जैसे अग्नि बिना धूम नाही, तातै अग्नि साध्य है, धूम साधन है । सो साधन तै साध्य का जानना, सो अनुमान प्रमाण है । इहा सूंडि साधन, हस्ती साध्य है । सूंडि तै हस्ती का ज्ञान भया, तातै इहा अनुमान प्रमाण भया । बहुरि किसी स्त्री का मुख देख्या, सो मुख का ग्रहण समय विषै चन्द्रमा का स्मरण भया; आगै चन्द्रमा देख्या था, स्त्री के मुख की अर चन्द्रमा की सदृशता है, सो स्त्री का मुख देखितै ही चन्द्रमा यादि आया, सो चन्द्रमा तिस काल विषै प्रकट न था, ताकौं

ज्ञान भया, सो यहु स्मृति प्रमाण है । अथवा चन्द्रमा समान स्त्री का मुख है, सो स्त्री का मुख देखतै चन्द्रमा का ज्ञान भया । तातै याकौं प्रत्यभिज्ञान प्रमाण भी कहिये । असे ही वन विषै गवय नामा तिर्यंचकौं देख्या, तहां असा याद्वि आया कि गऊ के सदृश गवय हो है; तातै यहु स्मृति प्रमाण है । अथवा गऊ समान गवय हो है । सो गऊ का ज्ञान गवय कौं देखते ही भया; तातै याकौ प्रत्यभिज्ञान भी कहिए । वा कहिए जैसे ए उदाहरण कहे तैसे और भी जानने । जैसे रसोई विषै अग्नि होते सतै धूवा हो है; अर द्रह विषै अग्नि नाही; तातै धूवा भी नाही । तातै सर्व देश काल विषै अग्नि अर धूवा कै अन्यथा अनुपपत्ति भाव है । अन्यथा कहिए अग्नि न होइ तौ अनुपपत्ति कहिए धूवा भी न होइ, सो असा अन्यथा अनुपपत्ति का ज्ञान, सो तर्क नामा प्रमाण भी मतिज्ञान है ।

या प्रकार अनुमान स्मृति, प्रत्यभिज्ञान, तर्क ए च्यारो परोक्ष प्रमाण अनिसृत है विषय जाका, असा मतिज्ञान के भेद जानने ।

पाचवा आगम नामा परोक्ष प्रमाण श्रुतज्ञान का भेद जानना । एकोदेशपनै भी विशदता, स्पष्टता इनिके जानने विषै नाही । तातै इनिकौ परोक्ष प्रमाण कहे, और इनके विना जो पांच इन्द्रियनि करि बहु, बहुविध आदि जानिए हैं, ते साव्यवहारिक प्रत्यक्ष जानने, जातैं इनिके जाननें में एकोदेश विशदता, निर्मलता, स्पष्टता, पाइए है । व्यवहार विषै भी असे कहिए है जो मै नेत्रनि स्यौ प्रत्यक्ष देख्या ।

बहुरि इस मतिज्ञान विषै पारमार्थिक प्रत्यक्षपना है नाही, जातै अपने विषय कौ तारतम्य रूप सपूर्ण स्पष्ट न जानै । पूर्वं आचार्यनि करि प्रत्यक्ष का लक्षण विशद वा स्पष्ट ही कह्या है । असे ए सर्व मतिज्ञान के भेद जानने; ते भेद प्रमाण है, जातै ए सर्व सम्यग्ज्ञान है । बहुरि "सम्यग्ज्ञानं प्रमाणं" असा सिद्धात विषै कह्या है ।

एक्कचउक्कं चउवीसट्ठावीसं च तिप्पडिं किच्चा ।
इगिछब्बारसगुणिदे, मदिणाणे होंति ठाणाणि ॥३१४॥

एकचतुष्कं चतुर्विंशत्यष्टाविंशतिश्च त्रिःप्रति कृत्वा ।
एकषट्द्वादशगुणिते, मतिज्ञाने भवंति स्थानानि ॥३१४॥

टीका – मतिज्ञान सामान्य अपेक्षा करि तौ एक है, अर अवग्रह, ईहा, अवाय धारणा की अपेक्षा च्यारि है । बहुरि पाच इद्रिय, छठा मन करि अर अवग्रह, ईहा,

अवाय, धारणा की अपेक्षा चौवीस है। बहुरि व्यजन अर अर्थ का भेद कीए अठाईस है, सो एक, च्यारि, चौवीस, अठाईस (१।४।२४।२८) । इन च्यार्यो को जुदे-जुदे तीन जायगा माडिए । तहा एक जायगा तौ सामान्यपनै अपने-अपने विषय कौं जानै है, असा विषय सबंधी एक भेद करि गुणिए, तब तौ एक, च्यारि, चौवीस, अठाईस ही भेद भए । बहुरि दूसरी जायगा बहु, बहुविध, क्षिप्र, अनिसृत, अनुक्त, ध्रुव ए छह प्रकार विषय के भेद करि गुणिए, तब छह (६), चौबीस (२४), के एक सौ चवालीस (१४४), एक सौ अडसठि (१६८) असें मतिज्ञान के आधे विषय भेदनि की अपेक्षा भेद भएं । बहुरि तीसरी जायगा उनके प्रतिपक्षी सहित बारह विषय भेदनि करि गुणिए, तहां बारह (१२), अडतालीस (४८), दोय सै अठ्यासी (२८८), तीन सै छत्तीस (३३६) सर्व विषय भेदनि की अपेक्षा मतिज्ञान के भेद भए । असै विवक्षाभेद करि मतिज्ञान के स्थान दिखाए ।

आगै श्रुतज्ञान की प्ररूपणा का आरभ करता सता प्रथम ही श्रुतज्ञान का सामान्य-लक्षण कहै हैं –

अत्थादो अत्थंतरमुवलंभंतं भणंति सुदणाणं ।
आभिणिबोहियपुव्वं, णियमेणिह सद्दजं पमुहं ।।३१५।।[1]

अर्थादर्थांतरमुपलभमानं भणंति श्रुतज्ञानम् ।
आभिनिबोधिकपूर्वं, नियमेनेह शब्दज प्रमुखम् ।।३१५।।

टीका – मतिज्ञान करि निश्चय कीया जो पदार्थ, तिसकौ अवलबि करि, तिसही पदार्थ के सम्बन्ध कौ लीए, अन्य कोई पदार्थ, ताकौ जो जानै, सो श्रुतज्ञान है । सो श्रुतज्ञानावरण, वीर्यांतराय कर्म के क्षयोपशम तै उपजै है, असें मुनीश्वर कहै है ।

कैसा है श्रुतज्ञान ?

आभिनिबोधिक जो मतिज्ञान, सो है पहिलै जाके, पहिलै मतिज्ञानावरण के क्षयोपशम तै मतिज्ञान होइ, पीछै मतिज्ञान करि जो पदार्थ जान्या, ताका अवलबन करि अन्य कोई पदार्थ का जानना होइ, सोई श्रुतज्ञान है । असा नियम जानना ।

१ षट्खडागम – धवला पुस्तक १, गाथा १८३, पृष्ठ ३६१ ।

पहिलै मतिज्ञान भए बिना, सर्वथा श्रुतज्ञान न होइ । तीहिं श्रुतज्ञान के दोय भेद है । एक अक्षरात्मक, एक अनक्षरात्मक । इनि विषै **शब्दजं** कहिए अक्षर, पद, छदादिरूप शब्द तै उत्पन्न भया, जो अक्षरात्मक श्रुतज्ञान, सो प्रमुख कहिए मुख्य-प्रधान है, जातै देना, लेना, शास्त्र पढना इत्यादिक सर्व व्यवहारनि का मूल अक्षरात्मक श्रुतज्ञान है । बहुरि लिग जो चिह्न, तातै उत्पन्न भया, अैसा अनक्षरात्मक श्रुतज्ञान सो एकेद्रिय तै लगाइ पचेद्रिय पर्यत सर्व जीवनि कै है । तथापि यातै किछू व्यवहार प्रवृत्ति नाही, तातै प्रधान नाही ।

बहुरि **"श्रूयते इति श्रुतः शब्दः तदुत्पन्नमर्थज्ञानं श्रुतं"** सुणिए ताकौ शब्द कहिए । शब्द तै भया जो अर्थज्ञान, ताकौ श्रुतज्ञान कहिए । इस मे भी अर्थ विषै अक्षरात्मक श्रुतज्ञान ही प्रधान आया । अथवा श्रुत अैसा रूढि शब्द है, सो मतिज्ञान पूर्वक अर्थांतर का जानने रूप ज्ञान का विशेष, तीहि अर्थ विषै प्रवर्तै है । जैसै कुशल शब्द का अर्थ तौ यहु जो **कुश** कहिए डाभ ताकौ **लाति** कहिये दे, सो कुशल । परतु रूढि तै प्रवीण पुरुष का नाम कुशल है । तैसै यहु श्रुत शब्द जानना ।

तहां **'जीवः अस्ति'** अैसा शब्द कह्या । तहा कर्ण इन्द्रिय रूप मतिज्ञान करि **जीवः अस्ति** अैसे शब्द कौ ग्रह्या । बहुरि तीहि ज्ञान करि 'जीव नामा पदार्थ है' अैसा जो ज्ञान भया, सो श्रुतज्ञान है । शब्द अर अर्थ के वाच्य-वाचक सबध है । अर्थ वाच्य है, शब्द वाचक है । अर्थ है सो उस शब्द करि कहने योग्य है । शब्द उस अर्थ का कहन हारा है । सो इहा **'जीवः अस्ति'** अैसै शब्द का जानना तौ मतिज्ञान है । अर उसके निमित्त तै जीव नामा पदार्थ का अस्तित्व जानना, सो श्रुतज्ञान है । अैसै ही सर्व अक्षरात्मक श्रुतज्ञान का स्वरूप जानना । अक्षरात्मक जो शब्द, तातै उत्पन्न भया जो ज्ञान, ताकौ भी अक्षरात्मक कह्या ।

इहा कार्य विषै कारण का उपचार किया है । परमार्थ तै ज्ञान कोई अक्षररूप है नाही । बहुरि जैसै शीतल पवन का स्पर्श भया, तहा शीतल पवन का जानना, तौ मतिज्ञान है । बहुरि तिस ज्ञान करि वायु की प्रकृति वाले को यहु शीतल पवन अनिष्ट है, अैसा जानना, सो श्रुतिज्ञान है । सो यहु अनक्षरात्मक श्रुतज्ञान है । अक्षर के निमित्त तै भया नाही । अैसै ही सर्व अनक्षरात्मक श्रुतज्ञान का स्वरूप जानना ।

आगै श्रुतज्ञान के अक्षरात्मक अनक्षरात्मक भेदनि कौ दिखावै है—

लोगाणमसंखमिदा, अणक्खरप्पे हवंति छट्ठाणा ।
वेरूवछट्ठवग्गपमाणं रूऊणमक्खरगं ॥३१६॥

लोकानामसंख्यमितानि, अनक्षरात्मके भवंति षट्स्थानानि ।
द्विरूपषष्ठवर्गप्रमाणं रूपोनमक्षरगं ॥३१६॥

टीका – अनक्षरात्मक श्रुतज्ञान के भेद पर्याय अर पर्यायसमास, तीहिं विषै जघन्य सौ लगाइ उत्कृष्ट पर्यंत असंख्यात लोक प्रमाण ज्ञान के भेद हो हैं। ते भेद असंख्यात लोक बार षट्स्थानपतित वृद्धि कौं लीए हैं। बहुरि अक्षरात्मक श्रुतज्ञान है, सो द्विरूप वर्गधारा विषै जो एकट्ठी नामा छठा स्थानक कह्या, तामैं एक घटाए, जो प्रमाण रहै, तितने अपुनरुक्त अक्षर हैं। तिनकी अपेक्षा संख्यात भेद लीए है। विवक्षित अर्थ कौं प्रकट करने निमित्त बार बार जिन अक्षरनि कौं कहिए, ऐसे पुनरुक्त अक्षरनि का प्रमाण अधिक संभवै है। सो कथन आगै होइगा।

आगै श्रुतज्ञान का अन्य प्रकार करि भेद कहने के निमित्त दोय गाथा कहैं हैं —

पज्जायक्खरपदसंघादं[1] पडिवत्तियाणिजोगं च ।
दुगवारपाहुडं च य, पाहुडयं वत्थुपुव्वं च ॥३१७॥

तेसिं च समासेहि य, वीसविहं वा हु होदि सुदणाणं ।
आवरणस्स वि भेदा, तत्तियमेत्ता हवंति त्ति ॥३१८॥[2]

पर्यायाक्षरपदसंघातं प्रतिपत्तिकानुयोगं च ।
द्विकवारप्राभृतं च, च प्राभृतकं वस्तु पूर्वं च ॥३१७॥

तेषां च समासैश्च, विंशविधं वा हि भवति श्रुतज्ञानम् ।
आवरणस्यापि भेदाः, तावन्मात्रा भवंति इति ॥३१८॥

टीका – १ पर्याय, २. अक्षर, ३ पद, ४ संघात, ५ प्रतिपत्तिक, ६ अनुयोग, ७ प्राभृत-प्राभृत, ८ प्राभृत, ९ वस्तु, १० पूर्व दश तौ ए कहे।

---

१ षट्खंडागम – धवला पुस्तक ६, पृष्ठ २१ की टीका।
२ षट्खंडागम – धवला पुस्तक ६, पृष्ठ २१ की टीका।

ते पर्याय आदिक दश भेद कहे, तिनके समासनि करि दश भेद भए, मिलि-करि श्रुतज्ञान के बीस भेद भए। ते कहिए है – १ पर्याय, २ पर्यायसमास, ३ अक्षर, ४. अक्षरसमास, ५ पद, ६ पदसमास, ७. सघात, ८ सघातसमास, ९ प्रतिपत्तिक, १० प्रतिपत्तिकसमास, ११ अनुयोग, १२ अनुयोगसमास, १३ प्राभृतक–प्राभृतक, १४. प्राभृतक–प्राभृतकसमास, १५ प्राभृत, १६ प्राभृत-समास, १७. वस्तु, १८ वस्तुसमास, १९. पूर्व २०. पूर्वसमास असैं बीस भेद है।

इहां अक्षरादि गोचर जो अर्थ, ताके जाननेरूप जो भाव श्रुतज्ञान, ताकी मुख्यता जाननी। बहुरि जातै श्रुतज्ञानावरण के भी तितने ही बीस भेद है, तातै श्रुतज्ञान के भी बीस भेद ही कहे हैं।

आगे पर्याय नामा प्रथम श्रुतज्ञान का भेद, ताका निरुपण के अर्थि च्यारि गाथा कहै है—

णवरि विसेसं जाणे, सुहमजहण्णं तु पज्जयं णाणं।
पज्जायावरणं पुण, तदणंतरणाणभेदम्हि ॥३१९॥

नवरि विशेषं जानीहि, सूक्ष्मजघन्यं तु पर्यायं ज्ञानम्।
पर्यायावरणं पुनः, तदनंतरज्ञानभेदे ॥३१९॥

टीका – यहु नवीन विशेष जानहु, जो पर्याय नामा प्रथम श्रुतज्ञान का भेद, सो सूक्ष्म निगोदिया लब्धि अपर्याप्त सबधी सर्व तै जघन्य श्रुतज्ञान जानना। बहुरि पर्याय श्रुतज्ञान का आवरण, सो पर्याय श्रुतज्ञान कौ नाही आवरै है। वाके अनतरि जो पर्याय ज्ञान तै अनत भाग वृद्धि लीए पर्यायसमास ज्ञान का प्रथम भेद, तीहिं विषै पर्याय ज्ञान का आवरण है, जातै उदय आया जो पर्याय ज्ञान, आवरणके समय प्रबद्ध का उदयरूप निषेक, ताकै सर्वघाती स्पर्धकनि का उदय नाही, सो क्षय है, अर तेई सर्वघाती स्पर्धक, जे अगिले निषेक सबधी सत्ता मे तिष्ठै है, तिनिका उपशम है। अर देशघाती स्पर्धकनि का उदय है, सो असा पर्याय ज्ञानावरण का क्षयोपशम सदा पाइए तातै, पर्याय ज्ञान का आवरण करि पर्याय ज्ञान आवरै नाही। पर्याय-समासज्ञान का प्रथमभेद ही आवरै है। जो पर्याय ज्ञान भी आवरै तौ ज्ञान का अभाव होइ, ज्ञान गुणका अभाव भए, गुणी (असैं) जीव द्रव्य का भी अभाव होइ, सो असैं होइ नाही, तातै पर्यायज्ञान निरावरण ही है।

अनुभाग रचना विषै भी स्थापित कीया जो सिद्धराशि का अनतवा भागमात्र श्रुतज्ञानावरण का द्रव्य, जो परमाणूनि का समूह, सो द्रव्य के अनुभाग की क्रम तै हानि-वृद्धि करि सयुक्त है। बहुरि नानागुणहानि स्पर्धक वर्गणारूप भेद लीए हैं, तिस द्रव्य विषै सर्व तै थोरा उदयरूप अनुभाग जाका क्षीण भया, असा जो सर्वघाती स्पर्धक, तिसही को पर्याय ज्ञान का आवरण कह्या है, तितने आवरण का सदा काल उदय न होइ, तातै भी पर्याय ज्ञान निरावरण ही है।

सुहमणिगोदअपज्जत्तयस्स जादस्स पढमसमयम्हि।
हवदि हु सव्वजहण्णं, णिच्चुग्घाडं णिरावरणं ॥३२०॥[1]

सूक्ष्मनिगोदापर्याप्तकस्य जातस्य प्रथमसमये।
भवति हि सर्वजघन्यं, नित्योद्घाटं निरावरणम् ॥३२०॥

टीका – सूक्ष्म निगोद लब्धि अपर्याप्तक जीव का जन्म होतै पहिला समय विषै सर्व तै जघन्य शक्ति को लीए पर्याय नामा श्रुतज्ञान हो है, सो निरावरण है। इतने ज्ञान का कबहू आच्छादन न होइ। याहीतै नित्योद्घाट कहिए सदाकाल प्रकट प्रकाशमान है। सो यहु गाथा पूर्वाचार्यनि करि प्रसिद्ध है। इहा अपना कह्या व्याख्यान की दृढता के निमित्त उदाहरणरूप लिखी है।

सुहमणिगोदअपज्जत्तगेसु सगसंभवेसु भमिऊण।
चरिमापुण्णतिवक्काणादिमवक्कट्ठियेव हवे ॥३२१॥

सूक्ष्मनिगोदापर्याप्तकेषु स्वकसंभवेषु भ्रमित्वा।
चरमापूर्णत्रिवक्राणा आदिमवक्रस्थिते एव भवेत् ॥३२१॥

टीका – सूक्ष्म निगोद लब्धि अपर्याप्तक जीव, सो अपने विषै सभवते जे छह हजार बारह बार क्षुद्रभव, तिनि विषै भ्रमण करि अत का लब्धि अपर्याप्तकरूप क्षुद्रभव विषै तीन वक्रता लीए, जो विग्रह गति, ताकरि जन्म धर्या होइ, ताके विग्रह गति मे पहिली वक्रता सबधी समय विषै तिष्ठता जीव ही कै सर्व तै जघन्य पर्याय नामा श्रुतज्ञान हो है। बहुरि तिसही कै स्पर्शन इद्रिय सबधी जघन्य मतिज्ञान हो है।

---

१. षट्खडागम – धवला पुस्तक ६, पृष्ठ २१ की टीका।

बहुरि तिसही कै अचक्षुदर्शनावरण के क्षयोपशम तै उपज्या जघन्य अचक्षुदर्शन भी हो है। सो इहा बहुत क्षुद्रभवरूप पर्याय के धरने तै उत्पन्न भया बहुत सक्लेश, ताके बधने करि आवरण का अति तीव्र अनुभाग का उदय हो है। तातै क्षुद्रभवनि का अत क्षुद्रभवनि विषै पर्यायज्ञान कह्या है। बहुरि द्वितीयादि समयनि विषै ज्ञान बधता संभवै है, तातै तीनि वक्र विषै प्रथम वक्र का समय ही विषै पर्यायज्ञान कह्या है।

सुहमणिगोदअपज्जत्तयस्स जादस्स पढमसमयम्हि ।
फासिंदियमदिपुव्वं, सुदणाणं लद्धिअक्खरयं ॥३२२॥[1]

सूक्ष्मनिगोदापर्याप्तकस्य जातस्य प्रथमसमये ।
स्पर्शनेंद्रियमतिपूर्वं श्रुतज्ञानं लब्ध्यक्षरकं ॥३२२॥

टीका – सूक्ष्म निगोद लब्धि अपर्याप्तक जीव कै उपजने का पहिला समय विषै सर्व ते जघन्य स्पर्शन इद्रिय सबधी मतिज्ञानपूर्वक लब्धि अक्षर है, दूसरा नाम जाका, असा पर्याय ज्ञान हो है। लब्धि कहिए श्रुतज्ञानावरण का क्षयोपशम, वा जानन शक्ति, ताकरि अक्षर कहिए अविनाशी, सो असा पर्यायज्ञान ही है, जातै इतना क्षयोपशम सदाकाल विद्यमान रहै है।

आगे दश गाथानि करि पर्यायसमास ज्ञान कौ प्ररूपै है।

अवरुवरिम्मि अणंतमसंखं संखं च भागवड्ढीए ।
संखमसंखमणंतं, गुणवड्ढी होंति हु कमेण ॥३२३॥[2]

अवरोपरि अनंतमसंख्यं संख्यं च भागवृद्धयः ।
सख्यमसंख्यमनतं, गुणवृद्धयो भवति हि क्रमेण ॥३२३॥

टीका – सर्व तै जघन्य पर्याय नामा ज्ञान, ताके ऊपरि आगे अनुक्रम तै आगे कहिए है। तिस परिपाटी करि १ अनत भागवृद्धि, २ असख्यात भागवृद्धि, ३ सख्यात भागवृद्धि, ४ सख्यात गुणवृद्धि, ५ असख्यात गुणवृद्धि, ६ अनतगुण वृद्धि, ७ ए षट्स्थान पतित वृद्धि हो है।

---

१ षट्खडागम – धवला पुस्तक ६, पृष्ठ २२ की टीका।
२ षट्खडागम – धवला पुस्तक ६, पृष्ठ २२ की टीका।

इहा कोऊ कहे कि सर्व जघन्य ज्ञान कौ अनत का भाग कैसे सभवे ?

ताका समाधान–जो द्विरुपवर्गधारा विषै अनतानत वर्गस्थान भए पीछे, क्रम तै जीवराशि, पुद्गल राशि, काल समयराशि, श्रेणी आकाशराशि हो है । तिनिके ऊपरि अनतानत वर्गस्थान भए सूक्ष्म निगोद लब्धि अपर्याप्तक सबधी जघन्य ज्ञान के अविभाग प्रतिच्छेदनि का प्रमाण हो है । जाका भाग न होइ असे ज्ञान शक्ति के अश, तिनिका असा परिमाण है । ताते तिनिकी अपेक्षा अनत का भागहार संभवै है ।

जीवाणं च य रासी, असंखलोगा वरं खु संखेज्जं ।
भागगुणम्हि य कमसो, अवट्ठिदा होंति छट्ठाणे ।।३२४।।

जीवानां च च राशिः असंख्यलोका वरं खलु संख्यातम् ।
भागगुणयोश्च क्रमश अवस्थिता भवंति षट्स्थाने ।।३२४।।

टीका – इहा अनतभाग आदिक छह स्थानकनि विषै ए छह सदृष्टि अवस्थित कहिए, नियमरूप जाननी । अनत विषै तौ जीवराशि के सर्व जीवनि का परिमाण सो जानना । असख्यात विषै असख्यात लोक जो असख्यात गुणा लोकाकाश के प्रदेशनि का परिणाम सो जानना । सख्यात विषै उत्कृष्ट सख्यात जो उत्कृष्ट सख्यात का परिणाम सो जानना । सोई तीनो प्रमाण भाग वृद्धि विषै जानना । ये ही गुणवृद्धि विषै जानना । भागवृद्धि विषै इनि प्रमाणनि का भाग पूर्वस्थान कौं दीए, जो परिणाम आवै, तितने पूर्वस्थान विषै मिलाए, उत्तरस्थान होइ । गुणवृद्धि विषै इनि प्रमाणनि करि पूर्वस्थान कौ गुणे, उत्तरस्थान हो हैं ।

उव्वकं चउरक, पणछस्सत्तक अट्ठअंकं च ।
छव्वड्ढीण सण्णा, कमसो संदिट्ठिकरणट्ठं ।।३२५।।

उर्वंकश्चतुरकः पंचषट्सप्ताकः अष्टाकश्च ।
षड्वृद्धीना संज्ञा, क्रमशः संदृष्टिकरणार्थम् ।।३२५।।

टीका – बहुरि लघुसदृष्टि करने के निमित्त अनत भाग वृद्धि आदि छह वृद्धिनि की अन्यसज्ञा सदृष्टि सो कहै हैं – तहा अनत भागवृद्धि की उर्वंक कहिए उकार उ, असख्यात भागवृद्धि की च्यारि का अक (४), सख्यात भागवृद्धि की पाचका अक (५), सख्यात गुणवृद्धि की छह का अक (६), असख्यात गुणवृद्धि की

सात का अक (७), अनत गुणवृद्धि की आठ का अक (८), अैसे ए सहनानी जाननी ।

अंगुलअसंखभागे, पुव्वगवड्ढीगदे दु परवड्ढी ।
एक्कं वारं होदि हु, पुणो पुणो चरिम उड्ढि त्ती ॥३२६॥

अंगुलासख्यातभागे, पूर्वगवृद्धिगतेतु परवृद्धिः ।
एकं वारं भवति हि, पुनः पुनः चरमवृद्धिरिति ॥३२६॥

टीका – पूर्ववृद्धि जो पहिली पहिली वृद्धि, सो सूच्यगुल का असख्यातवा भाग प्रमाण होइ, तब एक एक बार परवृद्धि कहिए पिछली पिछली वृद्धि होइ, अैसे बार बार अत की वृद्धि, जो अनतगुण वृद्धि तीहि पर्यत हो है, अैसा जानना ।

अब याका अर्थ यत्र द्वार करि दिखाइए है । तहा यत्र विषै अनतभागादिक की उकार आदि सदृष्टि कही थी, सो लिखिए है ।

पर्याय समास ज्ञान विषै वृद्धि का यंत्र

उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ६
उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ६
उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ७
उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ६
उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ६
उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ७
उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ६
उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ६
उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ८

बहुरि सूच्यगुल का असख्यातवा भाग प्रमाण बार की जायगा दोय बार लिखिए है । सो इहा पर्याय नाम श्रुतज्ञान का भेद, तातै अनत भाग वृद्धि लिए पर्याय समास नामा श्रुतज्ञान का प्रथम भेद हो है । बहुरि इस प्रथम भेद तै अनत भागवृद्धि लीए पर्याय समास का दूसरा भेद हो है । अैसे सूच्यगुल का असख्यातवा भाग प्रमाण अनत भागवृद्धि होइ, तब एक बार असख्यात भागवृद्धि होइ । इहा अनत भागवृद्धि पहिलैं कही थी, तातै पूर्व कहिए । अर असख्यात भागवृद्धि वाके पीछै कही थी, तातै याकौ पर कहिए । सो इहा यत्र विषै प्रथम पक्ति का प्रथम कोष्ठ विषै दोय बार उकार लिख्या, सो तो सूच्यगुल का असख्यातवा भाग प्रमाण अनत भाग-

वृद्धि की सहनानी जाननी । अर ताके आगै च्यारि का अक लिख्या, सो एक बार असख्यात भागवृद्धि की सहनानी जाननी । बहुरि इहा तै सूच्यगुल का असख्यातवा भाग प्रमाण अनत भागवृद्धि भए पीछै दूसरा एक बार असख्यात भागवृद्धि होइ । असै ही अनुक्रम तै सूच्यगुल का असख्यातवा भाग प्रमाण असख्यात भागवृद्धि हो है । तातै यत्र विषै प्रथम पक्ति का दूसरा कोठा विषै प्रथम कोठावत् दोय उकार, एक च्यारि का अक लिख्या । दूसरी बार लिखने तै सूच्यगुल का असख्यातवा भाग बार जानि लेना ।

बहुरि इहा तै आगै सूच्यगुल का असख्यातवा भाग प्रमाण अनत भागवृद्धि होइ, तब एक बार सख्यात भागवृद्धि होइ । यातै प्रथम पक्ति का तीसरा कोठा विषै दोय उकार अर एक पाच का अक लिख्या । अब इहा तै जैसै पूर्वै अनत भागवृद्धि लीए, सूच्यगुल का असख्यातवा भाग प्रमाण असख्यात भागवृद्धि होइ, पीछै सूच्यगुल का असख्यातवा भाग प्रमाण अनत भागवृद्धि होइ, तब एक बार सख्यात भागवृद्धि भई, तैसै ही याही अनुक्रम तै दूसरा सख्यात भागवृद्धि भई । बहुरि याही अनुक्रम तै तीसरा भई, असै सख्यात भागवृद्धि भी सूच्यगुल का असंख्यातवा भाग प्रमाण बार हो है । तातै इहा यत्र विषै प्रथम पक्ति विषै जैसै तीन कोठे किये थे, तैसै अगुल का असख्यातवा भाग की सहनानी के अर्थि दूसरा तीन कोठे उस ही पक्ति विषै कीए । इहा असख्यात भागवृद्धि कौ पूर्व कहिए, सख्यात भागवृद्धि कौ पर कहिए । बहुरि इहा तै सूच्यगुल का असख्यातवा भाग प्रमाण अनत भागवृद्धि होइ, एक बार असख्यात भागवृद्धि होइ' असै सूच्यगुल का असख्यातवा भागप्रमाण असख्यात भागवृद्धि होइ, सो याकी सहनानी के अर्थि यत्र विषै दोय उकार अर च्यारि का अक करि सयुक्त दोय कोठे कीए । बहुरि यातै आगै सूच्यगुल का असख्यातवा भागप्रमाण अनत भाग-वृद्धि होइ करि एक बार सख्यात गुणवृद्धि होइ; सो याकी सहनानी के अर्थि प्रथम पक्ति का नवमा कोठा विषै दोय उकार अर छह का अक लिख्या । बहुरि जैसै प्रथम पवित विषै अनुक्रम कह्या, तैसै ही आदि तै लेकरि सर्व अनुक्रम दूसरा भया । तब एक बार दूसरा सख्यात गुणवृद्धि भई । असै ही अनुक्रम तै सूच्यगुल का असख्यातवा भाग प्रमाण सख्यात गुणवृद्धि हो है, सो सूच्यगुल का असख्यातवा भाग प्रमाण तैसै होने की सहनानी के अर्थि यत्र विषै जैसी प्रथम पक्ति थी, तैसै ही वाके नीचै दूसरी पक्ति लिखी । बहुरि इहा तै जैसै प्रथम पक्ति विषै अनुकम कह्या था, तैसै अनुक्रम तै बहुरि वृद्धि भई । विशेष इतना जो उहा पीछै ही पीछै एक बार सख्यात

गुणवृद्धि भई थी, इहा पीछै ही पीछै एक वार असख्यात गुणवृद्धि भई। याही तै यंत्र विषै तीसरी पक्ति प्रथम पक्ति सारिखी लिखी। नवमा कोठा मैं उहा तौ दोय उकार अर छह का अक लिख्या था, इहा तीसरी पक्ति विषै नवमा कोठा विषै दोय उकार अर सप्त का अक लिख्या। इहा और सर्व कहिए अर असंख्यात गुणवृद्धि पर कहिए। बहुरि इहातै जैसे तीनो ही पक्ति विषै आदि तै लेकरि अनुक्रम तै वृद्धि भई, तैसे ही अनुक्रम तै सूच्यगुल का असंख्यातवां भाग प्रमाण होइ। तब असख्यात गुण-वृद्धि भी सूच्यगुल का असख्यातवा भाग प्रमाण होइ निवरै, सो इहा यंत्र विषै सूच्यं-गुल का असख्यातवा भाग प्रमाण तैसे ही होने की सहनानी के अर्थि जैसे तीन पक्ति करी थी, तैसे ही दूसरी पक्ति लिखी, ऐसे छह पक्ति भई।

अब इहा तै आगै जैसे आदि तै लेकरि अनुक्रम तै तीनो पक्ति विषै वृद्धि कही थी, तैसे ही तैसे अनुक्रम तै फेरि सर्ववृद्धि भई। विशेष इतना जो तीसरी पक्ति का अत विषै जहा असख्यात गुणवृद्धि कही थी, सो इहा तीसरी पक्ति का अत विषै एक वार अनत गुणवृद्धि हो है। याही तै यत्र विषै भी पहिली, दूसरी, तीसरी सारिखी तीन पक्ति और लिखी। उहा तीसरी पक्ति का नवमा कोठा विषै दोय उकार सप्त का अक लिख्या था। इहा तीसरी पक्ति का नवमा कोठा विषै दोय उकार अर आठ का अक लिख्या, सो इहा अनत गुणवृद्धि कौ पर कहिए, अन्य सर्व पूर्व कहिए। याके आगै कोई वृद्धि रही नाही, तातै याकौ पूर्व सज्ञा न होइ, याही तै यहु अनत गुणवृद्धि एक वार ही हो है। सो इस अनत गुणवृद्धि कौ होत सतै जो प्रमाण भया, सोई नवीन षट्स्थानपतित वृद्धि का पहिला स्थानक जानना। ऐसे पर्यायसमास ज्ञान विषै असख्यात लोक मात्र वार षट्स्थानपतित वृद्धि हो है।

अब याका कथन प्रकट कर दिखाइए है–द्विरूप वर्गधारा विषै जीवराशि तै अनतानत गुणा जघन्य पर्याय नामा ज्ञान की अपेक्षा अपने विषय कौं प्रकाशनेरूप शक्ति के अविभाग प्रतिच्छेद कहे हैं, सो इस प्रमाण कौ जीवराशि प्रमाण अनत का भाग दीए जो परिमाण आवै, ताकौ उस जघन्य ज्ञान विषै मिलाए, पर्यायसमास ज्ञान का प्रथम भेद हो है। इहा एक वार अनत भागवृद्धि भई। बहुरि इस पर्याय-समास ज्ञान का प्रथम भेद कौं जीवराशि प्रमाण अनत का भाग दिए, जो परिमाण आवै, तितना उस पर्यायसमास ज्ञान का प्रथम भेद विषै मिलाए, पर्यायसमास ज्ञान का दूसरा भेद हो है। इहा दूसरा अनत भागवृद्धि भई। बहुरि उस दूसरे भेद कौ

अनंत का भाग दीए, जो परिमाण आवै, तितना उस दूसरा भेद विषै मिलाए, पर्यायसमास ज्ञान का तीसरा भेद हो है । इहा तीसरा अनंत भागवृद्धि भई । बहुरि उस तीसरे भेद को अनंत का भाग दीए जो परिमाण आया, तितना उस तीसरा भेद विषै मिलाए, पर्यायसमास ज्ञान का चौथा भेद हो है । इहा चौथा अनंत भागवृद्धि भई । इसही अनुक्रम तै सूच्यगुल का असख्यातवा भाग प्रमाण अनंत भागवृद्धि हूवा थका पर्यायसमास ज्ञान का भेद भया, ताकौ एक बार असख्यात लोक प्रमाण जो असख्यात, ताका भाग दिए जो परिमाण आवै, तितना उस ही भेद विषै मिलाए, एक बार असख्यात भागवृद्धि लीए पर्यायसमास ज्ञान का भेद हो है । बहुरि याकौं अनंत का भाग दीए, जो परिमाण आवै, तितना इस ही विषै मिलाए, पर्यायसमास ज्ञान का भेद भया । इहा तै बहुरि अनंत भागवृद्धि का प्रारम्भ हुवा, सो असे ही सूच्यगुल का असख्यातवा भाग प्रमाण अनंत भागवृद्धि भए जो पर्यायसमास ज्ञान का भेद भया, ताकौ फेरि असख्यात का भाग दीए जो परिमाण आया, ताकौ उस ही भेद विषै मिलाए, दूसरा असख्यात भागवृद्धि लीए पर्यायसमास ज्ञान का भेद हो है ।

असै अनुक्रम तै सूच्यगुल का असख्यातवा भाग प्रमाण असख्यात भागवृद्धि भी पूर्ण होइ । तहा जो पर्यायसमास ज्ञान का भेद भया । ताकौ बहुरि अनंत का भाग दीए, जो परिमाण भया, ताकौ तिस ही मे मिलाए, पर्यायसमास ज्ञान का भेद होइ । तब इहा अनंत भागवृद्धि का प्रारम्भ हुवा, सो सूच्यगुल का असख्यातवा भाग प्रमाण अनंत भागवृद्धि पूर्ण होइ, तब जो पर्यायसमास ज्ञान का भेद भया, ताकौ उत्कृष्ट सख्यात का भाग दीए, जो परिमाण होइ, ताकौ उस ही विषै मिलाए, पहिले सख्यात भागवृद्धि लीए, पर्यायसमास का भेद हो है । यातै आगे फेरि अनंत भाग-वृद्धि का प्रारम्भ हुवा सो असै ही पूर्वं यत्रद्वार करि जो अनुक्रम कह्या है, तिस अनुक्रम के अनुसारि वृद्धि जानि लेनी । इतना जानि लेना, जिस भेद तै आगे अनंत भागवृद्धि होइ, तहा तिस ही भेद कौ जीवराशि प्रमाण अनंत का भाग दीए, जो परिणाम आवै तितना तिस ही भेद विषै मिलाए उस तै अनंतरवर्ती भेद होइ । बहुरि जिस भेद तै आगे असख्यात भागवृद्धि होइ, तहा तिस ही भेद कौ असख्यात लोक प्रमाण असख्यात का भाग दीए, जो परिमाण आवै, ताकौ तिस ही भेद विषै मिलाए, उस भेद तै अनंतरवर्ती भेद हो है । बहुरि जिस भेद ते आगे असख्यात[1] भागवृद्धि होइ, तहा तिस ही भेद कौं उत्कृष्ट सख्यात प्रमाण सख्यात का भाग दीए जो परिमाण आवै, तितना तिस ही भेद विषै मिलाए, उस भेद तै आगिला भेद होइ । बहुरि जिस भेद तै आगे

संख्यात गुणवृद्धि होइ, तहा तिस भेद कौ उत्कृष्ट सख्यात करि गुणिए, तब उस भेद तै अनतरवर्ती भेद होइ । बहुरि जिस भेद तै आगै असख्यात गुणवृद्धि होइ, तहा तिस ही भेद को असख्यातलोक करि गुणिए, तब उस भेद तै आगिला भेद होइ । बहुरि जिस भेद तै आगै अनत गुणवृद्धि होइ, तहा तिस ही भेद कौ जीवराशि का प्रमाण अनत करि गुणिए, तब तिस भेद तै आगिला भेद होइ । अैसै षट्स्थानपतित वृद्धि का अनुक्रम जानना ।

इहा जो सख्या कही है, सो सर्व संख्या ज्ञान का अविभाग प्रतिच्छेदनि की जाननी । अरु जो इहा भेद कहे है, तिनका भावार्थ यहु है – जो जीव कै कै तौ पर्यायि ज्ञान ही होइ और उसतै बधती ज्ञान होइ तौ पर्यायसमास का प्रथम भेद ही होय; अैसा नाही कि पर्यायिज्ञान तै एक, दोय आदि अविभाग प्रतिच्छेद बधता भी किसी जीव के ज्ञान होइ अर उस पर्यायसमास के प्रथम भेद तै बधता ज्ञान होइ तौ पर्यायि-समास ज्ञान का दूसरा भेद ही होइ । अैसै अन्यत्र भी जानना ।

अब इहा अनत भागवृद्धिरूप सूच्यगुल के असख्यातवे भाग प्रमाण स्थान कहे, तिनिका जघन्य स्थान तै लगाइ, उत्कृष्ट स्थान पर्यंत स्थापन का विधान कहिए है ।

तहा प्रथम सज्ञा कहिए है – विवक्षित मूलस्थान कौ विवक्षित भागहार का भाग दीए, जो प्रमाण आवै, ताकौ प्रक्षेपक कहिए । तिस प्रमाण कौ तिस ही भाग-हार का भाग दीए जो प्रमाण आवै, ताकौ प्रक्षेपकप्रक्षेपक कहिए । ताकौ भी विवक्षित भागहार का भाग दीए, जो प्रमाण आवै, ताकौ पिशुलि कहिए । ताकौ भी विवक्षित भागहार का भाग दीए, जो प्रमाण आवै ताकौ पिशुलिपिशुलि कहिए । ताकौ भी विवक्षित भागहार का भाग दियें, जो प्रमाण आवै, ताकौ चूर्णि कहिए । ताकौ भी विवक्षित भागहार का भाग दीए, जो प्रमाण आवै, ताकौ चूर्णिचूर्णि कहिए । अैसै ही पूर्व प्रमाण कौ विवक्षित भागहार का भाग दीए द्वितीयादि चूर्णिचूर्णि कहिए ।

अब इहा दृष्टातरूप अक सदृष्टि करि प्रथम कथन दिखाइए है – विवक्षित जघन्य पर्यायिज्ञान का प्रमाण, पैसठि हजार पाच सै छत्तीस (६५५३६) । विवक्षित भागहार अनत का प्रमाण च्यारि (४), तहा पूर्वोक्त क्रम तै भागहार का भाग दीए, प्रक्षेपक का प्रमाण सोलह हजार तीन सौ चौरासी (१६३८४) । प्रक्षेपकप्रक्षेपक का प्रमाण च्यारि हजार छिनवै (४०९६) । पिशुलिका प्रमाण एक हजार चौईस

(१०२४) । पिशुलिपिशुलि का प्रमाण दोय सै छप्पन (२५६) । चूर्णि का प्रमाण चौसठि (६४) । चूर्णिचूर्णि का प्रमाण सोलह (१६) असें द्वितीयादि चूर्णि-चूर्णि का प्रमाण च्यारि आदि जानने ।

अब इहा ऊपरि जघन्य ६५५३६ स्थापि, नीचै एक बार प्रक्षेपक १६३८४ स्थापि, जोडै, पर्यायसमास के प्रथम भेद का इक्यासी हजार नवसै बीस (८१९२०) प्रमाण हो है ।

बहुरि ऊपरि जघन्य (६५५३६) स्थापि, नीचै दोय प्रक्षेपक (१६३८४। १६३८४) एक प्रक्षेपकप्रक्षेपक स्थापि, जोडै पर्यायसमास के द्वितीय भेद का एक लाख दोय हजार च्यारि सै (१०२४००) प्रमाण हो है ।

बहुरि ऊपरि जघन्य ६५५३६ स्थापि, नीचै तीन प्रक्षेपक (१६३८४।१६३८४ १६३८४) तीन प्रक्षेपकप्रक्षेपक एक पिशुलि स्थापि, जोडै, तीसरे भेद का एक लाख अठाईस हजार (१२८०००) प्रमाण हो है ।

बहुरि ऊपरि जघन्य स्थापि, नीचै नीचै च्यारि प्रक्षेपक, छह प्रक्षेपकप्रक्षेपक, च्यारि पिशुलि, एक पिशुलिपिशुलि स्थापि, जोडै, चौथे भेद का एक लाख साठि हजार (१६००००) प्रमाण हो है ।

बहुरि ऊपरि जघन्य स्थापि, नीचै नीचै पाच प्रक्षेपक दश प्रक्षेपकप्रक्षेपक, दश पिशुलि पाच पिशुलिपिशुलि, एक चूर्णि स्थापि, जोडै, पाचवे भेद का दोय लाख (२,०००००) प्रमाण हो है ।

बहुरि ऊपरि जघन्य स्थापि, नीचै नीचै छह प्रक्षेपक, पचदश प्रक्षेपक प्रक्षेपक, बीस पिशुलि, पद्रह पिशुलिपिशुलि, छह चूर्णि, एक चूर्णिचूर्णि स्थापि, जोडै, छठे स्थान का दोय लाख पचास हजार (२५००००) प्रमाण हो है । असें ही क्रम तै सर्व स्थाननि विषै ऊपरि तौ जघन्य स्थापन करना । ताके नीचै नीचै जितना गच्छ का प्रमाण तितने प्रक्षेपक स्थापन करने । इहा जेथवा स्थान होइ, तिस स्थान विषै तितना गच्छ जानना । जैसै छठा स्थान विषै गच्छ का प्रमाण छह होइ । बहुरि तिनके नीचे एक घाटि गच्छ का एक बार सकलन धन का जेता प्रमाण, तितने प्रक्षेपकप्रक्षेपक स्थापने । बहुरि तिनके नीचै दोय घाटि गच्छ का दोय बार सकलन धन का जेता प्रमाण, तितने पिशुलि स्थापन करने । बहुरि तिनके नीचै तीन घाटि

गच्छ का तीन बार सकलन धन का जेता प्रमाण, तितने पिशुलिपिशुलि स्थापन करने । बहुरि तिनके नीचै च्यारि घाटि गच्छ का च्यारि बार सकलन धन का जेता प्रमाण, तितने चूर्णि स्थापन करने । बहुरि तिनके नीचै पाच घाटि गच्छ का पाच बार सकलन धन का जेता प्रमाण, तितने चूर्णिचूर्णि स्थापन करने । असै ही नीचै नीचै छह आदि घाटि गच्छ का छह आदि बार सकलन धन का जेता जेता प्रमाण, तितने तितने द्वितीयादि चूर्णिचूर्णि स्थापन करने । असै स्थापन करि, जोडै, पर्यायसमास ज्ञान के भेद विषै प्रमाण आवै है ।

अब इहा एक बार दोय बार आदि सकलन धन कहे, तिनिका स्वरूप इहा ही आगै वर्णन करैगे । असै अकसदृष्टि करि वर्णन कीया । अब यथार्थ वर्णन करिए है–

पर्यायसमास ज्ञान का प्रथम भेद विषै पर्यायज्ञान तै जितने बधै तितने जुदे कीए, पर्यायज्ञान के जेते अविभाग प्रतिच्छेद है, तीहि प्रमाण मूल विवक्षित जानना । यहु जघन्य ज्ञान है । तातै इस प्रमाण का नाम जघन्य स्थाप्या । बहुरि इस जघन्य कौं जीवराशि मात्र अनत का भाग दीएं, जो प्रमाण आवै, ताका नाम प्रक्षेपक जानना । इस प्रक्षेपक कौं जीवराशि मात्र अनत का भाग दीए, जो प्रमाण आवै, सो प्रक्षेपकप्रक्षेपक जानना । असै ही क्रम तै जीवराशि मात्र अनत का भाग दीए, जो जो प्रमाण आवै, सो सो क्रम तै पिशुलि अर पिशुलिपिशुलि अर चूर्णि अर चूर्णिचूर्णि अर द्वितीय चूर्णिचूर्णि आदि जानने । सो पर्यायसमास ज्ञान का प्रथम भेद विषै ऊपरि जघन्य स्थापि, नीचै ताकी वृद्धि का एक प्रक्षेपक स्थापना । बहुरि दूसरा भेद विषै ऊपरि जघन्य स्थापि, नीचै नीचै ताकी वृद्धि के दोय प्रक्षेपक, एक प्रक्षेपकप्रक्षेपक स्थापने । बहुरि तीसरा भेद विषै ऊपरि जघन्य स्थापि, नीचै नीचै ताकी वृद्धि के तीन प्रक्षेपक, तीन प्रक्षेपकप्रक्षेपक, एक पिशुलि स्थापने । बहुरि चौथा भेद विषै जघन्य ऊपरि स्थापि, ताके नीचै नीचै ताके वृद्धि के च्यारि प्रक्षेपक, छह प्रक्षेपकप्रक्षेपक, च्यारि पिशुलि, एक पिशुलिपिशुलि स्थापने । बहुरि पाचवा भेद विषै जघन्य ऊपरि स्थापि, ताके नीचै नीचै पाच प्रक्षेपक, दश प्रक्षेपकप्रक्षेपक, दश पिशुलि, पाच पिशुलिपिशुलि, एक चूर्णि स्थापने । बहुरि छठा भेद विषै ऊपरि जघन्य स्थापि, ताके नीचै नीचै ताकी वृद्धि के छह प्रक्षेपक, पद्रह प्रक्षेपक प्रक्षेपक, बीस पिशुलि, पद्रह पिशुलिपिशुलि, छह चूर्णि, एक चूर्णिचूर्णि स्थापने । असै ही सूच्यगुल का असख्यातवा भागमात्र जे अनत भागवृद्धि सयुक्त पर्यायसमास ज्ञान के स्थान, तिनि विषै अपने - अपने जघन्य के नीचै नीचै प्रक्षेपक गच्छमात्र

स्थापने । प्रक्षेपकप्रक्षेपक एक घाटि गच्छ का एक बार सकलन धनमात्र स्थापने । पिशुलि नीय घाटि गच्छ का, दोय बार सकलन धनमात्र स्थापने । पिशुलिपिशुलि तीन घाटि गच्छ का, तीन बार सकलन धनमात्र स्थापने । चूर्णि च्यारि घाटि गच्छ का च्यारि बार सकलन धनमात्र स्थापने । चूर्णिचूर्णि पाच घाटि गच्छ का, पाच बार सकलन धनमात्र स्थापने । असे ही क्रम तै एक एक घाटि गच्छ का एक एक अधिक बार सकलन मात्र चूर्णिचूर्णि ही अत पर्यंत जानने । तहा अनत भाग-वृद्धि युक्त स्थाननि विषै अत का जो स्थान, तींहि विषै जघन्य तौ ऊपरि स्थापना । ताके नीचै नीचै सूच्यगुल का असंख्यातवा भाग प्रमाण प्रक्षेपक स्थापने । एक घाटि सूच्यगुल का असख्यातवा भाग का एक बार सकलन धनमात्र प्रक्षेपकप्रक्षेपक स्थापने । दोय घाटि सूच्यंगुल का असख्यातवा भाग का दोय बार सकलन धनमात्र पिशुलि स्थापने । तीन घाटि सूच्यगुल का असख्यातवा भाग का तीन बार सकलन धनमात्र पिशुलिपिशुलि स्थापने । च्यारि घाटि सूच्यगुल का असख्यातवा भाग का, च्यारि बार सकलन धनमात्र चूर्णि स्थापने । पाच घाटि सूच्यगुल का असख्यातवा भाग का पाच बार सकलन धनमात्र चूर्णिचूर्णि स्थापने । याही प्रकार नीचै नीचैं चूर्णिचूर्णि छह आदि घाटि, सूच्यगुल का असख्यातवा भाग का छह आदि बार सकलन धनमात्र स्थापने । तहा द्विचरम चूर्णिचूर्णि दोय का दोय घाटि सूच्यगुल का असख्यातवा भाग बार सकलन धनमात्र स्थापन करने । बहुरि अत का चूर्णिचूर्णि एक का एक घाटि सूच्यगुल का असख्यातवा भाग बार सकलन धन-मात्र स्थापन करना । परमार्थ तै अत चूर्णिचूर्णि का सकलन धन नाही है, जातै द्वितीयादि स्थान का अभाव है । याही जायगा (एक ही जायगा) अत चूर्णिचूर्णि का स्थापन करना । असै वृद्धि का अनुक्रम जानना । बहुरि इहा षट्स्थान प्रकरण विषै अनत भागवृद्धि युक्त स्थाननि के कहे जे भेद, तिनि विषै सर्वत्र प्रक्षेपक तो गच्छ-मात्र है, जेथवा भेद होइ तितने तहा प्रक्षेपक स्थापने, तातै सुगम है ।

बहुरि प्रक्षेपकप्रक्षेपक आदिकनि का प्रमाण एक बार, दोय बार आदि सकलन धन का विधान जाने बिना जान्या न जाय, तातै सो सकलन धन का विधान कहिए है –

जितने का सकलन धन कह्या होय, तितनी जायगा असै अक स्थापि, जोडने । जैसे छठा स्थान विषै दोय घाटि गच्छ का सकलन धन कह्या, तहा च्यारि जायगा या प्रकार अक स्थापि, जोडने । कैसे अक स्थापि जोडिये ? सो कहिये हैं – जितने का

करना होय, तितनी जायगा एक आदि एक एक बधता अक माडि, जोडै, एक बार सकलन धन हो है। बहुरि एक बार सकलन धन विधान विषै जो पहिलै अक लिख्या था, सोई इहा दोय बार सकलन विषै पहिलै लिखिए। अर उहा एक बार सकलन का दूसरा स्थान विषै जो अक था, ताकौ याका पहिला स्थान विषै जोडै, जो प्रमाण होइ, सो दूसरा स्थान विषै लिखिये। अर उहा तीसरा स्थान विषै जो अक था, ताकौ याका दूसरा स्थान विषै जोडै, जो होइ, सो तीसरा स्थान विषै लिखिये। अैसे क्रमतै लिखि, जोडै, दोय बार सकलन धन हो है। बहुरि इस दोय बार सकलन धन विषै जो पहिले अक लिख्या, सोई इहा लिखिये। अर इस प्रथम स्थान मे दोय बार सकलन का दूसरा स्थान का अक जोडै, दूसरा स्थान होइ। यामै वाका तीसरे स्थान का अक जोडै, याका तीसरा स्थान होइ। असै क्रम तै जितने का करना होइ, तितना जायगा लिखि जोडै। तीन बार सकलन धन होइ। याही प्रकार च्यारि बार आदि सकलन धनका विधान जानना।

इहा उदाहरण कहिये है। जैसै पर्यायसमास का छठा भेद विषै पाच का एक बार सकलन (धन) करना। तहा पाच जायगा क्रम तै एक, दोय, तीन, च्यारि, पाच का अक माडि, जोडै, पद्रह होइ। सो इतने प्रक्षेपकप्रक्षेपक जानना। बहुरि च्यारि का दोय बार सकलन (धन) करना। तहा च्यारि जायगा क्रम तै एक, तीन, छह, दश माडि जो वीस होइ, सो इतने इतने पिशुलि जानने। बहुरि तीन का तीन बार सकलन (धन) करना तहा तीन जायगा क्रम तै एक, च्यारि, दश माडि जोडै, पंद्रह होइ, सो इतने पिशुलिपिशुलि जानने। बहुरि दोय का च्यारि बार सकलन करना। तहा दोय जायगा एक, पाच, माडि जोडै, छह होइ। सो इतने चूर्णि जानने। बहुरि एक का पाच जायगा सकलन (धन) करना तहा एक जायगा एक ही है, तातै ये चूर्णिचूर्णि एक ही जानना। अैसै ही अन्यत्र भी जानना। अब अैसे ये अक माडि जोडै, एक बार सकलनादि विषै जो प्रमाण होइ, ताके ल्यावने कौ करणसूत्र कहिये है।

व्येकपदोत्तरघातः सरूपवारोद्धृतो मुखेन युतः।
रूपाधिकवारांताप्तपदाद्यंकैर्हतो वित्तं ॥१॥

जितने का सकलन धन करना होइ, तिस प्रमाण इहा गच्छ जानना। तामै एक घटाइ, अवशेष कौ उत्तर जो क्रम तै जितनी जितनी वार वधता सकलन कह्या

होइ,ताकरि गुरिगए, जो प्रमाण होइ, ताकौं जितनी वार संकलन कह्या, तामें एक जोडि, जो प्रमाण होइ, ताका भाग दीजिए, जो लब्ध होइ, तामें मुख जो पहिला स्थान का प्रमाण सो जोडिए, जो प्रमाण होइ, ताकौ जितनी वार सकलन कह्या होइ, तितनी जायगा गच्छ तै लगाइ, एक एक वधता अक माडि, परस्पर गुणे, जो प्रमाण होइ, सो तौ भाज्य । अर एक तै लगाइ एक एक वधता अक माडि, परस्पर गुणे, जो प्रमाण होइ, सो भागहार । तहा भाज्य कौ भागहार का भाग दीए, जो लब्धराशि होइ, ताकरि गुरिगए, असे करतै समस्त विवक्षित वार संकलन धन आवै है ।

इहा उदाहरण कहिए है – जैसे छठा पर्यायसमास का भेद विषै च्यारि घाटि गच्छ का जो दोय, ताका च्यारि बार सकलन धनमात्र चूर्णि कहिए । सो इहां गच्छ दोय, तामें एक घटाए, एक याकौ एक वारादि संकलन धन रचना अपेक्षा दोय बार आदि सकलन की रचना उपजै है । सो एक एक वार वधता सकलन भया, तातै उत्तर का प्रमाण एक, ताकरि गुणे भी एक ही भया । याकौ इहा च्यारि वार सकलन कह्या, सो च्यारि मे एक मिलाए, पाच भया, तिनिका भाग दीएं एक कौ पाचवां भाग भया । यामै मुख जो आदिका प्रमाण एक सो समच्छेद करि मिलाए, छह का पाचवा भाग भया । बहुरि इहा च्यारि वार कह्या है । सो तामैं एक आदि एक एक बधता, च्यारि पर्यंत अक माडि (१।२।३।४) परस्पर गुणे, चौबीस (२४) भये, सो भागहार, अर गच्छ दोय का प्रमाण तै लगाइ एक एक वधता अक माडि, (२।३।४।५) परस्पर गुणे एक सौ बीस (१२०) भाज्य, सो भाज्य कौ भागहार का भाग दीये, लब्धिराशि पाच, ताकरि पूर्वोक्त छह का पाचवा भाग कौ गुणे छह भये । सोई दोय का च्यारि बार सकलन धन जानना । असे ही तीन का तीन बार सकलन धन पीछै गच्छ तीन, एक घटाये दोय उत्तर, एक करि गुणै भी दोय, इहा तीन बार सकलन है । तातै एक अधिक बार प्रमाण च्यारि, ताका भाग दीये आधा, यामैं मुख एक जोडे ड्योढ भया । बहुरि एक आदि बार प्रमाण पर्यत एक एक अधिक अक (१।२।३) परस्पर गुणे, भागहार छह अर गच्छ आदि एक एक अधिक अंक (३।४।५) परस्पर गुणे, भाज्य साठि भाज्य कौ भागहार का भाग दीए, पाये दश, इनिकरि पूर्वोक्त ड्योढ कौ गुणे, छठा भेद विषै तीन घाटि गच्छ का तीन बार सकलन धनमात्र पिशुलिपिशुलि पद्रह हो है । असै सर्वत्र विवक्षित सकलन धन ल्यावने ।

बहुरि सस्कृत टीकाकार केशववर्णी अपने अभिप्राय करि तिनि प्रक्षेपक प्रक्षेपकादिक का प्रमाण ल्यावने निमित्त दोय गाथारूप करण सूत्र कहैं हैं –

तिरियपदे रूऊणे, तद्दिट्ठहेट्ठिल्लसंकलणवारा ।
कोट्ठधणस्साणयणे, पभवं इट्ठूणउड्ढपदसंखा ।।१।।

अनंत भागवृद्धि युक्त स्थाननि विषै जेथवा स्थान विवक्षित होइ, तीहि प्रमाण तिर्यग् गच्छ कहिये । तामै एक घटाए, ताके नीचै सकलन बार का प्रमाण हो है ।

इहां उदाहरण – जैसै छठा स्थान विषै गच्छ का प्रमाण छह मे एक घटाएं, ताके नीचै पाच सकलन बार हो है । प्रक्षेपक सम्बन्धी कोठा के नीचै एक बार, दोय बार, तीन, च्यारि बार, पाच बार, सकलन, प्रक्षेपकप्रक्षेपक आदि के एक एक कोठानि विषै संभवै है, असै ही अन्यत्र जानना । बहुरि विवक्षित कोठानि का सकलन घन ल्यावने के अर्थि जेथवा भेद होइ, तीहि प्रमाण जो ऊर्ध्व गच्छ, तीहि विषै जेती वार विवक्षित संकलन होइ, तितना घटाये, अवशेष मात्र प्रभव कहिये आदि जानना ।

तत्तोरूवहियकमे, गुणगारा होंति उड्ढगच्छो त्ति ।
इगिरूवमादिरूवोत्तरहारा होंत्ति पभवो त्ति ।।२।।

अर्थ – तिस आदि तै लगाइ, एक-एक बधता ऊर्ध्वगच्छ का प्रमाण पर्यंत, अनुक्रम करि विवक्षित के गुणकार होहि । बहुरि तिनिके नीचै एक तै लगाइ, एक एक बधता, उलटा क्रम करि प्रभव जो आदि, ताका भी नीचा पर्यंत तिनिके भागहार होहि । गुणकारनि कौ परस्पर गुणै, जो प्रमाण होइ, ताकौ भागहारनि कौ परस्पर गुणै, जो प्रमाण होइ, ताका भाग दीए, जेता प्रमाण आवै, तितने तहा प्रक्षेपक–प्रक्षेपक आदि सबधी कोठा विषै वृद्धि का प्रमाण आवै है ।

इहा उदाहरण कहिए है – अनत भागवृद्धि युक्त स्थान विषै विवक्षित छठा स्थान विषै एक घाटि तिर्यग्गच्छ प्रमाण एक वार आदि पाच सकलन स्थान है । तिनि विषै च्यारि वार सकलन[1] सबधी कोठानि विषै प्रमाण ल्याइए है । विवक्षित सकलन बार च्यारि, तिनिका इहा छठा भेद विवक्षित है । तातै ऊर्ध्वगच्छ छह, तामै घटाए, अवशेष दोय रहे, सो आदि जानना । इस आदि दोय तै लगाइ, एक एक अधिक ऊर्ध्वगच्छ छह पर्यत तौ क्रम करि गुणकार होइ । अर तिनके नीचैं उलटे क्रम करि आदि पर्यंत एक आदि एक एक अधिक भागहार होइ, सो इहा च्यारि वार

---

१ घ प्रति मे सकलन सकलन शब्द है ।

सकलन का कोठा विषै चूर्णि है। चूर्णि का प्रमाण जघन्य का पाच वार अनत का भाग दीए, जो प्रमाण होइ, सो तितना है। तिस प्रमाण के दोय, तीन, च्यारि, पाच, छह तौ क्रम तै गुणकार होइ, अर पाच, च्यारि, तीन, दोय, एक भागहार होइ। तहा गुणकारनि करि चूर्णि कौ गुणै भागहारनि का भाग दीए, यथायोग्य अपवर्तन कीए, छह गुणा, चूर्णिमात्र तिस कोठा विषै प्रमाण आवै है।

भावार्थ – असा जो दोय, तीन, च्यारि, पांच का गुणकार अर भागहार का तौ अपवर्तन भया। छह कौ एक का भागहार रह्या, तातै छह गुणा चूर्णिमात्र तहां प्रमाण है। बहुरि असै ही अनत भागवृद्धि युक्त अत भेद विषै यहु स्थान सूच्यगुल का असख्यातवा भाग का जो प्रमाण तेथवा है। तातै तिर्यग्गच्छ सूच्यगुल का असख्यातवा भागमात्र है। तामै एक घटाए, अवशेष एक वार आदि सकलन के वारै है। तिनिविषै विवक्षित च्यारि बार सकलन का कोठा विषै प्रमाण ल्याइए है। विवक्षित सकलन बार च्यारि, ऊर्ध्वगच्छ सूच्यगुल का असख्यातवा भाग मात्र मैं स्यो घटाए, अवशेष मात्र आदि है। यातै एक एक बधता क्रम करि ऊर्ध्वगच्छ सूच्यगुल का असख्यातवा भाग पर्यंत तौ गुणकार होइ। अर उलटे क्रम करि एक आदि एक एक बधता पाच पर्यंत भागहार होइ, सो च्यारि बार सकलन का कोठा विषै चूर्णि है। तातै चूर्णि कौ तिनि गुणकारनि करि गुणे भागहारनि का भाग दीए, लब्धमात्र तिस कोठा विषै वृद्धि का प्रमाण है। इहा गुणकार भागहार समान नाही, तातै अपवर्तन होइ सकता नाही। इहा लब्धराशि का प्रमाण अवधिज्ञान गोचर जानना। बहुरि तिसही अनत भागवृद्धि युक्त अत का भेद विषै विवक्षित द्विचरम चूर्णिचूर्णि का दोय घाटि, सूच्यगुल का असख्यातवा भाग मात्र बार सकलन घन का प्रमाण ल्याइए है। इहा भी तिर्यग्गच्छ सूच्यगुल का असख्यातवा भाग मात्र है। तामै एक घटाए, एक बार आदि सकलन के बार हो है। तहा विवक्षित सकलन बार दोय घाटि, सूच्यगुल का असख्यातवा भागमात्र, सो ऊर्ध्वगच्छ सूच्यगुल का असख्यातवा भागमात्र मैं घटाए, अवशेष दोय रहे, सो आदि जानना। इसतै लगाइ एक एक बधता ऊर्ध्वगच्छ पर्यंत गुणकार अनुक्रम करि हो है। अर एक आदि एक एक बधता अपने इष्ट बार का प्रमाण तै एक अधिक पर्यत उलटे क्रम करि भागहार हो है। इहा दोय आदि एक घाटि सूच्यगुल का असख्यातवा भाग पर्यंत अक गुणकार वा भागहार विषै समान है। तातै तिनिका अपवर्तन कीया। अवशेष सूच्यगुल का असख्यातवा भाग का गुणकार रह्या। एक का भागहार रह्या। इहा इस कोठा

विषै द्विचरम चूर्णिचूर्णि है, ताका प्रमाण जघन्य कौं सूच्यंगुल का असंख्यातवां भागमात्र बार भाग दीए, जो प्रमाण आवै, तितना जानना। याकौं पूर्वोक्त गुणकार करि गुणैं एक का भाग दीए, तिस कोठा संबंधी प्रमाण आवै है। बहुरि अैसे ही अंत का चूर्णिचूर्णि विषै संकलन है ही नाही, जातै अंत का चूर्णिचूर्णि एक ही है। सो जघन्य कौं सूच्यंगुल का असंख्यातवां भागमात्र बार अनंत का भाग दीए अंत चूर्णिचूर्णि का प्रमाण हो है। ताकौं एक करि गुणैं भी तितना ही तिस कोठा विषै वृद्धि का प्रमाण जानना। अैसे सूच्यंगुल का असंख्यातवां भागमात्र अनंतभाग वृद्धि युक्त स्थान होइ, तब एक असंख्यात भागवृद्धि युक्त स्थान हो है। इहां ऊर्वंक जो अनंत भागवृद्धि युक्त अंत स्थान, ताकौं चतुरंक जो असंख्यात का भाग दीये, जो एक भाग का प्रमाण आवै, तितना तिस ही पूर्वस्थान विषै जोड्या, सो इहां जघन्य ज्ञान साधिक कहिये, किछू अधिक भया। अंकसंदृष्टि का दृष्टांत विषै स्तोक प्रमाण है। तातै जघन्य तौ गुणकार भया। यथार्थ विषै महत् प्रमाण है, तातै अैसै वृद्धि होतै भी साधिकपना ही भया है। अब जैसे जघन्य ज्ञान कौं मूल स्थापि, जैसैं अनंतभागवृद्धिस्थान प्रक्षेपकादि विशेष लीये कहे थे, तैसैं इहांतै आगै इस साधिक जघन्य कौं मूल स्थापि, अनंत भाग वृद्धि युक्त स्थान सूच्यंगुल का असंख्यातवां भाग मात्र जानने। अैसे ही पूर्वोक्त यन्त्र द्वार करि जैसे अनुक्रम दिखाया, तैसें अनंत गुणवृद्धि पर्यंत क्रम जानना। तहां भाग वृद्धि विषै प्रक्षेपकादिक वृद्धि का विशेष जानना, सो जिस स्थान तै आगै भागवृद्धि होइ; ताकौं मूल स्थापन करना। ताकौं एक वार जिस प्रमाण की भागवृद्धि होइ, ताका एक वार भाग दीए, प्रक्षेपक हो है। दोय वार भाग दिये प्रक्षेपकप्रक्षेपक हो है। तीन वार आदि भाग दीये, पिशुलि आदिक हो है, अैसा विधान जानना। अैसे सर्वत्र षट्स्थान पतित वृद्धि का अनुक्रम जानना।

आदिमछट्ठाणह्मि य, पंच य वड्ढी हवंति सेसेसु।
छव्वड्ढीओ होंति हु, सरिसा सव्वत्थ पदसंखा ॥३२७॥

आदिमषट्स्थाने च, पंच च वृद्धयो भवंति शेषेषु।
षड्वृद्धयो भवंति हि, सदृशा सर्वत्र पदसंख्या ॥३२७॥

टीका - इस पर्यायसमास ज्ञान विषै असंख्यात लोक मात्र बार षट्स्थान संभवै है। तिनिविषै पहिली वार तो पांच स्थान पतितवृद्धि हो है। जातै जो पीछै ही पीछै अनंतगुण वृद्धिरूप भेद भया, ताकौं दूसरी वार षट्स्थानपतित वृद्धि का

आदि स्थान कह्या है । बहुरि जैसे पहिले षट्स्थानपतित वृद्धि का नाम कह्या, ताकौं पूर्ण करि दूसरा तैसे ही फेरि षट्स्थानपतित वृद्धि होइ ऐसे ही तीसरा होइ । इत्यादि असंख्यात लोक बार षट्स्थान हो है । तिनिविषै छहौ वृद्धि पाइये है । अनंत गुणवृद्धि रूप तौ पहिला ही स्थान होइ । पीछे क्रमतै पांच वृद्धि, अंत की अनंत भागवृद्धि पर्यंत होइ । बहुरि जो अनंत भागादिक सर्व वृद्धि कही, तिन सबनि का स्थान प्रमाण सदृश सूच्यंगुल का असंख्यातवां भाग मात्र जानना । तातै जो वृद्धि हो है; सो अंगुल का असंख्यातवां भाग प्रमाण बार हो है ।

छट्ठाणाणं आदी, अट्ठंकं होदि चरिमसुव्वंकं ।
जम्हा जहण्णणाणं, अट्ठंक होदि जिणदिट्ठं ॥३२८॥

षट्स्थानानामादिरष्टांकं भवति चरममुर्वकम् ।
यस्माज्जघन्यज्ञानमष्टांकं भवति जिनदृ(दि)ष्टं ॥३२८॥

टीका – षट्स्थानपतित वृद्धिरूप स्थाननि विषै अष्टांक कहिये, अनंतगुणवृद्धि सो आदि है । बहुरि उर्वक कहिये अनंत भागवृद्धि, सो अंतस्थान है ।

भावार्थ – पूर्वं जो यत्रद्वार करि वृद्धि का विधान कह्या, सो सर्व विधान होइ निवरै, तब एक बार षट्स्थानपतित वृद्धि भई कहिए । विशेष इतना जो नवमी पंकतिका का नवमा कोठा विषै दोय उकार अर एक आठ का अंक लिख्या है, सो ताका अर्थ यहु जो सूच्यंगुल का असंख्यातवां भाग प्रमाण अनंत भाग वृद्धि होइ करि एक बार अनंतगुण वृद्धि हो है । सो यहु अनंतगुण वृद्धि रूप जो भेद सो नवीन षट्स्थानपतित वृद्धि का आरंभ कीया । ताका आदि का स्थान जानना । इसतै लगाइ प्रथम कोठादिक संबंधी जो रचना कही थी, तीहि अनुक्रमतै षट्स्थानपतित वृद्धि हो है । तहां उस ही नवमी पंकति का नवमा कोठा विषै आठ का अंक के पहिली जो उकार लिखा था, ताका अर्थ यहु जो सूच्यंगुल का असंख्यातवां भाग मात्र बार अनंत भागवृद्धि भई, तिनिविषै अंत की अनंत भागवृद्धि लीए, जो स्थान सोई, इस षट्स्थानपतित वृद्धि का अंत स्थान जानना । याहीतै षट्स्थान पतित वृद्धि का आदि स्थान अष्टांक कह्या अर अंतस्थानक उर्वक कह्या है । बहुरि पहिली बार अनंतगुण वृद्धि बिना पंच वृद्धि कही, अर पीछे छहौ वृद्धि कही है ।

यहां प्रश्न – जो पहिली बार आदि स्थान जघन्य ज्ञान है । ताकौं अष्टांक रूप अनंत गुणवृद्धि संभवै भी है कि नाहीं ?

ताका समाधान – जो द्विरूप वर्ग धारा विषै इस जघन्य ज्ञान तै पहिला स्थान एक जीव के अगुरुलघुगुणनि के अविभाग प्रतिच्छेदनि का प्रमाण है, तातै जघन्यज्ञान अनतगुणा है। तातै पहिलीबार भी आदि स्थान जो जघन्यज्ञान, तीहि विषै अनत गुणवृद्धि अन्य अपेक्षा सभवै है। बहुरि ज्ञान ही की अपेक्षा सभवै नाही, तातै पहिली बार पच वृद्धि ही कही सभवै है। असै जिनदेवने कह्या है, वा देख्या है। बहुरि अत का षट्स्थान विषै भी आदि अष्टाक, अत ऊर्वंक है। तातै आगै अष्टाक जो अनत गुणवृद्धिरूप स्थान, सो अर्थ अक्षर ज्ञान है, सो आगै कहेगे, सो जानना।

एक्कं खलु अट्ठंकं, सत्तंकं कंडयं तदो हेट्ठा।
रूवहियकंडएण य, गुणिदकमा जाव उव्वंकं ॥३२६॥

एक खलु अष्टांकं सप्तांकं कांडकं ततोऽधः।
रूपाधिककांडकेन च, गुणितक्रमा यावदुर्वंकम् ॥३२९॥

टीका – एक बार जो षट्स्थान होइ, तीहि विषै अष्टाक कहिए अनत गुणवृद्धि सो तो एकबार ही हो है। जातै 'अगुल असख भाग' इत्यादि सूत्र अनुसार अष्टाक के परै कोई वृद्धि नाही। तातै याके पूर्वपना का अभावतै बार बार पलटने का अभाव है। बहुरि सप्ताक कहिए असख्यात गुणवृद्धि, सो काडकं कहिए सूच्यगुल का असख्यातवा भागमात्र हो है। बहुरि ताके नीचै **षडंक** कहिए सख्यात गुणवृद्धि, **पचंक** कहिए सख्यात भाग वृद्धि, **चतुरक** कहिए असख्यात भागवृद्धि, **ऊर्वंकं** कहिए अनत-भागवृद्धि, ए च्यार्यो एक अधिक सूच्यगुल का असख्यातवा भाग करि गुणित अनुक्रम तै जाननी। इहा यावत् **ऊर्वंकं** इस वचन करि उर्वंक पर्यत अनुक्रम की मर्यादा कही है। सोई कहिए है – असख्यात गुणवृद्धि का प्रमाण सूच्यगुल का असख्यातवा भाग-प्रमाण कह्या है। ताकौं एक अधिक सूच्यगुल का असख्यातवा भाग करि गुणै, जो परिमाण होइ, तितनी बार सख्यात गुणवृद्धि हो है। बहुरि याकौ भी एक अधिक सूच्यगुल का असख्यातवा भाग करि गुणै जो परिमाण होइ तितनी बार सख्यात भागवृद्धि हो है। बहुरि याकौ भी एक अधिक सूच्यगुल का असख्यातवा भाग करि गुणै जो परिमाण होइ तितनी बार असख्यात भागवृद्धि हो है। बहुरि याकौ भी एक अधिक सूच्यगुल का असख्यातवा भाग करि गुणै जो परिणाम होइ तितनी बार अनत

भागवृद्धि हो है । असें एक वार षट्स्थान पतित वृद्धि होने विषै पूर्वोक्त प्रमाण लीए एक एक वृद्धि हो है । दूसरी वार आदि विषै पहिले अष्टाक हो है । ताकै आगै ऊर्वंक हो है । तातै एक ही अष्टाक है, असा कह्या है ।

सव्वसमासो णियमा, रूवाहियकंडयस्स वग्गस्स ।
विंदस्स य संवग्गो, होदि त्ति जिणेहिं णिद्दिट्ठं ॥३३०॥

सर्वसमासो नियमात्, रूपाधिककाडकस्य वर्गस्य ।
वृदस्य च सवर्गो, भवतीति जिनैर्निर्दिष्टम् ॥३३०॥

टीका – पूर्वे जो छहो वृद्धिनि का परिमाण कह्या, तीहिं सर्व का जोड दीए, रूपाधिक काडक कहिये । एक अधिक सूच्यगुल का असख्यातवा भाग ताका वर्ग अर घन, ताका सवर्ग कीए सतै, जो प्रमाण होइ, तितना हो है । असा जिनदेवनि कह्या है ।

भावार्थ – एक अधिक सूच्यगुल का असख्यातवा भाग कौं दोय जायगा माडि, परस्पर गुणन कीये, जो परिमाण होय, सो तौ रूपाधिक काडक का वर्ग कहिए । बहुरि एक अधिक सूच्यगुल का असख्यातवा भाग कौ तीन जायगा माडि, परस्पर गुणन कीए, जो परिमाण होइ, ताकौ रूपाधिक काडक का घन कहिए । बहुरि इस वर्ग कौ अर घन कौ परस्पर गुणन कीए, जो परिमाण होइ, अथवा एक अधिक सूच्यगुल का असख्यातवा भाग कौ पाच जायगा माडि, परस्पर गुणन कीए, जो परिमाण होइ, तितनी वार एक षट्स्थान [पतित][1] वृद्धि विषै अनत भागादिक वृद्धि हो है । जैसै अक सदृष्टि करि पूर्वे यत्र विषै आठ का अक एक वार लिख्या, अर सात का अक दोय वार लिख्या, मिलि तीन भए । बहुरि छह का अक छह वार लिख्या, मिलि तीन का वर्ग नव भया । बहुरि पच का अक अठारह वार लिख्या, मिलि तीन का घन सत्ताईस भया । बहुरि च्यारि का अक चौवन वार लिख्या, मिलि तीन करि गुणित तीन का घन इक्यासी भया । बहुरि ऊर्वंक एक सौ बासठि वार लिख्या, मिलि-करि तीन का वर्ग करि गुणित, तीन का घन दोय सै तियालीस हूवा । तैसै ही अनत-गुणवृद्धि एक बार विषै काडकमात्र असख्यात गुणवृद्धि जोडै, एक अधिक ही काडक हो है । बहुरि तीहि अपने प्रमाण एक रूप के अर सख्यात गुणवृद्धि का काडक प्रमाण के समान गुण्यपणौ देखि, जोडै, रूपाधिक काडक का वर्ग हो है । बहुरि तिहिं

१ 'पतित' शब्द किसी प्रति मे नही मिलता ।

अपने प्रमाण एक कै अर सख्यात भागवृद्धि का कांडक प्रमाण कै समान गुण्यपनौ देखि, जोडै, रूपाधिक काडक का घन हो है। बहुरि तिहि अपने प्रमाण एक कै अर असख्यात भागवृद्धि का काडक प्रमाण कै समान गुण्यपनौं देखि,जोडै, रूपाधिक काडक का (वर्गकरि)[१] गुणित रूपाधिक काडक का घन हो है। बहुरि तीहि अपने प्रमाण एक कै अर अनत भागवृद्धि का प्रमाण कै समान गुण्य पनौ देखि जोडै, रूपाधिक काडक का वर्ग करि गुणित रूपाधिक काडक का घन प्रमाण हो है। इहा अकसदृष्टि विषै काडक का प्रमाण दोय जानना। यथार्थ विषै सूच्यगुल का असख्यातवा भागमात्र जानना। बहुरि अकसदृष्टि विषै जैसै अष्टाक, सप्ताक मिलि, तीन भए। बहुरि इस प्रमाण लीए एक तौ यहु अर काडकमात्र दोय षडक मिलि, तीन भए। ए तीन तौ गुणकार अर पूर्वोक्त तीन गुण्य सो गुणकार करि गुण्य कौ गुणै, तीन का वर्ग भया। तैसै ही अनत गुणवृद्धि, असख्यात गुणवृद्धि कौ मिल्या हूवा अपना प्रमाण रूपाधिक काडक, तिहि मात्र एक तौ यहु अर काडकमात्र सख्यात गुणवृद्धि, सो मिलि रूपाधिक काडकमात्र गुणकार हूवा। याकरि पूर्वोक्त रूपाधिक काडकमात्र गुण्य कौ गुणै, रूपाधिक काडक का वर्ग हो है, अैसै ही अन्य विषै भी जानि लेना। अैसै जो यहु सूच्यगुल का असख्यातवा भाग का वर्ग करि ताहीका घन कौ गुणै, जो प्रमाण हो है, सो असख्यात घनागुलमात्र हो है। वा सख्यात घनागुलमात्र हो है। वा घनागुलमात्र हो है। वा घनागुल के सख्यातवे भाग मात्र हो है। वा घनागुल के असख्यातवे भागमात्र हो है। सो हम जान्या नाही, सर्वज्ञदेव यथार्थ जान्या है, सो प्रमाण है।

उक्कस्ससंखमेत्तं, तत्ति चउत्थेक्कदालछप्पण्णं।
सत्तदसमं च भागं, गंतूण य लद्धिअक्खरं दुगुणं ॥३३१॥

उत्कृष्टसंख्यातमात्र, तत्त्रिचतुर्थैकचत्वारिंशतषट्पंचाशम्।
सप्तदशमं च भागं, गत्वा च लब्ध्यक्षर द्विगुणम् ॥३३१॥

टीका – एक अधिक सूच्यगुल का असख्यात भाग करि गुण्या हूवा अगुल का असख्यातवा भाग प्रमाण तौ अनत भागवृद्धि स्थान होइ। अर अगुल का असख्यातवा भाग प्रमाण असख्यात भागवृद्धि स्थान होइ तब एक बार सख्यात भागवृद्धि हो है। तहा पूर्ववृद्धि होतै जो साधिक जघन्यज्ञान भया, ताकौ एक अधिक

---

१ 'वर्गकरि' शब्द किसी प्रति में नही मिलता।

उत्कृष्ट सख्यात करि गुणिये अर उत्कृष्ट सख्यात का भाग दीजिये, तितने मात्र भया। बहुरि आगे पूर्वोक्त अनुक्रम लीये अनत असख्यात भागवृद्धि सहित सख्यात भागवृद्धि के स्थान उत्कृष्ट सख्यात मात्र होइ। तहा प्रक्षेपक सबधी वृद्धि का प्रमाण जोडे, लब्ध्यक्षर जो सर्व तै जघन्य पर्याय नामा ज्ञान, सो साधिक द्विगुणा हो है। कैसे ? सो कहिये है —

पूर्ववृद्धि भये जो साधिक जघन्यज्ञान भया, सो मूल स्थाप्या। बहुरि इहा सख्यात भागवृद्धि की विवक्षा है। तातै याकौ उत्कृष्ट सख्यात का भाग दीयें, प्रक्षेपक हो है। बहुरि गच्छमात्र प्रक्षेपक वृद्धि होइ, सो इहा उत्कृष्ट सख्यात मात्र सख्यातवृद्धि के स्थान भये है। तातै उत्कृष्ट सख्यातमात्र प्रक्षेपक वधावने। तहा मूल साधिक जघन्य ज्ञान तो जुदा राखना। अर तिस साधिक जघन्य ज्ञान कौ उत्कृष्ट सख्यात का भाग दीये, प्रक्षेपक हो है। अर इहा उत्कृष्ट सख्यातमात्र प्रक्षेपक है। तातै उत्कृष्ट सख्यात ही का गुणकार भया, सो गुणकार भागहार का अपवर्तन कीये, साधिक जघन्य रह्या। यार्कौ जुदा राख्या हूवा साधिक जघन्य विषै जोडे, जघन्यज्ञान साधिक दूणा हो है। बहुरि 'तत्ति चउत्थ' कहिये पूर्वोक्त सख्यात भागवृद्धि सयुक्त उत्कृष्ट सख्यातमात्र स्थान, तिनिकौ च्यारि का भाग देइ, तिन विषै तीन भाग प्रमाण स्थान भये। तहा प्रक्षेपक अर प्रक्षेपक - प्रक्षेपक, इनि दोऊ वृद्धिनि कौं साधिक जघन्य विषै जोडें, लब्ध्यक्षर ज्ञान साधिक दूणा हो है। कैसे सो कहिये है – इहा पूर्ववृद्धि भये जो साधिक जघन्य ज्ञान भया, ताकौ दोय बार उत्कृष्ट सख्यात का भाग दियें, प्रक्षेपक - प्रक्षेपक हो है। सो एक घाटि गच्छ का एक बार सकलन धनमात्र प्रक्षेपक - प्रक्षेपकनि की वृद्धि इहा करनी। तहा पूर्वोक्त केशववर्णी करि कह्या करण सूत्र के अनुसार तिस प्रक्षेपक - प्रक्षेपक कौ एक घाटि उत्कृष्ट सख्यात का तीन चौथा भाग करि अर उत्कृष्ट सख्यात का तीन चौथा भाग करि गुणन करना। अर दोय का एक का भाग देना। साधिक जघन्य ज्ञान की सहनानी असी है। ज असे कीए साधिक जघन्य कौ एक घाटि, तीन गुणा उत्कृष्ट सख्यात का अर तीन गुणा उत्कृष्ट सख्यात का गुणकार भया। अर दोय बार उत्कृष्ट सख्यातका अर च्यारि, दोय, च्यारि, एक का भागहार भया। तहा एक घाटि सबधी ऋणराशि साधिक जघन्य कौं तीन का गुणकार अर उत्कृष्ट सख्यात का अर बत्तीस का भागहार कीए हो है। ताकौ जुदा राखि, अवशेष का अपवर्तन कीए, साधिक जघन्य कौ नव का गुणकार, बत्तीस का भागहार मात्र प्रमाण भया। इहा दोय बार उत्कृष्ट सख्यात का गुणकार

अर भागहार का अपवर्तन कीया। गुणकार तीन तीन परस्पर गुणें, नव का गुणकार भया। च्यारि, दोय, च्यारि, एक भागहारनि कौ परस्पर गुणें, बत्तीस का भागहार भया। जातैं दोय, तीन, आदि राशि गुणकार भागहार विषैं होय। तहा परस्पर गुणें, जेता प्रमाण होइ, तितना गुणकार वा भागहार तहा जानना। ऐसैं ही अन्यत्र भी समझना। बहुरि यामैं एक गुणकार साधिक जघन्य का बत्तीसवा भागमात्र है। ताकौं जुदा स्थापि, अवशेष साधिक जघन्य कौ आठ का गुणकार, बत्तीस का भागहार रह्या, ताका अपवर्तन कीए, साधिक जघन्य का चौथा भाग भया। बहुरि प्रक्षेपक गच्छ प्रमाण है; सो साधिक जघन्य कौ एक बार उत्कृष्ट सख्यात का भाग दीए प्रक्षेपक होइ। ताकौ उत्कृष्ट सख्यात का तीन चौथा भाग करि गुणना, तहा उत्कृष्ट सख्यात गुणकार भागहार का अपवर्तन कीए, साधिक जघन्य का तीन चौथा भागमात्र प्रमाण भया। यामैं पूर्वोक्त एक चौथा भाग जोडैं, साधिक जघन्य मात्र वृद्धि का प्रमाण भया। यामैं मूल साधिक जघन्य जोडैं, लब्ध्यक्षर दूणा हो है। इहा प्रक्षेपक - प्रक्षेपक संबधी ऋणराशि घनराशि तैं सख्यात गुणा घाटि है। तातैं साधिक जघन्य का बत्तीसवा भागमात्र घनराशिविषैं ऋणराशि घटावने कौ किंचित् ऊन करि अवशेष पूर्वोक्त विषैं जोडैं, साधिक दूणा हो है। बहुरि **'एक्कदालछप्पण्ण'** कहिये, पूर्वोक्त सख्यात भागवृद्धि सयुक्त उत्कृष्ट सख्यात मात्र स्थाननि कौ छप्पन का भाग देइ, तिनि विषैं इकतालीस भागमात्र स्थान भये। तहा प्रक्षेपक अर प्रक्षेपक - प्रक्षेपक सबधी वृद्धि जोडैं, लब्ध्यक्षर दूणा हो है। कैसैं ?

सो कहिये है – साधिक जघन्य कौं उत्कृष्ट सख्यात का भाग दीए, प्रक्षेपक होइ, सो प्रक्षेपक गच्छमात्र है। तातैं याकौ उत्कृष्ट सख्यात इकतालीस छप्पनवा भाग करि गुणें, उत्कृष्ट सख्यात का अपवर्तन कीए, साधिक जघन्य कौं इकतालीस का गुणकार छप्पन भागहार हो है। बहुरि प्रक्षेपक - प्रक्षेपक एक घाटि गच्छ का एक वार सकलन धनमात्र है। सो पूर्वोक्त सूत्र के अनुसारि साधिक जघन्य कौ दोय वार उत्कृष्ट सख्यात का भाग दीए प्रक्षेपक प्रक्षेपक होइ। ताकौ एक घाटि इकतालीस गुणा उत्कृष्ट संख्यात अर इकतालीस गुणा उत्कृष्ट सख्यात का गुणकार अर छप्पन, दोय छप्पन, एक का भागहार भया। इहा एक घाटि सबन्धी ऋण साधिक जघन्य कौं इकतालीस का गुणकार अर उत्कृष्ट सख्यात एक सौ बारा छप्पन का भागहार मात्र जुदा स्थापि, अवशेष विषैं दोय वार उत्कृष्ट सख्यात का अपवर्तन कीए, साधिक जघन्य कौं सोला से इक्यासी का गुणाकार अर

एक सौ बारा गुणा छप्पन का भागहार हो है। इहा गुणकार विषै इकतालीस इकतालीस परस्पर गुणै, सोलह सै इक्यासी भये है। बहुरि भागहार विषै छप्पन कौं दोय करि गुणै, एक सौ बारह भये। अगले छप्पन कौ एक करि गुणै, छप्पन भये जानने। बहुरि इहा गुणाकार मे एक जुदा स्थापिये, ताका साधिक जघन्य कौं एक सौ बारह गुणा छप्पन का भागहार मात्र घन जानना। अवशेष साधिक जघन्य कौं सोलह सै अस्सी का गुणकार एक सौ बारा गुणा छप्पन का भागहार रह्या। तहा एक सौ बारह करि अपवर्तन कीये साधिक जघन्य कौ पद्रह का गुणकार छप्पन का भागहार भया। यामै प्रक्षेपक सबधी प्रमाण जघन्य कौ इकतालीस का गुणकार अर छप्पन का भागहार मात्र मिलाए अपवर्तन कीए, साधिक जघन्य मात्र वृद्धि का प्रमाण भया। यामै मूल साधिक जघन्य जोडै, लब्ध्यक्षर ज्ञान दूणा हो है। इहा प्रक्षेपक - प्रक्षेपक सबधी पूर्वोक्त घन तै ऋण सख्यात गुणा घाटि है। तातै किंचित् ऊन कीया, जो घन राशि, ताकौ अधिक कीए साधिक दूणा हो है। बहुरि **'सत्त दशमं च भाग'** वा कहिए अथवा सख्यात (भाग) वृद्धि सयुक्त उत्कृष्ट सख्यात मात्र स्थानकनि कौं दश का भाग दीजिये। तहा सात भाग मात्र स्थान भए। तहा प्रक्षेपक अर प्रक्षेपक - प्रक्षेपक अर पिशुलि नामा तीन वृद्धि जोडै, साधिक जघन्य ज्ञान दूणा हो है। कैसे ?

सो कहिए है – साधिक जघन्य कौ एक बार उत्कृष्ट सख्यात का भाग दीये प्रक्षेपक हो है। सो गच्छ मात्र है। तातै याकौ उत्कृष्ट सख्यात का सात दशवा भाग करि गुणै, उत्कृष्ट सख्यात का भाग दीए, साधिक जघन्य कौं सात का गुणकार अर दश का भागहार हो है। बहुरि प्रक्षेपक - प्रक्षेपक एक घाटि गच्छ का एक बार सकलन घनमात्र हो है। सो साधिक जघन्य कौ दोय बार उत्कृष्ट सख्यात का भाग दीए, प्रक्षेपक - प्रक्षेपक होइ, ताकौ पूर्व सूत्र के अनुसारि एक घाटि सात गुणा उत्कृष्ट सख्यात का अर सात गुणा उत्कृष्ट सख्यात का तौ गुणकार अर दश दोय अर दश एक का भागहार भया। बहुरि पिशुलि दोय घाटि गच्छ का अर दोय बार संकलन घनमात्र हो है। सो साधिक जघन्य कौ तीन बार उत्कृष्ट सख्यात का भाग दीए पिशुलि हो है। ताकौ पूर्व सूत्र के अनुसारि दोय घाटि सात गुणा उत्कृष्ट सख्यात अर एक घाटि सात गुणा उत्कृष्ट सख्यात सातगुणा उत्कृष्ट सख्यात का तौ गुणाकार अर दश तीन, दश दोय, दश एक का भागहार भया। इनि विषै पिशुलि का गुणाकार विषै दोय घटाया था, तीहिं सबधी प्रथम ऋण का प्रमाण साधिक

जघन्य कौ दोय का अर एक घाटि सात गुणा उत्कृष्ट सख्यात का अर सात गुणा उत्कृष्ट सख्यात का गुणकार बहुरि दोय बार[१] उत्कृष्ट सख्यात का अर छह का अर तीन बार दश का भागहार कीए हो है। ताकौ जुदा स्थापि, अवशेष का अपवर्तन कीए, साधिक जघन्य कौ एक घाटि सात गुणा उत्कृष्ट सख्यात का अर गुणचास का तौ गुणकार भया। बहुरि उत्कृष्ट सख्यात छह हजार का भागहार हो है। इहा गुणकार विषै एक घाटि है, तीहि सबधी द्वितीय ऋण का प्रमाण साधिक जघन्य कौ गुणचास का गुणकार बहुरि उत्कृष्ट सख्यात अर छह हजार का भागहार कीए हो है। ताकौ जुदा स्थापि, अवशेष का अपवर्तन कीए, साधिक जघन्य कौ तीन सै तियालीस का गुणकार अर छह हजार का भागहार हो है। इहा गुणकार मै तेरह घटाइ, जुदा स्थापिए। तहा साधिक जघन्य कौ तेरह का गुणकार अर छह हजार का भागहार जानना। अवशेष साधिक जघन्य कौ तीन सै तीस का गुणकार अर छह हजार का भागहार रह्या। तहा तीस करि अपवर्तन कीए साधिक जघन्य कौ ग्यारह का गुणकार, दश गुणा बीस का भागहार भया, सो एक जायगा स्थापिए। बहुरि इहा तेरह गुणकार मैं स्यो काढि जुदे स्थापि थे, तीहि सबधी प्रमाण तै प्रथम, द्वितीय ऋण सबधी प्रमाण सख्यातगुणा घाटि है। तातै किंचित् ऊन करि साधिक जघन्य किंचिदून तेरह गुणा कौ छह हजार का भाग दीए, इतना घन अवशेष रह्या, सो जुदा स्थापिए। बहुरि प्रक्षेपक - प्रक्षेपक सबधी गुणकार विषै एक घटाया था, तिहि सबधी ऋण का प्रमाण साधिक जघन्य कौ सात का गुणकार, बहुरि उत्कृष्ट सख्यात अर दोय सै का भागहार कीए हो है। ताकौ जुदा स्थापि, अवशेष पूर्वोक्त प्रमाण साधिक जघन्य कौ उत्कृष्ट सख्यात का गुणकार अर दोय बार सात का गुणकार, अर उत्कृष्ट सख्यात दश दोय दश एक का भागहार, ताका अपवर्तन वा परस्पर गुणन कीए, साधिक जघन्य कौ गुणचास का गुणकार दोय सै का भागहार भया। यामै पूर्वोक्त पिशुलि सबधी ग्यारह गुणकार मिलाए, साधिक जघन्य कौ साठि का गुणकार दोय सै का भागहार भया। इहा बीस करि अपवर्तन कीए, साधिक जघन्य कौ तीन का गुणकार, दश का भागहार भया। यामै प्रक्षेपक सबधी प्रमाण साधिक जघन्य कौ सात का गुणकार, दश का भागहार जोडै, दश करि अपवर्तन कीए, वृद्धि का प्रमाण साधिक जघन्य हो है। यामै मूल साधिक जघन्य जोडै, लब्ध्यक्षर दूणा हो है। बहुरि पूर्वै पिशुलि सबधी ऋण रहित घन विषै किंचिदून तेरह

१ ब, ग प्रति मे 'तीनवार' मिलता है।

का गुणकार था, तिस विषै प्रक्षेपक - प्रक्षेपक सबंधी ऋण सख्यात गुणा घाटि है। ताकौ घटावने के अर्थि बहुरि किंचित् ऊन कीए, जो साधिक जघन्य कौं दोय बार किंचिदून तेरह का गुणकार अर छह हजार का भागहार भया । सो इतना प्रमाण पूर्वोक्त दूणा लब्ध्यक्षर विषै जोडै, साधिक दूणा हो है । असें प्रथम तौ सख्यात भागवृद्धि युक्त जे स्थान, तिनि विषै उत्कृष्ट सख्यात मात्र स्थाननि का सात दशवा भाग प्रमाण स्थान पिशुलि वृद्धि पर्यंत भए लब्ध्यक्षर ज्ञान दूणा हो है । बहुरि तिसही का इकतालीस छप्पनवा भाग प्रमाण स्थान प्रक्षेपक- प्रक्षेपक वृद्धि पर्यंत भए, लब्ध्यक्षर ज्ञान दूणा हो है । बहुरि आगै भी सख्यात (भाग) वृद्धि का पहिला स्थान तै लगाइ उत्कृष्ट सख्यात मात्र स्थाननि का तीन चौथा भाग मात्र स्थान प्रक्षेपक - प्रक्षेपक वृद्धि पर्यंत भए, लब्ध्याक्षर ज्ञान दूणा हो है । बहुरि तैसै ही सख्यात वृद्धि का पहिला स्थान तै लगाइ, उत्कृष्ट सख्यातमात्र स्थान प्रक्षेपक वृद्धिपर्यंत भए, लब्ध्यक्षरज्ञान दूणा हो है ।

इहां प्रश्न – जो साधिक जघन्य ज्ञान दूणा भया सो साधिक जघन्य ज्ञान तौ पर्यायसमास ज्ञान का मध्य भेद है, इहा लब्ध्यक्षर ज्ञान दूणा कैसै कह्या है ?

ताकां समाधान – जो उपचार करि पर्यायसमास ज्ञान के भेद को भी लब्ध्यक्षर कहिए । जातै मुख्यपनै लब्ध्यक्षर है नाम जाका, असा जो पर्याय ज्ञान, ताका समीपवर्ती है ।

भावार्थ – इहा असा जो लब्ध्यक्षर नाम तै इहा पर्यायसमास का यथासभव मध्यभेद का ग्रहण करना । बहुरि चकार करि गत्वा कहिए असै स्थान प्रति प्राप्त होइ, लब्ध्यक्षर ज्ञान दूणा हो है, असा अर्थ जानना ।

एवं असंखलोगा, अणक्खरप्पे हवंति छट्ठाणा ।
ते पज्जायसमासा, अक्खरगं उवरि बोच्छामि ॥३३२॥[1]

एवमसंख्यलोकाः, अनक्षरात्मके भवंति षट्स्थानानि ।
ते पर्यायसमासा अक्षरगमुपरि वक्ष्यामि ॥३३२॥

---

१ षट्खडागम – धवला पुस्तक ६, पृष्ठ २२ की टीका ।

टीका – याप्रकार अनक्षरात्मक जो पर्यायसमास ज्ञान के भेद, तिनि विषै षट्स्थान (पतित) वृद्धि असंख्यातलोकमात्र बिरिया हो है। सो ही कहिए है - जो एक अधिक सूच्यंगुल का असख्यातवाँ भाग का वर्ग करि तिस ही के घन कौ गुणे, जो प्रमाण होइ, तितने भेदनि विषै एक बार षट्स्थान होइ, तौ असख्यात लोक प्रमाण पर्यायसमास ज्ञान के भेदनि विषै केती बार षट्स्थान होइ, ऐसैं त्रैराशिक करना। तहा प्रमाणराशि एक अधिक सूच्यगुल के असख्यातवा भाग का वर्ग करि गुणित, ताहीका घनप्रमाण अर फलराशि एक, इच्छाराशि असख्यात लोक पर्यायसमास के स्थानमात्र, तहा फल करि इच्छा कौ गुणि, प्रमाण का भाग दीए, जेता लब्धराशि का प्रमाण आवै, तितनी बार सर्व भेदनि विषै षट्स्थान पतित वृद्धि हो है। सो भी असंख्यात लोक मात्र हो है। जातै असख्यात के भेद घने है। तातै हीनाधिक होतै भी असख्यात लोक ही कहिए। याप्रकार असख्यात लोक मात्र षट्स्थान वृद्धि करि वर्धमान जघन्य ज्ञान तै अनंत भागवृद्धि लीए प्रथम स्थान तै लगाइ, अत का षट्स्थान विषै अत का अनत भागवृद्धि लीए, स्थान पर्यत जेते ज्ञान के भेद, ते ते सर्व पर्यायसमास ज्ञान के भेद जानने।

अब इहातै आगै अक्षरात्मक श्रुतज्ञान को कहै है –

चरिमुव्वंकेणवहिदअत्थक्खरगुणिदचरिमसुव्वंकं।
अत्थक्खरं तु णाणं, होदि त्ति जिणेहि णिद्दिट्ठं ॥३३३॥[1]

चरमोर्वंकेणावहितार्थाक्षरगुणितचरमोर्वंकम्।
अर्थाक्षरं तु ज्ञानं भवतीति जिनैर्निर्दिष्टम् ॥३३३॥

टीका – पर्याय समास ज्ञान विषै असख्यात लोक मात्र षट्स्थान कहे। तिनिविषै वृद्धि कौ कारण सख्यात, असख्यात, अनत ते अवस्थित है, नियमरूप प्रमाण धरे है। संख्यात का प्रमाण उत्कृष्ट सख्यात मात्र, असख्यात का असख्यात लोक मात्र, अनत का प्रमाण जीवराशि मात्र जानना। बहुरि अंत का षट्स्थान विषै अत का उर्वंक जो अनतभागवृद्धि, ताकौ लीए पर्याय समास ज्ञान का सर्वोत्कृष्ट भेद, तातै आगै अष्टाक कहिए, अनंत गुणवृद्धि संयुक्त जो ज्ञान का स्थान, सो अर्थाक्षर श्रुतज्ञान है। पूर्वै अष्टाक का प्रमाण नियमरूप जीवराशि मात्र गुणा था, इहां अष्टाक का

---

१. षट्खण्डागम – धवला पुस्तक ६, पृष्ठ २२ की टीका।

प्रमाण, सो न जानना, अन्य जानना । सोई कहिए है - असख्यात लोक मात्र पट्स्थान नि विषै जो अंत का षट्स्थान, ताका अत का ऊर्वंक वृद्धि लीए जो सर्वोत्कृष्ट पर्याय समास ज्ञान ताकौ एक बार अष्टाक करि गुणै, अर्थाक्षर ज्ञान हो है । तातै याकौं अष्टाक वृद्धि युक्त स्थान कहिए ।

सो अष्टाक कितने प्रमाण लीए हो है, सो कहिए है - श्रुत केवलज्ञान एक घाटि, एकट्ठी प्रमाण अपुनरुक्त अक्षरनि का समूह रूप है । ताकौ एक घाटि, एकट्ठी का भाग दीए, एक अक्षर का प्रमाण आवै है । तहां जेता ज्ञान के अविभाग प्रतिच्छेदनि का प्रमाण है, ताकौ सर्वोत्कृष्ट पर्याय समास ज्ञान का भेदरूप ऊर्वक के अविभाग प्रतिच्छेदनि के प्रमाण का भाग दीए जेता प्रमाण आवै, सोई इहा अष्टाक का प्रमाण जानना । तातै अब तिस अर्थाक्षिर ज्ञान की उत्पत्ति कौ कारण, जो अत का ऊर्वंक, ताकरि भाजित जो अर्थाक्षर, तीहिं प्रमाण अष्टाक करि गुण्य, जो अत का ऊर्वंक, ताकौ गुणै, अर्थाक्षर ज्ञान हो है । यह कथन युक्त है । असा जिनदेव कह्या है । बहुरि यह कथन अत विषै धर्या हूवा दीपक समान जानना । तातै असै ही पूर्वै भी चतुरक आदि अष्टाक पर्यंत षट् स्थाननि के भागवृद्धि युक्त वा गुणवृद्धि युक्त जे स्थान हैं, ते सर्व अपना अपना पूर्व ऊर्वंक युक्त स्थान का भाग दीए, जेता प्रमाण आवै, तितने प्रमाण करि तिस पूर्वस्थान तै गुणित जानने । असै श्रुत केवलज्ञान का सख्यातवा भाग मात्र अर्थाक्षिर श्रुतज्ञान जानना । अर्थ का ग्राहक अक्षर तै उत्पन्न भया जो ज्ञान, सो अर्थाक्षिर ज्ञान कहिए । अथवा **अर्यते** कहिए जानिए, सो अर्थ, अर द्रव्य करि न विनशै सो अक्षर । जो अर्थ सोई अक्षर, ताका जो ज्ञान, सो अर्थाक्षरज्ञान कहिये । अथवा **अर्यते** कहिये श्रुतकेवलज्ञान का सख्यातवा भाग करि जाका निश्चय कीजिये, असा एक अक्षर, ताका ज्ञान, सो अर्थाक्षरज्ञान कहिये ।

अथवा अक्षर तीन प्रकार है — लब्धि अक्षर, निर्वृत्ति अक्षर, स्थापना अक्षर । तहा पर्यायज्ञानावरण आदि श्रुतकेवलज्ञानावरण पर्यंत के क्षयोपशम तै उत्पन्न भई जो पदार्थ जानने की शक्ति, सो लब्धिरूप भाव इद्रिय, तीहिं स्वरूप जो अक्षर कहिये अविनाश, सो लब्धि - अक्षर कहिये । जातै अक्षर ज्ञान उपजने कौ कारण है । बहुरि कठ, होठ, तालवा आदि अक्षर बुलावने के स्थान अर होठनि का परस्पर मिलना, सो स्पृष्टता ताकौं आदि देकरि प्रयत्न, तीहिं करि उत्पन्न भया शब्द-

रूप अकारादि स्वर अर ककारादिक व्यंजन अर संयोगी अक्षर, सो निर्वृत्ति अक्षर कहिये। बहुरि पुस्तकादि विषै निज देश की प्रवृत्ति के अनुसारि अकारादिकनि का आकार करि लिखिए सो स्थापना अक्षर कहिये। इस प्रकार जो एक अक्षर, ताके सुननै तै भया जो अर्थ का ज्ञान, हो अक्षर श्रुतज्ञान है; असा जिनदेवने कह्या है। उन ही के अनुसारि मैं भी कुछ कह्या है।

आगै श्री माधवचद्र त्रैविद्यदेव शास्त्र के विषय का प्रमाण कहै हैं —

पण्णवणिज्जा भावा, अणंतभागो दु अणभिलप्पाणं।
पण्णवणिज्जाणं पुण, अणंतभागो सुदणिबद्धो ॥३३४॥

प्रज्ञापनीया भावा, अनंतभागस्तु अनभिलाप्यानाम्।
प्रज्ञापनीयानां पुनः, अनंतभागः श्रुतनिबद्धः ॥३३४॥

टीका – **अनभिलाप्यानां** कहिए वचन गोचर नाही, केवलज्ञान ही के गोचर जे भाव कहिए जीवादिक पदार्थ, तिनके अनतवे भागमात्र जीवादिक अर्थ, ते **प्रज्ञापनीयाः** कहिए तीर्थंकर की सातिशय दिव्यध्वनि करि कहने मे आवै असे है। बहुरि तीर्थंकर की दिव्यध्वनि करि पदार्थ कहने मे आवै है तिनके अनतवे भागमात्र द्वादशाग श्रुतविषै व्याख्यान कीजिए है। जो श्रुतकेवली कौ भी गोचर नाही, असा पदार्थ कहने की शक्ति दिव्यध्वनि विषै पाइए है। बहुरि जो दिव्यध्वनि करि न कह्या जाय, तिस अर्थ कौं जानने की शक्ति केवलज्ञान विषै पाइए है। असा जानना।

आगै दोय गाथानि करि अक्षर समास कौ प्ररूपै है —

एयक्खरादु उवरिं, एगेगेणक्खरेण वड्ढंतो।
संखेज्जे खलु उड्ढे, पदणामं होदि सुदणाणं ॥३३५॥ [1]

एकाक्षरात्तुपरि, एकैकेनाक्षरेण वर्धमानाः।
संख्येये खलु वृद्धे, पदनाम भवति श्रुतज्ञानम् ॥३३५॥

टीका – एक अक्षर तै उपज्या जो ज्ञान, ताके ऊपरि पूर्वोक्त षट्स्थानपतित वृद्धि का अनुक्रम विना एक एक अक्षर बधता सो दोय अक्षर, तीन अक्षर, च्यारि अक्षर इत्यादिक एक घाटि पद का अक्षर पर्यंत अक्षर समुदाय का सुनने करि उपजै असे अक्षर समास के भेद सख्यात जानने। ते दोय घाटि पद के अक्षर जेते होइ

---

१ – षट्खडागम-धवला, पुस्तक ६, पृष्ठ २२ की टीका।

तितने है । बहुरि इसके अनंतरि उत्कृष्ट अक्षर समास के विषै एक अक्षर बधतै पद-नामा श्रुतज्ञान हो है ।

सोलस-सय-चउतीसा, कोडी तियसीदिलक्खयं चेव ।
सत्तसहस्साट्ठसया, अट्ठासीदी य पदवण्णा ॥३३६॥[1]

षोडशशतचतुस्त्रिंशत्कोटयः त्र्यशीतिलक्षकं चैव ।
सप्तसहस्राण्यष्टशतानि अष्टाशीतिश्च पदवर्णाः ॥३३६॥

टीका – पद तीन प्रकार है – अर्थपद, प्रमाणपद, मध्यमपद ।

तहा जिहि अक्षर समूह करि विवक्षित अर्थ जानिये, सो तौ अर्थपद कहिये । जैसे कह्या कि **'गामभ्याज शुक्लां दंडेन'** इहा इस शब्द के च्यारि पद हैं – १ गा, २ अभ्याज, ३ शुक्ला, ४ दडेन । ये च्यारि पद भए । अर्थ याका यहु - जो गाय कौं घेरि, सुफेद कौ दड करि । असै कह्या कि **'अग्निमानय'** इहा दोय पद भए । अग्नि, आनय । अर्थ यहु जो – अग्नि को ल्याव । असै विवक्षित अर्थ के अर्थी एक, दोय आदि अक्षरनि का समूह, ताकौ अर्थपद कहिये ।

बहुरि प्रमाण जो सख्या, तिहिनै लीए, जो पद कहिये अक्षर समूह, ताकौं प्रमाण पद कहिये । जैसे अनुष्टुप छद के च्यारि पद, तहा एक पद के आठ अक्षर होइ । **'नमः श्रीवर्द्धमानाय'** यहु एक पद भया । याका अर्थ यहु जो श्रीवर्धमान स्वामी के अर्थि नमस्कार होहु, असै प्रमाणपद जानना ।

बहुरि सोलासै चौतीस कोडि तियासी लाख सात हजार आठसै अठ्यासी (१६३४८३०७८८८) गाथा विषै कहे अपुनरुक्त अक्षर, तिनिका समूह सो मध्यमपद कहिये । इनिविषै अर्थ पद अर प्रमाण पद तौ हीन - अधिक अक्षरनि का प्रमाण कौं लीए, लोकव्यवहार करि ग्रहण कीए हैं । तातै लोकोत्तर परमागम विषै गाथा विषै कही जो सख्या, तीहि विषै वर्तमान जो मध्यमपद, ताहीका ग्रहण जानना ।

आगै सघात नामा श्रुतज्ञान कौं प्ररूपै है –

---

१ षट्खडागम – धवला पुस्तक ६, पृष्ठ २३ की टीका ।

एयपदादो उवरिं, एगेगेणक्खरेण वड्ढंतो ।
संखेज्जसहस्सपदे, उड्ढे संघादणाम सुदं ।।३३७।।[1]

एकपदादुपरि, एकैकेनाक्षरेण वर्धमानाः ।
संख्यातसहस्रपदे, वृद्धे सघातनाम श्रुतम् ।।३३७।।

टीका – एक पद के ऊपरि एक एक अक्षर बधतै - बधतै एक पद का अक्षर प्रमाण पदसमास के भेद भए, पदज्ञान दूणा भया । बहुरि इसतै एक- एक अक्षर बधतै बधतै पदका अक्षर प्रमाण पदसमास के भेद भए, पदज्ञान तिगुणा भया । असै ही एक एक अक्षर की बधवारी लीए पद का अक्षर प्रमाण पदसमास ज्ञान के भेद होत सतै चौगुणा पचगुणा आदि सख्यात हजार करि गुण्या हूवा पद का प्रमाण मे एक अक्षर घटाइये, तहा पर्यंत पदसमास के भेद जानने । पदसमास ज्ञान का उत्कृष्ट भेद विषै सोई एक अक्षर मिलायें, सघात नामा श्रुतज्ञान हो है । सो च्यारि गति विषै एक गति के स्वरूप का निरूपणहारे जो मध्यमपद, तिनिका समूहरूप सघात नामा श्रुतज्ञान के सुनने तै जो अर्थज्ञान भया, ताकौ सघात श्रुतज्ञान कहिये ।

आगै प्रतिपत्तिक श्रुतज्ञान के स्वरूप कौ कहै है –

एक्कदर-गदि-णिरूवय-संघादसुदादु उवरि पुव्वं वा ।
वण्णे संखेज्जे, संघादे उड्ढिम्हि पडिवत्ती ।।३३८।।

एकतरगतिनिरूपकसंघातश्रुतादुपरि पूर्वं वा ।
वर्णे सख्येये, सघाते वृद्धे प्रतिपत्तिः ।।३३८।।

टीका – एक गति का निरूपण करणहारा जो सघात नामा श्रुतज्ञान, ताके ऊपरि पूर्वोक्त प्रकार करि एक एक अक्षर की बधवारी लीये, एक एक पद की वृद्धि करि सख्यात हजार पद का समूहरूप सघात श्रुत होइ । बहुरि इस ही अनुक्रम तै सख्यात हजार सघात श्रुत होइ । तिहि मैं स्यो एक अक्षर घटाइये तहा पर्यंत सघात समास के भेद जानना । बहुरि अत का सघात समास श्रुतज्ञान का उत्कृष्ट भेद विषै वह[2] अक्षर मिलाइये, तब प्रतिपत्तिक नामा श्रुतज्ञान हो है । सो नरकादि च्यारि गति

---

१ षट्खडागम–धवला पुस्तक ६, पृष्ट २३ की टीका ।
२ ब, ध, प्रति मे 'छह' शब्द मिलता है ।

का स्वरूप विस्तार पनै निरुपण करनहारा जो प्रतिपत्तिपक ग्रथ, ताके सुनने तै जो अर्थज्ञान भया, ताकौं प्रतिपत्तिक श्रुतज्ञान कहिए ।

आगे अनुयोग श्रुतज्ञान कौ प्ररूपै है –

चउगइ-सरूवपरूवय-पडिवत्तीदो दु उवरि पुव्वं वा ।
वण्णे संखेज्जे, पडिवत्तीउड्ढम्हि अणियोगं ।।३३९।।[1]

चतुर्गतिस्वरूपप्ररूपकप्रतिपत्तितस्तु उपरि पूर्वं वा ।
वर्णे संख्याते, प्रतिपत्तिवृद्धे अनुयोगं ।।३३९।।

टीका – च्यारि गति के स्वरूप का निरूपण करणहारा प्रतिपत्तिक श्रुतज्ञान के ऊपरि प्रत्येक एक एक अक्षर की वृद्धि लीयें सख्यात हजार पदनि का समुदायरूप सख्यात हजार सघात अर सख्यात हजार सघातनि का समूह प्रतिपत्तिक, सो असैं प्रतिपत्तिक सख्यात हजार होइ, तिनिविषै एक अक्षर घटाइये तहा पर्यंत प्रतिपत्तिक समास श्रुतज्ञान के भेद भए । बहुरि तिसका अत भेद विषै वह एक अक्षर मिलाये, अनुयोग नामा श्रुतज्ञान भया, सो चौदै मार्गणा के स्वरूप का प्रतिपादक अनुयोग नामा श्रुत, ताके सुनने तै जो अर्थज्ञान भया, ताकौ अनुयोग नामा श्रुतज्ञान कहिए ।

आगै प्राभृतप्राभृतक श्रुतज्ञान कौ दोय गाथानि करि कहै हैं –

चोद्दस-मग्गण-संजुद-अणियोगादुवरि वड्ढिदे वण्णे ।
चउरादी-अणियोगे दुगवारं पाहुडं होदि ।।३४०।।[2]

चतुर्दशमार्गणासयुतानुयोगादुपरि वर्धिते वर्णे ।
चतुराद्यनुयोगे द्विकवार प्राभृत भवति ।।३४०।।

टीका – चौदह मार्गणा करि सयुक्त जो अनुयोग, ताके ऊपरि प्रत्येक एक एक अक्षर की वृद्धि करि सयुक्त पद-सघात प्रतिपत्तिक, इनिकौ पूर्वोक्त अनुक्रम तै वृद्धि होतै च्यारि आदि अनुयोगनि की वृद्धि विषै एक अक्षर घटाइये । तहा पर्यंत अनुयोग समास के भेद भए । बहुरि तिसका अत भेद विषै वह एक अक्षर मिलायें, प्राभृत प्राभृतक नामा श्रुतज्ञान हो है ।

---

१ पट्खडागम – धवला पुस्तक ६, पृष्ठ २४ की टीका ।
२ पट्खडागम – धवला पुस्तक ६, पृष्ठ २४ की टीका ।

अहियारो पाहुडयं, एयट्ठो पाहुडस्स अहियारो ।
पाहुडपाहुडणामं, होदि त्ति जिणेहिं णिद्दिट्ठं ।।३४१।।

अधिकारः प्राभृतमेकार्थः प्राभृतस्याधिकारः ।
प्राभृतप्राभृतनामा, भवति इति जिनैर्निर्दिष्टम् ।।३४१।।

टीका – आगे कहियेगा, जो वस्तु नामा श्रुतज्ञान, ताका जो एक अधिकार, ताहीका नाम प्राभृत कहिये । बहुरि जो उस प्राभृतक का एक अधिकार, ताका नाम प्राभृतक प्राभृतक कहिये, अैसै जिनदेवने कह्या है ।

आगै प्राभृतक का स्वरूप कहै है –

दुगवारपाहुडादो, उवरिं वण्णे कमेण चउवीसे ।
दुगवारपाहुडे संउड्ढे खलु होदि पाहुडयं ।।३४२।।[1]

द्विकवारप्राभृतादुपरि वर्णे क्रमेण चतुर्विंशतौ ।
द्विकवारप्राभृते सवृद्धे खलु भवति प्राभृतकम् ।।३४२।।

टीका – द्विकवार प्राभृतक जो प्राभृतक - प्राभृतक, ताके ऊपरि पूर्वोक्त अनुक्रम तै एक एक अक्षर की वृद्धि लीये चौवीस प्राभृतक - प्राभृतकनि की वृद्धि विषै एक अक्षर घटाइये, तहा पर्यंत प्राभृतक - प्राभृतक समास के भेद जानने । बहुरि ताका अंत भेद विषै एक अक्षर मिलाये, प्राभृतक नामा श्रुतज्ञान हो है ।

भावार्थ – एक एक प्राभृतक नामा अधिकार विषै चौबीस-चौबीस प्राभृतक-प्राभृतक नामा अधिकार हो है ।

आगै वस्तु नामा श्रुतज्ञान कौ प्ररूपै है –

वीसं वीसं पाहुड-अहियारे एक्कवत्थुअहियारो ।
एक्केक्कवण्णउड्ढी, कमेण सव्वत्थ णायव्वा ।।३४३।।[2]

विंशतौ विंशतौ प्राभृताधिकारे एको वस्त्वधिकारः ।
एकैकवर्णवृद्धिः, क्रमेण सर्वत्र ज्ञातव्या ३४३।।

१. षट्खडागम – धवला पुस्तक ६, पृष्ठ २४ की टीका ।
२ षट्खडागम – धवला पुस्तक ६, पृष्ठ २५ की टीका ।

टीका – तिहिं प्राभृतक के ऊपर पूर्वोक्त अनुक्रम तै एक एक अक्षर की वृद्धि नै लीए, पदादिक की वृद्धि करि सयुक्त बीस प्राभृतक की वृद्धि होतै सतै, वामै एक अक्षर घटाइये, तहा पर्यंत प्राभृतक समास के भेद जानने । बहुरि ताका अत भेद विषै वह एक अक्षर मिलाये, वस्तु नामा अधिकार हो है ।

भावार्थ – पूर्व सबधी एक एक वस्तु नामा अधिकार विषै बीस बीस प्राभृतक पाइये हैं । बहुरि सर्वत्र अक्षर समास का प्रथम भेद तै लगाइ पूर्वसमास का उत्कृष्ट भेद पर्यंत अनुक्रम तै एक एक अक्षर बढावना । बहुरि पद का बढावना, बहुरि समास का बढावना इत्यादिक परिपाटी करि यथासभव वृद्धि सबनि विषै जानना, सो सूत्र के अनुसारि व्याख्यान टीका विषै करते ही आये है ।

आगै तीन गाथानि करि पूर्व नामा श्रुतज्ञान कौ कहैं है –

दसचोदसट्ठ अटठ्ारसयं बारं च बार सोलं च ।
वीसं तीसं पण्णारसं च, दस चदुसु वत्थूणं ।।३४४।।

दश चतुर्दशाष्ट अष्टादशकं द्वादश च द्वादश षोडश च ।
विंशतिः त्रिशत् पंचदश च, दश चतुर्षु वस्तूनाम् ।।३४४।।

टीका – तिहिं वस्तु श्रुत के ऊपरि एक एक अक्षर की वृद्धि लीए, अनुक्रम तै पदादिक की वृद्धि करि सयुक्त क्रम तै दश आदि वस्तुनि की वृद्धि होत सतै, उनमैं सौ एक एक अक्षर घटावनै पर्यंत वस्तु समास के भेद जानने । बहुरि तिनके अत भेदनि विषै अनुक्रम तै एक एक अक्षर मिलाए, चौदह पूर्व नामा श्रुतज्ञान होइ । तहा आगै कहिए है ।

उत्पाद नामा पूर्व आदि चौदह पूर्व, तिनिविषै अनुक्रम तै दश (१०), चौदह (१४), आठ (८), अठारह (१८), बारह (१२), बारह (१२), सोलह (१६), बीस (२०), तीस (३०), पद्रह (१५), दश (१०), दश (१०), दश (१०), दश (१०) वस्तु नामा अधिकार पाइए हैं ।

---

१ – षट्खडागम–धवला पुस्तक ६, पृष्ठ २५ की टीका ।

उप्पाय-पुव्वगाणिय-विरियपवादत्थिणत्थियपवादे ।
णाणासच्चपवादे, आदाकम्मप्पवादे य ।।३४५।।

पच्चाक्खाणे विज्जाणुवादकल्लाणपाणवादे य ।
किरियाविसालपुव्वे, कमसोथ तिलोयबिंदुसारे य ।।३४६।।

उत्पादपूर्वाग्रायणीयवीर्यप्रवादास्तिनास्तिकप्रवादानि ।
ज्ञानसत्यप्रवादे, आत्मकर्मप्रवादे च ।।३४५।।

प्रत्याख्यानं वीर्यानुवादकल्याणप्राणवादानि च ।
क्रियाविशालपूर्वं, क्रमशः अथ त्रिलोकबिंदुसारं च ।।३४६।।

टीका – चौदह पूर्वनि के नाम अनुक्रम ते असैं जानने । १ उत्पाद, २ आग्रायणीय, ३ वीर्यप्रवाद, ४. अस्ति नास्ति प्रवाद, ५ ज्ञानप्रवाद, ६. सत्यप्रवाद, ७. आत्मप्रवाद, ८ कर्मप्रवाद, ९ प्रत्याख्यानप्रवाद, १०. विद्यानुवाद, ११. कल्याणवाद, १२ प्राणवाद, १३. क्रियाविशाल, १४ त्रिलोकबिंदुसार ये चौदह पूर्वनि के नाम जानने ।

इनिके लक्षण आगे कहेगे – इहा असैं जानना पूर्वोक्त वस्तुश्रुतज्ञान के ऊपरि क्रम ते एक एक अक्षर की वृद्धि लीए, पदादिक की वृद्धि होतैं, दश वस्तु प्रमाण मे स्यो एक अक्षर घटाइए, तहा पर्यंत वस्तु समास ज्ञान के भेद है । ताके अत भेद विषै वह एक अक्षर मिलाए, उत्पाद पूर्व नामा श्रुतज्ञान हो है ।

बहुरि उत्पाद पूर्व श्रुतज्ञान के ऊपरि एक-एक अक्षर-अक्षर की वृद्धि लीयें, पदादि की वृद्धि सयुक्त चौदह वस्तु होहि ।

तामै एक अक्षर घटाइये, तहा पर्यंत उत्पादपूर्व समास के भेद जानने । ताके अत भेद विषै वह एक अक्षर बधै, अग्रायणीय पूर्व नामा श्रुतज्ञान हो है । असैं ही क्रम तैं आगे आगे आठ आदि वस्तु की वृद्धि होतैं, तहा एक अक्षर घटावने पर्यंत तिस तिस पूर्व समास के भेद जानने । तिस तिस का अत भेद विषै सो सो एक अक्षर मिलाए, वीर्य प्रवाद आदि पूर्व नामा श्रुतज्ञान हो है । अत का त्रिलोकबिंदुसार नामा पूर्व आगे ताका समास के भेद नाही है । जातै याके आगे श्रुतज्ञान के भेद का अभाव है ।

आगे चौदह पूर्वनि विषै वस्तुनामा अधिकारनि की वा प्राभृतनामा अधिकारनि की सख्या कहै है —

पणणउदिसया वत्थू, पाहुड्या तियसहस्सणवयसया ।
एदेसु चोद्दसेसु वि, पुव्वेसु हवंति मिलिदाणि ।।३४७।।

पंचनवतिशतानि वस्तूनि, प्राभृतकानि त्रिसहस्रनवशतानि ।
एतेषु चतुर्दशस्वपि, पूर्वेषु भवंति मिलितानि ।।३४७।।

टीका – जो उत्पाद आदि त्रिलोकबिंदुसार पर्यंत चौदह पूर्व, तिनिविषै मिलाए हुवे, दश आदि वस्तु नामा अधिकार सर्व एक सौ पिच्याणवै (१९५) हो है । बहुरि एक एक वस्तु विषै बीस बीस प्राभृतक कहे, ते सर्व प्राभृतक नामा अधिकार तीन हजार नव सै (३९००) जानने ।

आगे पूर्व कहे जे श्रुतज्ञान के बीस भेद, तिनिका उपसहार दोय गाथानि करि कहै हैं —

अत्थक्खरं च पदसंघातं, पडिवत्तियाणिजोगं च ।
दुगवारपाहुडं च य, पाहुड्यं वत्थु पुव्वं च ।।३४८।।

कमवण्णुत्तरवड्ढिय, ताण समासा य अक्खरगदाणि ।
णाणवियप्पे वीस, गंथे बारस य चोद्दसयं ।।३४९।।

अर्थाक्षर च पदसंघात, प्रतिपत्तिकानुयोगं च ।
द्विकवारप्राभृत च च, प्राभृतक वस्तु पूर्वं च ।।३४८।।

क्रमवर्णोत्तरवर्धिते, तेषा समासाश्च अक्षरगताः ।
ज्ञानविकल्पे विंशतिः, ग्रथे द्वादश च चतुर्दशकम् ।।३४९।।

टीका – अर्थाक्षर, पद, सघात, प्रतिपत्तिक, अनुयोग, प्राभृतकप्राभृतक, प्राभृतक, वस्तु, पूर्व ए नव भेद बहुरि एक एक अक्षर की वृद्धि आदि यथा सभव वृद्धि लीए इन ही अक्षरादिकनि के समास तिनि करि नव भेद, अैसै सर्व मिलि करि अठारह भेद, अक्षरात्मक द्रव्यश्रुत के हैं । अर ज्ञान की अपेक्षा इन ही द्रव्यश्रुतनि के सुनने ते जो ज्ञान भया, सो उस ज्ञान के भी अठारह भेद

कहिए। बहुरि अनक्षरात्मक श्रुतज्ञान के पर्याय अर पर्यायसमास ए दोय भेद मिलाए, सर्व श्रुतज्ञान के बीस भेद भए। बहुरि ग्रथ जो शास्त्र, ताकी विवक्षा करिए तौ आचाराग आदि द्वादश अग अर उत्पाद पूर्व आदि चौदह पूर्व अर चकारतै सामायिकादि चौदह प्रकीर्णक, तिनिस्वरूप द्रव्यश्रुत जानना। ताके सुनने तै जो ज्ञान भया, सो भाव श्रुतज्ञान जानना। पुद्गल द्रव्यस्वरूप अक्षर पदादिकमय तौ द्रव्यश्रुत है। ताके सुनने तै जो श्रुतज्ञान का पर्यायरूप ज्ञान भया, सो भावश्रुत है।

अब जो पर्याय आदि भेद कहे, तिनि शब्दनि की निरुक्ति व्याकरण अनुसारि कहिए है। **परीयंते** कहिए सर्व जीव जाकरि व्याप्त है सो पर्याय कहिए। पर्यायज्ञान बिना कोऊ जीव नाही। केवल ज्ञानीनि के भी पर्यायज्ञान सभवै है। जैसे किसी कै कोटि धन पाइए है, तो वाकै एक धन तौ सहज ही वामै आया तैसे महाज्ञान विषै स्तोकज्ञान गर्भित भया जानना।

बहुरि **अक्ष** कहिए कर्णइद्रिय, ताकौं अपना स्वरूप कौ **राति** कहिए ज्ञान द्वार करि दे है, तातै अक्षर कहिए।

बहुरि **पद्यते** कहिए जाकरि आत्मा अर्थ कौ प्राप्त होइ, ताकौ पद कहिए।

बहुरि **सं** कहिए सक्षेप तै, **हन्यते, गम्यते** कहिए जानिए एक गति का स्वरूप जिहि करि, सो सघात कहिए।

बहुरि **प्रतिपद्यंते** कहिए विस्तार तै जानिए हैं, च्यारि गति जाकरि, सो प्रतिपत्ति कहिए। नामसंज्ञा विषै **क** प्रत्यय तै प्रतिपत्तिक कहिए।

बहुरि **अनु** कहिए गुणस्थाननि के अनुसारि, **युज्यते** कहिए सबधरूप जीव जा विषै कहिए है, सो अनुयोग कहिए।

बहुरि **प्रकर्षेण** कहिए नाम, स्थापना, द्रव्य, भाव। अथवा निर्देश, स्वामित्व, साधन, अधिकरण, स्थिति, विधान, अथवा सत्, सख्या, क्षेत्र, स्पर्शन, काल, अतर, भाव, अल्पबहुत्व इत्यादि विशेषकरि **आभृतं** कहिए परिपूर्ण होइ, असा जो वस्तु का अधिकार, सो प्राभृत कहिए। अर जाकी प्राभृत सज्ञा होइ, सो प्राभृतक कहिए। बहुरि प्राभृतक का जो अधिकार, सो प्राभृतकप्राभृतक कहिए।

बहुरि **वसंति** कहिए पूर्वरूपी समुद्रका अर्थ, जिस विषै एकोदेशपनै पाइए, सो पूर्व का अधिकार वस्तु कहिए ।

बहुरि **पूरयति** कहिए शास्त्र के अर्थ कौ पोषै, सो पूर्व कहिए । ऐसै दश भेदनि की निरुक्ति कही ।

बहुरि **सं** कहिए संग्रह करि पर्याय आदि पूर्व पर्यंत भेदनि कौ अंगीकार करि **अस्यंते** कहिए प्राप्त करिए, भेद करिए, ते समास कहिए ।

पर्याय ज्ञान तै जे पीछै भेद, तिनकौ पर्याय समास कहिए ।

अक्षर ज्ञान तै जे पीछै भेद, तिनकौ अक्षर समास कहिए । ऐसै ही दश भेद जानने ।

ऐसै पूर्व चौदह अर वस्तु एक सौ पिच्याणवै अर प्राभृतक तीन हजार नव सै अर प्राभृतक - प्राभृतक तिराणवै हजार छह सै अर अनुयोग तीन लाख चौहत्तरि हजार च्यारि सै अर प्रतिपत्तिक अर संघात अर पद क्रम तै संख्यात हजार गुणे अर एक पद के अक्षर सोलह सौ चौंतीस कोडि तियासी लाख सात हजार आठ सै अठ्यासी अर समस्त श्रुत के अक्षर एक घाटि एकट्ठी प्रमाण, इनिकौ पद के अक्षरनि का भाग दीए, जो लब्धराशि होइ सो द्वादशांग के पदो का प्रमाण जानना ।

अब शेष अक्षर है, ते अंगबाह्य श्रुत के जानने ।

तहां प्रथम द्वादशांग के पदनि की संख्या कहै है –

बारुत्तरसयकोडी, तेसीदी तहय होंति लक्खाणं ।
अट्ठावण्णसहस्सा, पंचेव पदाणि अंगाणं ॥३५०॥

द्वादशोत्तरशतकोट्यः त्र्यशीतिस्तथा च भवति लक्षाणाम् ।
अष्टापंचाशत्सहस्राणि, पंचैव पदानि अंगानाम् ॥३५०॥

टीका – एक सौ बारह कोडि तियासी लाख अठावन हजार पांच पद (११२,८३,५८,००५) सर्व द्वादशांग के जानने । **अंग्यते** कहिए मध्यम पदनि करि जो लखिये, सो अंग कहिए । अथवा सर्व श्रुत का जो एक एक आचारांगादिक रूप अवयव, सो अंग कहिए । ऐसै अंग शब्द की निरुक्ति है ।

आगै जो अगबाह्य प्रकीर्णक, तिनिके अक्षरनि की सख्या कहै है –

अडकोडिएयलक्खा, अट्ठसहस्सा य एयसदिगं च ।
पण्णत्तरि वण्णाओ, पइण्णयाणं पमाणं तु ॥३५१॥

अष्टकोटयेकलक्षाणि, अष्टसहस्राणि च एकशतकं च ।
पंचसप्तति वर्णाः, प्रकीर्णकानां प्रमाणं तु ॥३५१॥

टीक – बहुरि सामायिकादिक प्रकीर्णकनि के अक्षर आठ कोडि एक लाख आठ हजार एक सौ पिचहत्तरि (८०१०८१७५) जानने ।

आगै इस अर्थ के निर्णय करने के अर्थि च्यारि गाथानि करि अक्षरनि की प्रक्रिया कहै है –

तेत्तीस वेंजणाइं, सत्तावीसा सरा तहा भणिया ।
चत्तारि य जोगवहा, चउसट्ठी मूलवण्णाओ ॥३५२॥

त्रयस्त्रिंशत् व्यंजनानि, सप्तविंशतिः स्वरास्तथा भणिताः ।
चत्वारश्च योगवहाः, चतुषष्टिः मूलवर्णाः ॥३५२॥

टीका – **अो** कहिये, हो भव्य ! तेतीस (३३) तौ व्यजन अक्षर है । आधी मात्रा जाके बोलने के काल विषै होइ, ताकौ व्यजन कहिये – क्, ख्, ग्, घ्, ङ् । च्, छ्, ज्, झ्, ञ् । ट्, ठ्, ड्, ढ्, ण् । त्, थ्, द्, ध्, न् । प्, फ्, ब्, भ्, म् । य्, र्, ल्, व् । श्, ष्, स्, ह् ए तेतीस व्यजन अक्षर है ।

बहुरि सत्ताईस स्वर अक्षर हैं । अ, इ, उ, ऋ, लृ, ए, ऐ, ओ, औ ए नव अक्षर, इनिके एक - एक के ह्रस्व, दीर्घ, प्लुत तीन भेदनि करि गुणै सत्ताईस भेद हो है । जैसे – अ, आ, आ३ । इ, ई, ई ३ । उ, ऊ, ऊ ३ । ऋ, ॠ, ॠ ३ । लृ, ॡ, ॡ ३ । ए, ए, ए ३ । ऐ, ऐ, ऐ ३ । ओ, ओ, ओ ३ । औ, औ, औ ३ ! ए सत्ताईस स्वर है । जाकी एक मात्रा होय ताकौ ह्रस्व कहिये । जाकी दोय मात्रा होइ, ताकौ दीर्घ कहिए । जाकी तीन मात्रा होइ ताकौ प्लुत कहिए ।

बहुरि च्यारि योग्वाह अक्षर है । अनुस्वर, विसर्ग, जिह्वामूलीय, उपध्मानीय तहा अं अैसा अक्षर अनुस्वार है । अ अैसा अक्षर विसर्ग है । क ⌒ अैसा अक्षर जिह्वामूलीय है । प अैसा अक्षर उपध्मानीय है । ए चौसठि मूल अक्षर अनादिनि-

धन परमागम विषै प्रसिद्ध है । **सिद्धो वर्णः समाम्नायः'** इति वचनात् । **व्यज्यते** कहिए अर्थ, जिनिकरि प्रकट करिए ते व्यजन कहिए । **स्वरति** कहिए अर्थ कौ कहैं ते स्वर कहिए । **योग** कहिए अक्षर के सयोग को **वहति** कहिए प्राप्त होइ ते, योगवाह कहिए । **मूल** कहिए (और) अक्षर के सयोग रहित सयोगी अक्षर उपजने कौ कारण ये चौसठि मूलवर्ण है । इस अर्थ करि द्वितीयादि अक्षर के सयोग रहित चौसठि अक्षर हैं । इनिविषै दोय आदि अक्षर मिलै सयोगी हो है । जैसै क्कार व्यजन, अकार स्वर मिलिकरि **क** असा अक्षर हो है । आकार के मिलने तै **का** असा अक्षर हो है । इत्यादि सयोगी अक्षर उपजने कौ कारण चौसठि मूल अक्षर जानने ।

इहां प्रश्न – जो व्याकरण विषै **ए, ऐ, ओ, औ** इनिकौ ह्रस्व न कहे है । इहा ए भी ह्रस्व कैसे कहे ?

ताकां समाधान – जो सस्कृत भाषा विषै ह्रस्वरूप **ए, ऐ, ओ, औ** नाही हो है ताते न कहे । प्राकृत भाषा विषै वा देशातर की भाषा विषै **ए, ऐ, ओ, औ,** ये अक्षर भी ह्रस्व हो है, तातै इहा कहे हैं ।

बहुरि एक दीर्घ लृकार सस्कृत भाषा विषै नाही है, तथापि अनुकरण विषै देशातर की भाषा विषै हो है, तातै इहा कह्या है ।

चउसट्ठिपदं विरलिय, दुगं च दाऊण संगुणं किच्चा ।
रूऊणं च कुए पुण, सुदणाणस्सक्खरा होंति ।।३५३।।

चतुःषष्टिपदं विरलयित्वा, द्विकं च दत्त्वा सगुणं कृत्वा ।
रूपोने च कृते पुनः, श्रुतज्ञानस्याक्षराणि भवंति ।।३५३।।

टीका – मूल अक्षर प्रमाण चौसठि स्थान, तिनिका विरलन करिये, बरोबरि पक्तिरूप एक -एक जुदा चौसठि जायगा माडिए । तहा एक २ के स्थान दोय दोय का अक २ माडिये, पीछै उनकौ परस्पर गुणन करिये, दोय दून्यो च्यारि (४) च्यारि दून्यो आठ (८) आठ दून्यो सोलह (१६) अैसै चौसठि पर्यत गुणन कीये, जो एकट्ठी प्रमाण आवै, तामै एक घटाइये, इतने अक्षर सर्व द्रव्य श्रुत के जानने ते ये अक्षर अपुनरुक्त जाननें जातै जो वाक्य का अर्थ की प्रतीति के निमित्त उन ही कहै अक्षरनि कौ बारबार कहे, तौ उनका किछू सख्या का नियम है नाही ।

तिनि अपुनरुक्त अक्षरनि का प्रमाण कितना है ? सो कहै है –

एकट्ठ च च य छस्सत्तयं च च य सुण्ण-सत्त-तिय-सत्ता ।
सुण्णं णव पण पंच य, एक्कं छक्केक्कगो य पणगं च ।।३५४।।

एकाष्ट च च च षट्सप्तकं च च च शून्यसप्तत्रिकसप्त ।
शून्यं नव पंच पंच च एकं षट्कैककश्च पंचकं च ।।३५४।।

टीका – एक, आठ, च्यारि, च्यारि, छह, सात, च्यारि, च्यारि, बिदी, सात, तीन, सात, बिदी, नव, पाच, पाच, एक, छह, एक, पच इतने अक क्रम तै लिखे, जो प्रमाण होइ, तितने अक्षर सर्व श्रुत के जानने । १८४४६७४४०७३७०९५५१६१५ इतने अक्षर है । द्विरूप वर्गधारा का छठा वर्गस्थान एकट्ठी प्रमाण है । तामै एक घटाये, असै एक आदि पच पर्यंत वीस अक रूप प्रमाण हो है । बहुरि इहा विशेष कहिये है । एक अक्षर, एक सयोगी, द्विसयोगी, त्रिसयोगी आदि चौसठि सयोगी पर्यंत जानने । तिनकी उत्पत्ति का अनुक्रम दिखाइये है । यहा कहे मूलवर्ण चौसठि, तिनकौ बरोबरि पक्ति करि लिखिये ।

बहुरि तहा केवल क वर्ण विषै तौ एक प्रत्येक भग ही हैं । द्विसयोगी आदि नाही है ।

बहुरि ख वर्ण सहित विषै प्रत्येक भग एक, द्विसयोगी एक असै दोय भग है ।
बहुरि ग वर्ण सहित विषै प्रत्येक भग एक, द्विसयोगी दोय, त्रिसयोगी एक असै च्यारि भग है ।

बहुरि घ वर्ण सहित विषै प्रत्येक भग एक, द्विसयोगी तीन, त्रिसयोगी तीन चतु सयोगी एक असै आठ भग जानना ।

बहुरि ङ वर्ण सहित विषै प्रत्येक भग एक, द्विसयोगी च्यारि, त्रिसंयोगी छह, चतुः सयोगी च्यारि, पच सयोगी एक असै सोलह भग है ।

बहुरि च वर्ण सहित विषै प्रत्येक भग एक, द्विसयोगी, त्रिसयोगी, चतुः सयोगी, पच सयोगी, षट् सयोगी, क्रम तै पाच, दश, दश, पाच, एक असै बत्तीस भग हैं ।

बहुरि छ वर्ण सहित विषै प्रत्येक द्वि, त्रि, चतुः, पच, षट्, सप्त सयोगी भग क्रम तै एक, छह, पद्रह, वीस, पद्रह, छह, एक असै चौसठि भग है ।

बहुरि ज वर्ण सहित विषै प्रत्येक द्वि, त्रि, चतु , पच, षट्, सप्त, अष्ट सयोगी भग क्रम तै एक, सात, इकईस, पैतीस, पैतीस, इकईस, सात, एक असै एक सै अट्ठाईस भग है।

बहुरि झ वर्ण सहित विषै प्रत्येक, द्वि, त्रि, चतु , पच, षट्, सप्त, अष्ट, नव, सयोगी भग क्रम तै एक, आठ, अट्ठाईस, छप्पन, सत्तरि, छप्पन, अठाईस, आठ, एक असै दोय सै छप्पन भग है।

बहुरि ञ वर्ण सहित विषै प्रत्येक द्वि, त्रि, चतु:, पच, पट्, सप्त, अष्ट, नव, दश सयोगी भग क्रम तै एक, नव, छत्तीस, चौरासी, एक सै छव्वीस, एक सै छव्वीस, चौरासी, छत्तीस, नव, एक असै पाच सै बारह भग है।

इस ही अनुक्रमकरि चौसठि स्थाननि विषै प्रत्येक आदि भग पूर्व पूर्व स्थान तै उत्तर उत्तर स्थान विषै दूणै दूणै हो हैं।

क	ख	ग	घ	ङ	च	छ	ज	झ	ञ	००० चौसठि ६४ पर्यंत
१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	प्रत्येक
१	१	२	३	४	५	६	७	८	९	द्विसयोगी
जोड	२	१	३	६	१०	१५	२१	२८	३६	त्रिसयोगी
	जोड	४	१	४	१०	२०	३५	५६	८४	चतु सयोगी
		जोड	८	१	५	१५	३५	७०	१२६	पचसयोगी
			जोड	१६	१	६	२१	५६	१२६	षट्सयोगी
				जोड	३२	१	७	२८	८४	सप्तसयोगी
					जोड	६४	१	८	३६	अष्टसयोगी
						जोड	१२८	१	९	नवसयोगी
							जोड	२५६	१	दशसयोगी
								जोड	५१२	••

इहा प्रत्येक भगनि का स्वरूप कहा ? सो कहिये है–जुदे जुदे ग्रहणरूप प्रत्येक भग है, ते एक ही प्रकार है। जैसै दशवा ञ वर्ण की विवक्षा विषै ञ वर्ण कौ जुदा ग्रहण करिये यहु एक ही प्रत्येक भग का विधान जानना। बहुरि दोय, तीन आदि अक्षरनि के सयोग तै जे भग होइ, तिनकौ द्विसंयोगी, त्रिसयोगी आदि कहिये। ते अनेक प्रकार हो है। जैसै दशवा ञ वर्ण की विवक्षा विषै दोय अक्षरनि का सयोग– क् ञ्। ख ञ्। ग् ञ्। घ् ञ्। ङ् ञ्। च् ञ्। छ् ञ्। ज् ञ्। झ् ञ्। अैसै नव प्रकार हो है।

बहुरि तीनि अक्षरनि का सयोग क् ख् ञ्। क् ग् ञ्। क् घ् ञ्। क् ङ् ञ्। क् च् ञ्। क् छ् ञ्। क् ज् ञ्। क् झ् ञ्। ख् ग् ञ्। ख् घ् ञ्। ख् ङ् ञ्। ख् च् ञ्। ख् छ् ञ्। ख् ज् ञ्। ख् झ् ञ्। ग् घ् ञ्। ग् ङ् ञ्। ग् च् ञ्। ग् छ् ञ्। ग् ज् ञ्। ग् झ् ञ्। घ् ङ् ञ्। घ् च् ञ्। घ् छ् ञ्। घ् ज् ञ्। घ् झ् ञ्। ङ् च् ञ्। ङ् छ् ञ्। ङ् ज् ञ्। ङ् झ् ञ्। च् छ् ञ्। च् ज् ञ्। च् झ् ञ्। छ् ज् ञ्। छ् झ् ञ्। ज् झ् ञ्। अैसै छत्तीस प्रकार भग हो है। अैसै ही अन्य जानने।

बहुरि जितने की विवक्षा होइ, तितना सयोगी भग एक ही प्रकार हो हैं। जैसै दश अक्षरनि की विवक्षा विषै दश अक्षरनि का सयोग रूप दश सयोगी भग एक ही हो है। अैसै भगनि का स्वरूप जानना।

इहा श्री अभयचन्द्रसूरि सिद्धान्तचक्रवर्ती के चरणनि का प्रसाद करि केशव-वर्णी सस्कृत टीकाकार सो तिन एक दोय सयोगी आदि भगनि की सख्या का साधन विषै करण सूत्र कहै है—

पत्तेयभंगमेगं, बे संजोगं विरूवपदमेत्तं ।
तियसंजोगादिपमा, रूवाहियवारहीणपदसंकलिदं ।।

विवक्षित स्थान विषै सर्वत्र प्रत्येक भग एक एक ही है। बहुरि द्विसयोगी भग एक घाटि गच्छ प्रमाण है। इहा जेथवा स्थान विवक्षित होइ, तीहि प्रमाण गच्छ जानना। बहुरि त्रिसयोगी आदि भगनि का क्रम तै एक अधिक बार हीन गच्छ का सकलन धनमात्र प्रमाण है।

भावार्थ – यहु-जो त्रिसयोगी, चतु:सयोगी आदि विषै एक बार, दोय बार आदि संकलन करना। बहुरि जेती बार सकलन होइ, तातै एक अधिक प्रमाण कौं

विवक्षित गच्छ में घटाए, अवशेष जेता प्रमाण रहै, तितने का तहां संकलन करना । जैसैं दशवा स्थान की विवक्षा विषै त्रिसयोगी भग ल्यावने कौ एक बार संकलन अर एक बार का प्रमाण एक, तातै एक अधिक दोय, सो गच्छ दश मे घटाए आठ होइ । असै आठ का एक बार सकलन धनमात्र तहा त्रिसंयोगी भग जानना । असै ही अन्यत्र जानना।

बहुरि सकलन धन ल्यावने कौ पूर्वं केशववर्णी करि उक्त करण सूत्र कहे थे–

तत्तो रूवहियकमे, गुणगारा होंति उड्ढगच्छो त्ति ।
इगिरूवमादिरूउत्तरहारा होंति पभवो त्ति ।।

इन सूत्रनि के अनुसारि विवक्षित सकलन धन ल्यावना । अब असै करण सूत्र के अनुसार उदाहरण दिखाइए है । विवक्षित दशमा ञ्ा वर्ण, तहा प्रत्येक भग एक, द्विसयोगी एक घाटि गच्छमात्र नव, त्रिसयोगी भग दोय घाटि गच्छमात्र आठ, ताका एक बार सकलन धनमात्र सो सकलन धन के साधन करण सूत्र के अनुसारि आठ, नव कौं दोय, एक का भाग दीए छत्तीस हो हैं । जातै आठ, नव कौं परस्पर गुणै, बहत्तरि भाज्य, दोय, एक कौ परस्पर गुणै भागहार दोय, भागहार का भाग भाज्य कौ दीए छत्तीस भए । असै ही चतु सयोगी भग तीन घाटि गच्छ का दोय बार सकलन धनमात्र है । तहा सात, आठ, नव कौ तीन, दोय, एक का भाग दीए, चौरासी हो है ।

बहुरि पच सयोगी च्यारि घाटि गच्छ का तीन बार सकलन धनमात्र है । तहा छह, सात, आठ, नव कौ च्यारि, तीन, दोय, एक का भाग दीए एक सै छब्बीस हो हैं ।

बहुरि छह सयोगी पाच घाटि गच्छ का च्यारि बार सकलन धनमात्र हैं । तहा पाच, छह, सात, आठ, नव कौं पाच, च्यारि, तीन, दोय, एक का भाग दीए एक सै छब्बीस हो है ।

बहुरि सप्त सयोगी छह घाटि गच्छ का पाच बार सकलन धनमात्र है । तहा च्यारि, पाच, छह, सात, आठ, नव कौ छह, पाच, च्यारि, तीन, दोय, एक का भाग दीए चौरासी हो हैं ।

बहुरि आठ सयोगी सात घाटि गच्छ का छह बार सकलन धनमात्र है । तहा तीन, च्यारि, पाच, छह, सात, आठ, नव कौ सात, छह, पाच, च्यारि, तीन, दोय, एक का भाग दीए छत्तीस हो है ।

बहुरि नव संयोगी आठ घाटि गच्छ का सात बार संकलन धनमात्र है। तहां दोय, तीन, च्यारि, पाच, छह, सात, आठ, नव कौ आठ, सात, छह, पाच, च्यारि, तीन, दोय, एक का भाग दीए नव हो है। बहुरि दश सयोगी नव घाटि गच्छ का आठ बार सकलन धनमात्र है। इहां परमार्थ तै सकलन नाही। जातै एक का सर्व बार सकलन एक ही हो है, तातै एक है, असै सबनि का जोड दीए दशवा स्थान विषै पाच सै बारह भग भए। असै ही सर्व स्थाननि विषै ल्यावना। तहा अत का चौसठिवा स्थान विषै प्रत्येक भग एक, बहुरि द्विसयोगी भग एक घाटि गच्छमात्र तरेसठि, बहुरि त्रिसयोगी भग दोय घाटि गच्छ का एक बार सकलन धनमात्र तहां बासठि, तरेसठि कौ दोय, एक का भाग दीए, उगणीस सै तरेपन हो है।

बहुरि चतु सयोगी तीन घाटि गच्छ का दोय बार सकलन धनमात्र, तहां इकसठि, बासठि, तरेसठि कौ तीन, दोय, एक का भाग दीए, गुणतालीस हजार सात सै ग्यारह भग हो है।

बहुरि पच संयोगी च्यारि घाटि गच्छ का तीन वार सकलन धनमात्र, तहा साठि, इकसठि, बासठि, तरेसठि कौ च्यारि, तीन, दोय, एक का भाग दीए, पाच लाख पिच्याणवै हजार छ सै पैसठि हो है। असै ही षट् सयोगी आदि भग पाच आदि एक एक बधता घाटि गच्छ का तीन आदि एक एक बधता बार सकलन धनमात्र जानने। तहा पूर्वोक्त तै गुणसठि, अठावन आदि भाज्य विषै अर पाच, छह आदि भागहारनि विषै अधिक अधिक माडि, भाज्य कौ भागहार का भाग दीए, जेता जेता प्रमाण आवै, तितना तितना तहा तहा षट्सयोगी आदि भग जानने। तहा तरेसठि सयोगी भग बासठि घाटि गच्छ दोय, ताका एकसठि बार सकलन धनमात्र तहा दोय, तीन आदि एक एक बधता तरेसठि पर्यत कौ बासठि, इकसठि आदि एक एक घटता एक पर्यंत का भाग दीए, यथा सभव अपर्वतन कीए तरेसठि भग हो है। बहुरि चौसठि सयोगी भग एक ही है। असै चौसठिवा स्थान विषै प्रत्येक आदि चौसठि सयोगी पर्यत भगनि कौं जोडै, एकट्ठी का आधा प्रमाणमात्र भग होइ। असै एक आदि एक एक अधिक चौसठि पर्यन्त अक्षरनि के स्थाननि विषै **'पत्तेयभंगमेगं'** इत्यादि करण सूत्रनि करि भग हो है।

अथवा गुणस्थानाधिकार विषै प्रमादनि का व्याख्यान करते अक्ष सचार विधान कह्या था, तिस विधान करि भी असै ही भग हो है। ते भग क्रम तै एक,

दोय, चारि, आठ, सोलह, बत्तीस, चौसठि, एक सै अठाईस, दोय सै छप्पन, पाच सै बारह एक हजार चौबीस, दोय हजार अडतालिस, च्यारि हजार छिनवै, आठ हजार एक सै बानवै, सोलह हजार तीन सै चौरासी, बत्तीस हजार सात सै अडसठि, पैसठि हजार पाच सै छत्तीस, एक लाख इकतीस हजार बहत्तरि, दोय लाख बासठि हजार एक सै चवालीस, पाच लाख चौबीस हजार दोय सै अठासी, दश लाख अडतालीस हजार पाच सै छिहत्तरि, बीस लाख सित्ताणवै हजार एक सै बावन, इकतालीस लाख चौराणवै हजार तीन सै दोय, तियासी लाख अठासी हजार छ सै चारि, एक कोडि सडसठिलाख तेहत्तरि हजार दोय सै आठ इत्यादि दूणै दूणै हो हैं। अत स्थान तै चौथा, तीसरा, दूसरा अन्तस्थान विषै एकट्टी का सोलहवा, आठवा, चौथा, दूसरा, भागमात्र भए, तिन सबनि कौ जोडै, **'चउसट्ठिपदं विरलिय'** इत्यादि सूत्रोक्त एक घाटि एकट्ठी मात्र भग हो है। अथवा **'अन्तधणं गुणगुणियं' 'आदि विहीणं रूउणुत्तर-भजियं'** इस करण सूत्र करि अन्त धन एकट्ठी का आधा ताकौ गुणकार दोय करि गुणै, एकट्ठी, तामै एक घटाए, एक घाटि एकट्ठी एक घाटी गुणकार एक, ताका भाग दीए भी इतने ही सर्व भग हो हैं। ऐसै सर्वश्रुत सबधी समस्त अक्षरनि की सख्या एक घाटि एकट्ठी प्रमाण जानना।

इहा जैसै अ, आ, आ, इ, ई, ई इनि छह अक्षरनि विषै प्रत्येक भग छह, द्वि संयोगी पद्रह, त्रि सयोगी वीस, चतु सयोगी पद्रह, पच सयोगी छह, छह सयोगी एक मिलि तरेसठि भग होइ। छह जायगा दूवा माडि, परस्पर गुणे एक घटाय तरेसठि हो हैं। तैसै चौसठि मूल अक्षरनि विषै पूर्वै एक एक स्थान विषै एक एक प्रत्येक भग मिलि, चोसठि भए। ऐसै ही सर्व स्थानकनि के द्वि सयोगी, त्रि सयोगी आदि भग माडि, जितने जितने होइ, तितने तितने द्वि सयोगी, त्रि सयोगी आदि भग जानने। सबनि कौं जोडै, एक घाटि एकट्ठी प्रमाण हो हैं। सोई चौसठि जायगा दोय का अक माडि, परस्पर गुणै, तहा एक घटाए, एक घाटि एकट्ठी प्रमाण श्रुतज्ञान के अक्षर जानने।

मज्झिम-पदक्खरवहिदवण्णा ते अंगपुव्वगपदाणि।
सेसक्खरसंखा ओ, पइण्णयाणं पमाणं तु ॥३५५॥

मध्यमपदाक्षरावहितवर्णास्ते अंगपूर्वगपदानि।
शेषाक्षरसंख्या अहो, प्रकीर्णकानां प्रमाणं तु ॥३५५॥

टीका – एक घाटि एकट्ठी प्रमाण समस्त श्रुत के अक्षर कहे तिनिकौ परमागम विषै प्रसिद्ध जो मध्यम पद, ताके अक्षरनि का प्रमाण सोला सै चौतीस कोडि तियासी लाख सात हजार आठ सै अठ्यासी, ताका भाग दीए, जो पदनि का प्रमाण आवै तितने तौ अगपूर्व सबधी मध्यम पद जानने । बहुरि अवशेष जे अक्षर रहे, ते प्रकीर्णकौ के जानने । सो एक सौ बारह कोडि तियासी लाख अठावन हजार पाच इतने तौ अग प्रविष्ट श्रुत का पदनि का प्रमाण आया । अवशेष आठ कोडि एक लाख आठ हजार एक सै पिचहत्तरि अक्षर रहे, ते अगबाह्य प्रकीर्णक के जानने । ऐसे अगप्रविष्ट, अगबाह्य दोय प्रकार श्रुत के पदनि का वा अक्षरनि का प्रमाण हे भव्य ! तू जानि ।

आगै श्री माधवचन्द्र त्रैविद्यदेव तेरह गाथानि करि अंगपूर्वनि के पदनि की सख्या प्ररूपै है –

आयारे सुद्दयडे, ठाणे समवायणामगे अंगे ।
तत्तो विक्खापण्णत्तीए णाहस्स धम्मकहा ।।३५६।।

आचारे सूत्रकृते, स्थाने समवायनामके अंगे ।
ततो व्याख्याप्रज्ञप्तौ नाथस्य धर्मकथायाम् ।।३५६।।

टीका – द्रव्य श्रुत की अपेक्षा सार्थक निरुक्ति लीए, अगपूर्व के पदनि की संख्या कहिए है । जातै भावश्रुत विषै निरुक्त्यादिक सभवै नाही । तहा द्वादश अगनि विषै प्रथम ही आचाराग है । **जातै परमागम जो है, सो मोक्ष के निमित्त है । याही तै मोक्षाभिलाषी याकौं आदरे है** । तहा मोक्ष का कारण सवर, निर्जरा, तिनिका कारण पचाचारादि सकल चारित्र है । तातै तिस चारित्र का प्रतिपादक शास्त्र पहिलै कहना सिद्ध भया । तीहि कारण तै च्यारि ज्ञान सप्त ऋद्धि के धारक गणधर देवनि करि तीर्थंकर के मुखकमल तै उत्पन्न जो सर्व भाषामय दिव्यध्वनि, ताके सुनने तै जो अर्थ अवधारण किया, तिनिकरि शिष्य प्रति शिष्यनि के अनुग्रह निमित्त द्वादशागरूप श्रुत रचना करी ।

तीहि विषै पहिलै आचाराग कह्या । सो **आचरन्ति** कहिए समस्तपनै मोक्ष मार्ग कौ आराधै है, याकरि सो आचार, तिहि आचाराग विषै ऐसा कथन है – जो कैसै चलिए ? कैसै खडे रहिये ? कैसै बैठिये ? कैसै सोइए ? कैसै बोलिए ? कैसै

खाइए ? कैसे पाप कर्म न बधै ? इत्यादि गणधर प्रश्न के अनुसार यतन तै चलिये, यतन तै खडे रहिये, यतन तै बैठिए, यतन तै सोइए, यतन तै बोलिए, यतन तै खाइये असै पापकर्म न बधै इत्यादि उत्तर वचन लीये मुनीश्वरनि का समस्त आचरण इस आचाराग विषै वर्णन कीजिये है ।

बहुरि **सूत्रयति** कहिए सक्षेप तै अर्थ कौ सूचै, कहै, असा जो परमागम, सो सूत्र ताके **अर्थकृतं** कहिये कारणभूत ज्ञान का विनय आदि निर्विघ्न अध्ययन आदि क्रिया विशेष, सो जिसविषै वर्णन कीजिए है । अथवा सूत्र करि कीया धर्मक्रियारूप वा स्वमत - परमत का स्वरूप क्रिया रूप विशेष, सो जिस विषै वर्णन कीजिये, सो सूत्रकृत नामा दूसरा अग है ।

बहुरि **तिष्ठन्ति** कहिए एक आदि एक एक बधता स्थान जिस विषै पाइये, सो स्थान नामा तीसरा अग है । तहा असा वर्णन है । सग्रह नय करि आत्मा एक है; व्यवहार नय करि ससारी अर मुक्त दोय भेद सयुक्त है । बहुरि उत्पाद, व्यय, ध्रौव्य इनि तीन लक्षणनि करि सयुक्त है । बहुरि कर्म के वश तै च्यारि गति विषै भ्रमै है । तातै चतु सक्रमण युक्त है । बहुरि औपशमिक, क्षायिक, क्षायोपशमिक, औदयिक, पारिणामिक भेद करि पचस्वभाव करि प्रधान है । बहुरि पूर्व, पश्चिम, दक्षिण, उत्तर, ऊर्ध्व, अध भेद करि छह गमन करि सयुक्त है । ससारी जीव विग्रह गति विषै विदिशा मे गमन न करै, श्रेणीबद्ध छहौ दिशा विषै गमन करै है । बहुरि स्यादस्ति, स्यान्नास्ति, स्यादस्ति - नास्ति, स्यादवक्तव्य, स्यादस्ति अवक्तव्य, स्यान्नास्ति अवक्तव्य, स्यादस्तिनास्तिअवक्तव्य इत्यादि सप्त भगी विषै उपयुक्त है । बहुरि आठ प्रकार कर्म का आश्रय करि सयुक्त है । बहुरि जीव, अजीव, आस्रव, बध, सवर, निर्जरा, मोक्ष, पुण्य, पाप ये नव पदार्थ हैं विषय जाके ऐसा **नवार्थ** है । बहुरि पृथ्वी, अप, तेज, वायु, प्रत्येक वनस्पति, साधारण वनस्पति, द्वीद्रिय, त्रीद्रिय, चतुरिन्द्रिय, पचेन्द्रिय भेद तै दश स्थान हैं । इत्यादि जीव कौं प्ररुपै है । बहुरि पुद्गल सामान्य अपेक्षा एक है, विशेष करि अणु स्कन्ध के भेद तै दोय प्रकार है, इत्यादि पुद्गल कौं प्ररुपै है । असै एकने आदि देकरि एक एक बधता स्थान इस अग विषै वरिणये है ।

बहुरि **'सं'** कहिए समानता करि **अवेयंते** कहिये जीवादि पदार्थ जिसविषै जानिये, सो समवायांग चौथा जानना । इस विषै द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव अपेक्षा समानता प्ररुपै हैं ।

तहा द्रव्य करि धर्मास्तिकाय अर अधर्मास्तिकाय समान है । ससारी जीवनि करि संसारी जीव समान है । मुक्त जीव करि मुक्त जीव समान है, इत्यादिक द्रव्य समवाय है ।

बहुरि क्षेत्र करि प्रथम नरक का प्रथम पाथडे का सीमत नामा इद्रकविला अर अढाई द्वीपरूप मनुष्यक्षेत्र, प्रथम स्वर्ग का प्रथम पटल का ऋजु नामा इद्रक विमान अर सिद्धशिला, सिद्धक्षेत्र ये समान है । बहुरि सातवा नरक का अवधि स्थान नामा इद्रक विला अर जबूद्वीप अर सर्वार्थसिद्धि विमान ये समान है इत्यादि क्षेत्र समवाय है ।

बहुरि काल करि एक समय, एक समय समान है । आवली आवली समान है । प्रथम पृथ्वी के नारकी, भवनवासी, व्यतर इनिकी जघन्य आयु समान है । बहुरि सातवी पृथ्वी के नारकी, सर्वार्थसिद्धि के देव इनिकी उत्कृष्ट आयु समान है, इत्यादिक कालसमवाय है ।

बहुरि भाव करि केवलज्ञान, केवलदर्शन समान है । इत्यादि भावसमवाय है असैं इत्यादि समानता इस अग विषै वर्णिये है ।

बहुरि **'वि'** कहिये विशेष करि बहुत प्रकार, **आख्या** कहिये गणधर के कीये प्रश्न, **प्रज्ञाप्यंते** कहिये जानिये, जिसविषै असा व्याख्याप्रज्ञप्ति नामा पाचवा अग जानना । इस विषै असा कथन है कि – जीव अस्ति है कि जीव नास्ति है, कि जीव एक है कि जीव अनेक है, कि जीव नित्य है कि जीव अनित्य है, कि जीव वक्तव्य है कि अवक्तव्य है इत्यादि साठि हजार प्रश्न गणधर देव तीर्थकर के निकट कीये । ताका वर्णन इस अगविषै है ।

बहुरि **नाथ** कहिये तीन लोक का स्वामी, तीर्थंकर, परम भट्टारक, तिनके धर्म की कथा जिस विषै होइ असा नाथधर्मकथा नाम छठा अग हैं । इसविषै जीवादि पदार्थनि का स्वभाव वर्णन करिए है । वहुरि घातियाकर्म के नाश तै उत्पन्न भया केवलज्ञान, उस ही के साथि तीर्थकर नामा पुण्य प्रकृति के उदय तै जाकै महिमा प्रकट भयी, असा तीर्थकर कै पूर्वाह्न, मध्याह्न, अपराह्न, अर्धरात्रि इनि च्यारि कालनि विषै छह छह घडी पर्यन्त बारह सभा के मध्य सहज ही दिव्यध्वनि होय है । बहुरि गण-धर, इद्र, चक्रवर्ति इनके प्रश्न करने तै और काल विषै भी दिव्यध्वनि हो है । असा दिव्यध्वनि निकटवर्ती श्रोतृजननि कौ उत्तम क्षमा आदि दश प्रकार वा रत्नत्रय स्वरूप

धर्म कहै है । इत्यादि इस अग विषै कथन है । अथवा इस ही छठा अग का दूसरा नाम ज्ञातृधर्मकथा है । सो याका अर्थ यहु है - ज्ञाता जो गणधर देव, जानने की है इच्छा जाकै, ताका प्रश्न के अनुसारि उत्तर रूप जो धर्मकथा, ताकौं ज्ञातृधर्मकथा कहिए । जे अस्ति, नास्ति इत्यादिकरूप प्रश्न गणधरदेव कीये, तिनिका उत्तर इस अग विषै वर्णन करिये है । अथवा ज्ञाता जे तीर्थंकर, गणधर, इद्र, चक्रवर्त्यादिक, तिनिकी धर्म सबधी कथा इसविषै पाइये है । तातै भी ज्ञातृधर्मकथा अैसा नाम का धारी छठा अग जानना ।

तो वासयअज्झयणे, अंतयडे णुत्तरोववाददसे ।
पण्हाणं वायरणे, विवायसुत्ते य पदसंखा ॥३५७॥

तत उपासकाध्ययने, अंतकृते अनुत्तरौपपाददशे ।
प्रश्नानां व्याकरणे, विपाकसूत्रे च पदसंख्या ॥३५७॥

टीका – बहुरि तहा पीछै उपासंते कहिये आहारादि दान करि वा पूजनादि करि सघ कौ सेवै, अैसे जे श्रावक, तिनिकौं उपासक कहिये । ते 'अधीयते' कहिये पढै, सो उपासकाध्ययन नामा सातवा अग है । इस विषै दर्शनिक, व्रतिक, सामायिक, प्रोषधोपवास, सचित्तविरति, रात्रिभक्तविरति, ब्रह्मचर्य, आरभनिवृत्त, परिग्रहनिवृत्त, अनुमतिविरत, उद्दिष्टविरत ये गृहस्थ की ग्यारह प्रतिमा वा व्रत, शील, आचार क्रिया, मत्रादिक इनिका विस्तार करि प्ररूपण है ।

बहुरि एक एक तीर्थंकर का तीर्थकाल विषै दश दश मुनीश्वर तीव्र चारि प्रकार का उपसर्ग सहि, इद्रादिक करी करि हुई पूजा आदि प्रातिहार्यरूप प्रभावना पाइ, पापकर्म का नाश करि ससार का जो अत, ताहि करते भये, तिनिकौ अतकृत् कहिये तिनिका कथन जिस अग मे होइ ताकौं अतकृद्दशाग आठवा अग कहिये । तहा श्री वर्धमान स्वामी के बारै नमि, मतग, सोमिल, रामपुत्र, सुदर्शन, यमलीक, वलिक, विक्रविल, किष्कविल, पालवष्ट, पुत्र ये दश भये । अैसे ही वृषभादिक एक एक तीर्थंकर के बारै दश दश अतकृत् केवली हौं है । तिनिका कथन इस अग विषै है ।

बहुरि उपपाद है प्रयोजन जिनिका अैसे औपपादिक कहिये ।

बहुरि अनुत्तर कहिये विजय, वैजयत, जयत, अपराजित, सर्वार्थ सिद्धि इनि विमाननि विषै जे औपपादिक होहिं उपजै, तिनिकौ अनुत्तरौपपादिक कहिये । सो

एक एक तीर्थंकर के बारै दश दश महामुनि दारुण उपसर्ग सहि करि, बडी पूजा पाइ, समाधि करि प्राण छोडि, विजयादिक अनुत्तर विमाननि विषै उपजै । तिनिकी कथा जिस अग विषै होइ, सो अनुत्तरौपपादिक दशाग नामा नवमा अग जानना । तहा श्रीवर्धमान स्वामी के बारै – ऋजुदास, धन्य, सुनक्षत्र, कार्तिकेय, नद, नदन, सालिभद्र, अभय, वारिषेण, चिलातीपुत्र ये दश भये । असें ही दश दश अन्य तीर्थंकर के समय भी भये है । तिनि सबनि का कथन इस अंग विषै है ।

बहुरि प्रश्न कहिये बूझनहारा पुरुष, जो बूझै सो **व्याक्रियंते** कहिये, जिस-विषै वर्णन करिये, सो प्रश्न व्याकरण नामा दशवा अंग जानना । इसविषै जो कोई बूझनेवाला गई वस्तु कौ, वा मूठी की वस्तु कौ, वा चिता वा धनधान्य लाभ, अलाभ सुख, दु ख, जीवना, मरणा, जीति, हारि इत्यादिक प्रश्न बूझै, अतीत, अनागत, वर्तमानकाल सबधी, ताकौ यथार्थ कहने का उपायरूप व्याख्यान इस अग विषै है । अथवा शिष्य कौ प्रश्न के अनुसार आक्षेपिणी, विक्षेपिणी, सवेजिनी, निर्वेजिनी ये च्यारि कथा भी प्रश्नव्याकरण अग विषै प्रकट कीजिये है ।

तहा तीर्थकरादिक का चरित्ररूप प्रथमानुयोग, लोक का वर्णन रूप करणा-नुयोग, श्रावक मुनिधर्म का कथनरूप चरणानुयोग, पंचास्तिकायादिक का कथनरूप द्रव्यानुयोग, इनिका कथन अर परमत की शका दूरि करिए, सो आक्षेपिणी कथा ।

बहुरि प्रमाण - नय रूप युक्ति, तीहिं करि न्याय के बल तै सर्वथा एकातवादी आदि परमतनि करि कह्या अर्थ, ताका खडन करना, सो विक्षेपिणी कथा ।

बहुरि रत्नत्रयरूपधर्म अर तीर्थंकरादि पद की ईश्वरता वा ज्ञान, सुख, वीर्यादिकरूप धर्म का फल, ताके अनुराग कौ कारण सो सवेजिनी कथा ।

बहुरि ससार, देह, भोग के राग तै जीव नारकादि विषै दरिद्र, अपमान, पीडा, दुःख भोगवै है । इत्यादिक विराग होने कौ कारणरूप जो कथा, सो निर्वेजिनी कथा कहिये । सो असी भी कथा प्रश्नव्याकरण अग विषै पाइए है ।

बहुरि विपाक जो कर्म का उदय, ताकौ **सूत्रयति** कहिये कहै, सो विपाक सूत्र-नामा ग्यारमा अग जानना । इसविषै कर्मनि का फल देने रूप जो परिणमन, सोई उदय कहिये । ताका तीव्र, मद, मध्यम, अनुभाग करि द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव अपेक्षा वर्णन पाइए है ।

अैसे आचार नै आदि देकरि विपाक सूत्र पर्यंत ग्यारह अग, तिनिके पदनि की सख्या कहिए है ।

अट्ठारस छत्तीसं, बादालं अडकडी अड बि छप्पण्णं ।
सत्तरि अट्ठावीसं, चोद्दालं सोलससहस्सा ॥३५८॥

इगि-दुग-पंचेयारं, तिवीसदुतिणउदिलक्ख तुरियादी ।
चुलसीदिलक्खमेया, कोडी य विवागसूत्तम्हि ॥३५९॥

अष्टादश षट्त्रिंशत्, द्वाचत्वारिंशत् अष्टकृतिः अष्टद्विषट्पंचाशत् ।
सप्ततिः अष्टाविंशतिः, चतुश्चत्वारिंशत् षोडश सहस्राणि ॥३५८॥

एकद्विपचैकादशत्रयोविंशतिद्वित्रिनवतिलक्षं चतुर्थादिषु ।
चतुरशीतिलक्षमेका, कोटिश्च विपाकसूत्रे ॥३५९॥

टीका – प्रथम गाथा विषै अठारह आदि हजार कहे । बहुरि दूसरी गाथा विषै चौथा अग आदि अगनिविषै एकादिक लाख सहित हजार कहे । अर विपाकसूत्र का जुदा वर्णन कीया । अब इनि गाथानि के अनुसारि एकादश अगनि की पदनि की सख्या कहिये है । आचाराग विषै पद अठारह हजार(१८०००), सूत्रकृताग विषै पद छत्तीस हजार (३६०००), स्थानाग विषै बियालीस, हजार (४२०००), समवायाग विषै एक लाख अर आठ की कृति चौसठि हजार (१६४०००), व्याख्याप्रज्ञप्ति विषै दोय लाख अट्ठाईस हजार(२२८०००), ज्ञातृकथा अग विषै पाच लाख छप्पन हजार, (५५६०००), उपासकाध्ययन अग विषै ग्यारह लाख सत्तरि हजार (११७००००), अतकृतदशाग विषै तेईस लाख अट्ठाईस हजार (२३२८०००), अनुत्तरौपपादक दशाग विषै बाणवै लाख चवालीस हजार (९२४४०००), प्रश्न व्याकरण अग विषै तिराणवै लाख सोलह हजार (९३१६०००), विपाकसूत्र अग विषै एक कोडि चौरासी लाख (१८४०००००) अैसै एकादश अगनि विषै पदनि की सख्या जाननी ।

वापणनरनोनानं, एयारंजुगे दी हु वादम्हि ।
कनजतजमताननमं, जनकनजयसीम बाहिरे वण्णा ॥३६०॥

वापणनरनोनानं, एकदशांगे युतिर्हि वादे ।
कनजतजमताननमं जनकनजयसीम बाह्ये वर्णाः ॥३६०॥

टीका — इहा वा आगें अक्षर सज्ञा करि अंकनि कौ कहै है । सो याका सूत्र पूर्वें गतिमार्गणा का वर्णन विषै पर्याप्ति मनुष्यनि की सख्या कही है। तहा कह्या है **'कटपयपुरस्थवर्णैं'** इत्यादि सूत्र कह्या है । तिस ही तै अक्षर संज्ञा करि अक जानना । **क** कारादिक नव अक्षरनि करि एक, दोय आदि क्रम तै नव अक जानने । **ट** कारादि नव अक्षरनि करि नव अक जानने । **प** कारादि पच अक्षरनि करि पंच अक जानने । **य** कारादि आठ अक्षरनि करि आठ अक जानने । **ञ** कार **ङ** कार **न** कार इनिकरि बिंदी जानिये, असा कहि आए हैं । सो इहां **वापणनरनोनान** इनि अक्षरनि करि चारि, एक, पाच, बिंदी, दोय, बिदी, बिंदी, बिंदी ए अक जानना । ताके चारि कोडि पद्रह लाख दोय हजार (४१५०२०००) पद सर्व एकादश अगनि का जोड दीये भये ।

बहुरि दृष्टिवाद नाम बारहवा अग, ता विषै **'कनजतजमताननमं'** कहिये एक, बिंदी, आठ, छह, आठ, पाच, छह, बिदी, बिदी, पाच इनि अकनि करि एक सै आठ कोडि अडसठि लाख छप्पन हजार पाच (१०८६८५६००५) पद है सो कहिये । मिथ्यादर्शन, तिनिका है अनुवाद कहिये निराकरण जिस विषै असा दृष्टिवाद नामा अंग बारहवा जानना ।

तहा मिथ्यादर्शन सबधी कुवादी तीन सै तरेसठि है। तिनि विषै कौत्कल, काठेबिद्धि, कौशिक हरि, श्मश्रु माधपिक रोमश, हारीत, मुड, आश्वलायन इत्यादि क्रियावादी है, सो इनिके एकसौ अस्सी (१८०) कुवाद है ।

बहुरि मारीचि, कपिल, उलूक, गार्ग्य, व्याघ्रभूति, वाड्वलि, माठर, मौद्गलायन इत्यादि अक्रियावादी है, तिनिके चौरासी (८४) कुवाद है ।

बहुरि साकल्य, वाल्कलि, कुसुत्ति, सात्यमुग्रीनारायण, कठ, माध्यदिन, मौद, पैप्पलाद, वादरायण, स्विष्ठिक्य, दैत्यकायन, वसु, जैमिन्य, इत्यादि ए अज्ञानवादी है । इनिके सडसठि (६७) कुवाद है ।

बहुरि वशिष्ठ, पाराशर, जतुकर्ण, वाल्मिकि, रोमहर्षिणि, सत्यदत्त, व्यास, एलापुत्र, उपमन्यु, ऐंद्रदत्त, अगस्ति इत्यादिक ए विनयवादी है। इनिके कुवाद बत्तीस (३२) है ।

सब मिलाए तीन सै तरेसठि कुवाद भये, इनिका वर्णन भावाधिकार विषै कहैगे । इहा प्रवृत्ति विषै इनि कुवादनि के जे जे अधिकारी, तिनिके नाम कहे है ।

बहुरि अग बाह्य जो सामायिकादिक, तिनि विषै **'जनकनजयसीम'** कहिए आठ, बिंदी, एक, बिंदी, आठ, एक, सात, पाच अक तिनिके आठ कोडि एक लाख आठ हजार एक सै पिचत्तरि (८०१०८१७५) अक्षर जानने ।

चंद-रवि-जंबुदीवय-दीवसमुद्दय-वियाहपण्णत्ती ।
परियम्मं पंचविहं, सुत्तं पढमाणि जोगमदो ॥३६१॥

पुव्वं जल-थल-माया-आगासय-रूवगयमिमा पंच ।
भेदा हु चूलियाए, तेसु पमाणं इणं कमसो ॥३६२॥

चंद्ररविजंबूद्वीपकद्वीपसमुद्रकव्याख्याप्रज्ञप्तयः ।
परिकर्म पंचविधं, सूत्रं प्रथमानुयोगमतः ॥३६१॥

पूर्वं जलस्थलमायाकाशकरूपगता इमे पंच ।
भेदा हि चूलिकायाः, तेषु प्रमाणमिदं क्रमशः ॥३६२॥

टीका — दृष्टिवाद नामा बारहवा अग के पच अधिकार है – परिकर्म, सूत्र, प्रथमानुयोग, पूर्वगत, चूलिका ए पच अधिकार है, तिनि विषै **परितः** कहिए सर्वांग तै कर्माणि कहिये जिन तै गुणाकार भागहारादि रूप गणित होइ, असे करणसूत्र, वे जिस विषै पाइए, सो परिकर्म कहिये, सो परिकर्म पाच प्रकार है – चद्रप्रज्ञप्ति, सूर्यप्रज्ञप्ति, जबूद्वीपप्रज्ञप्ति, द्वीपसागरप्रज्ञप्ति, व्याख्याप्रज्ञप्ति ।

तहा चद्रप्रज्ञप्ति – चद्रमा का विमान, आयु, परिवार, ऋद्धि, गमनविशेष, वृद्धि, हानि, सारा, आधा, चौथाई ग्रहण इत्यादि प्ररूपै है । बहुरि सूर्यप्रज्ञप्ति – सूर्य का आयु मडल, परिवार, ऋद्धि, गमन का प्रमाण ग्रहण इत्यादि प्ररूपै है । बहुरि जबूद्वीप-प्रज्ञप्ति – जबूद्वीपसबधी मेरुगिरि, कुलाचल, द्रह, क्षेत्र, वेदी, वनखड, व्यतरनि के मदिर, नदी इत्यादि प्ररूपै है । बहुरि द्वीपसागरप्रज्ञप्ति – असख्यात द्वीप समुद्र सबधी स्वरूप वा तहा तिष्ठते ज्योतिषी, व्यंतर, भवनवासीनि के आवास तहा अकृत्रिम जिन मदिर, तिनकौं प्ररूपै है । बहुरि व्याख्याप्रज्ञप्ति – रूपी, अरूपी, जीव, अजीव आदि पदार्थनि का वा भव्य अभव्य आदि प्रमाण करि निरूपण करै है । असै परिकर्म के पच भेद हैं ।

बहुरि **सूत्रयति** कहिये मिथ्यादर्शन के भेदनि कौ सूचै, बतावै, ताकौ सूत्र कहिये। तिस विषै जीव अबधक ही है, अकर्ता है, निर्गुण है; अभोक्ता है; स्व-प्रकाशक ही है, परप्रकाशक ही है, अस्तिरूप ही है; नास्तिरूप ही है इत्यादि क्रियावाद, अक्रियावाद, अज्ञानवाद, विनयवाद, तिनके तीन सै तरेसठि भेद, तिनिका पूर्व पक्षपने करि वर्णन करिये है।

बहुरि प्रथम कहिए मिथ्यादृष्टी अव्रती, विशेष ज्ञानरहित, ताकौ उपदेश देने निमित्त जो प्रवृत्त भया अधिकार – अनुयोग, कहिए सो प्रथमानुयोग कहिए। तिहिं विषै चौबीस तीर्थंकर, बारह चक्रवर्ति, नव बलभद्र, नव नारायण, नव प्रति-नारायण इनि तरेसठि शलाका पुरुषनि का पुराण वर्णन कीया है।

बहुरि पूर्वगत चौदह प्रकार, सो आगे विस्तार नै लीए कहैगे।

बहुरि चूलिका के पच भेद जलगता, स्थलगता, मायागता, रूपगता, आकाश-गता ए पच भेद है।

तिनि विषै **जलगता चूलिका** तौ जल का स्तभन करना, जल विषै गमन करना, अग्नि का स्तभन करना, अग्नि का भक्षण करना, अग्नि विषै प्रवेश करना इत्यादि क्रिया के कारण भूत मत्र, तत्र, तपश्चरणादि प्ररूपै है। बहुरि **स्थल-गता चूलिका** मेरुपर्वत, भूमि इत्यादि विषै प्रवेश करना शीघ्र गमन करना इत्यादिक क्रिया के कारणभूत मत्र तत्र तपश्चरणादिक प्ररूपै है। बहुरि **मायागता चूलिका** मायामई इन्द्रजाल विक्रिया के कारण भूत मत्र, तत्र, तपश्चरणादि प्ररूपै है। बहुरि **रूपगता चूलिका** सिह, हाथी, घोडा, वृषभ, हरिण इत्यादि नाना प्रकार रूप पलटि करि धरना, ताके कारण मत्र, तत्र, तपश्चरणादि प्ररूपै है। वा चित्राम, काठ, लेपादिक का लक्षण प्ररूपै है। वा धातु रसायन कौ प्ररूपै है। बहुरि **आकाशगता चूलिका** – आकाश विषै गमन आदि कौं कारण भूत मत्र, तंत्रादि प्ररूपै है। **ऐसै** चूलिका के पाच भेद जानने।

ए चंद्रप्रजप्ति आदि देकर भेद कहे। तिनिके पदनि का प्रमाण आगे कहिए है, सो हे भव्य तू जानि।

गतनम मनगं गोरम, मरगत जवगात नोननं जजलक्खा।
मननन धममननोननामं रनधजधरानन जलादी ॥३६३॥

याजकनामेनाननमेदाणि पदाणि होंति परिकम्मे ।
कानवधिवाचनाननमेसो पुण चूलियाजोगो ॥३६४॥

गतनम मनगं गोरम, मरगत जवगातनोननं जजलक्षाणि ।
मननन धममननोनननामं रनधजधरानन जलादिषु ॥३६३॥

याजकनामेनाननमेतानि पदानि भवंति परिकर्मणि ।
कानवधिवाचनाननमेषः पुनः चूलिकायोगः ॥३६४॥

टीका — इहा 'कटपयपुरस्थवर्णैः' इत्यादि सूत्रोक्त विधान ते अक्षर सज्ञा करि अक कहे है, सो अकनि करि जो प्रमाण भया, सोई इहा कहिए है । एक एक अक्षर ते एक एक अक जानि लेना, सो 'गतनममनोननं' कहिये छत्तीस लाख पाच हजार (३६०५०००) पद चद्रप्रज्ञप्ति विषै हैं ।

बहुरि 'मनगनोननं' कहिए पाच लाख तीन हजार (५०३०००) पद सूर्य-प्रज्ञप्ति विषै है ।

बहुरि 'गोरमनोनन' कहिये तीन लाख पचीस हजार (३२५०००) पद जबू-द्वीप प्रज्ञप्ति विषै है ।

बहुरि 'मरगतनोननं' कहिये बावन लाख छत्तीस हजार (५२३६०००) पद द्वीपसागर प्रज्ञप्ति विषै हैं ।

बहुरि 'जवगातनोननं' कहिये चौरासी लाख छत्तीस हजार (८४३६०००) पद व्याख्याप्रज्ञप्ति अग के है ।

बहुरि 'जजलरका' कहिए अठ्यासी लाख (८८०००००) पद सूत्र नामा भेद विषै है ।

बहुरि मननन कहिए पाच हजार (५०००) पद प्रथमानुयोग विषै है ।

बहुरि धममननोनननामं कहिए पिच्याणवै कोडि पचास लाख पाच (९५५००००००५) पद पूर्वगत विषै हैं । चौदह पूर्वनि के इतने पद हैं ।

बहुरि रनधजधरानन कहिए दोय कोडि नव लाख निवासी हजार दोय सै (२०९८९२००) पद जलगता आदि चूलिका तिन विषै एक एक के इतने इतने पद

जानने । जलगता पद (२०९८९२००), स्थलगता २०९८९२००, मायागता २०९८९२००, आकाशगता २०९८९२००, रूपगता २०९८९२०० असैं पद जानने।

बहुरि **'याजकनासेनाननं'** कहिए एक कोडि इक्यासी लाख पाच हजार (१८१०५०००) पद चद्रप्रज्ञप्ति आदि पाच प्रकार परिकर्म का जोड दीये हो है ।

बहुरि **'कानवधिवाचनाननं'** कहिए दश कोडि गुणचास लाख छियालीस हजार (१०४९४६०००) पद पाच प्रकार चूलिका का जोड दीये हो है ।

इहा **ग** कार तै तीन का अक, **त** कार तै छह का अक, **म** कार तै पाच का अक, र कार तै दोय का अक, **न** कार तै बिंदी, इत्यादि अक्षर सज्ञा करि अक सज्ञा कहे है । **क** कार तै लेय **ग** कार तीसरा अक्षर है, तातै तीन का अक कह्या । बहुरि **ट** कार तै **त** कार छठा अक्षर है, तातै छह का अक कह्या । **प** कार तै **म** कार पाचवा अक्षर है, तातै पाच का अक कह्या । **य** कार तै **र** कार दूसरा अक्षर है; तातै दोय का अक कह्या है । **न** कार तै बिदी कही है । इत्यादि यहा अक्षर सज्ञा तै अक जानने ।

पण्णट्ठदाल पणतीस, तीस पण्णास पण्ण तेरसदं ।
णउदी दुदाल पुव्वे, पणवण्णा तेरससयाइं ॥३६५॥

छस्सय पण्णासाइं, चउसयपण्णास छसयपणुबीसा ।
बिहि लक्खेहि दु गुणिया, पंचम रूऊण छज्जुदा छट्ठे ॥३६६॥

पंचाशदष्टचत्वारिंशत् पंचत्रिंशत् त्रिंशत् पंचाशत् पंचाशत्त्रयोदशशतं ।
नवतिः द्वाचत्वारिंशत् पूर्वे पंचपंचाशत् त्रयोदशशतानि ॥३६५॥

षट्छतपंचाशानि, चतुः शतपंचाशत् षट्छतपंचविंशतिः ।
द्वाभ्यां लक्षाभ्यां तु गुणितानि पंचमं रूपोनं षट्युतानि षष्ठे ॥३६६॥

टीका – उत्पाद आदि चौदह पूर्वनि विषै पदनि की सख्या कहिए है । तहा वस्तु का उत्पाद, व्यय, ध्रौव्य, आदि अनेक धर्म, तिसका पूरक, सो **उत्पादनामा प्रथम पूर्व** है । इस विषै जीवादि वस्तुनि का नाना प्रकार नय विवक्षा करि क्रमवर्ती युगपत् अनेक धर्म करि भये, जे उत्पाद, व्यय, ध्रौव्य, ते तीनो तीन काल अपेक्षा नव

धर्म भये । सो उन धर्मरूप परिणया वस्तु, सो भी नव प्रकार हो है । उपज्या, उपजै है, उपजैगा । नष्ट भया, नष्ट हो है, नष्ट होयगा । स्थिर भया, स्थिर है, स्थिर होगया । असें नव प्रकार द्रव्य भया । इन एक एक का नव नव उत्पन्नपना आदि धर्म जानने । असें इक्यासी भेद लीये द्रव्य का वर्णन है । याके दोय लाख तै पचासकौं गुणिये, असा एक कोडि (१००००००००) पद जानने ।

बहुरि **अग्र** कहिये, द्वादशाग विषै प्रधानभूत जो वस्तु, ताका **अयन** कहिये ज्ञान, सो ही है प्रयोजन जाका, असा **अग्रायणीय नामा दूसरा पूर्व** है । इस विषै सात सै सुनय अर दुर्नय, तिनिका अर सप्त तत्त्व, नव पदार्थ, षट्द्रव्य इत्यादि का वर्णन है । याके दोय लाख तै अडतालीस कौ गुणिये, असें छिनवै लाख (९६०००००) पद है ।

बहुरि **वीर्य** कहिये जीवादिक वस्तु की शक्ति – समर्थता, ताका है अनुप्रवाद कहिये वर्णन, जिस विषै असा **वीर्यानुवाद नामा तीसरा पूर्व** है । इस विषै आत्मा का वीर्य, पर का वीर्य, दोऊ का वीर्य, क्षेत्रवीर्य, कालवीर्य, भाववीर्य, तपोवीर्य इत्यादिक द्रव्य गुण पर्यायिनि का शक्तिरूप वीर्य तिसका व्याख्यान है । याकौं दोय लाख तै पैंतीस कौ गुणिये असें सत्तरि लाख (७००००००) पद है ।

बहुरि **अस्ति, नास्ति** आदि जे धर्म तिनिका है प्रवाद कहिये प्ररूपण इस विषै असा **अस्ति नास्ति प्रवाद नामा चौथा पूर्व** है । इस विषै जीवादि वस्तु अपने द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव करि सयुक्त है । तातै स्यात् अस्ति है । बहुरि पर के द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव विषै यह नाही है, तातै स्यान्नास्ति है । बहुरि अनुक्रम तै स्व पर द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव की अपेक्षा स्यात् अस्ति - नास्ति है । बहुरि युगपत् स्व पर द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव की अपेक्षा द्रव्य कहने मे न आवे, तातै स्यात् अवक्तव्य है । बहुरि स्व द्रव्य, क्षेत्र काल भाव करि द्रव्य अस्ति रूप है । बहुरि युगपत् स्व पर द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव करि कहने मे आवै, तातै स्यात् अस्ति अवक्तव्य है । बहुरि पर द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव करि द्रव्य नास्तिरूप है । बहुरि युगपत् स्व – पर द्रव्य, क्षेत्र, काल भाव करि द्रव्य कहने मे न आवै; तातै स्यात्नास्तिअवक्तव्य है । बहुरि अनुक्रम तै स्व पर द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव अपेक्षा द्रव्य अस्ति नास्ति रूप है । अर युगपत् स्व पर द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव की अपेक्षा अवक्तव्य है, तातै स्यात् अस्ति – नास्ति अवक्तव्य है । असें जिस प्रकार अस्ति नास्ति अपेक्षा सप्त भेद कहे हैं । तैसें एक-अनेक

धर्म अपेक्षा सप्त भग हो है । अभेद अपेक्षा स्यात् एक है । भेद अपेक्षा स्यात् अनेक है । क्रम तै अभेद भेद अपेक्षा स्यात् एक - अनेक है । युगपत् अभेद भेद अपेक्षा स्यात् अवक्तव्य है । अभेद अपेक्षा वा युगपत् अभेद-भेद अपेक्षा स्यात एक अवक्तव्य है । भेद अपेक्षा वा युगपत् अभेद भेद अपेक्षा स्यात् अनेक अवक्तव्य है । क्रम तै अभेद - भेद अपेक्षा वा युगपत् अभेद - भेद अपेक्षा स्यात् एक - अनेक अवक्तव्य है । ऐसे ही नित्य अनित्य नै आदि दे अनत धर्मनि के सप्त भग है । तहा प्रत्येक भंग तीन अस्ति, नास्ति, अवक्तव्य, अर द्विसयोगी भंग तीन अस्ति नास्ति, अस्ति अवक्तव्य, नास्ति अवक्तव्य, अर त्रिसयोगी एक अस्ति - नास्ति - अवक्तव्य । इनि सप्त भगनि का समुदाय सो सप्तभंगी सो प्रश्न के वश तै एक ही वस्तु विषै अविरोधपनै सभवती नाना प्रकार नयनि की मुख्यता, गौणता करि प्ररूपण कीजिए है । इहां सर्वथा नियमरूप एकात का अभाव लीए कथचित् ऐसा है अर्थ जाका सो स्यात् शब्द जानना । इस अग के दोय लाख तै तीस कौ गुणिए सो साठि लाख (६००००००) पद है ।

बहुरि ज्ञाननि का है प्रवाद कहिए प्ररूपण, जिस विषै ऐसा **ज्ञानप्रवाद नामा पांचमां पूर्व** है । इस विषै मति, श्रुति, अवधि, मन पर्यय, केवल ए पाच सम्यग्ज्ञान अर कुमति, कुश्रुति, विभंग ए तीन कुज्ञान इनिका स्वरूप, सख्या वा विषय वा फल इत्यादि अपेक्षा प्रमाण अप्रमाणता रूप भेद वर्णन कीजिए है । याके दोय लाख तै पचास कौ गुणै, एक कोटि होइ तिन मे स्यो एक घटाइए ऐसे एक घाटि कोडि (९९९९९९९) पद है । गाथा विषै **पंचम रूऊण** ऐसा कहा है । तातै पाचमा अग मे एक घटाया अन्य सख्या गाथा अनुसारि कहिए ही है ।

बहुरि सत्य का है प्रवाद कहिए प्ररूपण इस विषै ऐसा **सत्यप्रवाद नामा छठा पूर्व** है । इस विषै वचन गुप्ति - बहुरि वचन सस्कार के कारण, बहुरि वचन के प्रयोग, बहुरि बारह प्रकार भाषा, बहुरि बोलनेवाले जीवो के भेद, बहुरि बहुत प्रकार मृषा वचन, बहुरि दशप्रकर सत्य वचन इत्यादि वर्णन है । तहा असत्य न बोलना वा मौन धरना सो सत्य वचन गुप्ति कहिए ।

बहुरि वचन सस्कार के कारण दोय एक तौ स्थान, एक प्रयत्न । तहा जिनि स्थानकनि तै अक्षर बोलै, जाहि ते स्थान आठ है - हृदय, कंठ, मस्तक, जिह्वा का मूल, दत, नासिका, होठ, तालवा । जैसे अ कार, क वर्ग, ह कार, विसर्ग इनिका कठ स्थान है ऐसे अक्षरनि के स्थान जानने ।

बहुरि जिस प्रकार अक्षर कहे जाहि, ते प्रयत्न पाच है – स्पृष्टता, ईषत् स्पृष्टता, विवृतता, ईषद्विवृतता, सवृतता। तहा अग का अग तै स्पर्श भए, अक्षर बोलिए सो स्पृष्टता। किछू थोरा स्पर्श भए बोलिए, सो ईषत्स्पृष्टता अग कौं उघाडि बोलिए, सो विवृतता किछू थोरा उघाडि बोलिए, सो ईषद्विवृतता अग तै अग कौं ढांकि बोलिए, सो सवृतता। जैसै प कारादिक होठ से होठ का स्पर्श भए ही उच्चारण होइ, असै प्रयत्न जानने।

बहुरि वचन प्रयोग दोय प्रकार शिष्टरूप भला वचन, दुष्टरूप बुरा वचन।

बहुरि भाषा बारह प्रकार, तहा इसने असा कीया है, असा अनिष्ट वचन कहना, सो अभ्याख्यान कहिए। बहुरि जातै परस्पर विरोध होइ, सो कलह वचन। बहुरि पर का दोष प्रकट करना, सो पैशून्य वचन। बहुरि धर्म अर्थ काम मोक्ष का सबध रहित वचन, सो असबद्ध प्रलाप वचन। बहुरि इन्द्रिय विषयनि विषै रति का उपजावन हारा वचन, सो रति वचन। बहुरि विषयनि विषै अरति का उपजावन हारा वचन, सो अरति वचन। बहुरि परिग्रह का उपजावने, राखने की आसक्तता का कारण वचन, सो उपधि वचन। बहुरि व्यवहार विषै ठिगनेरूप वचन, सो निकृति वचन। बहुरि तप ज्ञानादिक विषै अविनय का कारण वचन, सो अप्रणति वचन। बहुरि चोरी का कारणरूप वचन, सो मोष वचन। बहुरि भले मार्ग का उपदेशरूप वचन, सो सम्यग्दर्शन वचन। बहुरि मिथ्या मार्ग का उपदेशरूप वचन, सो मिथ्यादर्शन वचन। असै बारह भाषा है।

बहुरि बेइद्रिय आदि सैनी पचेन्द्रिय पर्यंत वचन बोलने वाले वक्तानि के भेद हैं। बहुरि द्रव्य क्षेत्र काल भावादिक करि मृषा जो असत्य वचन, सो बहुत प्रकार है। बहुरि जनपदादि दश प्रकार सत्य वचन पूर्वे योग मार्गणा विषै कहि आए है, असा असा कथन इस पूर्व विषै है। याके दोय लाख तै पचास कौ गुणिए अर छज्जुदा छट्ठे इस वचन करि छह मिलाइए असे एक कोटि छह (१००००००६) पद हैं।

बहुरि आत्मा का प्रवाद कहिए प्ररूपण है, इस विषै असा आत्मप्रवाद नामा सातमां पूर्व है। इस विषै गाथा –

> जीवो कत्ता य वेत्ता य पाणी भोत्ता य पुग्गलो।
> वेदी विण्हू सयंभू य सरीरी तह माणवो॥

सत्ता जंतू य माणी य मायी जोगी य संकुडो ।
असंकुडो य खेत्तण्हू, अंतरप्पा तहेव य ।।

इत्यादि आत्मस्वरूप का कथन है; इनका अर्थ लिखिए है ।

जीवति कहिये जीवै है, व्यवहार करि दश प्राणनि कौं, निश्चय करि ज्ञान दर्शन सम्यक्त्वरूप चैतन्य प्राणनि कौं धारै है । अर पूर्वै जीया, आगै जीवेगा, तातै आत्मा को जीव कहिए ।

बहुरि व्यवहार करि शुभाशुभ कर्म कौं अर निश्चय करि चैतन्य प्राणनि कौं करै है; तातै कर्ता कहिए ।

बहुरि व्यवहार करि सत्य असत्य वचन बोलै है, तातै वक्ता है । निश्चय करि वक्ता नाही है ।

बहुरि दोऊ नयनि करि जे प्राण कहे, ते याकै पाइए है । तातै प्राणी कहिए ।

बहुरि व्यवहार करि शुभ अशुभ कर्म के फल कौं अर निश्चय करि निज स्वरूप कौं भोगवै है, तातै भोक्ता कहिए ।

बहुरि व्यवहार करि कर्म-नोकर्मरूप पुद्गलनि कौं पूरै है अर गालै है, तातै पुद्गल कहिए । निश्चय करि आत्मा पुद्गल है नाही ।

बहुरि दोऊ नयनि करि लोकालोक सबधी त्रिकालवर्ती सर्व ज्ञेयनि कौ **'वेत्ति'** कहिए जानै है, तातै वेदक कहिए ।

बहुरि व्यवहार करि अपने देह कौ वा केवल समुद्घात करि सर्व लोक कौ अर निश्चय करि ज्ञान तै सर्व लोकालोक कौ **वेवेष्टि** कहिए व्यापै है, तातै विष्णु कहिए ।

बहुरि यद्यपि व्यवहार करि कर्म के वशतै ससार विषै परिणवै है, तथापि निश्चय करि स्वय आप ही आप विषै ज्ञान - दर्शन स्वरूप ही करि **भवति** कहिए परिणवै है, तातै स्वयभू कहिए ।

बहुरि व्यवहार करि औदारिक आदिक शरीर, याकै हैं, तातै शरीरी कहिये; निश्चय करि शरीरी नाही है ।

बहुरि व्यवहार करि मनुष्यादि पर्यायरूप परिणवै है, तातै मानव कहिए। उपलक्षण तै नारकी वा तिर्यंच वा देव कहिए। निश्चय करि मनु कहिए ज्ञान, तीहि विषै **भवः** कहिए सत्तारूप है, तातै मानव कहिए।

बहुरि व्यवहार करि कुटुब, मित्रादि परिग्रह विषै **सजति** कहिये आसक्त होइ प्रवर्तै है, तातै सक्ता कहिए। निश्चयकरि सक्ता नाही है।

बहुरि व्यवहार करि ससार विषै नाना योनि विषै **जायते** कहिए उपजै है, जातै जतु कहिये। निश्चय करि जतु नाही है।

बहुरि व्यवहार करि मान कहिए अहकार, सो याकै है, तातै मानी कहिए। निश्चयकरि मानी नाही है।

बहुरि व्यवहार करि माया जो कपटाई, सो याकै है, तातै मायावी कहिए। निश्चय करि मायावी नाही है।

बहुरि व्यवहारकरि मन, वचन, काय क्रियारूप योग याकै है, तातै योगी कहिए। निश्चय करि योगी नाही है।

बहुरि व्यवहार करि सूक्ष्म निगोदिया लब्धि अपर्याप्तक की जघन्य अवगाहना करि प्रदेशनि को सकोचै है, तातै सकुट है। बहुरि केवलिसमुद्घात करि सर्व लोक विषै व्यापै है, तातै असकुट है। निश्चय करि प्रदेशनि का सकोच विस्तार रहित किंचित् ऊन चरम शरीर प्रमाण है, तातै सकुट, असकुट नाही है।

बहुरि दोऊ नय करि क्षेत्र, जो लोकालोक, ताहि **जानाति** (ज्ञ) कहिए जानै है, तातै क्षेत्रज्ञ कहिए।

बहुरि व्यवहार करि अष्ट कर्मनि के अभ्यतर प्रवर्तै है। अर निश्चय करि चैतन्य स्वभाव के अभ्यतर प्रवर्तै है, तातै अतरात्मा कहिए।

चकार तै व्यवहार करि कर्म - नोकर्म रूप मूर्तीक द्रव्य के सबध तै मूर्तीक है, निश्चय करि अमूर्तीक है। इत्यादिक आत्मा के स्वभाव जानने। इनिका व्याख्यान इस पूर्व विषै है। याके दोय लाख तै तेरह सै कौ गुणिए असै छब्बीस कोडि (२६०००००००) पद है।

बहुरि कर्म का है प्रवाद कहिए प्ररूपण, इसविषै अैसा **कर्मप्रवाद नामा आठमा पूर्व** है। इसविषै मूल प्रकृति, उत्तर प्रकृति, उत्तरोत्तर प्रकृतिरूप भेद लीए बध, उदय, उदीरणा, सत्ता रूप अवस्था कौ धरै ज्ञानावरणादिक कर्म, तिनिके स्वरूप कौ वा समवधान, ईर्यापथ, तपस्या, अधःकर्म इत्यादिक क्रियारूप कर्मनि कौ प्ररूपिए है । याके दोय लाख तै निवै कौ गुणिए, अैसे एक कोडि अस्सी लाख (१८०००००) पद है।

बहुरि **प्रत्याख्यायते** कहिए निषेधिए है पाप जाकरि, ऐसा **प्रत्याख्यान नामा नवमां पूर्व** है। इसविषै नाम, स्थापना, द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव अपेक्षा जीवनि का सहनन वा बल इत्यादिक के अनुसार करि काल मर्यादा लीए वा यावज्जीव प्रत्याख्यान कहिए सकल पाप सहित वस्तु का त्याग, उपवास की विधि, ताकी भावना, पाच समिति, तीन गुप्ति इत्यादि वर्णन कीजिए है। याके दोय लाख तै वियालीस कौ गुणिए, अैसे चौरासी लाख (८४०००००) पद है।

बहुरि विद्यानि का है अनुवाद कहिए अनुक्रमतै वर्णन इस विषै अैसा **विद्यानुवाद नामा दशमां पूर्व** है। इसविषै सात सै अगुष्ठ, प्रेत्ससेन आदि अल्पविद्या अर पाच सै रोहिणी आदि महाविद्या, तिनका स्वरूप, समर्थता, साधनभूत मत्र, यत्र, पूजा, विधान, सिद्ध भये पीछे उन विद्यानि का फल बहुरि अतरिक्ष, भौम, अग, स्वर, स्वप्न, लक्षण, व्यजन, छिन्न ए आठ महानिमित्त इत्यादि प्ररुपिए। सो याके दोय लाख तै पचावन कौ गुणिए अैसे एक कोड दश लाख (११०००००) पद है।

बहुरि कल्याणनि का है वाद कहिए प्ररूपण जाविषै अैसा **कल्याणवाद नामा ग्यारह्वां पूर्व** है। इस विषै तीर्थंकर, चक्रवर्ति, बलभद्र, नारायण, प्रतिनारायण इनके गर्भ आदिक कल्याण कहिए महा उच्छव बहुरि तिनके कारणभूत षोडश भावना, तपश्चरण आदिक क्रिया। बहुरि चन्द्रमा, सूर्य, ग्रह, नक्षत्र इनिका गमनविशेष, ग्रहण, शकुन, फल इत्यादि विशेष वर्णन कीजिए हैं। याके दोय लाख तै तेरह सै कौ गुणिए अैसे छब्बीस कोडि (२६०००००००) पद है।

बहुरि प्राणनि का है आवाद कहिए प्ररूपण इसविषै अैसा **प्राणावाद नामा बारह्वां पूर्व** है। इसविषै चिकित्सा आदि आठ प्रकार वैद्यक, अर भूतादि व्याधि दूर करने कौ कारण मत्रादिक वा विष दूरि करणहारा जो जागुलिक, ताका कर्म वा

इला, पिंगला, सुष्मणा, इत्यादि स्वरोदय रूप बहुत प्रकार कारणरूप सासोस्वास का भेद, बहुरि दश प्राणनि कौ उपकारी वा अनुपकारी वस्तु गत्यादिक के अनुसारि वर्णन कीजिए है; सो जाके दोय लाख तै छह सै पचास कौ गुणिए, ऐसे तेरह कोडि (१३००००००००) पद हैं।

बहुरि क्रिया करि विशाल कहिए विस्तीर्ण, शोभायमान असा **क्रियाविशाल नामा तेरह्वां पूर्व** है। इसविषै संगीत, शास्त्र, छंद, अलंकारादि शास्त्र, बहत्तरि कला, चौसठि स्त्री का गुण शिल्प आदि चातुर्यता, गर्भाधान आदि चौरासी क्रिया, सम्यग्दर्शनादि एक सै आठ क्रिया, देववंदना आदि पचीस क्रिया और नित्य नैमित्तिक क्रिया इत्यादिक प्ररूपिए हैं। याके दोय लाख तै च्यारि सै पचास कौ गुणिए असे नव कोडि (९००००००००)पद है।

बहुरि त्रिलोकनि का बिंदु कहिए अवयव अर सार सो प्ररूपिए है, याविषै असा **त्रिलोकबिंदुसार नामा चौदह्वां पूर्व** है। इसविषै तीन लोक का स्वरूप अर छब्बीस परिकर्म, आठ व्यवहार, च्यारि बीज इत्यादि गणित अर मोक्ष का स्वरूप, मोक्ष का कारणभूत क्रिया, मोक्ष का सुख इत्यादि वर्णन कीजिए है। याके दोय लाख तै छह सै पचीस कौं गुणिए, असे बारह कोडि पचास लाख(१२५००००००)पद हैं।

असै चौदह पूर्वनि के पदनि की संख्या हो है। इहा दोय लाख का गुणाकार का विधान करि गाथा विषै संख्या कही थी, तातै टीका विषै भी तैसै ही कही है।

सामाइय चउवीसत्थयं, तदो वंदणा पडिक्कमणं।
वेणइयं किदियम्मं, दसवेयालं च उत्तरज्झयणं ॥३६७॥

कप्पववहार-कप्पाकप्पिय-महकप्पियं च पुंडरियं।
महपुंडरीयणिसिहियमिदि चोद्दसमंगबाहिरयं ॥३६८॥

सामायिकं चतुर्विशस्तव, ततो वंदना प्रतिक्रमणं।
वैनयिकं कृतिकर्म, दशवैकालिकं च उत्तराध्ययन ॥३६७॥

कल्प्यव्यवहार – कल्प्याकल्प्य – महाकल्प्य च पुडरीक।
महापुडरीकं निषिद्धिका इति चतुर्दशागवाह्य ॥३६८॥

टीका – बहुरि प्रकीर्णक नामा अंगबाह्य द्रव्यश्रुत, सो चोदह प्रकार है। सामायिक, चतुर्विंशतिस्तव, वंदना, प्रतिक्रमण, वैनयिक, कृतिकर्म, दशवैकालिक, उत्तराध्ययन, कल्प्यव्यवहार, कल्प्याकल्प्य, महाकल्प्य, पुंडरीक, महापुंडरीक, निषिद्धिका।

तहां **सं कहिए एकत्वपनै करि आयः कहिए आगमन पर द्रव्यनि तै निवृति होइ, उपयोग की आत्मा विषै प्रवृत्ति 'यहु मै ज्ञाता द्रष्टा हौ' असै आत्मा विषै उपयोग सो सामायिक कहिए। जातै एक ही आत्मा सो जानने योग्य है**, तातै ज्ञेय है। अर जाननै हारा है, तातै ज्ञायक है। तातै आप कौ ज्ञाता द्रष्टा अनुभवै है।

अथवा **सम** कहिए राग-द्वेष रहित मध्यस्थ आत्मा, तिस विषै **आयः** कहिए उपयोग की प्रवृत्ति, सो सामायिक कहिए, समाय है प्रयोजन जाका सो सामायिक कहिए। नित्य नैमित्तिक रूप क्रिया विशेष, तिस सामायिक का प्रतिपादक शास्त्र सो भी सामायिक कहिए।

सो नाम, स्थापना, द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव भेद करि सामायिक छह प्रकार है।

तहां इष्ट - अनिष्ट नाम विषै राग द्वेष न करना। अथवा किसी वस्तु का सामायिक असा नाम धरना, सो नाम सामायिक है।

बहुरि मनोहर वा अमनोहर जो स्त्री - पुरुषादिक का आकार लीए काठ, लेप, चित्रामादि रूप स्थापना तिन विषै राग - द्वेष न करना। अथवा किसी वस्तु विषै यहु सामायिक है, असा स्थापना करि स्थाप्यो हूवा वस्तु, सो स्थापनासामायिक है। बहुरि इष्ट - अनिष्ट, चेतन - अचेतन द्रव्य विषै राग - द्वेष न करना। अथवा जो सामायिक शास्त्र कौ जानै है अर वाका उपयोग सामायिक विषै नाही है, सो जीव वा उस सामायिक शास्त्र के जाननेवाले का शरीरादिक, सो द्रव्य सामायिक है।

बहुरि ग्राम, नगर, वनादिक इष्ट अनिष्ट क्षेत्र, तिन विषै राग द्वेष न करना, सो क्षेत्र सामायिक है।

बहुरि बसंत आदि ऋतु अर शुक्लपक्ष, कृष्णपक्ष, दिन, वार, नक्षत्र इत्यादि इष्ट - अनिष्ट काल के विशेष, तिनिविषै राग - द्वेष न करना, सो काल सामायिक है।

बहुरि भाव, जो जीवादिक तत्त्व विषै उपयोगरूप पर्याय, ताके मिथ्यात्वकषायरूप सक्लेशपना की निवृत्ति अथवा सामायिक शास्त्र की जानै है अर उस ही विषै उपयोग जाका है, सो जीव अथवा सामायिक पर्यायरूप परिणमन, सो भावसामायिक है ।

अैसे **सामायिक नामा प्रकीर्णक कह्या है ।**

बहुरि जिस काल विषै जिनका प्रवर्तन होइ, तिस काल विषै तिन ही चौबीस तीर्थंकरनि का नाम, स्थापना, द्रव्य, भाव का आश्रय करि पच कल्याणक, चौंतीस अतिशय, आठ प्रातिहार्य, परम औदारिक दिव्य शरीर, समवसरणसभा, धर्मोपदेश देना इत्यादि तीर्थंकरपने की महिमा का स्तवन, सो **चतुर्विंशतिस्तव** कहिए । ताका प्रतिपादक शास्त्र, सो **चतुर्विंशतिस्तव नामा प्रकीर्णक** है ।

बहुरि एक तीर्थंकर का अवलबन करि प्रतिमा, चैत्यालय इत्यादिक की स्तुति, सो वदना कहिए । याका प्रतिपादक शास्त्र, सो **वंदना प्रकीर्णक कहिए ।**

बहुरि **प्रतिक्रम्यते** कहिए प्रमाद करि कीया है दैवसिक आदि दोष, तिनिका निराकरण जाकरि कीजिए, सो प्रतिक्रमण प्रकीर्णक कहिए। सो प्रतिक्रमण प्रकीर्णक सात प्रकार है – दैवसिक, रात्रिक, पाक्षिक, चातुर्मासिक, सावत्सरिक, ऐर्यापथिक उत्तमार्थ ।

तहा सध्यासमय दिन विषै कीया दोष, जाकरि निवारिए, सो दैवसिक है । बहुरि प्रभातसमय रात्रि विषै कीया दोष जाकरि निवारिए, सो रात्रिक है । बहुरि पद्रह्वे दिन, पक्ष विषै कीया दोष जाकरि निवारिए, सो पाक्षिक कहिए । बहुरि चौथे महीने च्यारिमास विषै कीए दोष जाकरि निवारिए, सो चातुर्मासिक कहिए । बहुरि वर्षवै दिन एकवर्ष विषै कीए दोष जाकरि निवारिए, सो सावत्सरिक कहिए । बहुरि गमन कर तै निपज्या दोष जाकरि निवारिए, सो ऐर्यापथिक कहिए । बहुरि सर्व पर्याय सबधी दोष जाकरि निवारिए, सो उत्तमार्थ है । अैसै सात प्रकार प्रतिक्रमण जानना ।

सो भरतादि क्षेत्र अर दु षमादिकाल, छह सहनन करि सयुक्त स्थिर वा अस्थिर पुरुषनि के भेद, तिनकी अपेक्षा प्रतिक्रमण का प्रतिपादक शास्त्र, सो **प्रतिक्रमण नामा प्रकीर्णक कहिए ।**

बहुरि विनय है प्रयोजन जाका, सो **वैनयिक नामा प्रकीर्णक** कहिए । इसविषै ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तप, उपचार संबधी पंच प्रकार विनय के विधान का प्ररूपण है ।

बहुरि कृति कहिये क्रिया, ताका कर्म कहिए विधान, इसविषै प्ररूपिए है, **सो कृतिकर्म नामा प्रकीर्णक कहिए** । इसविषै अर्हंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, साधु आदि नव देवतानि की वंदना के निमित्त आप आधीन होना, सो आत्माधीनता अर गिरद भ्रमणरूप तीन प्रदक्षिणा अर पृथ्वी तै अंग लगाइ दोय नमस्कार अर शिर नवाइ च्यारि नमस्कार अर हाथ जोडि फेरनरूप बारह आवर्त इत्यादि नित्य-नैमित्तिक क्रिया का विधान निरूपिए है ।

बहुरि विशेष रूप जे काल, ते विकाल कहिए । तिनिकौ होतै जो होय सो वैकालिक, सो दश वैकालिक इस विषै प्ररूपिए है, ऐसा **दशवैकालिक नामा प्रकीर्णक** है । इस विषै मुनिका आचार अर आहार की शुद्धता अर लक्षण प्ररूपिए है ।

बहुरि उत्तर जिस विषै **अधीयंते** कहिए पढिए, **सो उत्तराध्ययन नामा प्रकीर्णक** है । इस विषै च्यारि प्रकार उपसर्ग, बाईस परिषह, इनिके सहने का विधान वा तिनिका फल अर इस प्रश्न का यहु उत्तर ऐसे उत्तर विधान प्ररूपिए है ।

बहुरि कल्प्य कहिए योग्य आचरण, सो **व्यवह्रियते अस्मिन्** कहिए प्रवृत्तिरूप कीजिए जाविषै ऐसा **कल्प्यव्यवहार नामा प्रकीर्णक** है । इस विषै मुनीश्वरनि के योग्य आचरणनि का विधान अर अयोग्य का सेवन होतै प्रायश्चित्त प्ररूपिए है ।

बहुरि **कल्प्य** कहिए योग्य अर **अकल्प्य** कहिए अयोग्य प्ररूपिए है जाविषै, ऐसा **कल्प्याकल्प्य नामा प्रकीर्णक** है । इसविषै द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव अपेक्षा साधुनि कौ यहु योग्य है, यहु अयोग्य है; ऐसा भेद प्ररूपिए है ।

बहुरि **महतां** कहिए महान् पुरुषनि कै कल्प्य कहिए योग्य, ऐसा आचरण जाविषै प्ररूपिए है, सो **महाकल्प्य नामा प्रकीर्णक** है । इसविषै जिनकल्पी महामुनिनि के उत्कृष्ट संहनन योग्य द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव विषै प्रवर्तै तिनकै प्रतिमायोग वा आतापनयोग, अभ्रावकाश, वृक्षतल रूप त्रिकाल योग इत्यादि आचरण प्ररूपिए है । अर स्थविरकल्पीनि की दीक्षा, शिक्षा, संघ का पोषण, यथायोग्य शरीर का समा-

धान, सो आत्मसस्कार सल्लेखना उत्तम अर्थ स्थान कौं प्राप्त उत्तम आराधना, इनिका विशेष प्ररूपिए है ।

बहुरि **पुडरीक नामा प्रकीर्णक** भवनवासी, व्यतर, ज्योतिषी, कल्पवासी इनि विषै उपजने कौं कारण अैसा दान, पूजा, तपश्चरण, अकामनिर्जरा, सम्यक्त्व, सयम इत्यादि विधान प्ररूपिये है। वा तहा उपजने तै जो विभवादि पाइए, सो प्ररूपिये है।

बहुरि **महान् जो पुडरीक, सो महापुडरीक नामा प्रकीर्णक** है । सो महर्धिक जे इद्र, प्रतीद्र, अहमिद्रादिक, तिनविषै उपजने कौ कारण अैसे विशेष तश्चरणादि, तिनिकौं प्ररूपै है ।

बहुरि **निषेधनं** कहिए प्रमाद करि कीया दोष का निराकरण, सो **निषिद्धि** कहिए सज्ञा विषै **क** प्रत्ययकरि निषिद्धिका नाम भया, सो अैसा **निषिद्धिका नाम प्रकीर्णक प्रायश्चित शास्त्र** है । इस विषै प्रमादतै कीया दोष का विशुद्धता के निमित्त अनेक प्रकार प्रायश्चित्त प्ररूपिए है । याका निसतिका अैसा भी नाम है ।

अैसे अगबाह्य श्रुतज्ञान चौदह प्रकार कह्या । याके अक्षरनि का प्रमाण पूर्वं कह्या ही है ।

आगे श्रुतज्ञान की महिमा कहै है –

सुदकेवलं च णाणं, दोण्णि वि सरिसाणि होंति बोहादो ।
सुदणाण तु परोक्खं, पच्चक्खं केवलं णाणं ।।३६९।।

श्रुतकेवलं च ज्ञान, द्वे अपि सदृशे भवतो बोधात् ।
श्रुतज्ञानं तु परोक्ष, प्रत्यक्षं केवलं ज्ञान ।।३६९।।

टीका – श्रुतज्ञान अर केवलज्ञान दोऊ समस्त वस्तुनि के द्रव्य, गुण, पर्याय जानने की अपेक्षा समान है । इतना विशेष श्रुतज्ञान परोक्ष है, केवलज्ञान प्रत्यक्ष है ।

भावार्थ — जैसै केवलज्ञान का अपरिमित विषय है, तैसै श्रुतज्ञान का अप रिमित विषय है । शास्त्र तै सर्वनि का जानने की शक्ति है, परि श्रुतज्ञान सर्वोत्कृष्ट

भी होइ, तौ भी सर्व पदार्थनि विषै परोक्ष कहिए अविशद, अस्पष्ट ही है। जातै अमूर्तिक पदार्थनि विषै वा सूक्ष्म अर्थ-पर्यायनि विषै वा अन्य सूक्ष्म अशनि विषै विशदता करि प्रवृत्ति श्रुतज्ञान को न हो है। बहुरि जे मूर्तिक व्यजनपर्याय वा अन्य स्थूल अश इस ज्ञान के विषय है। तिनि विषै भी अवधिज्ञानादि की नाई प्रत्यक्ष रूप न प्रवर्तै है। तातै श्रुतज्ञान परोक्ष है।

बहुरि केवलज्ञान प्रत्यक्ष कहिए विशद अर स्पष्टरूप मूर्तिक – अमूर्तिक पदार्थ, स्थूल – सूक्ष्म पर्याय, तिनि विषै प्रवर्तै है, जातै समस्त आवरण अर वीर्यांतराय के क्षय तै प्रकट हो है, तातै प्रत्यक्ष है। **अक्ष** कहिए आत्मा, तिहिं प्रति निश्चित होइ, कोई पर द्रव्य की अपेक्षा न चाहे, सो प्रत्यक्ष कहिए। प्रत्यक्ष का लक्षण विशद वा स्पष्ट है। जहा अपने विषय के जानने मैं कसर न होइ, ताकौं विशद वा स्पष्ट कहिए।

बहुरि उपात्त वा अनुपात्तरूप पर द्रव्य की सापेक्षा कौ लीए जो होइ, सो परोक्ष कहिये। याका लक्षण अविशद – अस्पष्ट जानना। मन, नेत्र अनुपात्त है, अन्य चारि इद्री उपात्त है।

असै श्रुतज्ञान केवलज्ञान विषै प्रत्यक्ष, परोक्ष लक्षण भेद तै भेद है। बहुरि विषय अपेक्षा समानता है। सोई समतभद्राचार्य देवागम स्तोत्र विषै कह्या है–

स्याद्वादकेवलज्ञाने, सर्वतत्त्वप्रकाशने।
भेदः साक्षादसाक्षाच्च, ह्यवस्त्वन्यतमं भवेत् ।।

याका अर्थ — स्याद्वाद तौ श्रुतज्ञान अर केवलज्ञान ए दोऊ सर्व तत्त्व के प्रकाशी हैं, परन्तु प्रत्यक्ष परोक्ष भेद तै भेद पाइए है। इनि दोऊ प्रमाणनि विषै अन्यतम जो एक, सो अवस्तु है। एक का अभाव मानै दोऊनि का अभाव - विनाश जानना।

आगै शास्त्रकर्ता पैसठि गाथानि करि अवधिज्ञान कौ प्ररूपै है–

अवहीयदि त्ति ओही, सीमाणाणे त्ति वण्णियं समये।
भवगुणपच्चयविहियं, जमोहिणाणो त्ति णं बेंति[1] ।।३७०।।[2]

---

१ पाठभेद—जमोहि तमोहि।

२ षट्खडागम – धवला पुस्तक १, गाथा स. १८४, पृष्ठ ३६१।

अवधीयत इत्यवधिः सीमाज्ञानमिति वर्णितं समये ।
भवगुणप्रत्ययविधिकं, यदवधिज्ञानमिति ब्रुवंति ।।३७०।।

टीका — **अवधीयते** कहिए द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव करि परिमाण जाका कीजिए, सो अवधिज्ञान जानना । जैसे मति, श्रुत, केवलज्ञान का विषय द्रव्य, क्षेत्रादि करि अपरिमित है, तैसे अवधिज्ञान का विषय अपरिमित नाही । श्रुतज्ञान करि भी शास्त्र के बल तै अलोक वा अनन्तकाल आदि जानै । अवधिज्ञान करि जेता द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव प्रमाण आगे कहैंगे, तितना ही प्रत्यक्ष जानै । तातै सीमा जो द्रव्य क्षेत्रादि की मर्यादा, ताकौ लीए है विषय जाका, अैसा जो ज्ञान, सो अवधिज्ञान है, अैसै सर्वज्ञदेव सिद्धात विषै कहे है ।

सो अवधिज्ञान दोय प्रकार कह्या है । एक भवप्रत्यय, एक गुणप्रत्यय । तहा भव जो नारकादिक पर्याय, ताके निमित्त तै होइ, सो भवप्रत्यय कहिए, जो नारकादि पर्याय धारै ताके अवधिज्ञान होइ ही होइ, तातै इस अवधिज्ञान कौ भवप्रत्यय कहिए । बहुरि गुणप्रत्यय कहिए सम्यग्दर्शनादि रूप, सो है निमित्त जाका, सो गुणप्रत्यय कहिए । मनुष्य, तिर्यंच सर्व ही कै अवधिज्ञान नाही, जाकै सम्यग्दर्शनादिक की विशुद्धता होइ, ताकै अवधिज्ञान होइ, तातै इस अवधिज्ञान कौं गुणप्रत्यय कहिए ।

भवपच्चइगो सुरणिरयाणं तित्थे वि सव्वअंगुत्थो ।
गुणपच्चइगो णरतिरियाणं सखादिचिह्णभवो ।।३७१।।

भवप्रत्ययकं सुरनारकाणां तीर्थेऽपि सर्वांगोत्थम् ।
गुणप्रत्ययकं नरतिरश्चां शखादिचिह्न भवम् ।।३७१।।

टीका — तहा भवप्रत्यय अवधिज्ञान देवनि कै, नारकीनि कै अर चरम शरीरी तीर्थंकर देवनि कै पाइए है । सो यहु भवप्रत्यय अवधिज्ञान **'सर्वांगोत्थं'** कहिए सर्व आत्मा के प्रदेशनि विषै तिष्ठता अवधिज्ञानावरण अर वीर्यांतराय कर्म, ताके क्षयोपशम तै उत्पन्न हो है ।

बहुरि गुणप्रत्यय अवधिज्ञान है, सो पर्याप्त मनुष्य अर सैनी पचेंद्री पर्याप्त तिर्यंच, इनिके सभवै है । सो यहु गुणप्रत्यय अवधिज्ञान **'शखादिचिन्हभवम्'** कहिए

नाभि के ऊपरि शख, कमल, वज्र, साथिया, माछला, कलस इत्यादिक का आकार रूप जहा शरीर विषै भले लक्षण होइ, तहा सबधी जे आत्मा के प्रदेश, तिनि विषै तिष्ठता जो अवधिज्ञानावरण कर्म अर वीर्यांतराय कर्म, तिनिके क्षयोपशम तै उत्पन्न हो है ।

भवप्रत्यय अवधिज्ञान विषै भी सम्यग्दर्शनादि गुण का सद्भाव है, तथापि उन गुणो की अपेक्षा नाही करने तै भवप्रत्यय कह्या अर गुणप्रत्यय विषै मनुष्य तिर्यंच भव का सद्भाव है, तथापि उन पर्यायनि की अपेक्षा नाही करने तै गुणप्रत्यय कह्या है ।

गुणपच्चइगो छद्धा, अणुगावट्ठिदपवड्ढमाणिदरा ।
देसोही परमोही, सव्वोहि त्ति य तिधा ओही ॥३७२॥

गुणप्रत्ययकः षोढा, अनुगावस्थितप्रवर्धमानेतरे ।
देशावधिः परमावधिः, सर्वावधिरिति च त्रिधा अवधिः ॥३७२॥

टीका – जो गुणप्रत्यय अवधिज्ञान है, सो छह प्रकार है – अनुगामी, अवस्थित, वर्धमान, अर इतर कहिए अननुगामी, अनवस्थित, हीयमान असै छह प्रकार है।

तहा जो अवधिज्ञान अपने स्वामी जीव के साथि ही गमन करै, ताकौ अनुगामी कहिए । ताके तीन भेद – क्षेत्रानुगामी, भवानुगामी, उभयानुगामी । तहा जो अवधिज्ञान जिस क्षेत्र विषै उपज्या था, तिस क्षेत्र कौ छोडि, जीव और क्षेत्र विषै बिहार कीया, तहा भी वह अवधिज्ञान साथि ही रह्या, विनष्ट न हुवा और पर्याय धरि विनष्ट होइ, सो क्षेत्रानुगामी कहिए । बहुरि जो अवधिज्ञान जिस पर्याय विषै उपज्या था, तिस पर्याय कौ छोडि, जीव और पर्याय कौ धर्‍या तहा भी वह अवधिज्ञान साथि ही रह्या, सो भवानुगामी कहिए । बहुरि जो अवधिज्ञान जिस क्षेत्र वा पर्याय विषै उपज्या था, तातै जीव अन्य भरतादि क्षेत्र विषै गमन कीया वा अन्य देवादि पर्याय धर्‍या, तहा साथि ही रहै, सो उभयानुगामी कहिए ।

बहुरि जो अवधिज्ञान अपने स्वामी जीव की साथि गमन न करै, सो अननुगामी कहिए । याके तीन भेद क्षेत्राननुगामी, भवाननुगामी, उभयाननुगामी । तहा जो अवधिज्ञान जिस क्षेत्र विषै उपज्या होइ, तिस क्षेत्र विषै तौ जीव और पर्याय धरौ वा

मति धरौ वह अवधिज्ञान साथि ही रहै है । अर उस क्षेत्र तै जीव और कोई भरत, ऐरावत, विदेहादि क्षेत्रनि विषै गमन करै, तो वह ज्ञान अपने उपजने का क्षेत्र ही विषै विनष्ट होइ, सो क्षेत्राननुगामी कहिए । बहुरि जो अवधिज्ञान जिस पर्याय विषै उपज्या होइ, तिस पर्याय विषै तौ जीव और क्षेत्र विषै तौ गमन करौ वा मति करौ वह अवधिज्ञान साथि रहे अर उस पर्याय तै अन्य कोई देव मनुष्य आदि पर्याय धरै तौ अपने उपजने का पर्याय विषै विनष्ट होइ, सो भवाननुगामी कहिये । बहुरि जो अवधिज्ञान और क्षेत्र विषै वा और पर्याय विषै जीव कौं प्राप्त होते साथि न रहै; अपने उपजने का क्षेत्र वा पर्याय विषै ही विनष्ट होइ, सो उभयाननुगामी कहिए ।

बहुरि जो अवधिज्ञान सूर्यमडल की ज्यो घटै बधै नाही, एक प्रकार ही रहे, सो अवस्थित कहिए ।

बहुरि जो अवधिज्ञान कदाचित् बधै, कदाचित् घटै, कदाचित् अवस्थित रहै; सो अनवस्थित कहिये ।

बहुरि जो अवधिज्ञान शुक्ल पक्ष के चद्रमडल की ज्यौं बधता बधता अपनें उत्कृष्ट पर्यंत बधै, सो वर्धमान कहिए ।

बहुरि जो अवधिज्ञान कृष्ण पक्ष के चद्रमडल की ज्यो घटता घटता अपने नाश पर्यंत घटै, सो हीयमान कहिए । अैसै गुणप्रत्यय अवधिज्ञान के छह भेद कहे ।

बहुरि तैसै ही सामान्यपनै अवधिज्ञान तीन प्रकार है – देशावधि, परमावधि, सर्वावधि ए तीन भेद है । तहा गुणप्रत्यय देशावधि ही छह प्रकार जानना ।

भवपच्चइगो ओही, देसोही होदि परमसव्वोही ।
गुणपच्चइगो णियमा, देसोही वि य गुणे होदि ॥३७३॥

भवप्रत्ययकोवधिः, देशावधिः भवति परमसर्वावधिः ।
गुणप्रत्ययको नियमात्, देशावधिरपि च गुणे भवति ॥३७३॥

टीका — भवप्रत्यय अवधि तौ देशावधि ही है, जातै देव, नारकी, गृहस्थ, तीर्थंकर इनके परमावधि सर्वावधि होइ नाही ।

बहुरि परमावधि अर सर्वावधि निश्चय सौ गुणप्रत्यय ही है, जातै सयमरूप विशेष गुण बिना न होइ ।

बहुरि देशावधि भी सम्यग्दर्शनादि गुण होत सतै हो है, तातै गुणप्रत्यय अवधि तौ तीन प्रकार ही है। अर भवप्रत्यय अवधि एक देशावधि ही है।

देसावहिस्स य अवरं, णरतिरिये होदि संजदह्मि वरं।
परमोही सव्वोही, चरमसरीरस्स विरदस्स ॥३७४॥

देशावधेश्च अवरं, नरतिरश्चोः भवति संयते वरम् ।
परमावधिः सर्वावधिः, चरमशरीरस्य विरतस्य ॥३७४॥

टीका — देशावधि का जघन्य भेद सयमी वा असयमी मनुष्य, तिर्यंच विषै ही हो है; देव, नारकी विषै न हो है। बहुरि देशावधि का उत्कृष्ट भेद सयमी, महाव्रती, मनुष्य विषै ही हो है, जातै और तीन गति विषै महाव्रत सभवै नाही।

बहुरि परमावधि अर सर्वावधि जघन्य वा उत्कृष्ट (वा) चरम शरीरी महाव्रती मनुष्य विषै सभवै है।

चरम कहिए ससार का अत विषै भया, तिस ही भवतै मोक्ष होने का कारण, असा वज्रवृषभनाराच शरीर जिसका होइ, सो चरमशरीरी कहिए।

पडिवादी देसोही, अप्पडिवादी हवंति सेसा ओ।
मिच्छत्तं अविरमणं, ण य पडिवज्जंति चरिमदुगे ॥३७५॥

प्रतिपाती देशावधिः, अप्रतिपातिनौ भवतः शेषौ अहो।
मिथ्यात्वमविरमण, न च प्रतिपद्यन्ते चरमद्विके ॥३७५॥

टीका — देशावधि ही प्रतिपाती है, शेप परमावधि, सर्वावधि प्रतिपाती नाही।

प्रतिपात कहिए सम्यक् चारित्र सौ भ्रष्ट होइ, मिथ्यात्व असयम कौ प्राप्त होना, तीहि सयुक्त जो होइ, सो प्रतिपाती कहिए।

जो प्रतिपाती न होइ, सो अप्रतिपाती कहिए। देशावधिवाला तौ कदाचित् सम्यक्त्व चारित्र सौ भ्रष्ट होइ, मिथ्यात्व असयम कौ प्राप्त हो है। अर चरमद्विक कहिए अत का परमावधि – सर्वावधि दोय ज्ञान विषै वर्तमान जीव, सो निश्चय सौं

मिथ्यात्व अर अविरति कौं प्राप्त न हो है। जातै देशावधि तौ प्रतिपाती भी है, अप्रतिपाती भी है। परमावधि, सर्वावधि अप्रतिपाती ही है।

दव्वं खेत्तं कालं, भावं पडि रूवि जाणदे ओही।
अवरादुक्कस्सो त्ति य, वियप्परहिदो दु सव्वोही ॥३७६॥

द्रव्यं क्षेत्रं कालं, भावं प्रति रूपि जानीते अवधिः।
अवरादुत्कृष्ट इति च, विकल्परहितस्तु सर्वावधिः ॥३७६॥

टीका — अवधिज्ञान जघन्य भेद तै लगाइ उत्कृष्ट भेद पर्यंत असख्यात लोक प्रमाण भेद धरै है, सो सर्व द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव प्रति मर्यादा लीए रूपी जो पुद्गल अर पुद्गल सबध कौ धरै ससारी जीव, तिनिकौं प्रत्यक्ष जानै है। बहुरि सर्वावधिज्ञान है, सो जघन्य, मध्यम, उत्कृष्ट भेद रहित, हानि – वृद्धि रहित, अवस्थित सर्वोत्कृष्टता कौ प्राप्त है, जातै अवधिज्ञानावरण का उत्कृष्ट क्षयोपशम तहा ही सभवै है। तातै देशावधि, परमावधि के जघन्य, मध्यम, उत्कृष्ट भेद सभवै है।

णोकम्मुरालसंचं, मज्झिमजोगोज्जियं सविस्सचयं।
लोयविभत्तं जाणदि, अवरोही दव्वदो णियमा ॥३७७॥

नोकर्मौदारिकसंचयं, मध्यमयोगार्जितं सविस्रसोपचयम्।
लोकविभक्तं जानाति, अवरावधिः द्रव्यतो नियमात् ॥३७७॥

टीका — मध्यम योग का परिणमन तै निपज्या असा नोकर्मरूप औदारिक शरीर का सचय कहिए द्वयर्ध गुणहानि करि औदारिक का समयप्रबद्ध कौं गुणिए, तिहिं प्रमाण औदारिक का सत्तारूप द्रव्य, बहुरि सो अपने योग्य विस्रसोपचय के परमाणूनि करि सयुक्त, ताकौ लोकप्रमाण असख्यात का भाग दीए, जो एक भाग मात्र द्रव्य होइ, तावन्मात्र ही द्रव्य कौ जघन्य अवधिज्ञान जानै है। यातै अल्प स्कध कौं न जानै है, जघन्य योगनि तै जो निपजै है सचय, सो यातै सूक्ष्म हो है, तातै तिस कौं जानने की शक्ति नाही। बहुरि उत्कृष्ट योगनि तै जो निपजै है सचय, सो यातै स्थूल है, ताकौ जानै ही हैं जातै जो सूक्ष्म कौ जानै, ताकै उसतै स्थूल कौं जानने मे किछू विरुद्ध (विरोध) नाही। तातै यहा मध्यम योगनि करि निपज्या असा औदारिक शरीर का सचय कह्या। बहुरि विस्रसोपचय रहित सूक्ष्म हो है, तातै वाकै जानने की शक्ति

नाही, तातै विस्रसोपचय सहित कह्या । असै स्कध कौ लोक के जितने प्रदेश है, उतने खड करिये । तहा एक खड प्रमाण पुद्गल परमाणूनि का स्कध नेत्रादिक इद्रियनि के गोचर नाही । ताकौं जघन्य देशावधिज्ञान प्रत्यक्ष जाने है । असा जघन्य देशावधि ज्ञान का विषयभूत द्रव्य का नियम कह्या ।

सुहुमणिगोदअपज्जत्तयस्स, जादस्स तदियसमयम्हि ।
अवरोगाहणमाणं, जहण्णयं ओहिखेत्तं तु ॥३७८॥

सूक्ष्मनिगोदापर्याप्तकस्य, जातस्य तृतीयसमये ।
अवरावगाहनमानं, जघन्यकमवधिक्षेत्रं तु ॥३७८॥

टीका — बहुरि सूक्ष्म निगोदिया लब्धि अपर्याप्तक के जन्म तै तीसरा समय के विषै जघन्य अवगाहना का प्रमाण पूर्वै जीव समासाधिकार विषै कह्या था, तीहि प्रमाण जघन्य अवगाहना का क्षेत्र जानना । इतने क्षेत्र विषै पूर्वोक्त प्रमाण लीए वा तिसतै स्थूल जेते पुद्गल स्कध होइ, तिनिकौ जघन्य देशावधिज्ञान जानै है । इस क्षेत्र के बारै तिष्ठते जे होइ, तिनकौ न जानै है, असै क्षेत्र की मर्यादा कही ।

अवरोहिखेत्तदीहं, वित्थारुस्सेहयं ण जाणामो ।
अण्णं पुण समकरणे, अवरोगाहणपमाणं तु ॥३७९॥

अवरावधिक्षेत्रदीर्घं, विस्तारोत्सेधकं न जानीमः ।
अन्यत् पुनः समीकरणे, अवरावगाहनप्रमाणं तु ॥३७९॥

टीका — बहुरि जघन्य देशावधिज्ञान का विषय भूत क्षेत्र की लबाई, चौडाई, ऊचाई का प्रमाण हम न जानै है कितना कितना है, जातै इहा असा उपदेश नाही, परतु परम गुरुनि का उपदेश की परम्परा तै इतना जाने है, जो भुज, कोटि, वेधनि का समीकरण तै जो क्षेत्रफल होइ, सो जघन्य अवगाहना के समान घनागुल के असख्यातवे भागमात्र हो है ।

आम्ही साम्ही दोय दिसानि विषै जो कोई एक दिशा सबधी प्रमाण, सो भुज कहिये ।

अवशेष दोय दिसानि विषै कोई एक दिशा सबधी प्रमाण, सो कोटि कहिए ।

ऊचाई का प्रमाण कौ, वेध कहिए ।

प्रवृत्ति विषै लबाई, ऊचाई, चौडाई तीन नाम हैं । सो इनिका क्षेत्र, खड विधान तै समान प्रमाण करि क्षेत्रफल कीए, जो प्रमाण आवै, तितना क्षेत्रफल जानना । जघन्य अवधिज्ञान के क्षेत्र का अर जघन्य अवगाहना रूप क्षेत्र का क्षेत्रफल समान है, इतना तो हम जानै है । अर भुज, कोटि, वेध का प्रमाण कैसै है ? सो हम जानते नाही, अधिक ज्ञानी जानै ही हैं ।

अवरोगाहणमाणं, उस्सेहंगुलअसंखभागस्स ।
सूइस्स य घणपदरं, होदि हु तक्खेत्तसमकरणे ।।३८०।।

अवरावगाहनमानमुत्सेधांगुलासंख्यभागस्य ।
सूचेश्च घनप्रतरं, भवति हि तत्क्षेत्रसमीकरणे ।।३८०।।

टीका — इहा कोऊ प्रश्न करै कि जघन्य अवगाहनारूप क्षेत्र का प्रमाण कहा, सो कैसाक है ?

ताका समाधान — जघन्य अवगाहना रूप क्षेत्र का आकार कोऊ एक नियम रूप नाही तथापि क्षेत्र, खड विधान करि सदृश कीजिए, तब भुज का वा कोटि का वा वेध का प्रमाण उत्सेधागुल कौ योग्य असख्यात का भाग दीए, जो एक भाग का प्रमाण होइ, तितना जानना । बहुरि भुज कौ वा कोटि कौ वा वेध कौ परस्पर गुणै, घनागुल के असख्यातवे भागमात्र प्रकट क्षेत्रफल भया, सो जघन्य अवगाहना का प्रमाण है । याही के समान जघन्य अवधिज्ञान का क्षेत्र है । इहा क्षेत्र, खड विधान करि समीकरण का उदाहरण और भी दिखाइए है ।

जैसै लोकाकाश ऊचाई, चौडाई, लबाई विषै हीनाधिक प्रमाण लीए है । ताका क्षेत्रफल फैलाइए, तब तीन सै तेतालीस राजू प्रमाण घनफल होइ, अर जो हीनाधिक कौ बधाइ, घटाइ, समान प्रमाण करि सात – सात राजू की ऊचाई, लबाई, चौडाई कल्पि परस्पर गुणन करि क्षेत्रफल कीजिए । तब भी तीन सै तेतालीस ही राजू होइ । ऐसै ही इहा जघन्य क्षेत्र की लबाई, चौडाई, ऊचाई हीनाधिक प्रमाण लीए है । परि क्षेत्र खड विधान करि समीकरण कीजिए, तब ऊचाई का वा चौड़ाई का वा लबाई का प्रमाण उत्सेधागुल के असख्यातवे भागमात्र होइ ।

इनिकौ परस्पर गुणन कीए, घनागुल का असंख्यातवा भाग प्रमाणघन क्षेत्रफल हो है, सो इतना ही प्रमाण जघन्य अवगाहना का है । अर इतना ही प्रमाण जघन्य अवधिज्ञान के क्षेत्र का है, तातै समान कहै हैं ।

अवरं तु ओहिखेत्तं, उस्सेहं अंगुलं हवे जम्हा ।
सुहुमोगाहणमाणं, उवरि पमाणं तु अंगुलयं ॥३८१॥

अवरं तु अवधिक्षेत्रं, उत्सेधमंगुल भवेद्यस्मात् ।
सूक्ष्मावगाहनमानमुपरि प्रमाण तु अंगुलकम् ॥३८१॥

टीका — बहुरि जो यहु जघन्य अवगाहना समान जघन्य देशावधि का क्षेत्र, घनांगुल के असख्यातवे भाग मात्र कह्या, सो उत्सेधागुल का घन प्रमाण जो घनांगुल, ताके असख्यातवे भागमात्र जानना । जातै इहा सूक्ष्म निगोद, लब्धि अपार्याप्तक की जघन्य अवगाहना के समान जघन्य देशावधि का क्षेत्र कह्या, सो शरीरनि का प्रमाण है, सो उत्सेधागुल ही तै है, जातै परमागम विषै अैसा कह्या है कि देह, गेह, ग्राम, नगर इत्यादिक का प्रमाण उत्सेधागुल तै है । तातै इहा जघन्य अवधिज्ञान के क्षेत्र का प्रमाण भी उत्सेधागुल की ही अपेक्षा जानना । इस उत्सेधागुल का ही नाम व्यवहारांगुल है ।

बहुरि आगै जो '**अंगुलमावलियाए भागमसंखेज्ज**' इत्यादि सूत्र उक्त काडकनि विषै अगुल कह्या है । सो वह अंगुल प्रमाणागुल जानना । जातै वाके आगै हस्त, क्रोश, योजन, भरत, क्षेत्रादि उत्तरोत्तर कहै है । बहुरि आगम विषै द्वीप, क्षेत्रादि का प्रमाण प्रमाणागुल तै कह्या है । तातै तहा प्रमाणागुल ही का ग्रहण करना ।

अवरोहिखेत्तमज्झे, अवरोही अवरदव्वमवगमदि ।
तद्दव्वस्सवगाहो, उस्सेहासंखघणपदरो ॥३८२॥

अवरावधिक्षेत्रमध्ये अवरावधिः अवरद्रव्यमवगच्छति ।
तद्द्रव्यस्यावगाहः उत्सेधासंख्यघनप्रतरः ॥३८२॥

टीका – तीहिं जघन्य अवधिज्ञान सबधी क्षेत्र विषै जे पूर्वोक्त जघन्य अवधि ज्ञान के विषय भूत द्रव्य तिष्ठै है, तिनकौ जघन्य देशावधिज्ञानी जीव जानै है । तीहिं क्षेत्र विषै तैसै औदारिक शरीर के सचय कौ लोक का भाग दीए एक भाग मात्र खंड

असख्यात पाइए है, तिनि सवनि कौं जानै है । बहुरि इस प्रमाण तै एक, दोय आदि जिस स्कधनि के बधते प्रदेश होहि तिनिकौ तो जाने ही जानै, जातै सूक्ष्म कौं जानै स्थूल का जानना सुगम है । बहुरि जो पूर्वै जघन्य अवधिज्ञान सवधी द्रव्य कह्या था, तिसकी अवगाहना का प्रमाण, तिस जघन्य अवधि का क्षेत्र का प्रमाण के असख्यातवें भागमात्र है, तथापि घनागुल के असख्यातवे भागमात्र ही है । अर वाकै भुज, कोटि, वेध का भी प्रमाण सूच्यगुल के असख्यातवे भागमात्र है । असख्यात के भेद घने हैं, तातै यथासभव जानि लेना ।

आवलिअसंखभागं, तीदभविस्सं च कालदो अवरं ।
ओही जाणदि भावे, कालअसंखेज्जभागं तु ॥३८३॥

आवल्यसंख्यभागमतीतभविष्यच्च कालतः अवरम् ।
अवधिः जानाति भावे, कालसंख्यातभागं तु ॥३८३॥

टीका – जघन्य अवधिज्ञान है, सो काल तै आवली के असख्यातवें भागमात्र अतीत, अनागत काल कौ जानै है । बहुरि भाव तै आवली का असख्यातवा भागमात्र काल प्रमाण का असख्यातवा भाग प्रमाण भाव, तिनकौं जाने है ।

भावार्थ – जघन्य अवधिज्ञान पूर्वोक्त क्षेत्र विषै, पूर्वोक्त एक द्रव्य के आवली का असख्यातवा भाग प्रमाण अतीत काल विषै वा तितना ही अनागत काल विषै जे आकाररूप व्यजन पर्याय भए, अर होहिंगे तिनकौ जानै हैं, जातै व्यवहार काल कैं अर द्रव्य कै पर्याय ही की पलटन हो है । बहुरि पूर्वोक्त क्षेत्र विषै पूर्वोक्त द्रव्य के वर्तमान परिणमन रूप अर्थ पर्याय है । तिनि विषै आवली का असख्यातवा भाग का असख्यातवा भाग प्रमाण, जे पर्याय, तिनि कौ जानै है । ऐसै जघन्य देशावधि ज्ञान के विषय भूत द्रव्य, क्षेत्र, काल, भावनि की सीमा – मर्यादा का भेद कहि ।

आगै तिस अवधिज्ञान के जे द्वितीयादि भेद, तिनिकौं च्यारि प्रकार विषय भेद कहै हैं —

अवरद्दव्वादुपरिमदव्ववियप्पाय होदि धुवहारो ।
सिद्धाणंतिमभागो, अभव्वसिद्धादणंतगुणो ॥३८४॥

अवरद्रव्यादुपरिमद्रव्यविकल्पाय भवति ध्रुवहारः ।
सिद्धानंतिमभागः, अभव्यसिद्धादनंतगुणः ।।३८४।।

टीका – जघन्य देशावधि ज्ञान का विषयभूत द्रव्य तै ऊपरि द्वितीयादि अवधि ज्ञान के भेद का विषयभूत द्रव्य का प्रमाण ल्यावने के अर्थि ध्रुवहार जानना । सर्व भेदनि विषै जिस भागहार का भाग दीए प्रमाण आवै, सो ध्रुव भागहार कहिए । जैसै इस जघन्य देशावधिज्ञान का विषयभूत द्रव्य कौ ध्रुवभागहार के प्रमाण का भाग दीए, जो एक भाग का प्रमाण आवै, सो देशावधि का द्रव्य सबधी दूसरा भेद का विषयभूत द्रव्य का प्रमाण जानना । याकौ ध्रुवहार का भाग दीए, जो एक भाग का प्रमाण आवै, सो देशावधि के तीसरे भेद का विषयभूत द्रव्य जानना । असै सर्वावधि पर्यंत जानना । पहले पहले घने परमाणूनि का स्कधरूप द्रव्य कौ ध्रुवभागहार का भाग दीए, पीछे पीछे एक भागमात्र थोरे परमाणूनि का स्कध आवै, सो पूर्वस्कध तै सूक्ष्म स्कध होइ, सो ज्यो ज्यो सूक्ष्म कौ जाने, त्यौ त्यौ ज्ञान की अधिकता कहिए है, जातै सूक्ष्म कौ जानै स्थूल का तो जानना सहज ही हो है । बहुरि जो वह ध्रुवभागहार कह्या था, ताका प्रमाण सिद्धराशि कौ अनत का भाग दीजिए, ताके एक भाग प्रमाण है । अथवा अभव्य सिद्धराशि कौ अनत तै गुणिए, तीहि प्रमाण है ।

धुवहारकम्मवग्गणगुणगारं कम्मवग्गणं गुणिदे ।
समयपबद्धपमाणं, जाणिज्जो ओहिविसयह्मि ।।३८५।।

ध्रुवहारकार्मणवर्गणागुणकारं कार्मणवर्गणां गुणिते ।
समयप्रबद्धप्रमाणं, ज्ञातव्यमवधिविषये ।।३८५।।

टीका – देशावधिज्ञान का विषयभूत द्रव्य की अपेक्षा जितने भेद होइ, तितने मे सौं घटाइए, जो प्रमाण होइ, तितना ध्रुवहार माडि, परस्पर गुणि, जो प्रमाण होइ, सो कार्माण वर्गणा का गुणकार जानना । तीहि कार्माण वर्गणा का गुणकार करि कार्माण वर्गणा कौ गुणै, जो प्रमाण होइ, सो अवधिज्ञान का विषय विषै समयप्रबद्ध का प्रमाण जानना । जो जघन्य देशावधिज्ञान का विषयभूत द्रव्य कह्या था, तिसहीका नाम इहा समयप्रबद्ध जानना । इसका विशेप आगै कहैगे ।

ध्रुवहार का प्रमाण सामान्यपनै सिद्धराशि के अनतवे भागमात्र कह्या, अब विशेषपनै ध्रुवहार का प्रमाण कहै है —

मणदव्ववग्गणाण, वियप्पाणंतिमसमं खु धुवहारो ।
अवरुक्कस्सविसेसा, रूवहिया तव्वियप्पा हु ॥३८६॥

मनोद्रव्यवर्गणानां, विकल्पानंतिमसम खलु ध्रुवहारः ।
अवरोत्कृष्टविशेषाः, रूपाधिकास्तद्विकल्पा हि ॥३८६॥

टीका – मनोवर्गणा के जितने भेद है, तिनिकौ अनत का भाग दीजिए, एक भाग का जितना प्रमाण होइ, सो ध्रुवहार का प्रमाण जानना । ते मनोवर्गणा के भेद केते हैं, सो कहिए है - मनोवर्गणा का जघन्य प्रमाण कौ मनोवर्गणा का उत्कृष्ट प्रमाण मे सौ घटाए, जो प्रमाण अवशेष रहै, तीहिविषै एक अधिक कीए, मनोवर्गणा के भेदनि का प्रमाण हो है । आगै सम्यक्त्व मार्गणा का कथन विषै तेईस जाति की पुद्गल वर्गणा कहैंगे । तहा तैजसवर्गणा, भाषावर्गणा, मनोवर्गणा, कार्माणवर्गणा इत्यादिक का वर्णन करैगे, सो जानना ।

इस मनोवर्गणा का जघन्य भेद अर उत्कृष्ट भेद का प्रमाण दिखाइए है –

अवरं होदि अणंतं, अणंतभागेण अहियमुक्कस्सं ।
इदि मणभेदाणंतिमभागो दव्वम्मि धुवहारो ॥३८७॥

अवरं भवति अनंतमनंतभागेनाधिकमुत्कृष्टं ।
इति मनोभेदानंतिमभागो द्रव्ये ध्रुवहारः ॥३८७॥

टीका – मनोवर्गणा का जघन्य भेद अनत प्रमाण है । अनत परमाणूनि का स्कधरूप जघन्य मनोवर्गणा है । इस प्रमाण कौं अनत का भाग दीए, जो प्रमाण आवै, तितना उस जघन्य भेद का प्रमाण विषै जोडे, जो प्रमाण होइ, सोई मनोवर्गणा का उत्कृष्ट भेद का प्रमाण जानना । इतने परमाणूनि का स्कधरूप उत्कृष्ट मनोर्वगणा हो है, सो जघन्य तै लगाइ उत्कृष्ट पर्यंत पूर्वोक्त प्रकार जेते मनोवर्गणा के भेद भए, तिनके अनतवे भागमात्र इहा ध्रुवहार का प्रमाण है ।

अथवा अन्यप्रकार कहै है —

धुवहारस्स पमाणं, सिद्धाणंतिमपमाणमेत्तं पि ।
समयपबद्धणिमित्तं, कम्मणवग्गणगुणा दो दु ॥३८८॥

होदि अणंतिमभागो, तग्गुणगारो वि देसओहिस्स ।
दोऊण दव्वभेदपमाणद्धुवहारसंवग्गो ।।३८९।।

ध्रुवहारस्य प्रमाणं, सिद्धानंतिमप्रमाणमात्रमपि ।
समयप्रबद्धनिमित्तं, कार्मणवर्गणागुणतस्तु ।।३८८।।

भवत्यनंतिमभागस्तद्गुणकारोऽपि देशावधेः ।
द्वयूनद्रव्यभेदप्रमाणध्रुवहारसंवर्गः ।।३८९।।

टीका – ध्रुवहार का प्रमाण सिद्धराशि के अनतवे भागमात्र है । तथापि अवधि का विषयभूत समयप्रबद्ध का प्रमाण ल्यावने के निमित्त जो कार्माण वर्गणा का गुणकार कह्या, ताके अनतवे भागमात्र जानना ।

सो तिस कार्माण वर्गणा के गुणकार का प्रमाण कितना है ?

सो कहिए है – देशावधिज्ञान का विषयभूत द्रव्य की अपेक्षा जितने भेद है, तिनमे दोय घटाए, जो प्रमाण रहै, तितना ध्रुवहार माडि, परस्पर गुणन कीए, जो प्रमाण आवै, तितना कार्माण वर्गणा का गुणकार जानना । असा प्रमाण कैसै कह्या? सो कहिए है – देशावधिज्ञान का विषयभूत द्रव्य की रचना विषै उत्कृष्ट अत का जो भेद, ताका विषय कार्माण वर्गणा कौ एक बार ध्रुवहार का भाग दीए, जो प्रमाण होइ, तितना जानना । बहुरि ताके नीचै द्विचरम भेद, ताका विषय, कार्माण वर्गणा प्रमाण जानना । बहुरि ताके नीचै त्रिचरम भेद, ताका विषय कार्माण वर्गणा कौ एक बार ध्रुवभागहार तै गुणै, जो प्रमाण होइ, तितना जानना । बहुरि ताके नीचै दोय बार ध्रुवभागहार करि कार्माण वर्गणा कौ गुणिए, तब चतुर्थ चरम भेद होइ । असै ही एक एक बार अधिक ध्रुवहार करि कार्माण वर्गणा कौं गुण तै, दोय घाटि देशावधि के द्रव्यभेद प्रमाण ध्रुवहारनि के परस्पर गुणन तै जो गुणकार का प्रमाण भया, ताकरि कार्माणवर्गणा कौ गुणै, जो प्रमाण भया, सोई जघन्य देशावधिज्ञान का विषयभूत लोक करि भाजित नोकर्म औदारिक का सचयमात्र द्रव्य का परिमाण जानना । इहा उत्कृष्ट भेद तै लगाइ जघन्य भेद पर्यत रचना कही, तातै असै गुणकार का प्रमाण कह्या है । बहुरि जो जघन्य तै लगाइ, उत्कृष्ट पर्यंत रचना कीजिए, तो क्रम तै ध्रुवहार के भाग देते जाइए, अत का भेद विषै कार्माण वर्गणा कौ एक बार ध्रुवहार का भाग दीए, जो प्रमाण आवै, तितना द्रव्य प्रमाण होइ इस

कथन उस कथन विषै कुछ अन्यथापना नाही है । ऊपर तै कथन कीया तब ध्रुवहार का गुणकार कहते आए, नीचै तै कथन कीया तब ध्रुवहार का भागहार कहते आए, प्रमाण दोऊ कथन विषै एकसा है ।

देशावधि के द्रव्य की अपेक्षा केते भेद है ? ते कहिए हैं —

अंगुलअसंखगुणिदा, खेत्तवियप्पा य दव्वभेदा हु ।
खेत्तवियप्पा अवरुक्कस्सविसेसं हवे एत्थ ॥३६०॥

अंगुलासंख्यगुणिताः, क्षेत्रविकल्पाश्च द्रव्यभेदा हि ।
क्षेत्रविकल्पा अवरोत्कृष्टविशेषो भवेदत्र ॥३९०॥

टीका – देशावधिज्ञान का विषयभूत क्षेत्र की अपेक्षा जितने भेद हैं, तिनकौं अगुल का असख्यातवा भाग करि गुणै, जो प्रमाण होइ, तितना देशावधिज्ञान का विषयभूत द्रव्य की अपेक्षा भेद हो है ।

ते क्षेत्र की अपेक्षा केते भेद हैं ?

ते कहिए हैं – देशावधिज्ञान का जघन्य क्षेत्र का जो प्रदेशनि का प्रमाण है, तितना भेद देशावधि का उत्कृष्ट क्षेत्र के प्रदेशनि का प्रमाण विषै घटाए, जो अवशेष प्रमाण रहै, तितना भेद देशावधि की क्षेत्र की अपेक्षा है । इनिकौ सूच्यगुल का असख्यातवा भाग करि गुणिए, तामै एक मिलाए, जो प्रमाण होइ, तितना देशावधि का द्रव्य की अपेक्षा भेद है । काहेतै ? सो कहिए है – देशावधि का जघन्य भेद विषै पूर्वै जो द्रव्य का परिमाण कह्या था, ताकौं ध्रुवहार का भाग दीए, जो प्रमाण होइ सो देशावधिका द्रव्य की अपेक्षा दूसरा भेद है । बहुरि इस दूसरा भेद विषै क्षेत्र का परिमाण तितना ही है ।

भावार्थ – देशावधि का जघन्य तै बधता देशावधिज्ञान होइ, तौ देशावधि का दूसरा भेद होइ, सो जघन्य करि जो द्रव्य जानिए था, ताकौ ध्रुव भागहार का भाग दीए, जो सूक्ष्म स्कधरूप द्रव्य होइ, ताकौं जानै अर क्षेत्र की अपेक्षा जितना क्षेत्र कौ जघन्यवाला जाने था, तितना ही क्षेत्र कौं दूसरा भेदवाला जानै है । तातै द्रव्य की अपेक्षा दूसरा भेद भया । क्षेत्र की अपेक्षा प्रथम भेद ही है । बहुरि जो द्रव्य की अपेक्षा दूसरा भेदवाला जानै था, ताकौं ध्रुवहार का भाग दीए, जो सूक्ष्म-

स्कध भया, ताकौ द्रव्य की अपेक्षा तीसरा भेदवाला जानै । अर यहु क्षेत्र की अपेक्षा तितना ही क्षेत्र कौ जानै, तातै द्रव्य की अपेक्षा तीसरा भेद भया । क्षेत्र की अपेक्षा प्रथम भेद ही है । असै द्रव्य की अपेक्षा सूच्यगुल का असख्यातवा भाग प्रमाण भेद होइ, तहा पर्यत जघन्य क्षेत्र मात्र क्षेत्र कौ जानै । तातै द्रव्य की अपेक्षा तौ सूच्यगुल का असख्यातवा भाग प्रमाण भेद भए, अर क्षेत्र की अपेक्षा एक ही भेद भया । बहुरि इहासे आगै असै ही ध्रुवहार का भाग देतै देतै सूच्यगुल का असख्यातवा भाग प्रमाण द्रव्य की अपेक्षा भेद होइ, तहा पर्यंत जघन्य क्षेत्र तै एक प्रदेश बधता क्षेत्र कौ जानै, तहा क्षेत्र की अपेक्षा दूसरा ही भेद रहै ।

बहुरि तहा पीछै सूच्यगुल का असख्यातवा भाग मात्र, द्रव्य अपेक्षा भेदनि विषै एक प्रदेश और बधता क्षेत्र कौ जानै, तहा क्षेत्र की अपेक्षा तीसरा भेद होइ । असै ही सूच्यगुल का असख्यातवा भाग प्रमाण द्रव्य की अपेक्षा भेद होतै होतै क्षेत्र की अपेक्षा एक एक बधता भेद होइ, सो असै लोकप्रमाण उत्कृष्ट देशावधि का क्षेत्र पर्यंत जानना । तातै क्षेत्र की अपेक्षा भेदनि तै द्रव्य की अपेक्षा भेद सूच्यगुल का असख्यातवा भागप्रमाण गुण कह्या । बहुरि अवशेष पहला द्रव्य का भेद था, सो पीछै मिलाया, तातै एक का मिलावना कह्या है ।

तिन देशावधि के जघन्य क्षेत्र अर उत्कृष्ट क्षेत्रनि का प्रमाण कहै है —

अंगुलअसंखभागं, अवरं उक्कस्सयं हवे लोगो ।
इदि वग्गणगुणगारो, असंखधुवहारसंवग्गो ।।३९१।।

अंगुलासंख्यभागमवरमुत्कृष्टक भवेल्लोकः ।
इति वर्गणागुणकारोऽ, संख्यध्रुवहारसवर्गः ।।३९१।।

टीका – जघन्य देशावधि का विषयभूत क्षेत्र सूक्ष्मनिगोद लब्धि अपर्याप्तिक की जघन्य अवगाहना के समान घनागुल के असख्यातवे भागमात्र जानना । बहुरि देशावधि का विषयभूत उत्कृष्ट क्षेत्र लोकप्रमाण जानना । उत्कृष्ट देशावधिवाला सर्वलोक विषै तिष्ठता अपना विषय कौं जानै, असै दोय घाटि, देशावधि का द्रव्य की अपेक्षा जितने भेद होइ, तितना ध्रुवहार माडि, परस्पर गुणन करना, सोई सवर्ग भया । यो करतै जो प्रमाण भया होइ, सोई कार्माण वर्गणा का गुणकार जानना । सो कह्या ही था ।

आगे वर्गणा का परिमाण कहै है —

वग्गणरासिपमाणं, सिद्धाणंतिमपमाणमेत्तं पि ।
दुगसहियपरमभेदपमाणवहाराण संवग्गो ॥३९२॥

वर्गणाराशिप्रमाण, सिद्धानंतिमप्रमाणमात्रमपि ।
द्विकसहितपरमभेदप्रमाणावहाराणा संवर्गः ॥३९२॥

टीका – कार्माणवर्गणा राशि का प्रमाण सिद्धराशि के अनतवे भागमात्र है । तथापि परमावधिज्ञान के जेते भेद है, तिनमे दोय मिलाए, जो प्रमाण होइ, तितना ध्रुवहार माडि, परस्पर गुणन कीये, जो प्रमाण होइ, तितना परमाणूनि का स्कधरूप कार्माणवर्गणा जाननी । जातै कार्माणवर्गणा कौं एक बार ध्रुवहार का भाग दीए, उत्कृष्ट देशावधि का विषय भूत द्रव्य होइ, पीछै परमावधि के जितने भेद हैं, तेती बार क्रम तै ध्रुवहार का भाग दीए, उत्कृष्ट परमावधि का विषयभूत द्रव्य होइ, ताकौं एक बार ध्रुवहार का भाग दीए, एक परमाणू मात्र सर्वावधि का विषय हो है ।

ते परमावधि के भेद कितने हैं ? सो कहिए है —

परमावहिस्स भेदा, सग-ओगाहण-वियप्प-हद-तेऊ ।
इदि धुवहार वग्गणगुणगार वग्गणं जाणे ॥३९३॥

परमावधेर्भेदा., स्वकावगाहनविकल्पहततेजसः ।
इति ध्रुवहार वर्गणागुणकार वर्गणा जानीहि ॥३९३॥

टीका — अग्निकाय के अवगाहना के जेते भेद हैं, तिनि करि अग्निकाय के जीवनि का परिमाण कौ गुणें, जो परिमाण होइ, तितना परमावधिज्ञान का विषय-भूत द्रव्य की अपेक्षा भेद है । सो अग्निकाय की जघन्य अवगाहना का प्रदेशनि का परिमाण कौ अग्निकाय की उत्कृष्ट अवगाहना का परिमाण विषै घटाए, जो प्रमाण होइ, तिनमे एक मिलाए, अग्निकाय की अवगाहना के भेदनि का प्रमाण हो है । सो जीवसमास का अधिकार विषै मत्स्यरचना करी है, तहा कहै ही हैं । बहुरि अग्नि-काय का जीवनि का परिमाण कायमार्गणा का अधिकार विषै कह्या है, सो जानना । इनि दोऊनि कौ परस्पर गुणें, जो प्रमाण होइ, तितना परमावधिज्ञान का विषयभूत

द्रव्य की अपेक्षा भेद है। ऐसै ध्रुवहार का प्रमाण, वर्गणा गुणकार का प्रमाण, वर्गणा का प्रमाण हे शिष्य ! तू जानि ।

देसोहिअवरदव्वं, धुवहारेणवहिदे हवे बिदियं ।
तदियादिबियप्पेसु वि, असंखबारो त्ति एस कमो ॥३९४॥

देशावध्यवरद्रव्यं, ध्रुवहारेणावहिते भवेद्द्वितीयं ।
तृतीयादिविकल्पेष्वपि, असंख्यवार इत्येष क्रमः ॥३९४॥

टीका — देशावधिज्ञान का विषयभूत जघन्य द्रव्य पूर्वै कह्या था, ताकौ ध्रुवहार का भाग दीए, जो प्रमाण होइ, सो दूसरा देशावधि के भेद का विषयभूत द्रव्य होइ। ऐसै ही ध्रुवहार का भाग देतै देतै तीसरा, चौथा इत्यादि भेदनि का विषयभूत द्रव्य होहि। ऐसै असख्यात बार अनुक्रम करना।

ऐसै अनुक्रम होतै कहा होइ ? सो कहिए है —

देसोहिमज्झभेदे, सविस्ससोवचयतेजकम्मंगं ।
तेजोभासमणाणं, वग्गणयं केवलं जत्थ ॥३९५॥

पस्सदि ओही तत्थ, असंखेज्जाओ हवंति दीउवही ।
वासाणि असंखेज्जा, होंति असंखेज्जगुणिदकमा ॥३९६॥जुम्मं॥

देशावधिमध्यभेदे, सविस्रसोपचयतेजः कर्मांगम् ।
तेजोभाषामनसां, वर्गणां केवलां यत्र ॥३९५॥

पश्यत्यवधिस्तत्र, असंख्येया भवंति द्वीपोदधयः ।
वर्षाणि असंख्यातानि भवंति असंख्यातगुणितक्रमाणि ॥३९६॥

टीका — देशावधि के मध्य भेदनि विषै देशावधिज्ञान जिस भेद विषै विस्रसोपचय सहित तैजस शरीररूप स्कध कौ जानै है। बहुरि तिस ही क्रम तै जिस भेद विषै विस्रसोपचय सहित कार्माण शरीर स्कध कौं जानै है। बहुरि इहा तै आगै जिस भेद विषै विस्रसोपचय रहित केवल तैजस वर्गणा कौ जानै है। बहुरि इहा तै आगै जिस भेद विषै विस्रसोपचय रहित केवल भाषावर्गणा को जानै है। इहा तै

आगै जिस भेद विषै विस्रसोपचय रहित कार्माण मनोवर्गणा कौ जानै है। तहां इनि पांच स्थाननि विषै क्षेत्र का प्रमाण असंख्यात द्वीप – समुद्र जानना। अर काल असंख्यात वर्षमात्र जानना। पूर्वोक्त पंच भेद लीए अवधिज्ञान असंख्यात द्वीप-समुद्र विषै पूर्वोक्त स्कंध असंख्यात वर्ष पर्यंत अतीत, अनागत, यथायोग्य पर्याय के धारी, तिनिकौ जानै है। परि इतना विशेष है – जो इनि पंच भेदनि विषै पहिला भेद संबंधी क्षेत्रकाल का परिमाण है। तातै दूसरा भेद संबंधी क्षेत्रकाल का परिणाम असंख्यातगुणा है। दूसरे तै तीसरे का असंख्यात गुणा है। असें ही पांचवा भेद पर्यंत जानना। सामान्यपनै सब का क्षेत्र असंख्यात द्वीप – समुद्र अर काल असंख्यात वर्ष कहे है, जातै असंख्यात के भेद घने है।

तत्तो कम्मइयस्सिगिसमयपबद्ध विविस्ससोवचयं।
धुवहारस्स विभज्जं, सव्वोही जाव ताव हवे ॥३९७॥

ततः कार्मणस्य, एकसमयप्रबद्ध विविस्रसोपचयम्।
ध्रुवहारस्य विभाज्यं, सर्वावधिः यावत्तावद्भवेत् ॥३९७॥

टीका — तहां पीछै तिस मनोवर्गणा कौ ध्रुवाहार का भाग दीजिए, असें ही भाग देतै देतै विस्रसोपचय रहित कार्माण का समय प्रबद्धरूप द्रव्य होइ। याकौं भी ध्रुवहार का भाग दीजिए। असें ही ध्रुवहार का भाग यावत् सर्वावधिज्ञान होइ, तहां पर्यंत जानना। विस्रसोपचय का स्वरूप योगमार्गणा विषै कह्या है, सो जानना।

एदम्हि विभज्जंते, दुचरिमदेसावहिम्मि वग्गणयं।
चरिमे कम्मइयस्सिगिवग्गणमिगिवारभजिदं तु ॥३९८॥

एतस्मिन् विभज्यमाने, द्विचरमदेशावधौ वर्गणा।
चरमे कार्मणस्यैकवर्गणा एकवारभक्ता तु ॥३९८॥

टीका — इस कार्माण समय प्रबद्ध कौ ध्रुवहार का भाग दीए संतै देशावधि का द्वि चरम भेद विषै कार्माणवर्गणा रूप विषयभूत द्रव्य हो है, जातै ध्रुवहार मात्र वर्गणानि का समूह रूप समयप्रबद्ध है। बहुरि याकौ एक वार ध्रुवहार का भाग दीएं, चरम जो देशावधि का अंत का भेद, तिस विषै विषयभूत द्रव्य हो है।

अंगुलअसंखभागे, दव्ववियप्पे गदे दु खेत्तम्हि।
एगागासपदेसो, वड्ढदि संपुण्णलोगो त्ति ॥३९९॥

अंगुलासंख्यभागे, द्रव्यविकल्पे गते तु क्षेत्रे ।
एकाकाशप्रदेशो, वर्धते संपूर्णलोक इति ।।३९९।।

टीका –सूच्यगुल का असख्यातवा भागप्रमाण द्रव्य की अपेक्षा भेद होतै सतै, क्षेत्र विषै एक आकाश का प्रदेश बधै असा अनुक्रम जघन्य देशावधि के क्षेत्र तै, उत्कृष्ट देशावधिज्ञान का विषयभूत सर्व सपूर्ण लोक, तीहिं पर्यंत जानना । सो यहु कथन टीका विषै पूर्वं विशदरूप कह्या ही था ।

आवलिअसंखभागो, जहण्णकालो कमेण समयेण ।
वड्ढदि देसोहिवरं, पल्लं समऊणयं जाव ।।४००।।

आवल्यसंख्यभागो, जघन्यकालः क्रमेण समयेन ।
वर्धते देशावधिवरं, पल्यं समयोनकं यावत् ।।४००।।

टीका — देशावधि का विषयभूत जघन्य काल आवली का असख्यातवा भाग प्रमाण है । सो यहु अनुक्रम तै ध्रुववृद्धि करि अथवा अध्रुववृद्धि करि एक एक करि समय करि तहा पर्यंत बधै, जहा एक समय घाटि पल्य प्रमाण उत्कृष्ट देशावधि का विषयभूत काल होइ, उत्कृष्ट देशावधिज्ञान एक समय घाटि पल्पप्रमाण अतीत, अनागत काल विषै भए वा होहिगे जे स्वयोग्य विषय तिनै जानै है ।

आगै क्षेत्र काल का परिमाण उगणीस काडकनि विषै कह्या चाहै है । काडक नाम पर्व का है । जैसै साठे की पैली हो है, सो गाठि तै अगिली गाठि पर्यंत जो होइ, ताकौ एक पर्व कहिए । तैसै किसी विवक्षित भेद तै लगाइ, किसी विवक्षित भेद पर्यंत जेते भेद होहि, तिनिका समूह, सो एक काडक कहिए । असै देशावधिज्ञान विषै उगणीस काडक है ।

तहा प्रथम काडक विषै क्षेत्र काल का परिणाम अढाई गाथानि करि कहै है —

अंगुलअसंखभागं, धुवरूवेण य असंखवारं तु ।
असंखसंखं भागं, असंखवारं तु अद्धुवगे ।।४०१।।

अंगुलासंख्यवारं, ध्रुवरूपेण च असंख्यवारं तु ।
असंख्यसंख्यं भागं, असंख्यवारं तु अध्रुवगे ।।४०१।।

टीका — घनागुल कौ आवली का भाग दीए, जो प्रमाण आवै, असा अगुल का असख्यातवा भागमात्र ध्रुवरूप करि वृद्धि का प्रमाण हो है । सो ध्रुववृद्धि प्रथम काडक विषै अत का भेद पर्यंत असख्यात बार हो है । बहुरि तिस ही प्रथम काडक विषै अत का भेद पर्यंत अध्रुववृद्धि भी असख्यात बार हो है । सो अध्रुववृद्धि का परिमाण घनागुल का असख्यातवा भाग प्रमाण वा घनागुल का सख्यातवा भाग प्रमाण है ।

धुवअद्धुवरूवेण य, अवरे खेत्तम्मि वड्ढिदे खेत्ते ।
अवरे कालम्हि पुणो, एक्केक्कं वड्ढदे समयं ।।४०२।।

ध्रुवाध्रुवरूपेण च, अवरे क्षेत्रे वर्द्धिते क्षेत्रे ।
अवरे काले पुनः, एकैको वर्धते समयः ।।४०२।।

टीका — तीहि पूर्वोक्त ध्रुववृद्धि प्रमाण करि वा अध्रुववृद्धि प्रमाण करि जघन्य देशावधि का विषयभूत क्षेत्र कौ बधतै सतै जघन्य काल के ऊपरि एक एक समय बधै है ।

भावार्थ — पूर्वै यहु क्रम कह्या था, जो द्रव्य की अपेक्षा सूच्यगुल का असख्यातवा भागप्रमाण भेद व्यतीत होइ, तब क्षेत्र विषै एक प्रदेश बधै । अब इहा कहिए है-जघन्य ज्ञान का विषयभूत जेता क्षेत्र प्रमाण कह्या, ताके ऊपरि पूर्वोक्त प्रकार करि एक एक प्रदेश बधतै बधतै आवली का भाग घनागुल कौ दीए, जो प्रमाण आवै, तितना प्रदेश बधै, तब जघन्य देशावधि का विषयभूत काल का प्रमाण कह्या था, तातै एक समय और बधता, काल का प्रमाण होइ । बहुरि तितना ही प्रदेश क्षेत्र विषै पूर्वोक्त प्रकार करि बधै तब तिस काल तै एक समय और बधता काल का प्रमाण होइ । असै तितने तितने प्रदेश बधै, जो काल प्रमाण विषै एक एक समय बधै, सो तौ ध्रुववृद्धि कहिये । बहुरि पूर्वोक्त प्रकार करि ही विवक्षित क्षेत्र तै कही घनागुल का असख्यातवा भाग प्रमाण प्रदेशनि की वृद्धि भए पूर्व काल तै एक समय बधता काल होइ, कही घनागुल का असख्यातवा (सख्यातवा)[१] भाग प्रमाण प्रदेशनि की वृद्धि भए, पहले काल तै एक समय बधता काल होइ, तहा अध्रुववृद्धि कहिये । असै प्रथम काडक विषै अत भेद पर्यत ध्रुववृद्धि होइ, तौ असख्यात बार हो है । बहुरि अध्रुववृद्धि होइ तौ असख्यात बार हो है ।

---

१ सभी छहो हस्तलिखित प्रतियो मे असख्यात मिला । छपि हुई प्रति मे सख्यात है ।

संखातीदा समया, पढमे पव्वम्मि उभयदो वड्ढी ।
खेत्तं कालं अस्सिय, पढमादी कंडये वोच्छं ॥४०३॥

सख्यातीताः समयाः, प्रथमे पर्वे उभयतो वृद्धिः ।
क्षेत्रं कालमाश्रित्य, प्रथमादीनि कांडकानि वक्ष्ये ॥४०३॥

टीका — असै होतै प्रथम पूर्व कहिए पहला काडक, तीहि विषै **उभयतः** कहिये ध्रुवरूप - अध्रुवरूप दोऊ वृद्धि कौ लीए असख्याते समय हो है ।

भावार्थ — प्रथम काडक विषै जघन्य काल का परिमाण तै पूर्वोक्त प्रकार ध्रुववृद्धि करि वा अध्रुववृद्धि करि एक एक समयप्रबद्ध तै असख्यात समय बधै है । ते कितने है ? प्रथम काडक का उत्कृष्ट काल के समयनि का प्रमाण मे स्यो जघन्य काल के समयनि का प्रमाण घटाए, जो प्रमाण अवशेष रहै, तितने असख्याते समय प्रथम काडक विषै बधै है । असै ही प्रथम काडक का उत्कृष्ट क्षेत्र के प्रदेशनि का प्रमाण मे स्यो जघन्य क्षेत्र के प्रदेशनि का प्रमाण घटाए, जो प्रमाण अवशेष रहै, तितने प्रदेश प्रथम काडकनि विषै पूर्वोक्त प्रकार करि बधै है । अब जो वृद्धिरूप समयनि का प्रमाण कह्या, सो जघन्य काल आवली का असख्यातवा भागमात्र तीहि विषै जोडिए, तब प्रथम काडक का अत भेद विषै आवली का असख्यातवा भाग प्रमाण काल हो है । बहुरि वृद्धिरूप प्रदेशनि का परिमाण कौ जघन्य क्षेत्र घनागुल का असख्यातवा भागमात्र तीहि विषै मिलाए, प्रथम काडक का अत भेद विषै घनागुल का असख्यातवा[1] भाग प्रमाण क्षेत्र हो है ।

इहा तै आगै विषयभूत क्षेत्र - काल अपेक्षा देशावधि के उगणीस काडक कहूगा, असा आचार्य प्रतिज्ञा करी है—

अंगुलमावलियाए, भागमसंखेज्जदो वि संखेज्जो ।
अंगुलमावलियंतो, आवलियं चांगुलपुधत्तं ॥४०४॥

अंगुलावल्योः, भागोऽसंख्येयोऽपि संख्येयः ।
अंगुलमावल्यंत, आवलिकाश्चांगुलपृथक्त्वम् ॥४०४॥

---

1. ग प्रति मे सख्यात है ।

टीका – प्रथम काडक विषै जघन्य क्षेत्र घनागुल के असख्यातवे भाग प्रमाण है। अर जघन्य काल आवली का असख्यातवा भाग प्रमाण है। बहुरि तिस ही प्रथम काडक विषै उत्कृष्ट क्षेत्र घनागुल के सख्यातवे[1] भाग प्रमाण है। अर काल आवली का असख्यातवा भाग प्रमाण है। बहुरि आगै उत्कृष्ट भेद अपेक्षा दूसरा काडक विषै क्षेत्र घनागुल प्रमाण है। अर काल 'आवलियत' कहिये किछू घाटि आवली प्रमाण है। बहुरि तीसरा काडक विषै क्षेत्र पृथक्त्व घनागुल प्रमाण है। अर काल पृथक्त्व आवली प्रमाण है।

तीन के तौ ऊपरि अर नवमे के नीचे पृथक्त्व सज्ञा जाननी।

आवलियपुधत्तं पुण, हत्थं तह गाउयं मुहुत्तं तु।
जोयण भिण्णमुहुत्तं, दिवसंतो पण्णुवीसं तु ॥४०५॥

आवलिपृथक्त्वं पुनः हस्तस्तथा गव्यूतिः मुहूर्तस्तु।
योजन भिन्नमुहूर्तः, दिवसांत. पचविंशतिस्तु ॥४०५॥

टीका – चौथा काडक विषै काल पृथक्त्व आवली प्रमाण अर क्षेत्र एक हाथ प्रमाण है। बहुरि पाचवा काडक विषै क्षेत्र एक कोश अर काल अतर्मुहूर्त है। बहुरि छठा काडक विषै क्षेत्र एक योजन अर काल भिन्न मुहूर्त कहिये, किछू घाटि मुहूर्त है। बहुरि सातवा काडक विषै काल किछू घाटि एक दिन अर क्षेत्र पचीस योजन है।

भरहम्मि अद्धमासं, साहियमासं च जंबुदीवम्मि।
वासं च मणुवलोए, वासपुधत्तं च रुचगम्मि ॥४०६॥

भरते अर्धमासः, साधिकमासश्च जंबूद्वीपे।
वर्षश्च मनुजलोके, वर्षपृथक्त्वं च रुचके ॥४०६॥

टीका — आठवा काडक विषै क्षेत्र भरतक्षेत्र अर काल आधा मास है। बहुरि नवमा काडक विषै क्षेत्र जबूद्वीप प्रमाण अर काल किछू अधिक एक मास है। बहुरि दशवा काडक विषै क्षेत्र मनुष्य लोक – अढाई द्वीप प्रमाण अर काल एक वर्ष है। बहुरि ग्यारहवा काडक विषै क्षेत्र रुचकद्वीप अर काल पृथक्त्व वर्ष प्रमाण है।

---

१ सभी हस्तलिखित प्रतियो मे सख्यात मिलता है। पूर्व मे छपी प्रति मे असख्यात मिलता है।

संखेज्जपमे वासे, दीवसमुद्दा हवंति संखेज्जा ।
वासम्मि असंखेज्जे, दीवसमुद्दा असंखेज्जा ।।४०७।।

संख्यातप्रमे वर्षे, द्वीपसमुद्रा भवंति संख्याताः ।
वर्षे असंख्येये,द्वीपसमुद्रा असंख्येयाः ।।४०७।।

टीका — बारहवा काडक विषै क्षेत्र सख्यात द्वीप - समुद्र प्रमाण अर काल सख्यात वर्ष प्रमाण है । बहुरि तेरहवा काडक, जे तैजस शरीरादिक द्रव्य की अपेक्षा पूर्वे स्थानक कहे, तिनि विषै क्षेत्र असख्यात द्वीप – समुद्र प्रमाण है । अर काल असख्यात वर्ष प्रमाण है । परि इन विषै इतना विशेष है – तेरहवा तै चौदहवा विषै असख्यातगुणा क्षेत्रकाल है । अैसै ही उत्तरोत्तर असख्यात गुणा क्षेत्र – काल जानना बहुरि उगणीसवा अत का काडक विषै द्रव्य तौ कार्माण वर्गणा कौ ध्रुवहार का भाग दीजिए, तीहि प्रमाण अर क्षेत्र संपूर्ण लोकाकाश प्रमाण अर काल एक समय घाटि एक पल्य प्रमाण है ।

कालविसेसेणवहिद-खेत्तविसेसो धुवा हवे वड्ढी ।
अद्धुववड्ढी वि पुणो, अविरुद्धं इट्ठकंडम्मि ।।४०८।।

कालविशेषेणावहितक्षेत्रविशेषो ध्रुवा भवेद्वृद्धिः ।
अध्रुववृद्धिरपि पुनः अविरुद्धा इष्टकांडे ।।४०८

टीका – विवक्षित काडक का जघन्य क्षेत्र के प्रदेशनि का परिमाण, तिस ही काडक का उत्कृष्ट क्षेत्र के प्रदेशनि का परिमाण मे घटाए, जो प्रमाण रहै, ताकौं क्षेत्र विशेष कहिये । बहुरि विवक्षित काडक का जघन्य काल के समयनि का परिमाण तिस ही काडक का उत्कृष्ट काल के समयनि का परिमाण विषै घटाए, अवशेष जो परिमाण रहै, ताकौ काल विशेष कहिए । तहा क्षेत्र विशेष कौ काल विशेष का भाग दीए, जो प्रमाण होइ, सोई तिस काडक विषै ध्रुववृद्धि का परिमाण जानना । सो प्रथम काडक विषै अैसे करते घनागुल कौ आवली का भाग दीए, जो प्रमाण होइ सो ध्रुववृद्धि का प्रमाण जानना । सूच्यगुल का असख्यातवा भाग प्रमाण द्रव्य की अपेक्षा भेद भए, तो क्षेत्र विषै एक प्रदेश बधै अर आवली करि भाजित घनागुल प्रमाण प्रदेश बधे, तब काल विषै एक समय की वधवारी होइ । अैसै प्रथम काडक का अत पर्यंत ध्रुववृद्धि करि जेते समय बधै, तिनकौ जघन्य काल विषै मिलाए,

आवली का सख्यातवा[1] भाग प्रमाण प्रथम काडक का उत्कृष्ट काल हो है। बहुरि जेते जघन्य क्षेत्र तै प्रदेश बधै, तितने जघन्य क्षेत्र विषै मिलाए, घनागुल का सख्यातवा भाग प्रमाण प्रथम काडक का उत्कृष्ट क्षेत्र हो है। ऐसै ही सर्व काडक विषै ध्रुववृद्धि का प्रमाण साधन करना। विवक्षित काडक विषै समान प्रमाण लीए, प्रदेशनि की वृद्धि होतै, जहा समय की वृद्धि होइ, तहा ध्रुववृद्धि जाननी। बहुरि अध्रुववृद्धि भी यथायोग्य क्षेत्र - काल का अविरोध करि साधनी।

सो कहिए है-

अंगुलअसंखभागं, संखं वा अंगुलं च तस्सेव।
संखमसंखं एवं, सेढीपदरस्स अद्धुवगे ॥४०६॥

अंगुलासंख्यभागः, संख्यं वा अंगुलं तस्यैव।
सख्यमसंख्यमेवं, श्रेणीप्रतरयोरध्रुवगायाम् ॥४०६॥

टीका — अध्रुववृद्धि विषै पूर्वोक्त क्रम तै घनागुल का असख्यातवा भाग प्रमाण प्रदेश क्षेत्र विषै बधै, तब काल विषै एक समय बधै। अथवा घनागुल का सख्यातवा भाग प्रमाण प्रदेश क्षेत्र विषै बधै, तब काल विषै एक समय बधै। अथवा घनागुल प्रमाण अथवा सख्यात घनागुल प्रमाण अथवा असख्यात घनागुल प्रमाण अथवा श्रेणी का असख्यातवा भाग प्रमाण अथवा श्रेणी का सख्यातवा भाग प्रमाण अथवा श्रेणी प्रमाण अथवा सख्यात श्रेणी प्रमाण अथवा असख्यात श्रेणी प्रमाण अथवा प्रतर का असख्यातवा भाग प्रमाण अथवा प्रतर का सख्यातवा भाग प्रमाण अथवा प्रतर प्रमाण अथवा सख्यात प्रतर प्रमाण अथवा असख्यात प्रतर प्रमाण प्रदेश क्षेत्र विषै बधै, तब काल विषै एक समय बधै, ऐसा अध्रुववृद्धि का अनुक्रम है। इहा किछू नियम नाही, जो इतने प्रदेश बधै ही समय बधै, तातै याका नाम अध्रुववृद्धि है। इहा इतना विशेष - जिस काडक विषै जिस - जिस प्रकार वृद्धि सभवै, तिस तिस प्रकार ही अध्रुववृद्धि जाननी। जैसै प्रथम काडक विषै घनागुल का असख्यातवा भाग वा घनागुल का सख्यातवा भाग करि ही अध्रुववृद्धि सभवे है। जातै तहा उत्कृष्ट भेद विषै भी घनागुल का सख्यातवा भाग मात्र ही क्षेत्र है, तौ तहा घनागुलादि करि

---

१ अ तथा घ प्रति मे असख्यातवा शब्द है।

वृद्धि कैसे सभवे ? बहुरि अत के काडक विषै घनागुल का संख्यातवा[१] भाग आदि सख्यात प्रतर पर्यंत सर्व प्रकार करि अध्रुववृद्धि सभवै है । असे ही अन्य काडकनि विषै यथासभव करि अध्रुववृद्धि जाननी ।

कम्मइयवग्गणं धुवहारेणिगिवारभाजिदे दव्वं ।
उक्कस्सं खेत्तं पुण, लोगो संपुण्णओ होदि ॥४१०॥

कार्मणवर्गणां ध्रुवहारेणैक वार भाजिते द्रव्यं ।
उत्कृष्टं क्षेत्रम् पुनः, लोकः संपूर्णो भवति ॥४१०॥

टीका – कार्माण वर्गणा कौ एक बार ध्रुवहार का भाग दीए, जो प्रमाण होइ, तितने परमाणूनि का स्कध कौ उत्कृष्ट देशावधि जानै है। बहुरि क्षेत्र करि संपूर्ण लोकाकाश को जानै है । लोकाकाश विषै जितने पूर्वोक्त स्कध होइ, वा तिनतै स्थूल होइ, तिन सबनि कौ जानै है ।

पल्ल समऊण काले, भावेण असंखलोगमेत्ता हु ।
दव्वस य पज्जाया, वरदेसोहिस्स विसया हु ॥४११॥

पल्यं समयोनं काले, भावेन असंख्यलोकमात्रा हि ।
द्रव्यस्य च पर्याया, वरदेशावधेर्विषया हि ॥४११॥

टीका — देशावधि का विषय भूत उत्कृष्ट काल एक समय घाटि एक पल्य प्रमाण है । बहुरि भाव असख्यात लोक प्रमाण है । सो इहा काल अर भाव शब्द करि द्रव्य के पर्याय उत्कृष्ट देशावधि ज्ञान का विपयभूत जानना ।

भावार्थ – एक समय घाटि एक पल्य प्रमाण अतीत काल विषै जे अपने जानने योग्य द्रव्य के पर्याय भए, अर तितने ही प्रमाण अनागत काल विषै अपने जानने योग्य द्रव्य के पर्याय होहिगे, तिनकौ उत्कृष्ट देशावधि ज्ञान जानै । बहुरि भाव करि तिनि पर्यायनि विषै असख्यात लोक प्रमाण जे पर्याय, तिनिकौ जानै । असै काल अर भाव शब्द करि द्रव्य के पर्याय ग्रहे । असै ही अन्य भेदनि विषै भी

---

१ हस्तलिखित अ, ग, घ प्रति मे असख्यातवा शब्द है ।

जहां काल का वा भाग का परिमाण कह्या है, तहा द्रव्य के पर्यायनि का ग्रहण करना ।

बहुरि इहा देशावधि का मध्य भेदनि विषै भाव का प्रमाण आगे सूत्र कहैंगे, तिस अनुक्रम तै जानना ।

काले चउण्ह उड्ढी, कालो भजिदव्व खेत्तउड्ढी य ।
उड्ढीए दव्वपज्जय, भजिदव्वा खेत्त-काला हु ॥४१२॥

काले चतुर्णां वृद्धिः, कालो भजितव्यः क्षेत्रवृद्धिश्च ।
वृद्धया द्रव्यपर्याययोः, भजितव्यौ क्षेत्रकालौ हि ॥४१२॥

टीका – इस अवधिज्ञान का विशेष विषै जब काल की वृद्धि होइ तब तो द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव च्यार्यो ही की वृद्धि होइ । बहुरि जब क्षेत्र की वृद्धि होइ तब काल का वृद्धि भजनीय है, होइ भी अर नहिं भी होइ । बहुरि जब द्रव्य की अर भाव की वृद्धि होइ तब क्षेत्र की अर काल की वृद्धि भजनीय है, होइ भी अर न भी होइ । बहुरि द्रव्य की अर भाव की वृद्धि युगपत् हो है । यह सर्व कथन विचार तै युक्त ही है । या प्रकार देशावधि ज्ञान का विषय भूत द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव का प्रमाण कह्या ।

आगे परमावधि ज्ञान की प्ररूपणा कहै है —

देसावहिवरदव्वं, धुवहारेणवहिदे हवे णियमा ।
परमावहिस्स अवरं, दव्वपमाणं तु जिणदिट्ठं ॥४१३॥

देशावधिवरद्रव्य, ध्रुवहारेणावहिते भवेन्नियमात् ।
परमावधेरवरं, द्रव्य प्रमाणं तु जिनदिष्टं ॥४१३॥

टीका – उत्कृष्ट देशावधि ज्ञान का विषयभूत जो द्रव्य कह्या, ताकौ एक बार ध्रुवहार का भाग दीए, जो प्रमाण होइ तितना परमाणूनि का स्कध रूप जघन्य परमावधि ज्ञान का विषयभूत द्रव्य नियम करि जिनदेवने कह्या है ।

अब परमावधि का उत्कृष्ट द्रव्य प्रमाण कहै हैं–

परमावहिस्स भेदा, सग-उग्गाहणवियप्प-हद-तेऊ ।
चरिमे हारपमाणं, जेट्ठस्स य होदि दव्वं तु ॥४१४॥

परमावधेर्भेदाः, स्वकावगाहनविकल्पाहततेजसः ।
चरमे हारप्रमाण, ज्येष्ठस्य च भवति द्रव्यं तु ।।४१४।।

टीका – अग्निकाय की अवगाहना का जघन्य तै उत्कृष्ट पर्यंत जो भेदनि का प्रमाण, ताकरि अग्निकाय के जीवनि का परिमाण कौ गुणै, जो प्रमाण होइ, तितने परमावधि ज्ञान के भेद है । तहां प्रथम भेद के द्रव्य कौं ध्रुवहार का भाग दीए, दूसरा भेद का द्रव्य होइ । दूसरा भेद का द्रव्य कौ ध्रुवहार का भाग दीए, तीसरा भेद का द्रव्य होइ । असैं अत का भेद पर्यंत जानने । अत भेद विषै ध्रुवहार प्रमाण द्रव्य है । ध्रुवहार का जो परिमाण तितने परमाणूनि का सूक्ष्म स्कध्र कौं उत्कृष्ट परमावधिज्ञान जानै है ।

सव्वावहिस्स एक्को, परमाणू होदि णिव्वियप्पो सो ।
गंगामहाणइस्स, पवाहोव्व धुवो हवे हारो ।।४१५।।

सर्वावधेरेकः, परमाणुर्भवति निर्विकल्पः सः ।
गंगामहानद्याः, प्रवाह इव ध्रुवो भवेत् हार ।।४१५।।

टीका – उत्कृष्ट परमावधि ज्ञान का विषय ध्रुवहार प्रमाण ताकौ ध्रुवहार ही का भाग दीजिए, तब एक परमाणू मात्र सर्वावधि ज्ञान का विपय है । सर्वावधि ज्ञान पुद्गल परमाणू कौ जानै है । सो यह ज्ञान निर्विकल्प है । यामे जघन्य, मध्यम, उत्कृष्ट भेद नाही । बहुरि जो वह ध्रुवहार कह्या था, सो गगा महानदी का प्रवाह समान ही है । जैसे गंगा नदी का प्रवाह हिमाचल स्यो निकसि विच्छेद रहित वहि-करि पूर्व समुद्र कौं प्राप्त होइ तिष्ठ्या, तैसै ध्रुवहार जघन्य देशावधि का विषयभूत द्रव्य तै परमावधि का उत्कृष्ट भेद पर्यंत अवधिज्ञान के सर्व भेदनि विषै प्राप्त होइ सर्वावधि का विषयभूत परमाणू तहा तिष्ठ्या, जातै सर्वावधि ज्ञान भी निर्विकल्प है अर याका विपय परमाणू है, सो भी निर्विकल्प है ।

परमोहिदव्वभेदा, जेत्तियमेत्ता हु तेत्तिया होंति ।
तस्सेव खेत्त-काल, वियप्पा विसया असंखगुणिदकमा ।।४१६।।

परमावधिद्रव्यभेदा, यावन्मात्रा हि तावन्मात्रा भवंति ।
तस्यैव क्षेत्र काल, विकल्पा विषया असंख्यगुणितक्रमा ।।४१६।।

टीका – परमावधिज्ञान का विषयभूत द्रव्य की अपेक्षा जितने भेद कहे, अग्निकाय की अवगाहना के भेदनि का प्रमाण तै अग्निकाय के जीवनि का परिमाण कौ गुणिए, तावन्मात्र द्रव्य की अपेक्षा भेद कहे, सो एतावन्मात्र ही परमावधिज्ञान का विषयभूत क्षेत्र की अपेक्षा वा काल की अपेक्षा भेद हैं। जहा द्रव्य की अपेक्षा प्रथम भेद है, तहा ही क्षेत्र – काल की अपेक्षा भी प्रथम भेद है। जहा दूसरा भेद द्रव्य की अपेक्षा है, तहा क्षेत्र – काल अपेक्षा भी दूसरा ही भेद है। असै अत का भेद पर्यंत जानना। बहुरि जघन्य तै लगाइ उत्कृष्ट पर्यंत एक एक भेद विषै असख्यात गुणा असख्यात गुणा क्षेत्र व काल जानना।

कैसा असख्यात गुणा जानना ? सो कहै हैं–

आवलिअसंखभागा, इच्छिदगच्छदच्छधणमाणमेत्ताओ।
देसावहिस्स खेत्ते, काले वि य होंति संवग्गे ॥४१७॥

आवल्यसंख्यभागा, इच्छितगच्छधनमानमात्राः।
देशावधेः क्षेत्रे, कालेऽपि च भवंति संवर्गे ॥४१७॥

टीका – परमावधिज्ञान का विवक्षित क्षेत्र का भेद विषै वा विवक्षित काल का भेद विषै जो तिस भेद का सकलित धन होइ, तितना आवली का असख्यातवा भाग माडि, परस्पर गुणन कीया, जो प्रमाण होइ, सो विवक्षित भेद विषै गुणकार जानना। इस गुणकार करि देशावधि ज्ञान का उत्कृष्ट क्षेत्र कौं गुणें, परमावधि विषै विवक्षित भेद विषै क्षेत्र का परिमाण होइ, अर देशावधिज्ञान का उत्कृष्ट काल कौ गुणे, विवक्षित भेद विषै काल का परिमाण होइ।

सकलित धन कहा कहिए –

जेथवा भेद विवक्षित होइ, तहा पर्यंत एक तै लगाइ एक एक अधिक अक माडि, तिन सब अकनि कौं जोडे, जो प्रमाण होइ, सो सकलित धन जानना। जैसे प्रथम भेद विषै एक ही अक है। याके पहिले कोई अक नाही। तातै प्रथम भेद विषै सकलित धन एक जानना। बहुरि दूसरा भेद विषै एक अर दूवा जोडिए, तब सकलित धन तीन भया। बहुरि तीसरा भेद विषै एक, दोय, तीन अक जोडे, सकलित धन छह भया। बहुरि चौथा भेद विषै च्यारि और जोडे, सकलित धन दश भया।

बहुरि पाचवा भेद विषे पाच को अक और जोडे, सकलित धन पद्रह होइ । असै सब भेदनि विषै सकलित धन जानना । सो इस एक बार सकलित धन ल्यावने कौं करण सूत्र पर्याय समास श्रुतज्ञान का कथन करते कह्या है, तिसतै सकलित धन प्रमाण ल्यावना । इस संकलित धन का नाम गच्छ, धन वा पद - धन भी कहिए । अब विवक्षित परमावधिज्ञान का पाचवां भेद ताका सकलित धन पंद्रह, सो पद्रह जायगा आवली का असख्यातवा भाग माडि, परस्पर गुणन कीए, जो परिमाण होइ, सोई पांचवा भेद विषै गुणकार जानना । इस गुणकार करि उत्कृष्ट देशावधि का क्षेत्र, लोकाकाश प्रमाण, ताकौं गुणिए, जो प्रमाण होइ, तितना परमावधि का पांचवा भेद का विषयभूत क्षेत्र का परिमाण जानना । अर इस ही गुणकार करि देशावधि का विषयभूत उत्कृष्ट काल, एक समय घाटि, एक पल्य प्रमाण , ताकौ गुणे, इस पाचवा भेद विषै काल का परिमाण होइ । असै सब भेदनि विषै क्षेत्र का वा काल का परिमाण जानना ।

आगे सकलित धन का जो प्रमाण कह्या था, ताकौ और प्रकार करि कहै है–

गच्छसमा तक्कालियतीदे रूऊणगच्छधणमेत्ता ।
उभये वि य गच्छस्स य, धणमेत्ता होंति गुणगारा ।।४१८।।

गच्छसमाः तात्कालिकातीते रूपोनगच्छधनमात्राः ।
उभयेऽपि च गच्छस्य च, धनमात्रा भवंति गुणकाराः ।।४१८।।

टीका – जेथवा भेद विवक्षित होइ, तीहि प्रमाण कौ गच्छ कहिए । जैसै चौथा भेद विवक्षित होइ, तौ गच्छ का प्रमाण च्यारि कहिए । सो गच्छ के समान धन अर गच्छ तै तत्काल अतीत भया, असा विवक्षित भेद तै पहिला भेद, तहा विवक्षित गच्छ तै एक घाटि का गच्छ धन जो सकलित धन, इनि दोऊनि कौ मिलाइए, तब गच्छ का सकलित धन प्रमाण गुणकार होइ ।

इहा उदाहरण कहिए - जैसै विवक्षित भेद चौथा, सो गच्छ का प्रमाण भी च्यारि, सो च्यारि तौ ए अर तत्काल अतीत भया तीसरा भेद, ताका गच्छ धन छह, इनि दोऊनि कौ मिलाए, दश हूवा । सोई दश विवक्षित गच्छ च्यारि, ताका सकलित धन हो है । सोई चौथा भेद विषै गुणकार पूर्वोक्त प्रकार जानना, असै ही सर्व भेदनि विषै जानना —

परमावहि-वरखेत्तेणवहिद-उक्कस्स-ओहिखेत्तं तु ।
सव्वावहि-गुणगारो, काले वि असंखलोगो दु ।।४१९।।

परमावधिवरक्षेत्रेणावहितोत्कृष्टावधिक्षेत्रं तु ।
सर्वावधिगुणकारः, कालेऽपि असंख्यलोकस्तु ।।४१९।।

टीका – उत्कृष्ट अवधिज्ञान के क्षेत्र का परिमाण कहिए । द्विरूप घनाघनधारा विषै लोक अर गुणकार शलाका अर वर्गशलाका अर अर्धच्छेद शलाका अर अग्निकाय की स्थिति का परिमाण अर अवधिज्ञान का उत्कृष्ट क्षेत्र का परिमाण ए स्थानक क्रम तै असख्यात असख्यात वर्गस्थान गए उपजै हैं । तातै पांच बार असख्यात लोक प्रमाण परिमाण करि लोक कौ गुणै, जो प्रमाण होई, तितना सर्वावधिज्ञान का विपयभूत उत्कृष्ट क्षेत्र का परिमाण है । याकौ उत्कृष्ट परमावधिज्ञान का विषयभूत क्षेत्र का भाग दीए, जो परिमाण होइ, सोई सर्वावधिज्ञान का विषयभूत क्षेत्र का परिमाण ल्यावने के निमित्त गुणकार हो है । इस गुणकार करि परमावधि का विषयभूत उत्कृष्ट क्षेत्र कौ गुणिए, तब सर्वावधिज्ञान का विषयभूत क्षेत्र का परिमाण हो है । बहुरि काल परिमाण ल्यावने के निमित्त असख्यात लोक प्रमाण गुणकार है । इस असख्यात लोक प्रमाण गुणकार करि उत्कृष्ट परमावधिज्ञान का विषयभूत काल कौ गुणिये, तब सर्वावधि ज्ञान का विषयभूत काल का परिमाण हो है ।

इहा कोऊ कहै कि रूपी पदार्थ तौ लोकाकाश विषै ही पाइए है । इहा परमावधि-सर्वावधि विषै क्षेत्र का परिमाण लोक तै असख्यातगुणा कैसे कहिए है ?

सो इसका समाधान आगै द्विरूप घनाघनधारा का कथन विषै करि आए है, सो जानना । शक्ति अपेक्षा कथन जानना ।

अब परमावधि ज्ञान का विषयभूत उत्कृष्ट क्षेत्र का वा उत्कृष्ट काल का परिमाण ल्यावने के निमित्त करणसूत्र दोय कहिए है —

इच्छिदरासिच्छेदं, दिण्णच्छेदेहिं भाजिदे तत्थ ।
लद्धमिवदिण्णरासीणब्भासे इच्छिदो रासी ।।४२०।।

इच्छितराशिच्छेदं, देयच्छेदैर्भाजिते तत्र ।
लब्धमितदेयराशीनामभ्यासे इच्छितो राशिः ।।४२०।।

टीका – यह करणसूत्र है, सो सर्वत्र सभवै है । याका अर्थ दिखाइए है – इच्छित राशि कहिए विवक्षित राशि का प्रमाण, ताके जेते अर्धच्छेद होइ, तिनिकौ देयराशि के जेते अर्धच्छेद होइ, तिनिका भाग दीए, जो प्रमाण आवै, तिसका विरलन कीजिए, एक एक जुद जुदा स्थापिए । बहुरि तिस एक एक के स्थान के जिस देय राशि के अर्धच्छेदनि का भाग दीया था, तिसही देयराशि कौ माड़ि, परस्पर गुणन कीजिए, तो विवक्षित राशि का प्रमाण होइ ।

सो प्रथम याका उदाहरण लौकिक गणित करि दिखाइए है - इच्छित राशि दोय सै छप्पन (२५६), याके अर्धच्छेद आठ, बहुरि देयराशि चौसाठि (६४) का चौथा भाग सोलह, याके अर्धच्छेद च्यारि, कैसे ? भाज्यराशि चौसठि, ताके अर्धच्छेद छह, तिनिमे स्यो भागहार च्यारि, ताके अर्धच्छेद दोय घटाइए, तब अवशेष च्यारि अर्धच्छेद रहे । अब इनि च्यारि अर्धच्छेदनि का भाग उन आठ अर्धच्छेदनि कौ दीजिए, तब दोय पाया (२), सो दोय का विरलन करि (१,१), एक एक के स्थान की एक चौसठि का चौथा भाग, सोला सोला दीया, याहीतै याकौ देय राशि कहिए, सो इनिका परस्पर गुणन कीया, तब विवक्षित राशि का परिमाण दोय सै छप्पन हुवा ।

असै ही अलौकिक गणित विषै विवक्षित राशि पल्य प्रमाण अथवा सूच्यगुल प्रमाण वा जगच्छ्रेणी प्रमाण वा लोक प्रमाण जो होइ, ताके जेते अर्धच्छेद होइ, तिनिकौ देयराशि जो आवली का असख्यातवा भाग, ताके जेते अर्धच्छेद होइ, तिनिका भाग दीए, जो प्रमाण आवै तिनिका विरलन करि – एक एक करि बखेरि, बहुरि एक एक के स्थान की एक एक आवली का असख्यातवा भाग माडि, परस्पर गुणन कीजिए, तो विवक्षित राशि पल्य वा सूच्यगुल वा जगच्छ्रेणी वा लोकप्रमाण हो है ।

दिण्णच्छेदेणवहिद-लोगच्छेदेण पदधणे भजिदे ।
लद्धमिदलोगगुणणं, परमावहि-चरिम-गुणगारो ।।४२१।।

देयच्छेदेनावहितलोकच्छेदेन पदधने भजिते ।
लब्धमितलोकगुणनं, परमावधिचरमगुणकारः ।।४२१।।

टीका – देयराशि के अर्धच्छेदनि का भाग लोक के अर्धच्छेदनि कौ दीए, जो प्रमाण होइ, ताका विवक्षित पद का सकलित धन कौ भाग दीए, जो प्रमाण आवै, तितना लोकमात्र परिमाण माडि, परस्पर गुणन कीए, जो प्रमाण आवै, सो विवक्षित पद विषै क्षेत्र वा काल का गुणकार जानना । असै ही परमावधि का अत भेद विषै गुणकार जानना । सो यहु कथन प्रथम अकसदृष्टि करि दिखाइए है । देयराशि चौसठि का चौथा भाग, ताके अर्धच्छेद च्यारि, तिनका भाग दोय सै छप्पन का अर्धच्छेद आठ, तिनिकौ दीजिए, तब दोय पाया । तिनिका भाग विवक्षित स्थान तीसरा ताका पूर्वोक्त सकलित धन ल्यावने का सूत्र करि तीन, च्यारि कौ दोय, एक का भाग दीए, सकलित धन छह तिनिकौ दीजिए, तब तीन पाया, सो तीन जायगा दोय सै छप्पन माडि, परस्पर गुणन कीए, जो प्रमाण होइ, सोई तीसरा स्थान विषै गुणकार जानना । अब इहा कथन है सो कहिए है —

देयराशि आवली का असख्यातवा भाग, ताके अर्धच्छेद राशि, जो आवली के अर्धच्छेदनि मे स्यौ भागहारभूत असख्यात के अर्धच्छेद घटाए, जो प्रमाण रहै, तितना जानना । सो असै इस देयराशि के अर्धच्छेद सख्यात घाटि परीतासख्यात का मध्य भेद प्रमाण हो है । तिनिका भाग लोकप्रमाण के जेते अर्धच्छेद होइ, तिनकौ दीजिए, जो प्रमाण आवै, ताका भाग विवक्षित जो कोई परमावधि ज्ञान का भेद, ताका जो सकलित धन होइ, ताकौ दीजिए, जो प्रमाण आवै, तितना लोक माडि, परस्पर गुणन कीए, जो प्रमाण आवै, सो तिस भेद विषै गुणकार जानना । इस गुणकार करि देशावधि का उत्कृष्ट लोकप्रमाण क्षेत्र कौं गुणै, जो प्रमाण होइ, सो तिस भेद विषै क्षेत्र का परिमाण जानना ।

बहुरि इस गुणकार करि देशावधि का उत्कृष्ट एक समय घाटि पल्य प्रमाण काल कौ गुणै, जो प्रमाण होइ, सो तिस भेद विषै काल का परिमाण जानना । असै ही परमावधि का अत का भेद विषै आवली का असख्यातवा भाग का अर्धच्छेदनि का भाग लोक का अर्धच्छेद कौं दीए, जो प्रमाण होइ, ताकौ अत का भेद विषै जो सकलित धन होइ, ताकौ भाग दीए जो प्रमाण आवै, तितना लोक माडि परस्पर गुणन कीए जो प्रमाण होइ, सोई अत का भेद विषै गुणकार जानना । इहा अत का भेद विषै पूर्वोक्त सकलित धन ल्यावने कौ करणसूत्र के अनुसारि सकलित धन ल्याइए, तब अग्निकायिक के अवगाह भेदनि करि गुणित अग्निकायिक जीवनि का प्रमाण मात्र गच्छ, सो एक अधिक गच्छ अर सपूर्ण गच्छ कौं दोय एक का भाग दीए, जो प्रमाण

होइ, तितना परमावधि का अन्त भेद विषै संकलन धन जानना । बहुरि जैसे दोय जायगा सोलह सोलह माडि, परस्पर गुणन कीए, दोय सै छप्पन होइ, तौ छह जायगा सोलह सोलह माडि, परस्पर गुणन कीए, केते दोय सै छप्पन होइ ? असैं त्रैराशिक कीए, पैसठि हजार पाच से छत्तीस प्रमाण दोय सै छप्पन होइ । असैं ही 'इच्छिदरासिच्छेदं' इत्यादि करणसूत्र के अनुसारि आवली का असख्यातवे भाग का अर्धच्छेदनि का लोक के अर्धच्छेदनि कौ भाग दीए, जो प्रमाण होइ, तितने आवली का असख्यातवा भाग माडि, परस्पर गुणन कीए, एक लोक होइ तौ इहा अत भेद विषै सकलित धन प्रमाण आवली का असख्यातवा भाग माडि, परस्पर गुणन कीजिए, तौ कितने लोक होइ, असैं त्रैराशिक करना । तहा प्रमाण राशि विषै देय राशि आवली का असख्यातवा भाग, विरलन राशि आवली का असख्यातवा भाग का अर्धच्छेदनि करि भाजित लोक का अर्धच्छेदमात्र, बहुरि फलराशि लोक, बहुरि इच्छाराशि विषै देयराशि आवली का असख्यातवा भाग, विरलन राशि अन्तभेद का सकलन धनमात्र, इहा लब्ध राशि का जेता प्रमाण आवै, तितना लोकप्रमाण प्रमाण होइ; सोई अन्त भेद विषै गुणकार जानना । इसकरि लोक कौ वा एक समय घाटि पल्य कौ गुणिए, तब परमावधि का सर्वोत्कृष्ट क्षेत्र का वा काल का परिमाण हो है ।

पूर्वैं 'आवलि असंखभागा' इत्यादि सूत्रकरि गुणकार का विधान कह्या । बहुरि इस सूत्र विषै गुणकार का विधान कह्या, सो इनि दोऊनि का अभिप्राय एक ही है । जैसे अक सदृष्टि करि पूर्व गाथानि के अनुसारि तीसरा भेद विषै सकलित धन प्रमाण छह जायगा सोला सोला माडि परस्पर गुणन करिए, तौ भी वो ही प्रमाण होइ । अर इस गाथा के अनुसारि तीन जायगा दोय सै छप्पन, दोय सै छप्पन माडि, परस्पर गुणन कीजिए, तौ भी सोई प्रमाण होइ, असैं सर्वत्र जानना ।

आवलिअसंखभागा, जहण्णदव्वस्स होंति पज्जाया ।
कालस्स जहण्णादो, असंखगुणहीणमेत्ता हु ।।४२२।।

आवल्यसंख्यभागा, जघन्यद्रव्यस्य भवंति पर्यायाः ।
कालस्य जघन्यतः, असंख्यगुणहीनमात्रा हि ।।४२२।।

टीका – जघन्य देशावधिज्ञान का विषयभूत द्रव्य का पर्याय, ते आवली का असख्यातवा भाग प्रमाण है । परन्तु जो जघन्य देशावधिज्ञान का विषयभूत काल

का प्रमाण कह्या है, तातै जघन्य देशावधिज्ञान का विषयभूत भाव का प्रमाण असंख्यात गुणा घाटि जानना ।

सव्वोहि त्ति य कमसो, आवलिअसंखभागगुणिदकमा ।
दव्वाणं भावाणं, पदसंखा सरिसगा होंति ॥४२३॥

सर्वावधिरिति च क्रमशः, आवल्यसंख्यभागगुणितक्रमाः ।
द्रव्याणां भावानां, पदसंख्याः सदृशका भवंति ॥४२३॥

टीका – देशावधि का विषयभूत द्रव्य की अपेक्षा जहा जघन्य भेद है, तहा ही द्रव्य का पर्याय रूप भाव की अपेक्षा आवली का असंख्यातवा भाग प्रमाण भाव का जानने रूप जघन्य भेद हो है । बहुरि तहा द्रव्य की अपेक्षा दूसरा भेद हो है । तहा ही भाव की अपेक्षा तिस प्रथम भेद का आवली का असंख्यातवा भाग प्रमाण करि गुणें, जो प्रमाण होइ, तीहिं प्रमाण भाव कौ जानने रूप दूसरा भेद हो है । बहुरि जहा द्रव्य की अपेक्षा तीसरा भेद हो है, तहा ही भाव की अपेक्षा तिस दूसरा भेद तै आवली का असंख्यातवा भाग गुणा तीसरा भेद हो है । असै ही क्रम तै सर्वावधि पर्यंत जानना । अवधिज्ञान के जेते भेद द्रव्य की अपेक्षा हैं, तेते ही भेद भाव की अपेक्षा है । जैसे द्रव्य की अपेक्षा पूर्व भेद संबंधी द्रव्य कौ ध्रुवहार का भाग दीए, उत्तर भेद संबंधी द्रव्य भया, तैसै भाव की अपेक्षा पूर्व भेद संबंधी भाव कौं आवली का असंख्यातवा भाग करि गुणे, उत्तर भेद संबंधी भाव भया । तातै द्रव्य की अपेक्षा अर भाव की अपेक्षा स्थानकनि की संख्या समान है ।

आगे नारक गति विषै अवधिज्ञान का विपभूत क्षेत्र का परिमाण कहैं हैं –

सत्तमखिदिम्मि कोसं, कोसस्सद्धं पवड्ढदे ताव ।
जाव य पढमे णिरये, जोयणमेक्कं हवे पुण्णं ॥४२४॥

सप्तमक्षितौ क्रोशं, क्रोशस्यार्धार्धं प्रवर्धते तावत् ।
यावच्च प्रथमे निरये, योजनमेकं भवेत् पूर्णम् ॥४२४॥

टीका – सातवी नरक पृथ्वी विषै अवधिज्ञान का विषयभूत क्षेत्र एक कोश है । बहुरि आधा आधा कोश तहा ताईं बधै, जहा पहले नरक संपूर्ण एक योजन

होइ । ऐसै सातवे नरक अवधि क्षेत्र एक कोश, छठै ड्योढ कोश, पाचवे दोय कोश, चौथे अढाई कोश, तीसरे तीन कोश, दूसरे साढे तीन कोश, पहले च्यारि कोश प्रमाण एक योजना जानना ।

आगे तिर्यचगति मनुष्यगति विषै कहै है —

तिरिये अवरं ओघो, तेजोयंते य होदि उक्कस्सं ।
मणुए ओघं देवे, जहाकमं सुणह वोच्छामि ॥४२५॥

तिरश्चि अवरमोघ , तेजोऽन्ते च भवति उत्कृष्टं ।
मनुजे ओघं-देवे, यथाक्रमं शृणुत वक्ष्यामि ॥४२५॥

टीका – तिर्यंच जीव विषै जघन्य देशावधिज्ञान हो है । बहुरि यातै लगाइ उत्कृष्टपनै तैजसशरीर जिस देशावधि के भेद का विषय है, तिस भेद पर्यंत सर्व सामान्य अवधिज्ञान के वर्णन विषै जे भेद कहे, ते सर्व हो है । बहुरि मनुष्य गति विषै जघन्य देशावधि तै सर्वावधि पर्यंत सामान्य अवधिज्ञान विषै जेते भेद कहे,तिनि सर्व भेदनि कौं लीए, अवधिज्ञान हो है ।

बहुरि देवगति विषै जैसा अनुक्रम है, सो मै कहो हो, तुम सुनहु —

पणुवीसजोयणाइं, दिवसंतं च य कुमारभोम्माणं ।
संखेज्जगुणं खेत्तं, बहुगं कालं तु जोइसिगे ॥४२६॥

पंचविंशतियोजनानि, दिवसांतं च च कुमारभौमयो ।
संख्यातगुण क्षेत्रं, बहुकः कालस्तु ज्योतिष्के ॥४२६॥

टीका – भवनवासी अर व्यन्तर, इनिकै अवधिज्ञान का विषयभूत जघन्यपनै क्षेत्र तौ पचीस योजन है । अर काल किछू एक घाटि एक दिन प्रमाण है । बहुरि ज्योतिषी देवनि कै क्षेत्र तौ इस क्षेत्र तै असख्यात गुणा है, अर काल इस काल तै बहुत है ।

असुराणमसंखेज्जा, कोडीओ सेसजोइसंताणं ।
संखातीदसहस्सा, उक्कस्सोहीण विसओ दु ॥४२७॥

असुराणामसख्येयाः, कोटयः शेषज्योतिष्कांतानाम् ।
संख्यातीतसहस्रा, उत्कृष्टावधीनां विषयस्तु ॥४२७॥

टीका – असुरकुमार जाति के भवनवासी देवनि कै उत्कृष्ट अवधिज्ञान का विषयभूत क्षेत्र असख्यात कोडि योजन प्रमाण है । बहुरि अवशेष रहे नव प्रकार भवनवासी अर व्यतर देव अर ज्योतिषी देव, तिनिकै उत्कृष्ट विषय क्षेत्र असख्यात सहस्र योजन प्रमाण है ।

असुराणमसंखेज्जा, वस्सा पुण सेसजोइसंताणं ।
तस्संखेज्जदिभागं, कालेण य होदि णियमेण ॥४२८॥

असुराणामसंख्येयानि, वर्षाणि पुनः शेषज्योतिष्कातानाम् ।
तत्संख्यातभागं, कालेन च भवति नियमेन ॥४२८॥

टीका – असुरकुमार जाति के भवनवासीनि कै अवधि का उत्कृष्ट विषय काल की अपेक्षा असख्यात वर्ष प्रमाण है । बहुरि इस काल के सख्यातवें भागमात्र अवशेष नव प्रकार भवनवासी वा व्यतर ज्योतिषी, तिनके अवधि का विषयभूत काल का उत्कृष्ट प्रमाण नियमकरि है ।

भवणतियाणमधोधो, थोवं तिरियेण होदि बहुगं तु ।
उड्ढेण भवणवासी, सुरगिरिसिहरो त्ति पस्संति ॥४२९॥

भवनत्रिकाणामधोऽधः, स्तोकं तिरश्चां भवति बहुकं तु ।
ऊर्ध्वेन भवनवासिनः, सुरगिरिशिखरांतं पश्यंति ॥४२९॥

टीका – भवनवासी, व्यतर, ज्योतिषी ए जो भवनत्रिक देव, तिनिकै अधोऽधो कहिए नीचली दिशा प्रति अवधि का विषयभूत क्षेत्र स्तोक है । बहुरि तिर्यंच कहिए आपका स्थान की बरोबरि दिशानि प्रति क्षेत्र बहुत है । बहुरि भवनवासी अपनैं स्थानक तै ऊपरि मेरुगिरि का शिखरि पर्यंत अवधिदर्शन करि देखै है ।

सक्कीसाणा पढमं, बिदियं तु सणक्कुमार-माहिंदा ।
तदियं तु बम्ह-लांतव, सुक्क-सहस्सारया तुरियं ॥४३०॥

शक्रैशानाः प्रथमं, द्वितीयं तु सनत्कुमार-माहेद्राः ।
तृतीय तु ब्रह्म-लांतवाः शुक्र-सहस्रारकाः तुरियम् ॥४३०॥

टीका – सौधर्म - ईशानवाले देव अवधि करि प्रथम नरक पृथ्वी पर्यंत देखै है । बहुरि सनत्कुमार माहेद्रवाले देव दूसरी पृथ्वी पर्यंत देखै है । बहुरि ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर लातव कापिष्ठवाले देव तीसरी पृथ्वी पर्यत देखै है । बहुरि शुक्र-महाशुक्र, शतार-सहस्रारवाले देव चौथी पृथ्वी पर्यंत देखै है —

आणद-पाणदवासी, आरण तह अच्चुदा य पस्संति ।
पंचमखिदिपेरंतं, छट्ठिं गेवेज्जगा देवा ॥४३१॥

आनतप्राणतवासिनः, आरणास्तथा अच्युताश्च पश्यंति ।
पंचमक्षितिपर्यंतं, षष्ठी ग्रैवेयका देवाः ॥४३१॥

टीका – आनत प्राणत के वासी तथा आरण अच्युत के वासी देव पाचवी पर्यंत देखै है । बहुरि नवग्रैवेयकवाले देव छठी पृथ्वी पर्यत देखै है ।

सव्वं च लोयणालिं, पस्संति अणुत्तरेसु जे देवा ।
सक्खेत्ते य सकम्मे, रूवगदमणंतभागं च ॥४३२॥

सर्वां च लोकनालीं, पश्यंति अनुत्तरेषु ये देवाः ।
स्वक्षेत्रे च स्वकर्मणि, रूपगतमनंतभागं च ॥४३२॥

टीका – नव अनुदिश विमान अर पाच अनुत्तर विमान के वासी सर्व लोकनाली, जो त्रसनाली ताकौ देखै है ।

यहु भावार्थ जानना—सौधर्मादिवासी देव ऊपरि अपने २ स्वर्ग का विमान का ध्वजादड का शिखर पर्यंत देखै है । बहुरि नव अनुदिश, पच अनुत्तर विमान के वासी देव ऊपरि अपने विमान का शिखर पर्यंत अर नीचै की बाह्य तनुवात पर्यत सर्व त्रसनाली कौ देखै है, सो अनुदिश विमानवाले तौ किछू एक अधिक तेरह राजू प्रमाण लबा अर अनुत्तर विमानवाले के च्यारि सै पचीस धनुष घाटि, इकवीस योजन करि हीन, चौदह राजू प्रमाण लबा अर एक राजू चौड़ा अवधि का विषयभूत क्षेत्र कौ देखै है । असा इहा क्षेत्र का परिमाण कीया है; सो स्थानक का नियमरूप जानना । क्षेत्र का परिमाण लीए, नियमरूप न जानना । जातै अच्युत स्वर्ग पर्यंत के वासी विहार करि

असुराणामसंख्येयाः, कोटयः शेषज्योतिष्कांतानाम् ।
संख्यातीतसहस्रा, उत्कृष्टावधीनां विषयस्तु ॥४२७॥

टीका – असुरकुमार जाति के भवनवासी देवनि के उत्कृष्ट अवधिज्ञान का विषयभूत क्षेत्र असंख्यात कोडि योजन प्रमाण है । बहुरि अवशेष रहे नव प्रकार भवनवासी अर व्यंतर देव अर ज्योतिषी देव, तिनिकै उत्कृष्ट विषय क्षेत्र असंख्यात सहस्र योजन प्रमाण है ।

असुराणमसंखेज्जा, वस्सा पुण सेसजोइसंताणं ।
तस्संखेज्जदिभागं, कालेण य होदि णियमेण ॥४२८॥

असुराणामसंख्येयानि, वर्षाणि पुनः शेषज्योतिष्कांतानाम् ।
तत्संख्यातभागं, कालेन च भवति नियमेन ॥४२८॥

टीका – असुरकुमार जाति के भवनवासीनि कै अवधि का उत्कृष्ट विषय काल की अपेक्षा असंख्यात वर्ष प्रमाण है । बहुरि इस काल के संख्यातवे भागमात्र अवशेष नव प्रकार भवनवासी वा व्यंतर ज्योतिषी, तिनके अवधि का विषयभूत काल का उत्कृष्ट प्रमाण नियमकरि है ।

भवणतियाणमधोधो, थोवं तिरियेण होदि बहुगं तु ।
उड्ढेण भवणवासी, सुरगिरिसिहरो त्ति पस्संति ॥४२९॥

भवनत्रिकाणामधोऽधः, स्तोकं तिरश्चां भवति बहुकं तु ।
ऊर्ध्वेन भवनवासिनः, सुरगिरिशिखरांतं पश्यंति ॥४२९॥

टीका – भवनवासी, व्यंतर, ज्योतिषी ए जो भवनत्रिक देव, तिनिकै अधोऽधो कहिए नीचली दिशा प्रति अवधि का विषयभूत क्षेत्र स्तोक है । बहुरि तिर्यंच कहिए आपका स्थान की बरोबरि दिशानि प्रति क्षेत्र बहुत है । बहुरि भवनवासी अपनें स्थानक तै ऊपरि मेरुगिरि का शिखरि पर्यंत अवधिदर्शन करि देखै है ।

सक्कीसाणा पढमं, बिदियं तु सणक्कुमार-माहिंदा ।
तदियं तु बम्ह-लांतव, सुक्क-सहस्सारया तुरियं ॥४३०॥

शक्रैशानाः प्रथमं, द्वितीयं तु सनत्कुमार-माहेद्राः ।
तृतीय तु ब्रह्म-लांतवाः शुक्र-सहस्रारकाः तुरियम् ।।४३०।।

टीका – सौधर्म - ईशानवाले देव अवधि करि प्रथम नरक पृथ्वी पर्यंत देखैं है । बहुरि सनत्कुमार माहेद्रवाले देव दूसरी पृथ्वी पर्यंत देखै है। बहुरि ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर लातव कापिष्ठवाले देव तीसरी पृथ्वी पर्यत देखै है । बहुरि शुक्र-महाशुक्र, शतार-सहस्रारवाले देव चौथी पृथ्वी पर्यंत देखै है —

आणद-पाणदवासी, आरण तह अच्चुदा य पस्संति ।
पंचमखिदिपेरंतं, छट्ठिं गेवेज्जगा देवा ।।४३१।।

आनतप्राणतवासिनः, आरणास्तथा अच्युताश्च पश्यंति ।
पंचमक्षितिपर्यंतं, षष्ठीं ग्रैवेयका देवाः ।।४३१।।

टीका – आनत प्राणत के वासी तथा आरण अच्युत के वासी देव पाचवी पर्यंत देखै है । बहुरि नवग्रैवेयकवाले देव छठी पृथ्वी पर्यंत देखै है ।

सव्वं च लोयणालिं, पस्संति अणुत्तरेसु जे देवा ।
सक्खेत्ते य सकम्मे, रूवगदमणंतभागं च ।।४३२।।

सर्वां च लोकनालीं, पश्यंति अनुत्तरेषु ये देवाः ।
स्वक्षेत्रे च स्वकर्मणि, रूपगतमनंतभागं च ।।४३२।।

टीका – नव अनुदिश विमान अर पाच अनुत्तर विमान के वासी सर्व लोक-नाली, जो त्रसनाली ताकौ देखै है ।

यहु भावार्थ जानना–सौधर्मादिवासी देव ऊपरि अपने २ स्वर्ग का विमान का ध्वजादंड का शिखर पर्यत देखै है । बहुरि नव अनुदिश, पच अनुत्तर विमान के वासी देव ऊपरि अपने विमान का शिखर पर्यंत अर नीचै की बाह्य तनुवात पर्यत सर्व त्रस-नाली कौ देखै है, सो अनुदिश विमानवाले तौ किछू एक अधिक तेरह राजू प्रमाण लबा अर अनुत्तर विमानवाले के च्यारि सै पचीस धनुष घाटि, इकवीस योजन करि हीन, चौदह राजू प्रमाण लवा अर एक राजू चौडा अवधि का विषयभूत क्षेत्र कौ देखै है । असा इहा क्षेत्र का परिमाण कीया है; सो स्थानक का नियमरूप जानना । क्षेत्र का परिमाण लीए, नियमरूप न जानना । जातै अच्युत स्वर्ग पर्यंत के वासी विहार करि

अन्य क्षेत्र कौ जाइ, अर तहा अवधि होइ तौ पूर्वोक्त स्थानक पर्यंत ही होइ, असा नाही, जो प्रथम स्वर्गवाला पहिले नरक जाइ, अर तहा सेती डेढ राजू नीचै और जानै। सौधर्मद्विक के प्रथम नरक पर्यंत अवधि क्षेत्र है, सो तहा भी तिष्ठता तहा पर्यंत क्षेत्र ही कौं जानै, असै सर्वत्र जानना। बहुरि अपना क्षेत्र विषै एक प्रदेश घटावना, अर अपनै अवधिज्ञानावरण द्रव्य कौ एक वार ध्रुवहार का भाग देना, जहा सर्व प्रदेश पूर्ण होइ, सो तिस अवधि का विषयभूत द्रव्य जानना।

इस ही अर्थ कौ नीचै दिखाइए है —

कप्पसुराणं सग-सग-ओहीखेत्तं विविस्ससोवचयं।
ओहीदव्वपमाणं, संठाविय धुवहरेण हरे ॥४३३॥

सग-सग-खेत्तपदेस-सलाय-पमाणं समप्पदे जाव।
तत्थतणचरिमखंडं, तत्थतणोहिस्स दव्वं तु ॥४३४॥

कल्पसुराणा स्वकस्वकावधिक्षेत्रं विविस्रसोपचयम्।
अवधिद्रव्यप्रमाणं, संस्थाप्य ध्रुवहरेण हरेत् ॥४३३॥

स्वकस्वकक्षेत्रप्रदेशशलाकाप्रमाणं समाप्यते यावत्।
तत्रतनचरमखंडं, तत्रतनावधेर्द्रव्यं तु ॥४३४॥

टीका – कल्पवासी देवनि कै अपना अपना अवधि क्षेत्र अर विस्रसोपचय रहित अवधिज्ञानावरण का द्रव्य स्थापि करि अवधिज्ञानावरण द्रव्य कौं एक बार ध्रुवहारका भाग देइ, क्षेत्र विषै एक प्रदेश घटावना, असै सर्व क्षेत्र के प्रदेश पूर्ण होइ, तहा जो अंत विषै सूक्ष्म पुद्गलस्कंधरूप खंड होइ, सोई तिस अवधिज्ञान का विषय-भूत द्रव्य जानना।

इहा उदाहरण कहिए है–सौधर्म ऐशानवालो का क्षेत्र प्रथम नरक पर्यंत कह्या है, सो प्रथम नरक तै पहला दूसरा स्वर्ग का उपरिम स्थान ड्योढ राजू ऊंचा है। तातै अवधि का क्षेत्र एक राजू लंबा - चौड़ा, ड्योढ राजू ऊंचा भया। सो इस घन रूप ड्योढ राजू क्षेत्र के जितने प्रदेश होइ, ते एकत्र स्थापने। बहुरि किंचिदून द्वय-र्धगुणहानि करि गुणित समयप्रबद्ध प्रमाण सत्वरूप सर्व कर्मनि की परमाणूनि का परिमाण है। तिस विषै अवधिज्ञानावरण नामा कर्म के जेते परमाणू होई, तिन विषै

विस्रसोपचय के परमाणू न मिलाइए, अैसे ते अवधिज्ञानावरण के परमाणू एकत्र स्थापने । बहुरि इस अवधिज्ञानावरण के परमाणूनि का प्रमाण कौ एक बार ध्रुवहार का भाग दीजिये; तब उस क्षेत्र के प्रदेशनि का परिमाण मे स्यो एक घटाइए, बहुरि एक बार ध्रुवहार का भाग देतै, एक भाग विषै जो प्रमाण आया, ताकौं दूसरा ध्रुवहार का भाग दीजिए; तब तिस प्रदेशनि का परिमाण मे स्यो एक और घटाइए। बहुरि दूसरा ध्रुवहार का भाग देते एक भाग विषै जो प्रमाण रह्या ताकौ तीसरा ध्रुवहार का भाग दीजिए, तब तिस प्रदेशनि का परिमाण मे स्यो एक और घटाइए । ऐसै जहां ताईं सर्व क्षेत्र के प्रदेश पूर्ण होइ, तहा ताईं ध्रुवहार का भाग देते जाईये देतें-देतै अंत के विषै जो परिमाण रहै, तितने परमाणू का सूक्ष्म पुद्गल स्कघ जो होइ, ताकौं सौधर्म -ऐशान स्वर्गवाले देव अवधिज्ञान करि जानै है । इसतै स्थूल स्कघ को तो जानै ही जानै । अैसै ही सानत्कुमार - माहेद्रवालो के घनरूप चारि राजू प्रमाण क्षेत्र के प्रदेशनि का जो प्रमाण तितनी बार अवधिज्ञानावरण द्रव्य कौ ध्रुवहार का भाग देतै देतै जो प्रमाण रहै, तितने परमाणूनि का स्कंध को अवधिज्ञान करि जानै है । अैसै सबनि के अवधि का विषयभूत क्षेत्र के प्रदेशनि का जो प्रमाण होइ, तितनी बार अवधिज्ञानावरण द्रव्य कौ ध्रुवहार का देतै देतै जो प्रमाण रहै, तितने परमाणुनि का स्कध कौं ते देव अवधिज्ञान करि जानै है । तहा ब्रह्म - ब्रह्मोत्तरवालों के साढा पाच राजू, लातव - कापिष्ठवालो के छह राजू, शुक्र - महाशुक्रवालो के साढा सात राजू, शतार - सहस्रारवालो के आठ राजू, आनत - प्राणतवालो के साढा नव राजू, आरण - अच्युतवालों के दश राजू, ग्रैवेयकवालो के ग्यारह राजू, अनुदिश विमानवालो के किछू अधिक तेरह राजू, अनुत्तर विमानवालो के किछू घाटि चौदह राजू क्षेत्र का परिमाण जानि, पूर्वोक्त विधान कीए, तिनि देवनि कै अवधिज्ञान का विषयभूत द्रव्य का परिमाण आवै है ।

सोहम्मीसाणाणमसंखेज्जाओ हु वस्सकोडीओ ।
उवरिमकप्पचउक्के, पल्लासंखेज्जभागो दु ।।४३५।।

तत्तो लांतवकप्पप्पहुदी सव्वत्थसिद्धिपेरंतं ।
किंचूणपल्लमेत्तं, कालपमाणं जहाजोग्गं ।।४३६।। जुम्मं ।

सौधर्मैशानानामसंख्येया हि वर्षकोटचः ।
उपरिमकल्पचतुष्के, पल्यासंख्यातभागस्तु ।।४३५।।

ततो लांतवकल्पप्रभृतिसर्वार्थसिद्धिपर्यंतम् ।
किंचिदूनपल्यमात्र, कालप्रमाण यथायोग्यम् ।।४३६।।

टीका – सौधर्म ईशानवालो के अवधि का विपयभूत काल असख्यात कोडि वर्ष प्रमाण है । बहुरि तातै ऊपरि सनत्कुमारादि चारि स्वर्गवालो के यथायोग्य पल्य का असख्यातवा भाग प्रमाण है । बहुरि तातै ऊपरि लावत आदि सर्वार्थसिद्धि पर्यंत-वालो के यथायोग्य किछू घाटि पल्य प्रमाण है ।

जोइसियंताणोहीखेत्ता उत्ता ण होंति घणपदरा ।
कप्पसुराणं च पुणो, विसरित्थं आयदं होदि ।।४३७।।

ज्योतिष्कांतानामवधिक्षेत्राणि उक्तानि न भवंति घनप्रतराणि ।
कल्पसुराणां च पुनः , विसदृशमायत भवति ।।४३७।।

टीका – ज्योतिषी पर्यंत जे भवनवासी, व्यतर, ज्योतिषी असे तीन प्रकार देव, तिनकै जो अवधि का विषयभूत क्षेत्र कह्या है, सो समचतुरस्र कहिए बरोबरि चौकोर घनरूप नाही है । जातै सूत्र विषै लबाई, चौडाई, उचाई समान नाही कही है, याही तै अवशेष रहे मनुष्य, नारकी, तिर्यंच तिनि कै जो अवधि का विषयभूत क्षेत्र है, सो बरोबरि चौकोर घनरूप है । अवधिज्ञानी मनुष्यादिक जहा तिष्ठता होइ, तहातै अपने विषयभूत क्षेत्र का प्रमाणपर्यंत चौकोररूप घन क्षेत्र कौं जानै है । बहुरि कल्पवासी देवनि कै जो अवधिज्ञान का विषयभूत क्षेत्र है, सो विसदृश आयत कहिए लबा बहुत, चौडा थोडा असा आयतचतुरस्र जानना ।

चिंतियमचिंतियं वा, अद्धं चिंतियमणेयभेयगयं ।
मणपज्जवं ति उच्चइ, जं जाणइ तं खु णरलोए ।।४३८।।

चिंतितमचिंतितं वा, अर्ध चिंतितमनेकभेदगतम् ।
मनः पर्यय इत्युच्यते, यज्जानाति तत्खलु नरलोके ।।४३८।।

टीका – **चिंतितं** कहिए अतीत काल मे जिसका चितवन कीया अर **अचिंतितं** कहिए जाकौ अनागत काल विषै चिंतवेगा अर **अर्धचिंतितं** कहिए जो सम्पूर्ण चितया नाही । असा जो अनेक भेद लीए, अन्य जीव का मन विषै प्राप्त हुवा अर्थ ताकौं जो जानै, सो मनः पर्यय कहिए । **मनः** कहिए अन्य जीव का मन विषै चिंतवनरूप

प्राप्त भया अर्थ, ताकौ **पर्येति** कहिए जानै, सो मन पर्यय है, असा कहिए है । सो इस ज्ञान की उत्पत्ति मनुष्य क्षेत्र ही विषै है, वाह्य नाही है ।

पराया मन विषै तिष्ठता जो अर्थ, सो मन कहिए । ताकौ पर्येति, कहिए जानै, सो मनःपर्यय जानना ।

मणपज्जवं च दुविहं, उजुविउलमदि त्ति उजुमदी तिविहा ।
उजुमणवयणे काए, गदत्थविसया त्ति णियमेण ॥४३९॥

मनःपर्ययश्च द्विविधः, ऋजुविपुलमतीति ऋजुमतिस्त्रिविधा ।
ऋजुमनोवचने काये, गतार्थविषया इति नियमेन ॥४३९॥

टीका – सो यहु मन पर्यय – ज्ञान सामान्यपनै एक प्रकार है, तथापि भेद तै दोय प्रकार है–ऋजुमति मन पर्यय, विपुलमति मन पर्यय ।

तहां सरलपनै मन, वचन, काय करि कीया जो अर्थ अन्य जीव का मन विषै चितवनरूप प्राप्त भया ताके जानने तै निष्पन्न भई, असी **ऋज्वी** कहिए सरल है मति जाकी, सो ऋजुमति कहिए ।

बहुरि सरल वा वक्र मन, वचन, काय करि कीया जो अर्थ अन्य जीव का मन विषै चितवनरूप प्राप्त भया, ताके जानने तै निष्पन्न भई वा नाही नाई निष्पन्न भई असी **विपुला** कहिए कुटिल है मति जाकी, सो विपुलमति कहिए । असै ऋजुमति अर विपुलमति के भेद तै मन पर्ययज्ञान दोय प्रकार है ।

तहा ऋजुमति मन पर्यय ज्ञान नियम करि तीन प्रकार है । ऋजु मन विषै प्राप्त भया अर्थ का जानन हारा बहुरि ऋजु वचन विषै प्राप्त भया अर्थ का जानन हारा, बहुरि ऋजुकाय विषै प्राप्त भया अर्थ का जानन हारा असै ए तीन भेद है ।

विउलमदी वि य छद्धा, उजुगाणुजुवयणकायचित्तगयं ।
अत्थं जाणदि जम्हा, सद्दत्थगया हु ताणत्था ॥४४०॥

विपुलमतिरपि च षोढा, ऋजुगानृजुवचनकायचित्तगतम् ।
अर्थं जानाति यस्मात्, शब्दार्थगता हि तेषामर्थाः ॥४४०॥

टीका – विपुलमति ज्ञान भी छह प्रकार है – १ ऋजुमन कौ प्राप्त भया अर्थ का जानन हारा, २ ऋजु वचन कौ प्राप्त भया अर्थ का जानन हारा, ३ ऋजु काय कौं प्राप्त भया अर्थ का जानन हारा, ४. बहुरि वक्र मन कौ प्राप्त भया अर्थ का जानन हारा, ५. बहुरि वक्र वचन कौ प्राप्त भया अर्थ का जानन हारा, ६ बहुरि वक्र काय कौं प्राप्त भया अर्थ का जानन हारा । ए छह भेद है, जातै सरल वा वक्र मन, वचन, काय कौं प्राप्त भया पदार्थ कौ जानै है ।

बहुरि तिन ऋजुमति विपुलमति ज्ञान के अर्थाः कहिए विषय ते शब्द कौं वा अर्थ कौ प्राप्त भए प्रगट हो है । कैसे ? सो कहिए है – कोई भी सरल मन करि निष्पन्न होत संता त्रिकाल सबधी पदार्थनि कौ चितवन भया, वा सरल वचन करि निष्पन्न होत सता, तिनकौं कहत भया वा सरल काय करि निष्पन्न होत सता तिनकौं करत भया, पीछै भूलि करि कालातर विषै यादि करने कौ समर्थ न हूवा अर आय करि ऋजुमति मन पर्यय ज्ञानी कौ पूछत भया वा यादि करने का अभिप्राय कौं धारि मौन ही तै खडा रह्या, तौ तहा ऋजुमति मन पर्ययज्ञान स्वयमेव सर्व कौं जानै है ।

तैसे ही सरल वा वक्र मन, वचन, काय करि निष्पन्न होत सता त्रिकाल सबधी पदार्थनि कौ चितवन भया वा कहत भया वा करत भया । बहुरि भूलि करि केतेक काल पीछै यादि करने कौ समर्थ न हूवा, आय करि विपुलमति मन पर्ययज्ञानी के निकटि पूछत भया वा मौन तै खडा रह्या, तहा विपुलमति मनःपर्ययज्ञान सर्व कौं जानै, ऐसे इनिका स्वरूप जानना ।

तियकालविसयरूवं, चिंतितं वट्टमाणजीवेण ।
उजुमदिणाणं जाणदि, भूदभविस्सं च विउलमदी ॥४४१॥

त्रिकालविषयरूपि, चिंतितं वर्तमानजीवेन ।
ऋजुमतिज्ञान जानाति, भूतभविष्यच्च विपुलमतिः ॥४४१॥

टीका – त्रिकाल सबधी पुद्गल द्रव्य कौ वर्तमान काल विषै कोई जीव चिंतवन करै है, तिस पुद्गल द्रव्य कौ ऋजुमति मन पर्ययज्ञान जानै है । बहुरि त्रिकाल सबधी पुद्गल द्रव्य कौं कोई जीव अतीत काल विषै चितया था वा वर्तमान काल विषै चितवै है वा अनागत काल विषै चितवेगा, ऐसे पुद्गल द्रव्य कौं विपुलमति मन पर्ययज्ञान जानै है ।

सव्वंग-अंग-संभव-चिण्हादुप्पज्जदे जहा ओही ।
मणपज्जवं च दव्वमणादो उप्पज्जदे णियमा ॥४४२॥

सर्वांगांगसंभवचिह्नादुत्पद्यते यथावधिः ।
मनःपर्ययं च द्रव्यमनस्त उत्पद्यते नियमात् ॥४४२॥

टीका – जैसै पूर्वै कह्या था, भवप्रत्यय अवधिज्ञान सर्व अग तै उपजै है । अर गुणप्रत्यय शखादिक चिह्ननि तै उपजै है । तैसै मन पर्ययज्ञान द्रव्य मन तै उपजै है । नियम तै और अगनि के प्रदेशनि विषै नाही उपजै है ।

हिदि होदि हु दव्वमणं, वियसियअट्ठच्छदारविंदं वा ।
अंगोवंगुदयादो, मणवग्गणखंधदो णियमा ॥४४३॥

हृदि भवति हि द्रव्यमनः, विकसिताष्टच्छदारविंदवत् ।
अंगोपांगोदयात्, मनोवर्गणास्कंधतो नियमात् ॥४४३॥

टीका – सो द्रव्य मन हृदय स्थान विषै प्रफुल्लित आठ पाखुडी का कमल के आकार अगोपाग नाम कर्म के उदय तै तेईस जाति की पुद्गल वर्गणानि विषै मनोवर्गणा है । तिनि स्कधनि करि निपजै है, असा नियम है ।

णोइंदिय त्ति सण्णा, तस्स हवे सेसइंदियाणं वा ।
वत्तत्ताभावादो, मण मणपज्जं च तत्थ हवे ॥४४४॥

नोइंद्रियमिति संज्ञा, तस्य भवेत् शेषेंद्रियाणां वा ।
व्यक्तत्वाभावात्, मनो मनःपर्ययश्च तत्र भवेत् ॥४४४॥

टीका – तिस मन का नोइद्रिय असा नाम है । नो कहिए ईषत्, किंचिन्मात्र इद्रिय है । जैसै स्पर्शनादिक इद्रिय प्रकट है, तैसै मन के प्रकटपना नाही । तातै मन का नोइद्रिय असा नाम है, सो तिस द्रव्य मन विषै मतिज्ञानरूप भाव मन भी उपजै है, अर मन पर्ययज्ञान भी उपजै है ।

मणपज्जवं च णाणं, सत्तसु विरदेसु सत्तइड्ढीणं ।
एगादिजुदेसु हवे, वड्ढंतविसिट्ठचरणेसु ॥४४५॥

मनःपर्ययश्च ज्ञानं, सप्तसु विरतेषु सप्तर्धीनाम् ।
एकादियुतेषु भवेद्वर्धमानविशिष्टाचरणेषु ॥४४५॥

टीका – प्रमत्त आदि सात गुणस्थान विषै १. बुद्धि, २ तप, ३ वैक्रियिक, ४ औषध, ५ रस, ६ बल, ७ अक्षीण इनि सात रिद्धिनि विषै एक, दोय आदि रिद्धिनि करि सयुक्त, बहुरि वर्धमान विशेष रूप चारित्र के धारी जे महामुनि, तिनिकै मन पर्यय ज्ञान हो है, अन्यत्र नाही ।

इंदियणोइंदियजोगादिं, पेक्खित्तु उजुमदी होदि ।
णिरवेक्खिय विउलमदी, ओहिं वा होदि णियमेण ॥४४६॥

इंद्रियनोइंद्रिययोगादिमपेक्ष्य ऋजुमतिर्भवति ।
निरपेक्ष्य विपुलमतिः, अवधिर्वा भवति नियमेन ॥४४६॥

टीका – ऋजुमति मन पर्ययज्ञान है, सो अपने वा अन्य जीव के स्पर्शनादिक इंद्री अर नोइद्रिय मन अर मन, वचन, काय योग तिनिकी सापेक्ष तै उपजै है । बहुरि विपुलमति मन पर्यय है, सो अवधिज्ञान की सी नाई, तिनकी अपेक्षा बिना ही नियम करि उपजै है ।

पडिवादी पुण पढमा, अप्पडिवादी हु होदि बिदिया हू ।
सुद्धो पढमो बोहो, सुद्धतरो बिदियबोहो दु ॥४४७॥

प्रतिपाती पुनः प्रथमः, अप्रतिपाती हि भवति द्वितीयो हि ।
शुद्धः प्रथमो बोधः, शुद्धतरो द्वितीयबोधस्तु ॥४४७॥

टीका – पहिला ऋजुमति मन पर्यय है, सो प्रतिपाती है । बहुरि दूसरा विपुलमति मन पर्यय है, सो अप्रतिपाती है । जाकै विशुद्ध परिणामनि की घटवारी होइ, सो प्रतिपाती कहिये । जाकै विशुद्ध परिणामनि की घटवारी न होइ, सो अप्रतिपाती कहिये । बहुरि ऋजुमति मन पर्यय तौ विशुद्ध है, जातै प्रतिपक्षी कर्म के क्षयोपशम तै निर्मल भया है । बहुरि विपुलमति मन पर्यय विशुद्धतर है, जातै अतिशय करि निर्मल भया है ।

परमणसि टिठ्यमट्ठं, ईहामदिणा उजुट्ठिय लहिय ।
पच्छा पच्चक्खेण य, उजुमदिणा जाणदे णियमा ॥४४८॥

परमनसि स्थितमर्थमीहामत्या ऋजुस्थितं लब्ध्वा ।
पश्चात् प्रत्यक्षेण च, ऋजुमतिना जानीते नियमात् ॥४४८॥

टीका – पर जीव के मन विषै सरलपनै चितवन रूप तिष्ठता जो पदार्थ, ताकौ पहलै तौ ईहा नामा मतिज्ञान करि प्राप्त होइ, अैसा विचारै कि याका मन विषै कह्या है । पीछै ऋजुमति मन पर्यय ज्ञान करि तिस अर्थ कौ प्रत्यक्षपनै करि ऋजुमति मनःपर्ययज्ञानी जानै है, यह नियम है ।

चिंतियमचिंतियं वा, अद्धं चिंतियमणेयभेयगयं ।
ओहिं वा विउलमदी, लहिऊण विजाणए पच्छा ॥४४९॥

चिंतितमचिंतितं वा, अर्ध चिंतितमनेकभेदगतम् ।
अवधिर्वा विपुलमतिः, लब्ध्वा विजानाति पश्चात् ॥४४९॥

टीका – अतीत काल विषै चितया वा अनागत काल विषै जाका चितवन होगा, अैसा बिना चितया वा वर्तमान काल विषै किछू एक आधासा चितया अैसा अन्य जीव का मन विषै तिष्ठता अनेक भेद लीए अर्थ, वाकौ पहिलै प्राप्त होइ, वाका मन विषै यहु है, अैसा जानि । पीछै अवधिज्ञान की नाई विपुलमति मन पर्यय-ज्ञान तिस अर्थ कौ प्रत्यक्ष जानै है ।

दव्वं खेत्तं कालं, भावं पडि जीवलक्खियं रूवि ।
उजविउलमदी जाणदि, अवरवरं मज्झिमं च तहा ॥४५०॥

द्रव्यं क्षेत्रं कालं, भावं प्रति जीवलक्षितं रूपि ।
ऋजुविपुलमती जानीतः अवरवरं मध्यमं च तथा ॥४५०॥

टीका – द्रव्य प्रति वा क्षेत्र प्रति वा काल प्रति वा भाव प्रति जीव करि लक्षित कहिये चितवन कीया हूवा जो रूपी पुद्गल द्रव्य वा पुद्गल के सबध कौ धरै ससारी जीव द्रव्य, ताकौं जघन्य, मध्यम, उत्कृष्ट भेद करि ऋजुमति वा विपुल-मति मन पर्यय ज्ञान जानै है ।

अवरं दव्वमुरालियसरीरणिज्जिण्णसमयबद्धं तु ।
चक्खिदियणिज्जरण्णं, उक्कस्सं उजुमदिस्स हवे ॥४५१॥

अवरं द्रव्यमौरालिकशरीरनिर्जीर्णसमयप्रबद्ध तु ।
चक्षुरिंद्रियनिर्जीर्णमुत्कृष्टमृजुमतेर्भवेत् ॥४५१॥

टीका — ऋजुमति मन पर्यय ज्ञान जघन्यपने करि औदारिक शरीर का निर्जरारूप समय प्रबद्ध कौं जानै है । औदारिक शरीर विषै समय समय निर्जरा हो है, सो एक समय विषै औदारिक शरीर के जितने परमाणू निर्जरै, तितने परमाणूनि का स्कध कौ जघन्य ऋजुमति मनःपर्यय ज्ञान जानै है । बहुरि उत्कृष्टपनै नेत्र इद्रिय की निर्जरा मात्र द्रव्य कौ जानै है । सो कितना है ? औदारिक शरीर की अवगाहना सख्यात घनागुल प्रमाण है । तिस विषै विस्रसोपचय सहित औदारिक शरीर का समय प्रबद्ध प्रमाण परमाणू निर्जरा रूप भये, तौ नेत्र इद्रिय की अभ्यतर निर्वृति अगुल के असख्यातवे भाग प्रमाण है । तिस विषै कितने परमाणू निर्जरारूप भए, असा त्रैराशिक करि जितना परमाणू आया, तितने परमाणूनि का स्कध कौ उत्कृष्ट ऋजुमति मन पर्यय ज्ञान जानै है ।

मणदव्ववग्गणाणमणंतिमभागेण उजुगउक्कस्सं ।
खंडिदमेत्तं होदि हु, विउलमदिस्सावरं दव्वं ॥४५२॥

मनोद्रव्यवर्गणामनंतिमभागेन ऋजुगोत्कृष्टम् ।
खंडितमात्रं भवति हि, विपुलमतेरवरं द्रव्यम् ॥४५२॥

टीका – बहुरि तेईस जाति की पुद्गल वर्गणानि विषै मनोवर्गणा का जघन्य तै लगाइ, उत्कृष्ट पर्यंत जितने भेद है, तिनिकौं अनत का भाग दीजिए, तहा जो एक भाग विषै प्रमाण होइ, सो मन पर्यय ज्ञान का कथन विषै ध्रुवहार का परिमाण जानना । सो ऋजुमति का उत्कृष्ट विषयभूत द्रव्य विषै जो परिमाण कह्या था, ताकौ इस ध्रुवहार का भाग दीए, जो परिमाण आवै, तितने परमाणूनि का स्कध कौं जघन्य विपुलमति मन पर्ययज्ञान जानै है ।

अटठ्ण्हं कम्माणं, समयपबद्धं विविस्ससोवचयं ।
धुवहारेणिगिवारं, भजिदे बिदियं हवे दव्वं ॥४५३॥

अष्टानां कर्मणां, समयप्रबद्ध विविस्रसोपचयम् ।
ध्रुवहारेणैकवारं, भजिते द्वितीयं भवेत् द्रव्यम् ॥४५३॥

टीका – आठ कर्मनि का समुदायरूप जो समय प्रबद्ध का प्रमाण तीहि विषै विस्रसोपचय के परमाणू न मिलाइए, तिन ही कौ एक बार मन पर्ययज्ञान सबधी ध्रुवहार का भाग दीए, जो प्रमाण आवै, तितने परमाणूनि का स्कध कौ विपुलमति मनःपर्यय का दूसरा भेदरूप ज्ञान जानै है ।

तव्विदियं कप्पाणमसंखेज्जाणं च समयसंखसमं ।
धुवहारेणवहरिदे, होदि हु उक्कस्सयं दव्वं ॥४५४॥

तद्द्वितीयं कल्पानामसंख्येयानां च समयसंख्यासमम् ।
ध्रुवहारेणावहृते, भवति हि उत्कृष्टकं द्रव्यम् ॥४५४॥

टीका – तिस विपुलमति के दूसरे भेद सबधी द्रव्य कौं तिस ही ध्रुवहार का भाग दीजिए, जो प्रमाण आवै, ताकौ फेरि ध्रुवहार का भाग दीजिए । ऐसै असख्यात कल्पकाल के जेते समय हैं, तितनी बार ध्रुवहार का भाग दीजिए, देतै देतै अत विषै जो परिमाण रहै, तितने परिमाणूनि का स्कध कौ उत्कृष्ट विपुलमतिज्ञान जानै है, ऐसै द्रव्य प्रति जघन्य - उत्कृष्ट भेद कहे है ।

गाउयपुधत्तमवरं, उक्कस्सं होदि जोयणपुधत्तं ।
विउलमदिस्स य अवरं, तस्स पुधत्तं वरं खु णरलोयं ॥४५५॥

गव्यूतिपृथक्त्वमवरमुत्कृष्टं भवति योजन पृथक्त्वम् ।
विपुलमतेश्च अवरं, तस्य पृथक्त्वं वरं खलु नरलोकः ॥४५५॥

टीका – ऋजुमति का विषयभूत जघन्य क्षेत्र पृथक्त्व कोश प्रमाण है, सो दोय, तीन, कोश प्रमाण जानना । बहुरि उत्कृष्ट क्षेत्र पृथक्त्व योजन प्रमाण है, सो सात वा आठ योजन प्रमाण जानना । बहुरि विपुलमति का विषयभूत जघन्य क्षेत्र पृथक्त्व योजन प्रमाण है, सो आठ वा नव योजन प्रमाण जानना । बहुरि उत्कृष्ट क्षेत्र मनुष्य लोक प्रमाण है ।

णरलोए त्ति य वयणं, विक्खंभणियामयं ण वट्टस्स ।
जह्मा तग्घणपदरं, मणपज्जवखेत्तमुद्दिट्ठं ॥४५६॥

नरलोक इति च वचनं, विष्कंभनियामकं न वृत्तस्य ।
यस्मात्तद्धनप्रतरं, मनःपर्ययक्षेत्रमुद्दिष्टम् ॥४५६॥

टीका – नरलोक यहा असा वचन कह्या है, सो यहा मनुष्य लोक का विष्कभ का जेता परिमाण है, सो लेना। अर मनुष्य लोक तौ गोल है। अर यहु विपुलमति का विषयभूत क्षेत्र समचतुरस्र घन-प्रतर कहिए, समान चौकोर घन रूप प्रतर क्षेत्र कह्या है, सो पैंतालीस लाख योजन लबा, तितना ही चौडा असा परिमाण जानना। इहा ऊंचाई थोडी है, तातै घन प्रतर कह्या है। जातै मानुषोत्तर पर्वत के बाह्य च्यारो कोणानि विषै तिष्ठते देव, तिर्यंच चिंतए हूवे तिनिकौ भी उत्कृष्ट विपुलमति मन पर्ययज्ञान जानै हैं, असै क्षेत्र प्रति जघन्य - उत्कृष्ट भेद कहे।

दुग-तिग-भवा हु अवरं, सत्तट्ठभवा हवंति उक्कस्सं।
अड-णवभवा हु अवरमसंखेज्जं विउलउक्कस्सं ॥४५७॥

द्विक-त्रिक-भवा हि अवरं, सप्ताष्टभवा भवंति उत्कृष्टम्।
अष्ट-नव-भवा हि अवरमसंख्येय विपुलोत्कृष्टम् ॥४५७॥

टीका – काल करि ऋजुमति का विषय, जघन्यपनै अतीत - अनागत रूप दोय, तीन भव है, उत्कृष्टतै सात, आठ भव है। बहुरि विपुलमति का विषय जघन्य आठ नव भव है, उत्कृष्ट पल्य का असख्यातवा भाग मात्र है। असै अतीत, अनागत अपेक्षा काल प्रति जघन्य उत्कृष्ट भेद कहे।

आवलिअसंखभागं, अवरं च वरं च वरमसंखगुणं।
तत्तो असंखगुणिदं, असंखलोगं तु विउलमदी ॥४५८॥

आवल्यसख्यभागमवर च वरं च वरमसख्यगुणम्।
ततोऽसख्यातगुणितमसख्यलोक च विपुलमतिः ॥४५८॥

टीका – ऋजुमति का विषयभूत भाव जघन्यपनै आवली के असख्यातवे भाग प्रमाण है। उत्कृष्टपनै भी आवली के असख्यातवा भाग प्रमाण ही कहिए, तथापि जघन्य तै असख्यात गुणा है। बहुरि विपुलमति का विषयभूत भाव जघन्य पनै ऋजुमति का उत्कृष्ट तै असख्यात गुणा है। बहुरि उत्कृष्ट पनै असख्यात लोक प्रमाण है। असै भाव प्रति जघन्य - उत्कृष्ट भेद कहे।

मज्झिम दव्वं खेत्तं, कालं भावं च मज्झिमं णाणं।
जाणदि इदि मणपज्जवणाणं कहिदं समासेण ॥४५६॥

मध्यमद्रव्यं क्षेत्रं, कालं भावं च मध्यम ज्ञानम् ।
जानातीति मनःपर्ययज्ञानं कथितं समासेन ।।४५९।।

टीका — ऋजुमति अर विपुलमति का जघन्य भेद अर उत्कृष्ट भेद तो जघन्य वा उत्कृष्ट द्रव्य के क्षेत्र, काल, भावनि कौ जानै है । अर जे जघन्य अर उत्कृष्ट के मध्यवर्ती जे द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, तिनकौ ऋजुमति अर विपुलमति के जे मध्य भेद है, ते जानै है । ग्रैसे मन.पर्ययज्ञान सक्षेप करि कह्या है ।

संपुण्णं तु समग्गं, केवलमसवत्तसव्वभावगयं ।
लोयालोयवितिमिरं, केवलणाणं मुणेदव्वं ।।४६०।।

संपूर्णं तु समग्रं, केवलमसंपन्नं सर्वभावगतम् ।
लोकालोकवितिमिरं, केवलज्ञानं मंतव्यम् ।।४६०।।

टीका – जीव द्रव्य के शक्तिरूप जे सर्व ज्ञान के अविभाग प्रतिच्छेद थे, ते सर्व व्यक्त रूप भए, तातै सपूर्ण है । बहुरि ज्ञानावरणीय अर वीर्यांतराय नामा कर्म के सर्वथा नाशतै जिसकी शक्ति रुकै नाही है वा निश्चल है, तातै समग्र है । बहुरि इद्रियनि का सहाय करि रहित है, तातै केवल है । बहुरि प्रतिपक्षी च्यारि घाति कर्म के नाश तै अनुक्रम रहित सकल पदार्थनि विषै प्राप्त भया है, तातै असपन्न है । बहुरि लोका-लोक विषै अज्ञान अधकार रहित प्रकाशमान है । ग्रैसा अभेदरूप केवलज्ञान जानना ।

आगै ज्ञानमार्गणा विषै जीवनि की सख्या कहै है–

चदुगदिमदिसुदबोहा, पल्लासंखेज्जया हु मणपज्जा ।
संखेज्जा केवलिणो, सिद्धादो होंति अदिरित्ता ।।४६१।।

चतुर्गतिमतिश्रुतबोधाः, पल्यासंख्येया हि मनः पर्ययाः ।
संख्येयाः केवलिनः, सिद्धात् भवंति अतिरिक्ताः ।।४६१।।

टीका – च्यार्यो गति विषै मतिज्ञानी पल्य के असख्यातवे भाग प्रमाण है । बहुरि श्रुतज्ञानी भी पल्य के असंख्यातवे भाग प्रमाण है । बहुरि मन पर्यय ज्ञानी मनुष्य सख्याते है । बहुरि केवल ज्ञानी सिद्धराशि विषै तेरह्वा चौदह्वा गुणस्थानवर्ती जीवनिका का परिमाण मिलाए, जो होइ तीहिं प्रमाण है ।

टीका – नरलोक यहा असा वचन कह्या है, सो यहा मनुष्य लोक का विष्कंभ का जेता परिमाण है, सो लेना । अर मनुष्य लोक तौ गोल है । अर यहु विपुलमति का विषयभूत क्षेत्र समचतुरस्र घन-प्रतर कहिए, समान चौकोर घन रूप प्रतर क्षेत्र कह्या है, सो पैतालीस लाख योजन लबा, तितना ही चौडा असा परिमाण जानना । इहा ऊचाई थोडी है, ताते घन प्रतर कह्या है । जाते मानुषोत्तर पर्वत के बाह्य च्यारो कोणानि विषै तिष्ठते देव, तिर्यंच चितए हूवे तिनिकौ भी उत्कृष्ट विपुलमति मन पर्ययज्ञान जाने है, असे क्षेत्र प्रति जघन्य - उत्कृष्ट भेद कहे ।

दुग-तिग-भवा हु अवरं, सत्तट्ठभवा हवंति उक्कस्सं ।
अड-णवभवा हु अवरमसंखेज्जं विउलउक्कस्सं ॥४५७॥

द्विक-त्रिक-भवा हि अवरं, सप्ताष्टभवा भवंति उत्कृष्टम् ।
अष्ट-नव-भवा हि अवरमसंख्येय विपुलोत्कृष्टम् ॥४५७॥

टीका – काल करि ऋजुमति का विषय, जघन्यपनै अतीत - अनागत- रूप दोय, तीन भव है, उत्कृष्टतै सात, आठ भव है । बहुरि विपुलमति का विषय जघन्य आठ नव भव है, उत्कृष्ट पल्य का असख्यातवा भाग मात्र है । असे अतीत, अनागत अपेक्षा काल प्रति जघन्य उत्कृष्ट भेद कहे ।

आवलिअसंखभागं, अवरं च वरं च वरमसंखगुणं ।
तत्तो असंखगुणिदं, असंखलोगं तु विउलमदी ॥४५८॥

आवल्यसख्यभागमवर च वरं च वरमसख्यगुणम् ।
ततोऽसख्यातगुणितमसख्यलोक च विपुलमतिः ॥४५८॥

टीका – ऋजुमति का विषयभूत भाव जघन्यपनै आवली के असख्यातवे भाग प्रमाण है । उत्कृष्टपनै भी आवली के असख्यातवा भाग प्रमाण ही कहिए, तथापि जघन्य ते असख्यात गुणा है । बहुरि विपुलमति का विषयभूत भाव जघन्यपनै ऋजुमति का उत्कृष्ट ते असख्यात गुणा है । बहुरि उत्कृष्ट पनै असख्यात लोक प्रमाण है । असे भाव प्रति जघन्य - उत्कृष्ट भेद कहे ।

मज्झिम दव्वं खेत्तं, कालं भावं च मज्झिमं णाणं ।
जाणदि इदि मणपज्जवणाणं कहिदं समासेण ॥४५९॥

मध्यमद्रव्यं क्षेत्रं, कालं भावं च मध्यम ज्ञानम् ।
जानातीति मनःपर्ययज्ञानं कथितं समासेन ॥४५९॥

टीका — ऋजुमति अर विपुलमति का जघन्य भेद अर उत्कृष्ट भेद तो जघन्य वा उत्कृष्ट द्रव्य के क्षेत्र, काल, भावनि कौ जानै है। अर जे जघन्य अर उत्कृष्ट के मध्यवर्ती जे द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, तिनकौ ऋजुमति अर विपुलमति के जे मध्य भेद है, ते जानै है। असे मन पर्ययज्ञान सक्षेप करि कह्या है।

संपुण्णं तु समग्गं, केवलमसवत्तसव्वभावगयं ।
लोयालोयवितिमिरं, केवलणाणं मुणेदव्वं ॥४६०॥

संपूर्णं तु समग्रं, केवलमसंपन्नं सर्वभावगतम् ।
लोकालोकवितिमिरं, केवलज्ञानं मंतव्यम् ॥४६०॥

टीका – जीव द्रव्य के शक्तिरूप जे सर्व ज्ञान के अविभाग प्रतिच्छेद थे, ते सर्व व्यक्त रूप भए, तातै सपूर्ण है। बहुरि ज्ञानावरणीय अर वीर्यातराय नामा कर्म के सर्वथा नाशतै जिसकी शक्ति रुकै नाही है वा निश्चल है, तातै समग्र है। बहुरि इद्रियनि का सहाय करि रहित है, तातै केवल है। बहुरि प्रतिपक्षी च्यारि घाति कर्म के नाश तै अनुक्रम रहित सकल पदार्थनि विषै प्राप्त भया है, तातै असपन्न है। बहुरि लोका-लोक विषै अज्ञान अधकार रहित प्रकाशमान है। असा अभेदरूप केवलज्ञान जानना।

आगै ज्ञानमार्गणा विषै जीवनि की सख्या कहै है–

चदुगदिमदिसुदबोहा, पल्लासंखेज्जया हु मणपज्जा ।
संखेज्जा केवलिणो, सिद्धादो होंति अदिरित्ता ॥४६१॥

चतुर्गतिमतिश्रुतबोधाः, पल्यासंख्येया हि मनः पर्यायाः ।
संख्येयाः केवलिनः, सिद्धात् भवंति अतिरिक्ताः ॥४६१॥

टीका – च्यार्यो गति विषै मतिज्ञानी पल्य के असख्यातवे भाग प्रमाण है। बहुरि श्रुतज्ञानी भी पल्य के असंख्यातवे भाग प्रमाण है। बहुरि मन पर्यय ज्ञानी मनुष्य सख्याते है। बहुरि केवल ज्ञानी सिद्धराशि विषै तेरह्वा चौदह्वा गुणस्थानवर्ती जीवनिका का परिमाण मिलाए, जो होइ तीहिं प्रमाण है।

ओहिरहिदा तिरिक्खा, मदिणाणिअसंखभागगा मणुगा ।
संखेज्जा हु तदूणा, मदिणाणी ओहिपरिमाणं ॥४६२॥

अवधिरहिताः तिर्यंचः, मतिज्ञान्यसंख्यभागका मनुजाः ।
सख्येया हि तदूनाः, मतिज्ञानिनः अवधिपरमाणम् ॥४६२॥

टीका – अवधिज्ञान रहित तिर्यंच, मतिज्ञानी जीवनि की सख्या कही। तीहि के असख्यातवे भाग प्रमाण है । बहुरि अवधिज्ञान रहित मनुष्य सख्यात है, ए दोऊ राशि मतिज्ञानी जीवनि की जो सख्या कही थी, तिसमै स्यो घटाइ दीए जो अवशेष प्रमाण रहै, तितने च्यार्यो गति सबधी अवधिज्ञानी जीव जानने ।

पल्लासंखघणंगुल-हद-सेढि-तिरिक्ख-गदि-विभंगजुदा ।
णर-सहिदा किंचूणा, चदुगदि-वेभंगपरिमाणं ॥४६३॥

पल्यासंख्यघनागुलहतश्रेणितिर्यग्गतिविभगयुताः ।
नरसहिताः किंचिदूनाः, चतुर्गतिवैभंगपरिमाणम् ॥४६३॥

टीका – पल्य का असख्यातवा भाग गुणित घनागुल करि जगच्छ्रेणी कौं गुणिए, जो प्रमाण होइ, तितने तौ तिर्यंच । बहुरि सख्याते मनुष्य । बहुरि घनागुल का द्वितीय मूल करि जगच्छ्रेणी कौ गुणिए, तितना नारकीनि का प्रमाण है । तामैं सम्यग्दृष्टी नारकी जीवनि का परिमाण घटाए, जो अवशेष रहै, तितना नारकी। बहुरि ज्योतिषी देवनि का परिमाण विषै भवनवासी, व्यतर, वैमानिक देवनि का परिमाण मिलाए, सामान्य देवराशि होइ । तामै सम्यग्दृष्टी देवनि का परिमाण घटाए, जो अवशेष रहै, तितने देव, इनि सबनि का जोड दीए, जो प्रमाण होइ, तितने च्यार्यो गति सबधी विभगज्ञानी जानने ।

सण्णाण-रासि-पंचय-परिहीणो सव्वजीवरासी हु ।
मदिसुद-अण्णाणीणं, पत्तेयं होदि परिमाणं ॥४६४॥

सज्ज्ञानराशिपंचकपरिहीनः सर्वजीवराशिर्हि ।
मतिश्रुताज्ञानिनां, प्रत्येकं भवति परिमाणम् ॥४६४॥

टीका – सम्यग्ज्ञान पाच, तिनिकरि सयुक्त जीवनि का परिमाण किछू अधिक केवलज्ञानी जीवनि का परिमाण मात्र, सो सर्व जीवराशि का परिमाण विषै घटाए, जो अवशेष परिमाण रहै, तितने कुमतिज्ञानी जीव जानने । बहुरि तितने ही कुश्रुतज्ञानी जीव जानने ।

इति आचार्य श्रीनेमिचद्र विरचित गोम्मटसार द्वितीय नाम पचसग्रह ग्रथ की जीवतत्त्वप्रदीपिका
नाम सस्कृतटीका के अनुसारि सम्यग्ज्ञानचद्रिका नामा इस भाषा टीका विषै जीवकाड
विषै प्ररूपित जे बीस प्ररूपणा, तिनिविषै ज्ञानमार्गणा प्ररूपणा नामा
बारह्वा अधिकार सपूर्ण भया ।।१२।।

—·o —

तेरहवां अधिकार : संयममार्गणा

विमल करत निज गुणनि तैं, सब कौं विमल जिनेश ।
विमल हौंन कौं मैं नमौं, अतिशय जुत तीर्थेश ।।

अथ ज्ञानमार्गणा का प्ररूपण करि, अब सयममार्गणा कहै है —

वद-समिदि-कसायाणं, दंडाणं तहिंदियाण पंचण्हं ।
धारण-पालण- णिग्गह-चाग-जओ संजमो भणियो ।।४६५।।[1]

व्रतसमितिकषायाणां, दंडानां तथेंद्रियाणां पंचानाम् ।
धारणपालननिग्रहत्यागजयः संयमो भणितः ।।४६५।।

टीका – अहिंसा आदि व्रतनि का धारना, ईर्या आदि समितिनि का पालना, क्रोध आदि कषायनि का निग्रह करना, मन, वचन, कायरूप दड का त्याग करना, स्पर्शन आदि पाच इद्रियनि का जीतना असैं व्रतादिक पचनि का जो धारणादिक, सोई पच प्रकार सयम जाना । सं – कहिए सम्यक् प्रकार, जो यम कहिए नियम, सो सयम है ।

बादरसंजलणुदये, सुहुमुदये समखये य मोहस्स ।
संजमभावो णियमा, होदि त्ति जिणेहिं णिद्दिट्ठं ।।४६६।।

बादरसंज्वलनोदये, सूक्ष्मोदये शमक्षययोश्च मोहस्य ।
संयमभावो नियमात् भवतीति जिनैर्निर्दिष्टम् ।।४६६।।

टीका – बादर सज्वलन का उदय होत सतैं, बहुरि सूक्ष्म लोभ का उदय होत सतैं, बहुरि मोहनीय का उपशम होत सतैं वा मोहनीय का क्षय होत सतैं निश्चय करि सयम भाव हो है । असैं जिनदेवनैं कह्या है ।

तहा प्रमत्त - अप्रमत्त गुणस्थाननि विषै सज्वलन कषायनि के जे सर्वघाती स्पर्धक है, तिनिका उदय नाही, सो तो क्षय है । बहुरि उदय निषेकनि तैं ऊपरवर्ती

---

१. षट्खडागम – धवला पुस्तक १, पृष्ठ १४६, गाथा स ९२ ।

जे निषेक, तिनिका उदय नाही, सोई उपशम। बहुरि बादर संज्वलन के जे देश घातिया स्पर्धक सयम के अविरोधी तिनिका उदय, असै क्षयोपशम होतै सामायिक, छेदोपस्थापना, परिहारविशुद्धि ए तीन सयम हो है।

बहुरि सूक्ष्मकृष्टि करनेरूप जो अनिवृत्तिकरण, तीहि पर्यंत बादर सज्वलन के उदय करि अपूर्वकरण अर अनिवृत्तिकरण गुणस्थाननि विषै सामायिक अर छेदोपस्थापना दोय ही सयम हो है। बहुरि सूक्ष्मकृष्टि कौ प्राप्त हूवा, असा जो सज्वलन लोभ, ताके उदय करि दशवे गुणस्थान सूक्ष्मसापराय सयम हो है।

बहुरि सर्व चारित्र मोहनीय कर्म के उपशमतै वा क्षय तै यथाख्यात सयम हो है। तहा ग्यारहवे गुणस्थान उपशम यथाख्यात हो है। बारहवै, तेरहवै, चौदहवै क्षायिक यथाख्यात हो है।

इस ही अर्थ कौ दोय गाथानि करि कहै है —

बादरसंजलणुदये, बादरसंजमतियं खु परिहारो।
पमदिदरे सुहुमुदये, सुहुमो संजमगुणो होदि ॥४६७॥

बादरसज्वलनोदये, बादरसयमत्रिकं खलु परिहारः।
प्रमत्तेतरस्मिन् सूक्ष्मोदये सूक्ष्मः संयमगुणो भवति ॥४६७॥

टीका — बादर सज्वलन का देशघाती स्पर्धक ते सयम के विरोधी नाही, तिनके उदय करि सामायिक, छेदोपस्थापना, परिहारविशुद्धि ए तीन सयम हो है। तहा परिहारविशुद्धि तौ प्रमत्त - अप्रमत्त दोय गुणस्थाननि विषै ही हो है। अर सामायिक छेदोपस्थापना प्रमत्तादि अनिवृत्तिकरण पर्यंत च्यारि गुणस्थाननि विषै हो है। बहुरि सूक्ष्मकृष्टि कौ प्राप्त हूवा सज्वलन लोभ, ताके उदय करि सूक्ष्मसापराय नामा सयम गुण हो है।

जहखादसंजमो पुण, उवसमदो होदि मोहणीयस्स।
खयदो वि य सो णियमा, होदि त्ति जिणेहिं णिदिट्ठं ॥४६८॥

यथाख्यातसंयमः पुनः, उपशमतो भवति मोहनीयस्य।
क्षयतोऽपि च स नियमात्, भवतीति जिनैर्निर्दिष्टम् ॥४६८॥

टीका – बहुरि यथाख्यात सयम है, सो निश्चय करि मोहनीयकर्म के सर्वथा उपशम तै वा क्षय तै हो है, असै जिनदेवनि करि कह्या है ।

तदियकसायुदयेण य विरदाविरदो गुणो हवे जुगवं ।
बिदियकसायुदयेण य, असंजमो होदि णियमेण ॥४६९॥

तृतीयकषायोदयेन च, विरताविरतो गुणो भवेद्युगपत् ।
द्वितीयकषायोदयेन च, असयमो भवति नियमेन ॥४६९॥

टीका – तीसरा प्रत्याख्यान कषाय का उदय करि युगपत् विरत - अविरतरूप सयमासयम हो है । जैसै तीसरे गुणस्थान सम्यक्त्व - मिथ्यात्व मिलै ही हो है। तैसै पचमगुणस्थान विषै सयम - असयम दोऊ मिश्ररूप हो है । तातै यहु मिश्र सयमी है । बहुरि दूसरा अप्रत्याख्यान कषाय के उदय करि असयम हो है । असै सयम मार्गणा के सात भेद कहे ।

संगहिय सयलसंजममेयजममणुत्तरं दुरवगम्मं ।
जीवो समुव्वहंतो, सामाइयसंजमो होदि ॥४७०॥[१]

सगृह्य सकलसंयममेकयममनुत्तरं दुरवगम्यम् ।
जीवः समुद्वहन्, सामायिकसंयमो भवति ॥४७०॥

टीका – समस्त ही व्रतधारणादिक पच प्रकार सयम कौ सग्रह करि **एकयम** कहिए मै सर्व सावद्य का त्यागी हौ, असा **एकयमं** कहिए सकल सावद्य का त्यागरूप अभेद सयम, सोई सामायिक जानना ।

कैसा है सामायिक ? **अनुत्तरं** कहिए जाके समान और नाही, सपूर्ण है । बहुरि **दुरवगम्यं** कहिए दुर्लभपनै पाइए है, सो असै सामायिक कौ पालता जीव सामयिक सयमी हो है ।

छेत्तूण य परियायं, पोराणं जो ठवेइ अप्पाणं ।
पंचजमे धम्मे सो, छेदोवट्ठावगो जीवो ॥४७१॥[२]

---

१ षट्खडागम–धवला पुस्तक १, पृष्ठ ३७४, गाथा स १८७ ।
२ षट्खडागम–धवला पुस्तक १, पृष्ठ ३७४, गाथा स १८८ ।

छित्वा च पर्यायं, पुराणं यः स्थापयति आत्मानम् ।
पंचयमे धर्मे स, छेदोपस्थापको जीवः ।।४७१।।

टीका – सामायिक चारित्र कौ धारि, बहुरि प्रमाद तै स्खलित होइ, सावद्य क्रिया कौ प्राप्त हूवा असा जो जीव, पहिले भया जो सावद्यरूप पर्याय ताका प्रायश्चित्त विधि तै छेदन करि अपने आत्मा कौ व्रतधारणादि पच प्रकार सयमरूप धर्म विषै स्थापन करै, सोई छेदोपस्थापन सयमी जानना ।

छेद कहिए प्रायश्चित्त तीहिकरि उपस्थापन कहिए धर्म विषै आत्मा कौ स्थापना, सो जाकै होइ, अथवा छेद कहिए अपने दोष दूर करने के निमित्त पूर्वै कीया था तप, तिसका उस दोष के अनुसारि विच्छेद करना, तिसकरि उपस्थापन कहिए निर्दोष सयम विषै आत्मा कौ स्थापना, सो जाकै होइ, सो छेदोपस्थापन सयमी है ।

अपना तप का छेद हो है, उपस्थापन जाकै, सो छेदोपस्थापन है, असी निरुक्ति जानना ।

पंच-समिदो ति-गुत्तो परिहरइ सदा वि जो हु सावज्जं ।
पंचेक्कजमो पुरिसो, परिहारयसंजदो सो हु[२] ।।४७२।।[१]

पंचसमितः त्रिगुप्तः, परिहरति सदापि यो हि सावद्यम् ।
पंचैकयमः पुरुषः, परिहारकसंयतः स हि ।।४७२।।

टीका – पच समिति, तीन गुप्ति करि सयुक्त जो जीव, सदा काल हिंसारूप सावद्य का परिहार करै, सो पुरुष सामायिकादि पच सयमनि विषै परिहारविशुद्धि नामा सयम का धारी प्रकट जानना ।

तीसं वासो जम्मे, वासपुधत्तं खु तित्थयरमूले ।
पंचक्खाणं पढिदो, संझूणदुगाउयविहारो ।।४७३।।

त्रिंशद्वार्षो जन्मनि, वर्षपृथक्त्वं खलु तीर्थंकरमूले ।
प्रत्याख्यानं पठितः, संध्योनद्विगव्यूतिविहारः ।।४७३।।

---

१ षट्खडागम – धवला पुस्तक १, पृष्ठ ३७४, गाथा स. १८६
२ पाठभेद — पच–जमेय–जमो वा ।

टीका – जो जन्म तै तीस वर्ष का भया होइ। बहुरि सर्वदा खानपानादि से सुखी होइ, अैसा पुरुष दीक्षा को अगीकार करि पृथक्त्व वर्ष पर्यंत तीर्थकर के पाद मूल प्रत्याख्यान नामा नवमा पूर्व का पाठी होइ, सो परिहारविशुद्धि सयम कौं अगीकार करि, तीनूं सध्या काल विना सर्व काल विषै दोय कोस विहार करै। अर रात्रि विषै विहार न करै। वर्षा काल विषै किछू नियम नाही, गमन करै वा न करै, अैसा परिहारविशुद्धि सयमी हो है।

परिहार कहिए प्राणीनि की हिसा का त्याग, ताकरि विशेषरूप जो **शुद्धि** कहिए शुद्धता, जाविषै होइ, सो परिहारविशुद्धि सयम जानना।

इस सयम का जघन्य काल तौ अतर्मुहूर्त है, जातै कोई जीव अतर्मुहूर्तमात्र तिस सयम कौं धारि, अन्य गुणस्थान को प्राप्त होइ, तहा सो सयम रहै नाही, तातै जघन्य काल अतर्मुहूर्त कह्या।

बहुरि उत्कृष्ट काल अडतीस वर्ष घाटि कोडि पूर्व है। जातै कोई जीव कोडि पूर्व का धारी तीस वर्ष का दीक्षा ग्रहि, आठ वर्ष पर्यंत तीर्थंकर के निकटि पढै, तहा पीछै परिहारविशुद्धि सयम कौ अगीकार करै, तातै उत्कृष्टकाल अडतीस वर्ष घाटि कोडि पूर्व कह्या।

उक्तं च—

परिहारर्धिसमेतो जीवः षट्कायसंकुले विहरन्।
पयसेव पद्मपत्रं, न लिप्यते पापनिवहेन॥

याका अर्थ – परिहार विशुद्धि ऋद्धि करि सयुक्त जीव, छह कायरूप जीवनि का समूह विषै विहार करता जल करि कमल पत्र की नाई पाप करि लिप्त न होइ।

अणुलोहं वेदंतो, जीवो उवसामगो व खवगो वा।
सो सुहुमसंपराओ, जहखादेणूणओ किंचि[1] ॥४७४॥

अणुलोभं विदन् जीवः उपशामको वा क्षपको वा।
स सूक्ष्मसांपरायः यथाख्यातेनोनः किंचित् ॥४७४॥

---

१ षट्खडागम – धवला पुस्तक १, पृष्ठ ३७५ गाथा स १९०।

टीका – जो जन्म तै तीस वर्ष का भया होइ । बहुरि सर्वदा खानपानादि से सुखी होइ, असा पुरुष दीक्षा कौ अगीकार करि पृथक्त्व वर्ष पर्यंत तीर्थंकर के पाद मूल प्रत्याख्यान नामा नवमा पूर्व का पाठी होइ, सो परिहारविशुद्धि सयम कौ अगीकार करि, तीनूं सध्या काल विना सर्व काल विषै दोय कोस विहार करै । अर रात्रि विषै विहार न करै । वर्षा काल विषै किछू नियम नाही, गमन करै वा न करै, असा परिहारविशुद्धि सयमी हो है ।

परिहार कहिए प्राणीनि की हिसा का त्याग, ताकरि विशेषरूप जो **शुद्धि** कहिए शुद्धता, जाविषै होइ, सो परिहारविशुद्धि सयम जानना ।

इस सयम का जघन्य काल तौ अतर्मुहूर्त है, जातै कोई जीव अतर्मुहूर्तमात्र तिस सयम कौ धारि, अन्य गुणस्थान को प्राप्त होइ, तहा सो सयम रहै नाही, तातै जघन्य काल अतर्मुहूर्त कह्या ।

बहुरि उत्कृष्ट काल अडतीस वर्ष घाटि कोडि पूर्व है । जातै कोई जीव कोडि पूर्व का धारी तीस वर्ष का दीक्षा ग्रहि, आठ वर्ष पर्यंत तीर्थंकर के निकटि पढै, तहा पीछै परिहारविशुद्धि सयम कौ अगीकार करै, तातै उत्कृष्टकाल अडतीस वर्ष घाटि कोडि पूर्व कह्या ।

उक्तं च—

> **परिहारर्धिसमेतो जीवः षट्कायसंकुले विहरन् ।**
> **पयसेव पद्मपत्रं, न लिप्यते पापनिवहेन ॥**

याका अर्थ – परिहार विशुद्धि ऋद्धि करि सयुक्त जीव, छह कायरूप जीवनि का समूह विषै विहार करता जल करि कमल पत्र की नाई पाप करि लिप्त न होइ ।

अणुलोहं वेदंतो, जीवो उवसामगो व खवगो वा ।
सो सुहुमसंपराओ, जहखादेणूणओ किंचि[1] ॥४७४॥

अणुलोभं विदन् जीवः उपशामको वा क्षपको वा ।
स सूक्ष्मसांपरायः यथाख्यातेनोनः किंचित् ॥४७४॥

---

१ षट्खडागम – धवला पुस्तक १, पृष्ठ ३७५ गाथा स १९० ।

टीका — सूक्ष्मकृष्टि कौ प्राप्त भया लोभ कषाय का अनुभाग, ताके उदय कौ भोगवता उपशमी वा क्षायिकी जीव, सो सूक्ष्म है सांपराय कहिए कषाय जाकै, ऐसा सूक्ष्मसापराय संयमी जानना । सो यहु यथाख्यात संयमी जे महामुनि, तिनितै किछू एक घाटि जानना, स्तोकसा ही अतर है ।

उवसंते खीणे वा, असुहे कम्मम्मि मोहणीयम्मि ।
छदुमट्ठो वा जिणो वा, जहखादो संजदो सो दु[1] ॥४७५॥

उपशांते क्षीणे वा अशुभे कर्मणि मोहनीये ।
छद्मस्थो वा जिनो वा, यथाख्यातः संयतः स तु ॥४७५॥

टीका – अशुभरूप मोहनीय नामा कर्म, सो उपशम होतै वा क्षयरूप होतै उपशांत कषाय गुणस्थानवर्ती वा क्षीणकषाय गुणस्थानवर्ती छद्मस्थ होइ अथवा सयोगी अयोगी जिन होइ, सोई यथाख्यात सयमी जानना । मोहनीय कर्म के सर्वथा उपशम तै वा नाशतै जो यथावस्थित आत्मस्वभाव की अवस्था, सोई है लक्षण जाका, ऐसा यथाख्यात चारित्र कहिए है ।

पंच-तिहिं-चउ-विहेहिं य, अणु-गुण-सिक्खा-वएहिं संजुत्ता ।
उच्चंति देस-विरया सम्माइट्ठी झलिय-कम्मा[2] ॥४७६॥

पंचत्रिचतुर्विधैश्च, अणुगुणशिक्षाव्रतैः संयुक्ताः ।
उच्यंते देशविरताः सम्यग्दृष्टयः झरितकर्माणः ॥४७६॥

टीका – पाच अणुव्रत, तीन गुणव्रत, च्यारि शिक्षाव्रत ऐसै बारह व्रतनि करि सयुक्त जे सम्यग्दृष्टी, कर्म निर्जरा के धारक, ते देशविरती सयमासयम के धारक परमागम विषै कहिए है ।

दंसण-वय-सामाइय, पोसह-सच्चित्त-रायभत्ते य ।
बह्मारंभ-परिग्गह, अणुमणमुद्दिट्ठ-देसविरदेदे[3] ॥४७७॥

दर्शनव्रतसामायिकाः प्रोषधसचित्तरात्रिभक्ताश्च ।
ब्रह्मारंभपरिग्रहानुमतोद्दिष्टदेशविरता एते ॥४७७॥

---

१ षट्खडागम–धवला पुस्तक १, पृष्ठ ३७५, गाथा स १९१ ।
२ षट्खडागम–धवला पुस्तक १, पृष्ठ ३७५, गाथा स १९२ ।
३. षट्खडागम–धवला पुस्तक १, पृष्ठ ३७५, गाथा स १९३ ।

टीका – नाम के एक देश तै सर्व नाम का ग्रहण करना, इस न्याय करि इस गाथा का अर्थ कीजिए है । १ दर्शनिक, २ व्रतिक, ३ सामायिक, ४ प्रोपधोपवास, ५ सचित्तविरत, ६ रात्रिभोजनविरत, ७ ब्रह्मचारी, ८ आरभविरत, ९ परिग्रह विरत, १० अनुमति विरत, ११ उद्दिष्ट विरत ऐसै ग्यारह प्रतिमा की अपेक्षा देशविरत के ग्यारह भेद जानने । तहा पाच उदुबरादिक अर सप्त व्यसननि कौ त्यागै अर शुद्ध सम्यक्त्वी होइ, सो दर्शनिक कहिए । पच अणुव्रतादिक कौ धारै, सो व्रतिक कहिए । नित्य सामायिक क्रिया जाकै होइ, सो सामायिक कहिए । अवश्य पर्वनि विषै उपवास जाकै होइ, सो प्रोषधोपवास कहिए । जीव सहित वस्तु सेवन का त्यागी होइ, सो सचित्त विरत कहिए । रात्रि विषै भोजन न करै सो रात्रिभक्त विरत कहिए । सदा काल शील पालै, सो ब्रह्मचारी कहिए । पाप आरभ कौ त्यागै, सो आरभ विरत कहिए । परिग्रह के कार्य को त्यागै, सो परिग्रह विरत कहिए । पाप की अनुमोदना कौ त्यागै, सो अनुमति विरत कहिए । अपने निमित्त भया आहारादिक कौं त्यागै, सो उद्दिष्ट विरत कहिए । इनिका विशेष वर्णन ग्रथातर से जानना ।

जीवा चोद्दस-भेया, इंदिय-विसया तहट्ठवीसं तु ।
जे तेसु णेव विरया, असंजदा ते मुणेदव्वा[1] ॥४७८॥

जीवाश्चतुर्दशभेदा, इंद्रियविषयास्तथाष्टविंशतिस्तु ।
ये तेषु नैव विरता, असयताः ते मंतव्याः ॥४७८॥

टीका – चौदह जीवसमास रूप भेद, बहुरि तैसै ही अट्ठाईस इद्रियनि के विषय, तिनिविषै जे विरत न होई, जीवनि की दया न करै, विषयनि विषै रागी होइ, ते असयमी जानने ।

पंच-रस-पंच-वण्णा, दो गंधा अट्ठ-फास-सत्त-सरा ।
मणसहिदट्ठावीसा, इंदीयविसया मुणेदव्वा ॥४७९॥

पंचरसपंचवर्णाः, द्वौ गंधौ अष्टस्पर्शसप्तस्वराः ।
मनःसहिताः अष्टविंशतिः इंद्रियविषयाः मंतव्याः ॥४७९॥

---

१ षट्खडागम–धवला पुस्तक १, पृष्ठ ३७५, गाथा स १९४ ।

टीका – तीखा, कडवा, कसायला, खाटा, मीठा ए पाच रस । बहुरि सुफेद, पीला, हरचा, लाल, काला ए पाच वर्ण । बहुरि सुगध, दुर्गंध, ए दोय गध । बहुरि कोमल, कठोर, भारचा, हलका, सीला (ठडा), ताता, रूखा, चिकना ए आठ स्पर्श । बहुरि षडज, ऋषभ, गाधार, मध्यम, पचम, धैवत, निषाद ए सात स्वर असैं इंद्रियनि के सत्ताईस विषय अर अनेक विकलपरूप एक मन का विषय, असैं विषय के भेद अट्ठाईस जानने ।

आगै संयम मार्गणा विषै जीवनि की संख्या कहै है–

पमदादि-चउण्हं जुदी, सामयिय-दुगं कमेण सेस-तियं ।
सत्त-सहस्सा णव-सय, णव-लक्खा तीहिं परिहीणा ।।४८०।।

प्रमत्तादिचतुर्णां युतिः, सामायिकद्विकं क्रमेण शेषत्रिकम् ।
सप्तसहस्राणि नवशतानि, नवलक्षाणि त्रिभिः परिहीनानि ।।४८०।।

टीका – प्रमत्तादि च्यारि गुणस्थानवर्ती जीवनि का जोड दीए, जो प्रमाण होइ, तितना जीव सामायिक अर छेदोपस्थापना सयम के धारक जानने । तहा प्रमत्तवाले पाच कोडि, तिराणवै लाख अठ्याणवै हजार दोय सै छह (५९३९८२०६), अप्रमत्तवाले दोय कोडि छिनवै लाख निन्याणवै हजार एक सै तीन (२९६९९१०३) अपूर्व करण वाले उपशमी दोय सै निन्याणवै (२९९), पाच सौ अठ्याणवै क्षायिकी, अनिवृत्ति करणवाले उपशमी २९९, क्षायिकी पाच सो अठयाणवै (५९८) इनि सबनिका जोड दीए, आठ कोडि निव्वे लाख निन्याणवै हजार एक सै तीन भया (८९०९९१०३) सो इतने जीव सामायिक सयमी जानने । अर इतने ही जीव छेदोपस्थापना सयमी जानने । बहुरि अवशेष तीन सयमी रहे, तहा परिहारविशुद्धि सयमी तीन घाटि सात हजार (६९९७) जानने । सूक्ष्म सापराय सयमी तीन घाटि नवसे (८९७) जानने । यथाख्यात सयमी तीन घाटि नव लाख (८९९९९७) जानने ।

पल्लासंखेज्जदिमं, विरदाविरदाण दव्वपरिमाणं ।
पुव्वुत्तरासिहीणा, संसारी अविरदाण पमा ।।४८१।।

पल्यासंख्येयं, विरताविरतानां द्रव्यपरिमाणम् ।
पूर्वोक्तराशिहीनाः, संसारिणः अविरताना प्रमा ।।४८१।।

टीका -- पल्य के असख्यात भाग करिए, तामै एक भाग प्रमाण सयमासयम का धारक जीव द्रव्यनि का प्रमाण है । बहुरि ए कहे जे छहौ सयम के धारक जीव, तिनका ससारी जीवनि का प्रमाण मे स्यो घटाए, जो अवशेष प्रमाण रहै, सोई असयमी जीवनि का प्रमाण जानना ।

इति श्री आचार्य नेमिचद्र विरचित गोम्मटसार द्वितीयनाम पचसग्रह ग्रथ की जीवतत्वप्रदीपिका नाम सस्कृत टीका के अनुसारि सम्यग्ज्ञान चद्रिका नामा भाषाटीका विषै जीवकाण्ड विषै प्ररूपित बीस प्ररूपणा तिनिविषैं सयममार्गणा प्ररूपणा है नाम जाका ऐसा तेरह्वा अधिकार सपूर्ण भया ।।१३।।

चौदहवां अधिकार : दर्शनमार्गणा

इस अनन्त भव उदधितै, पार करनकौं सेतु ।
श्री अनंत जिनपति नमौं, सुख अनन्त के हेतु ।।

आगे दर्शनमार्गणा कौ कहै है–

जं सामण्णं गहणं, भावाणं णेव कट्टुमायारं ।
अविसेसिदूण अट्ठे, दंसणमिदि भण्णदे समये ।।४८२।।[1]

यत्सामान्यं ग्रहणं, भावानां नैव कृत्वाकारम् ।
अविशेष्यार्थान्, दर्शनमिति भण्यते समये ।।४८२।।

टीका – भाव जे सामान्य विशेषात्मक पदार्थ, तिनिका आकार कहिए भेद ग्रहण, ताहि **नैव कृत्वा** कहिए न करिकै **यत् सामान्यं ग्रहणं** कहिए जो सत्तामात्र स्वरूप का प्रतिभासना **तत् दर्शनं** कहिए सोई दर्शन[2] परमागम विषै कह्या है । कैसे ग्रहण करै है ? **अर्थान् अविशेष्य** अर्थ जे बाह्य पदार्थ, तिनिकौ अविशेष्य कहिए जाति, क्रिया, गुण, प्रकार इत्यादि विशेष न करिकै अपना वा अन्य का केवल सामान्य रूप सत्तामात्र ग्रहण करै है ।

इस ही अर्थ कौ स्पष्ट करै है—

भावाणं सामण्णविसेसयाणं सरूवमेत्तं जं ।
वण्णणहीणग्गहणं, जीवेण य दंसणं होदि ।।४८३।।

भावानां सामान्यविशेषकानां स्वरूपमात्रं यत् ।
वर्णनहीनग्रहणं, जीवेन च दर्शनं भवति ।।४८३।।

टीका – सामान्य विशेषात्मक जे पदार्थ, तिनिका स्वरूप मात्र भेद रहित, जैसै है तैसै जीव करि सहित स्वपर सत्ता का प्रकाशना, सो दर्शन है । जो देखै वा जा करि देखिए वा देखने मात्र, सो दर्शन जानना ।

---

१ षट्खडागम–धवला पुस्तक १, पृष्ठ १५०, गाथा स ९३, द्रव्यसग्रह गाथा स ४३ ।

२. दर्शन सबधी विशेष स्पष्टीकरण के लिए देखो–धवला पुस्तक १, पृष्ठ १४६ से १४९ तक ।

आगे चक्षु – अचक्षु दर्शन के लक्षण कहै है—

चक्खूण जं पयासइ, दिस्सइ तं चक्खु-दंसणं बेंति ।
सेसिंदिय-प्पयासो, णायव्वो सो अचक्खू त्ति[1] ॥४८४॥

चक्षुषोः यत्प्रकाशते, पश्यति तत् चक्षुर्दर्शनं ब्रुवंति ।
शेषेंद्रियप्रकाशो, ज्ञातव्यः स अचक्षुरिति ॥४८४॥

टीका – नेत्रनि का सबधी जो सामान्य ग्रहण, सो जो प्रकाशिए, देखिए या-करि वा तिस नेत्र के विषय का प्रकाशन, सो चक्षुदर्शन गणधरादिक कहैं हैं । बहुरि नेत्र बिना च्यारि इद्रिय अर मन का जो विषय का प्रकाशन, सो अचक्षुदर्शन है, ऐसा जानना ।

परमाणु-आदियाइं, अंतिम-खंधं त्ति मुत्ति-दव्वाइं ।
तं ओहि-दंसणं पुण, जं पस्सइ ताइ पच्चक्खं[2] ॥४८५॥

परमाण्वादीनि, अंतिमस्कंधमिति मूर्तद्रव्याणि ।
तदवधिदर्शनं पुनः, यत् पश्यति तानि प्रत्यक्षम् ॥४८५॥

टीका – परमाणु आदि महास्कध पर्यंत जे मूर्तीक द्रव्य, तिनिकौं जो प्रत्यक्ष देखै, सो अवधिदर्शन है ।

बहुविह बहुप्पयारा, उज्जोवा परिमियम्मि खेत्तम्मि ।
लोगालोग वितिमिरो, जो केवलदंसणुज्जोओ[3] ॥४८६॥

बहुविधबहुप्रकारो, उद्योताः परिमिते क्षेत्रे ।
लोकालोकवितिमिरो, यः केवलदर्शनोद्योतः ॥४८६॥

टीका – बहुत भेद कौं लीए बहुत प्रकार के चद्रमा, सूर्य, रत्नादिक सबधी उद्योत जगत विषै है । ते परिमित जो मर्यादा लीए क्षेत्र, तिस विषै ही अपने प्रकाश

---

१ षट्खडागम–धवला पुस्तक १, पृ ३८४, गा स १९५, १९६ तथा देखो पृ ३०० से ३८२ तक ।
२ षट्खडागम–धवला पुस्तक १, गाथा स १९६, पृष्ठ ३८४ ।
३ षट्खडागम–धवला पुस्तक १, गा स. १९७, पृ ३८४ ।

करने कौ समर्थ है। तातै तिनि प्रकाशनि की उपमा देने योग्य नाही, ऐसा समस्त लोक अर अलोक विषै अधकार रहित केवल प्रकाशरूप केवलदर्शन नामा उद्योत जानना।

आगै दर्शनमार्गणा विषै जीवनि की सख्या दोय गाथानि करि कहै है–

जोगे चउरक्खाणं, पंचक्खाणं च खीणचरिमाणं।
चक्खूणमोहिकेवलपरिमाणं ताण णाणं च ॥४८७॥

योगे चतुरक्षाणां, पंचाक्षाणां च क्षीणचरमाणाम्।
चक्षुषामवधिकेवलपरिमाणं तेषां ज्ञानं च ॥४८७॥

टीका – मिथ्यादृष्टि आदि क्षीणकषाय गुणस्थान पर्यंत चक्षुदर्शन ही है। तिनके दोय भेद है–एक शक्तिरूप चक्षुदर्शनी, एक व्यक्तिरूप चक्षुदर्शनी। तहा लब्धि अपर्याप्तक चौइद्री अर पचेद्री तौ, शक्तिरूप चक्षुदर्शनी है, जातै नेत्र इद्रिय पर्याप्ति की पूर्णता अपर्याप्त अवस्था विषै नाही है। तातै तहा प्रगटरूप चक्षुदर्शन न प्रवर्तै है। बहुरि पर्याप्तक चौइद्री अर पचेद्री व्यक्तरूप चक्षुदर्शनी है, जातै तहा प्रकटरूप चक्षुदर्शन है। तहा बेद्री, तेद्री, चौइद्री, पचेद्री आवली का असख्यातवा भाग प्रतरागुल कौ दीए, जो प्रमाण आवै, ताका भाग जगत्प्रतर कौ दीए, जो प्रमाण होइ, तितने है, तो चौइद्री, पचेद्री कितने है ? ऐसै प्रमाण राशि च्यारि, फलराशि त्रसनि का प्रमाण, इच्छाराशि दोय, तहा इच्छा कौ फलराशि करि गुणि, प्रमाण का भाग दीए, जो प्रमाण होइ, तितना चौइद्री, पचेद्री राशि है। तहा बेंद्री आदि क्रम तै घटते है। तातै किंचिदून करि बहुरि तिस विषै पर्याप्त जीवनि का प्रमाण घटावना। तातै तिस प्रमाण मे स्यो भी किछू घटाये जो प्रमाण होइ, तितना शक्तिगत चक्षुदर्शनी जानने। बहुरि ऐसै ही त्रस पर्याप्त जीवनि का प्रमाण कौ च्यारि का भाग देइ, दो गुणा करि, तामैं किंचिदून कीए जो प्रमाण होइ, तितना व्यक्तिरूप चक्षुदर्शनी है। इद्रियमार्गणा विषै जो चौइद्री, पचेद्रिय जीवनि का प्रमाण कह्या है, तिनकौ मिलाए चक्षुदर्शनी जीवनि का प्रमाण हो है।

बहुरि अवधिदर्शनी जीवनि का प्रमाण अवधिज्ञानी जीवनि का परिमाण कै समान जानना।

बहुरि केवलदर्शनी जीवनि का परिमाण केवलज्ञानी जीवनि का परिमाण के समान जानना । सो इनिका प्रमाण ज्ञानमार्गणा विषै कह्या है ।

एइंदियपहुदीणं, खीणकसायंतणंतरासीणं ।
जोगो अचक्खुदंसणजीवाणं होदि परिमाणं ।।४८८।।

एकेंद्रियप्रभृतीनां, क्षीणकषायांतानंतराशीनाम् ।
योगः अचक्षुर्दर्शनजीवाना भवति परिमाणम् ।।४८८।।

टीका – एकेद्रिय आदि क्षीणकषाय गुणस्थानवर्ती पर्यंत अनत जीवनि का जोड दीए, जो परिमाण होइ तितना चक्षुदर्शनी जीवनि का प्रमाण जानना ।

इति आचार्य श्रीनेमिचन्द्र विरचित गोम्मटसार द्वितीय नाम पचसग्रह ग्रथ की जीवतत्त्वप्रदीपिका नाम सस्कृत टीका के अनुसारि सम्यग्ज्ञानचद्रिका नामा भाषाटीका विषै जीवकाड विषै प्ररूपित जे वीस प्ररूपणा तिनि विषै दर्शनमार्गणा प्ररूपणा है नाम जाका ऐसा चौदहवा अधिकार सपूर्ण भया ।।१४।।

पंद्रहवां अधिकार : लेश्या – मार्गणा

सुधाधार सम धर्म तै, पोषे भव्य सुधान्य ।
प्राप्त कीए निज इष्ट कौं, भजौं धर्म धन मान्य ।।

आगै लेश्या मार्गणा कह्या चाहै हैं । तहा प्रथम ही निरुक्ति लीएं लेश्या का लक्षण कहै है—

लिंपइ अप्पीकीरइ,एदीए णियअपुण्णपुण्णं[1] च ।
जीवो त्ति होदि लेस्सा, लेस्सागुणजाणयक्खादा[2] ।।४८९।।

लिंपत्यात्मीकरोति, एतया निजापुण्यपुण्यं च ।
जीव इति भवति लेश्या, लेश्यागुणज्ञायकाख्याता ।।४८९।।

टीका – लेश्या दोय प्रकार – एक द्रव्य लेश्या, एक भाव लेश्या । तहा इस सूत्र विषै भाव लेश्या का लक्षण कह्या है । **लिंपति एतया इति लेश्या,** पाप अर पुण्य कौ जीव नामा पदार्थ, इस करि लिप्त करै है, अपने करै है, निज सबंधी करै है, सो सो लेश्या, लेश्या लक्षण के जाननहारे गणधरादिकनि करि कहा है । इस करि आत्मा कर्म करि आत्मा कौ लिप्त करै है, सो लेश्या अथवा कषायनि का उदय करि अनुरजित जो योगनि की प्रवृति, सो लेश्या कहिए ।

इस ही अर्थ कौ स्पष्ट करै है–

जोगपउत्ती लेस्सा, कसायउदयाणुरंजिया होई ।
तत्तो दोण्णं कज्जं, बंधचउक्कं समुद्दिट्ठं ।।४९०।।

योगप्रवृत्तिर्लेश्या कषायोदयानुरंजिता भवति ।
ततो द्वयोः कार्यं, बंधचतुष्कं समुद्दिष्टम् ।।४९०।।

टीका – मन, वचन, कायरूप योगनि की प्रवृत्ति सो लेश्या है । सो योगनि की प्रवृत्ति कषायनि का उदय करि अनुरंजित हो है । तिसतै योग अर कषाय इनि

---

१ षट्खडागम–धवला पुस्तक १, पृष्ठ १९१, गाथा स ९४ ।
२ पाठभेद 'णियय पुण्णव च' ।

दोऊनि का कार्य च्यारि प्रकार बन्ध कह्या है। योगनि तै प्रकृत्ति बन्ध अर प्रदेश बन्ध कह्या है। कषायनि तै स्थिति बन्ध अर अनुभाग बध कह्या है। तिसही कारण कषायनि का उदय करि अनुरजित योगनि की प्रवृत्ति, सोई है लक्षण जाका असै लेश्या करि च्यारि प्रकार बंध युक्त ही है।

आगे दोय गाथानि करि लेश्या का प्ररूपण विषै सोलह अधिकार कहै है-

णिद्देसवण्णपरिणामसंकमो कम्मलक्खणगदी य।
सामी साहणसंखा, खेत्तं फासं तदो कालो ॥४९१॥

अंतरभावप्पबहु, अहियारा सोलसा हवंति त्ति।
लेस्साण साहणट्ठं, जहाकमं तेहिं वोच्छामि ॥४९२॥ जुम्मम्।

निर्देशवर्णपरिणामसंक्रमाः कर्मलक्षणगतयश्च।
स्वामी साधनसंख्ये, क्षेत्रं स्पर्शस्ततः कालः ॥४९१॥

अतरभावाल्पबहुत्वमधिकाराः षोडश भवंतीति।
लेश्याना साधनार्थं, यथाक्रमं तैर्वक्ष्यामि ॥४९२॥युग्मम्॥

टीका – १ निर्देश, २ वर्ण, ३ परिणाम, ४ सक्रम, ५ कर्म, ६ लक्षण, ७ गति, ८ स्वामी, ९ साधन, १० सख्या, ११ क्षेत्र, १२ स्पर्शन, १३ काल, १४ अतर, १५ भाव, १६ अल्प बहुत्व ए सोलह अधिकार लेश्या के भेदसाधन के निमित्त है। तिन करि अनुक्रम तै लेश्यामार्गणा कौ कहै है।

किण्हा णीला काऊ, तेऊ पम्मा य सुक्कलेस्सा य।
लेस्साण णिद्देसा छच्चेव हवंति णियमेण ॥४९३॥

कृष्णा नीला कापोता तेजः पद्मा च शुक्ललेश्या च।
लेश्याना निर्देशाः, षट् चैव भवति नियमेन ॥४९३॥

टीका - नाम मात्र कथन का नाम निर्देश है। सो लेश्या के ए छह नाम हैं – कृष्ण, नील, कपोत, पीत, पद्म शुक्ल असै छह ही है। इहा **एव** शब्द करि तो नियम आया ही, बहुरि **नियमेन** असा कह्या, सो नैगमनय करि छह प्रकार लेश्या है। पर्यायार्थिक नय करि असख्यात लोकमात्र भेद है, असा अभिप्राय नियम शब्द करि जानना। इति निर्देशाधिकार।

वण्णोदयेण जणिदो, सरीरवण्णो दु दव्वदो लेस्सा ।
सा सोढा किण्हादी, अणेयभेया सभेयेण ॥४९४॥

वर्णोदयेन जनितः, शरीरवर्णस्तु द्रव्यतो लेश्या ।
सा षोढा कृष्णादिः, अनेकभेदा स्वभेदेन ॥४९४॥

टीका – बहुरि वर्ण नामा नामकर्म के उदय तै भया जो शरीर का वर्ण, सो द्रव्य लेश्या कहिए । सो कृष्णादिक छह प्रकार है । तहा एक - एक भेद अपने - अपने भेदनि करि अनेकरूप जानने ।

सोई कहिए है–

छप्पय-णील-कवोद-सुहेमंबुज-संखसण्णिहा वण्णे ।
संखेज्जासंखेज्जाणंतवियप्पा य पत्तेयं ॥४९५॥

षट्पदनीलकपोतसुहेमाम्बुजशखसन्निभा वर्णे ।
संख्येयासंख्येयानन्तविकल्पाश्च प्रत्येकम् ॥४९५॥

टीका – कृष्ण लेश्या षट्पद जो भ्रमर, ताके समान है । जिसके शरीर का भ्रमर समान काला वर्ण होइ, ताके द्रव्य लेश्या कृष्ण जानना । अैसे ही नील लेश्या, नीलमणि समान है । कपोत लेश्या, कपोत समान है । तेजो लेश्या, सुवर्ण समान है । पद्म लेश्या, कमल समान है । शुक्ल लेश्या शख समान है । बहुरि इन ही एक - एक लेश्यानि के नेत्र इद्रिय के गोचर अपेक्षा सख्याते भेद है । जैसे कृष्णवर्ण हीन - अधिक रूप सख्याते भेद कौ लीए नेत्र इद्रिय करि देखिये है । बहुरि स्कध भेद करि एक - एक के असख्यात असख्याते भेद है । जैसे द्रव्य कृष्ण लेश्यावाले शरीर सबधी स्कध असख्याते है । बहुरि परमाणू भेद करि एक - एक के अनन्त भेद है । जैसै द्रव्य कृष्ण लेश्यावाले शरीर सम्बन्धी स्कधनि विषै अनते परमाणू पाईए है । अैसै सर्व लेश्यानि के भेद जानना ।

णिरया किण्हा कप्पा, भावाणुगया हु ति-सुर-णर-तिरिये ।
उत्तरदेहे छक्कं, भोगे रवि-चंद-हरिदंगा ॥४९६ ॥

निरयाः कृष्णा कल्पा, भावानुगता हि त्रिसुरनरतिरश्चि ।
उत्तरदेहे षट्कं, भोगे रविचन्द्रहरितांगाः ॥४९६॥

टीका – नारकी सर्व कृष्ण वर्ण ही है । बहुरि कल्पवासी देव जैसी उनके भावलेश्या है, तैसा ही वर्ण के धारक है । बहुरि भवनवासी, व्यतर, ज्योतिषी देव अर मनुष्य अर तिर्यंच अर देवनि का विक्रिया तै भया शरीर, ते छहौ वर्ण के धारक है । बहुरि उत्तम, मध्यम, जघन्य भोगभूमि सबधी मनुष्य, तिर्यंच, अनुक्रम तै सूर्य सारिखे अर चद्रमा सारिखे अर हरित वर्ण के धारक है ।

बादरआऊतेऊ, सुक्का-तेऊ य वाऊकायाणं ।
गोमुत्तमुग्गवण्णा, कमसो अव्वत्तवण्णो य ।।४६७।।

बादराप्तैजसौ, शुक्लतेजसौ च वायुकायानाम् ।
गोमूत्रमुद्गवर्णाः क्रमशः अव्यक्तवर्णश्च ।।४६७।।

टीका – बादर अप्कायिक शुक्ल वर्ण है । बादर तेज कायिक पीतवर्ण है । बादर वात कायिकनि विषै घनोदधि वात तो गऊ का मूत्र के समान वर्ण को धरै है । घनवात मू गा सारिखा वर्ण धरै है । तनुवात का वर्ण प्रकट नाही, अव्यक्त वर्ण है ।

सव्वेसिं सुहुमाणं, कावोदा सव्व विग्गहे सुक्का ।
सव्वो मिस्सो देहो, कवोदवण्णो हवे णियमा ।।४६८।।

सर्वेषा सूक्ष्माना, कापोताः सर्वे विग्रहे शुक्लाः ।
सर्वो मिश्रो देहः, कपोतवर्णो भवेन्नियमात् ।।४९८।।

टीका – सर्व ही सूक्ष्म जीवनि का शरीर कपोत वर्ण है । बहुरि सर्व जीव विग्रहगति विषै शुक्ल वर्ण ही हैं । बहुरि सर्व जीव अपने पर्याप्ति के प्रारम्भ का प्रथम समय तै लगाय शरीर पर्याप्ति की पूर्णता पर्यंत जो अपर्याप्त अवस्था है, तहा कपोत वर्ण ही है, असा नियम है । असै शरीरनि का वर्ण कह्या, सो जिसका जो शरीर का वर्ण होइ, तिसके सोई द्रव्य लेश्या जाननी । इति वर्णाधिकार : ।

आगै परिणामाधिकार पच गाथानि करि कहै है–

लोगाणमसंखेज्जा, उदयट्ठाणा कसायगा होंति ।
तत्थ किलिट्ठा असुहा, सुहाविसुद्धा तदालावा ।।४६६।।

लोकानामसंख्येयान्युदयस्थानानि कषायगाणि भवंति ।
तत्र क्लिष्टानि अशुभानि, शुभानि विशुद्धानि तदालापात् ।।४९९।।

टीका – कषाय सबधी अनुभागरूप उदयस्थान असख्यात लोक प्रमाण है । तिनिकौ यथायोग्य असख्यात लोक का भाग दीजिए । तहा एक भाग बिना अवशेष बहुभाग मात्र तौ सक्लेश स्थान है । ते पणि असख्यात लोक प्रमाण है । बहुरि एक भाग मात्र विशुद्धि स्थान है । ते पणि असख्यात लोक प्रमाण है, जातै असख्यात के भेद बहुत है । तहा सक्लेश स्थान तौ अशुभलेश्या सबधी जानने, अर विशुद्धिस्थान शुभलेश्या सबधी जानने ।

तिव्वतमा तिव्वतरा, तिव्वा असुहा सुहा तदा मंदा ।
मंदतरा मंदतमा, छट्ठाणगया हु पत्तेयं ।।५००।।

तीव्रतमास्तीव्रतरास्तीव्रा अशुभाः शुभास्तथा मंदाः ।
मंदतरा मंदतमाः, षट्स्थानगता हि प्रत्येकम् ।।५००।।

टीका – पूर्वै जे असख्यात लोक के बहुभागमात्र अशुभ लेश्या सबधी सक्लेश स्थान कहे, ते कृष्ण, नील, कपोत भेद करि तीन प्रकार है । तहा पूर्वै सक्लेशस्थाननि का जो प्रमाण कह्या, ताकौ यथायोग्य असख्यात लोक का भाग दीए, तहा एक भाग बिना अवशेष बहुभाग मात्र कृष्णलेश्या सबधी तीव्रतम कषायरूप सक्लेशस्थान जानने । बहुरि तिस अवशेष एक भाग कौ असख्यात लोक का भाग दीजिए, तहा एक भाग बिना अवशेष बहुभाग मात्र नील लेश्या सबधी तीव्रतर कषायरूप सल्केश स्थान जानने । बहुरि तिस अवशेष एक भाग मात्र कपोत लेश्या सबधी तीव्र कषायरूप सक्लेशस्थान जानने । बहुरि असख्यात लोक का एक भाग मात्र शुभ लेश्या सबधी विशुद्धि स्थान कहे, ते तेज, पद्म, शुक्ल भेद करि तीन प्रकार हैं । तहा पूर्वै जो विशुद्धिस्थाननि का प्रमाण कह्या, ताकौ यथायोग्य असख्यात लोक का भाग दीजिए, तहा एक भाग बिना अवशेप बहुभाग मात्र तेजो लेश्या सम्बन्धी मदकषाय रूप विशुद्धि स्थान जानने । बहुरि तिस अवशेप एक भाग कौ असख्यात लोक का भाग दीजिए, तहा एक भाग बिना अवशेप भाग मात्र पद्मलेश्या सबधी मदतर कषायरूप विशुद्धि-स्थान जानने । बहुरि तिस अवशेप एक भाग मात्र शुक्ललेश्या सबधी मदतम कषाय-रूप विशुद्धि स्थान जानने । तहा इनि कृष्णलेश्या आदि छह स्थाननि विषै एक –

एक मे अनन्तभागादिक षट्स्थान सभवै है। तहा अशुभ रूप तीन भेदनि विषै तौ उत्कृष्ट तै लगाइ जघन्य पर्यंत असख्यात लोक मात्र बार पट् स्थानपतित सक्लेश हानि सभवै है। बहुरि शुभरूप तीन भेदनि विषै जघन्य तै लगाइ, उत्कृष्ट पर्यंत असख्यात लोकमात्र बार षट्स्थान पतित विशुद्ध परिणामनि की वृद्धि सभवै है। परिणामनि की अपेक्षा सक्लेश विशुद्धि के अनतानन्त अविभाग प्रतिच्छेद है, तिनकी अपेक्षा षट्स्थानपतित वृद्धि – हानि जानना।

असुहाणं वर-मज्झिम-अवरंसे किण्ह-णील-काउतिए।
परिणमदि कमेणप्पा, परिहाणीदो किलेसस्स ॥५०१॥

अशुभानां वरमध्यमावरांशे कृष्णनीलकापोतत्रिकानाम्।
परिणमति क्रमेणात्मा परिहानितः क्लेशस्य ॥५०१॥

टीका — जो सक्लेश परिणामनि की हानिरूप परिणमै, तौ अनुक्रम तै कृष्ण के उत्कृष्ट, मध्यम, जघन्य अश, नील के उत्कृष्ट, मध्यम, जघन्य अश, कपोत के उत्कृष्ट, मध्यम, जघन्य अश रूप परिणवै है।

काऊ णीलं किण्हं, परिणमदि किलेसवड्ढिदो अप्पा।
एवं किलेसहाणी-वड्ढीदो होदि असुहतियं ॥५०२॥

कापोतं नील कृष्णं, परिणमति क्लेशवृद्धित आत्मा।
एव क्लेशहानि-वृद्धितो भवति अशुभत्रिकम् ॥५०२॥

टीका — बहुरि जो सक्लेश परिणामनि की वृद्धिरूप परिणमैं तौ अनुक्रम तै कपोतरूप, नीलरूप, कृष्णरूप परिणवै है। ऐसै सक्लेश की हानि - वृद्धि करि तीन अशुभ स्थान हो है।

तेऊ पउमे सुक्के, सुहाणमवरादिअंसगे अप्पा।
सुद्धिस्स य वड्ढीदो, हाणीदो अण्णहा होदि ॥५०३॥

तेजसि पद्मे शुक्ले, शुभानामवराद्यंशगे आत्मा।
शुद्धेश्च वृद्धितो, हानितः अन्यथा भवति ॥५०३॥

टीका – बहुरि जो विशुद्धपरिणामनि की वृद्धि होइ, तौ अनुक्रम तै पीत, पद्म, शुल्क के जघन्य, मध्यम, उत्कृष्ट अशरूप परिणवै है । बहुरि जो विशुद्ध परिणामनि की हानि होइ, तो अन्यथा कहिए शुक्ल, पद्म, पीत के उत्कृष्ट, मध्यम, जघन्य अश रूप अनुक्रम तै परिणवै है । इति परिणामाधिकारः ।

आगे सक्रमणाधिकार तीन गाथानि करि कहै है —

संकमणं सट्ठाण-परट्ठाणं होदि किण्ह-सुक्काणं ।
वड्ढीसु हि सट्ठाणं, उभयं हाणिम्मि सेसउभये वि ।।५०४।।

संक्रमणं स्वस्थान-परस्थानं भवतीति कृष्णशुक्लयोः ।
वृद्धिषु हि स्वस्थानमुभयं हानौ शेषस्योभयेऽपि ।।५०४।।

टीका – सक्रमण नाम परिणामनि की पलटनि का है, सो सक्रमण दोय प्रकार है – स्वस्थानसक्रमण, परस्थानसक्रमण ।

तहा जो परिणाम जिस लेश्यारूप था, सो परिणाम पलटि करि तिसही लेश्यारूप रहै, सो तो स्वस्थान सक्रमण है ।

बहुरि जो परिणाम पलटि करि अन्य लेश्या कौ प्राप्त होइ, सो परस्थान सक्रमण है ।

तहा कृष्ण लेश्या अर शुक्ललेश्या की वृद्धि विषै तौ स्वस्थानसक्रमण ही है, जातै सक्लेश की वृद्धि कृष्णलेश्या के उत्कृष्ट अश पर्यंत ही है । अर विशुद्धता की वृद्धि शुक्ल लेश्या के उत्कृष्ट अश पर्यंत ही है । बहुरि कृष्णलेश्या अर शुक्ल लेश्या के हानि विषै स्वस्थानसक्रमण परस्थानसक्रमण दोऊ पाइए हैं । जो उत्कृष्ट कृष्ण-लेश्या तै सक्लेश की हानि होइ, तौ कृष्ण लेश्या के मध्यम, जघन्य अशरूप प्रवर्तै, तहा स्वस्थान सक्रमण भया, अर जो नीलादिक अन्य लेश्यारूप प्रवर्तै, तहा परस्थान सक्र-मण भया । अैसै कृष्ण लेश्या के हानि विषै दोऊ सक्रमण है । बहुरि उत्कृष्ट शुक्ल लेश्या तै जो विशुद्धता की हानि होइ, तौ शुक्ल लेश्या के मध्यम, जघन्य अशरूप प्रवर्तै । तहा स्वस्थान सक्रमण भया । बहुरि पद्मादिक अन्य लेश्यारूप प्रवर्तै, तहा परस्थान सक्रमण भया । अैसै शुल्क लेश्या के हानि विषै दोऊ सक्रमण है ।

बहुरि अवशेष नील, कपोत, तेज, पद्म, लेश्यानि विषै दोऊ जाति के सक्रमण हानि विषै भी अर वृद्धि विषै भी पाइए। वृद्धि - हानि होतै जो जिस लेश्यारूप था, उस ही लेश्यारूप रहै, तहा स्वस्थान सक्रमण होइ। बहुरि वृद्धि - हानि होतै, जिस लेश्यारूप था, तिसतै अन्य लेश्यारूप प्रवर्तै, तहां परस्थान सक्रमण होइ। ऐसै च्यारचौं लेश्यानि के हानि विषै वा वृद्धि विषै उभय सक्रमण है।

लेस्साणुक्कस्सादोवरहाणी अवरगादवरड्ढी।
सट्ठाणे अवरादो, हाणी णियमा परट्ठाणे ॥५०५॥

लेश्यानामुत्कृष्टादवरहानिः अवरकादवरवृद्धिः।
स्वस्थाने अवरात्, हानिर्नियमात् परस्थाने ॥५०५॥

टीका – कृष्णादि सर्व लेश्यानि का उत्कृष्ट स्थान विषै जेते परिणाम हैं, तिनतै उत्कृष्ट स्थानक का समीपवर्ती जो तिस ही लेश्या का स्थान, तिस विषै अवर हानि कहिए उत्कृष्ट स्थान तै अनतभाग हानि लीए परिणाम है। जातै उत्कृष्ट के अनतर जो परिणाम, ताकौ ऊर्वंक कह्या है, सो अनतभाग की सदृष्टि ऊर्वंक है। बहुरि स्वस्थान विषै कृष्णादि सर्व लेश्यानि का जघन्य स्थान के समीपवर्ती जो स्थान है, तिस विषै जघन्य स्थान के परिणामनि तै अवर वृद्धि कहिए। अनतभागवृद्धि लीए परिणाम पाइए है, जातै जो जघन्यभाव अष्टाकरूप कह्या है, सो अनतगुण वृद्धि की सहनानी आठ का अक है, ताके अनन्तर ऊर्वंक ही है। बहुरि सर्व लेश्यानि के जघन्यस्थान तै जो परस्थान सक्रमण होइ तौ उस जघन्य स्थानक के परिणामनि तै अनन्त गुणहानि कौ लीए, अनन्तर स्थान विषै परिणाम हो है, सो शुक्ल लेश्या का जघन्य स्थानक के अनन्तर तौ पद्म लेश्या का उत्कृष्ट स्थान है। अर कृष्ण लेश्या के जघन्य स्थान के अनन्तर नील लेश्या का उत्कृष्ट स्थान है। तहा अनत गुणहानि पाइए है। ऐसै ही सर्व लेश्यानि विषै जानना। कृष्ण, नील, कपोत विषै तौ हानि - वृद्धि सक्लेश परिणामनि की जाननी। पीत, पद्म, शुक्ल विषै हानि वृद्धि विशुद्ध परिणामनि की जाननी।

इस गाथा विषै कह्या अर्थ का कारण आगै प्रकट करि कहिए है–

संकमणे छट्ठाणा, हाणिसु वड्ढीसु होंति तण्णामा।
परिमाणं च य पुव्वं, उत्तकमं होदि सुदणाणे ॥५०६॥

सक्रमणे षट्स्थानानि, हानिषु वृद्धिषु भवन्ति तन्नामानि ।
परिमाणं च च पूर्वमुक्तक्रमं भवति श्रुतज्ञाने ॥५०६॥

टीका – इस सक्रमण विषै हानि विषै अनन्त भागादिक छह स्थान है। बहुरि वृद्धि विषै अनन्त गुणादिक भागादिक छह स्थान है । तिनके नाम वा प्रमाण जो पूर्वं श्रुतज्ञान मार्गणा विषै पर्याय समास श्रुतज्ञान का वर्णन करते अनुक्रम कह्या हैं; सोई इहा जानना । सो अनन्त भाग, असख्यात भाग, सख्यात भाग, सख्यात गुणा, असख्यात गुणा, अनन्त गुणा ए तौ षट् स्थाननि के नाम है । इनि अनन्त भागादिक की सहनानी क्रम तै ऊर्वंक च्यारि, पाच, छह, सात, आठ का अक है । बहुरि अनत का प्रमाण जीवाराशि मात्र, असख्यात का प्रमाण असख्यात लोक मात्र, सख्यात का प्रमाण उत्कृष्ट सख्यात मात्र असा प्रमाण गुणकार वा भागहार विषै जानना । बहुरि यत्र द्वार करि जो तहा अनुक्रम कह्या है, सोई यहा अनुक्रम जानना । वृद्धि विषै तौ तहा कह्या है, सोई अनुक्रम जानना ।

बहुरि हानि विषै उलटा अनुक्रम जानना । कैसे ? सो कहिये है – कपोत लेश्या का जघन्य तै लगाइ, कृष्ण लेश्या का उत्कृष्ट पर्यंत विवक्षा होइ, तौ क्रम तै संक्लेश की वृद्धि सभवै है । बहुरि कृष्ण लेश्या का उत्कृष्ट तै लगाइ, कपोत लेश्या का जघन्य पर्यंत विवक्षा होइ, तौ क्रम तै सक्लेश की हानि सभवै है । बहुरि पीत का जघन्य तै लगाइ शुक्ल का उत्कृष्टपर्यंत विवक्षा होइ तौ क्रम तै विशुद्धि की वृद्धि सभवै है । बहुरि शुक्ल का उत्कृष्ट तै लगाइ पीत का जघन्यपर्यंत विवक्षा होइ तौ क्रम तै विशुद्धि की हानि सभवै है । तहा वृद्धि विषै यथासभव षट्स्थानपतित वृद्धि जाननी हानि विषै हानि जाननी । तहा पूर्वं कह्या जो वृद्धि विषै अनुक्रम, तहा पीछै ही पीछै सूच्यगुल का असख्यातवा भाग मात्र बार अनन्त भाग वृद्धि होइ, एक बार अनन्त गुणवृद्धि हो है । तहा अनन्त गुण वृद्धिरूप जो स्थान, सो नवीन षट्स्थान पतितवृद्धि का प्रारभ रूप प्रथम स्थान है । अर याके पहिलै जो अनत भागवृद्धिरूप स्थान भया सो विवक्षित षट्स्थान पतित वृद्धि का अत स्थान है । बहुरि नवीन षट्स्थान पतितवृद्धि का अनन्त गुणवृद्धिरूप प्रथम स्थान के आगै सूच्यगुल का असख्यातवा भागमात्र अनतभाग वृद्धिरूपस्थान हो है । आगै पूर्वोक्त अनुक्रम जानना । अब इहां कृष्ण लेश्या का उत्कृष्ट स्थान है, सो षट्स्थान पतित का अन्तस्थानरूप है, तातै पूर्वस्थान तै अनन्तभाग वृद्धिरूप है । बहुरि कृष्ण लेश्या का जघन्य स्थान है, सो षट्स्थानपतित का प्रारभरूप प्रथम स्थान है । तातै याके पूर्वं नीललेश्या का उत्कृष्ट

स्थान, तातै अनंत गुणवृद्धिरूप यहु स्थान जानना । बहुरि कृष्ण लेश्या का जघन्य के समीपवर्ती स्थान, तिस जघन्य स्थान तै अनन्त भाग वृद्धिरूप जानना । ऐसे ही अन्य स्थाननि विषै वा अन्य लेश्यानि विषै वृद्धि का अनुक्रम जानना ।

बहुरि जो हानि अपेक्षा कथन कीजिए तौ कृष्णलेश्या का उत्कृष्ट स्थान तै ताके समीपवर्ती स्थान अनन्त भाग हानि लीए, जानना । बहुरि कृष्ण लेश्या का जघन्य स्थान तै नील लेश्या का उत्कृष्ट स्थान अनन्त गुणहानि लीए जानना । बहुरि कृष्ण लेश्या का जघन्य के समीपवर्ती स्थान तै जघन्य स्थान अनन्त भाग लीए जानना। ऐसे ही अन्य स्थाननि विषै अन्य लेश्यानि विषै यत्र द्वार करि कह्या, अनुक्रम तै उलटा अनुक्रम लीए हानि का अनुक्रम जानना । ऐसे संक्रमण विषै वृद्धि - हानि है । इति संक्रमणाधिकारः ।

आगे कर्माधिकार दोय गाथा करि कहै हैं-

पहिया जे छप्पुरिसा, परिभट्टारण्णमज्झदेस्मि ।
फलभरियरुक्खमेगं, पेक्खित्ता ते विचिंतंति ॥५०७॥

णिम्मूलखंधसाहुवसाहं छित्तुं चिणित्तु पडिदाइं ।
खाउं फलाइं इदि जं, मणेण वयणं हवे कम्मं ॥५०८॥जुम्मम्॥

पथिका ये षट्पुरुषाः, परिभ्रष्टा अरण्यमध्यदेशे ।
फलभरितवृक्षमेक, दृष्टवा ते विचिन्तयन्ति ॥५०७॥

निर्मूलस्कन्धशाखोपशाख छित्वा चित्वा पतितानि ।
खादितु फलानि इति, यन्मनसा वचनं भवेत् कर्म ॥५०८॥ युग्मम् ।

टीका – कृष्णादिक एक - एक लेश्यावाले छह पथिक पुरुष मार्ग तै भ्रष्ट भए, तहा वन विषै एक फलनि करि भरचा हुवा वृक्ष कौं देखि, ऐसे चितवै हैं – कृष्ण लेश्यावाला तौ चितवै हैं, जो मैं इस वृक्ष कौ मूल तै उपाडि, फल खास्यौं । बहुरि नील लेश्यावाला चितवै है, मैं इस वृक्ष के पेड कौ काटि फल खास्यौ । बहुरि कपोत वाला चितवै है, मैं इस वृक्ष की बडी शाखानि छेदि फल खास्यौ । बहुरि पीतवाला चितवै है, मैं इस वृक्ष की छोटी शाखानि को छेदि फल खास्यौं । बहुरि पद्मवाला चितवै है मैं इस वृक्ष के फलनि ही कौं छेद फल खास्यौ । शुक्लवाला चितवै हैं कि

मै जे आपसे टूटि करि जे पडे फल, तिनकौ खास्यौ । ऐसे मनपूर्वक जो वचन होइ सो तिन लेश्यानि का कर्म जानना । इहा एक उदाहरण कह्या है, इस ही प्रकार अन्य जानने । इति कर्माधिकार ।

आगैं लक्षणाधिकार नव गाथानि करि कहै हैं—

चंडो ण मुंचदि वेरं, भंडण-सीलो य धम्म-दय-रहिओ ।
दुट्ठो ण य एदि वसं, लक्खणमेयं तु किण्हस्स ॥५०९॥[1]

चण्डो न मुञ्चति वैरं, भण्डनशीलश्च धर्मदयारहितः ।
दुष्टो न च एति वशं, लक्षणमेतत्तु कृष्णस्य ॥५०९॥

टीका – प्रचड तीव्र क्रोधी होइ, वैर न छोडै । भाडने का – युद्ध करनें का जाका सहज स्वभाव होइ । दया धर्म करि रहित होइ । दुष्ट होइ । किसी गुरुजनादिक के वश्य न होइ, ऐसे लक्षण कृष्ण लेश्यावाले के है ।

मंदो बुद्धि-विहीणो णिव्विण्णाणी य विसय-लोलो य ।
माणी मायी य तहा, आलस्सो चेव भेज्जो य ॥५१०॥[2]

मन्दो बुद्धिविहीनो, निर्विज्ञानी च विषयलोलश्च ।
मानी मायी च तथा, आलस्यः चैव भेद्यश्च ॥५१०॥

टीका – स्वच्छद होइ अथवा क्रिया विषै मंद होइ, वर्तमान कार्य कौ न जानें; ऐसा बुद्धिहीन होइ, विज्ञान चातुर्य करि हीन होइ, स्पर्शादिक विषयनि विषै अतिलपटी होइ, मानी होइ, मायावी, कुटिल होइ । क्रिया विषै कुठ होइ, जिसके अभिप्राय कौ और कोई न जानें, आलसी होइ, यहु सर्व कृष्ण लेश्यावाले के लक्षण है ।

णिद्दा-वंचण-बहुलो, धण-धण्णे होदि तिव्व-सण्णा य ।
लक्खणमेयं भणियं, समासदो णील-लेस्सस्स ॥५११॥[3]

निद्रावञ्चनबहुलो, धनधान्ये भवति तीव्रसंज्ञश्च ।
लक्षणमेतद्भणितं, समासतो नीललेश्यस्य ॥५११॥

---

१ पट्खडागम – धवला पुस्तक १, पृष्ठ ३९०, गाथा स २०० ।
२. पट्खण्डागम – धवला पुस्तक १, पृष्ठ ३९०, गाथा स २०१ ।
३. पट्खण्डागम – धवला पुस्तक १, पृष्ठ ३९१, गाथा सख्या २०२ ।

टीका – निद्रा जाके बहुत होइ, और को ठिगना जाके बहुत होइ, धन-धान्यादिक विषै तीव्र वाछा जाके होइ, ऐसा सक्षेप तै नील लेश्यावाले का लक्षण है ।

रूसदि णिंददि अण्णे, दूसदि बहुसो य सोय-भय-बहुलो ।
असुयदि परिभवदि परं, पसंसदि य अप्पयं बहुलो ॥५१२॥[1]

रुष्यति निन्दति अन्यं, दुष्यति बहुशश्च शोकभयबहुलः ।
असूयति परिभवति परं, प्रशंसति आत्मानं बहुशः ॥५१२॥

टीका – पर के ऊपरि क्रोध करै, बहुत प्रकार और कौ निंदै, बहुत प्रकार और कौ दुखावै, शोक जाके बहुत होइ, भय जाकै बहुत होइ, और कौ नीकै देखि सकै नाही, और का अपमान करै, आपकी बहुत प्रकार बढाई करै ।

ण य पत्तियदि परं, सो अप्पाणं यिव परं पि मण्णंतो ।
तुसदि अभित्थुवंतो, ण य जाणदि हाणिवड्ढि वा ॥५१३॥[2]

न च प्रत्येति परं, स आत्मानमिव परमपि मन्यमानः ।
तुष्यति अभिष्टुवतो, न च जानाति हानिवृद्धी वा ॥५१३॥

टीका — आप सारिखा पापी - कपटी और कौ मानता सता और का विश्वास न करै, जो आपकी स्तुति करै, ताके ऊपरि बहुत सतुष्ट होइ, अपनी, अर पर की हानि वृद्धि कौ न जानै ।

मरणं पत्थेदि रणे, देहि सुबहुगं हि थुव्वमाणो दु ।
ण गणइ कज्जाकज्जं लक्खणमेयं तु काउस्स ॥५१४॥[3]

मरणं प्रार्थयते रणे, ददाति सुबहुकमपि स्तूयमानस्तु ।
न गणयति कायाकार्यं, लक्षणमेतत्तु कपोतस्य ॥५१४॥

टीका – युद्ध विषै मरण कौं चाहै, जो आपकी बढाई करै, ताकौ बहुत धन देइ, कार्य–अकार्य कौं गिणै नाही, ऐसै लक्षण कपोत लेश्यावाले के हैं ।

---

१ षट्खडागम–धवला पुस्तक १, पृष्ठ ३९१, गाथा स २०३ ।
२ षट्खडागम–धवला पुस्तक १, पृष्ठ ३९१, गाथा स २०४ ।
३ षट्खडागम–धवला पुस्तक १, पृष्ठ ३९१, गाथा स २०५ ।

जाणदि कज्जाकज्जं, सेयमसेयं च सव्व-सम-पासी ।
दय-दाण-रदो य मिदू, लक्खणमेयं तु तेउस्स ।।५१५।।[१]

जानाति कार्याकार्यं, सेव्यमसेव्यं च सर्वसमदर्शी ।
दयादानरतश्च मृदुः, लक्षणमेतत्तु तेजसः ।।५१५।।

टीका – कार्य - अकार्य कौ जानै, सेवनेयोग्य न सेवनेयोग्य कौ जानै, सर्व विषै समदर्शी होइ, दया – दान विषै प्रीतिवत होइ, मन, वचन, काय विषै कोमल होइ, ऐसे लक्षण पीतलेश्यावाले के हैं ।

चागी भद्दो चोक्खो, उज्जव-कम्मो य खमदि बहुगं पि ।
साहु-गुरु-पूजण-रदो, लक्खणमेयं तु पम्मस्स ।।५१६।।[२]

त्यागी भद्र सुकरः, उद्युक्तकर्मा च क्षमते बहुकमपि ।
साधुगुरुपूजनरतो, लक्षणमेतत्तु पद्मस्य ।।५१६।।

टीका — त्यागी होइ, भद्र परिणामी होइ, सुकार्यरूप जाका स्वभाव होइ, शुभभाव विषै उद्यमी रूप जाके कर्म होइ, कष्ट वा अनिष्ट उपद्रव तिनकौ सहै, मुनि जन अर गुरुजन तिनकी पूजा विषैं प्रीतिवत होइ, ऐसे लक्षण पद्मलेश्यावाले के है ।

ण य कुणदि पक्खवायं, ण वि य णिदाणं समो य सव्वेसिं ।
णत्थि य राय-द्दोसा णेहो वि य सुक्क-लेस्सस्स ।।५१७।।[३]

न च करोति पक्षपातं, नापि च निदानं समश्च सर्वेषाम् ।
नास्ति च रागद्वेषः स्नेहोऽपि च शुक्ललेश्यस्य ।।५१७।।

टीका — पक्षपात न करै, निंदा न करै, सर्व जीवनि विषै समान होइ, इष्ट अनिष्ट विषै राग – द्वेष रहित होइ, पुत्र कलत्रादिक विषै स्नेह रहित होइ, ऐसे लक्षण शुक्ल लेश्यावाले के है । इति लक्षणाधिकार ।

---

१ षट्खडागम – धवला पुस्तक १, पृष्ठ ३९१, गाथा स २०६ ।
२ षट्खडागम – धवला पुस्तक १, पृष्ठ ३९२, गाथा स. २०७ ।
३ षट्खडागम – धवला पुस्तक १, पृष्ठ ३९२, गाथा स २०८ ।

आगै गति अधिकार ग्यारह सूत्रनि करि कहै है –

लेस्साणं खलु अंसा, छव्वीसा होंति तत्थ मज्झिमया ।
आउगबंधणजोग्गा, अट्ठट्ठवगरिसकालभवा ।।५१८।।[1]

लेश्यानां खलु अंशाः, षड्विंशतिः भवन्ति तत्र मध्यमकाः ।
आयुष्कबन्धनयोग्या, अष्ट अष्टापकर्षकालभवाः ।।५१८।।

टीका – लेश्यानि के छब्बीस अंश हैं । तहा छहौ लेश्यानि के जघन्य, मध्यम, उत्कृष्ट भेद करि अठारह अंश हैं । बहुरि कपोतलेश्या के उत्कृष्ट अंश तै आगै अर तेजो लेश्या के उत्कृष्ट अंश तै पहिलै कषायनि का उदय स्थानकनि विषै आठ मध्यम अंश है, असै छब्बीस अंश भए । तहा आयुकर्म के बंध कौ योग्य आठ मध्यम अंश जानने । तिनिका स्वरूप आगै स्थानसमुत्कीर्तन अधिकार विषै भी कहेगे । ते आठ मध्यम अंश, अपकर्ष काल आठ, तिनि विषै संभवै है । वर्तमान जो भुज्यमान आयु, ताकौ अपकर्ष, अपकर्ष कहिए । घटाइ घटाइ आगामी पर भव की आयु कौं बांधै, सो अपकर्ष कहिए ।

अपकर्षनि का स्वरूप दिखाइए है – तहा उदाहरण कहिए है – किसी कर्म भूमिया मनुष्य वा तिर्यंच की भुज्यमान आयु पैंसठि सै इकसठि (६५६१) वर्ष की है । तहा तिस आयु का दोय भाग गए, इकईस सै सित्तासी वर्ष रहै । तहा तीसरा भाग कौ लागते ही प्रथम समय स्यो लगाइ अंतर्मुहूर्त पर्यंत कालमात्र प्रथम अपकर्ष है । तहा परभव संबंधी आयु का बंध होइ । बहुरि जो तहा न बंधै तौ, तिस तीसरा भाग का दोय भाग गए, सात सै गुणतीस वर्ष आयु के अवशेष रहे, तहा अंतर्मुहूर्त काल पर्यंत दूसरा अपकर्ष, तहा परभव की आयु बांधै । बहुरि तहा भी न बंधै तौ तिसका भी दोय भाग गए दोय सै तियालीस वर्ष आयु के अवशेष रहै, अंतर्मुहूर्त काल मात्र तीसरा अपकर्ष विषै परभव का आयु बांधै । बहुरि तहा भी न बंधै तौ, तिसका भी दोय भाग गए इक्यासी वर्ष रहै, अंतर्मुहूर्त पर्यंत चौथा अपकर्ष विषै पर भव का आयु बांधै । असै ही दोय दोय भाग गए, सत्ताईस वर्ष रहैं वा नव वर्ष रहै वा तीन वर्ष रहै वा एक वर्ष रहै अंतर्मुहूर्तमात्र काल पर्यंत पांचवा वा छठा वा सातवा वा

१ षट्खंडागम – धवला पुस्तक १, पृष्ठ ३९२, गाथा सं २०९ ।

आठवा अपकर्ष विषै पर भव की आयु कौ बधने कौं योग्यपना जानना । अैसै ही जो भुज्यमान आयु का प्रमाण होय, ताके त्रिभाग त्रिभाग विषै आठ अपकर्ष जानने ।

बहुरि जो आठौ अपकर्षनि विषै आयु न बधै अर नवमा आदि अपकर्ष है नाही, तौ आयु का बंध कैसै होइ ?

सो कहै है – **असंक्षेपाद्धा** जो आवली का असख्यातवा भाग प्रमाण काल भुज्यमान आयु का अवशेष रहै ताके पहिले अतर्मुहूर्त काल मात्र समय प्रबद्धनि करि परभव की आयु कौ बाधि पूर्ण करै है, अैसा नियम है । इहा विशेष निर्णय कीजिए है – विषादिक का निमित्तरूप कदलीघात करि जिनका मरण होइ, ते सोपक्रमायुष्क कहिए । तातै देव, नारकी, भोगभूमिया अनुपक्रमायुष्क है । सो सोपक्रमायुष्क है, ते पूर्वोक्त रीति करि पर भव का आयु कौ बाधै है । तहां पूर्वोक्त आठ अपकर्षनि विषै आयु के बध होने कौ योग्य जो परिणाम तिनकरि केई जीव आठ वार, केई जीव सात वार, केई छह वार, केई पाच वार, केई च्यारि वार, केई तीन वार, केई दो वार, केई एक वार परिणमै हैं ।

आयु के बध योग्य परिणाम अपकर्षणनि विषै ही होइ, सो अैसा कोई स्व-भाव सहज ही है । अन्य कोई कारण नाही ।

तहा तीसरा भाग का प्रथम समय विषै जिन जीवनि करि परभव के आयु का बध प्रारभ किया, ते अतर्मुहूर्त ही विषै निष्ठापन करै । अथवा दूसरी बार आयु का नवमा भाग अवशेष रहै, तहा तिस बध होने कौ योग्य होइ । अथवा तीसरी वार आयु का सत्ताईसवा भाग अवशेष रहै, तहा तिस बध होने कौ योग्य होइ, अैसै आठवा अपकर्ष पर्यंत जानना । अैसा किछू नियम है नाही – जो इनि अपकर्षनि विषै आयु का बध होइ ही होइ । इनि विषै आयु के बध होने कौ योग्य होइ । जो बध होइ तौ होइ न होइ तौ न होइ । अैसै आयु के वध का विधान कह्या ।

जैसै अन्यकाल विषै समय समय प्रति समयप्रबद्ध बधै है, सो आयुकर्म विना सात कर्मरूप होइ परिणमै है । तैसै आयुकर्म का बध जेता काल मे होइ, तितने काल विषै जे समय समय प्रति समयप्रबद्ध बधै ते आठो ही कर्मरूप होइ परिणमै है अैसै जानना ।

बहुरि जिस समय विषै पहिलै ही जिसका बध होइ, तहा तिसका प्रारभ कहिए। बहुरि समय समय प्रति तिस प्रकृति का बध हूवा करै, तहा बध होइ निवरै, तहा निष्ठापक कहिए।

बहुरि देव नारकीनि के छह महीना आयु का अवशेष रहै, तब आयु के बध करने कौ योग्य होइ, पहिलै न होइ। तहा छह महीना ही विषै त्रिभाग त्रिभाग करि आठ अपकर्ष हो है, तिन विषै आयु के बध करने योग्य हो है।

बहुरि एक समय अधिक कोटि पूर्व वर्ष तै लगाइ तीन पल्य पर्यंत असख्यात वर्षमात्र आयु के धारी भोगभूमिया तिर्यंच वा मनुष्य, ते भी निरुपक्रमायुष्क हैं। इन कै आयु का नव मास अवशेष रहैं आठ अपकर्षनि करि पर भव के आयु का बध होने का योग्यपना हो है। बहुरि इतना जानना – जिस गति सबधी आयु का बध प्रथम अपकर्ष विषै होइ पीछै जो दुतियादि अपकर्षनि विषै आयु का बध होइ, तौ तिस ही गति सबधी आयु का बध होइ। बहुरि जो प्रथम अपकर्ष विषै आयु का बध न होइ, तौ अर दूसरे अपकर्ष विषै जिस किसी आयु का बध होइ तौ तृतीयादि अपकर्षनि विषै आयु का जो बध होइ, तौ तिस ही गति सम्बन्धी आयु का बन्ध होइ, असै ही आगै जानना। असै कई एक जीवनि के तौ आयु का बध एक अपकर्ष ही विषै होइ, केई जीवनि के दोय अपकर्षनि करि होइ, केई जीवनि कै तीन वा च्यारि वा पाच वा छह वा सात वा आठ अपकर्षनि करि हो है।

तहा आठ अपकर्षनि करि परभव की आयु के बन्ध करनहारे जीव स्तोक है। तिनतै सख्यात गुणे सात अपकर्षनि करि बन्ध करने वाले है। तिनतै सख्यात गुणे छह अपकर्षनि करि बन्ध करने वालै है। असै सख्यात गुणे सख्यात गुणे पाच, च्यारि, तीन, दोय, एक अपकर्षनि करि बध करने वाले जीव जानने।

बहुरि आठ अपकर्षनि करि आयु कौ बाधता जीव, तिसकै आठवा अपकर्ष विषै आयु बधने का जघन्य काल स्तोक है। तिसतै विशेष अधिक ताका उत्कृष्ट काल है। बहुरि आठ अपकर्षनि करि आयु कौ बाधता जीव कै सातवा अपकर्ष विषै जघन्य काल तिसतै सख्यात गुणा है, उत्कृष्ट तिसतै विशेष अधिक है। बहुरि सात अपकर्षनि करि आयु कौ बाधता जीव कै सातवा अपकर्ष विषै आयु बधने का जघन्य काल तिसतै सख्यात गुणा है, उत्कृष्ट तिसतै विशेप अधिक है। बहुरि आठ अपकर्षनि करि आयु बाधता जीव के छठा अपकर्ष विषै आयु बधने का जघन्य काल तिसतै

आठ अपकर्षनि करि आयु वधने की रचना		
०	जघन्य	उत्कृष्ट
८	८	८
८	७	७
८	६	६
८	५	५
८	४	४
८	३	३
८	२	२
८	१	१

सात अपकर्षनि करि आयु वधने की रचना		
०	जघन्य	उत्कृष्ट
७	७	७
७	६	६
७	५	५
७	४	४
७	३	३
७	२	२
७	१	१

छह अपकर्षनि करि आयु वधने की रचना		
०	जघन्य	उत्कृष्ट
६	६	६
६	५	५
६	४	४
६	३	३
६	२	२
६	१	१

पाच अपकर्पनि करि आयु वधने की रचना		
०	जघन्य	उत्कृष्ट
५	५	५
५	४	४
५	३	३
५	२	२
५	१	१

च्यारि अपकप न करि आयु वधने की रचना		
०	जघन्य	उत्कृष्ट
४	४	४
४	३	३
४	२	२
४	१	१

तीन अपकर्पनि करि आयु वधने की रचना		
०	जघन्य	उत्कृष्ट
३	३	३
३	२	२
३	१	१

दोय अपकपनि करि आयु वधने की रचना		
०	जघन्य	उत्कृष्ट
२	२	२
२	१	१

एक अपकर्षनि करि आयु वधने की रचना		
०	जघन्य	उत्कृष्ट
१	१	१

सख्यात गुणा है, उत्कृष्ट विशेष अधिक है। बहुरि सात अपकर्षनि करि आयु कौं बाधता जीव के छठा अपकर्ष विषै आयु का बधने का जघन्य काल तिसतै सख्यातगुणा है, उत्कृष्ट विशेष अधिक है। बहुरि छह अपकर्षनि करि आयु कौ बाधता जीव के छठा अपकर्ष विषै आयु बधने का जघन्य काल तिसतै सख्यातगुणा है, उत्कृष्ट किछू अधिक है। अैसै एक अपकर्ष करि आयु कौ बाधता जीव के तीहिं अपकर्ष के उत्कृष्ट काल पर्यंत बहत्तरि (७२) भेद हो है। तहा जघन्य तै उत्कृष्ट तो अधिक जानना। सो तिस विवक्षित जघन्य कौ संख्यात का भाग दीए, जो पावै, सो विशेष का प्रमाण जानना। ताकौ जघन्य मे जोडे उत्कृष्ट का प्रमाण हो है। बहुरि उत्कृष्ट तै आगला जघन्य, सख्यात गुणा जानना। अैसै यद्यपि सामान्यपनै सबनि विषै काल अतर्मुहूर्त मात्र है। तथापि हीनाधिकपना जानने कौ अनुक्रम कह्या है, जो अपकर्षनि विषै आयु का बध होइ, तौ इतने इतने काल मात्र समयप्रबद्धनि करि बध हो है।

यह बहत्तरी भेदनि की रचना है। तहा आठ अपकर्षनि करि आयु बधने की रचना विषै पहिली पक्ति के कोठानि विषै जो आठ - आठ का अक है, ताका तौ यह अर्थ जानना – जो आठ अपकर्षनि करि आयु बाधने वाले का इहा ग्रहण है। बहुरि दूसरी, तीसरी पंक्तिनि विषै आठ, सात आदि अक है, तिनिका यह अर्थ – जो तिनि आठ अपकर्षनि करि बध करने वाले जीव के आठवा, सातवा आदि अपकर्षनि का ग्रहण है। तहा दूसरी पक्ति विषै जघन्य काल अपेक्षा ग्रहण जानना। तीसरी पक्ति विषै उत्कृष्ट काल अपेक्षा ग्रहण जानना। अैसै ही सात, छह, पाच, च्यारि, तीन, दोय, एक अपकर्षनि करि आयु बधने की रचना विषै अर्थ जानना। आठौं रचनानि की दूसरी, तीसरी पक्तिनि के सर्व कोठे बहत्तरि हो है। इनि बहत्तरि स्थाननि विषै आयु बधने के काल का अल्प – बहुत्व जानना। मध्य भेदनि के ग्रहण निमित्त जघन्य उत्कृष्ट के बीचि बिंदी की सहनानी जाननी।

अैसै आयु कौ बधने के योग्य लेश्यानि का मध्यम आठ अश, तिनकी आठ अपकर्षनि करि उत्पत्ति का अनुक्रम कह्या।

सेसट्ठारसअंसा, चउगइ-गमणस्स कारणा होंति।
सुक्कुक्कस्संसमुदा, सव्वट्ठं जांति खलु जीवा ॥५१९॥

शेषाष्टादशांशाश्चतुर्गतिगमनस्य कारणानि भवन्ति।
शुक्लोत्कृष्टांशमृताः, सर्वार्थं यान्ति खलु जीवाः ॥५१९॥

टीका – तिन मध्यम अशनि तै अवशेष रहैं, जे लेश्यानि के अठारह अश, ते च्यारि गति विषै गमन कौ कारण है। मरण इनि अठारह अशनि करि सहित होइ, सो मरण करि यथायोग्य गति कौ जीव प्राप्त हो है। तहा शुक्ल लेश्या का उत्कृष्ट अश करि सहित मरै, ते जीव सर्वार्थसिद्धि नामा इंद्र के विमान कौ प्राप्त हो है।

अवरंसमुदा होंति, सदारदुगे मज्झिमंसगेण मुदा।
आणदकप्पादुवरिं, सव्वट्ठाइल्लगे होंति ॥५२०॥

अवरांशमृता भवन्ति, शतारद्विके मध्यमांशकेन मृताः।
आनतकल्पादुपरि, सर्वार्थादिमे भवन्ति ॥५२०॥

टीका– शुक्ल लेश्या का जघन्य अश करि मरै, ते जीव शतार –सहस्रार स्वर्ग विषै उपजै है। बहुरि शुक्ल लेश्या का मध्यम अंश करि मरै, ते जीव आनत स्वर्ग के ऊपरि सर्वार्थसिद्धि इंद्रक का विजयादिक विमान पर्यंत यथासभव उपजै है।

पम्मुक्कस्संसमुदा, जीवा उवजांति खलु सहस्सारं।
अवरंसमुदा जीवा, सणक्कुमारं च माहिंदं ॥५२१॥

पद्मोत्कृष्टांशमृता, जीवा उपयान्ति खलु सहस्रारम्।
अवराशमृता जीवाः, सनत्कुमारं च माहेन्द्रम् ॥५२१॥

टीका – पद्म लेश्या का उत्कृष्ट अश करि मरै, जे जीव सहस्रार स्वर्ग कौ प्राप्त हो हैं। बहुरि पद्म लेश्या का जघन्य अश करि मरै, ते जीव सनत्कुमार - माहेद्र स्वर्ग कौं प्राप्त हो हैं।

मज्झिमअंसेण मुदा, तम्मज्झं जांति तेउजेट्ठमुदा।
साणक्कुमारमाहिंदंतिमचक्किदसेढिम्मि ॥५२२॥

मध्यमांशेन मृताः, तन्मध्यं यांति तेजोज्येष्ठमृताः।
सानत्कुमारमाहेन्द्रान्तिमचक्रेन्द्रश्रेण्याम् ॥५२२॥

टीका — पद्म लेश्या का मध्यम अश करि मरै, ते जीव सहस्रार स्वर्ग के नीचै अर सनत्कुमार – माहेन्द्र के ऊपरि यथासभव उपजै है। बहुरि तेजो लेश्या का

उत्कृष्ट अश करि मरै, ते सनत्कुमार – माहेन्द्र स्वर्ग का अत का पटल विषै चक्र नामा इद्रक सबधी श्रेणीबद्ध विमान, तिनि विषै उपजै है ।

अवरंसमुदा सोहम्मीसाणादिमउडम्मि सेढिम्मि ।
मज्झिमअंसेण मुदा, विमलविमाणादिबलभद्दे ।।५२३।।

अवराशमृताः सौधर्मेशानादिमतौ श्रेण्याम् ।
मध्यमांशेन मृता, विमलविमानादिवलभद्रे ।।५२३।।

टीका – तेजो लेश्या का जघन्य अश करि मरै, ते जीव सौधर्म ईशान का पहिला रितु (जु) नामा इद्रक वा श्रेणीबद्ध विमान, तिनिविषै उपजै है । बहुरि तेजो लेश्या का मध्यम अश करि मरै, ते जीव सौधर्म – ईशान का दूसरा पटल का विमल नामा इद्रक तै लगाइ सनत्कुमार – माहेन्द्र का द्विचरम पटल का बलभद्र नामा इद्रक पर्यंत विमान विषै उपजै हैं ।

किण्हवरंसेण मुदा, अवधिट्ठाणम्मि अवरअंसमुदा ।
पंचमचरिमतिमिस्से, मज्झे मज्झेण जायन्ते ।।५२४।।

कृष्णवराशेन मृता, अवधिस्थाने अवरांशमृताः ।
पञ्चमचरमतिमिस्रे, मध्ये मध्येन जायन्ते ।।५२४।।

टीका – कृष्ण लेश्या का उत्कृष्ट अश करि मरै, ते जीव सातवी नरक पृथ्वी का एक ही पटल है, ताका अवधि स्थानक नामा इद्रक बिल विषै उपजै है । बहुरि कृष्ण लेश्या का जघन्य अश करि मरै, ते जीव पचम पृथ्वी का अत पटल का तिमिस्र नामा इद्रक विषै उपजै हैं । बहुरि कृष्ण लेश्या का मध्यम अश करि मरै, ते जीव अवधिस्थान इद्रक का च्यारि श्रेणीबद्ध बिल तिनि विषै वा छठा पृथ्वी का तीनौं पटलनि विषै वा पाचवी पृथ्वी का चरम पटल विषै यथायोग्य उपजै है ।

नीलुक्कस्संसमुदा, पंचमअंधिंदयम्मि अवरमुदा ।
वालुकसंपज्जलिदे, मज्झे मज्झेण जायंते ।।५२५।।

नीलोत्कृष्टांशमृताः, पञ्चमांधेन्द्रके अवरमृताः ।
वालुकासप्रज्वलिते, मध्ये मध्येन जायन्ते ।।५२५।।

टीका – नील लेश्या का उत्कृष्ट अश करि मरै, ते जीव पचम पृथ्वी का द्विचरम पटल का अध्र नामा इद्रक विषै उपजै है। केई पाचवा पटल विषै भी उपजै है। अरिष्ट पृथ्वी का अत का पटल विषै कृष्ण लेश्या का जघन्य अश करि मरे हुए भी केई जीव उपजै है; इतना विशेष जानना। बहुरि नील लेश्या का जघन्य अश करि मरै, ते जीव वालुका पृथ्वी का अत का पटल विषै सप्रज्वलित नामा इद्रक विषै उपजै है। बहुरि नील लेश्या का मध्यम अश करि मरै, ते जीव बालुका प्रभा पृथ्वी के संप्रज्वलित इ द्रक तै नीचै अर चौथी पृथ्वी का सातौ पटल अर पंचमी पृथ्वी का अध्र इ द्रक के ऊपरि यथायोग्य उपजै है।

वर-काओदंसमुदा, संजलिदं जांति तदिय-णिरयस्स।
सीमंतं अवरमुदा, मज्झे मज्झेण जायंते ।।५२६।।

वरकापोतांशमृताः, संज्वलितं यान्ति तृतीयनिरयस्य।
सीमन्तमवरमृता, मध्ये मध्येन जायन्ते ।।५२६।।

टीका – कापोत लेश्या का उत्कृष्ट अश करि मरै, ते जीव तीसरी पृथ्वी का आठवा द्विचरम पटल ताके सज्वलित नामा इ द्रक विषै उपजै है। केई अत का पटल सबधी सप्रज्वलित नामा इ द्रक विषै भी उपजै है। इतना विशेष जानना। बहुरि कापोत लेश्या का जघन्य अश करि मरै, ते जीव पहिली धर्मा पृथ्वी का पहिला सीमतक नामा इ द्रक, तिस विषै उपजै है। बहुरि कापोत लेश्या का मध्यम अश करि मरै, ते जीव पहिला पृथ्वी का सीमत इ द्रक तै नीचै बारह पटलनि विषै, बहुरि मेघा तीसरी पृथ्वी का द्विचरम सज्वलित इ द्रक तै ऊपरि सात पटलनि विषै, बहुरि दूसरी पृथ्वी का ग्यारह पटल, तिन विषै यथायोग्य उपजै है।

किण्ह-चउक्काणं पुण, मज्झंस-मुदा हु भवणगादि-तिये।
पुढवी-आउ-वणप्फदि-जीवेसु हवंति खलु जीवा ।।५२७।।

कृष्णचतुष्काणां पुन , मध्यांशमृता हि भवनकादित्रये।
पृथिव्यव्वनस्पतिजीवेषु भवन्ति खलु जीवाः ।।५२७।।

टीका — पुन. कहिये यहु विशेष है – कृष्ण - नील - कपोत नील लेश्या, तिनके मध्यम अश करि मरे ऐसे कर्म भूमिया मिथ्यादृष्टी तिर्यंच वा मनुष्य अर

तेजो लेश्या का मध्यम अश करि मरै, असे भोगभूमिया मिथ्यादृष्टी तिर्यंच वा मनुष्य ते भवनवासी, व्यतर, ज्योतिषी देवनि विषै उपजै है । बहुरि कृष्ण - नील - कपोत - पीत इन च्यारि लेश्यानि के मध्यम अशनि करि मरै, असे तिर्यंच वा मनुष्य भवनवासी, व्यतर, ज्योतिषी वा सौधर्म – ईशान स्वर्ग के वासी देव, मिथ्यादृष्टी, ते बादर पर्याप्तक पृथ्वीकायिक, अप्कायिक वनस्पती कायिक विषै उपजै हैं । भवनत्रयादिक की अपेक्षा इहा पीत लेश्या जाननी । तिर्यंच मनुष्य अपेक्षा कृष्णादि तीन लेश्या जाननी ।

किण्ह-तियाणं मज्झिम-अंस-मुदा तेउ-वाउ-वियलेसु ।
सुर-णिरया सग-लेस्सहिं, णर-तिरियं जांति सग-जोग्गं ।।५२८।।

कृष्णत्रयाणा मध्यमांशमृताः तेजोवायुविकलेषु ।
सुरनिरयाः स्वकलेश्याभिः नरतिर्यञ्चं यान्ति स्वकयोग्यम् ।।५२८।।

टीका – कृष्ण, नील, कपोत के मध्यम अश करि मरै, असे तिर्यंच वा मनुष्य ते तेज कायिक वा वातकायिक विकलत्रय असैनी पचेंद्री साधारण वनस्पती, इनिविषैं उपजै है । बहुरि भवनत्रय आदि सर्वार्थसिद्धि पर्यंत देव अर धम्मादि सात पृथ्वी सबधी नारकी ते अपनी-अपनी लेश्या के अनुसारि यथायोग्य मनुष्यगति वा तिर्यंचगति कौं प्राप्त हो हैं । इहा इतना जानना – जिस गति सबधी पूर्वें आयु बंध्या होइ, तिस ही गति विषै जो मरण होतै जो लेश्या होइ, ताके अनुसारि उपजै है । जैसे मनुष्य के पूर्वें देवायु का बध भया, बहुरि मरण होते कृष्णादि अशुभ लेश्या होइ तौ भवनत्रिक विषै ही उपजै है, असे ही अन्यत्र जानना । इति गत्यधिकार ।

आगे स्वामी अधिकार सात गाथानि करि कहैं हैं–

काऊ काऊ काऊ, णीला णीला य णील-किण्हा य ।
किण्हा य परमकिण्हा, लेस्सा पढमादि पुढवीणं ।।५२९।।

कपोता कपोता कपोता, नीला नीला च नीलकृष्णे च ।
कृष्णा च परमकृष्णा, लेश्या प्रथमादिपृथिवीनाम् ।।५२९।।

टीका — इहा भावलेश्या की अपेक्षा कथन है । तहा नारकी जीवनि के कहिए हैं – तहा घम्मा नामा पहिली पृथ्वी विषै कपोत लेश्या का जघन्य अश है । वंशा दूसरी पृथ्वी विषै कपोत का मध्यम अश है । मेघा तीसरी पृथ्वी विषै कपोत

का उत्कृष्ट अंश अर नील का जघन्य अंश है। अंजना चौथी पृथ्वी विषै नील का मध्यम अंश है। अरिष्टा पाचवी पृथ्वी विषै नील का उत्कृष्ट अंश है, अर कृष्ण का जघन्य अंश है। मघवी पृथ्वी विषै कृष्ण का मध्यम अंश है। माघवी सातवी पृथ्वी विषै कृष्ण का उत्कृष्ट अंश हैं।

णर-तिरियाणं ओघो, इगि-विगले तिण्णि चउ असण्णिस्स।
सण्णि-अपुण्णग-मिच्छे, सासणसम्मे वि असुह-तियं ॥५३०॥

नरतिरश्चामोघः एकविकले तिस्रः चतस्र असंज्ञिनः।
संज्ञ्यपूर्णकमिथ्यात्वे सासादनसम्यक्त्वेऽपि अशुभत्रिकम् ॥५३०॥

टीका — मनुष्य अर तिर्यंचनि के 'ओघ' कहिए सामान्यपनै कही ते सर्व छहौ लेश्या पाइए है। तहा एकेंद्री अर विकलत्रय इनकै कृष्णादिक तीन अशुभ लेश्या हि पाइए है। बहुरि असैनी पचेंद्री पर्याप्तक कै कृष्णादि च्यारि लेश्या पाइए है, जातै असैनी पचेंद्री कपोत लेश्या सहित मरै, तौ पहिले नरक उपजै। तेजो लेश्या सहित मरै, तौ भवनवासी अर व्यतर देवनि विषै उपजै। कृष्णादि तीन अशुभ लेश्या सहित मरै, तौ यथायोग्य मनुष्य तिर्यंच विषै उपजै, तातै ताके च्यारि लेश्या है। बहुरि सैनी लब्धि अपर्याप्तक तिर्यंच वा मनुष्य मिथ्यादृष्टी बहुरि अपि शब्द तैं असैनी लब्धि पर्याप्तक तिर्यंच - मनुष्य मिथ्यादृष्टी, बहुरि सासादन गुणस्थानवर्ती निर्वृति अपर्याप्तक तिर्यंच वा मनुष्य वा भवनत्रिक देव इनिविषै कृष्णादिक तीन अशुभ लेश्या ही है। तिर्यंच अर मनुष्य जो उपशम सम्यग्दृष्टी होइ, ताकै अति सक्लेश परिणाम होइ, तौ भी देशसयमीवत् कृष्णादिक तीन लेश्या न होइ। तथापि जो उपशम सम्यक्त्व की विराधना करि सासादन होइ, ताकै अपर्याप्त अवस्था विषै तीन अशुभ लेश्या ही पाइए है।

भोगापुण्णगसम्मे, काउस्स जहण्णियं हवे णियमा।
सम्मे वा मिच्छे वा, पज्जत्ते तिण्णि सुहलेस्सा ॥५३१॥

भोगाऽपूर्णकसम्यक्त्वे, कापोतस्य जघन्यकं भवेन्नियमात्।
सम्यक्त्वे मिथ्यात्वे वा, पर्याप्ते तिस्रः शुभलेश्याः ॥५३१॥

टीका — भोग भूमि विषै निर्वृति अपर्याप्तक सम्यग्दृष्टी जीव विषै कपोत लेश्या का जघन्य अंश पाइए है। जातै कर्मभूमिया मनुष्य वा तिर्यंच पहिले मनुष्य

वा तिर्यंच आयु का बंध कीया, पीछे क्षायिक वा वेदक सम्यक्त्व कौ अंगीकार करि मरै, तिस सहित ही तहा भोगभूमि विषै उपजै । तहा तिस योग्य संक्लेश परिणाम कपोत का जघन्य अंश, तिसरूप परिणमें है । बहुरि भोगभूमि विषै पर्याप्त अवस्था विषै सम्यग्दृष्टी वा मिथ्यादृष्टी जीव के पीतादिक तीन शुभलेश्या ही पाइए हैं ।

अयदो त्ति छ लेस्साओ, सुह-तिय-लेस्सा हु देसविरद-तिये ।
तत्तो सुक्का लेस्सा, अजोगिठाणं अलेस्सं तु ।।५३२।।

असंयत इति षड् लेश्याः, शुभत्रयलेश्या हि देशविरतत्रये ।
ततः शुक्ला लेश्या, अयोगिस्थानमलेश्यं तु ।।५३२।।

टीका – असंयत पर्यंत च्यारि गुणस्थाननि विषै छहौ लेश्या हैं । देशविरत आदि तीन गुणस्थाननि विषै पीतादिक तीन शुभलेश्या ही हैं । तातै ऊपरि अपूर्वकरण तै लगाइ सयोगी पर्यंत छह गुणस्थाननि विषै एक शुक्ल लेश्या ही है । अयोगी गुण-स्थान लेश्या रहित है जातै, तहा योग कषाय का अभाव है ।

णट्ठ-कसाये लेस्सा, उच्चदि सा भूद-पुव्व-गदि-णाया ।
अहवा जोग-पउत्ती, मुक्खो त्ति तहिं हवे लेस्सा ।।५३३।।

नष्टकषाये लेश्या, उच्यते सा भूतपूर्वगतिन्यायात् ।
अथवा योगप्रवृत्तिः, मुख्येति तत्र भवेल्लेश्या ।।५३३।।

टीका – उपशांत कषायादिक जहा कषाय नष्ट होइ गए, ऐसे तीन गुण-स्थाननि विषै कषाय का अभाव होतै भी लेश्या कहिए है, सो भूतपूर्वगति न्याय तै कहिए हैं । पूर्वै योगनि की प्रवृत्ति कषाय सहित होती थी, तहा लेश्या का सद्भाव था, इहा योग पाइए है, तातै उपचार करि इहा भी लेश्या का सद्भाव कह्या । अथवा योगनि की प्रवृत्ति, सोई लेश्या, ऐसा भी कथन है, सो योग इहा है ही, ताकी प्रधानता करि तहा लेश्या है ।

तिण्हं दोण्हं दोण्हं, छण्हं दोण्हं च तेरसण्हं च ।
एत्तो य चोद्दसण्हं, लेस्सा भवणादि-देवाणं ।।५३४।।

तेऊ तेऊ तेऊ, पम्मा पम्मा य पम्म-सुक्का य ।
सुक्का य परमसुक्का, भवणतिया पुण्णगे असुहा ।।५३५।।

त्रयाणां द्वयोर्द्वयो , षण्णां द्वयोश्च त्रयोदशानां च ।
एतस्माच्च चतुर्दशानां, लेश्या भवनादिदेवानाम् ।।५३४।।

तेजस्तेजस्तेज: पद्मा पद्मा च पद्मशुक्ले च ।
शुक्ला च परमशुक्ला, भवनत्रिकाः अपूर्णके अशुभाः ।।५३५।।

टीका – देवनि के लेश्या कहिए है – तहां पर्याप्त भवनवासी, व्यंतर, ज्योतिषी इनि भवनत्रिक कै तेजो लेश्या का जघन्य अंश है । सौधर्म – ईशान, दोय स्वर्गवालो कै तेजो लेश्या का मध्यम अंश है । सनत्कुमार - माहेंद्र स्वर्गवालो कै तेजो लेश्या का उत्कृष्ट अंश अर पद्म लेश्या का जघन्य अंश है । ब्रह्म आदि छह स्वर्गवालो कै पद्म लेश्या का मध्यम अंश है । शतार - सहस्रार दोय स्वर्गवालो कै पद्म लेश्या का उत्कृष्ट अंश अर शुक्ल लेश्या का जघन्य अंश है । आनत आदि च्यारि स्वर्ग अर नव ग्रैवेयक इनि तेरह वालो कै शुक्ल लेश्या का मध्यम अंश है । ताके ऊपरि नव अनुदिश अर पंच अनुत्तर इनि चौदह विमान वालो कै शुक्ल लेश्या का उत्कृष्ट अंश है । बहुरि भवनत्रिक देवनि कै अपर्याप्त अवस्था विषै कृष्णादि तीन अशुभ लेश्या ही पाइए है । याही तै यहु जानिए है, जो वैमानिक देवनि कै पर्याप्त वा अपर्याप्त अवस्था विषै लेश्या समान ही है । असै जिस जीव कै जो लेश्या पाइए, सो जीव तिस लेश्या का स्वामी जानना । इति स्वाम्यधिकार ।

आगै साधन अधिकार कहै है–

वण्णोदय-संपादिद-सरीरवण्णो दु दव्वदो लेस्सा ।
मोहुदय-खओवसमोवसम खयज-जीवफंदणं भावो ।।५३६।।

वर्णोदयसंपादित-शरीरवर्णस्तु द्रव्यतो लेश्या ।
मोहोदयक्षयोपशमोपशमक्षयजजीवस्पन्दो भावः ।।५३६।।

टीका – वर्ण नामा नामकर्म के उदय तै उत्पन्न भया जो शरीर का वर्ण, सो द्रव्य लेश्या है । तातै द्रव्य लेश्या का साधन नामा नामकर्म का उदय है । बहुरि असंयत पर्यंत च्यारि गुणस्थाननि विषै मोहनीय कर्म का उदय तै, देश विरतादिक तीन गुणस्थाननि विषै मोहनीय कर्म का क्षयोपशम तै उपशम श्रेणी विषै मोहनीय कर्म का उपशम तै क्षपक श्रेणी विषै मोहनीय कर्म का क्षय तै उत्पन्न भया जो जीव का स्पंद, सो भाव लेश्या है । स्पंद कहिए जीव के परिणामनि का चंचल होना वा

जीव के प्रदेशनि का चचल होना, सो भाव लेश्या है। तहा परिणाम का चचल होना कषाय है। प्रदेशनि का चचल होना योग है। तीहिं कारण करि योग कपायनि करि भाव लेश्या कहिए है। तातैं भाव लेश्या का साधन मोहनीय कर्म का उदय वा क्षयोपशम वा उपशम वा क्षय जानना। इति साधनाधिकारः।

आगै सख्याधिकार छह गाथानि करि कहै है—

किण्हादि-रासिमावलि-असंखभागेण भजिय पविभत्ते।
हीणकमा कालं वा, अस्सिय दव्वा दु भजिदव्वा ॥५३७॥

कृष्णादिराशिमावल्यसंख्यभागेन भक्त्वा प्रविभक्ते।
हीनक्रमाः कालं वा, आश्रित्य द्रव्याणि तु भक्तव्यानि ॥५३७॥

टीका – कृष्णादिक अशुभ तीन लेश्यावाले जीवनि का प्रमाण है, सो तीन शुभ लेश्यावालो का प्रमाण कौं ससारी जीवनि का प्रमाण मैं स्यो घटाए, जितना रहे तितना जानना, सो किंचिदून ससारी राशिमात्र भया। ताकौ आवली का असख्यातवा भाग का भाग दीजिए, तहा एक भाग बिना अवशेष बहुभाग रहे, तिनके तीन भाग करिए, सो एक-एक भाग एक-एक लेश्यावालो का समान रूप जानना। बहुरि जो एक भाग रह्या, ताकौ आवली का असख्यातवा भाग का भाग देइ, तहा एक भाग जुदा राखि, अवशेष बहुभाग रहैं, सो पूर्वं समान भागनि विषै जो कृष्ण लेश्यावालो का वट (हिस्सा) था, तिसविषै जोडि दीए, जो प्रमाण होइ, तितने कृष्ण लेश्यावाले जीव जानने। बहुरि जो वह एक भाग रह्या था, ताकौं आवली का असख्यातवा भाग का भाग देइ, तहा एक भाग कौं जुदा राखि, अवशेष बहुभाग रहै, ते पूर्वं समान भाग विषै नील लेश्यावालो का वट था, तिसविषै जोडि दीए, जो प्रमाण होइ, तितने नील लेश्यावाले जीव जानने। बहुरि जो वह एक भाग रह्या था, सो पूर्वं समान भाग विषै कपोत लेश्यावालो का वट था, तिसविषै जोडे, जो प्रमाण होइ, तितने कपोत लेश्यावाले जीव जानने। अैसै कृष्णलेश्यादिक तीन लेश्यावालो का द्रव्य करि प्रमाण कह्या, सो क्रमतै किछू किछू घटता जानना।

अथवा काल अपेक्षा द्रव्य करि परिमाण कीजिए है। कृष्ण, नील, कपोत तीनो लेश्यानि का काल मिलाए, जो कोई अतर्मुहूर्त मात्र होइ, ताकौ आवली का असख्यातवा भाग का भाग दीजिए, तहा एक भाग कौं जुदा राखि, अवशेष बहुभाग

रहै, तिनिका तीन भाग कीजिए, तहा एक एक समान भाग एक एक लेश्या कौ दीजिए। बहुरि जो एक भाग रह्या, ताकौ आवली का असख्यातवा भाग का भाग दीजिये, तहा एक भाग कौ जुदा राखि अवशेष बहुभाग रहे, सो पूर्वोक्त कृष्ण लेश्या का समान भाग विषै मिलाइए, बहुरि अवशेष जो एक भाग रह्या, ताकौ आवली का असख्यातवा भाग का भाग दीजिए, तहा एक भाग कौं जुदा राखि, अवशेष बहुभाग पूर्वोक्त नीललेश्या का समान भाग विषै मिलाइए। बहुरि जो एक भाग रह्या, सो पूर्वोक्त कपोत लेश्या का समान भाग विषै मिलाइए, असैं मिलाए, जो जो प्रमाण भया, सो सो कृष्णादि लेश्यानि का काल जानना।

अब इहा त्रैराशिक करना। तहा तीनू लेश्यानि का काल जोडें, जो प्रमाण भया, सो तौ प्रमाणराशि, बहुरि अशुभ लेश्यावाले जीवनि का जो किंचित् ऊन ससारी जीव मात्र प्रमाण सो फलराशि। बहुरि कृष्णलेश्या का काल का जो प्रमाण सोई इच्छाराशि, तहा फल करि इच्छा कौ गुणें, प्रमाण का भाग दीए, लब्धराशि किंचित् ऊन तीन का भाग अशुभ लेश्यावाले जीवनि का प्रमाण कौ दीए, जो प्रमाण भया, तितने कृष्णलेश्यावाले जीव जानने। असैं ही प्रमाणराशि, फलराशि, पूर्वोक्त इच्छा-राशि अपना - अपना काल करि नील वा कपोत लेश्या विषै भी जीवनि का प्रमाण जानना। असैं काल अपेक्षा द्रव्य करि अशुभलेश्यावाले जीवनि का प्रमाण कह्या है।

खेत्तादो असुहतिया, अणंतलोगा कमेण परिहीणा।
कालादोतीदादो, अणंतगुणिदा कमा हीणा ॥५३८॥

क्षेत्रतः अशुभत्रिका, अनंतलोकाः क्रमेण परिहीनाः।
कालादतीतादनंतगुणिताः क्रमाद्धीनाः ॥५३८॥

टीका — क्षेत्र प्रमाण करि अशुभ तीन लेश्यावाले जीव अनत लोक मात्र जानने। लोकाकाश के प्रदेशनि तै अनत गुणे है, तहा क्रमतै हीनक्रम जानने। कृष्णलेश्यावालो तै किछू घाटि नील लेश्यावालो का प्रमाण है। नील लेश्यावालौ तै किछू घाटि कपोत लेश्यावालो का प्रमाण है। बहुरि इहा प्रमाणराशि लोक, फलराशि एक शलाका, इच्छाराशि अपने - अपने जीवनि का प्रमाण कीए, लब्धि-राशिमात्र अनत शलाका भई। बहुरि प्रमाण एक शलाका, फल एक लोक, इच्छा अनत शलाका कीए, लब्धराशि अनत लोक मात्र कृष्णादि लेश्यावाले जीवनि का

प्रमाण हो है । बहुरि काल प्रमाण करि अशुभ तीन लेश्यावाले जीव, अतीत काल के समयनिका प्रमाण तै अनत गुणे है । इहा भी पूर्वोक्त हीन क्रम जानना । बहुरि इहा प्रमाणराशि अतीत काल, फलराशि एक शलाका, इच्छाराशि अपने - अपने जीवनि का प्रमाण कीए, लब्धराशिमात्र अनत शलाका भई । बहुरि प्रमाण एक शलाका, फल एक अतीत काल, इच्छा अनत शलाका करि, लब्ध राशि अनत अतीत कालमात्र कृष्णादि लेश्यावाले जीवनि का प्रमाण हो है ।

केवलणाणणंतिमभागा भावादु किण्ह-तिय-जीवा ।
तेउतिया-संखेज्जा, संखासंखेज्जभागकमा ॥५३९॥

केवलज्ञानानंतिमभागा भावात्तु कृष्णत्रिकजीवाः ।
तेजस्त्रिका असंख्येयाः संख्यासंख्येयभागक्रमाः ॥५३९॥

टीका – बहुरि भाव मान करि अशुभ तीन लेश्यावाले जीव, केवलज्ञान के अविभाग प्रतिच्छेदनि का प्रमाण के अनतवे भाग प्रमाण हैं । इहा भी पूर्ववत् हीन क्रम जानना । बहुरि इहा प्रमाण राशि अपने - अपने लेश्यावाले जीवनि का प्रमाण, फल एक शलाका, इच्छा केवलज्ञान कीए, लब्ध राशिमात्र अनन्त प्रमाण भया, इसकौं प्रमाणराशि करि फलराशि एक शलाका, इच्छाराशि केवलज्ञान कीए केवलज्ञान के अनन्तवे भाग मात्र कृष्णादि लेश्यावाले जीवनि का प्रमाण हो है । बहुरि तेजोलेश्या आदि तीन शुभलेश्यावालो का प्रमाण असख्यात है, तथापि तेजोलेश्यावालो के सख्यातवे भाग पद्मलेश्या वाले हैं, पद्मलेश्या वालो के असख्यातवे भाग शुक्ल लेश्यावाले हैं । ऐसै द्रव्य करि शुक्ललेश्यावालो का प्रमाण कह्या ।

जोइसियादो अहिया, तिरक्खसण्णिस्स संखभागोदु ।
सूइस्स अंगुलस्स य, असंखभागं तु तेउतियं ॥५४०॥

ज्योतिष्कतोऽधिका , तिर्यक्सज्ञिन संख्यभागस्तु ।
सूचेरगुलस्य च, असंख्यभागं तु तेजस्त्रिकम् ॥५४०॥

टीका – तेजो लेश्यावाले जीव ज्योतिष्क राशि तै किछू अधिक है । कैसै ? सो कहिए है – पैसठि हजार पाचसै छत्तीस प्रतरागुल का भाग, जगत्प्रतर कौ दीए, जो प्रमाण होइ, तितने तौ ज्योतिषी देव । बहुरि घनागुल का प्रथम वर्गमूल करि

जगच्छ्रेणी को गुणें, जो प्रमाण होइ, तितने भवनवासी । बहुरि तीन सै योजन के वर्ग का भाग जगत्प्रतर कौ दीए, जो प्रमाण होइ, तितने व्यंतर । बहुरि घनांगुल का तृतीय वर्गमूल करि जगच्छ्रेणी कौ गुणें, जो प्रमाण होइ, तितने सौधर्म - ईशान स्वर्ग के वासी देव । बहुरि पांच बार संख्यात करि गुणित पणट्ठी प्रमाण प्रतरांगुल का भाग जगत्प्रतर कौ दीए, जो प्रमाण होइ, तितने तेजो लेश्यावाले तिर्यंच । बहुरि संख्यात तेजोलेश्यावाले मनुष्य, इनि सबनि का जोड दीए, जो प्रमाण होइ, तितने जीव तेजोलेश्यावाले जानने । बहुरि पद्मलेश्यावाले जीव, तेजोलेश्यावाले जीवनि तैं संख्यात गुणे घाटि है । तथापि तेजोलेश्यावाले संज्ञी तिर्यंचनि तैं भी संख्यात गुणे घाटि है; जातैं पद्मलेश्यावाले पंचेंद्री सैनी तिर्यंचनि का प्रमाण विषैं पद्मलेश्यावाले कल्पवासी देव अर मनुष्य, तिनिका प्रमाण मिलाए, जो जगत्प्रतर का असंख्यातवें भागमात्र प्रमाण भया तितने पद्मलेश्यावाले जीव है । बहुरि शुक्ललेश्यावाले जीव सूच्यंगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण हैं । असैं क्षेत्र प्रमाण करि तीन शुभ लेश्यावाले जीवनि का प्रमाण कह्या ।

बेसदछप्पण्णंगुल-कदि-हिद-पदरं तु जोइसियमाणं ।
तस्स य संखेज्जदिमं तिरिक्खसण्णीण परिमाणं ॥५४१॥

द्विशतषट्पंचाशदंगुलकृतिहितप्रतरं तु ज्योतिष्कमानम् ।
तस्य च संख्येयतमं तिर्यक्संज्ञिनां परिमाणं ॥५४१॥

टीका – पूर्वै जो तेजोलेश्यावालो का प्रमाण ज्योतिषी देवराशि तैं साधिक कह्या, अर पद्मलेश्या का प्रमाण संज्ञी तिर्यंचनि के संख्यातवें भागमात्र कह्या, सो दोय से छप्पन का वर्ग पणट्ठी, तीहि प्रमाण प्रतरांगुल का भाग जगत्प्रतर कौ दीए, जो प्रमाण होइ, तितने ज्योतिषी जानने । बहुरि इनिके संख्यातवें भाग प्रमाण सैनी तिर्यंचनि का प्रमाण जानना ।

तेउदु असंखकप्पा, पल्लासंखेज्जभागया सुक्का ।
ओहि असंखेज्जदिमा, तेउतिया भावदो होंति ॥५४२॥

तेजोद्वया असंख्यकल्पाः पल्यासंख्येयभागकाः शुक्लाः ।
अवध्यसंख्येयाः तेजस्त्रिका भावतो भवंति ॥५४२॥

टीका – तेजोलेश्या, पद्मलेश्यावाले जीव प्रत्येक असख्यात कल्प प्रमाण है। तथापि तेजोलेश्यावालो के सख्यातवे भागमात्र पद्मलेश्यावाले है। कल्पकाल का प्रमाण जितने बीस कोडाकोडि सागर के समय होहि, तितना जानना। बहुरि शुक्ललेश्यावाले पल्य के असख्यातवे भाग प्रमाण है। ऐसे काल प्रमाण करि तीन शुभलेश्यावाले जीवनि का प्रमाण कह्या। बहुरि अवधिज्ञान के जितने भेद हैं, तिनके असख्यातवे भागप्रमाण प्रत्येक तीन शुभलेश्यावाले जीव हैं। तथापि तेजोलेश्यावालों के सख्यातवे भागमात्र पद्मलेश्यावाले हैं। पद्मलेश्यावालो के असख्यातवें भाग मात्र शुक्ललेश्यावाले है। ऐसे भाव प्रमाण करि तेज, पद्म, शुक्ल लेश्यावालो का प्रमाण कह्या। इति सख्याधिकार —

आगै क्षेत्राधिकार कहै हैं —

सट्ठाणसमुग्घादे,उववादे सव्वलोयमसुहाणं।
लोयस्सासंखेज्जदिभागं खेत्तं तु तेउतिये ॥५४३॥

स्वस्थानसमुद्घाते, उपपादे सर्वलोकमशुभानाम्।
लोकस्यासंख्येयभागं क्षेत्रं तु तेजस्त्रिके ॥५४३॥

टीका – विवक्षित लेश्यावाले जीव वर्तमान काल विषै विवक्षित स्वस्थानादि विशेष लीए जितने आकाश विषै पाइए, ताका नाम क्षेत्र है। सो कृष्ण आदि तीन अशुभ लेश्यानि का क्षेत्र स्वस्थान विषै वा समुद्घात विषै वा उपपाद विषै सर्वलोक है। बहुरि तेजोलेश्या आदि तीन शुभलेश्यानि का क्षेत्र लोक के असख्यातवे भाग प्रमाण है, ऐसे सक्षेप करि क्षेत्र कह्या।

बहुरि विशेष करि दश स्थानकनि विषै कहिए है। तहा स्वस्थानकनि के तौ दोय भेद-एक स्वस्थानस्वस्थान, एक विहारवत् स्वस्थान। तहा विवक्षित लेश्यावाले जीव, जिस नरक, स्वर्ग, नगर, ग्रामादि क्षेत्र विषै उपजे होहि, सो तौ स्वस्थानस्वस्थान है। बहुरि विवक्षित लेश्यावाले जीवनि कौ विहार करने के योग्य जो क्षेत्र होइ, सो विहारवत्स्वस्थान है।

बहुरि अपने शरीर तै केते इक आत्मप्रदेशनि का बाह्य निकसि यथायोग्य फैलना, सो समुद्घात कहिए। ताके सात भेद – वेदना, कषाय, वैक्रियिक, मारणांतिक, तैजस, आहारक, केवल।

तहा जो बहुत पीडा के निमित्त तै प्रदेशनि का निकसना, सो वेदना समुद्घात है। बहुरि क्रोधादि कषाय के निमित्त तै प्रदेशनि का निकसना; सो कषायसमुद्घात है। विक्रिया के निमित्त तैं प्रदेशनि का निकसना, सो वैक्रियिक समुद्घात है। मरण होतै पहिलै जो नवीन पर्याय के धरने का क्षेत्र पर्यंत प्रदेशनि का निकसना; सो मारणातिक समुद्घात है। अशुभरूप वा शुभरूप तैजस शरीरनि करि नगरादिक कौ जलावै वा भला करै, ताकी साथि जो प्रदेशनि का निकसना, सो तैजस समुद्घात है। प्रमत्त गुणस्थानवाले कै आहारक शरीर की साथि प्रदेशनि का निकसना, सो आहारक समुद्घात है। केवलज्ञानी के दड कपाटादि क्रिया होतै प्रदेशनि का निकसना, सो केवली समुद्घात है। असै समुद्घात के सात भेद है।

बहुरि पहलै जो पर्याय धरता था, ताकौ छोडि, पहिले समय अन्य पर्याय रूप होइ, अतराल विषै जो प्रवर्तना, सो उपपाद कहिए। याका एक भेद हो है। असै ए दश स्थान भए। तहा कृष्णलेश्यावाले जीवनि का स्वस्थानस्वस्थान, वेदनासमुद्घात, कषायसमुद्घात, मारणातिकसमुद्घात, उपपाद इनि पच पदनि विषै क्षेत्र सर्व लोक जानना। अब इनि जीवनि का प्रमाण कहिए है –

कृष्ण लेश्यावालो का जो पूर्वे परिमाण कह्या, ताकौ संख्यात का भाग दीजिए, तहा बहुभाग प्रमाण तौ स्वस्थानस्वस्थानवाले जीव है। भाग देइकरि तहा एक भाग कौं तौ जुदा राखिए, अवशेष जो रहै, ताकौ बहुभाग कहिए, यहु सर्वत्र जानना। बहुरि जो एक भाग रह्या, ताकौं सख्यात का भाग दीजिए, तहा बहुभाग प्रमाण वेदनासमुद्घातवाले जीव है। बहुरि जो एक भाग रह्या, ताकौं सख्यात का भाग दीजिए, तहा बहुभाग प्रमाण कषाय समुद्घातवाले जीव है। बहुरि एक भाग रह्या, ताकौ फलराशि करिए, बहुरि एक निगोदिया का आयु सास के अठारह्वा भाग तिस प्रमाण अतर्मुहूर्त के जेते समय होइ, सो प्रमाण राशि करिए। बहुरि एक समय कौ इच्छाराशि करिए। तहा फल कौं इच्छाराशि करि गुणि, प्रमाण का भाग दीए, जेता प्रमाण आवै, तितना जीव उपपादवाले है। बहुरि इस उपपादवाले जीवनि के प्रमाण कौ मारणातिक समुद्घात काल अतर्मुहूर्त, ताके जेते समय होहि, तिनकरि गुणे, जो प्रमाण होइ, तितने जीव मूलराशि के सख्यातवे भागमात्र मारणातिक समुद्घातवाले जानने, असै ए जीव सर्वलोक विषै पाइए। तातै इनिका क्षेत्र सर्वलोक है। बहुरि विहारवत्स्वस्थान विषै क्षेत्र सख्यात सूच्यगुलनि करि जगत्प्रतर कौ गुणै, जो प्रमाण होइ, तितना जानना। कैसै ? सो कहिए है —

कृष्ण लेश्यावाले पर्याप्त त्रस जीवनि का जो प्रमाण, पर्याप्त त्रस राशि के किंचिदून त्रिभाग मात्र है । ताकौ सख्यात का भाग दीजिए, तहा बहुभाग प्रमाण स्वस्थानस्वस्थान विषै है । अवशेष एक भाग रह्या, ताकौ सख्यात का भाग दीजिए, तहा बहुभाग प्रमाण विहारवत्स्वस्थान विषै जीव जानने । अवशेष एक भाग रह्या, सो अवशेष यथायोग्य स्थान विषै जानना । अब इहा त्रस पर्याप्त जीवनि की जघन्य, मध्यम अवगाहना अनेक प्रकार है, सो हीनाधिक बरोबरि करि सख्यात घनागुल प्रमाण मध्यम अवगाहना मात्र एक जीव की अवगाहना का ग्रहण कीया, सो इस अवगाहना का प्रमाण कौ फलराशि करिए, पूर्वै जो विहारवत्स्वस्थान जीवनि का प्रमाण कह्या, ताकौ इच्छाराशि करिए, एक जीव कौ प्रमाणराशि करिए । तहा फलकरि इच्छा कौं गुणि, प्रमाण का भाग दीए, जो सख्यात सूच्यगुलकरि गुण्या हूवा, जगत्प्रतर प्रमाण भया, सो विहारवत् स्वस्थान विषै क्षेत्र जानना । बहुरि वैक्रियिक समुद्घात विषै क्षेत्र घनागुल का वर्ग करि असख्यात जगच्छ्रेणी कौं गुणै, जो प्रमाण होइ, तितना जानना । कैसै ? सो कहिए है –

कृष्ण लेश्यावाले वैक्रियिक शक्ति करि युक्त जीवनि का जो प्रमाण वैक्रियिक योगी जीवनि का किंचिदून त्रिभाग मात्र है । ताकौ सख्यात का भाग दीजिए, तहा बहुभाग प्रमाण स्वस्थानस्वस्थान विषै जीव है । अवशेष एक भाग रह्या, ताकौं सख्यात का भाग दीजिये, तहा बहुभाग प्रमाण विहारवत् स्वस्थान विषै जीव हैं। अवशेष एक भाग रह्या, ताकौ सख्यात का भाग दीजिए, तहा बहुभाग प्रमाण वेदना समुद्घात विषै जीव है । अवशेष एक भाग रह्या, ताकौ सख्यात का भाग दीजिए, तहा बहुभाग प्रमाण कषाय समुद्घात विषै जीव है । अवशेष एक भाग प्रमाण वैक्रियिक समुद्घात विषै जीव प्रवर्तें हैं। ऐसै जो वैक्रियिक समुद्घातवाले जीवनि का प्रमाण कह्या, ताकौं हीनाधिक बरोबरि करि एक जीव सबधी वैक्रियिक समुद्घात का क्षेत्र सख्यात घनागुल प्रमाण है, तिसकरि गुणै, जो घनागुल का वर्ग करि गुण्या हूवा असख्यात श्रेणीमात्र प्रमाण भया; सो वैक्रियिक समुद्घात का क्षेत्र जानना । बहुरि इन ही का सामान्यलोक, अधोलोक, ऊर्ध्वलोक, तिर्यक्लोक, मनुष्यलोक इनि पच लोकनि की अपेक्षा व्याख्यान कीजिए है –

समस्त जो लोक, सो सामान्यलोक है । मध्यलोक तै नीचै, सो अधोलोक है। मध्यलोक के ऊपरि ऊर्ध्वलोक है । मध्यलोक विषै एक राजू चौडा, लाख योजन ऊचा तिर्यक्लोक है । पैतालीस लाख योजन चौडा, लाख योजन ऊचा मनुष्यलोक है ।

प्रश्न-तहा कृष्ण लेश्यावाले स्वस्थानस्वस्थान, वेदनासमुद्घात, कषायसमुद्घात, मारणातिकसमुद्घात, उपपाद इनि विषै प्रवर्तते जीव कितने क्षेत्रविषै तिष्ठै है ?

तहां उत्तर - जो सामान्यादिक पाच प्रकार सर्वलोक विषै तिष्ठै है । बहुरि विहारवत् स्वस्थान विषै प्रवर्तते जीव, सामान्यलोक - अधोलोक - ऊर्ध्वलोक का तौ असख्यातवा भाग प्रमाण क्षेत्र विषै तिष्ठै हैं । अर तिर्यक्लोक ऊचा लाख योजन प्रमाण है । अर एक जीव की उचाई, वाके सख्यातवे भाग प्रमाण है । तातै तिर्यक् लोक के सख्यातवे भाग प्रमाण क्षेत्र विषै तिष्ठै है । अर मानुषोत्तर पर्वत के मध्यवर्ती जो मनुष्य लोक तातै असख्यात गुणा क्षेत्र विषै तिष्ठै है । बहुरि वैक्रियिक समुद्घात विषै प्रवर्तते जीव, सामान्यादिक च्यारि लोक, तिनके असख्यातवा भाग प्रमाण क्षेत्र विषै तिष्ठै है । अर मनुष्य लोक तै असख्यात गुणा क्षेत्र विषै तिष्ठै हैं, जातै वैक्रियिक समुद्घातवालो का क्षेत्र असख्यात गुणा घनागुल का वर्ग करि गुणित जगच्छ्रेणीमात्र है । अैसै सात स्थाननि विषै व्याख्यान कीया ।

बहुरि तैजस समुद्घात, आहारक समुद्घात, केवली समुद्घात इन लेश्यावाल जीवनि कै होता नाही, तातै, इनिका कथन न कीया ।

इसप्रकार जैसै कृष्णलेश्या का व्याख्यान कीया, तैसै ही नीललेश्या, कपोतलेश्या का व्याख्यान जानना । विशेष इतना जहा कृष्णलेश्या का नाम कह्या है, तहा नीललेश्या वा कपोतलेश्या का नाम लेना । अब तेजो लेश्या का क्षेत्र कहिए है—

तहा प्रथम ही जीवनि का प्रमाण कहिए है - तेजोलेश्यावाले जीवनि का सख्या अधिकार विषै जो प्रमाण कह्या, ताकौं सख्यात का भाग दीजिए, तहा बहुभाग स्वस्थानस्वस्थान विषै जानना । एक भाग रह्या, ताकौ सख्यात का भाग दीजिए, तहा बहुभाग विहारवत् स्वस्थान विषै जानना । बहुरि जो एक भाग रह्या, ताकौ सख्यात का भाग दीजिए, तहा बहुभाग वेदना समुद्घात विषै जानना । बहुरि जो एक भाग रह्या, ताकौ सख्यात का भाग दीजिए, तहा बहुभाग वेदना समुद्घात विषै जानना । बहुरि जो एक भाग रह्या, ताकौ सख्यात का भाग दीजिए, तहा बहुभाग कषाय समुद्घात विषै जानना । बहुरि एक भाग वैक्रियिक समुद्घात विषै जानना । अैसै जीवनि का परिमाण कह्या । अब तेजो लेश्या मुख्यपनै भवनत्रिक आदि देवनि कै पाइए है, तिनिविषै एक देव का शरीर का अवगाहना का प्रमाण मुख्यता

कृष्ण लेश्यावाले पर्याप्त त्रस जीवनि का जो प्रमाण, पर्याप्त त्रस राशि के किंचिदून त्रिभाग मात्र है । ताकौ सख्यात का भाग दीजिए, तहा बहुभाग प्रमाण स्वस्थानस्वस्थान विषै है । अवशेष एक भाग रह्या, ताकौ सख्यात का भाग दीजिए, तहा बहुभाग प्रमाण विहारवत्स्वस्थान विषै जीव जानने । अवशेष एक भाग रह्या, सो अवशेष यथायोग्य स्थान विषै जानना । अब इहा त्रस पर्याप्त जीवनि की जघन्य, मध्यम अवगाहना अनेक प्रकार है, सो हीनाधिक वरोबरि करि सख्यात घनागुल प्रमाण मध्यम अवगाहना मात्र एक जीव की अवगाहना का ग्रहण कीया, सो इस अवगाहना का प्रमाण कौ फलराशि करिए, पूर्वै जो विहारवत्स्वस्थान जीवनि का प्रमाण कह्या, ताकौ इच्छाराशि करिए, एक जीव कौ प्रमाणराशि करिए । तहा फलकरि इच्छा कौ गुणि, प्रमाण का भाग दीए, जो सख्यात सूच्यगुलकरि गुण्या हूवा, जगत्प्रतर प्रमाण भया, सो विहारवत् स्वस्थान विषै क्षेत्र जानना । बहुरि वैक्रियिक समुद्घात विषै क्षेत्र घनागुल का वर्ग करि असख्यात जगच्छ्रेणी कौं गुणै, जो प्रमाण होइ, तितना जानना । कैसे ? सो कहिए है –

कृष्ण लेश्यावाले वैक्रियिक शक्ति करि युक्त जीवनि का जो प्रमाण वैक्रियिक योगी जीवनि का किंचिदून त्रिभाग मात्र है । ताकौ सख्यात का भाग दीजिए, तहा बहुभाग प्रमाण स्वस्थानस्वस्थान विषै जीव हैं । अवशेष एक भाग रह्या, ताकौ सख्यात का भाग दीजिये, तहा बहुभाग प्रमाण विहारवत् स्वस्थान विषै जीव हैं। अवशेष एक भाग रह्या, ताकौ सख्यात का भाग दीजिए, तहा बहुभाग प्रमाण वेदना समुद्घात विषै जीव है । अवशेष एक भाग रह्या, ताकौ सख्यात का भाग दीजिए, तहा बहुभाग प्रमाण कषाय समुद्घात विषै जीव हैं । अवशेष एक भाग प्रमाण वैक्रियिक समुद्घात विषै जीव प्रवर्तै हैं । ऐसे जो वैक्रियिक समुद्घातवाले जीवनि का प्रमाण कह्या, ताकौ हीनाधिक बरोबरि करि एक जीव सबधी वैक्रियिक समुद्घात का क्षेत्र सख्यात घनागुल प्रमाण है, तिसकरि गुणै, जो घनागुल का वर्ग करि गुण्या हूवा असख्यात श्रेणीमात्र प्रमाण भया, सो वैक्रियिक समुद्घात का क्षेत्र जानना । बहुरि इन ही का सामान्यलोक, अधोलोक, ऊर्ध्वलोक, तिर्यक्लोक, मनुष्यलोक इनि पच लोकनि की अपेक्षा व्याख्यान कीजिए है –

समस्त जो लोक, सो सामान्यलोक है । मध्यलोक तै नीचै, सो अधोलोक है । मध्यलोक के ऊपरि ऊर्ध्वलोक है । मध्यलोक विषै एक राजू चौडा, लाख योजन ऊचा तिर्यग्लोक है । पैतालीस लाख योजन चौडा, लाख योजन ऊचा मनुष्यलोक है ।

बाह्य आत्मा के प्रदेश फैलै, ते प्रदेश एक जीव की अपेक्षा संख्यात योजन प्रमाण तौ लंबा, अर सूच्यंगुल का संख्यातवां भाग प्रमाण चौडा वा ऊंचा क्षेत्र कौं रोकैं, सो इसका क्षेत्रफल संख्यात घनांगुल प्रमाण भया । इसकरि जो पूर्वैं विहारवत्स्वस्थान विषै जीवनि का प्रमाण कह्या था, ताकौं गुणिए, तब सर्व जीव संबंधी विहारवत् स्वस्थान विषै क्षेत्र का परिमाण होइ । इहां ऐसा अर्थ जानना-जो देवनि कै मूल शरीर तौ अन्य क्षेत्र विषै तिष्ठै है अर विहार करि विक्रियारूप शरीर अन्य क्षेत्र विषै तिष्ठै है । तहां दोऊनिके बीचि आत्मा के प्रदेश सूच्यंगुल का संख्यातवां भाग मात्र प्रदेश ऊंचे, चौडे, फैलै है । अर इहां मुख्यता की अपेक्षा संख्यात योजन लंबे कहे है । बहुरि देव अपनी - अपनी इच्छा तैं हस्ती, घोटक इत्यादिक रूप विक्रिया करैं, ताकी अवगाहना एक जीव की अपेक्षा संख्यात घनांगुल प्रमाण है । इसकरि पूर्वैं जो वैक्रियिक समुद्घात विषै जीवनि का प्रमाण कह्या, ताकौं गुणिए, तब सर्व जीव संबंधी वैक्रियिक समुद्घात विषै क्षेत्र का परिमाण होइ ।

बहुरि पीतलेश्यावालेनि विषै व्यंतरदेव घने मरैं हैं, तातैं इहां व्यंतरनि की मुख्यता करि मारणांतिक समुद्घात कहिए है । जितना व्यंतर देवनि का प्रमाण है, ताकौं व्यंतरनि की मुख्यपनै दश हजार वर्ष आदि संख्यात वर्ष प्रमाण स्थिति के जेते समय होइ, तिनिका भाग दीए, जेता प्रमाण आवै, तितना जीव एक समय विषै मरण कौं प्राप्त हो है। बहुरि इनि मरनेवाले जीवनि कै पल्य का असंख्यातवां भाग का भाग दीजिये, तहां एक भाग प्रमाण जीवनि के ऋजु गति कहिये, समरूप सूधी गति हो है । बहुरि बहुभाग प्रमाण जीवनि के विग्रह गति कहिये, वक्रता लीए परलोक कौं गति हो है । बहुरि विग्रहगति जीवनि के प्रमाण कौं पल्य के असंख्यातवां भाग का भाग दीजिए, तहां एक भाग प्रमाण जीवनि के मारणांतिक समुद्घात न हो है ।

बहुरि बहुभाग प्रमाण जीवनि कै मारणांतिक समुद्घात हो है । बहुरि इस मारणांतिक समुद्घातवाले जीवनि के प्रमाण कौं पल्य का असंख्यातवां भाग दीजिए, तहां बहुभाग प्रमाण समीप थोरेसे क्षेत्रवर्ती मारणांतिक समुद्घातवाले जीव है । एक भाग प्रमाण दूर बहुत क्षेत्रवर्ती मारणांतिक समुद्घातवाले जीव है । सो एक समय विषै दूर मारणांतिक समुद्घात करनेवाले जीवनि का यह प्रमाण कह्या, अर मारणांतिक समुद्घात का काल अंतर्मुहूर्तमात्र है । तातैं अंतर्मुहूर्त के जेते समय होहि, तिनकरि तिस प्रमाण कौं गुणें, जो प्रमाण होइ, तितने एकठे भए, दूर मारणांतिक समुद्घातवाले जीव जानने । तहां एक जीव के दूरि मारणांतिक समुद्घात विषै

शरीर ते बाह्य प्रदेश फैले ते मुख्यपने एक राजू के संख्यातवे भाग प्रमाण लंबे अर सूच्यंगुल के संख्यातवें भाग प्रमाण चौडे वा ऊंचे क्षेत्र कौं रोकै । याका घनरूप क्षेत्रफल कीजिए, तब प्रतरांगुल का संख्यातवा भाग करि जगच्छ्रेणी का संख्यातवा भाग कौं गुणें, जो प्रमाण होइ, तितना क्षेत्र भया । इसकरि दूरि मारणांतिक जीवनि का प्रमाण कौं गुणिये, तब सर्व जीव संबंधी दूर मारणांतिक समुद्घात का क्षेत्र हो है । अन्य मारणांतिक समुद्घात का क्षेत्र स्तोक है, तातैं मुख्य ग्रहण तिस ही का कीया । बहुरि तैजस समुद्घात विषै शरीर तैं बाह्यप्रदेश निकसै, ते बारा योजन लंबा, नव योजन चौडा, सूच्यंगुल का संख्यातवा भाग प्रमाण ऊंचा क्षेत्र कौं रोकै, सो याका घनरूप क्षेत्रफल संख्यात घनांगुल प्रमाण भया । इसकरि तैजस समुद्घात करनेवालो का प्रमाण संख्यात है । तिसकौं गुणें जो प्रमाण होइ, तितना तैजस समुद्घात विषै क्षेत्र जानना । बहुरि आहारक समुद्घात विषै एक जीव के शरीर तैं बाह्य निकसे प्रदेश, ते संख्यात योजन प्रमाण लंबा, अर सूच्यंगुल का संख्यातवा भाग प्रमाण चौडा ऊंचा क्षेत्र कौं रोकै, याका घनरूप क्षेत्रफल संख्यात घनांगुल प्रमाण भया । इसकरि आहारक समुद्घातवाले जीवनि का संख्यात प्रमाण है, ताकौं गुणें जो प्रमाण होइ, तितना आहारक समुद्घात विषै क्षेत्र जानना । मूल शरीर तैं निकसि आहारक शरीर जहां जाइ, तहां पर्यंत लंबी आत्मा के प्रदेशनि की श्रेणी सूच्यंगुल का संख्यातवा भाग प्रमाण चौडी अर ऊंची आकाश विषै हो है, ऐसा भावार्थ जानना । ऐसै ही मारणांतिक समुद्घातादिक विषै भी भावार्थ जानि लेना ।

मरदि असंखेज्जदिमं, तस्सासंखा य विग्गहे होंति ।
तस्सासंखं दूरे, उववादे तस्स खु असंखं ।।५४४।।

म्रियते असंख्येयं, तस्यासंख्याश्च विग्रहे भवति ।
तस्यासंख्यं दूरे, उपपादे तस्य खलु असंख्यम् ।।५४४।।

टीका – इस सूत्र का अभिप्राय उपपाद क्षेत्र ल्यावने का है, सो पीत लेश्यावाले सौधर्म - ईशानवर्ती जीव मध्यलोक तैं दूर क्षेत्रवर्ती है, सो तिनके कथन मे क्षेत्र का परिमाण बहुत आवै । बहुत प्रमाण मे स्तोक प्रमाण गर्भित करिए हैं । तातैं तिनकी मुख्यता करि उपपाद क्षेत्र का कथन कीजिए है ।

सौधर्म - ईशान स्वर्ग के वासी देव घनांगुल का तृतीय वर्गमूल करि जगच्छ्रेणी कौं गुणिए, तितने प्रमाण है । इस प्रमाण कौं पल्य का असंख्यातवा भाग

का भाग दीजिए, तहा एक भाग प्रमाण एक एक समय विषै मारणेवाले जीवनि का प्रमाण हो है । इस प्रमाण कौ पल्य का असंख्यातवा भाग का भाग दीजिए, तहां बहुभाग प्रमाण विग्रहगति करनेवालो का प्रमाण हो है । याकौं पल्य का असख्यातवां भाग का भाग दीजिए, तहा बहुभाग प्रमाण मारणातिक समुद्घातवाले जीवनि का प्रमाण हो है । याकौ पल्य का असख्यातवा भाग का भाग दीजिए, तहा एक भाग प्रमाण दूर मारणातिक समुद्घातवाले जीवनि का प्रमाण हो हैं । याकौ द्वितीय दीर्घ दड विषै स्थित मारणातिक समुद्घात, ताके पूर्वं भया अैसा उपपादता करि युक्त जीवनि के प्रमाण ल्यावने कौं पल्य का असंख्यातवा भाग का भाग दीजिए, तहा एक भाग प्रमाण उपपाद जीवनि का प्रमाण है । तहा तिर्यंच उपजने की मुख्यता करि एक जीव सबंधी प्रदेश फैलने की अपेक्षा डेढ राजू लंबा, संख्यात सूच्यगुल प्रमाण चौडा वा ऊंचा क्षेत्र है । याका घन क्षेत्रफल सख्यात प्रतरागुल करि डेढ राजू कौं गुणै, जो प्रमाण भया, तितना जानना । इसकरि उपपाद जीवनि के प्रमाण कौं गुणै, जो प्रमाण होइ, तितना उपपाद विषै क्षेत्र जानना । बहुरि केवलि समुद्घात इस लेश्या विषै है नाही, तातै कथन न कीया । अैसे पीत लेश्या विषै क्षेत्र है । आगै पद्मलेश्या विषै क्षेत्र कहिए है –

सख्याधिकार विषै पद्मलेश्या वाले जीवनि का जो प्रमाण कह्या, ताकौ सख्यात का भाग दीजिये, तहा बहुभाग स्वस्थान स्वस्थान विषै जानना । अवशेष एक भाग रह्या, ताकौ सख्यात का भाग दीजिए, तहा बहुभाग विहारवत् स्वस्थान विषै जानना । अवशेष एक भाग रह्या, ताकौ संख्यात का भाग दीजिए, तहा बहुभाग वेदना समुद्घात विषै जानना । अवशेष एक भाग रह्या, सो कषाय समुद्घात विषै जानना । अैसे जीवनि का प्रमाण कह्या । अब यहा पद्मलेश्यावाले तिर्यंच जीवनि का अवगाहना प्रमाण बहुत है; तातै तिनकी मुख्यता करि कथन कीजिए है ।

तहा स्वस्थानस्वस्थान विषै अर विहारवत्स्वस्थान विषै एक तिर्यंच जीव की अवगाहना मुख्यपनै कोस लबी अर ताके नव मे भाग मुख का विस्तार, सो याका क्षेत्रफल **वासो त्ति गुणो परिही'** इत्यादि सूत्र करि करिए, तब संख्यात घनागुल प्रमाण होइ । इसकरि स्वस्थान स्वस्थानवाले जीवनि का प्रमाण कौं गुणै, स्वस्थान स्वस्थान विषै क्षेत्र होइ । अर विहारवत्स्वस्थानवाले जीवनि का प्रमाण कौ गुणै, विहारवत्स्वस्थान विषै क्षेत्र हो है । बहुरि पूर्वोक्त तिर्यंच शरीर की अवगाहना तै पूर्वोक्त प्रकार साढा च्यारि गुणा वेदना अर कषाय समुद्घात विषै एक जीव की अपेक्षा क्षेत्र है । इसकरि

पूर्वोक्त वेदना समुद्घातवाले जीवनि का प्रमाण कौं गुणिए, तब वेदना समुद्घात विषै क्षेत्र होइ, कषाय समुद्घातवाले जीवनि के प्रमाण कौं गुणै, कषाय समुद्घात विषै क्षेत्र का परिमाण होइ । बहुरि वैक्रियिक समुद्घात विषै पद्मलेश्यावाले जीव सनत्कुमार - माहेद्र विषै बहुत हैं । तातै तिनकी अपेक्षा कथन करै हैं –

सनत्कुमार -माहेद्रविषैं देव जगच्छ्रेणी का ग्यारहवा वर्गमूल भाग जगच्छ्रेणी कौ दीए, जो प्रमाण होइ, तितने हैं । इस राशि कौ सख्यात का भाग दीजिए, तब बहुभाग स्वस्थानस्वस्थान विषै जीव जानने । अवशेष एक भाग रह्या, ताकौं सख्यात का भाग दीजिए, तहा बहुभाग प्रमाण विहारवत् स्वस्थान विषै जीव जानने । अवशेष एक भाग रह्या, ताकौं सख्यात का भाग दीजिए, तहा बहुभाग प्रमाण वेदना समुद्घात विषै जीव जानने । अवशेष एक भाग रह्या, ताकौ सख्यात का भाग दीजिए, तहा बहुभाग प्रमाण कषाय समुद्घात विषै जीव जानने । अवशेष एक भाग रह्या, तीहि प्रमाण वैक्रियिक समुद्घात विषै जीव जानने । इस वैक्रियिक समुद्घातवाले जीवनि का प्रमाण कौं एक जीव सबधी विक्रियारूप हस्तिघोटकादिकनि की सख्यात घनागुल प्रमाण अवगाहना, तिसकरि गुणै, जो प्रमाण होइ, सोई वैक्रियिक समुद्घात विषै क्षेत्र जानना । बहुरि मारणातिक समुद्घात वा उपपाद विषै भी क्षेत्र सनत्कुमार - माहेद्र अपेक्षा बहुत है । तातै सनत्कुमार-माहेद्र की अपेक्षा कथन कीजिए है —

मरदि असंखेज्जदिमं, तस्सासंखा य विग्गहे होंति ।
तस्सासंखं दूरे, उववादे तस्स खु असंखं ।।

जो सनत्कुमार माहेद्रवासी जीवनि का प्रमाण कह्या, ताकौं असख्य कहिए पल्य का असख्यातवा भाग, ताका भाग दीजिए, तहा एक भाग प्रमाण समय समय जीव मरण कौं प्राप्त हो है । बहुरि इस राशि कौ पल्य का असख्यातवा भाग का भाग दीजिए, तहा बहुभाग प्रमाण विग्रह गतिवालो का प्रमाण है । बहुरि इस राशि कौं पल्य का असख्यातवा भाग का भाग दीजिए, तहा बहुभाग प्रमाण मारणातिक समुद्घातवाले जीव हैं । बहुरि इसकौं पल्य का असख्यातवा भाग का भाग दीजिए, तहा एक भाग प्रमाण दूर मारणातिक समुद्घात वाले जीव हैं । बहुरि इसकौ पल्य का असख्यातवा भाग का भाग दीजिए, तहा एक भाग प्रमाण उपपाद का दड विषै स्थित जीव है । तहा एक जीव अपेक्षा मारणातिक समुद्घात विषै क्षेत्र तीन राजू लबा सूच्यगुल का सख्यातवा भागमात्र चौडा वा ऊचा क्षेत्र है । इन सनत्कुमार माहे

द्रवासी देवनि करि कीया मारणातिक दंड का घनरूप क्षेत्रफल प्रतरागुल का सख्यातवा भाग करि तीन राजू कौ गुणै जो प्रमाण होइ, तितना है। इसकरि दूर मारणातिक समुद्घातवाले जीवनि का प्रमाण कह्या था; ताकौ गुणिए, तब मारणातिक समुद्घात विषै क्षेत्र का प्रमाण होइ, बहुरि उपपाद विषै तिर्यंच जीवनि करि कीया सनत्कुमार माहेद्र प्रति उपपाद रूप दड, सो तीन राजू लबा, सख्यात सूच्यगुल प्रमाण चौडा वा ऊचा है। ताका क्षेत्र फल सख्यात प्रतरागुल करि गुण्या हूवा तीन राजू प्रमाण एक जीव अपेक्षा क्षेत्र हो है। इसकरि उपपाद वालो के प्रमाण कौ गुणै, उपपाद विषै क्षेत्र का प्रमाण हो है। बहुरि तैजस अरु आहारक समुद्घात विषै क्षेत्र जैसै तेजोलेश्या के कथन विषै कह्या है, तैसे इहा भी सख्यात घनागुल करि सख्यात जीवनि कौ गुणै, जो प्रमाण होइ, तितना जानना। बहुरि केवल समुद्घात इस लेश्या विषै होता ही नाही; अैसै पद्मलेश्या का क्षेत्र कह्या। आगै शुक्ललेश्या विषै क्षेत्र कहिए है।

सख्या अधिकार विषै जो शुक्ललेश्यावालों का प्रमाण कह्या, ताकौ पल्य का असख्यातवा भाग का भाग दीजिए, तहा बहुभाग प्रमाण स्वस्थान स्वस्थान विषै जीव है। अवशेष एक भाग रह्या, ताकौ पल्य का असख्यातवा भाग का भाग दीजिए तहा बहुभाग प्रमाण विहारवत्स्वस्थान विषै जीव है। अवशेष एक भाग रह्या, ताकौ पल्य का असख्यातवा भाग का भाग दीजिए, तहा बहुभाग प्रमाण वेदनासमुद्घात विषै जीव है। अवशेष एक भाग रह्या, ताकौ पल्य का असख्यातवा भाग का भाग दीजिए, तहा बहुभाग प्रमाण कषाय समुद्घात विषै जीव है। अवशेष एक भाग रह्या, तिस प्रमाण वैक्रियिक समुद्घात विषै जीव हैं। तहा शुक्ललेश्यावाले देवनि की मुख्यता करि एक जीव का शरीर की अवगाहना तीन हाथ ऊची इसके दशवे भाग मुख की चौडाई याका **वासो त्ति गुणो परिही** इत्यादि सूत्र करि क्षेत्रफल कीजिए, तब सख्यात घनागुल प्रमाण होइ, इसकरि स्वस्थान स्वस्थानवाले जीवनि का प्रमाण कौ गुणिए, तब स्वस्थान स्वस्थान विषै क्षेत्र का परिमाण होइ। बहुरि मूल शरीर की अवगाहना तै साढा च्यारि गुणा एक जीव के वेदना अर कषाय समुद्घात विषै क्षेत्र है। इस साढा च्यारि गुणा घनागुल का सख्यातवा भाग करि वेदना समुद्घातवाले जीवनि का प्रमाण कौ गुणिये, तब वेदना समुद्घात विषै क्षेत्र हो है। अर कषाय समुद्घातवाले जीवनि का प्रमाण कौ गुणै कषायसमुद्घात विषै क्षेत्र हो है। बहुरि एक देव के विहार करतै अपने मूल शरीर तै बाह्य निकसि उत्तर विक्रिया करि

निपजाया शरीर पर्यंत आत्मा के प्रदेश सख्यात योजन लवा अर सूच्यगुल के सख्यातवे भाग चौडा वा ऊचा क्षेत्र कौं रोकै, याका घनरूप क्षेत्रफल सख्यात घनागुल प्रमाण भया । इसकरि पूर्वोक्त विहारवत्स्वस्थानवाले जीवनि का प्रमाण कौं गुणे, विहारवत्स्वस्थान विषै क्षेत्र हो है । बहुरि अपने अपने योग्य विक्रियारूप बनाया गजादिक शरीरनि की अवगाहना सख्या घनागुल प्रमाण, तिसकरि वैक्रियिक समुद्घातवाले जीवनि का प्रमाण कौं गुणे, वैक्रियिक समुद्घात विषै क्षेत्र हो है । बहुरि शुक्ललेश्या आनतादिक देवलोकनि विषै पाइए, सो तहा ते मुख्यपने आरण - अच्युत अपेक्षा मध्यलोक छह राजू है । तातै मारणातिक समुद्घात विषै एक जीव के प्रदेश छह राजू लबे अर सूच्यगुल के सख्यातवे भाग चौडे, ऊचे होइ, सो याका जो क्षेत्रफल एक जीव सबधी भया, ताकौं सख्यात करि गुणिए, जातै आनतादिक ते मरिकरि मनुष्य ही होइ । तातै मारणातिक समुद्घातवाले सख्यातवे ही जीव है, तातै सख्यात करि गुणिए, ग्रैसै गुणै, जो होइ, सो मारणातिक समुद्घात विषै क्षेत्र जानना ।

बहुरि तैजस आहारक समुद्घात विषै जैसे पद्मलेश्या विषै क्षेत्र कह्या था, तैसै इहा भी जानना । अब केवलसमुद्घात विषै क्षेत्र कहिए हैं ।

केवल समुद्घात च्यारि प्रकार दड, कपाट, प्रतर, लोक पूरण । तहा दड दोय प्रकार - एक स्थिति दंड, एक उपविष्ट दड । बहुरि कपाट च्यारि प्रकार पूर्वाभिमुख स्थित कपाट, उत्तराभिमुखस्थित कपाट, पूर्वाभिमुख उपविष्ट कपाट, उत्तराभिमुख उपविष्ट कपाट । बहुरि प्रतर अर लोक पूरण एक एक ही प्रकार है । तहा स्थिति - दड समुद्घात विषै एक जीव के प्रदेश वातवलय बिना लोक की ऊचाई किंचित् ऊन चौदह राजू प्रमाण है । सो इस प्रमाण तै लबे, बहुरि बारह अगुल प्रमाण चौडे, गोल आकार प्रदेश हो है । सो – **'वासो त्ति गुणो परिही'** इत्यादि सूत्र करि याका क्षेत्रफल दोय सै सोला प्रतरागुलनि करि जगच्छ्रेणी कौं गुणे, जो प्रमाण होइ, तितना हो है, जातै बारह अगुल गोल क्षेत्र का क्षेत्रफल एक सौ आठ प्रतरागुल होइ, ताकौं उचाई दोय श्रेणी करि गुणन करे इतना ही हो है । बहुरि एक समय विषै इस समुद्घातवाले जीव चालीस होइ, तातै तिसकौं चालीस करि गुणिए, तब आठ हजार छ सै चालीस प्रतरागुलनि करि जगच्छ्रेणी कौं गुणे, जो प्रमाण होइ, तितना स्थिति दड विषै क्षेत्र हो है । बहुरि इस स्थिति दड के क्षेत्र कौं नव गुणा कीजिए, तब उपविष्ट दड विषै क्षेत्र हो है, जातै स्थितिदड विषै बारह अगुल प्रमाण चौडाई कही, इहा तिसतै ति गुणी छत्तीस अगुल चौड़ाई है, सो क्षेत्रफल विषै नव

गुणा क्षेत्र भया, तातै नव गुणा कीया। ऐसे करतै सतहत्तर हजार सात सै साठि प्रतरागुलनि करि जगच्छ्रेणी कौ गुणै, जो प्रमाण भया, तितना उपविष्ट दड विषै क्षेत्र जानना।

बहुरि पूर्वाभिमुख स्थित कपाट समुद्घात विषै एक जीव के प्रदेश वातवलय विना लोक प्रमाण तो लबे हो है, सो किंचित् ऊन चौदह राजू प्रमाण तौ लबे हो है बहुरि उत्तर दक्षिण दिशा विषै लोक की चौडाई प्रमाण चौडे हो है। सो उत्तर-दक्षिण दिशा विषै लोक सर्वत्र सात राजू चौडा है। तातै सात राजू प्रमाण चौडे हो है। बहुरि बारह अगुल प्रमाण पूर्व पश्चिम विषै ऊचे हो है, सो याका क्षेत्रफल भुज कोटि वेध का परस्पर गुणन करि चौईस अगुल गुणा जगत्प्रतर प्रमाण भया; ताकौं एक समय विषै इस समुद्घातवाले जीवनि का प्रमाण चालीस है। तातै चालीस करि गुणिए, तब नव सै साठि सूच्यगुलनि करि जगत्प्रतर कौ गुणै, जो प्रमाण होइ, तितना पूर्वाभिमुख स्थित कपाट विषै क्षेत्र हो है। बहुरि स्थित कपाट विषै बारह अगुल की ऊचाई कही, उपविष्ट कपाट विषै ति गुणा छत्तीस अगुल की ऊचाई हो है। तातै पूर्वाभिमुख स्थित कपाट के क्षेत्र तै ति गुणा अठाइस सै असी सूच्यगुलनि करि जगत्प्रतर कौ गुणै, जो प्रमाण होइ, तितना पूर्वाभिमुख उपविष्ट कपाट विषै क्षेत्र जानना।

बहुरि उत्तराभिमुख स्थित कपाट विषै एक जीव के प्रदेश वातवलय विना लोक प्रमाण लबे हो हैं, सो किंचित् ऊन चौदह राजू प्रमाण तो लबे हो है। बहुरि पूव पश्चिम दिशा विषै लोक की चौडाई के प्रमाण चौडे हो है। सो लोक अधोलोक के तो नीचे सात राजू चौडा है। अर अनुक्रम तै घटता घटता मध्य लोक विषै एक राजू चौडा है। याका क्षेत्रफल निमित्त सूत्र कहिए है – **मुहभूमी जोग दले पद गुणिदे पदधणं होदि।** मुख कहिए अत, अर भूमि कहिए आदि, इनिका जोग कहिए जोड, तिसका दल कहिये आधा, तिसका पद कहिए गच्छ का प्रमाण तिसकौ गुणै पदधन कहिये, सर्व गच्छ का जोड्या हूआ प्रमाण, सो हो है। सो इहा मुख तौ एक राजू अर भूमि सात राजू जोडिए, तव आठ भये, इनिका आधा च्यारि भया, इसका अधो लोक की ऊचाई सात राजू, सो गच्छ का प्रमाण सात राजूनि करि गुणै, जो अठाईस राजू प्रमाण भया, तितना अधो लोक सबधी प्रतररूप क्षेत्रफल जानना।

बहुरि मध्य विषै लोक एक राजू चौडा, सो बधता बधता ब्रह्मस्वर्ग के निकट पाच राजू भया। सो इहा मुख एक राजू, भूमि पाच राजू मिलाए छह हूवा, ताका आधा तीन, बहुरि ब्रह्मस्वर्ग साढा तीन राजू ऊचा, सो गच्छ का प्रमाण साढा तीन करि गुणिये, तब आधा ऊर्ध्व लोक का क्षेत्रफल साढा दश राजू हुआ। बहुरि ब्रह्म-स्वर्ग के निकट पाच राजू सो घटता घटता ऊपरि एक राजू का रह्या, सो इहा भी मुख एक राजू, भूमि पाच राजू, मिलाए छह हुआ, आधा तीन, सो ब्रह्मस्वर्ग के ऊपरि लोक साढा तीन राजू है, सो गच्छ भया, ताकरि गुणै, आधा उर्ध्व लोक का क्षेत्रफल साढा दश राजू हो है। असै उर्ध्वलोक अर अधोलोक का सर्व क्षेत्रफल जोडै, जगत्प्रतर भया, सो असें लबाई चौडाई करि तो जगत्प्रतर प्रमाण प्रदेश हो है। बहुरि बारह अगुल प्रमाण उत्तर - दक्षिण दिशा विषै ऊचे हो है, सो जगत्प्रतर कौ बारह सूच्यगुलनि करि गुणै, एक जीव सबधी क्षेत्र बारह अगुल गुणा जगत्प्रतर प्रमाण हो है। बहुरि इस समुद्घातवाले जीव चालीस हो है। तातै चालीस करि तिस क्षेत्र कौ गुणै, च्यारि सै अस्सी सूच्यगुलनि करि गुण्या हूआ जगत्प्रतर प्रमाण उत्तराभिमुख स्थित कपाट विषै क्षेत्र हो है। बहुरि स्थिति विषै बारह अगुल की ऊचाई कही। उपविष्ट विषै तातै तिगुणी छत्तीस अगुल की ऊचाई है। तातै पूर्वोक्त प्रमाण तै तिगुणा चौदा सै चालीस सूच्यगुलनि करि गुण्या हूवा जगत्प्रतर प्रमाण उत्तराभिमुख उपविष्ट कपाट विषै क्षेत्र जानना। बहुरि प्रतर समुद्घातविषै तीन वातवलय बिना सर्व लोक विषै प्रदेश व्याप्त हो हैं। तातै तीन वातवलय का क्षेत्र-फल लोक के असख्यातवे भाग प्रमाण है। सो यह प्रमाण लोक का प्रमाण विषै घटाए, अवशेष रहे, तितना एक जीव सबधी प्रतर समुद्घात विषै क्षेत्र जानना।

बहुरि लोक पूरण विषै सर्व लोकाकाश विषै प्रदेश व्याप्त हो है। तातै लोक प्रमाण एक जीव सबधी लोक पूरण विषै क्षेत्र जानना। सो प्रतर अर लोक पूरण के बीस जीव तौ करनेवाले अर बीस जीव समेटनेवाले असै एक समय विषै चालीस पाइए। परन्तु पूर्वोक्त क्षेत्र ही विषै एक क्षेत्रावगाहरूप सर्व पाइए, तातै क्षेत्र तितना ही जानना। बहुरि दड अर कपाट विषै भी बीस जीव करनेवाले बीस समेटनेवालेनि की अपेक्षा चालीस जीव है, सो ए जीव जुदे जुदे क्षेत्र कौं भी रोकै, तातै दण्ड अर कपाट विषै चालीस का गुणकार कह्या। यह जीवनि का प्रमाण उत्कृष्टता की अपेक्षा है।

सुक्कस्स समुग्घादे, असंखभागा य सव्वलोगो य ।

शुक्लायाः समुद्घाते, असंख्यभागाश्च सर्वलोकश्च ।

टीका — इस आधा सूत्र करि शुक्ल लेश्या का क्षेत्र लोक के असंख्यात भागनि विषै एक भाग विना अवशेष बहुभाग प्रमाण वा सर्वलोक प्रमाण कह्या है, सो केवल समुद्घात अपेक्षा जानना। बहुरि उपपाद विषै मुख्यपनै अच्युत स्वर्ग अपेक्षा एक जीव के प्रदेश छह राजू लंबे अर सख्यात सूच्यंगुल प्रमाण चौडे वा ऊंचे प्रदेश हो है। सो इस क्षेत्रफल कौ अच्युत स्वर्ग विषै एक समय विषै संख्यात ही मरैं, तातै तहा सख्यात ही उपजै, तातै सख्यात करि गुणै, जो प्रमाण भया, तितना उपपाद विषै क्षेत्र जानना। इहा भी पूर्वोक्त प्रकार पाच प्रकार लोक की अपेक्षा जैसा भागहार गुणकार सभवै तैसै जानि लेना; औसै शुक्ललेश्या विषै क्षेत्र कह्या। इहा छह लेश्यानि का क्षेत्र का वर्णन दश स्थान विषै कीया; तहा औसा जानना। जो जिस अपेक्षा क्षेत्र का प्रमाण बहुत आवैं, तिस अपेक्षा मुख्यपनै क्षेत्र वर्णन कीया है। तहां संभवता अन्य स्तोक क्षेत्र अधिक जानि लेना, औसै ही आगे स्पर्शन विषै भी अर्थ समझना। इति क्षेत्राधिकार।

आगै स्पर्शनाधिकार साढा छह गाथानि करि कहै है—

फासं सव्वं लोयं, तिट्ठाणे असुहलेस्साणं ॥५४५॥

स्पर्शः सर्वो लोकस्त्रिस्थाने अशुभलेश्यानाम् ॥५४५॥

टीका — क्षेत्र विषै तौ वर्तमानकाल विषै जेता क्षेत्र रोकै, तिस ही का ग्रहण कीया। बहुरि इहा वर्तमान काल विषै जेता क्षेत्र रोकै, तीहिं सहित जो अतीत काल विषै स्वस्थानादिक विशेषण कौ धरे जीव जेता क्षेत्र रोकि आया होइ, तिस क्षेत्र ही का नाम स्पर्श जानना। सो कृष्णादिक तीन अशुभ लेश्या का स्पर्श स्वस्थान विषै वा समुद्घात विषै वा उपपाद विषै सामान्यपनै सर्व लोक जानना। विशेष करि दश स्थानकनि विषै कहिए हैं। तहा कृष्णलेश्या वालै जीवनि कै स्वस्थान स्वस्थान विषै वा वेदना अर कषाय अर मरणातिक समुद्घात विषै वा उपपाद विषै सर्व लोक प्रमाण स्पर्श जानना। बहुरि विहारवत्स्वस्थान विषै एक राजू लंबा वा चौडा अर संख्यात सूच्यंगुल प्रमाण ऊंचा तिर्यग् लोक क्षेत्र है। याका क्षेत्रफल संख्यात सूच्यंगुलनि करि

गुण्या हुवा जगत्प्रतर प्रमाण भया, सोई विहारवत्स्वस्थान विषै स्पर्श जानना। जातै कृष्णलेश्यावाले गमन क्रिया युक्त त्रस जीव तिर्यग् लोक ही विषै पाइए हैं।

बहुरि वैक्रियिक समुद्घात विषै मेरुगिरि के मूल तै लगाइ, सहस्रार नामा स्वर्ग पर्यंत ऊचा त्रसनाली प्रमाण लबा, चौडा क्षेत्र विषै पवन कायरूप पुद्गल सर्वत्र आच्छादित रूप भरि रहे है। बहुरि पवन कायिक जीवकि कै विक्रिया पाइए है, सो अतीत काल अपेक्षा तहां सर्वत्र विक्रिया का सद्भाव है। असा कोऊ क्षेत्र तिस विषै रह्या नाही, जहा विक्रिया रूप न प्रवर्तै; तातै एक राजू लबा वा चौडा अर पाच राजू ऊचा क्षेत्र भया ताका क्षेत्रफल लोक के सख्यातवे भाग प्रमाण भया, सोई वैक्रियक समुद्घात विषै स्पर्श जानना।

बहुरि तैजस अर आहारक अर केवल समुद्घात इस लेश्या विषै होता ही नाही। इहा भी पच प्रकार लोक का स्थापन करि, यथासभव गुणकार भागहार जानना। बहुरि जैसे कृष्णलेश्यानि विषै कथन कीया, तैसै ही नीललेश्या कपोतलेश्या विषै भी कथन जानना।

आगै तेजोलेश्या विषै कहै हैं—

तेउस्स य सट्ठाणे, लोगस्स असंखभागमेत्तं तु।
अडचोद्दसभागा वा, देसूणा होंति णियमेण ॥५४६॥

तैजसश्च स्वस्थाने, लोकस्य असंख्यभागमात्र तु।
अष्ट चतुर्दशभागा वा, देशोना भवति नियमेन ॥५४६॥

टीका – तेजोलेश्या का स्वस्थान विषै स्पर्श स्वस्थान स्वस्थान अपेक्षा तौ लोक का असख्यातवा भागमात्र जानना। बहुरि विहारवत्स्वस्थान अपेक्षा त्रसनाली के चौदह भागनि विषै आठ भाग किछू घाटि प्रमाण स्पर्श जानना।

एवं तु समुग्घादे, णव चोद्दसभागयं च किंचूण।
उववादे पढमपदं, दिवड्ढचोद्दस य किंचूणं ॥५४७॥

एवं तु समुद्घाते, नवचतुर्दशभागश्च किंचिदूनः।
उपपादे प्रथमपदं, व्द्यर्धचतुर्दश च किंचिदूनम् ॥५४७॥

टीका — बहुरि समुद्घात विषै असै स्वस्थानवत् किछू घाटि त्रसनाली के चौदह भागनि विषै आठ भाग प्रमाण स्पर्श जानना वा मारणातिक समुद्घात अपेक्षा किछू घाटि त्रसनाली के चौदह भागनि विषै नव भाग प्रमाण स्पर्श जानना। बहुरि उपपाद विषै त्रसनाली के चौदह भागनि विषै किछू घाटि ड्योढ भाग प्रमाण स्पर्श जानना। असै सामान्यपनै तेजोलेश्या का तीनों स्थानकनि विषै स्पर्श कह्या।

बहुरि विशेष करि दश स्थानकनि विषै स्पर्श कहिए है। तिर्यग्लोक एक राजू का लम्बा, चौडा है, तिसविषै लवणोद, कालोदक, स्वयंभूरमण इनि तीनि समुद्रनि विषै जलचर जीव पाइए है। अन्य समुद्रनि विषै जलचर जीव नाही, सो जिनि विषै जलचर जीव नाही, तिनि सर्व समुद्रनि का जेता क्षेत्रफल होइ, सो तिस तिर्यग्लोक-रूप क्षेत्र विषै घटाए, अवशेष जेता क्षेत्र रहे, तितना पीत, पद्म, शुक्ललेश्यानि का स्वस्थान स्वस्थान विषै स्पर्श जानना। जातै एकेंद्रियादिक कै शुभलेश्यानि का अभाव है। सो कहिए है—

जबूद्वीप तै लगाइ स्वयंभूरमण समुद्र पर्यंत सर्व द्वीप - समुद्र दूणा दूणा विस्तार कौं धरै है। तहा जंबूद्वीप लाख योजन विस्तार कौं धरै है; याका सूक्ष्म तारतम्य रूप क्षेत्रफल कहिए है—

सत्त णव सुण्ण पंच य, छण्णव चउरेक पंच सुण्णं च।

याका अर्थ — सात, नव, बिंदी, पच, छह, नव, च्यारि, एक, पाच, बिंदी इतने अकनि करि जो प्रमाण भया, तितना जंबूद्वीप का सूक्ष्म क्षेत्रफल है (७९०५६९४१५०) सो एतावन्मात्र एक खण्ड कल्पना कीया। बहुरि असे असे लवण समुद्र विषै खण्ड कल्पिए, तब चौईस (२४) होइ। धातकीखड विषै एक सौ चवालीस (१४४) होइ। कालोद समुद्र विषै छ सै बहत्तरि (६७२) होइ। पुष्कर द्वीप विषै अठाइस सै असी (२८८०) होइ। पुष्कर समुद्र विषै ग्यारह हजार नव सै च्यारि (११९०४) होइ। वारुणी द्वीप विषै अडतालीस हजार तीन सै चौरासी (४८३८४) होइ। वारुणी समुद्र विषै एक लाख पिचाणवे हजार बहत्तरि (१९५०७२) होइ। क्षीरवर द्वीप विषै सात लाख तियासी हजार तीन सै साठि (७८३३६०) होइ। क्षीरवर समुद्र विषै इकतीस लाख गुणतालीस हजार पाच सै चउरासी (३१३९५८४) होइ। असै स्वयभूरमण समुद्र पर्यंत विषै खड साधन करना इनि खडनि के प्रमाण का ज्ञान होने के निमित्त सूत्र कहिए है—

वाहिर सूईवग्गं, अब्भंतर सूइवग्ग परिहीणं ।
जंबूवासविहत्ते, तेत्तियमेत्ताणि खंडाणि ।।

बाह्य सूची का वर्ग विषै अभ्यतर सूची का प्रमाण घटाए, जो प्रमाण रहै, ताकौ जबूद्वीप का व्यास के वर्ग का भाग दीए, जो प्रमाण आवै, तितने जबूद्वीप समान खड जानने । अंत तें लगाइ, वाके सन्मुख अत पर्यंत जेता सूधा क्षेत्र होइ, ताकौ बाह्य सूची कहिए । बहुरि आदि तै लगाइ, वाके सन्मुख आदि पर्यंत जेता सूधा क्षेत्र होइ, ताकौं अभ्यतर सूची कहिये । सो यहा लवण समुद्र विषै उदाहरण करि कहिये है—

लवण समुद्र की बाह्य सूची पाच लाख योजन, ताका वर्ग कीजिये तब लाख गुणा पचीस लाख भया । बहुरि तिस ही की अभ्यतर सूची एक लाख योजन, ताका वर्ग लाख गुणा लाख योजन, सो घटाये अवशेष लाख गुणा चौईस लाख, ताका जबूद्वीप का व्यास लाख योजन, ताका वर्ग लाख गुणा लाख योजन, ताका भाग दीजिए तब चौईस रहे, सो जबूद्वीप समान चौबीस खड लवण समुद्र विषै जानने । असें ही सर्व द्वीप समुद्रनि विषै साधने । इस साधन के अर्थि और भी प्रकार कहै हैं—

रूऊण सला बारस, सलागगुणिदे दु वलयखंडाणि ।
बाहिरसूइ सलागा, कदी तदंताखिला खंडा ।।

इहा व्यास विषै जितना लाख कह्या होइ, तितने प्रमाण शलाका जानना । सो एक घाटि शलाका कौ बारह शलाका करि गुणै, जबूद्वीप प्रमाण वलयखड हो हैं। जैसे लवण समुद्रनि विषै व्यास दोय लाख योजन है, तातै शलाका का प्रमाण दोय, तामै एक घटाए एक, ताका बारह शलाका का प्रमाण चौईस करि गुणै, चौईस खड हो है । बहुरि बाह्य सूची सबंधी शलाका का वर्ग प्रमाण तीहि पर्यंत खड हो है । जैसे लवण समुद्र विषै बाह्य सूची पाच लाख योजन है । तातै शलाका का प्रमाण पाच ताका वर्ग पचीस, सोई लवण समुद्र पर्यंत सर्व खडनि का प्रमाण हो है । जबूद्वीप विषै एक खड अर लवण समुद्र विषै चौवीस खड, मिलि करि पचीस खड हो है । बहुरि और भी विधान कहै हैं—

बाहिरसूईवलयव्वासूणा चउगुणिद्ठावासहदा ।
इकलक्खवग्गभजिदा, जंबूसमवलयखंडाणि ।।१।।

वाह्य सूची विषै वलय का व्यास घटाए, जो रहै, ताका चौगुणा व्यास तै गुणिये, एक लाख के वर्ग का भाग दीजिए, तब जंबूद्वीप के समान गोलाकार खंडनि का प्रमाण हो है।

उदाहरण – जैसै लवणसमुद्र की बाह्य सूची पाच लाख योजन, तिसमे व्यास दोय लाख योजन घटाइए, तब तीन लाख योजन भये, याकौ चौगुणा व्यास आठ लाख योजन करि गुणिये, तब लाख गुणा चौईस लाख भये। याकौ एक लाख का वर्गका भाग दीजिए, तब चौईस पाये, तितने ही जंबूद्वीप समान लवण समुद्र विषै खंड हैं, अैसै सूत्रनि तै साधन करि खंड ज्ञान करना। बहुरि इहां द्वीप संबंधी खंडनि कौ छोडि, सर्व समुद्र संबंधी खंडनि का ही ग्रहण कीजिये, तब जंबूद्वीप समान चौईस खंडनि का भाग समुद्रखंडनि कौं दीए, जो प्रमाण आवै, तितना सर्व समुद्रनि विषै लवण समुद्र समान खंड जानने। सो लवण समुद्र के खंडनि कौं चौईस भाग दीए, एक पाया, सो लवण समुद्र समान एक खंड भया। कालोद समुद्र के छ सै बहत्तरि खंडनि कौ चौबीस का भाग दीये, अट्ठाईस पाये, सो कालोद समुद्र विषै लवणसमुद्र समान अठाईस खंड हो हैं। अैसे ही पुष्कर समुद्र के खंडनि कौं भाग दीये च्यारि सै छिनवै खंड हो है। वारुणी समुद्र के खंडनि कौ भाग दीये, आठ हजार एक सै अठाइस खंड हो हैं। क्षीरसमुद्र के खंडनि कौ भाग दीये, एक लाख तीस हजार आठ सै सोलह खंड हो हैं। अैसे ही स्वयंभूरमण समुद्र पर्यंत जानना। सो जानने का उपाय कहैं हैं–

यहु लवणसमुद्रसमान खंडनि का प्रमाण ल्यावने की रचना है।

धनराशि						ऋणराशि				समुद्र
२	१६	१६	१६	१६	१	४	४	४	४	क्षीरवर
२	१६	१६	१६		१	४	४	४		वारुणीवर
२	१६	१६			१	४	४			पुष्कर
२	१६				१	४				कालोद
२					१					लवणोद

दोय आदि सोलह सोलह गुणा तो धन जानना । अर एक आदि चौगुणा चौगुणा ऋण जानना । सो धन विषै ऋण घटाए, जो प्रमाण रहै, तितने लवणसमुद्र समान खड जानने ।

उदाहरण कहिये है – प्रथमस्थान विषै धन दोय, अर ऋण एक, सो दोय मे एक घटाए एक रह्या, सो लवण समुद्र विषै एक खड भया । बहुरि दूसरे स्थान के दोय कौ सोलह गुणा कीजिए, तब बत्तीस तो धन होइ, अर एक कौ च्यारि गुणा कीजिए, तब च्यारि ऋण भया, सो बत्तीस मे च्यारि घटाए, अठाइस रह्या, सो दूसरा कालोदक समुद्र विषै लवण समुद्र समान अठाईस खड है । बहुरि तीसरे स्थानक बत्तीस कौ सोला गुणा कीए, पाच सै बारा तो धन होइ, अर च्यारि कौ चौगुणा कीए सोला ऋण होइ, सो पाच सै बारा मैं स्यो सोला घटाए, च्यारि सै छिनवै रह्या, सो इतना ही तीसरा पुष्कर समुद्र विषै लवण समुद्र समान खड जानने । अैसै स्वयभूरमण समुद्र पर्यंत जानना । सो अब इहा जलचर रहित समुद्रनि का क्षेत्रफल कहिए है–

तहा जो द्वीप समुद्रनि का प्रमाण है, ताकौ इहा समुद्रनि ही का ग्रहण है, तातै आधा कीजिये, तामैं जलचर सहित तीन समुद्र घटाए, जलचर रहित समुद्रनि का प्रमाण हो है, सो इहा गच्छ जानना । सो दोय आदि सोला - सोला गुणा धन कह्या था, सो धन का जलचर रहित समुद्रनि का धन विषै कितना क्षेत्रफल भया ? सो कहिये है –

पदमेत्ते गुणयारे, अण्णोण्णं गुणियरूवपरिहीणे ।
रूऊणगुणेणहिये, मुहेणगुणियम्मि गुणगणियं ।।

इस सूत्र करि गुणकार रूपराशि का जोड हो है । **याका अर्थ** - गच्छप्रमाण जो गुणकार, ताकौं परस्पर गुणि करि एक घटाइये, बहुरि एक घाटि गुणकार के प्रमाण का भाग दीजिए, बहुरि मुख जो आदिस्थान, ताकरि गुणिये, तब गुणकाररूप राशि विषै सर्व जोड होइ ।

सो प्रथम अन्य उदाहरण दिखाइए हैं - जैसै आदिस्थान विषै दश अर पीछै चौगुणा – चौगुणा बधता अैसै पच स्थानकनि विषै जो जो प्रमाण भया, तिस सर्व का जोड दीए कितना भया ?

सो कहिये है — इहा गच्छ का प्रमाण पाच, अर गुणकार का प्रमाण च्यारि सो पाच जायगा च्यारि च्यारि माडि, परस्पर गुणिए, तब एक हजार चौईस हूवा, यामैं एक घटाए, एक हजार तेईस हूवा । बहुरि याकौ एक घाटि गुणकार का प्रमाण तीन का भाग दीजिये, तब तीन सै इकतालीस हूवा । बहुरि आदिस्थान का प्रमाण दश, तिसकरि याकौ गुणै, चौतीस सै दश (३४१०) भया, सोई सर्व का जोड जानना कैसे ? पंचस्थानकनि विषै ऐसा प्रमाण है-१०।४०।१६०।६४०।२५६० । सो इनिका जोड चौतीस सै दश ही हो है । ऐसै अन्यत्र भी जानना । सो इस ही सूत्र करि इहा गच्छ का प्रमाण तीन घाटि द्वीपसागर के प्रमाण तै आधा प्रमाण लीये है । सो सर्व द्वीप - समुद्रनि का प्रमाण कितना है ? सो कहिए है - एक राजू के जेते अर्धच्छेद है, तिनि मे लाख योजन के अर्धच्छेद अर एक योजन के सात लाख अडसठि हजार अगुल तिनिके अर्धच्छेद अर सूच्यगुल के अर्धच्छेद अर मेरु के मस्तक प्राप्त भया एक अर्धच्छेद, इतने अर्धच्छेद घटाए, जेता अवशेष प्रमाण रह्या, तितने सर्व द्वीप - समुद्र है । अब इहा गुणोत्तर का प्रमाण सोलह सो गच्छप्रमाण गुणोत्तरनि कौं परस्पर गुणना । तहां प्रथम एक राजू का अर्धच्छेद राशि तै आधा प्रमाण मात्र जायगा सोलह -सोलह माडि, परस्पर गुणन कीए, राजू का वर्ग हो है । सो कैसे ? सो कहिये है—

विवक्षित गच्छ का आधा प्रमाण मात्र विवक्षित गुणकार (का वर्गमूल)[1] माडि परस्पर गुणन कीए, जो प्रमाण होइ, सोई सपूर्ण विवक्षित गच्छप्रमाण मात्र विवक्षित गुणकार का वर्गमूल माडि, परस्पर गुणन कीए, प्रमाण हो है । जैसै विवक्षित गच्छ आठ, ताका आधा प्रमाण च्यारि, सो च्यारि जायगा विवक्षित गुणकार नव, नव माडि परस्पर गुणै, पैसठि सै इकसठि होइ, सोई विवक्षित गच्छ मात्र आठ जायगा विवक्षित गुणकार नव का वर्गमूल तीन - तीन माडि परस्पर गुणन कीए, पैसठि सै इकसठि हो है । ऐसै ही इहा विवक्षित गच्छ एक राजू के अर्धच्छेद, ताका अर्धच्छेद प्रमाण मात्र जायगा सोलह - सोलह माडि परस्पर गुणै, जो प्रमाण होइ, सोई राजू के अर्धच्छेद मात्र सोलह का वर्गमूल च्यारि च्यारि माडि परस्पर गुणै, प्रमाण होइ, सो राजू के अर्धच्छेद मात्र जायगा दूवा माडि, गुणै, तौ राजू होइ । अर तितनी ही जायगा दोय - दोय वार दूवा माडि, परस्पर गुणै, राजू का वर्ग हो है । सो जगत्प्रतर कौ दोय वार सात का भाग दीजिए इतना हो है । वहुरि यामे एक

---

१. 'का वर्गमूल' यह छपी प्रति मे मिलता है । छहो हस्तलिखित प्रतियो मे नही मिलता ।

घटाइये, जो प्रमाण होइ, ताकौ एक घाटि गुणकार कौ प्रमाण पद्रह, ताका भाग दीजिए। बहुरि इहा आदि विषै पुष्कर समुद्र है। तिस विषै लवण समुद्र समान खडनि का प्रमाण दोय कौ दोय बार सोलह करि गुणिए, इतना प्रमाण है, सोई मुख भया, ताकरि गुणिए, ऐसै करतै एक घाटि जगत्प्रतर कौं दोय सोलह सोलह का गुणकार अर सात - सात पद्रह का भागहार भया। बहुरि इस राशि का एक लवण समुद्र विषै जबूद्वीप समान चौईस खड हो है। तातै चौईसका गुणकार करना। बहुरि जम्बूद्वीप विषै सूक्ष्म क्षेत्रफल सात नव आदि अकमात्र है। तातै ताका गुणकार करना बहुरि एक योजन के सात लाख अडसठि हजार अगुल हो हैं। सो इहा वर्गराशि का ग्रहण है, अर वर्गराशि का गुणकार भागहार वर्गरूप ही हो है। तातै दोय बार सात लाख अडसठि हजार का गुणकार जानना। बहुरि एक सूच्यगुल का वर्ग प्रतरागुल हो है। तातै इतने प्रतरागुलनि का गुणकार जानना। बहुरि—

विरलिदरासीदो पुण, जेत्तियमेत्ताणि हीणरूवाणि।
तेसिं अण्णोण्णहदी, हारो उप्पण्णरासिस्स॥

इस करणसूत्र के अभिप्राय करि द्वीप समुद्रनि के प्रमाण विषै राजू के अर्धच्छेदनि तै जेते अर्धच्छेद घटाए है, तिनिका आधा प्रमाण मात्र गुणकार सोलह कौ परस्पर गुणै, जो प्रमाण होइ, तितने का पूर्वोक्त राशि विषै भागहार जानना। सो इहा जाका आधा ग्रहण कीया, तिस सपूर्ण राशि मात्र सोलह का वर्गमूल च्यारि, तिनिकौ परस्पर गुणै, सोई राशि हो है। सो अपने अर्धच्छेद मात्र दूवानि कौं परस्पर गुणै तौ विवक्षित राशि होइ, अर इहा च्यारि कहै है, तातै तितने ही मात्र दोय बार, दूवानि कौ परस्पर गुणै, विवक्षित राशि का वर्ग हो है। तातै इहा लाख योजन का अर्धच्छेद प्रमाण दोय दूवानि का परस्पर गुणै, तौ लाख का वर्ग भया। एक योजन का अगुलनि के प्रमाण का अर्धच्छेदमात्र दोय दूवानि कौ परस्पर गुणै, एक योजन के अगुल सात लाख अडसठि हजार (तीन का) वर्ग भया। बहुरि मेरुमध्य सबधी एक अर्धच्छेदमात्र दोय दूवानि कौं परस्पर गुणै, च्यारि भया, बहुरि सूच्यगुल का अर्धच्छेदमात्र दोय दूवानि कौ परस्पर गुणै, च्यारि भया। बहुरि सूच्यगुल का अर्धच्छेद मात्र दोय दुवानि कौं परस्पर गुणै प्रतरागुल भया। ऐसै ए भागहार जानने। बहुरि जलचर सहित तीन समुद्र गच्छ विषै घटाए हैं। तातै तीन बार गुणोत्तर जो सोलह, ताका भी भागहार जानना। ऐसै जगत्प्रतर कौ प्रतरागुल अर दोय अर सोलह अर सोलह अर चौबीस अर सात सै निवे कोडि छप्पन लाख चौराणवै हजार

एक सौ पचास अर सात लाख अडसठि हजार, अर सात लाख अडसठि हजार का तौ गुणकार भया। बहुरि प्रतरागुल अर सात अर सात अर पंद्रह अर एक लाख अर एक लाख अर सात लाख अडसठि हजार अर सात लाख अडसठि हजार अर च्यारि अर सोलह अर सोलह अर सोलह का भागहार भया। इहा प्रतरांगुल अर दोय वार सोलह अर दोय वार सात लाख अडसठि हजार गुणकार भागहार विषै समान देखि अपवर्तन कीए अर गुणकार विषै दोय चौईस कौ परस्पर गुणे, अडतालीस अर भागहार विषै पंद्रह सोलह, इनिकौ परस्पर गुणे, दोय सै चालीस, तहा अडतालीस करि अपवर्तन कीए, भागहार विषै पाच रहे, अैसे अपवर्तन कीए, जो अवशेष प्रमाण रह्या ७६०५६६४१५० तहा सर्व भागहारनि कौ परस्पर गुणि, ताकौ गुणकारनि के
७ । ७ । १ ल । १ ल । ४ । ५ ।
अकनि का भाग दीएं किछू अधिक बारह से गुणतालीस भए। अैसे धनराशि विषै सर्व क्षेत्रफल साधिक 'धगरय' जो बारह से गुणतालीस, ताकरि भाजित जगत्प्रतर प्रमाण क्षेत्रफल भया। इहां **कटपयपुरस्थवर्णैः** इत्यादि सूत्र के अनुसारि अक्षर सज्ञा करि **धगरय** शब्द तै नव तीन, दोय, एक जनित प्रमाण ग्रहण करना। अब इहा एक आदि चौगुणा - चौगुणा ऋण कह्या था, सो जलचर रहित समुद्रनि विषै ऋणरूप क्षेत्रफल ल्याइए है। **'पदमेत्ते गुणयारे'** इत्यादि करणसूत्र करि प्रथम गच्छमात्र गुणकार च्यारि का परस्पर गुणन करना। तहा राजू के अर्धच्छेद प्रमाण का अर्धप्रमाणमात्र च्यारि कौं परस्पर गुणे, एक राजू हो है। कैसे ? सो कहिये है—

सर्व द्वीप समुद्र का प्रमाण मात्र गच्छ कल्पै, इहा आधा प्रमाण है, तातै गुणकार च्यारि का वर्गमूल दोय ग्रहण करना। सो सपूर्ण गच्छ विषै एक राजू के अर्धच्छेद कहै हैं, तातै एक राजू के अर्धच्छेद प्रमाण दूवानि कौं परस्पर गुणे, एक राजू प्रमाण भया, सो जगच्छ्रेणी का सातवां भाग प्रमाण है। यामे एक घटाइए, जो प्रमाण होइ, ताकौ एक घाटि गुणकार तीन का भाग दीजिए। बहुरि पुष्कर समुद्र अपेक्षा आदि स्थान विषै प्रमाण सोलह, ताकरि गुणिये, अैसें एक घाटि जगच्छ्रेणी कौं सोलह का गुणकार बहुरि सात अर तीन का भागहार भया। याकौं पूर्वोक्त प्रकार चौवीस खड अर जम्बूद्वीप का क्षेत्रफल रूप योजननि का प्रमाण अर एक योजन के अगुलनि का वर्गमात्र बहुरि सूच्यंगुल का इहां वर्ग है, तातै इतनौं प्रतरागुलनि करि गुणन करना। बहुरि—

विरलिदरासीदो पुण, जेत्तियमेत्ताणि हीणरूवाणि।
तेंसि अण्णोण्णहदी, हारो उप्पण्णरासिस्स ॥१॥

इस सूत्र अनुसारि जितने गच्छ विषै राजू का अर्धच्छेद प्रमाण घटाइए है, ताका जो आधा प्रमाण है, तितने च्यारि के अकनि कौं परस्पर गुणे, जो प्रमाण होइ, तितने का भागहार जानना। सो जिस राशि का आधा प्रमाण लिया, तिस राशि-मात्र च्यारि का वर्गमूल दोय कौ परस्पर गुणिये, तहा लक्ष योजन के अर्धच्छेद प्रमाण दूवानि कौ परस्पर गुणे, एक लाख भए। एक योजन के अगुलनि का अर्धच्छेद प्रमाण दूवानि कौ परस्पर गुणे, सात लाख अडसठि हजार अगुल भये। बहुरि मेरुमध्य के अर्धच्छेद मात्र दूवा का दोय भए। बहुरि सूच्यगुल का अर्धच्छेदमात्र दूवानि कौं परस्पर गुणे, सूच्यगुल भया, असे भागहार भए। बहुरि तीन समुद्र घटाए, ताते तीन वार गुणोत्तर जो च्यारि, ताका भी भागहार जानना। असे एक घाटि जगच्छे्णी कौं सोलह अर च्यारि अर चौईस अर सात सै निवै कोडि छप्पन लाख चौराणवै हजार एक सै पचास अर सात लाख अडसठि हजार अर सात लाख अडसठि हजार का तौ गुणकार भया। बहुरि सात अर तीन अर सूच्यगुल अर एक लाख अर सात लाख अडसठि हजार अर दोय अर च्यारि अर च्यारि अर च्यारि का भागहार भया। तहा यथायोग्य अपवर्तन कीए, सख्यात सूच्यगुल करि गुण्या हूवा जगच्छे्णी मात्र क्षेत्रफल भया। सो इतने पूर्वोक्त धन राशिरूप क्षेत्रफल विषै घटावना, सो तिस महत् राशि-विषै किंचित् मात्र घट्या सो घटाए, किंचित् ऊन साधिक बारह सै गुणतालीस करि भाजित जगत्प्रतर प्रमाण सर्व जलचर रहित समुद्रनि का क्षेत्रफल ऋणरूप सिद्ध भया। याकौ एक राजू लवा, चौडा असा जो जगत्प्रतर का गुणचासवा भाग मात्र रज्जू प्रतर क्षेत्र, तामे समच्छेद करि घटाइए, तब जगत्प्रतर कौं ग्यारह सै निवे का गुणकार अर गुणचास गुणा बारह से गुणतालीस का भागहार भया। तहा अपवर्तन करने के अर्थि भाज्य के गुणकार का भागहार कौ भाग दीए किछू अधिक इक्यावन पाए। असे साधिक काम जो अक्षर सज्ञा करि इक्यावन, ताकरि भाजित जगत्प्रतर प्रमाण विवक्षित क्षेत्र का प्रतररूप तन का स्पर्श भया। याकौं ऊचाई का स्पर्श ग्रहण के अर्थि जीवनि की ऊचाई का प्रमाण सख्यात सूच्यगुल, तिन करि गुणे, साधिक इक्यावन करि भाजित सख्यात सूच्यगुल गुणा जगत्प्रतर मात्र शुभलेश्यानि का स्व-स्थान स्वस्थान विषै स्पर्श हो है। याकौ देखि तेजो लेश्या का स्वस्थान स्वस्थान की अपेक्षा स्पर्श लोक का असख्यातवा भाग मात्र कह्या, जातै यहु क्षेत्र लोक के असख्यातवे भाग मात्र है। बहुरि तेजोलेश्या का विहारवत्स्वस्थान अर वेदना समुद्घात अर कपाय समुद्घात अर वैक्रियिक समुद्घात विषै स्पर्श किछू घाटि चौदह भाग मे आठ भाग प्रमाण है। काहे तै ? सो कहिये हैं–

लोक चौदह राजू ऊचा है । त्रसनाली अपेक्षा एक राजू लबा - चौडा है । सो तहा चौदह राजू विषै सनत्कुमार–माहेद्र के वासी उत्कृष्ट तेजोलेश्यावाले देव, ऊपरि अच्युत सोलहवा स्वर्ग पर्यत गमन करै है । अर नीचै तीसरी नरक पृथ्वी पर्यंत गमन करै है । सो अच्युत स्वर्ग तै तीसरा नरक आठ राजू है । तातै चौदह भाग में आठ भाग कहे अर तिसमे तिस तीसरा नरक की पृथ्वी की मोटाई विषै जहा पटल न पाइए अैसा हजार योजन घटावने, तातै किचित् ऊन कहे है । इहा जो चौदह घनरूप राजूनि की एक शलाका होइ, तौ आठ घनरूप राजूनि की केती शलाका होइ ? अैसै त्रैराशिक कीए आठ चौदहवा भाग आवै है । अथवा भवनत्रिक देव ऊपरि वा नीचै स्वयमेव तौ सौधर्म - ईशान स्वर्ग पर्यंत वा तीसरा नरक पर्यत गमन करै है । अर अन्य देव के ले गये सोलहवा स्वर्ग पर्यत विहार करै है । तातै भी पूर्वोक्त प्रमाण स्पर्श सभवै है । बहुरि तेजोलेश्या का मारणातिक समुद्घात विषै स्पर्श चौदह भाग में नव भाग किछू घाटि सभवै है । काहे तै ? भवनत्रिक देव वा सौधर्मादिक च्यारि स्वर्गनि के वासी देव तीसरे नरक गए, अर तहा ही मरण समुद्घात कीया, बहुरि ते जीव आठवी मुक्ति पृथ्वी विषै बादर पृथ्वी काय के जीव उपजते है । तातै तहा पर्यंत मरण समुद्घातरूप प्रदेशनि का विस्तार करि दड कीया । तिन आठवी पृथ्वी तै, तीसरा नरक नव राजू है । अर तहा पटल रहित पृथ्वी की मोटाई घटावनी, तातै किचित् ऊन नव चौदहवा भाग सभवै है ।

बहुरि तैजस समुद्घात अर आहारक समुद्घात विषै सख्यात घनागुल प्रमाण स्पर्श जानना, जातै ए मनुष्य लोक विषै ही हो है । बहुरि केवल समुद्घात इस लेश्या वालो के होता ही नाही । बहुरि उपपाद विषै स्पर्श चौदह भागनि विषै किछू घाटि डेढ राजू भाग मात्र जानना । सो मध्यलोक तै तेजोलेश्या तै मरिकरि सौधर्म ईशान का अत पटल विषै उपजै, तीहि अपेक्षा सभवै है ।

इहां कोऊ कहै कि तेजोलेश्या के उपपाद विषै सनत्कुमार माहेद्र पर्यंत क्षेत्र देव का स्पर्श पाइए है, सो तीन राजू ऊचा है, तातै चौदह भागनि विषै किचित् ऊन तीन भाग क्यो न कहिये ?

ताका समाधान – सौधर्म - ईशान तै ऊपरि संख्यात योजन जाइ, सनत्कुमार माहेद्र का प्रारभ हो है । तहा प्रथम पटल है, अर डेढ राजू जाइ, अतिम पटल है, सो अत पटल विषै तेजोलेश्या नाही है, अैसा केई आचार्यनि का उपदेश है । तातै अथवा

चित्रा भूमि विषै तिष्ठता तिर्यंच मनुष्यनि का उपपाद ईशान पर्यंत ही सभवै है, तातै किंचित् ऊन डेढ भागमात्र ही स्पर्श कह्या है। बहुरि गाथा विषै चकार कह्या है, तातै तेजोलेश्या का उत्कृष्ट अश करि मरै, तिनकै सनत्कुमार - माहेद्र स्वर्ग का अत का चक्र नामा इंद्रक सबधी श्रेणीबद्ध विमाननि विषै उत्पत्ति केई आचार्य कहै है। तिनि का अभिप्राय करि यथा सभवै तीन भागमात्र भी स्पर्श सभवै है। किछू नियम नाही। इस ही वास्ते सूत्र विषै चकार कह्या। असै पीतलेश्या विषै स्पर्श कह्या।

पम्मस्सय सट्ठाणसमुग्घाददुगेसु होदि पढमपदं।
अडचोद्दसभागा वा, देसूणा होंति णियमेण ॥५४८॥

पद्मायाश्च स्वस्थानसमुद्घातद्विकयोर्भवति प्रथमपदम्।
अष्ट चतुर्दशभागा वा, देशोना भवंति नियमेन ॥५४८॥

टीका — पद्मलेश्या के स्वस्थान स्वस्थान विषै पूर्वोक्तप्रकार लोक के असख्यातवे भाग मात्र स्पर्श जानना। बहुरि विहारवत्स्वस्थान अर वेदना - कषाय - वैक्रियिकसमुद्घात इनिविषै किंचित् ऊन चौदह भाग विषै आठमात्र स्पर्श जानना। बहुरि मारणातिक समुद्घात विषै भी तैसै ही किंचित् ऊन आठ चौदहवा भागमात्र स्पर्श जानना, जातै पद्म लेश्यावाले भी देव पृथ्वी, अप्, वनस्पति विषै उपजै हैं। बहुरि तैजस आहारक समुद्घात विषै सख्यात घनागुल प्रमाणस्पर्श जानना। बहूरि केवल समुद्घात इस लेश्या विषै है नाही।

उववादे पढमपदं, पणचोद्दसभागयं च देसूणं।

उपपादे प्रथमपद, पंचचतुर्दशभागकश्च देशोनः।

टीका – यहु आधा सूत्र है। उपपाद विषै स्पर्श चौदह भाग विषै पच भाग किछू घाटि जानना, जातै पद्मलेश्या शतार – सहस्रार पर्यंत सभवै है। सो शतार-सहस्रार मध्यलोक तै पाच राजू उचा है। असै पद्मलेश्या विषै स्पर्श कह्या।

सुक्कस्स य तिट्ठाणे, पढमो छच्चोदसा हीणा ॥५४९॥

शुक्लायाश्च त्रिस्थाने, प्रथमः षट्चतुर्दशहीनाः ॥५४९॥

टीका – शुक्ललेश्यावाले जीवनि के स्वस्थानस्वस्थान विषै तेजोलेश्यावत् लोक का असख्यातवा भाग प्रमाण स्पर्श है। बहुरि विहारवत्स्वस्थान विषै अर वेदना,

कषाय, वैक्रियिक, मरणातिक समुद्घातनि विषै स्पर्श चौदह भागनि विषै छह भाग किछू एक घाटि स्पर्श जानना । जातै अच्युतस्वर्ग के ऊपरि देवनि कै स्वस्थान छोडि अन्यत्र गमन नाही है । तातै अच्युत पर्यंत ही ग्रहण कीया । बहुरि तैजस, आहारक समुद्घात विषै सख्यात घनागुल प्रमाण स्पर्श जानना ।

णवरि समुग्घादम्मि य, संखातीदा हवंति भागा वा ।
सव्वो वा खलु लोगो, फासो होदि त्ति णिद्दिट्ठो ।।५५०।।

नवरि समुद्घाते च, संख्यातीता भवंति भागा वा ।
सर्वो वा खलु लोकः, स्पर्शो भवतीति निर्दिष्टः ।।५५०।।

टीका – केवल समुद्घात विषै विशेष है, सो कहा ?

दण्ड विषै तौ स्पर्श क्षेत्र की नाई संख्यात प्रतरांगुलनि करि गुण्या हूवा जगच्छे्रणी प्रमाण, सो करणे अर समेटने की अपेक्षा दूणा जानना । बहुरि पूर्वाभिमुख स्थित वा उपविष्ट कपाट विषै संख्यात सूच्यगुलमात्र जगत्प्रतर प्रमाण है, सो करणे, समेटनै की अपेक्षा दूणा स्पर्श जानना । बहुरि तैसै ही उत्तराभिमुख स्थित वा उपविष्ट कपाट विषै स्पर्श जानना । बहुरि प्रतर समुद्घात विषै लोक कौ असख्यात का भाग दीजिए, तामैं एक भाग विना अवशेष बहुभाग मात्र स्पर्श है । जातै बात बलय का क्षेत्र लोक के असख्यातवे भाग प्रमाण है, तहा व्याप्त न हो है । बहुरि लोकपूरण विषै स्पर्श सर्व लोक जानना, ऐसा नियम है ।

बहुरि उपपाद विषै चौदह भाग विषै छह भाग किंचित् ऊन स्पर्श जानना । जातै इहा आरण - अच्युत पर्यंत ही की विवक्षा है । इति स्पर्शाधिकार ।

आगै काल अधिकार दोय गाथानि करि कहै है—

कालो छल्लेस्साणं, णाणाजीवं पडुच सव्वद्धा ।
अंतोमुहुत्तमवरं, एगं जीवं पडुच्च हवे ।।५५१।।

कालः षड्लेश्यानां, नानाजीवं प्रतीत्य सर्वाद्धा ।
अंतर्मुहूर्तोऽवरं एकं, जीवं प्रतीत्य भवेत् ।।५५१।।

टीका – कृष्ण आदि छहौ लेश्यानि का काल नाना जीवनि की अपेक्षा सर्वाद्धा कहिये सर्व काल है । बहुरि एक जीव अपेक्षा छहौ लेश्यानि का जघन्यकाल तौ अंतर्मुहूर्त प्रमाण जानना ।

उवहीणं तेत्तीसं, सत्तरसत्तेव होंति दो चेव ।
अट्ठारस तेत्तीसा, उक्कस्सा होंति अदिरेया ५५२॥

उदधीनां त्रयस्त्रिशत्, सप्तदश सप्तैव भवंति द्वौ चैव ।
अष्टादश त्रयस्त्रिशत्, उत्कृष्टा भवंति अतिरेकाः ॥५५२॥

टीका — बहुरि उत्कृष्ट काल कृष्णलेश्या का तेतीस सागर, नीललेश्या का सतरह सागर, कपोतलेश्या का सात सागर, तेजोलेश्या का दोय सागर, पद्मलेश्या का अठारह सागर, शुक्ललेश्या का तेतीस सागर किछू किछू अधिक जानना । सो अधिक का प्रमाण कितना ? सो कहैं हैं – यहु उत्कृष्ट काल नारक वा देवनि की अपेक्षा कह्या है । सो नारकी अर देव जिस पर्याय तै आनि उपजै, तिस पर्याय का अंत का अंतर्मुहूर्त काल बहुरि देव नारक पर्याय छोडि जहा उपजै, तहा आदि विषै अंतर्मुहूर्त काल मात्र सोई लेश्या हो है । तातै पूर्वोक्त काल तै छहौ लेश्यानि का काल विषै दोय दोय अंतर्मुहूर्त अधिक जानना । बहुरि तेजोलेश्या अर पद्मलेश्या का काल विषै किंचित् ऊन आधा सागर भी अधिक जानना, जातै जाकै आयु का अपवर्तन घात भया असा जो घातायुष्क सम्यग्दृष्टी, ताकै अंतर्मुहूर्त घाटि आधा सागर आयु बधता हो है जैसै सौधर्म–ईशान विषै दोय सागर का आयु कह्या है, ताहा घातायुष्क सम्यग्दृष्टी कै अंतर्मुहूर्त घाटि अढाई सागर भी आयु हो है, असै ऊपर भी जानना । बहुरि असै ही मिथ्यादृष्टि घातायुष्क कै पल्य का असंख्यातवा भाग प्रमाण आयु बधता हो है, सो यहु अधिकपना सौधर्म तै लगाइ सहस्रार स्वर्ग पर्यंत जानना । ऊपर घातायुष्क का उपजना नाही, तातै तहा जो आयु का प्रमाण कह्या है, तितना ही हो हैं, असैं अधिक काल का प्रमाण जानना । इति कालाधिकार ।

आगै अंतर अधिकार दोय गाथानि करि कहै है–

अंतरमवरुक्कस्सं, किण्हतियाणं मुहुत्तअंतं तु ।
उवहीणं तेत्तीसं, अहियं होदि त्ति णिद्दिट्ठं ॥५५३॥

तेउतियाणं एवं, णवरि य उक्कस्स विरहकालो दु ।
पोग्गलपरिवट्टा हु, असंखेज्जा होंति णियमेण ॥५५४॥

अंतरमवरोत्कृष्ट, कृष्णत्रयाणां मुहूर्तांतस्तु ।
उदधीनां त्रयस्त्रिंशदधिकं भवतीति निर्दिष्टम् ॥५५३॥

तेजस्त्रयाणामेवं, नवरि च उत्कृष्टविरहकालस्तु ।
पुद्गलपरिवर्ता हि, असंख्येया भवंति नियमेन ॥५५४॥

टीका – अतर नाम विरह काल का है । जैसे कोई जीव कृष्णलेश्या विषै प्रवर्तै था, पीछे कृष्ण कौ छोडि अन्य लेश्यानि कौ प्राप्त भया । सो जितने काल पर्यंत फिर तिस कृष्णलेश्या कौ प्राप्त न होइ, तीहिं काल का नाम कृष्णलेश्या का अतर कहिये । असें ही सर्वत्र जानना । सो कृष्णादिक तीन लेश्यानि विषै जघन्य अतर अतर्मुहूर्त प्रमाण है । बहुरि उत्कृष्ट किछू अधिक तेतीस सागर प्रमाण है ।

तहा कृष्णलेश्या विषै अंतर कहै हैं—

कोई जीव कोडि पूर्व वर्षमात्र आयु का धारी मनुष्य गर्भ तैं लगाय आठ वर्ष होनें विषै छह अतर्मुहूर्त अवशेष रहै, तहा कृष्णलेश्या कौ प्राप्त भया, तहा अतर्मुहूर्त तिष्ठि करि नील लेश्या कौ प्राप्त भया । तब कृष्णलेश्या के अतर का प्रारंभ कीया । तहा एक-एक अतर्मुहूर्त मात्र अनुक्रम तै नील, कपोत, पीत, पद्म, शुक्ललेश्या कौं प्राप्त होइ, आठ वर्ष का अत के समय दीक्षा धरी, तहा शुक्ललेश्या सहित किछू घाटि कोडि पूर्व पर्यंत सयम कौ पालि, सर्वार्थसिद्धि कौ प्राप्त भया । तहा तेतीस सागर पूर्ण करि मनुष्य होइ, अतर्मुहूर्त पर्यंत शुक्ललेश्या रूप रह्या । पीछै अनुक्रम तै एक-एक अतर्मुहूर्त मात्र पद्म, पीत, कपोत, नील लेश्या कौ प्राप्त होइ, कृष्ण लेश्या कौ प्राप्त भया, असे जीव कै कृष्ण लेश्या का दश अंतर्मुहूर्त अर आठ वर्ष घाटि कोटि पूर्व इन करि अधिक तेतीस सागर प्रमाण उत्कृष्ट अतर जानना । असें ही नील लेश्या अर कपोत लेश्या विषै उत्कृष्ट अतर जानना । विशेष इतना जो तहा दश अतर्मूहूर्त कहे है, नील विषै आठ कपोत विषै छह अतर्मुहूर्त ही अधिक जानने ।

अब तेजो लेश्या का उत्कृष्ट अतर कहै है–

कोई जीव मनुष्य वा तिर्यंच तेजोलेश्या विषै तिष्ठे था, तहा स्यो कपोतलेश्या कौं प्राप्त भया, तब तेजोलेश्या के अतर का प्रारभ कीया । तहा एक - एक अतर्मुहूर्त

पर्यंत कपोत, नील, कृष्ण लेश्या कौं प्राप्त होइ, एकेंद्री भया। तहा उत्कृष्टपनै आवली का असंख्यातवा भाग प्रमाण जे पुद्गल द्रव्य परिवर्तन, तिनिका जितना काल होइ, तितनें काल भ्रमण कीया, पीछें विकलेंद्री भया। तहा उत्कृष्टपनै सख्यात हजार वर्ष प्रमाण काल भ्रमण कीया; पीछै पचेंद्री भया। तहा प्रथम समय तै लगाइ एक - एक अतर्मुहूर्त काल विषै अनुक्रम तै कृष्ण, नील, कपोत कौं प्राप्त होइ, तेजो लेश्या कौ प्राप्त भया। अैसे जीव कै तेजोलेश्या का छह अतर्मुहूर्त सहित अर सख्यात सहस्र वर्ष करि अधिक आवली का असख्यातवा भाग प्रमाण पुद्गल परावर्तन मात्र उत्कृष्ट अतर जानना।

अब पद्म लेश्या का अतर कहै है-

कोई जीव पद्मलेश्या विषै तिष्ठता था, ताकौं छोडि तेजोलेश्या कौं प्राप्त भया, तब पद्म के अतर का प्रारभ कीया। तहा तेजोलेश्या विषै अतर्मुहूर्त तिष्ठि करि सौधर्म - ईशान विषै उपज्या, तहां पल्य का असख्यातवा भाग करि अधिक दोय सागर पर्यंत रह्या। तहा स्यों चय करि एकेंद्री भया। तहा आवली का असख्यातवा भाग प्रमाण पुद्गल परावर्तन काल मात्र भ्रमण करि पीछै विकलेंद्री भया। तहा सख्यात सहस्र वर्ष कालमात्र भ्रमण करि पचेंद्री भया। तहा प्रथमसमय तै लगाइ, एक - एक अतर्मुहूर्त कृष्ण, नील, कपोत, तैजोलेश्या कौं प्राप्त होइ, पद्मलेश्या कौं प्राप्त भया। अैसे जीव कै पद्मलेश्या का पच अतर्मुहूर्त अर पल्य का असख्यातवा भाग करि अधिक दोय सागर अर सख्यात हजार वर्षनि करि अधिक आवली का असख्यातवा भाग प्रमाण पुद्गल परावर्तन मात्र उत्कृष्ट अतर जानना।

आगै शुक्ल लेश्या का अतर कहै हैं-

कोई जीव शुक्ललेश्या विषै तिष्ठे था, तहास्यो पद्मलेश्या कौं प्राप्त भया। तब शुक्ललेश्या का अतर का प्रारभ भया। तहा क्रम तै एक-एक अतर्मुहूर्त काल मात्र पद्म - तेजोलेश्या कौ प्राप्त होइ सौधर्म - ईशान विषै उपजि, तहा पूर्वोक्त प्रमाण काल रहि, तहा पीछै एकेद्री होइ, तहा भी पूर्वोक्त प्रमाण काल मात्र भ्रमण करि, पीछै विकलेंद्री होइ, तहा भी पूर्वोक्त प्रमाण कालमात्र भ्रमण करि, पचेंद्री होइ, प्रथम समय तै एक-एक अतर्मुहूर्त काल मात्र क्रम तै कृष्ण, नील, कपोत, तेज, पद्मलेश्या कौं प्राप्त होइ, शुक्ललेश्या कौं प्राप्त भया। अैसै जीव कै सात अतर्मुहूर्त अर सख्यात सहस्र वर्ष अर पल्य का असख्यातवा भाग करि अधिक दोय सागर करि अधिक

आवली का असख्यातवा भाग प्रमाण पुद्गल परावर्तन मात्र शुक्ललेश्या का उत्कृष्ट अतर जानना । इति अतराधिकारः ।

आगै भाव अर अल्पबहुत्व अधिकारनि कौ कहै है—

भावादो छल्लेस्सा, ओदयिया होंति अप्पबहुगं तु ।
दव्वपमाणे सिद्धं, इदि लेस्सा वण्णिदा होंति ॥५५५॥

भावतः षड् लेश्या, औदयिका भवंति अल्पबहुकं तु ।
द्रव्यप्रमाणे सिद्धमिति, लेश्या वर्णिता भवंति ॥५५५॥

टीका – भाव करि छहौ लेश्या औदयिक भावरूप जाननी, जातै कषाय सयुक्त योगनि की प्रवृत्ति का नाम लेश्या है । सो ते दोऊ कर्मनि के उदय तै हो है । इति भावाधिकार ।

बहुरि तिनि लेश्यानि का अल्प बहुत्व पूर्वै संख्या अधिकार विषै द्रव्य प्रमाण करि ही सिद्ध है । जिनका प्रमाण थोडा सो अल्प, जिनिका प्रमाण घणा सो बहुत । तहां सबतै थोरे शुक्लेश्यावाले जीव हैं, ते पणि असंख्यात है । तिनि तै असख्यातगुणे पद्मलेश्यावाले जीव है । तिनि तै सख्यातगुणे तेजोलेश्यावाले जीव है । तिनि तै अनतानत गुणे कपोतलेश्यावाले जीव हैं । तिनि तै किछू अधिक नीललेश्यावाले जीव है । तिनि तै किछू कृष्णलेश्यावाले जीव है । इति अल्पबहुत्वाधिकार ।

ऐसै छहौ लेश्या सोलह अधिकारनि करि वर्णन करी हुई जाननी ।

आगै लेश्या रहित जीवनि कौ कहै है—

किण्हादिलेस्सरहिया, संसारविणग्गया अणंतसुहा ।
सिद्धिपुरं संपत्ता, अलेस्सिया ते मुणेयव्वा ॥५५६॥

कृष्णादिलेश्यारहिताः, संसारविनिर्गता अनन्तसुखाः ।
सिद्धिपुरं संप्राप्ता, अलेश्यास्ते ज्ञातव्याः ॥५५६॥

टीका – जे जीव कषायनि के उदय स्थान लिए योगनि की प्रवृत्ति के अभाव तै कृष्णादि लेश्यानि करि रहित है, तिस ही तै पच प्रकार ससार समुद्र ते निकसि

पार भए है। वहुरि अतीद्रिय - अनत सुख करि तृप्त है। वहुरि आत्मा की उपलब्धि है लक्षण जाका, असी सिद्धिपुरी कौ सम्यक् पनै प्राप्त भए है, ते अयोगकेवली वा सिद्ध भगवान लेश्या रहित अलेश्य जानने।

इति श्री आचार्य नेमिचद्र सिद्धात चक्रवर्ती विरचित गोम्मटसार द्वितीयनाम पचसग्रह ग्रथ की जीवतत्त्वप्रदीपिका नाम सस्कृत टीका के अनुसारि सम्यग्ज्ञान चद्रिका नामा भाषाटीका विषै जीवकाण्ड विषैं प्ररूपित बीस प्ररूपणा तिनिविषैं लेश्यामार्गणा प्ररूपणा है नाम जाका असा पद्रह्वा अधिकार सपूर्ण भया ॥१५॥

जो जीव तत्त्वज्ञानी होकर इस करणानुयोग का अभ्यास करते हैं, उन्हे यह उसके विशेषणरूप भासित होता है। जो जीवादिक तत्त्वो को आप जानता है, उन्ही के विशेष करणानुयोग मे किये हैं, वहाँ कितने ही विशेषण तो यथावत निश्चयरूप हैं, कितने ही उपचार सहित व्यवहाररूप हैं, कितने ही द्रव्य-क्षेत्र-काल भावादिक के स्वरूप प्रमाणादिरूप हैं, कितने ही निमित्त आश्रयादि अपेक्षा सहित हैं,–इत्यादि अनेक प्रकार के विशेषण निरूपित किये हैं, उन्हे त्यो का त्यो मानता हुआ उस करणानुयोग का अभ्यास करता है।

इस अभ्यास से तत्त्वज्ञान निर्मल होता है। जैसे–कोई यह तो जानता था कि यह रत्न है, परतु उस रत्न के बहुत से विशेषण जानने पर निर्मल रत्न का पारखी होता है, उसी प्रकार तत्त्वो को जानता था कि यह जीवादिक हैं, परन्तु उन तत्त्वो के बहुत विशेष जाने तो निर्मल तत्त्वज्ञान होता है। तत्त्वज्ञान निर्मल होने पर आप ही विशेष धर्मात्मा होता है।

पण्डित टोडरमलः मोक्षमार्ग प्रकाशक, पृ०–२७०

सोलहवां अधिकार : भव्य-मार्गणा

इष्ट फलत सब होत फुनि, नष्ट अनिष्ट समाज ।
जास नामतै सो भजौ, शांति नाथ जिनराज ।।

आगै भव्य-मार्गणा का अधिकार च्यारि गाथानि करि कहै है—

भविया सिद्धी जेसिं, जीवाणं ते हवंति भवसिद्धा ।
तव्विवरीयाऽभव्वा, संसारादो ण सिज्झंति ।।५५७।।

भव्या सिद्धिर्येषां, जीवानां ते भवन्ति भवसिद्धाः ।
तद्विपरीता अभव्याः, संसारान्न सिद्ध्यन्ति ।।५५७।।

टीका – भव्याः कहिए होनेयोग्य वा होनहार है सिद्धि कहिये अनत चतुष्टय रूप स्वरूप की प्राप्ति जिनकै, ते भव्य सिद्ध जानने । याकरि सिद्धि की प्राप्ति अर योग्यता करि भव्यनि कै द्विविधपना कह्या है ।

भावार्थ – भव्य दोय प्रकार है । केई तो भव्य अैसे हैं जे मुक्ति होने कौं केवल योग्य ही हैं, परि कबहू सामग्री कौ पाइ मुक्त न होइ । बहुरि केई भव्य अैसे है, जे काल पाइ मुक्त होहिंगे । बहुरि **तद्विपरीताः** कहिए पूर्वोक्त दोऊ लक्षण रहित जे जीव मुक्त होने योग्य भी नही अर मुक्त भी होते नाही, ते अभव्य जानने । तातै ते वे अभव्य जीव ससार तै निकसि कदाचित मुक्ति कौ प्राप्त न हो है, अैसा ही केई द्रव्यत्व भाव है ।

इहा कोऊ भ्रम करैगा जो अभव्य मुक्त न होइ तौ दोऊ प्रकार के भव्यनि कै तौ मुक्त होना ठहर्‍या तौ जे मुक्त होने कौ योग्य कहे थे, तिन भव्यनि कै भी कबहू तौ मुक्ति प्राप्ति होसी सो अैसे भ्रम कौ दूर करै है—

भव्वत्तणस्स जोग्गा, जे जीवा ते हवंति भवसिद्धा ।
ण हु मलविगमे णियमा, ताणं कणओवलाणमिव ।।५५८।।

भव्यत्वस्य योग्या, ये जीवास्ते भवन्ति भवसिद्धाः ।
न हि मलविगमे नियमात, तेषां कनकोपलानामिव ।।५५८।।

टीका — जे भव्य जीव भव्यत्व जो सम्यग्दर्शनादि सामग्री कौं पाइ, अनत चतुष्टय रूप होना, ताकौं केवल योग्य ही है, तद्रूप होने के नाही, ते भव्य सिद्ध हैं। सदा काल ससार कौं प्राप्त रहै है। काहे तैं ? सो कहिये हैं – जैसें केई सुवर्ण सहित पाषाण असें है, तिनके कदाचित् मैल के नाश करने की सामग्री न मिलै, तैसें केई भव्य असें हैं जिनकै कर्म मल नाश करने की कदाचित् सामग्री नियम करि न सभवै है।

भावार्थ – जैसे अहमिंद्र देवनि कै नरकादि विषै गमन करने की शक्ति है, परतु कदाचित् गमन न करैं, तैसें केई भव्य असें हैं, जे मुक्त होने कौं योग्य हैं, परन्तु कदाचित् मुक्त न होंइ।

ण य जे भव्वाभव्वा, मुत्तिसुहातीदणंतसंसारा।
ते जीवा णायव्वा, णेव य भव्वा अभव्वा य ॥५५९॥

न च ये भव्या अभव्या, मुक्तिसुखा अतीतानंतसंसाराः।
ते जीवा ज्ञातव्या, नैव च भव्या अभव्याश्च ॥५५९॥

टीका — जे जीव केई नवीन ज्ञानादिक अवस्था कौं प्राप्त होने के नाही, तातैं भव्य भी नाही। अर अनत चतुष्टय रूप भए, तातैं अभव्य भी नाही, असे मुक्ति सुख के भोक्ता अनत ससार रहित भए, ते जीव भव्य भी नाही अर अभव्य भी नाही, जीवत्व पारिणामिक कौं धरै है, असे जानने।

इहा जीवनि की सख्या कहैं हैं—

अवरो जुत्ताणंतो, अभव्वरासिस्स होदि परिमाणं।
तेण विहीणो सव्वो, संसारी भव्वरासिस्स ॥५६०॥

अवरो युक्तानन्तः, अभव्यराशे र्भवति परिमाणम्।
तेन विहीनः सर्वः, संसारी भव्यराशेः ॥५६०॥

टीका – जघन्य युक्तानत प्रमाण अभव्य राशि का प्रमाण है। बहुरि ससारी जीवनि के परिमाण मे अभव्य राशि का परिमाण घटाए, अवशेष रहे, तितना भव्य राशि का प्रमाण है। इहा ससारी जीवनि के परिवर्तन कहिए है – परिवर्तन अर परिभ्रमण, ससार ए एकार्थ हैं। सो द्रव्य, क्षेत्र, काल, भव, भाव, भेद तैं परिवर्तन

पच प्रकार है। तहा द्रव्य परिवर्तन दोय प्रकार है – एक कर्म द्रव्य परिवर्तन, एक नोकर्म द्रव्य परिवर्तन ।

तहा नोकर्म द्रव्य परिवर्तन कहिए हैं —

किसी जीव नै औदारिकादिक तीन शरीरनि विषै किसी ही शरीर सबधी छह पर्याप्ति रूप परिणमने कौ योग्य पुद्गल किसी एक समय मे ग्रहे, ते स्निग्ध, रूक्ष, वर्ण, गधादिक करि तीव्र, मद, मध्य भाव लीए, यथा सभव ग्रहे, बहुरि ते द्वितीयादि समयनि विषै निर्जरा रूप कीए । बहुरि अनत बार अगृहीतनि कौ ग्रहि करि छोडे, अनत बार मिश्रनि कौ ग्रहि करि छोडे, बीचि ग्रहीतानि कौ अनत बार ग्रहि करि छोडे, असै भए पीछे जे पहिले समय पुद्गल ग्रहे, तेई पुद्गल तैसे ही स्निग्ध, रूक्ष, वर्ण गधादिक करि तिस ही जीव के नोकर्म भाव कौं प्राप्त होइ, तितना समुदायरूप काल मात्र नोकर्म द्रव्य परिवर्तन है । जीव करि पूर्वे ग्रहे असै परमाणू जिन समयप्रबद्ध रूप स्कधनि विषै होंइ, ते गृहीत कहिए । बहुरि जीव करि पूर्वे न ग्रहे असै परमाणू जिनिविषै होइ, ते अगृहीत कहिये । गृहीत अर अगृहीत दोऊ जाति के परमाणू जिनि विषै होइ, ते मिश्र कहिए ।

इहा कोऊ कहै अगृहीत परमाणू कैसै है ?

ताका सामाधान – सर्व जीवराशि के प्रमाण कौ समय प्रबद्ध के परमाणूनिका परिमाण करि गुणिए । बहुरि जो प्रमाण आवै, ताकौ अतीत काल के समयनि का परिमाण करि गुणिए, जो प्रमाण होइ, तिसतै भी पुद्गल द्रव्य का प्रमाण अनत गुणा है, जातै जीव राशि तै अनंत वर्गस्थान गए पुद्गलराशि हो है । तातै अनादिकाल नाना जीवनि की अपेक्षा भी अगृहीत परमाणू लोक विषै बहुत पाइए है । बहुरि एक जीव का परिवर्तन काल की अपेक्षा नवीन परिवर्तन प्रारभ भया, तब सर्व ही अगृहीत भए । पीछे ग्रहे तेई ग्रहीत हो है । सो इहा जिस अपेक्षा गृहीत, अगृहीत, मिश्र कहे हैं, सो यथासंभव जानना । अब विशेष दिखाइए है —

पुद्गल परिवर्तन का काल तीन प्रकार है । तहा अगृहीत के ग्रहण का काल, सो अगृहीत ग्रहण काल है । गृहीत के ग्रहण का काल, सो गृहीत ग्रहण काल है । मिश्र के ग्रहण का काल, सो मिश्र ग्रहण काल है । सो इनिका परिवर्तन जो पलटना सो कैसे हो है ? सो अनुक्रम यत्र करि दिखाइए है–

यत्र विषै अगृहीत की सहनानी तो विंदी ।।०।। जाननी अरु मिश्र की सहनानी हसपद ।।+।। जाननी । अर गृहीत की सहनानी एक का अक ।।१।। जाननी । अर दोय बार लिखने तै अनत बार जानि लेना ।

द्रव्य परिवर्तन का यंत्र-

० ० +	० ० +	० ० १	० ० +	० ० +	० ० १
+ + ०	+ + ०	+ + १	+ + ०	+ + ०	+ + १
+ + १	+ + १	+ + ०	+ + १	+ + १	+ + ०
१ १ +	१ १ +	१ १ ०	१ १ +	१ १ +	१ १ ०

तहा विवक्षित नोकर्म पुद्गल परिवर्तन का पहिले समय तै लगाइ, प्रथम बार समयप्रबद्ध विषै अगृहीत का ग्रहण करै, दूसरी बार अगृहीत ही का ग्रहण करै, तीसरी बार अगृहीत ही का ग्रहण करै ऐसै निरतर अनत बार अगृहीत का ग्रहण होइ निवरै तब एक बार मिश्र का ग्रहण करै । याहीतै यत्र विषै पहिले कोठा विषै दोय बार बिंदी एक बार हसपद लिख्या ।

बहुरि तहा पीछै तैसै ही निरतर अनत बार अगृहीत का ग्रहण करि एक बार मिश्र का ग्रहण करै, ऐसै ही अनुक्रमतै अनत अनत बार अगृहीत का ग्रहण करि करि एक - एक बार मिश्र का ग्रहण करै, ऐसै ही मिश्र का भी ग्रहण अनत बार हो है । याहीतै अनत बार की सहनानी के निमित्त यत्र विषै जैसा पहिला कोठा था, तैसाही दूसरा कोठा लिख्या ।

बहुरि तहा पीछै तैसै ही निरतर अनत बार अगृहीत का गहण करि एक बार गृहीत का ग्रहण करै, याहीतै तीसरा कोठा विषै दोय बिंदी अर एक का अक लिख्या । बहुरि अगृहीत ग्रहण आदि अनुक्रम तै जसै यहु एक बार गृहीत ग्रहण भया, तैसै ही अनुक्रम तै एक - एक बार गृहीत ग्रहण करि अनत बार गृहीत ग्रहण हो है । याहीतै जसै तीन कोठे पहिलै लिखे थे, तैसै ही अनत की सहनानी के निमित्त दूसरा तीन कोठे लिखे, सो ऐसै होतै प्रथम परिवर्तन भया । तातै इतना प्रथमपक्ति विषै लिखा ।

अब दूसरी पक्ति का अर्थ दिखाइए है – पूर्वोक्त अनुक्रम भए पीछे निरतर अनत बार मिश्र ग्रहण करै, तब एक बार अगृहीत ग्रहण करै । यातै प्रथम कोठा विषै

दोय हंसपद अर एक बिंदी लिखी । बहुरि निरंतर अनत बार मिश्र ग्रहण करि, एक बार अगृहीत ग्रहण करै, सो इस ही क्रम तै अनत बार अगृहीत ग्रहण करै; यातै पहला कोठा सारिखा दूसरा कोठा लिख्या ।

बहुरि तहा पीछै निरंतर अनंत बार मिश्र ग्रहण करि एक बार गृहीत ग्रहण करै । यातै तीसरा कोठा विषै दोय हसपद अर एक एक का अक लिख्या । सो मिश्र ग्रहण आदि पूर्वोक्त सर्व अनुक्रम लीए, एक - एक बार गृहीत ग्रहण होइ, सो असै गृहीत ग्रहण भी अनंत बार हो है । यातै जैसै पहिले तीन कोठे लिखे थे, तैसे ही दूसरा तीन कोठे लिखे; असै होत सतै दूसरा परिवर्तन भया ।

अब तीसरी पक्ति का अर्थ दिखाइए है – पूर्वोक्त क्रम भए पीछै निरतर अनत बार मिश्र का ग्रहण करि एक बार गृहीत का ग्रहण करै; यातै प्रथम कोठा विषै दोय हसपद अर एक-एक का अंक लिख्या, सो अनंत अनत बार मिश्र ग्रहण करि-करि एक एक बार गृहीत ग्रहण करि अनत बार गृहीत ग्रहण हो है । यातै पहिला कोठा सारिखा दूसरा कोठा लिख्या । बहुरि अनत बार मिश्रका ग्रहण करि एक बार अगृहीत का ग्रहण करै । यातै तीसरा कोठा विषै दोय हसपद अर एक बिंदी लिखी, सो जैसे मिश्र ग्रहणादि अनुक्रम तै एक बार अगृहीत का ग्रहण भया, तैसै ही एक एक बार करि अनत बार अगृहीत का ग्रहण हो है । तातै पहिले तीन कोठे थे, तैसै ही दूसरा तीन कोठे लिखे, असै होत सतै तीसरा परिवर्तन भया ।

आगै चौथी पक्ति का अर्थ दिखाइए है - पूर्वोक्त क्रम भए पीछै निरतर अनत बार गृहीत का ग्रहण करि एक बार मिश्र का ग्रहण करै, यातै प्रथम कोठा विषै दोय एका अर एक हंसपद लिख्या है । सो अनत अनत बार गृहीत का ग्रहण करि-करि एक एक बार मिश्र ग्रहण करि अनंत बार मिश्र का ग्रहण हो है । यातै प्रथम कोठा सारिखा दूसरा कोठा कीया । बहुरि तहा पीछै अनत बार गृहीत का ग्रहण करि एक बार अगृहीत का ग्रहण करै, यातै तीसरा कोठा विषै दोय एका अर एक बिंदी लिखी । बहुरि चतुर्थ परिवर्तन की आदि तै जैसा अनुक्रम करि यहु एक बार अगृहीत ग्रहण भया । तैसै ही अनुक्रम तै अनत बार अगृहीत ग्रहण होइ, यातै पहिलै तीन कोठे कीए थे, तैसै ही आगै अनंत बार की सहनानी के अर्थि दूसरा तीन कोठे कीए । असै होतें सते चतुर्थ परिवर्तन भया । बहुरि तीहिं चतुर्थ परिवर्तन का अनन्तर समय विषै विवक्षित नोकर्म द्रव्य परिवर्तन के पहिले समय विषै जे पुद्गल जिस

स्निग्ध, रूक्ष, वर्ण, गधादि भाव कौ लीए ग्रहण कीए थे, तेई पुद्गल तिस ही स्निग्ध, रूक्ष, वर्ण गधादि भाव कौं लीए शुद्ध गृहीतरूप ग्रहण कीजिए है, सो यहु सव मिल्या हुवा सपूर्ण नोकर्म द्रव्य परिवर्तन जानना ।

आगे कर्म पुद्गल परिवर्तन कहिए है-किसी जीवने एक समय विषै आठ प्रकार कर्मरूप जे पुद्गल ग्रहे, ते एक समय अधिक आवली प्रमाण आबाधा काल कौ गए पीछै द्वितीयादि समयनि विषै निर्जरारूप कीए, पीछे जैसा अनुक्रम आदि तै लगाइ, अत पर्यंत नोकर्म द्रव्य परिवर्तन विषै कह्या, तैसा ही अनुक्रम सर्व चारचो परिवर्तन सबधी इस कर्म द्रव्य परिवर्तन विषै जानना ।

विशेष इतना-तहा नोकर्म संबधी पुद्गल थे,इहा कर्म सबंधी पुद्गल जानने । अनुक्रम विषै किछू विशेष नाही । पीछै पहिले समय जैसे पुद्गल ग्रहे थे, तेई पुद्गल तिस ही भाव कौ लीए, चतुर्थ परिवर्तन के अनतर समय विषै ग्रहण होइ, सो यहु सर्व मिल्या हूवा संपूर्ण कर्म परिवर्तन जानना । इस द्रव्य परिवर्तन कौं पुद्गल परिवर्तन भी कहिए है । सो नोकर्म पुद्गल परिवर्तन का अर कर्मपुद्गल परिवर्तन का काल समान है । बहुरि इहा इतना जानना - पूर्वे जो क्रम कह्या, तहा जैसे पहिले अनत बार अगृहीत का ग्रहण कह्या, तहा वीचि वीचि मे गृहीत ग्रहण वा मिश्र ग्रहण भी होइ, सो अनुक्रम विषै तो पहिली बार अर दूसरी बार आदि जो अगृहीत ग्रहण होइ, सोई गिणने मे आवै है । अर काल परिमाण विषै गृहीत, मिश्र ग्रहण का समय सहित सर्व काल गिणने मे आवै है । जिनि समयनि विषै गृहीत का ग्रहण है, ते समय गृहीत ग्रहण के काल विषै गिणने मे आवै है । जिनि समयनि विषै मिश्र का ग्रहण हो है, ते समय मिश्र ग्रहण के काल विषै गिणने मे आवै है । जिन समयनि विषै अगृहीत ग्रहण हो है, ते समय अगृहीत ग्रहण काल विषै गिणने मे आवै हैं, सो यहु उदाहरण कह्या है; अैसे ही सर्वत्र जानना । क्रम विषै तौ जैसा अनुक्रम कह्या होइ, तैसे होइ, तब ही गिणने मे आवै । अर तिस अनुक्रम के बीचि कोई अन्यरूप प्रवर्तै, सो अनुक्रम विषै गिणने मे नाही । अर जिनि समयनि विषै अन्यरूप भी प्रवर्तै है, तिनि समयनिरूप जो काल, सो परिवर्तन का काल विषै गिणने मे आवै ही है । अैसे ही क्षेत्रादि परिवर्तन विषै भी जानना ।

जैसे क्षेत्र परिवर्तन विषै किसी जीवने जघन्य अवगाहना पाई, परिवर्तन प्रारभ कीया, पीछै केते एक काल अनुक्रम रहित अवगाहना पाई, पीछे अनुक्रमरूप अवगा-

हना कौ प्राप्त भया, तहा क्षेत्र परिवर्तन का अनुक्रम विषै तौ पहिले जघन्य अवगाहना पाई थी, अर पीछे दूसरी बार अनुक्रमरूप अवगाहना पाई, सो गिणने मे आवै है । अर क्षेत्र परिवर्तन का काल विषै बीचि में अनुक्रम रहित अवगाहना पावने का काल सहित सर्व काल गिणने मे आवै है । ऐसै ही सर्व विषै जानि लेना ।

अब इहा द्रव्य परिवर्तन विषै काल का परिमाण कहै है । तहा अगृहीत ग्रहण का काल अनत है; तथापि यहु सर्व तै स्तोक है । जातै जिनि पुद्गलनि स्यौं द्रव्य, क्षेत्र, काल, भावनि का सस्कार नष्ट है, ते पुद्गल बहुत बार ग्रहण मे आवते नाही, याही तै विवक्षित पुद्गल परिवर्तन के मध्य गृहीत पुद्गलनि का ही बहुत बार ग्रहण सभवै है । सोई कह्या है —

सुहुमट्ठिदिसंजुत्तं, आसण्णं कम्मणिज्जरामुक्कं ।
पाएण एदि गहणं, दव्वमणिद्दिट्ठसंठाणं ।।

जे पुद्गल कर्मरूप परिणए थे, अर जिनकी स्थिति थोरी थी, अर निर्जरा होते कर्म अवस्था करि रहित भए है अर जीव के प्रदेशनि स्यो एक क्षेत्रावगाही तिष्ठै है, अर सस्थान आकार जिनिका कह्या न जाय अर विवक्षित पुद्गल परिवर्तन का पहिला समय विषै जिस स्वरूप ग्रहण मे आए, तिसकरि रहित होइ, ऐसे पुद्गल, जीव करि बाहुल्य पनै समयप्रबद्धनि विषै ग्रहण कीजिए है । ऐसा नियम नाही, जो ऐसे ही पुद्गलनि का ग्रहण करै, परतु बहुत बार ऐसे ही पुद्गलनि का ग्रहण हो है, जातै ए पुद्गल द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव का संस्कार करि सयुक्त हैं ।

बहुरि अगृहीत ग्रहण के काल तै मिश्र ग्रहण का काल अनत गुणा है । बहुरि तिस मिश्र ग्रहण के काल तै गृहीत ग्रहण का जघन्यकाल अनत गुणा है । बहुरि तिस तै सर्व पुद्गल परिवर्तन का जघन्य काल किछू अधिक है । जघन्य गृहीत ग्रहण काल कौ अनत का भाग दीए, जो प्रमाण आवै, तितना जघन्य गृहीत ग्रहण काल विषै मिलाइए, तब जघन्य पुद्गल परिवर्तन का काल हो है । बहुरि तिसतै गृहीत ग्रहण का उत्कृष्ट काल अनत गुणा है, बहुरि तातै संपूर्ण पुद्गल परिवर्तन का उत्कृष्ट काल किछू अधिक है । उत्कृष्ट गृहीत ग्रहण काल कौं अनत का भाग दीए, जो प्रमाण आवै, तितना उत्कृष्ट गृहीत ग्रहण काल विषै मिलाइए, तब उत्कृष्ट पुद्गल परिवर्तन का काल हो है । इहा अगृहीत ग्रहण काल अर मिश्र ग्रहण काल विषै जघन्य उत्कृ-

ष्टपना नाही है । जातै परपरा सिद्धात विषै तिनके जघन्य उत्कृष्टपने का उपदेश का अभाव है ।

इहा प्रासगिक (उक्त च) गाथा कहै है—

अगहिदमिस्स गहिदं, मिस्समगहिदं तहेव गहिदं च ।
मिस्सं गहिदमगहिदं, गहिदं मिस्सं अगहिदं च ॥

पहिला – अगृहीत, मिश्र, गृहीतरूप, दूसरा – मिश्र, अगृहीत, गृहीतरूप; तीसरा – मिश्र, गृहीत, अगृहीतरूप, चौथा – गृहीत, मिश्र, अगृहीतरूप परिवर्तन भए द्रव्य परिवर्तन हो है । सो विशदरूप पूर्वै कह्या ही है ।

उक्त च (आर्या छद)—

सर्वेऽपि पुद्गलाः, खल्वेकेनात्तोज्झिताश्च जीवेन ।
ह्यसकृत्त्वनंतकृत्वः, पुद्गलपरिवर्तसंसारे ॥

एकै जीव पुद्गल परिवर्तनरूप ससार विषै यथा योग्य सर्व पुद्गल वारवार अनत वार ग्रहि छाडै है ।

आगै क्षेत्र परिवर्तन कहिए है – सो क्षेत्रपरिवर्तन दोय प्रकार – एक स्वक्षेत्र परिवर्तन, एक परक्षेत्र परिवर्तन ।

तहा स्वक्षेत्र परिवर्तन कहिए है – कोई जीव सूक्ष्म निगोदिया की जघन्य अवगाहना कौ धारि उपज्या, अपना सास का अठारहवा भाग प्रमाण आयु कौ भोगि मूवा, बहुरि तिस तै एक प्रदेश बधती अवगाहना कौ धरै, पीछै दोय प्रदेश बधती अवगाहना कौ धरै, असै एक - एक प्रदेश अनुक्रम तै बधती - बधती महामत्स्य की उत्कृष्ट अवगाहना पर्यंत सख्यात घनागुल प्रमाण अवगाहना के भेदनि कौ सोई जीव प्राप्त होइ । जे अवगाहना के भेद है, ते सर्व एक जीव अनुक्रम तै यावत्काल विषै धारै, सो यहु सर्व समुदायरूप स्वक्षेत्र परिवर्तन जानना ।

अब परक्षेत्र परिवर्तन कहिये है—

सूक्ष्म निगोदिया लब्धि अपर्याप्तक जघन्य अवगाहनारूप शरीर का धारक सो लोकाकाश के मध्य जे आठ आकाश के प्रदेश हैं, तिनकौं अपने शरीर की अवगाहना के मध्यवर्ती आठ प्रदेश करि अवशेष, उनके निकटवर्ती अन्य प्रदेश, तिनकौ रोक करि उपज्या, सास का अठारहवा भाग मात्र क्षुद्र भव काल जीय करि मूवा । बहुरि सोई जीव तैसै ही अवगाहना कौ धारि, तिस ही क्षेत्र विषै दूसरा उपज्या, सो असै

घनागुल का असंख्यातवा भाग प्रमाण जघन्य अवगाहना के जेते प्रदेश है, तितनी बार तौ तैसें ही उपज्या, पीछे तहा स्यों एक प्रदेश आकाश का उसके निकटवर्ती, ताकौ रोकि करि उपज्या, असें अनुक्रम तें एक - एक प्रदेश करि सर्व लोकाकाश के प्रदेशनि कौ अपना जन्मक्षेत्र करै, सो यहु सर्व परक्षेत्र परिवर्तन है ।

उक्त च—

सर्वत्र जगत्क्षेत्रे, देशो न ह्यस्ति जंतुनाऽक्षुण्णः ।
अवगाहनानि बहुशो बंभ्रमता क्षेत्रसंसारे ।।

क्षेत्र संसार विषै भ्रमण करता जीव करि जाका अपने शरीर की अवगाहना करि स्पर्श न कीया असा सर्व जगच्छ्रेणी का घन प्रमाण लोक विषै कोई प्रदेश नाही है । बहुरि जाकौ बहुत बार अगीकार न कीया, असा कोई अवगाहना का भेद भी नाही ।

आगै काल परिवर्तन कहिये है—

कोई जीव उत्सर्पिणी काल का पहिला समय विषै उपज्या, अपना आयु कौ पूर्ण करि मूवा । बहुरि दूसरा उत्सर्पिणी काल का दूसरा समय विषै उपज्या, अपना आयु कौ पूर्णकरि मूवा । बहुरि तीसरी उत्सर्पिणी काल का तीसरा समय विषै उपज्या, तैसे ही मूवा । असें दश कोडाकोडि सागर प्रमाण उत्सर्पिणी काल के जेते समय है, तिनकौ पूर्ण करै । बहुरि पीछै इस ही अनुक्रम तै दश कोडाकोडि प्रमाण अवसर्पिणी काल के जेते समय है, तिनकौ पूर्ण करै । बहुरि जैसे जन्म की अपेक्षा कह्या, अनुक्रम तैसें ही मरण की अपेक्षा अनुक्रम जानना । पहिले समय विषै मूवा, दूसरे समय विषै मूवा, असें कल्पकाल समयनि कौ पूर्ण करै, सो यहु सर्व मिल्या हूआ काल परिवर्तन जानना ।

उक्त च—

उत्सर्पिण्यवर्सर्पिणिसमयावलिकासु निरवशेषासु ।
जातो मृतश्च बहुशः, परिभ्रमन् कालसंसारे ।।

काल ससार विषै भ्रमण करता जीव, उत्सर्पिणी अवसर्पिणीरूप कल्प काल का समस्त समय, तिनकी पकति विषै क्रम तें बहुत बार जन्म धर्या है, अर मरण कीया है ।

आगै भव परिवर्त कहै है—

कोऊ जीव नरक गति विषै जघन्य आयु दशहजार वर्ष की धारि उपज्या, पीछै मरण करि ससार विषै भ्रमण करि तहा ही जघन्य दश हजार वर्ष की आयु कौं

धारि उपज्या, अैसें दश हजार वर्ष के जेते समय होहि, तितनी वार तौ जघन्य आयु कौ ही धारि धारि उपजै अर मरै, पीछै दश हजार वर्ष अर एक समय का आयु कौं धारि उपजै, पीछै दश हजार दोय समय के आयु कौ धारि उपजै, अैसे एक - एक समय बधता अनुक्रम तै उत्कृष्ट आयुमात्र तेतीस सागर पूरण करै, पीछै तिर्यंच गति विषै अतर्मु हूर्तमात्र जघन्य आयु कौ धारि उपजै, सो पूर्ववत् अतमु हूर्त के जेते समय होहि, तितनी बार तौ तिस अतमु हूर्त प्रमाण ही आयु कौ धारि धारि उपजै। पीछै एक समय अधिक अतर्मु हूर्त आयु कौं धारि उपजे, पीछै दोय समय अधिक अतर्मु हूर्त आयु कौ धारि उपजै, अैसे एक एक समय अनुक्रम तै बधतै बधतै उत्कृष्ट आयु का तीन पल्य पूर्ण करै। बहुरि मनुष्य गति विषै तिर्यंच गति की ज्यौं अंतर्मु हूर्त तै लगाइ तीन पल्य कौ पूर्ण करै। बहुरि देवगति विषै नरक गति की ज्यौं दश हजार वर्ष तै लगाइ, इकतीस सागर पूर्ण करै, जातै मिथ्यादृष्टी जीव अनुत्तर अनुदिश विमान विषै उपजै नाही, ऊपरि के ग्रैवेयक पर्यंत ही उपजै, तातै इकतीस सागर ही कहे, अैसे भ्रमण करि बहुरि नरक विषै दश हजार वर्ष प्रमाण जघन्य आयु कौं धारि उपजै, तब यहु सर्व सपूर्ण भव परिवर्तन हो है।

उक्त च—

नरकजघन्यायुष्यादुपरिमग्रैवेयकावसानेषु ।
मिथ्यात्वसंश्रितेन हि भवस्थितिर्भाविता बहुशः ॥

मिथ्यात्व करि आश्रित जीव, तीहि नरक का जघन्य आयु आदि उपरिम गैवेयक पर्यंत आयु विषै ससार की स्थिति बहुत बार भोगई है।

आगै भाव परिवर्तन कहिये हैं—

सो भाव परिवर्तन योग स्थान, अनुभाग बधाध्यवसाय स्थान, कषायाध्यवसाय स्थान, स्थिति स्थान इनि च्यारिनि के परिवर्तन तै हो है, सो प्रथम इनिका स्वरूप कहिये हैं—

प्रकृति बध, प्रदेश बध कौ कारण अैसे प्रदेश परिस्पद लक्षण योग, तिनिके जे जघन्यादिक स्थान, ते योगस्थान हैं। बहुरि जिनि कषाय युक्त परिणामनि तै कर्मनि का अनुभाग बध हो है, तिनिके जघन्यादि स्थान ते अनुभाग बधाध्यवसाय स्थान हैं। बहुरि जिनि कषाय परिणामनि तै स्थिति बध हो है, तिनिके जघन्यादि स्थान ते इहा

कषायाध्यवसाय स्थान कहे है । वा स्थिति बंधाध्यवसाय स्थान भी इनिकौ कहिये । बहुरि बधनेरूप जो कर्मनि की स्थिति, तिनिके जघन्यादिक स्थान, ते स्थिति स्थान कहिए । इनिका विशेष स्वरूप आगे कहैगे, सो जानना ।

बहुरि इहा एक-एक स्थिति भेद के बंध के कारण अपने योग्य असंख्यात लोक प्रमाण स्थिति बधाध्यवसाय स्थान पाइये है । बहुरि एक-एक स्थिति बधाध्यवसाय स्थान विषै यथायोग्य असंख्यात लोक प्रमाण अनुभाग बधाध्यवसाय स्थान पाइये । बहुरि एक एक अनुभाग बंधाध्यवसाय स्थान विषै जगच्छ्रेणी के असंख्यातवे भागमात्र योग स्थान पाइये है ।

अब इनिके परिवर्तन का अनुक्रम ज्ञानावरण कर्म का उदाहरण करि कहिये हैं – कोऊ जीव पचेंद्री सैनी पर्याप्त मिथ्यादृष्टी सो अपने योग्य जघन्य ज्ञानावरण नामा कर्म की स्थिति अतःकोटाकोटी सागर प्रमाण बांधै है, इस जीव के यातै घाटि स्थिति बंध होता नाही, तातै याकै यहु ही जघन्य स्थिति स्थान है, सो कोडि के ऊपरि अर कोडाकोडि के नीचे जो होइ, ताकौं अंत कोटाकोटी कहिये । तहा तिस जघन्य स्थिति बंध करनेवाले जीव कै तिस जघन्य स्थितिबध कौं योग्य असख्यात लोक प्रमाण कषायाध्यवसाय स्थान पाइये है, ते परिणामनि की अपेक्षा अनत भागादिक षट् स्थान कौ लीए है । बहुरि तिनिविषै भी जघन्य कषायाध्यवसाय स्थान कौ निमित्तभूत अनुभाग बधाध्यवसाय स्थान असख्यात लोकप्रमाण पाइये है । सो पूर्वोक्त कोऊ जीव कै अत कोटाकोटी सागर प्रमाण जघन्य ही तौ स्थिति स्थान है । अर ताके जघन्य ही कषायाध्यवसाय स्थान है, अर जघन्य ही अनुभाग बंधाध्यवसाय स्थान है । अर तिस जीव के जैसा योग्य होइ, तैसा जघन्य ही योग स्थान पाइये है, तहा भाव परिवर्तन का प्रारभ हूवा । बहुरि तिसही जीव के स्थिति स्थान कषायाध्यवसाय स्थान, अनुभाग बधाध्यवसाय स्थान ए तौ तीनो जघन्य ही रहे अर जघन्य तै असख्यात भागवृद्धि कौ लीए योग स्थान दूसरा भया, पीछै स्थिति स्थानादिक तीनौ तौ जघन्य ही रहे, अर योग स्थान तीसरा भया । ऐसै अनुक्रम तै अविभाग प्रतिच्छेदनि की अपेक्षा असख्यात भागवृद्धि, सख्यात भाग वृद्धि, सख्यात गुणवृद्धि, असख्यात गुण वृद्धिरूप चतुःस्थान पतित वृद्धि लीए श्रेणी के असख्यातवे भाग प्रमाण योग स्थान भए । बहुरि स्थिति स्थान अर कषायाध्यवसाय स्थान तौ जघन्य ही रहे, अर अनुभाग बधाध्यवसाय स्थान का दूसरा स्थान भया । तहा योग स्थान जघन्य तै लगाइ, पूर्वोक्त प्रकार क्रम तै सर्व भए । बहुरि स्थिति स्थान अर कपायाध्यवसाय स्थान तौ जघन्य ही रहे,

अर अनुभाग बधाध्यवसायस्थान का तीसरा स्थान भया। तहा भी योगस्थान पूर्वोक्त प्रकार भए, असै क्रमतै अपने योग असख्यात लोक प्रमाण अनुभागाध्यवसायस्थान भए। बहुरि स्थिति स्थान तौ जघन्य ही रह्या, अर कषायाध्यवसाय स्थान का दूसरा स्थान भया। तहा पूर्वोक्त प्रकार योगस्थाननि कौं लीए जघन्य तै लगाइ, अनुभागाध्यवसाय स्थान भए। बहुरि स्थिति स्थान तौ जघन्य ही रह्या, अर कषायाध्यवसाय स्थान का तीसरा स्थान भया। तहा भी पूर्वोक्त प्रकार योग स्थाननि कौं लीए, क्रम तै अनुभागाध्यवसायस्थान भए, असै ही क्रम तै अपने योग्य कषायाध्यवसाय स्थान असख्यात लोक प्रमाण भए। बहुरि जैसे यहु अत कोटाकोटी प्रमाण जघन्य स्थिति स्थान विषै अनुक्रम कह्या, तैसै ही जघन्य तै एक समय अधिक दूसरा स्थिति स्थान विषै अपने योग्य योग स्थान अनुभागाध्यवसाय स्थान के परिवर्तन कौं लीए पूर्वोक्त प्रकार क्रम तै अपने योग्य सर्व कषायाध्यवसाय स्थान भए। बहुरि असै ही जघन्य तै दोय समय अधिक तीसरा स्थिति स्थान विषै भए। असै एक-एक समय बधता स्थिति स्थान का अनुक्रम करि तीस कोडाकोडी सागर प्रमाण उत्कृष्ट स्थिति पर्यंत जानना। बहुरि जैसे यहु ज्ञानावरण अपेक्षा कथन कीया, तैसै ही कर्मनि की सर्व मूल प्रकृति वा उत्तर प्रकृतिनि विषै परिवर्तन का अनुक्रम जानना। असै यहु सर्व मिल्या हुवा भाव परिवर्तन जानना। इहा जघन्य स्थिति आदि विषै सर्व ही कषायाध्यसाय स्थानादिकनि का पलटना न हो है। जघन्य स्थिति आदि विषै जे सभवै तिन ही का पलटना हो है, असा जानना।

उक्त च आर्या छद—

सर्वप्रकृतिस्थित्यनुभागप्रदेशबंधयोग्यानि।
स्थानान्यनुभूतानि, भ्रमता भुवि भावसंसारे ॥१॥

लोक विषै भाव ससार विषै भ्रमण करता जीव करि प्रकृति, प्रदेश, स्थिति, अनुभाग बध कौं योग्य, जे योगनि के, कषायनि के, स्थिति के, स्थान ते सब ही भोगिए है। इहा परिवर्तन का अनुक्रम विषै जघन्य स्थिति स्थान सबधी स्थिति बधाध्यवसाय स्थान, अनुभाग बधाध्यवसाय स्थान, योग स्थान जघन्य तै लगाइ उत्कृष्ट पर्यंत हो है। तिनिकौ आदि दे करि सर्वोत्कृष्ट स्थिति पर्यंत अपने-अपने सबधी जघन्य तै उत्कृष्ट पर्यंत स्थिति बधाध्यवसायादिक कौं स्थापि, यथासभव जैसै गुणस्थान प्ररूपणा विषै प्रमाद भेदनि के निमित्ति अक्षसचार करि परिवर्तन का विधान कह्या था, तैसै इहा भी अक्षसचार करि परिवर्तन का विधान जानना। असै ए पच परिवर्तन कहे।

अब इनिका काल कहिए है-

सर्व तै स्तोक एक पुद्गलपरिवर्तन का काल है, सो अनंत है । बहुरि तातै अनंत गुणा क्षेत्र परिवर्तन का काल है । बहुरि तातै अनत गुणा काल परिवर्तन का काल है । बहुरि तातै अनंत गुणा भव परिवर्तन का काल है । बहुरि तातै अनंत गुणा भाव परिवर्तन का काल है । याही तै एक जीव के अनादि तै लगाइ, अतीत काल विषै भाव परिवर्तन थोरे भए; ते पणि अनत भए । बहुरि तिनितै अनतगुणे भव परिवर्तन भए । बहुरि तिनितै अनत गुणे काल परिवर्तन भए । बहुरि तिनितै अनत गुणे क्षेत्र परिवर्तन भए, बहुरि तिनितै अनंत गुणे द्रव्य परिवर्तन भए, असै जानना ।

बहुरि जैसे स्वर्गादि विषै दिन-रात्रि का अभाव है, तहा मनुष्य क्षेत्र अपेक्षा वर्ष आदि का प्रमाण कीजिए है, तैसै निगोदादि विषै जीवनि के जैसे जहा परिवर्तन का अनुक्रम न हो है । तहा अन्य जीव अपेक्षा परिवर्तन का काल ग्रहण कीजिए है ।

उक्तं च आर्याछंद—

पंचविधे संसारे, कर्मवशाज्जैनदर्शितं मुक्तेः
मार्गमपश्यन् प्राणी, नानदुःखकुले भ्रमति ।।

जिनमत करि दिखाया जो मुक्तिका मार्ग, ताकौं न श्रद्धान करता प्राणी जीव नाना प्रकार दुःखनि करि आकुलित जो पंच प्रकार संसार, तीहिविषै भ्रमण करै है ।

इति आचार्य श्री नेमिचन्द्र सिद्धातचक्रवर्ति विरचित गोम्मट सार द्वितीय नाम पचसग्रह ग्रंथ की जीवतत्त्वप्रदीपिका नामा सस्कृत टीका के अनुसारि सम्यग्ज्ञानचद्रिका नामा भाषाटीका विषै जीवकाण्ड विषै प्ररूपित जे बीस प्ररूपणा तिनिविषै भव्यमार्गणा प्ररूपणा है नाम जाका असा सोलहवा अधिकार सपूर्ण भया ।।१६।।

———

सतरहवां अधिकार : सम्यक्त्व-मार्गणा

ज्ञान उदधि शशि कुंथु जिन, बंदौ अमितविकास ।
कुंथ्वादिक कीए सुखी, जनम मरण करि नाश ।।

आगे सम्यक्त्व मार्गणा कौं कहैं हैं —

छ-प्पंच-णव-विहाणं, अत्थाणं जिणवरोवइट्ठाणं ।
आणाए अहिगमेण य, सद्दहणं होइ सम्मत्तं ।।५६१।।[1]

षट्पञ्चनवविधानामर्थानां जिनवरोपदिष्टानाम् ।
आज्ञाया अधिगमेन च, श्रद्धानं भवति सम्यक्त्वम् ।।५६१।।

टीका – द्रव्य भेद करि छह प्रकार, अस्तिकाय भेद करि पाच प्रकार पदार्थ भेद करि नौ प्रकार असे जो सर्वज्ञ देव करि कहे जीवादिक वस्तु तिनका श्रद्धान-रुचि-यथावत् प्रतीति, सो सम्यक्त्व जानना । सो सर्वदेवने जैसे कह्या है, तैसें ही है। असे आप्तवचन करि सामान्य निर्णयरूप है लक्षण जाका असी जो आज्ञा, तीहिंकरि बिना ही प्रमाण नयादिक का विशेष जानें, श्रद्धान हो है । अथवा प्रत्यक्ष - परोक्ष प्रमाण अर द्रव्यार्थिक - पर्यायार्थिक नय अर नाम, स्थापना, द्रव्य, भाव, निक्षेप अर व्याकरणादि करि साधित निरुक्ति अर निर्देश, स्वामित्व आदि अनुयोग इत्यादि करि विशेष निर्णयरूप है लक्षण जाका, असा जो अधिगम, तीहिंकरि श्रद्धान हो है ।

उक्त च —

सरागवीतरागात्म–विषयत्वाद् द्विधा स्मृतम् ।
प्रशमादिगुणं पूर्वं, परं चात्मविशुद्धिजम् ।।१।।

सम्यक्त्व दोय प्रकार है, एक सराग, एक वीतराग । तहा उपशम, सवेग, आस्तिक्यादिक गुणनिरूप राग सहित श्रद्धान होइ, सो सराग सम्यक्त्व है । बहुरि केवल चैतन्य मात्र आतमस्वरूप की विशुद्धता मात्र वीतराग सम्यक्त्व है ।

---

१ षट्खडागम – धवला पुस्तक १, पृष्ठ स १५३ गाथा स ९६ पृष्ठ ३९७, गाथा स २१२

उक्तं च –

> आप्ते व्रते श्रुते तत्त्वे, चित्तमस्तित्वसंयुतम् ।
> आस्तिक्यमास्तिकैरुक्तं, सम्यक्त्वेन युते नरे ।

सो सम्यग्दृष्टी जीव के सर्वज्ञ देव विषै, व्रत विषै, शास्त्र विषै, तत्त्व विषै अैसे ही है अैसा अस्तित्वभाव करि संयुक्त चित्त हो है, सो सम्यक्त्व सहित जीव विषै आस्तिक्य गुण है । अैसे अस्तित्ववादीनि करि कहिए है अथवा **'तत्त्वार्थश्रद्धानं सम्यग्दर्शनम्'**[1] अैसा कह्या है अथवा **'तत्त्वरुचिः सम्यक्त्वम्'**[2] अैसा कह्या है, सो ए सर्व विशेषण एकार्थ है । इनि सबनि का अर्थ यहु जानना–जो यथार्थ स्वरूप लीएं, पदार्थनि का श्रद्धान, सो सम्यक्त्व है ।

उक्तं च –

> प्रदेशप्रचयात्कायाः, द्रवणाद्द्रव्यनामकाः ।
> परिच्छेद्यत्वतस्तेऽर्थाः, तत्त्वं वस्तुस्वरूपतः ।।१।।

अर्थ – सम्यक्त्व के श्रद्धान विषै आवने योग्य जे जीवादिक, ते बहुत प्रदेशनि का प्रचय - समूह कौं धरै है, तातै काय कहिए । बहुरि अपने गुण पर्यायनि कौं द्रवै है, व्यापै हैं, तातै द्रव्य नाम कहिए । बहुरि जीव करि जानने योग्य है, तातै अर्थ कहिए । बहुरि वस्तुस्वरूपपना कौ धरै है, तातै तत्त्व कहिए । अैसे इनिका सामान्य लक्षण जानना ।

आगै षट्द्रव्यनि के अधिकार कहै है –

> **छद्दव्वेसु य णामं, उवलक्खणुवाय अत्थणे कालो ।**
> **अत्थणखेत्तं संखा, ठाणसरूवं फलं च हवे ।।५६२।।**

> षड्द्रव्येषु च नाम, उपलक्षणानुवादः अस्तित्वकालः ।
> अस्तित्वक्षेत्रं संख्या, स्थानस्वरूपं फल च भवेत् ।।५६२।।

टीका – षट् द्रव्यनि के वर्णन विषै १ नाम, २ उपलक्षणानुवाद, ३ स्थिति, ४. क्षेत्र, ५ संख्या, ६ स्थानस्वरूप, ७ फल ए सात अधिकार जानने ।

---

१ तत्त्वार्थसूत्र अध्याय १, सूत्र २ ।
२ अष्टपाहुड मोक्षपाहुड, गाथा ३८ ।

तहा प्रथम कह्या जो नाम अधिकार, ताहि कहै है —

जीवाजीवं दव्वं, रूवारूवि त्ति होदि पत्तेयं ।
संसारत्था रूवा, कम्मविमुक्का अरूवगया ।।५६३।।

जीवजीवं द्रव्यं, रूप्यरूपीति भवति प्रत्येकम् ।
ससारस्था रूपिणः, कर्मविमुक्ता अरूपगताः ।।५६३।।

टीका – सामान्य सग्रह नय अपेक्षा द्रव्य एक प्रकार है । बहुरि सोई द्रव्य भेद विवक्षा करि दोय प्रकार है । एक जीव द्रव्य, एक अजीवद्रव्य, तहा जीव द्रव्य दोय प्रकार है – एक रूपी, अर एक अरूपी, तहा जे जीव ससार अवस्था विषै तिष्ठै हैं । तिनिके मूर्तीक पुद्गल का सबध पाइए है । तातै तिनकौ रूपी कहिए । बहुरि सिद्ध भगवान पुद्गलीक कर्म करि मुक्त भए है । तातै तिनकौ अरूपी कहिए । बहुरि अजीव द्रव्य भी रूपी, अरूपी के भेद तै दोय प्रकार है ।

सो कहिए हैं —

अज्जीवेसु य रूवी, पुग्गलदव्वाणि धम्म इदरो वि ।
आगासं कालो वि य, चत्तारि अरूविणो होंति ।।५६४।।

अजीवेषु रूपीणि, पुद्गलद्रव्याणि धर्म इतरोऽपि ।
आकाशं कालोऽपि च, चत्वारि अरूपीणि भवंति ।।५६४।।

टीका – अजीव द्रव्यनि विषै पुद्गल द्रव्य तौ रूपी है । स्पर्श, रस, गध, वर्ण गुण संयुक्त मूर्तीक है। बहुरि धर्म द्रव्य, अधर्म द्रव्य, आकाश द्रव्य, काल द्रव्य ए च्यारि अरूपी है । स्पर्श, रस, गध, वर्ण रहित अमूर्तीक है ।

इहाँ उक्त च—

वर्णगधरसस्पर्शैः, पूरणं गलन च यत् ।
कुर्वंति स्कंधवस्तस्मात्पुद्गलाः परमाणवः ।।

अर्थ – पूरण अर गलन कौं जो करै, सो पुद्गल कहिए । युक्त होने का नाम पूरण है, अर बिछुडने का नाम गलन है, जातै वर्ण, गध, रस, स्पर्श गुणनि करि पूरण गलन कौं स्कधवत् करै है । जैसे स्कध विषै कोऊ परमाणू मिलै हैं, कोऊ बिछुरै है । तैसे परमाणू विषै कोऊ वर्णादिक का भेद उत्पन्न हो है, सो मिलै है । कोऊ नष्ट हो है, सो बिछुरै है । तातै परमाणू हैं, ते पुद्गल कहे हैं ।

बहुरि अैसै परमाणूनि कै पुद्गलपना होते द्वयणुक आदि स्कंधनि के कैसें पुद्गलपना है ?

सो कहिए है – कोऊ परमाणू मिलै है, कोऊ बिछुरै है, सो असा प्रदेशनि का पूरण गलन करि करि जे द्रवै है, द्रवैंगे द्रए, तातै तिनकौ पुद्गल कहिए है। अपने स्वभाव रूप परिणमने का नाम द्रवना है, इस द्रवत्व गुण तै द्रव्य नाम पावै है।

इहां प्रश्न – जो परमाणू कौ अविभाग निरश कहिए है, सो परमाणू तौ छह कौण कौ लीएं गोल आकार है, सो जहा छह कोण भए, तहा छह अश सहज ही आए, तौ निरश कैसे कहिए ?

उक्तं च –

षट्कोणयुगपद्योगात्परमाणोः षडंशता ।
षण्णां समानदेशित्वे, पिंडं स्यादणुमात्रकम् ॥१॥

अर्थ –– युगपत् छह कौण का समुदाय है; तातै परमाणू कै छह अशपना सभवै है। छहौ कौ समानरूप कहतै सतै परमाणू मात्र पिंड हो है।

ताकां उत्तर – परमाणू कै द्रव्यार्थिक नय करि निरशपणा है, परतु पर्या-यार्थिक नय करि छह अश कहने मे किछू दोष नाही।

उक्तं च –

आद्यंतरहितं द्रव्यं, विश्लेषरहितांशकम् ।
स्कंधोपादानमत्यक्षं, परमाणु प्रचक्षते ॥१॥

जो द्रव्य आदि अत रहित है। बहुरि जिस विषै छह अश पाइए है। ते कबहू भिन्न भिन्न न हो हैं, तातै भिन्न भाव रहित अश कौ धरै है। बहुरि स्कध ग्रहण की शक्ति का धारक है। बहुरि इद्रिय गम्य नाही है। अैसे द्रव्य कौ परमाणू कहिए है। परमाणू विषै कोणनि की अपेक्षा छह अश है। ते अश कबहू भिन्न भिन्न न होइ। अथवा परमाणू तै छोटा जगत विषै कोऊ और पदार्थ भी नाही है। जिसकी अपेक्षा करि भाग कल्पना कीजिए, तातै परमाणू कौं अविभाग कहिए है। बहुरि कोणनि की अपेक्षा छह अश कहिए, तौ भी किछू दोष नाही। बहुरि आदिपुराणादि विषैं

परमाणू गोल कह्या है, सो यहु षट्कोण को लीए आकार गोल क्षेत्र ही का भेद है, तातै गोल कह्या है । असे अणू वा स्कधरूप पुद्गल द्रव्य तो रूपी अजीव द्रव्य जानना । बहुरि धर्म द्रव्य, अधर्म द्रव्य, आकाश द्रव्य, काल द्रव्य ए चार्यो अरूपी अजीव द्रव्य जानने इति । नामाधिकार ।

उवजोगो वण्णचऊ, लक्खणमिह जीवपोग्गलाणं तु ।
गदिठाणोग्गहवत्तणकिरियुवयारो दु धम्मचऊ ॥५६५॥

उपयोगो वर्णचतुष्कं, लक्षणमिह जीवपुद्गलानां तु ।
गतिस्थानावगाहवर्तनक्रियोपकारस्तु धर्मचतुर्णाम् ॥५६५॥

टीका – द्रव्यनि के लक्षण कहै हैं । तहा जीव अर पुद्गलनि के लक्षण (क्रमश:) उपयोग अर वर्ण चतुष्क जानना । तहा दर्शन-ज्ञान उपयोग जीवनि का लक्षण है । वर्ण, गध, रस, स्पर्श पुद्गलनि का लक्षण है । बहुरि गति, स्थान, अवगाह, वर्तनारूप क्रिया का उपकार ते धर्मादिक च्यारि द्रव्यनि के लक्षण है । तहा गतिहेतुत्व धर्म द्रव्य का लक्षण है । स्थितिहेतुत्व अधर्म द्रव्य का लक्षण है । अवगाहहेतुत्व आकाश द्रव्य का लक्षण है । वर्तनाहेतुत्व काल द्रव्य का लक्षण है ।

गदिठाणोग्गहकिरिया, जीवाणं पुग्गलाणमेव हवे ।
धम्मतिये ण हि किरिया, मुक्खा पुण साधगा होंति ॥५६६॥

गतिस्थानावगाहक्रिया, जीवानां पुद्गलानामेव भवेत् ।
धर्मत्रिके न हि क्रिया, मुख्याः पुनः साधका भवति ॥५६६॥

टीका – गति, स्थिति, अवगाह ए तीन क्रिया जीव अर पुद्गल ही के पाइए है । तहाँ प्रदेश तै प्रदेशातर विषै प्राप्त होना, सो गति क्रिया है । गमन करि कही तिष्ठना, सो स्थिति क्रिया है । गति-स्थिति लीए वास करना, सो अवगाह क्रिया जानना । बहुरि धर्म, अधर्म, आकाश विषै ए क्रिया नाही है, जातै इनके स्थानचलन प्रदेशचलन का अभाव है । तहा अपने स्थान कौ छोडि अन्य स्थान होना, सो स्थानचलन कहिए । प्रदेशनि का चचलरूप होना सो प्रदेशचलन कहिए । बहुरि धर्मादिक द्रव्य गति, स्थिति, अवगाह क्रिया के मुख्य साधक हैं ।

जीव पुद्गलनि के जो गति, स्थिति, अवगाह क्रिया हो है, ताकौ निमित्त मात्र ही हैं, सो कहिए है —

जत्तस्स पहं ठत्तस्स, आसणं णिवसगस्स वसदी वा ।
गदिठाणोग्गहकरणे, धम्मतियं साधगं होदि ।।५६७।।

यातस्य पंथाः तिष्ठतः, आसनं निवसकस्य वसतिर्वा ।
गतिस्थानावगाहकरणे, धर्मत्रयं साधकं भवति ।।५६७।।

टीक – जैसे गमन करनेवालो कौ पथा जो मार्ग, सो कारण है । तिष्ठनेवालौं कौं आसन जो स्थान, सो कारण है । निवास करनेवालो कौ वसतिका जो वसने का क्षेत्र, सो कारण है । तैसे गति, स्थिति, अवगाह के कारण धर्मादिक द्रव्य हैं । जैसे ते पथादिक आप गमनादि नाही करै है, जीवनि कौ प्रेरक होइ गमनादि नाईं करावैं है । स्वयमेव जे गमनादि करै, तिनको कारणभूत हो है । सो कारण इतना ही, जो जहा पथादिक होइ, तहा ही वे गमनादिरूप प्रवर्तै । तैसे धर्मादिक द्रव्य आप गमनादि नाही करै है; पुद्गलनि कौ प्रेरक होइ गमनादिक क्रिया नाही करावै है; स्वयमेव ही गमनादिक क्रियारूप प्रवर्तते जे जीव पुद्गल, तिनकौ सहकारी कारण हो हैं । सो कारण इतना ही जो धर्मादिक द्रव्य जहा होइ, तहा ही गमनादि क्रियारूप जीव पुद्गल प्रवर्ते हैं ।

वत्तणहेदू कालो, वत्तणगुणमविय दव्वणिचयेसु ।
कालाधारेणेव य, वट्टंति हु सव्वदव्वाणि ।।५६८।।

वर्तनाहेतु कालः, वर्तनागुणमवेहि द्रव्यनिचयेषु ।
कालाधारेणैव च, वर्तंते हि सर्वद्रव्याणि ।।५६८।।

टीका – णिच् प्रत्य सयुक्त जो वृतञ् धातु, ताका कर्म विषै वा भाव विषैं वर्तना शब्द निपजै है, सो याका अर्थ यहु जो वर्तै वा वर्तन मात्र होइ, ताकौ वर्तना कहिए । सो धर्मादिक द्रव्य अपने अपने पर्यायनि की निष्पत्ति विषै स्वयमेव वर्तमान हैं । तिनकै बाह्य कोई कारणभूत उपकार बिना सो प्रवृत्ति सभवै नाही, तातै तिनकै, तिस प्रवृत्ति करावने कौ कारण काल द्रव्य है, ऐसे वर्तना काल का उपकार जानना । इहा णिच् प्रत्यय का अर्थ यहु - जो द्रव्यनि का पर्याय वर्ते है, ताका वर्तावनेवाला काल है ।

तहा प्रश्न — जो जैसे शिष्य पढै है, अर उपाध्याय पढावै है। तहा दोऊनिकै पठनक्रिया देखिए है। तैसे धर्मादिक द्रव्य प्रवर्तैं हैं अर काल प्रवर्तावै है, तौ धर्मादिक द्रव्य की ज्यौं काल कै भी तिनि पर्यायनि का प्रवर्तनरूप क्रिया का सद्भाव आया।

तहां उत्तर — जो असैं नाही है। इहा निमित्तमात्र वस्तु कौं हेतु का कर्ता कहिए है। जैसे शीतकाल विषै शीत करि शिष्य पढने कौं समर्थ न भए, तहा कारीषा के अग्नि का निमित्त भया। तब वे पढने लग गए। तहा निमित्त मात्र देखि असा कहिए जो कारीषा की अग्नि शिष्यनि कौं पढावै है, सो कारीषा की अग्नि आप पढनेरूप क्रियावान न हो है। तिनिके पढने कौं निमित्तमात्र है। तैसें काल आप क्रियावान न हो है। काल के निमित्त तैं वे स्वयमेव परिणवै हैं। तातैं असा कहिए है। जो तिनिकौं काल प्रवर्तावै है।

बहुरि तिस काल का निश्चय कैसे होइ ?

सो कहिए हैं - समय, घडी इत्यादिक क्रियाविशेष; तिनिकौ लोक विषै समयादिक कहिए है। बहुरि समय, घडी इत्यादि करि जे पचनादि क्रिया होइ, तिनिकौं लोक विषै पाकादिक कहिए है। तहा तिनि विषै काल असा जो शब्द आरोपण कीजिए है। समय काल, घडी काल, पाक काल इत्यादि कहिए है, सो यहु व्यवहार काल मुख्य काल का अस्तित्व कौं कहै है। जातैं गौण है, सो मुख्य की सापेक्षा कौं धरै है। जैसें किसी पुरुष कौं सिंह कह्या, तौ तहा जानिए है, जो कोई सिंह नामा पदार्थ जगत विषै पाइए है। असैं काल का निश्चय कीजिए है। प्रत्यक्ष केवली जानैं है।

बहुरि षट् द्रव्य की वर्तना कौं कारण मुख्य काल है। वर्तना गुण द्रव्यसमूह विषै ही पाइए है, असैं होतैं काल का आधार करि सर्व द्रव्य प्रवर्तैं हैं। अपने अपने पर्यायरूप परिणमैं है, यातैं परिणमनरूप जो क्रिया, ताको परत्व[1] अर अपरत्व जो आगैं पीछैपना, सो काल का उपकार है।

इहा प्रश्न जो क्रिया का परत्व - अपरत्व तौ जीव पुद्गल विषै है, धर्मादिक अमूर्तीक द्रव्यनि विषै कैसे सभवै ? सो कहै हैं।

---

१. तत्वार्थसूत्र मे-'वर्तनापरिणाम क्रिया परत्वापरत्वे च कालस्य' अ ५ सूत्र २२,।

धम्माधम्मादीणं, अगुरुगलहुगं तु छहिं वि वड्ढीहिं ।
हाणीहिं वि वड्ढंतो, हायंतो वट्टदे जम्हा ॥५६९॥

धर्म्म धर्म्मादीनामगुरुकलघुकं तु षड्भिरपि वृद्धिभिः ।
हानिभिरपि वर्धमानं हीयमानं वर्तते यस्मात् ॥५६९॥

टीका–जातै धर्म अधर्मादिक द्रव्यनि कै अपने द्रव्यत्व कौ कारणभूत शक्ति के विशेष रूप जे अगुरुलघु नामा गुण के अविभाग प्रतिच्छेद, ते अनंत भागवृद्धि आदि षट्स्थान पतित वृद्धि करि तौ बधै है । अर अनतभागहानि आदि षट्स्थान पतित हानि करि घटै है, तातै तहा ऐसै परिणमन विषै भी मुख्य काल ही कौ कारण जानना ।

ण य परिणमदि सयं सो, ण य परिणामेइ अण्णमण्णेहिं ।
विविहपरिणामियाणं, हवदि हु कालो सयं हेदू ॥५७०॥

न च परिणमति स्वयं स, न च परिणमयति अन्यदन्यैः ।
विविधपरिणामिकानां, भवति हि कालः स्वयं हेतुः ॥५७०॥

टीका – सो कालसक्रम जो पलटना, ताका विधान करि अपने गुणनि करि परद्रव्यरूप होइ नाही परिणवै है । बहुरि परद्रव्य के गुणनि कौ अपने विषै नाही परिणमावै है । बहुरि हेतुकर्ता प्रेरक होइकरि भी अन्य द्रव्य कौ अन्य गुणनि करि सहित नाही परिणमावै है । तौ नानाप्रकार परिणमनि कौ धरै जे द्रव्य स्वयमेव परिणमे है, तिनकौ उदासीन सहज निमित्त मात्र हो है । जैसै मनुष्य कै प्रभात सबधी क्रिया कौ प्रभातकाल कारण है । क्रियारूप तौ स्वमेव मनुष्य ही प्रवर्तै है, परन्तु तिनिकौं निमित्त मात्र प्रभात का काल हो है, तैसै जानना ।

कालं अस्सिय दव्वं, सगसगपज्जायपरिणदं होदि ।
पज्जायावट्ठाणं, सुद्धणये होदि खणमेत्तं ॥५७१॥

कालमाश्रित्य द्रव्यं, स्वकस्वकपर्यायपरिणतं भवति ।
पर्यायावस्थानं, शुद्धनयेन भवति क्षणमात्रम् ॥५७१॥

टीका – काल का निमित्तरूप आश्रय पाइ, जीवादिक सर्व द्रव्य स्वकीय स्वकीय पर्यायरूप परिणए है । तिस पर्याय का जो अवस्थान, जो रहने का काल,सो ऋजुसूत्रनय करि अर्थ पर्याय अपेक्षा एक समय मात्र जानना ।

ववहारो य वियप्पो, भेदो तह पज्जश्रो त्ति एयट्ठो ।
ववहार-श्रवट्ठाण-ट्ठिदी हु ववहारकालो दु ॥५७२॥

व्यवहारश्च विकल्पो, भेदस्तथा पर्याय इत्येकार्थः ।
व्यवहारावस्थानस्थितिर्हि व्यवहारकालस्तु ॥५७२॥

टीका — व्यवहार श्रर विकल्प श्रर भेद श्रर पर्याय ए सर्व एकार्थ हैं । इनि शब्दनि का एक श्रर्थ है । तहा व्यंजन पर्याय का श्रवस्थान जो वर्तमानपना, ताकरि स्थिति जो काल का परिमाण, सोई व्यवहार काल है ।

अवरा पज्जायठिदी, खणमेत्तं होदि तं च समश्रो त्ति ।
दोण्हमणूणमदिक्कमकालपमाणं हवे सो दु ॥५७३॥

अवरा पर्यायस्थितिः, क्षणमात्रं भवति सा च समय इति ।
द्वयोरण्वोरतिक्रमकालप्रमाणं भवेत् स तु ॥५७३॥

टीका – द्रव्यनि कै जघन्य पर्यायि की स्थिति क्षण मात्र है । सो क्षण नाम समय का है । समीप तिष्ठती दोय परमाणू मंद गमनरूप परिणई, जेता काल विषै परस्पर उल्लंघन करै, तिस काल प्रमाण का नाम समय है ।

इहा प्रसंग पाइ दोय गाथा कहै है—

णभ एय पयेसत्थो, परमाणू मंदगइपवट्टंतो ।
वीयमणंतरखेत्तं, जावदियं जादि तं समयकालो ॥१॥

आकाश का एक प्रदेश विषै तिष्ठता परमाणू मंदगतिरूप परिणई, सो तिस प्रदेश के अनंतरि दूसरा प्रदेश, ताकौ जेता काल करि प्राप्त होइ, सो समय नामा काल है ।

सो प्रदेश कितना है ? सो कहै है—

जेत्ती वि खेत्तमेत्तं, अणुणा रुद्धं खु गयणदव्व च ।
तं च पदेसं भणियं, अवरावरकारणं जस्स ॥२॥

जिस परमाणू के आगे पीछै कौ कारण अैसा आकाश द्रव्य आकाश विषै अैसा कहिए है, जो यहु आकाश इस परमाणू के आगै है, यहु पीछै है, सो आकाश द्रव्य, तिस परमाणू करि जितना रुकै, व्याप्त होइ, तिस क्षेत्र का नाम प्रदेश कह्या है ।

आगै व्यवहार काल कौ कहै है--

आवलिअसंखसमया, संखेज्जावलिसमूहमुस्सासो ।
सत्तुस्सासा थोवो, सत्तत्थोवा लवो भणियो ॥५७४॥

आवलिरसंख्यसमया, संख्येयावलिसमूह उच्छ्वासः ।
सप्तोच्छ्वासाः स्तोकः, सप्तस्तोका लवो भणितः ॥५७४॥

टीका – जघन्ययुक्तासख्यात प्रमाण समय, तिनिका समूह, सो आवली है । बहुरि सख्यात आवली का समूह सो उश्वास है । सो उश्वास कैसा है ?

उक्त च--

अड्ढस्स अणलसस्स य णिरुवहदस्स य हवेज्ज जीवस्स ।
उस्सासाणिस्सासो, एगो पाणो त्ति आहीदो ॥१॥

जो कोई मनुष्य आढ्य-सुखी होइ, आलस्य रोगादि करि रहित होइ, स्वाधीन होइ, ताका सासोस्वास नामा एक प्राण कह्या है, ताका काल जानना । बहुरि सात उस्वास का समूह, सो स्तोक नामा काल है । बहुरि सात स्तोक का का समूह, सो लव नामा काल है ।

अट्ठत्तीसद्धलवा, नाली बेनालियो मुहुत्तं तु ।
एगसमयेण हीणं, भिण्णमुहुत्तं तदो सेसं ॥५७५॥

अष्टात्रिंशदर्धलवा, नाली द्विनालिको मुहूर्तस्तु ।
एकसमयेन हीनो, भिन्नमुहूर्तस्ततः शेषः ॥५७५॥

टीका — साढा अडतीस लवनि का समूह, सो नाली है । नाली नाम घटिका का है । बहुरि दोय घटिका समूह, सो मुहूर्त है । इस मुहूर्त में एक समय घटाइये तब

भिन्न मुहूर्त हो है वा याकौ उत्कृष्ट अतर्मुहूर्त कहिए । यातै आगै दोय समय घाटि मुहूर्त आदि अतर्मुहूर्त के विशेष जानने । इहा प्रासागिक गाथा कहै है--

ससमयमावलिअवरं, समऊणमुहुत्तयं तु उक्कस्सं ।
मज्झासखवियप्पं, वियाण अंतोमुहुत्तमिणं ।।

एक समय अधिक आवली मात्र जघन्य अतर्मुहूर्त है । बहुरि एक समय घाटि मुहूर्त मात्र उत्कृष्ट अतर्मुहूर्त है । मध्य समय विषै दोय समय सहित आवली तै लगाइ, दोय समय घाटि मुहूर्त पर्यंत असख्यात भेद लीए, मध्य अतर्मुहूर्त है । असै जानहु ।

दिवसो पक्खो मासो, उडु अयणं वस्समेवमादी हु ।
संखेज्जासंखेज्जाणंताओ होदि ववहारो ।।५७६।।

दिवसः पक्षो मासः, ऋतुरयनं वर्षमेवमादिर्हि ।
संख्येयासंख्येयानंता भवंति व्यवहाराः ।।५७६।।

टीका – तीस मुहूर्त मात्र अहोरात्र है । मुख्यपनै पचदश अहोरात्र मात्र पक्ष है । दोय पक्ष मात्र एक मास है । दोय मास मात्र एक ऋतु हो है । तीन ऋतु मात्र एक अयन हो है । दोय अयन मात्र एक वर्ष हो है । इत्यादि आवली तै लगाइ सख्यात, असख्यात, अनत पर्यंत अनुक्रम तै श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, केवलज्ञान का विषय भूत व्यवहार काल जानना ।

ववहारो पुण कालो, माणुसखेत्तम्हि जाणिदव्वो दु ।
जोइसियाणं चारे, ववहारो खलु समाणो त्ति ।।५७७।।

व्यवहारः पुनः कालः, मानुषक्षेत्रे ज्ञातव्यस्तु ।
ज्योतिष्काणां चारे, व्यवहारः खलु समान इति ।।५७७।।

टीका — बहुरि व्यवहार काल मनुष्य क्षेत्र विषै प्रगटरूप जानने योग्य हैं, जातै मनुष्यक्षेत्र विषै ज्योतिषी देवनि का चलने का काल अर व्यवहार काल समान है ।

ववहारो पुण तिविहो, तीदो वट्टंतगो भविस्सो दु ।
तीदो संखेज्जावलिहदसिद्धाणं पमाणो दु ।।५७८।।

व्यवहारः पुनस्त्रिविधोऽतीतो वर्तमानो भविष्यंस्तु ।
अतीतः संख्येयावलिहतसिद्धानां प्रमाणं तु ।।५७८।।

टीका — बहुरि व्यवहार काल तीन प्रकार है अतीत, अनागत, वर्तमान । तहां अतीत काल सिद्ध राशि कौं सख्यात आवली करि गुणै, जो प्रमाण होइ, तितना जानना । कैसै ? सो कहिए है – छह महीना अर आठ समय माही छ सै आठ जीव सिद्ध हो है, तो जीव राशि के अनतवे भाग प्रमाण सर्व सिद्ध केते काल मे भये ? असैं त्रैराशिक करना । तहां प्रमाण राशि छ सै आठ, फलराशि छह महीना आठ समय, इच्छा राशि सिद्धनि का प्रमाण, सो फल राशि कौं इच्छाराशि करि गुणै, प्रमाणराशि का भाग दीए, लब्धराशि सख्यात आवली करि सिद्धनि कौ गुणै जो प्रमाण होइ, तितना आया । सोई अनादि तै लगाइ अतीत काल का परिमाण जानना।

समयो हु वट्टमाणो, जीवादो सव्वपुग्गलादो वि ।
भावी अणंतगुणिदो, इदि ववहारो हवे कालो ।।५७६।।

समयो हि वर्तमानो, जीवात् सर्वपुद्गलादपि ।
भावी अनन्तगुणित, इति व्यवहारो भवेत्कालः ।।५७६।।

टीका — वर्तमान काल एक समय मात्र जानना । बहुरि भावी जो अनागत काल, सो सर्व जोवराशि तै वा सर्व पुद्गलराशि तै भी अनतगुणा जानना । असैं व्यवहार काल तीन प्रकार कह्या ।

कालो वि य ववएसो, सब्भावरूवओ हवदि णिच्चो ।
उप्पण्णप्पद्धंसी, अवरो दीहंतरट्ठाई ।।५८०।।

काल इति च व्यपदेशः, सद्भावप्ररूपको भवति नित्यः ।
उत्पन्नप्रध्वंसी अपरो दीर्घान्तरस्थायी ।।५८०।।

टीका — काल असा जो लोक विषै कहना है, सो मुख्य काल का अस्तित्व का कहनहारा है । मुख्य बिना गौण भी न होइ । जो सिंह पदार्थ ही न होइ तो यहु पुरुष सिंह असा कैसे कहने में आवै सो मुख्य काल द्रव्य करि नित्य है, तथापि पर्याय

करि ऊत्पाद व्यय कौ धरै है । तातै उत्पन्न-प्रध्वसी कहिए है । बहुरि व्यवहार काल है, सो वर्तमान काल अपेक्षा उत्पाद - व्यय रूप है । तातै उत्पन्न-प्रध्वसी है । बहुरि अतीत, अनागत, अपेक्षा बहुत काल स्थिति कौ धरै है । तातै दीर्घांतर स्थायी है । इहा प्रासागिक श्लोक कहिये हैं—

निमित्तमातरं तत्र, योग्यता वस्तुनि स्थिता ।
बहिर्निश्चयकालस्तु, निश्चितं तत्त्वदर्शिभिः ।।

तीहिं वस्तु विषै तिष्ठती परिणमनरूप जो योग्यता, सो अतरग निमित्त है । बहुरि तिस परिणमन का निश्चय काल बाह्य निमित्त है । असैं तत्त्वदर्शीनि करि निश्चय कीया है । इत्युपलक्षणानुवादाधिकार ।

छद्दव्वावट्ठाणं, सरिसं तियकालअत्थपज्जाये ।
वेंजणपज्जाये वा, मिलिदे ताणं ठिदित्तादो ।।५८१।।

षड्द्रव्यावस्थानं, सदृशं त्रिकालार्थपर्याये ।
व्यंजनपर्याये वा, मिलिते तेषां स्थितित्वात् ।।५८१।।

टीका – अवस्थान नाम स्थिति का है; सो षट् द्रव्यनि का अवस्थान समान है । काहे तै ? सो कहिए हैं – सूक्ष्म वचन अगोचर क्षणस्थायी असैं तौ अर्थपर्याय अर स्थूल, वचन गोचर चिरस्थायी अैसे व्यजन पर्याय, सो त्रिकाल सबधी अर्थ पर्याय वा व्यजन पर्याय मिलै, तिनि सर्व ही द्रव्यनि की स्थिति हो है । तातै सर्व द्रव्यनि का अवस्थान समान कह्या । सर्व द्रव्य अनादिनिधन है ।

आगै इस ही अर्थ कौ दृढ करै हैं—

एय-दवियम्मि जे, अत्थ-पज्जया वियण-पज्जया चा वि ।
तीदाणागद-भूदा, तावदियं तं हवदि दव्वं[१] ।।५८२।।

एकद्रव्ये ये, अर्थपर्याया व्यंजनपर्यायाश्चापि ।
अतीतानागतभूताः तावत्तद् भवति द्रव्यम् ।।५८२।।

---

१ षट्खडागम–धवला पुस्तक १, पृष्ठ ३८८ गाथा स० १९९

टीका — एक द्रव्य विषै जे गुणनि के परिणमनरूप षट्स्थानपतित वृद्धि-हानि लीए अर्थ पर्याय, बहुरि द्रव्य के आकारादि परिणमनरूप व्यंजन पर्याय, ते अतीत-अनागत अपि शब्द तै वर्तमान सबधी यावन्मात्र है, तावन्मात्र द्रव्य जानना। जातै द्रव्य तिनतै जुदा है नाही, सर्व पर्यायनि का समूह सोई द्रव्य है। इति स्थित्यधिकार ।

आगासं वज्जित्ता, सव्वे लोगम्मि चेव णत्थि बहिं ।
वावी धम्माधम्मा, णवट्ठिदा अचलिदा णिच्चा ॥५८३॥

आकाशं वर्जयित्वा, सर्वाणि लोके चैव न संति बहिः ।
व्यापिनौ धर्माधर्मौ, अवस्थितावचलितौ नित्यौ ॥५८३॥

टीका — अब क्षेत्र कहै है, सो आकाश बिना अवशेष सर्वद्रव्य लोक विषै ही है, बाह्य अलोक विषै नाही है। तिन विषै धर्म द्रव्य, अधर्मद्रव्य तिल विषै तेल की ज्यो सर्व लोक विषै व्याप्त है; तातै व्यापी कहिए। बहुरि निजस्थान तै स्थानांतर विषै चले नाही है, तातै अवस्थित हैं। बहुरि एक स्थान विषै भी प्रदेशनि का चंचलपना, तिनके नाही है, तातै अचलित है। बहुरि त्रिकाल विषै विनाश नाही है; तातै नित्य है। अैसै धर्म, अधर्म द्रव्य जानने। इहा प्रासगिक श्लोक—

औपश्लेषिकवैषयिकावभिव्यापक इत्यपि ।
आधारस्त्रिविधः प्रोक्तः, कटाकाशतिलेषु च ॥

आधार तीन प्रकार है – औपश्लेषिक, वैषयिक, अभिव्यापक। तहा चटाई विषै कुमार सोवै है, अैसा कहिए, तहा औपश्लेषिक आधार जानना। बहुरि आकाश विषै घटादिक द्रव्य तिष्ठै है, अैसा कहिए, तहा वैषयिक आधार जानना। बहुरि तिल विषै तेल है, अैसा कहिए, तहा अभिव्यापक आधार जानना। सो इहा तिलनि विषै तेल की ज्यो लोकाकाश के सर्व प्रदेशनि विषै धर्म, अधर्म द्रव्य अपने प्रदेशनि करि व्याप्त है। तातै इहा अभिव्यापक आधार है। याही तै आचार्यनै धर्म अधर्म द्रव्य कौ व्यापी कह्या है।

लोगस्स असंखेज्जदिभागप्पहुदिं तु सव्वलोगो त्ति ।
अप्पपदेसविप्पणसंहारे वावडो जीवो ॥५८४॥

लोकस्यासंख्येयभागप्रभृतिस्तु सर्वलोक इति ।
आत्मप्रदेशविसर्पणसंहारे व्यापृतो जीवः ॥५८४॥

टीका – जीव का क्षेत्र कहै हैं, सो शरीरमात्र अपेक्षा तो सूक्ष्म निगोदिया लब्धि अपर्याप्तक की जघन्य अवगाहना तै लगाइ, एक एक प्रदेश वधता उत्कृष्ट महा-मत्स्य की अवगाहना पर्यंत क्षेत्र जानना । वहुरि ताके ऊपरि समुद्घात अपेक्षा वेदना समुद्घातवाले का एक एक प्रदेश क्षेत्र विषै वधता वधता महामत्स्य की अवगाहना तै तिगुणा लबा, चौडा क्षेत्र पर्यंत क्षेत्र जानना । वहुरि ताके ऊपर एक एक प्रदेश वधता बधता मारणातिक समुद्घातवाले का स्वयभू रमण समुद्र का वाह्य स्थडिल क्षेत्र विषै तिष्ठता जो महामत्स्य, सो सप्तमनरक विषै महारौरव नामा श्रेणीवद्ध विला प्रति कीया जो मारणातिक समुद्घात तीहि विषै पाच सै योजन चौडा, अढाई सै योजन ऊचा, प्रथम वक्रगति विषै एक राजू, द्वितीय वक्र विषै आधा राजू, तृतीय वक्र विषै छह राजू, लबाई लीए जो उत्कृष्ट क्षेत्र हो है, तहा पर्यंत क्षेत्र जानना । वहुरि ताकै ऊपरि केवलिसमुद्घात विषै लोकपूरण पर्यंत क्षेत्र जानना । सो ऐसै सर्व भेदरूप क्षेत्र विषै अपने प्रदेशनि का विस्तार - सकोच होतै जीवद्रव्य **व्यापृतं** कहिए व्यापक हो है। सकोच होतै स्तोक क्षेत्र विषै आतमा के प्रदेश अवगाहरूप तिष्ठै है । विस्तार होतै ते फैलिकरि घने क्षेत्र विषै तिष्ठै है । जातै जीव कै अवगाहना का भेद वा उपपाद वा समुद्घात भेद सर्व ही सभवै है । तातै पूर्वोक्त जीव का क्षेत्र जानना ।

पोग्गलदव्वाणं पुण, एयपदेसादि होंति भजणिज्जा ।
एक्केक्को दु पदेसो, कालाणूणं धुदो होदि ॥५८५॥

पुद्गलद्रव्याणा पुनरेकप्रदेशादयो भवन्ति भजनीयाः ।
एकैकस्तु प्रदेशः, कालाणूनां ध्रुवो भवति ॥५८५॥

टीका – पुद्गलद्रव्यनि का एक प्रदेशादिक यथासभव भजनीय कहिए भेद करने योग्य क्षेत्र जानना, सो कहिए हैं – दोय अणू का स्कध एक प्रदेश विषै तिष्ठै वा दोय प्रदेशनि विषै तिष्ठै, बहुरि तीन परमाणूनि का स्कध एक प्रदेश वा दोय प्रदेश वा तीन प्रदेश विषै तिष्ठै, ऐसे जानना । बहुरि कालाणू एक एक लोकाकाश का प्रदेश विषै एक एक पाइए है, सो ध्रुवरूप है, भिन्न भिन्न सत्त्व धरै है, तातै तिनिका क्षेत्र एक एक प्रदेशी है–

संखेज्जासंखेज्जाणंता वा होंति पोग्गलपदेसा ।
लोगागासेव ठिदी, एगपदेसो अणुस्स हवे ।।५८६।।

संख्येयासंख्येयानंता वा भवंति पुद्गलप्रदेशाः ।
लोकाकाशे एव, स्थितिरेकप्रदेशोऽणोर्भवेत् ।।५८६।।

टीका - दोय अणू का स्कध तै लगाइ, पुद्गल स्कध सख्यात, असख्यात, अनत परमाणूरूप है । तथापि ते वे सर्व लोकाकाश ही विषै तिष्ठै है । जैसै सपूर्ण जल करि भर्‍या हूवा पात्र विषै क्रम तै गेरे हुवे लवण, भस्मी, सूई आदि एक क्षेत्रावगाहरूप तिष्ठै हैं; तैसै जानना । बहुरि अविभागी परमाणू का क्षेत्र एक ही प्रदेशमात्र हो है—

लोगागासपदेसा, छद्दव्वेहिं फुडा सदा होंति ।
सव्वमलोगागासं, अण्णेहिं विवज्जियं होदि ।।५८७।।

लोकाकाशप्रदेशाः, षड्द्रव्यैः स्फुटाः सदा भवंति ।
सर्वमलोकाकाशमन्यैर्विवर्जितं भवति ।।५८७।।

टीका – लोकाकाश के प्रदेश सर्व ही षट्द्रव्यनि करि सदाकाल प्रगट व्याप्त हैं । बहुरि अलोकाकाश सर्व ही अन्य द्रव्यनि करि रहित है । इति क्षेत्राधिकारः ।

जीवा अणंतसंखाणंतगुणा पुग्गला हु तत्तो दु ।
धम्मतियं एक्केक्कं, लोगपदेसप्पमा कालो ।।५८८।।

जीवा अनंतसंख्या, अनंतगुणाः पुद्गला हि ततस्तु ।
धर्मत्रिकमेकैकं, लोकप्रदेशप्रमः काल. ।।५८८।।

टीका – सख्या कहै हैं – तहा द्रव्य परिमाण करि जीव द्रव्य अनत हैं । बहुरि तिनि तै अनत गुणे पुद्गल के परमाणू है । बहुरि धर्म द्रव्य, अधर्म द्रव्य, आकाश द्रव्य एक-एक ही है, जातै ए तीनो अखड द्रव्य हैं । बहुरि जेते लोकाकाश के प्रदेश हैं, तितने कालाणू है—

लोगागासपदेसे, एक्केक्के जे ट्ठिया हु एक्केक्का ।
रयणाणं रासी इव, ते कालाणू मुणेयव्वा[1] ।।५८९।।

१–द्रव्यसग्रह गाथा स २२

लोकाकाशप्रदेशे, एकैके ये स्थिता हि एकैकाः ।
रत्नानां राशिरिव, ते कालाणवो मंतव्याः ॥५८९॥

टीका – लोकाकाश का एक-एक प्रदेश विषै जे एक-एक तिष्ठै हैं। जैसैं रत्ननि की राशि भिन्न-भिन्न तिष्ठै, तैसैं जे भिन्न-भिन्न तिष्ठै हैं, ते कालाणू जानने।

ववहारो पुण कालो, पोग्गलदव्वादणंतगुणमेत्तो ।
तत्तो अणंतगुणिदा, आगासपदेसपरिसंखा ॥५६०॥

व्यवहारः पुनः कालः, पुद्गलद्रव्यादनंतगुणमात्रः ।
तत अनंतगुणिता, आकाशप्रदेशपरिसंख्या ॥५९०॥

टीका – बहुरि व्यवहार काल पुद्गल द्रव्य तै अनत गुणा समयरूप जानना। बहुरि तिनि तै अनतगुणी सर्व आकाश के प्रदेशनि की सख्या जाननी।

लोगागासपदेसा, धम्माधम्मेगजीवगपदेसा ।
सरिसा हु पदेसो पुण, परमाणु-अवट्ठिदं खेत्तं ॥५६१॥

लोकाकाशप्रदेशा, धर्माधर्मैकजीवगप्रदेशाः ।
सदृशा हि प्रदेशः, पुनः परमाण्ववस्थितं क्षेत्रम् ॥५११॥

टीका – लोकाकाश के प्रदेश अर धर्मद्रव्य के प्रदेश अर अधर्मद्रव्य के प्रदेश अर एक जीवद्रव्य के प्रदेश सर्व सख्याकरि समान है, जातै ए सर्व जगच्छ्रेणी का घनप्रमाण हैं। बहुरि पुद्गल परमाणू जेता क्षेत्र कौं रोकै, सो प्रदेश का प्रमाण है, तातै जघन्य क्षेत्र अर जघन्य द्रव्य अविभागी है।

आगै क्षेत्र प्रमाण करि छह द्रव्यनि का प्रमाण कीजिए है। तहा जीव द्रव्य अनंतलोक प्रमाण है। लोकाकाश के प्रदेशनि तै अनत गुणा है। कैसै ? सो त्रैराशिक करि कहिए है–प्रमाण राशि लोक, अर फलराशि एक शलाका, अर इच्छाराशि जीवद्रव्य का प्रमाण। सो फल करि इच्छा कौ गुणै, प्रमाण का भाग दीए, लब्ध-राशि जीवराशि कौ लोक का भाग दीजिए, इतना आया, सो यहु शलाका का परिमाण भया। बहुरि प्रमाण राशि एक शलाका, फलराशि लोक, अर इच्छाराशि पूर्वोक्त शलाका का प्रमाण, सो पूर्वोक्त शलाका का प्रमाण जीवराशि कौं लोक का भाग दीए, अनत पाए, सो जानना। इस अनत कौ फलराशि लोक करि गुणिए

अर प्रमाण राशि एक का भाग दीजिए, तब लब्धराशि अनतलोक प्रमाण भया; तातें जीव द्रव्य अनतलोक प्रमाण कहे । असें ही अन्यत्र काल प्रमाणादिक विषै त्रैराशिक करि साधन करि लेना । बहुरि जीवनि तें पुद्गल अनत गुणे है । बहुरि धर्म, अधर्म, लोकाकाश अर काल द्रव्य ए लोकमात्र प्रदेशनि कौं धरैं है । बहुरि व्यवहार काल पुद्गल द्रव्य तें अनत गुणा है । बहुरि अलोकाकाश का प्रदेश काल तें अनत गुणा है ।

बहुरि काल प्रमाण करि जीवद्रव्य का प्रमाण कहिए हैं – प्रमाणराशि अतीतकाल, फलराशि एक शलाका, इच्छाराशि जीवनि का परिमाण, इहा लब्धराशिप्रमाण शलाका अनत भई । बहुरि प्रमाणराशि एक शलाका, फलराशि अतीतकाल, इच्छाराशि पूर्वोक्त शलाका प्रमाण, सो पूर्वोक्त प्रकार फल करि इच्छा कौं गुणैं, प्रमाण का भाग दीएं, लब्धराशि प्रमाण अतीत काल तैं अनत गुणा जीवनि का प्रमाण जानना । इनि तें पुद्गल द्रव्य अर व्यवहार काल के समय अर अलोकाकाश के प्रदेश अनत गुणे अनत गुणे क्रम तें अनंत अतीत काल मात्र जानने ।

बहुरि धर्मादिक का प्रमाण कहिए है - प्रमाण कल्पकाल, फल एक शलाका, इच्छा लोक प्रमाण, तहा लब्धप्रमाण शलाका असंख्यात भई । बहुरि प्रमाण एक शलाका, फल कल्पकाल, इच्छा पूर्वोक्त शलाका प्रमाण, सो यथोक्त करता लब्धराशि असख्यात कल्पप्रमाण, धर्म, अधर्म, लोकाकाश, काल ए च्यार्‍यौ जानने । बीस कोडाकोडी सागर के सख्याते पल्य भए, तीहि प्रमाण कल्पकाल है । इसतैं असंख्यात गुणे धर्म, अधर्म, लोकाकाश, काल के प्रदेश हैं ।

बहुरि भाव प्रमाण करि जीवद्रव्य का प्रमाण विषै प्रमाणराशि जीवद्रव्य का प्रमाण, फल एक शलाका, इच्छा केवलज्ञान लब्धप्रमाण शलाका अनत, बहुरि प्रमाण राशि शलाका का प्रमाण फलराशि केवलज्ञान, इच्छाराशि एक शलाका, सो यथोक्त करता लब्धराशि प्रमाण केवलज्ञान के अनतवे भागमात्र जीवद्रव्य जानने । ते पुद्गल, काल, अलोकाकाश की अपेक्षा च्यारि बार अनत का भाग केवलज्ञान के अविभाग प्रतिच्छेदनि का प्रमाण कौ दीए, जो प्रमाण आवै, तितने जीवद्रव्य हैं । तिनि तें अनत गुणे पुद्गल हैं । तिनि तैं अनत गुणे काल के समय हैं । तिनि तैं अनत गुणे अलोकाकाश के प्रदेश है । तेऊ केवलज्ञान के अनंतवे भाग ही हैं । बहुरि धर्मादिक का प्रमाण विषै प्रमाण लोक, फल एक शलाका, इच्छा अवधिज्ञान के भेद,

लब्धप्रमाण शलाका असख्यात भई । बहुरि प्रमाणराशि शलाका का प्रमाण, फल राशि अवधिज्ञान के भेद, इच्छाराशि एक शलाका, सो यथोक्त करता अवधिज्ञान के जेते भेद हैं, तिनि के असख्यातवें भाग प्रमाण धर्म, अधर्म, लोकाकाश, काल इनि च्यार्‌यो के एक-एक प्रदेशनि का प्रमाण भया । इति सख्याधिकार ।

सव्वमरूवी दव्वं, अवट्ठिदं अचलिआ पदेसा वि ।
रूवी जीवा चलिया, ति-वियप्पा होंति हु पदेसा ॥५६२॥

सर्वमरूपि द्रव्यमवस्थितमचलिताः प्रदेशा अपि ।
रूपिणो जीवाश्चलितास्त्रिविकल्पा भवंति हि प्रदेशाः ॥५६२॥

टीका – सर्व अरूपी द्रव्य जो मुक्त जीव अर धर्म अर अधर्म अर आकाश अर काल सो अवस्थित है, अपने स्थान तै चलते नाही । बहुरि इनिके प्रदेश भी अचलित ही हैं, एक स्थान विषै भी चलित नाही हैं । बहुरि रूपी जीव, जे ससारी जीव ते चलित है, स्थान तै स्थानातर विषै गमनादि करै हैं । बहुरि ससारी जीवनि के प्रदेश तीन प्रकार है । विग्रह गति विषै सो सर्व चलित ही हैं । बहुरि अयोग-केवली गुणस्थान विषै अचलित ही है । बहुरि अविशेष जीव रहे, तिनिके आठ प्रदेश तौ अचलित है । अरशेष प्रदेश चलित है । (योगरूप परिणमत तै)[1] इस आत्मा के अन्य प्रदेश तौ चलित हो है अर आठ प्रदेश अकप ही रहै है ।

पोग्गल-दव्वम्हि अणू, संखेज्जादी हवंति चलिदा हु ।
चरिम-महक्खंधम्मि य, चलाचला होंति पदेसा ॥५६३॥

पुद्गलद्रव्ये अणवः, संख्यातादयो भवन्ति चलिता हि ।
चरममहास्कन्धे च, चलाचला भवंति हि प्रदेशाः ॥५९३॥

टीका – पुद्गल द्रव्य विषै परमाणू अर द्वचणुक आदि सख्यात, असख्यात, अनत परमाणू के स्कध, ते चलित हैं । बहुरि अत का महास्कध विषै केई परमाणू अचलित है, अपने स्थान तै त्रिकाल विषै स्थानातर कौ प्राप्त न होइ । बहुरि केई परमाणू चलित हैं, ते यथायोग्य चचल हो है ।

---

१ ब, घ प्रति मे 'योगरूप परिणमन तैं' इतना ज्यादा है ।

अणुसंखासंखेज्जाणंता य अगेज्जगेहि अंतरिया ।
आहार-तेज-भासा-मण-कम्मइया धुवक्खंधा ॥५९४॥

सांतरणिरंतरेण य, सुण्णा पत्तेयदेहधुवसुण्णा ।
बादरणिगोदसुण्णा, सुहुमणिगोदा णभो महक्खंधा ॥५९५॥ जुम्मं ।

अणुसंख्यातासंख्यातानन्ताश्च अग्राह्यकाभिरन्तरिताः ।
आहारतेजोभाषामनःकार्मण ध्रुवस्कन्धाः ॥५९४॥

सान्तरनिरन्तरया च, शुन्या प्रत्येकदेह-ध्रुवशून्याः ।
बादरनिगोदशून्याः, सूक्ष्मनिगोदा नभो महास्कन्धाः ॥५९५॥ युग्मम्

टीका — पुद्गल द्रव्य के भेदरूप जे वर्गणा, ते तेईस भेद लीए है – १ अणुवर्गणा, २ सख्याताणुवर्गणा, ३ असख्याताणुवर्गणा, ४ अनताणुवर्गणा, ५ आहारवर्गणा, ६ अग्राह्यवर्गणा, ७ तैजस शरीरवर्गणा, ८ अग्राह्यवर्गणा, ९ भाषावर्गणा, १० अग्राह्य वर्गणा, ११ मनोवर्गणा, १२ अग्राह्य वर्गणा, १३ कार्माण वर्गणा, १४ ध्रुव वर्गणा, १५ सातरनिरंतर वर्गणा, १६ शून्य वर्गणा, १७ प्रत्येक शरीरवर्गणा, १८ ध्रुवशून्य वर्गणा, १९ बादरनिगोद वर्गणा, २० शून्यवर्गणा, २१ सूक्ष्मनिगोद वर्गणा, २२ नभो वर्गणा, २३ महास्कधवर्गणा ए तेईस भेद जानने ।

इहा प्रासगिक श्लोक कहिये है–

मूर्तिमत्सु पदार्थेषु, संसारिण्यपि पुद्गलः ।
अकर्मकर्मनोकर्मजातिभेदेषु वर्गणा ॥१॥

मूर्तीक पदार्थनि विषै अर ससारी जीव विषै पुद्गल शब्द प्रवर्तै है । बहुरि अकर्म जाति के कर्मजाति के नोकर्म जाति के जे पुद्गल, तिनि विषै वर्गणा शब्द प्रवर्तै है । सो अब इहा तेईस जाति की वर्गणानि विषै केते केते परमाणू पाइये ? सो प्रमाण कहिये है–

तहा अणुवर्गणा तौ एक एक परमाणू रूप है । इस विषै जघन्य, उत्कृष्ट, मध्य भेद भी नाही है ।

बहुरि अन्य बाईस वर्गणानि विषै भेद हैं। तहा जघन्य अर उत्कृष्ट भेद, सो कहिये है – जघन्य के ऊपरि एक एक परमाणू उत्कृष्ट का नीचा पर्यंत वधावने तै जेते भेद होहिं, तितने मध्य के भेद जाननें।

बहुरि सख्याताणुवर्गणा विषै जघन्य दोय अणूनि का स्कध है। अर उत्कृष्ट उत्कृष्ट सख्यातें अणूनि का स्कध है।

बहुरि असंख्याताणुवर्गणा विषै[1] जघन्य परीतासख्यात परमाणूनि का स्कध है, उत्कृष्ट उत्कृष्ट असख्यातासख्यात परमाणूनि का स्कध है। इहां विवक्षित वर्गणा ल्यावने के निमित्त गुणकार का ज्ञान करना होइ तौ विवक्षित वर्गणा कौं ताके नीचे की वर्गणा का भाग दीए, जो प्रमाण आवै, सोई गुणकार का प्रमाण जानना। तिस गुणकार करि नीचे की वर्गणा कौं गुणें, विवक्षित वर्गणा हो है। जैसें विवक्षित तीन अणू का स्कध अर नीचे दोय परमाणू का स्कध, तहा तीन कौ दोय का भाग दीए ड्योढ पाया, सोई गुणकार है। दोय कौं ड्योढ करि गुणिए, तब तीन होइ, असें सर्वत्र जानना। बहुरि इहा सख्याताणु, असख्याताणु वर्गणा विषै जघन्य का भाग उत्कृष्ट कौं दीए, जो प्रमाण आवै, सोई जघन्य का गुणकार जानना। इस गुणकार करि जघन्य कौ गुणें, उत्कृष्ट भेद हो है।

बहुरि ताके ऊपरि अनताणुवर्गणा विषै उत्कृष्ट असख्याताणु वर्गणा तै एक परमाणू अधिक भये जघन्य भेद हो है। अर जघन्य कौ सिद्ध राशि का अनतवा भाग मात्र जो अनत, ताकरि गुणें, उत्कृष्ट भेद हो है।

बहुरि ताके ऊपरि आहार वर्गणा विषै उत्कृष्ट अनताणुवर्गणा तै एक परमाणू अधिक भए जघन्य भेद हो है। बहुरि इस जघन्य कौं सिद्धराशि का अनतवा भाग मात्र जो अनत, ताका भाग दीये, जो प्रमाण आवै, तितने जघन्य तै अधिक भये उत्कृष्ट भेद हो है।

बहुरि ताके ऊपरि अग्राह्यवर्गणा है। तीहिं विषै उत्कृष्ट आहारवर्गणा तै एक परमाणू अधिक भए, जघन्य भेद हो है। बहुरि जघन्य भेद कौ सिद्धराशि का अनतवा भागमात्र जो अनत करि गुणें उत्कृष्ट भेद हो है।

---

१ घ प्रति मे यहा 'जघन्य' शब्द अधिक मिलता है।

बहुरि ताके ऊपरि तैजसशरीरवर्गणा है । तहिं विषै उत्कृष्ट अग्राह्य वर्गणा तै एक परमाणू अधिक भए, जघन्य भेद हो है । इस जघन्य भेद कौ सिद्धराशि का अनंतवा भाग मात्र अनत का भाग दीए, जो प्रमाण आवै, तितने जघन्य तै अधिक भए उत्कृष्ट भेद हो है ।

बहुरि ताके ऊपरि अग्राह्य वर्गणा है; तीहिं विषै उत्कृष्ट तैजस वर्गणा तै एक परमाणू अधिक भए जघन्य भेद हो है । इस जघन्य कौं सिद्धराशि का अनतवा भागमात्र अनत करि गुणै उत्कृष्ट भेद हो है ।

बहुरि ताके ऊपरि भाषा वर्गणा है; तीहिं विषै उत्कृष्ट अग्राह्यवर्गणा तै एक परमाणू अधिक भए जघन्य भेद हो है । इस जघन्य कौ सिद्धराशि का अनतवा भाग-मात्र अनत का भाग दीए, जो प्रमाण आवै, तितनै जघन्य तै अधिक भए उत्कृष्ट भेद हो है ।

बहुरि ताके ऊपरि अग्राह्य वर्गणा है । तीहिं विषै उत्कृष्ट भाषावर्गणा तै एक परमाणू अधिक भये जघन्यभेद हो है । इस जघन्य कौ सिद्धराशि का अनतवा भाग-मात्र अनत करि गुणै उत्कृष्ट भेद हो है ।

बहुरि ताके ऊपरि मनोवर्गणा है, तीहिं विषै उत्कृष्ट अग्राह्य वर्गणा तै एक परमाणू अधिक भए जघन्य भेद हो है । इस जघन्य कौ सिद्धराशि का अनतवा भागमात्र अनत का भाग दीए, जो प्रमाण आवै, तितने जघन्य तै अधिक भए उत्कृष्ट भेद हो है ।

बहुरि ताके ऊपरि अग्राह्य वर्गणा है । तीहिं विषै उत्कृष्ट मनोवर्गणा तै एक परमाणू अधिक भए जघन्य भेद हो है । इस जघन्य कौ सिद्धराशि का अनतवा भाग प्रमाण अनत करि गुणै, उत्कृष्ट भेद हो है ।

बहुरि ताके ऊपरि कार्माणवर्गणा है; तीहिं विषै उत्कृष्ट अग्राह्य वर्गणा तै एक परमाणु अधिक भए जघन्य भेद हो है । इस जघन्य कौ सिद्धराशि का अनतवां भागमात्र अनत का भाग दीए, जो प्रमाण आवै, तितने जघन्य तै अधिक भए उत्कृष्ट भेद हो है ।

बहुरि ताके ऊपरि ध्रुववर्गणा है, तहा उत्कृष्ट कार्माण वगर्णा तै एक पर-माणू अधिक भएं जघन्य भेद हो है । इस जघन्य कौ अनतगुणा जीव राशिमात्र अनत करि गुणै, उत्कृष्ट भेद हो है ।

बहुरि ताके ऊपरि सांतर निरंतर वर्गणा है, तहा उत्कृष्ट ध्रुववर्गणा तै एक परमाणू अधिक भए जघन्य भेद हो है। इस जघन्य कौ अनतगुणा जीवराशि का प्रमाण करि गुणे, उत्कृष्ट भेद हो है।

ऐसे जो ए अणुवर्गणा तै लगाइ पद्रह वर्गणा कही, ते सदृश परिमाण कौं लीए, एक एक वर्गणा लोक विषै अनत पुद्गल राशि का वर्गमूल प्रमाण पाइए है। परि किछू घाटि घाटि क्रम तै पाइए है। तहा प्रतिभागहार सिद्ध अनतवा भागमात्र है। सो इस कथन कौ विशेष करि आगे कहिएगा।

बहुरि ताके ऊपरि शून्यवर्गणा है, तहा उत्कृष्ट सातर निरन्तर वर्गणा तै एक एक परमाणू अधिक भए जघन्य भेद हो है। इस जघन्य कौ अनतगुणा जीवराशि का प्रमाण करि गुणे, उत्कृष्ट भेद हो है। ऐसे सोलह वर्गणा सिद्ध भई।

बहुरि ताके ऊपरि प्रत्येक शरीर वर्गणा है, सो एक शरीर एक जीव का होइ, ताकौ प्रत्येक शरीर कहिए। तहा जो विस्रसोपचय सहित कर्म वा नोकर्म, तिनिका एक स्कध ताकौं प्रत्येक शरीर वर्गणा कहिये। तहा शून्यवर्गणा का उत्कृष्ट तै एक परमाणू करि अधिक जघन्य भेद हो है, सो यहु जघन्य भेद कहा पाइये है ? सो कहिए है—

जाका कर्म के अश-क्षयरूप भए है, ऐसा कोई क्षपितकर्मांश-जीव, सो कोटि पूर्व वर्ष प्रमाण आयु का धारी मनुष्य होइ, अतर्मुहूर्त अधिक आठ वर्ष के ऊपरि सम्यक्त्व अर सयम दोऊ एक काल अगीकार करि सयोग केवली भया, सो किछू घाटि कोटि पूर्व पर्यंत औदारिक शरीर अर तैजस शरीर की तो जो प्रकार कह्या है, तैसे निर्जरा करत सता अर कार्माण शरीर की गुण श्रेणी निर्जरा करत सता, अयोगकेवली का अत समय कौ प्राप्त भया, ताकै आयु कर्म, औदारिक, तैजस शरीर-अधिक नाम, गोत्र, वेदनीय कर्म के परिमाणूनि का समूह रूप जो औदारिक, तैजस, कार्माण, इनि तीनि शरीरनि का स्कध, सो जघन्य प्रत्येक शरीर वर्गणा है। बहुरि इस जघन्य कौं पल्य का असख्यातवा भागकरि गुणे, उत्कृष्ट प्रत्येक शरीर वर्गणा हो है। सो कहा पाइए ? सो कहिए है—

नदीश्वर नामा द्वीप विषै अकृत्रिम चैत्यालय है। तहा धूप के घडे हैं। तिनि विषै वा स्वयभूरमण द्वीप विषै उपजे दावानल, तिनि विषै जे बादर- पर्याप्त अग्नि-

काय के जीव है, तहा असंख्यात आवली का वर्ग प्रमाण जीवनि के शरीरनि का एक स्कध है। तहा गुणितकर्मांश कहिए, जिनके कर्म का संचय बहुत है, असे जीव बहुत भी होइ तौ आवली का असख्यातवां भागमात्र होइ, तिनिका विस्रसोपचय सहित औदारिक, तैजस, कार्माण इनि तीनि शरीरनि का जो एक स्कध, सो उत्कृष्ट प्रत्येक शरीर वर्गणा है। बहुरि ताके ऊपरि ध्रुव शून्य वर्गणा है। तहा उत्कृष्ट प्रत्येक शरीर वर्गणा तै एक परमाणू अधिक भए जघन्य भेद हो है। इस जघन्य कौ सब मिथ्यादृष्टी जीवनि का जो प्रमाण, ताकौ असख्यात लोक का भाग दीए, जो प्रमाण आवै, तीहि करि गुणै, उत्कृष्ट भेद हो है। बहुरि ताके ऊपरि बादर निगोद वर्गणा है, सो बादर निगोदिया जीवनि का विस्रसोपचय सहित कर्म नोकर्म परिमाणूनि का जो एक स्कध, ताकौं बादर निगोद वर्गणा कहिए है। सो ध्रुवशून्य वर्गणा तै एक परमाणू अधिक जघन्य बादरनिगोदवर्गणा है। सो कहा पाइए है ? सो कहै है—

क्षय कीए है कर्म अंश जानै, असा कोई क्षपितकर्मांश जीव, सो कोडि पूर्व वर्ष प्रमाण आयु का धारी मनुष्य होइ, गर्भ तै अतर्मुहूर्त अधिक आठ वर्ष के ऊपरि सम्यक्त्व अर संयम कौं युगपत अगीकार करि, किछू घाटि कोडि पूर्ववर्ष पर्यंत कर्मनि की गुणश्रेणी निर्जराकौ करत संता जब अतर्मुहूर्त सिद्धपद पावने का रह्या, तब क्षपक श्रेणी चढि उत्कृष्ट कर्मनिर्जरा कौ करत सता क्षीणकषाय गुणस्थानवर्ती भया, तिसके शरीर विषै जघन्य वा उत्कृष्ट आवली का असख्यातवा भाग प्रमाण पुलवी एक बधनरूप बधे पाइए है, जातै सर्व स्कंधनि विषै पुलवी असख्यात लोक प्रमाण कहे है। बहुरि एक एक पुलवी विषै असंख्यात लोक प्रमाण शरीर पाइए है। बहुरि एक एक शरीर विषै सिद्धनि तै अनंतगुणे ससारी राशि के असख्यातवे भागमात्र जीव पाइए है। सो आवली का असख्यातवा भाग कौ असंख्यात लोक करि गुणै, तहा शरीरनि का प्रमाण भया। ताकौ एक शरीर विषै निगोद जीवनि का जो प्रमाण, ताकरि गुणै, जो प्रमाण भया, तितना तहा एक स्कध विषै बादर निगोद जीवनि का प्रमाण जानना। तिनि जीवनि कै क्षीणकषाय गुणस्थान का पहिला समय विषै अनन्त जीव स्वयमेव अपना आयु का नाश तै मरै है। बहुरि दूसरे समय जेते पहिले समय मरे, तिनिकौ आवली का असख्यातवा भाग का भाग दीए, जो प्रमाण आवै, तितने पहिले समय मरे जीवनि तै अधिक मरै है। इस ही अनुक्रम तै क्षीणकषाय का प्रथम समय तै लगाइ, पृथक्त्व आवली का प्रमाण काल पर्यंत मरै है। पीछे पूर्व पूर्व समय संबधी मरे जीवनि के प्रमाण कौ आवली का संख्यातवां भाग का भाग दीएं, जो प्रमाण होइ

तितने तितने पहिले पहिले समय तै अधिक समय समय तै मरै है । सो क्षीणकपाय गुणस्थान का काल आवली का असख्यातवा भाग प्रमाण अवशेष रहे तहा ताई इस ही अनुक्रम तै मरै है । ताके अनन्तर समय विषे पल्य का असख्यातवा भाग करि पहिले पहिले समय सबधी जीवनि कौ गुणै, जितने होहि तितने तितने मरै हैं । तहा पीछे सख्यात पल्य करि पूर्व पूर्व समय सम्बन्धी मरे जीवनि कौं गुणै, जो जो प्रमाण होइ, तितने तितने मरै है । सो असै क्षीणकपाय गुणस्थान का अत समय पर्यंत जानना। तहा अत के समय विषै जे जुदे जुदे असख्यात लोक प्रमाण शरीरनि करि सयुक्त असे आवली का असख्यातवा भाग प्रमाण पुलवी, तिनिविषै जे गुणितकर्मांश जीव मरे, तिनकरि हीन अवशेष जे अनतानन्त जीव गुणित कर्मांश रहे। तिनिका विस्रसोपचय-सहित औदारिक, तैजस, कार्माण तीन शरीरनि के परमाणूनि का जो एक स्कध,सोई जघन्य बादर निगोद वर्गणा है । बहुरि इस जघन्य कौ जगच्छ्रेणी का असख्यातवा भाग करि गुणै, उत्कृष्ट बादर निगोद वर्गणा हो है । सो कैसे पाइए ? सो कहिए है—

स्वयभूरमण नामा द्वीप विषै जे मूला ने आदि देकरि सप्रतिष्ठित प्रत्येक वन-स्पती है, तिनके शरीरनि विषै एक बधन विषै बधे जगच्छ्रेणी का असख्यातवा भाग-मात्र पुलवी है । तिनि विषै तिष्ठते जे गुणितकर्मांश जीव अनतानत पाइये हैं । तिनिका विस्रसोपचयसहित औदारिक, तैजस, कार्माण तीन शरीरनि के परमाणूनि का एक स्कध, सोई उत्कृष्ट बादर निगोद वर्गणा है । बहुरि ताके ऊपरि तृतीय शून्य-वर्गणा है । तहा उत्कृष्ट बादरनिगोदवर्गणा तै एक प्रदेश अधिक भए, जघन्य भेद हो है । इस जघन्य कौ सूच्यगुल का असख्यातवा भाग करि गुणै, उत्कृष्ट भेद हो है। बहुरि ताके ऊपरि सूक्ष्मनिगोद वर्गणा है, सो सूक्ष्मनिगोदिया जीवनि का विस्रसोपचय सहित कर्म नोकर्म परमाणूनि का एक स्कधरूप जानना । तहा उत्कृष्ट शून्यवर्गणातै एक परमाणू अधिक भए जघन्य भेद हो है। सो जघन्य भेद कैसे पाइए है ? सो कहिए है —

जल विषै वा स्थल विषै वा आकाश विषै जहा तहा एक बधन विषै बधे, असे जे आवली का असख्यातवा भाग प्रमाण पुलवी, तिनिविषै क्षपितकर्मांश अनतानन्त सूक्ष्म निगोदिया जीव हैं । तिनिका विस्रसोपचय सहित औदारिक, तैजस, कार्माण तीन शरीरनि का परमाणूनि का जो एक स्कध, सोई जघन्य सूक्ष्मनिगोद वर्गणा है ।

इहां प्रश्न – जो बादरनिगोद उत्कृष्ट वर्गणा विषै पुलवी श्रेणी के असख्या-तवे भाग प्रमाण कहे अर जघन्य सूक्ष्मनिगोद वर्गणा विषै पुलवी आवली का अस-

ख्यातवा भाग प्रमाण कहे, ताते बादरनिगोद वर्गणा के पहिलें याकौ कहना युक्त था। जाते पुलवीनि का बहुत प्रमाण ते परमाणूनि का भी बहुत प्रमाण सभवै है ?

ताका समाधान – जो यद्यपि पुलवी इहा घाटि कहे है; तथापि बादरनिगोद वर्गणा सम्बन्धी निगोद शरीरनि ते सूक्ष्मनिगोद वर्गणा सबन्धी शरीरनि का प्रमाण सूच्यगुल का असख्यातवा भाग गुणा है। ताते तहा जीव भी बहुत है। तिनि जीवनि के तीन शरीर सबधी परमाणू भी बहुत है। ताते बादरनिगोद वर्गणा के पीछे सूक्ष्म निगोद वर्गणा कही है। बहुरि जघन्य सूक्ष्मनिगोद वर्गणा कौ पल्य का असख्यातवा भाग करि गुणै, उत्कृष्ट सूक्ष्मनिगोद वर्गणा हो है, सो कैसे पाइये है ? सो कहिए है-

यहां महामत्स्य का शरीर विषै एक स्कधरूप आवली का असख्यातवा भाग प्रमाण पुलवी पाइये है। तहा गुणितकर्मांश अनतानंत जीवनि का विस्रसोपचय सहित औदारिक, तैजस, कार्माण तीन शरीरनि के परमाणूनि का एक स्कंध, सोई उत्कृष्ट सूक्ष्मनिगोद वर्गणा हो है।

बहुरि ताके ऊपरि नभोवर्गणा है। तहा उत्कृष्ट सूक्ष्मनिगोदवर्गणा ते एक अधिक भए जघन्य भेद हो है। इस जघन्य भेद कौं जगत्प्रतर का असख्यातवा भाग करि गुणे, उत्कृष्ट भेद हो है। बहुरि ताके ऊपरि महास्कध है। तहा उत्कृष्ट नभोवर्गणा ते एक परमाणू अधिक भए, जघन्यभेद हो है। बहुरि इस जघन्य कौ पल्य का असख्यातवा भाग का भाग दीए, जो प्रमाण आवै, ताकौ जघन्य विषै मिलाये, उत्कृष्ट महास्कध के परमाणूनि का प्रमाण हो है। अैसे एक पक्ति करि तेईस वर्गणा कही।

आगे जो अर्थ कह्या, तिस ही कौ सकोचन करि तिन वर्गणानि ही का उत्कृष्ट, जघन्य, मध्य भेदनि कौ वा अल्प–बहुत्व कौ छह गाथानि करि कहैं है—

परमाणुवग्गणम्मि ण, अवरुक्कस्सं च सेसगे अत्थि।
गेज्झमहक्खंधाणं, वरमहियं सेसगं गुणियं ॥५९६॥

परमाणुवर्गणायां न, अवरोत्कृष्टं च शेषके अस्ति।
ग्राह्यमहास्कंधानां, वरमधिकं शेषकं गुणितम् ॥५९६॥

टीका – परमाणु वर्गणा विषै जघन्य उत्कृष्ट भेद नाही है; जाते अणू अभेद है। बहुरि अवशेष बाईस वर्गणानि विषै जघन्य उत्कृष्ट भेद पाइए है। तहां ग्राह्य

कहिए जीव के ग्रहण करने के योग्य अैसी जे आहार, तैजस, भाषा, मन , कार्माण-वर्गणा । इहा आहार वर्गणा तै आहार, शरीर, इन्द्री, सासोस्वास ए च्यारि पर्याप्ति हो हैं । तैजस वर्गणा तै तैजस शरीर हो है । भापा वर्गणा तै वचन हो है । मनो वर्गणा तै मन निपजै है । कार्माण वर्गणा तै ज्ञानावरणादिक कर्म हो है । तातै इनि पच वर्गणानि कौ ग्राह्य वर्गणा कही है । अर एक महास्कंध, इनि छहौ वर्गणानि का उत्कृष्ट तौ अपने-अपने जघन्य तै किछू अधिक प्रमाण लीए है । अर अवशेष सोलह वर्गणानि का उत्कृष्ट भेद अपने-अपने जघन्य कौं गुणाकार करि गुणिए, तब हो है ।

सिद्धाणंतिमभागो, पडिभागो गेज्झगाण जेट्ठट्ठं ।
पल्लासंखेज्जदिमं, अंतिमखंधस्स जेट्ठट्ठं ।।५९७।।

सिद्धानंतिमभागः, प्रतिभागो ग्राह्याणां ज्येष्ठार्थम् ।
पल्यासंख्येयमंतिमस्कंधस्य ज्येष्ठार्थम् ।।५९७।।

टीका – ग्राह्य पच वर्गणा, तिनिका उत्कृष्ट के निमित्त सिद्धराशि का अनतवा भागमात्र प्रतिभाग है । अपने-अपने जघन्य कौ सिद्धराशि का अनतवा भाग दीए, जो प्रमाण होइ, तितने जघन्य विषै मिलाए, अपना-अपना उत्कृष्ट भेद हो है। बहुरि अत का महास्कध का उत्कृष्ट का निमित्त पल्य का असख्यातवा भागमात्र प्रतिभाग है । महास्कध के जघन्य कौ पल्य का असख्यातवा भाग का भाग दीए, जो प्रमाण होइ, तितना जघन्य विषै मिले, उत्कृष्ट महास्कध हो है ।

संखेज्जासंखेज्जे, गुणगारो सो दु होदि हु अणंते ।
चत्तारि अगेज्जेसु वि, सिद्धाणमणंतिमो भागो ।।५९८।।

संख्यातासंख्यातायां गुणकारः स तु भवति हि अनंतायाम् ।
चतसृषु अग्राह्यास्वपि, सिद्धानामनंतिमो भागः ।।५९८।।

टीका – सख्याताणुवर्गणा अर असख्याताणुवर्गणा विषै अपने-अपने उत्कृष्ट कौं अपना-अपना जघन्य का भाग दीए, जो प्रमाण होइ, सोई गुणकार जानना । इस गुणकार करि जघन्य कौ गुणै, उत्कृष्ट भेद हो है । बहुरि अनताणुवर्गणा विषै अर जीव करि ग्रहण योग्य नाही । अैसी च्यारि अग्राह्य वर्गणा विषै गुणकार सिद्धराशि का अनतवा भागमात्र है । इसकरि जघन्य कौ गुणै, उत्कृष्ट भेद हो है ।

जीवादोणंतगुणो, धुवादितिण्हं असंखभागो दु ।
पल्लस्स तदो तत्तो, असंखलोगवहिदो मिच्छो ॥५९९॥

जीवादनंतगुणो, ध्रुवादितिसृणामसंख्यभागस्तु ।
पल्यस्य ततस्ततः, असंख्यलोकावहिता मिथ्या ॥५९९॥

टीका – बहुरि ध्रुवादिक तीन वर्गणानि विषै जीवराशि तै अनतगुणा गुणकार है । याकरि जघन्य कौ गुणै, उत्कृष्ट हो है । बहुरि प्रत्येक शरीर वर्गणा विषै पल्य का असख्यातवा भागमात्र गुणकार है । याकरि जघन्य कौ गुणै, उत्कृष्ट हो है । काहे तै ? सो कहिए है । प्रत्येक शरीर वर्गणा विषै जो कार्माण शरीर है । तातै समयप्रबद्ध गुणितकर्मांश जीव सबधी है । तातै जघन्य समय प्रबद्ध के परमाणू का प्रमाण तै याका प्रमाण पल्य का अर्धच्छेदनि का असख्यातवा भाग गुणा है । ताकी सहनानी बत्तीस का अक है । तातै इहा पल्य का असख्यातवा भाग का गुणकार कह्या है । बहुरि ध्रुव, शून्य वर्गणा विषै असख्यात लोक का भाग मिथ्यादृष्टी जीवनि कौ दीए, जो प्रमाण होइ, तितना गुणकार है । याकरि जघन्य कौ गुणै उत्कृष्ट हो है ।

सेढी-सूई-पल्ला-जगपदरासंखभागगुणगारा ।
अप्पप्पणअवरादो, उक्कस्से होंति णियमेण ॥६००॥

श्रेणी-सूची–पल्य, जगत्प्रतरासंख्यभागगुणकाराः ।
आत्मात्मनोवरादुत्कृष्टे भवंति नियमेन ॥६००॥

टीका – जगच्छ्रेणी का असंख्यातवा भाग, बहुरि सूच्यगुल का असख्यातवां भाग, बहुरि पल्य का असख्यातवा भाग, बहुरि जगत्प्रतर का असख्यातवा भाग ए अनुक्रम तै बादरनिगोदवर्गणा अर शून्यवर्गणा अर सूक्ष्मनिगोद वर्गणा अर नभोवर्गणा इनि विषै गुणकार है । इनिकरि अपने-अपने जघन्य कौं गुणै, उत्कृष्ट भेद हो है । इहा शून्यवर्गणा विषै सूच्यगुल का असख्यातवा भाग गुणकार कह्या है, सो सूक्ष्मनिगोद वर्गणा का जघन्य एक घाटि भये उत्कृष्ट शून्यवर्गणा हो है; तातै कह्या है । बहुरि सूक्ष्मनिगोद वर्गणा विषै पल्य का असख्यातवा भाग गुणकार कह्या है; सो ताके उत्कृष्ट का कार्माण सबधी समयप्रवद्ध गुणितकर्मांश जीव सबधी है । तातै कह्या है । ऐसै ए तेईस वर्गणा एक पक्ति अपेक्षा कही । अब नानापक्ति अपेक्षा कहिए

है । नाना पक्ति कहा ? जो ए वर्गणा कही, ते वर्गणा लोक विषै वर्तमान कोई एक काल मे केती-केती पाइए है ? असी अपेक्षा करि कहै हैं –

परमाणु वर्गणा तै लगाइ, सातरनिरतरवर्गणा पर्यंत पन्द्रह वर्गणा समान परमाणूनि का स्कधरूप लोक विषै पुद्गलद्रव्य का जो प्रमाण, ताका जो वर्गमूल, ताका अनत गुणा कीए, जो प्रमाण होइ, तितनी-तितनी पाइए है । तहा इतना विशेष है जो ऊपरि किछू घाटि-घाटि पाइए है । तहा प्रतिभागहार सिद्धराशि का अनतवा भाग (मात्र) है । सो कहिए हैं —

अणुवर्गणा लोक विषै जेती पाइए हैं, तिस प्रमाण कौ सिद्धराशि का अनतवा भाग का भाग दीए, जो प्रमाण आवै, तितना अणुवर्गणा का परिमाण मे घटाए, जो प्रमाण रहै, तितनी दोय परमाणू का स्कधरूप सख्याताणुवर्गणा जगत विषै पाइए है । इसकौं सिद्धराशि का अनतवा भाग का भाग दीए, जो प्रमाण आवै, तितना तिस ही मै घटाइए, जो प्रमाण रहै, तितनी तीन परमाणू का स्कध रूप सख्याताणु वर्गणा लोक विषै पाइए है । इस ही अनुक्रम तै एक-एक अधिक परमाणू का स्कध का प्रमाण करते जहा उत्कृष्ट सख्याताणुवर्गणा भई, तहा जो प्रमाण भया, ताकौं सिद्ध राशि का अनतवा भाग का भाग दीए, जो प्रमाण होइ, तितना तिस ही मैं घटाए, जो अवशेष रहै, तितना जघन्य असख्याताणु वर्गणा लोक विषै पाइए हैं। याकौ तैसै ही भाग देइ घटाए, जो प्रमाण रहै, तितनी मध्य असख्याताणु वर्गणा का प्रथम भेद रूप वर्गणा लोक विषै पाइए है । सो असै ही एक-एक अधिक परमाणूनि का स्कध का प्रमाण अनुक्रम तै सातरनिरतर वर्गणा का उत्कृष्ट पर्यंत जानना । सामान्यपनै सर्व जुदी-जुदी वर्गणानि का प्रमाण अनत पुद्गल राशि का वर्गमूल मात्र जानना । बहुरि प्रत्येक शरीर वर्गणा का जघन्य तौ पूर्वोक्त अयोग केवली का अन्त समय विषै पाइए, सो उत्कृष्ट पनै च्यारि पाइए है । बहुरि उत्कृष्ट प्रत्येक शरीर वर्गणा स्वयभूरमण द्वीप का दावानलादिक विषै पाइए, सो उत्कृष्ट पनै आवली का असख्यातवा भाग प्रमाण पाइए है । बहुरि बादर निगोद वर्गणा का जघन्य तौ पूर्वोक्त क्षीण कषाय गुणस्थान का अत समय विषै पाइए, सो उत्कृष्ट पनै च्यारि पाइए है । अर बादर निगोद वर्गणा का उत्कृष्ट महामत्स्यादिक विषै पाइए, सो उत्कृष्ट पनै आवली का असख्यातवा भाग प्रमाण पाइए है । बहुरि सूक्ष्मनिगोद वर्गणा जघन्य तौ वर्तमान काल विषै जल मे वा स्थल मे वा आकाश मे आवली का असख्यातवा भाग प्रमाण पाइए है, अर सूक्ष्मनिगोद वर्गणा उत्कृष्ट भी आवली का

असख्यातवा भाग प्रमाण पाइए है । इहा प्रत्येक शरीर, वादरनिगोद, सूक्ष्मनिगोद, इनि तीन सचित्तवर्गणानि का मध्य भेद वर्तमान काल विषै असख्यात लोक प्रमाण पाइए है । बहुरि महास्कध वर्गणा वर्तमान काल मे जगत विषै एक ही है । सो भवनवासीनि के भवन देवनि के विमान, आठ पृथ्वी, मेरु गिरि, कुलाचल इत्यादिकनि का एक स्कध रूप है ।

इहां प्रश्न – जो जिनि कै असंख्यात, असंख्यात योजननि का, अन्तर पाइए, तिनिका एक स्कध कैसे संभवै है ?

ताका उत्तर – जो मध्य विषै सूक्ष्म परमाणू हैं, सो वे विमानादिक अर सूक्ष्म परमाणू, तिनि सबनि का एक बंधान है । तातै अतर नाही, एक स्कध है । सो असा जो एक स्कध है, ताही का नाम महास्कध है ।

हेट्ठिमउक्कस्सं पुण, रूवहियं उवरिमं जहण्णं खु ।
इदि तेवीसवियप्पा, पुग्गलदव्वा हु जिणदिट्ठा ॥६०१॥

अधस्तनोत्कृष्टं पुनः, रूपाधिकमुपरिमं जघन्यं खलु ।
इति त्रयोविंशतिविकल्पानि, पुद्गलद्रव्याणि हि जिनदिष्टानि ॥६०१॥

टीका – तेईस वर्गणानि विषै अणुवर्गणा बिना अवशेष वर्गणानि कै जो नीचे का उत्कृष्ट भेद होइ, तामै एक अधिक भए, ताके ऊपरि जो वर्गणा, ताका जघन्य भेद हो है । असे तेईस वर्गणा भेद कौ लीए पुद्गल द्रव्य, जिनदेवने कहे है । इनि विषै प्रत्येक वर्गणा अर बादरनिगोद वर्गणा अर सूक्ष्मनिगोद वर्गणा ए तीन सचित्त है, जीव सहित है, सो इनिका विशेष कहिए है –

अयोग केवली का अतसमय विषै पाइये असी जघन्य प्रत्येक वर्गणा, सो लोक विषै होइ भी वा न भी होइ, जो होइ तौ एक ही होइ वा दोय होइ वा तीन होइ उत्कृष्ट होइ तौ च्यारि होइ । बहुरि जघन्य तै एक परमाणू अधिक असी मध्य प्रत्येक वर्गणा, सो लोक विषै होइ वा न होइ, जो होइ तौ एक वा दोय वा तीन वा उत्कृष्ट पनै च्यारि होइ, असे ही एक एक परमाणू का बधाव तै इस ही अनुक्रम तै जब अनत वर्गणा होइ, तब ताके अनतर जो एक परमाणू अधिक वर्गणा, सो लोक विषै होइ वा न होइ, जो होइ तौ एक वा दोय वा तीन वा च्यारि वा उत्कृष्टपनै पाच होइ । असै एक एक परमाणू बधतै अनतवर्गणा पर्यंत पच ही उत्कृष्ट है । ताके अनन्तरि जो

वर्गणा सो होइ वा न होइ, जो होइ तौ एक वा दोय वा तीन वा उत्कृष्ट छह होइ। अैसे अनतवर्गणा पर्यंत उत्कृष्ट छह ही होइ। बहुरि इस ही अनुक्रम तै अनत अनत वर्गणा पर्यंत उत्कृष्ट सात, आठ, सात, छह, पाच, च्यारि, तीन, दोय वर्गणा जगत विषै समान परमाणूनि का प्रमाण लीए हो है। यहु यवमध्य प्ररूपणा है, जैसे यव नामा अन्न का मध्य मोटा हो है, तसै इहा मध्य विषै वर्गणा आठ कही। पहिले वा पीछे थोडी थोडी कही। तातै याकौं यवमध्य प्ररूपणा कहिए है। सो यहु प्ररूपणा मुक्तिगामी भव्य जीवनि की अपेक्षा है। अैसे प्रत्येक वर्गणा समान ससारी जीवनि कै न पाइए है।

इहा तै आगै ससारी जीवनि कै पाइए अैसी प्रत्येक वर्गणा कहिये है–

सो पूर्वै कथन कीया, ताके अनतरि पूर्व प्रत्येक वर्गणा तै एक परमाणू अधिकता लीए, जो प्रत्येक वर्गणा सो जगत विषै होइ, वा न होइ, जो होइ तौ एक वा दोय वा तीन इत्यादि उत्कृष्ट आवली का असख्यातवा भाग प्रमाण होइ। अैसे ही अनन्तवर्गणा भए, अनतरि जो प्रत्येक वर्गणा, सो लोक विषै होइ वा न होई, जो होइ तौ एक वा दोय वा तीन उत्कृष्ट आवली का असख्यातवा भाग प्रमाण पूर्व प्रमाण तै एक अधिक होइ। अैसे अनत अनत वर्गणा भए, एक एक अधिक प्रमाण उत्कृष्ट विषै होता जाय, जहा यवमध्य होइ, तहा ताईं अैसे जानना। यवमध्य विषै जेता परमाणू का स्कधरूप प्रत्येक वर्गणा भई, तितने तितने परमाणूनि का स्कधरूप प्रत्येक वर्गणा जगत विषै होइ वा न होइ, जो होइ, तौ एक वा दोय वा तीन उत्कृष्ट आवली का असख्यातवा भाग प्रमाण होइ। यहु प्रमाण इस तै जो पूर्वप्रमाण तातै एक अधिक जानना। अैसे अनत वर्गणा भए, अनतरि जो वर्गणा भई, सो जगत विषै होइ वा न होइ, जो होइ तौ एक वा दोय वा तीन उत्कृष्ट आवली का असख्यातवा भागप्रमाण होइ। सो यहु प्रमाण यवमध्य सबधी पूर्वप्रमाण तै एक घाटि जानना। अैसे एक एक परमाणू के वधने तै एक एक वर्गणा होइ। सो अनत अनत वर्गणा भए उत्कृष्ट विषै एक एक घटाइये जहा ताईं उत्कृष्ट प्रत्येक वर्गणा होइ, तहा ताईं अैसे करना। उत्कृष्ट प्रत्येकवर्गणा लोक विषै होइ वा न होइ, जो होइ तौ एक वा दोय वा तीन उत्कृष्ट आवली का असख्यातवा भाग प्रमाण होइ। अैसे प्रत्येक वर्गणा भव्य सिद्ध, अभव्य सिद्धनि की अपेक्षा कही। बहुरि बादरनिगोद वर्गणा का भी कथन प्रत्येक वर्गणावत जानना, किछू विशेष नाही। जैसे प्रत्येक वर्गणा विषै अयोगी का अतसमय विषै सभवती जघन्य वर्गणा, ताकौं आदि देकरि भव्य सिद्ध अपेक्षा कथन कीया है। तैसे इहा क्षीणकषायी का अत समय विषै सभवती तिसका शरीर के आश्रित जघन्य वादरनिगोदवर्गणा ताकौं

आदि देकरि भव्य सिद्ध अपेक्षा कथन जानना। बहुरि सामान्य ससारी अपेक्षा दोऊ जायगे समानता सभवै है। बहुरि सूक्ष्मनिगोद वर्गणा का कथन कहिए है–

सो इहां भव्य सिद्ध अपेक्षा तो कथन हैं नाही। तातै जघन्य सूक्ष्मनिगोदवर्गणा लोक विषै होइ वा न होइ, जो होइ तौ एक वा दोय वा तीन उत्कृष्ट आवली का असख्यातवा भाग प्रमाण होइ। आगै जैसै ससारीनि की अपेक्षा प्रत्येक वर्गणा का कथन कीया, तैसै ही यवमध्य ताई अनतानन्त वर्गणा भए, उत्कृष्ट विषै एक एक बधावना। पीछे उत्कृष्ट सूक्ष्मवर्गणा पर्यंत एक एक घटावना। सामान्यपनै सर्वत्र उत्कृष्ट का प्रमाण आवली का असख्यातवा भाग कहिये। इहा सर्वत्र संसारी सिद्ध कौं योग्य असी जो प्रत्येक बादर निगोद, सूक्ष्मनिगोद वर्गणा तिनिका यव आकार प्ररूपणा विषै गुणहानि का गच्छ जीवराशि तै अनन्त गुणा जानना। नाना गुण हानिशलाका का प्रमाण यवमध्य तै ऊपरि वा नीचे आवली का असख्यातवा भाग प्रमाण जानना।

भावार्थ – ससारी अपेक्षा प्रत्येकवर्गणा, बादरनिगोदवर्गणा, सूक्ष्मनिगोदवर्गणा विषै जो यवमध्य प्ररूपणा कही, तहा लोक विषै पावने की अपेक्षा जेते एक एक परमाणू बधनै रूप जे वर्गणा भेद तिनि भेदनि का जो प्रमाण सो तो द्रव्य है। अर जिनि वर्गणानि विषै उत्कृष्ट पावने की अपेक्षा समानता पाइये, तिनिका समूह सो निषेक, तिनिका जो प्रमाण, सो स्थिति है। बहुरि एक गुणहानि विषै निषेकनि का जो प्रमाण सो गुणहानि का गच्छ है। ताका प्रमाण जीवराशि तै अनन्त गुणा है। बहुरि यवमध्य के ऊपरि वा नीचै गुणहानि का प्रमाण, सो नानागुणहानि है। सो प्रत्येक आवली का असख्यातवा भागमात्र है। असै द्रव्यादिक का प्रमाण जानि, जैसै निषेकनि विषै द्रव्य प्रमाण ल्यावने का विधान है। तैसै उत्कृष्ट पावने की अपेक्षा समान रूप जे वर्गणा, तिनिका प्रमाण यवमध्य तै ऊपरि वा नीचै चय घटता क्रम लीए जानना।

इहां प्रश्न – जो इहा तो प्रत्येकादिक तीन सचित्त वर्गणानि के अनते भेद कहे, एक एक भेदरूप वर्गणा लोक विषै आवली का असख्यातवा भाग प्रमाण सामान्य पनै कही। बहुरि पूर्वै मध्यभेदरूप सचित्तवर्गणा सर्व असख्यात लोक प्रमाण ही कही सो उत्कृष्ट जघन्य बिना सर्व भेद मध्यभेद विषै आय गए, तहा असा प्रमाण कैसे सभवै ?

ताका समाधान – इहा सर्वभेदनि विषै असा कह्या है, जो होइ भी न भी होइ, होइ तौ एक वा दोय इत्यादि उत्कृष्ट आवली का असख्यातवा भाग प्रमाण होइ । सो नानाकाल अपेक्षा यहु कथन है । बहुरि तहा एक कोई विवक्षित वर्तमान काल अपेक्षा वर्तमान काल विषै सर्व मध्यभेदरूप प्रत्येकादि वर्गणा असख्यात लोक प्रमाण ही पाइये है । अधिक न पाइए है । तिनि विषै किसी भेदरूप वर्गणानि की नास्ति ही है । किसी भेदरूप वर्गणा एक आदि प्रमाण लीए पाइए हैं । किसी भेद-रूप वर्गणा उत्कृष्टपनै प्रमाण लीए पाइये है । असा समझना । इस प्रकार तेईस वर्गणा का वर्णन कीया ।

पुढवी जलं च छाया, चउरिंदियविसय-कम्म-परमाणू ।
छ-व्विह-भेयं भणियं, पोग्गलदव्वं जिणवरेहिं ॥६०२॥

पृथ्वी जल च छाया, चतुरिंद्रियविषयकर्मपरमाणवः ।
षड्विधभेदं भणितं, पुद्गलद्रव्यं जिनवरैः ॥६०२॥

टीका – पृथ्वी अर जल अर छाया अर नेत्र बिना च्यारि इन्द्रियनि का विषय अर कार्माण स्कध अर परमाणू असै पुद्गल द्रव्य छह प्रकार जिनेश्वर देवनि करि कह्या है ।

बादरबादर बादर, बादरसुहुमं च सुहुमथूलं च ।
सुहुमं च सुहुमसुहुमं, धरादियं होदि छब्भेयं ॥६०३॥

बादरबादरं बादरं, बादरसूक्ष्मं च सूक्ष्मस्थूलं च ।
सूक्ष्म च सूक्ष्मसूक्ष्मं, धरादिकं, भवति षड्भेदम् ॥६०३॥

टीका – पृथ्वीरूप पुद्गल द्रव्य बादरबादर है । जो पुद्गल स्कध छेदने कौं भेदने कौं और जायगे ले जाने कौ समर्थ हूजै, तिस स्कध कौं बादरबादर कहिए । बहुरि जल है, सो बादर है, जो छेदने कौं भेदने कौ समर्थ न हूजै अर और जायगे ले जाने कौ समर्थ हूजै, सो स्कध, बादर जानने । बहुरि छाया बादर सूक्ष्म हैं, जे छेदने-भेदने और जायगे ले जाने कौं समर्थ न हूजै, सो बादरसूक्ष्म है । बहुरि नेत्र विना च्यारि इन्द्रियनि का विषय सूक्ष्म स्थूल है । बहुरि कार्माण के स्कध सूक्ष्म हैं । जो द्रव्य देशावधि परमावधि के गोचर होइ, सो सूक्ष्म है । बहुरि परमाणू सूक्ष्मसूक्ष्म है । जो सर्वावधि के गोचर होइ, सो सूक्ष्म सूक्ष्म हैं ।

इहा एक एक वस्तु का उदाहरण कह्या है । सो पृथ्वी, काष्ठ, पाषाण इत्यादि बादरबादर है । जल, तैल, दुग्ध इत्यादि बादर है । छाया, आतप, चादनी इत्यादि बादरसूक्ष्म है । शब्द गन्धादिक सूक्ष्मबादर है । इन्द्रियगम्य नाही, देशावधि परमावधिगम्य होंहि ते स्कध सूक्ष्म हैं । परमाणू सूक्ष्मसूक्ष्म है, असैं जानने ।

खंधं सयलसमत्थं, तस्स य अद्धं भणंति देसो त्ति ।
अद्धद्धं च पदेसो, अविभागी चेव परमाणू ॥६०४॥

स्कंधं सकलसमर्थं, तस्य चार्धं भणंति देशमिति ।
अर्द्धार्द्धं च प्रदेशमविभागिनं चैव परमाणुम् ॥६०४॥

टीका – जो सर्व अंश करि संपूर्ण होइ, ताकौ स्कध कहिए । ताका आधा कौ देश कहिये । तिस आधा के आधा कौं प्रदेश कहिए । जाका भाग न होइ, ताकौं परमाणू कहिये ।

भावार्थ – विवक्षित स्कंध विषै सपूर्ण तै एक परमाणू अधिक अर्ध पर्यंत तौ स्कंध संज्ञा है । अर्ध तै लगाय एक परमाणू अधिक चौथाई पर्यंत देश सज्ञा है । चौथाई ते लगाय दोय परमाणू का स्कध पर्यंत प्रदेश सज्ञा है । अविभागी कौ परमाणू संज्ञा है । इति स्थानस्वरूपाधिकार ।

गदिठाणोग्गहकिरियासाधणभूदं खु होदि धम्म-तियं ।
वत्तणकिरिया-साहणभूदो णियमेण कालो दु ॥६०५॥

गतिस्थानावगाहक्रियासाधनभूतं खलु भवति धर्मत्रयम् ।
वर्तनाक्रियासाधनभूतो नियमेन कालस्तु ॥६०५॥

टीका – क्षेत्र तै क्षेत्रातर प्राप्त होने कौं कारण, सो गति कहिये । गति का अभाव रूप स्थान कहिये । अवकाश विषै रहने कौं अवगाह कहिए । तहा तैसे मत्स्यनि के गमन करने का साधनभूत जल द्रव्य है । तैसें गति क्रियावान जे जीव पुद्गल, तिनकै गतिक्रिया का साधनभूत सो धर्मद्रव्य है । बहुरि जैसें पथी जननि के स्थान करने का साधन भूत छाया है । तैसे स्थान - क्रियावान जे जीव पुद्गल, तिनके स्थान क्रिया का साधन भूत अधर्म द्रव्य है । बहुरि जैसें बास करनेवालो के साधनभूत

वसतिका है। तैसैं अवगाह क्रियावान जे जीव - पुद्गलादिक द्रव्य तिनिकै अवगाह क्रिया का साधनभूत आकाश द्रव्य है।

इहां प्रश्न – जो अवगाह क्रियावान तौ जीव - पुद्गल है। तिनिकौ अवकाश देना युक्त कह्या है। बहुरि धर्मादिक द्रव्य तौ निष्क्रिय है, नित्य सम्बन्ध कौ धरैं हैं, नवीन नाही आंए, जिनिकौ अवकाश देना संभवै अैसैं इहा कैसैं कहिये ? सो कहौ–

ताकां समाधान – जो उपचार करि कहिए है, जैसैं गमन का अभाव होते सतै भी सर्वत्र सद्भाव की अपेक्षा आकाश कौं सर्वगत कहिए है। तैसैं धर्मादिक द्रव्यनि कै अवगाह क्रिया का अभाव होते सतै भी लोक विषै सर्वत्र सद्भाव की अपेक्षा अवगाह का उपचार कीजिए है।

इहां प्रश्न – जो अवकाश देना आकाश का स्वभाव है, तौ वज्रादिक करि पाषाणादिक का अर भीति इत्यादिक करि गऊ इत्यादिकनि का रोकना कैसैं हो है। सो रोकना तौ देखि रहे हैं। तातैं आकाश तौ तहा भी था, पाषाणादिक कौं अवकाश न दीया, तब आकाश का अवगाह देना स्वभाव न रह्या ?

तहां उत्तर – जो आकाश तौ अवगाह देइ, परन्तु पूर्वैं तहा अवगाह करि तिष्ठे है, वज्रादिक स्थूल है, तातैं परस्पर रोकै है। यामैं आकाश का अवगाह देने का स्वभाव गया नाही, जातैं तहा ही अनंत सूक्ष्म पुद्गल है, ते परस्पर अवगाह देवैं है।

बहुरि प्रश्न – जो अैसे हैं तो सूक्ष्म पुद्गलादिकनि कै भी अवगाहहेतुत्व स्वभाव आया। आकाश ही का असाधारण लक्षण कैसे कहिए है ?

तहां उत्तर – जो सर्व पदार्थनि कौं साधारण अवगाहहेतुत्व इस आकाश ही का असाधारण लक्षण है। और द्रव्य सर्व द्रव्यनि कौ अवगाह देने कौ समर्थ नाही।

इहा प्रश्न – जो अलोकाकाश तौ सर्व द्रव्यनि कौ अवगाह देता नाही, तहा अैसा लक्षण कैसे संभवै ?

ताकां समाधान – जो स्वभाव का परित्याग होइ नाही। तहा कोई द्रव्य होता तौ अवगाह देता, कोई द्रव्य तहा गमनादि न करै, तौ अवगाह कौन कौं देवै तिसका तौ अवगाह देने का स्वभाव पाइए है। बहुरि सर्व द्रव्यनि कौ वर्तना क्रिया का साधन भूत नियम करि काल द्रव्य है।

अण्णोण्णुवयारेण य, जीवा वट्टंति पुग्गलाणि पुणो ।
देहादी-णिव्वत्तण-कारणभूदा हु णियमेण ॥६०६॥

अन्योन्योपकारेण च, जीवा वर्तन्ते पुद्गलाः पुनः ।
देहादिनिर्वर्तनकारणभूता हि नियमेन ॥६०६॥

टीका – बहुरि जीव द्रव्य है, ते परस्पर उपकार करि प्रवर्तें है । जैसै स्वामी तौ चाकर कौ धनादिक देवै है, अर चाकर स्वामी का जैसै हित होइ अर अहित का निषेध होइ तैसै करै है, सो असै परस्पर उपकार है । बहुरि आचार्य तौ शिष्य कौं इहलोक परलोक विषै फल को देनेहारा उपदेश, क्रिया का आचरण करावना असै उपकार करै है । शिष्य उन आचार्यनि की अनुकूलवृत्ति करि सेवा करै है । असै परस्पर उपकार है; असै ही अन्यत्र भी जानना । बहुरि चकार तै जीव परस्पर अनुपकार, जो बुरा करना, तिसरूप भी प्रवर्तै है वा उपकार – अनुपकार दोऊ रूप नाही प्रवर्तै हैं । बहुरि पुद्गल है, सो देहादिक जे कर्म, नोकर्म, वचन, मन, स्वासोस्वास इनिके निपजावने का नियम करि कारणभूत है । सो ए पुद्गल के उपकार है ।

इहां प्रश्न – जो जिनिका आकार देखिये असै औदारिकादि शरीर, तिनिकौ पुद्गल कहौ, कर्म तौ निराकार है, पुद्गलीक नाही ।

तहा उत्तर – जैसै गोधूमादिक, अन्न - जलादिक मूर्तीक द्रव्य के संबध तै पचै हैं, ते गोधूमादिक पुद्गलीक हैं । तैसै कर्म भी लगुड, कटकादिक मूर्तीक द्रव्य के संबध तै उदय अवस्थारूप होइ पचै हैं, तातै पुद्गलीक ही है ।

वचन दोय प्रकार है – एक द्रव्यवचन १, एक भाववचन २ । तहा भाववचन तौ वीर्यांतराय, मति, श्रुत आवरण का क्षयोपशम अर अगोपाग नामा नामकर्म का उदय के निमित्त तै हो है । तातै पुद्गलीक है । पुद्गल के निमित्त बिना भाववचन होता नाही । बहुरि भाववचन की सामर्थ्य कौ धरै, असा क्रियावान जो आत्मा, ताकरि प्रेरित हुवा पुद्गल बचनरूप परिणवै हैं, सो द्रव्यवचन कहिए है । सो भी पुद्गलीक ही है, जातै सो द्रव्यवचन कर्ण इद्रिय का विषय है, जो इन्द्रियनि का विषय है, सो पुद्गल ही है ।

इहां प्रश्न – जो कर्ण विना अन्य इद्रियनि का विषय क्यो न होइ ?

तहां उत्तर – जो जैसै गध नासिका ही का विषय है, सो रसनादिक करि ग्रह्या न जाय । तैसै शब्द कर्ण ही का विषय हैं, अन्य इद्रियनि करि योग्य नाही ।

इहां तर्क – जो वचन अमूर्तीक है, तहा कहिए है, असा कहना भी अयुक्त है, जातै वचन मूर्तीक करि ग्रह्या जाय है। वा मूर्तीक द्रव्य करि रुकै है वा नष्ट हो है, तातै मूर्तीक ही है। बहुरि द्रव्य भाव के भेद तै मन भी दोय प्रकार है। तहा भाव-मन तौ लब्धि उपयोग रूप है, सो क्षयोपशमादिक पुद्गलीक निमित्त तै हो है। तातै पुद्गलीक ही है। बहुरि ज्ञानावरण, वीर्यांतराय का क्षयोपशम अर अगोपाग नामा नामकर्म का उदय, इनिके निमित्त तै गुण - दोष का विचार, स्मरण, इत्यादिकरूप सन्मुख भया, जो आत्मा, ताकौं उपकारी जे पुद्गल, सो मनरूप होइ परिणवै हैं। तातै द्रव्यमन भी पुद्गलीक है।

इहा कोऊ कहै कि मन तौ एक जुदा ही द्रव्य है, रूपादिकरूप न परिणवै हैं। अणूमात्र है। तहा आचार्य कहैं है – तीहि मन स्यौं आत्मा का सबध है कि नाही है? जो सबध नाही है तौ आत्मा कौं उपकारी न होइ, इन्द्रियनि विषै प्रधानता कौं न धरै और जो सबध है तो, वह तो अणूमात्र है, सो एकदेश विषै उपकार करेगा अन्य प्रदेशनि विषै कैसै उपकार करै है ?

तहा तार्किक कहैं है – अमूर्तीक, निष्क्रिय आत्मा का एक अदृष्टनामा गुण है। सो अदृष्ट जो कर्म ताका वश करि तिस मन का कुँभार का चक्रवत परि-भ्रमण करै है, सो असा कहना भी अयुक्त है। अणूमात्र जो होइ ताकै भ्रमण की सम-र्थता नाही। बहुरि अमूर्तीक निष्क्रिय का अदृष्ट गुण कह्या, सो औरनि कै क्रिया का आरभ करावने कौ समर्थ न होइ। जैसै पवन आप क्रियावान है, सो स्पर्श करि बनस्पती कौ चचल करै है, सो यह तौ अणूमात्र निष्क्रिय का गुण सो आप क्रियावान नाही, अन्य कौ कैसे क्रियावान प्रवर्तावै है ? तातै मन पुद्गलीक ही है।

बहुरि वीर्यांतराय अर ज्ञानावरण का क्षयोपशम अर अगोपागनामा नामकर्म के उदय, तीहिं करि सयुक्त जो आत्मा, ताके निकसतौ जो कठ सबधी उस्वासरूप पवन, सो प्राण कहिए। बहुरि तीहिं पवन करि बाह्य पवन कौ अभ्यतर करता निस्वासरूप पवन, सो अपान कहिए। ते प्राण-अपान जीवितव्य कौ कारण हैं। तातै उपकारी हैं, सो मन अर प्राणापान ए मूर्तीक हैं। जातै भय के कारण वज्रपातादिक मूर्तीक, तिनितै मन का रुकना देखिए है। बहुरि भय के कारण दुर्गंधादिक, तीहिं करि वा हस्तादिक तै मुख के आच्छादन करि वा श्लेष्मादिक करि प्राण-अपान का रुकना देखिये है, तातै दोऊ मूर्तीक ही हैं। अमूर्तीक होइ तौ मूर्तीक करि रुकना न

सभवै है। बहुरि ताही तै आत्मा का अस्तित्व की सिद्धि हो है। जैसे कोई काष्ठादिक करि निपज्या प्रतिबिम्ब, सो चेष्टा करै तौ तहा जानिए यामैं तौ स्वय शक्ति नाही, चेष्टा करानेवाला कोई पुरुष है। तैसे अचेतन जड शरीर विषै जो प्राणापानादिक चेष्टा हो है, तिस चेष्टा का प्रेरक कोई आत्मद्रव्य अवश्य है। ऐसे आत्मा का अस्तित्व की सिद्धि हो है। बहुरि सुख, दुःख, जीवित, मरण ए भी पुद्गल द्रव्य ही के उपकार है तहा साता - असाता वेदनीय का उदय तो अतरंग कारण अर बाह्य इष्ट अनिष्ट वस्तु का सयोग इनिके निमित्त तै जो प्रीतिरूप वा आतापरूप होना, सो सुख दु ख है। बहुरि आयुकर्म के उदय तै पर्याय की स्थिति कौ धारता जीव के प्राणापान क्रिया विशेष का नाश न होना, सो जीवित कहिए। प्राणापान क्रियाविशेष का उच्छेद होना, सो मरण कहिए। सो ए सुख, दु ख, जीवित, मरण मूर्तीक द्रव्य का निमित्त निकट होत सतै ही हो है; तातै पुद्गलीक ही है। बहुरि पुद्गल है, सो केवल जीव ही कौं उपकारी नाही, पुद्गल कौ भी पुद्गल उपकारी है। जैसे कासी इत्यादिक कौ भस्मी इत्यादिक अर जलादि कौ कतक फलादिक अर लोहादिक कौ जलादिक उपकारी देखिए है। ऐसे और भी जानिए हे। बहुरि औदारिक, वैक्रियिक, आहारक नामा नामकर्म के उदय तै तैजस आहार वर्गणा करि निपजे तीन शरीर हैं, अर सासोस्वास है। बहुरि तैजस नामा नामकर्म के उदय तै तैजस वर्गणा तै निपज्या तैजस शरीर है। बहुरि कार्माण नामा नामकर्म के उदय तै कार्माण वर्गणा करि निपज्या कार्माण शरीर है। बहुरि स्वर नामा नामकर्म के उदय तै भाषावर्गणा तै निपज्या वचन है। बहुरि नोइद्रियावरण का क्षयोपशम करि सयुक्त सैनी जीव के अगोपाग नामा नामकर्म के उदय तै मन वर्गणा तै निपज्या द्रव्य मन है, ऐसे ए पुद्गल के उपकार है।

इस ही अर्थ कौं दोय सूत्रनि करि कहै है —

आहारवग्गणादो, तिण्णि सरीराणि होंति उस्सासो।
णिस्सासो वि य तेजोवग्गणखंधादु तेजंगं ॥६०७॥

आहारवर्गणात् त्रीणि शरीराणि भवन्ति उच्छ्वासः।
निश्वासोऽपि च तेजोवर्गणास्कन्धात्तुतेजोऽङ्गम् ॥६०७॥

टीका – तेईस जाति की वर्गणानि विषै आहारक वर्गणा तै औदारिक, वैक्रियिक, आहारक तीन शरीर हो है। अर उस्वास निश्वास हो है। बहुरि तैजस वर्गणा का स्कधनि करि तैजस शरीर हो है।

भास-मण-वग्गणादो, कमेण भाषा मणं च कम्मादो ।
अट्ठ-विह-कम्मदव्वं, होदि त्ति जिणेहिं णिद्दिट्ठं ॥६०८॥

भाषामनोवर्गणातः क्रमेण भाषा मनश्च कार्मणतः ।
अष्टविधद्रव्यं भवतीति जिनैर्निर्दिष्टम् ॥६०८॥

टीका – भाषावर्गणा का स्कधनि करि च्यारि प्रकार भाषा हो है । मनोवर्गणा का स्कधनि करि द्रव्यमन हो है । कार्माण वर्गणा का स्कधनि करि आठ प्रकार कर्म हो है, ऐसै जिनदेवने कह्या है ॥

णिद्धत्तं लुक्खत्तं, बंधस्स य कारणं तु एयादी ।
संखेज्जासंखेज्जाणंतविहा णिद्धलुक्खगुणा[1] ॥६०९॥

स्निग्धत्वं रूक्षत्वं, बन्धस्य च कारणं तु एकादयः ।
संख्येयासंख्येयानन्तविधाः स्निग्धरूक्षगुणाः ॥६०९॥

टीका — बाह्य अभ्यतर कारण के वश तै जो स्निग्ध पर्याय का प्रगटपना करि चिकणास्वरूप होइ, सो स्निग्ध है । ताका भाव, सो स्निग्धत्व कहिये । बहुरि रूखारूप होई,सो रूक्ष है, ताका भाव, सो रूक्षत्व कहिए । सो जल वा छेली का दूध वा गाय का दूध वा भैसि का दूध वा ऊटणी का दूध वा घृत इनि विषै स्निग्धगुण की अधिकता वा हीनता देखिए है । अर धूलि, वालू, रेत वा तुच्छ पाषाणादिक इनिविषै रूक्षगुण की अधिकता वा हीनता देखिए है । तैसै ही परमाणू विषै भी स्निग्ध रूक्षगुण की अधिकता हीनता पाइए है । ते स्निग्ध - रूक्षगुण द्वचणुकादि स्कधपर्याय का परिणमन का कारण हो है । बहुरि चकार तै स्कध तै बिछुरने के भी कारण हो हैं । स्निग्धरूप दोय परिमाणूनि का वा रूक्षरूप दोय परमाणू का एक रूक्ष वा एक स्निग्ध परमाणू का परस्पर जुडनेरूप बध होतै द्वचणुक स्कध हो है । ऐसै सख्यात, असख्यात, अनते परिमाणूनि का स्कध भी जानना । तहा स्निग्ध गुण वा रूक्षगुण अशनि की अपेक्षा सख्यात, असख्यात, अनत भेद कौ लीए है ।

एयगुणं तु जहण्णं, णिद्धत्तं बिगुण-तिगुण-संखेज्जाऽ- ।
संखेज्जाणतगुणं, होदि तहा रुक्खभावं च ॥६१०॥

---

१ 'स्निग्धरूक्षत्वाद्बन्ध.' तत्त्वार्थसूत्र अध्याय-५, सूत्र-३३ ।

एकगुणं तु जघन्यं, स्निग्धत्वं द्विगुणत्रिगुणसंख्येयाऽ-।
संख्येयानन्तगुणं, भवति तथा रूक्षभावं च ॥६१०॥

टीका – स्निग्ध गुण जो एक गुण है, सो जघन्य है, जाके एक अंश होइ, ताकौं एक गुण कहिए। ताकौ आदि देकरि द्विगुण, त्रिगुण, संख्यातगुण, असंख्यातगुण अनंतगुणरूप स्निग्ध गुण जानना। तैसें ही रूक्षगुण भी जानना। केवलज्ञानगम्य सब तै थोरा जो स्निग्धत्व रूक्षत्व, ताकौ एक अंश कल्पि, तिस अपेक्षा स्निग्ध-रूक्ष गुण के अंशनि का इहां प्रमाण जानना।

एवं गुणसंजुत्ता, परमाणू आदिवग्गणम्मि ठिया।
जोग्गदुगाणं बंधे, दोण्हं बंधो हवे णियमा ॥६११॥

एवं गुणसंयुक्ताः, परमाणव आदिवर्गणायां स्थिताः।
योग्यद्विकयोः बन्धे, द्वयोर्बन्धो भवेन्नियमात् ॥६११॥

टीका – ऐसे स्निग्ध - रूक्ष गुण करि संयुक्त परमाणू, ते प्रथम अणु वर्गणा विषै तिष्ठै है। सो यथायोग्य दोय का बंध स्थान विषै, तिनही दोय परमाणूनि का बंध हो है।

नियमकरि स्निग्ध-रूक्ष गुण के निमित्त तै सर्वत्र बंध हो है। किछू विशेष नाही। ऐसै कोऊ जानैगा, तातै जहां बंध होने योग्य नाही ऐसा निषेधपूर्वक जहां बंध होने योग्य है, तिस विधि कौ कहै हैं–

णिद्धणिद्धा ण बज्झंति, रुक्खरुक्खा य पोग्गला।
णिद्धलुक्खा य बज्झंति रूवारूवी य पोग्गला ॥६१२॥

स्निग्धस्निग्धा न बध्यन्ते, रूक्षरूक्षाश्च पुद्गलाः।
स्निग्धरूक्षाश्च बध्यन्ते, रूप्यरूपिणश्च पुद्गलाः ॥६१२॥

टीका – स्निग्ध गुण युक्त पुद्गलनि करि स्निग्ध गुण युक्त पुद्गल बंधै नाही। बहुरि रूक्षगुणयुक्त पुद्गलनि करि रूक्ष गुण युक्त पुद्गल बंधै नाही, सो यहु कथन सामान्य है। बंध भी हो है। सो विशेष आगै कहैंगे। बहुरि स्निग्ध गुण युक्त

पुद्गलनि करि रूक्ष गुण युक्त पुद्गल बधैं है। बहुरि तिनि पुद्गलनि की दोय सज्ञा है -एक रूपी, एक अरूपी।

तिनि सज्ञानि कौं कहैं है-

णिद्धिदरोलीमज्झे, विसरिसजादिस्स समगुणं एक्कं[१]।
रूवि त्ति होदि सण्णा, सेसाणं ता अरूवि त्ति ॥६१३॥

स्निग्धेतरावलीमध्ये, विसदृशजातेः समगुण एकः।
रूपीति भवति संज्ञा, शेषाणा ते अरूपिण इति ॥६१३॥

टीका - स्निग्ध-रूक्ष गुणनि की पकति, तिनके विषै विसदृश जाति कहिए। स्निग्ध के अर रूक्ष के परस्पर विसदृश जाति है, ताके जो कोई एक समान गुण होइ ताकौं रूपी अैसी सज्ञा करि कहिए है। अर समान गुण बिना अवशेष रहे, तिनिकौं अरूपी अैसी सज्ञा करि कहिए है।

ताही कौ उदाहरण करि कहै हैं-

दोगुणणिद्धाणुस्स य, दोगुणलुक्खाणुगं हवे रूवी।
इगि-तिगुणादि अरूवी, रुक्खस्स वि तं व इदि जाणे ॥६१४॥

द्विगुणस्निग्धाणोश्च द्विगुणरूक्षाणुको भवेत् रूपी।
एकत्रिगुणादि अरूपी, रूक्षस्यापि तद् व इति जानीहि ॥६१४॥

टीका - दूसरा है गुण जाकै वा दोय हैं गुण, जाकै अैसा जो द्विगुण स्निग्ध परमाणू, ताकै द्वि गुण रूक्ष परमाणू रूपी कहिए, अवशेष एक, तीन, च्यारि इत्यादि गुण धारक परमाणू अरूपी कहिए। अैसै ही द्वि गुण रूक्षाणु के द्वि गुण स्निग्धाणू रूपी कहिए, अवशेष एक, तीन इत्यादिक गुणधारक परमाणू अरूपी कहिए।

णिद्धस्स णिद्धेण दुराहिएण, लुक्खस्स लुक्खेण दुराहिएण[२]।
णिद्धस्स लुक्खेण हवेज्ज बंधो, जहण्णवज्जे विसमे समे वा ॥६१५॥

---

१ 'गुणसाम्ये सदृशाणाम्' तत्त्वार्थसूत्र अध्याय-४, सूत्र-३५।

२ 'द्व्यधिकादिगुणानातु' तत्त्वार्थसूत्र अध्याय-४, सूत्र-३६ २ न जघन्यगुणानाम् ॥३४॥

स्निग्धस्य स्निग्धेन द्व्यधिकेन, रूक्षस्य रूक्षेण द्व्यधिकेन ।
स्निग्धस्य रूक्षेण भवेद्बन्धो, जघन्यवर्ज्ये विषमे समे वा ।।६१५।।

टीका — स्निग्ध अणू का आप तै दोय गुण अधिक स्निग्ध अणू सहित बध होइ । बहुरि रूक्ष अणू का आपतै दोय गुण अधिक रूक्ष अणू सहित बध होइ । बहुरि स्निग्ध अणू का आपतै दोय गुण अधिक रूक्ष अणू सहित बध होइ । तहा एक गुण सहित जघन्य स्निग्ध अणू वा रूक्ष अणू ताकै तीन गुण युक्त परमाणू सहित बध नाही यद्यपि यहा दोय अश अधिक है, तथापि एक अश युक्त परमाणू बधने योग्य नाही; तातैं बंध नाही हो है । स्निग्ध वा रूक्ष परमाणूनि का समधारा विषै वा विषमधारा विषैं दोय अधिक अंश होतै बंध हो है । तहा दोय, च्यारि, छह, आठ इत्यादिक दोय दोय बधता अंश जहा होइ, तहा समधारा विषै कहिये । बहुरि तीन, पाच, सात, नव इत्यादिक दोय दोय बधता अश जहा होइ, तहा विषमधारा विषै कहिए । सो समधारा विषै दोय अंश परमाणू अर च्यारि अश परमाणू का बध होइ । च्यारि अंश परमाणू अर छह अश परमाणू का बध होइ, इत्यादिक दोय अंश अधिक होतै बंध हो है । बहुरि विषमधारा विषै तीन अंश परमाणु का पच अंश परमाणू सहित बध होइ, पच अंश परमाणू का सप्त अश परमाणू सहित बंध हो है । असै दोय अश अधिक होतै बध हो है । बंध होनेका अर्थ यहु जो एक स्कधरूप हो है । बहुरि समान गुण धरै असे जे रूपी परमाणू, तिनिकै परस्पर बध नाही है । जैसै दोय अश एक के भी होइ, दोय अश दूसरे के भी होइ, तौ बध न होइ । बहुरि सम गुणधारक परमाणू अर विषम गुण धारक परमाणू बधै नाही । जैसै दोय अश युक्त परमाणू का पच अश युक्त परमाणू सहित बध न होइ । जातै इहा दोय अधिक अश का अभाव है —

णिद्धिदरे समविसमा, दोत्तिगआदी दुउत्तरा होंति ।
उभये वि य समविसमा, सरिसिदरा होंति पत्तेयं ।।६१६।।

स्निग्धेतरयोः समविषमा, द्वित्र्यादयः द्व्युत्तरा भवन्ति ।
उभये पि च समविषमा, सदृशेतरे भवन्ति प्रत्येकम् ।।६१६।।

टीका — स्निग्ध रूक्ष विषै दोय आदि दोय बधता तौ सम पंक्ति विषै गुण जानना । दोय, च्यारि, छह, आठ इत्यादिक जानने । अर विषम पक्ति विषै तीन आदि दोय दोय बधता जानना । तीन, पाच, सात, नव इत्यादिक जानना । ते सम

अर विषम रूपी भी हो है। अर अरूपी भी हो है। जहा दोनों के समान गुण होई सो रूपी, जहा समान गुण न होइ, सो अरूपी कहिए। जैसैं स्निग्ध - रूक्ष की सम पक्ति विषै दोय गुण के दोय गुण रूपी हैं, च्यारि गुण के च्यारि गुण रूपी है। छह गुण के छह गुण रूपी है। इत्यादि सख्यात, असख्यात, अनतगुणा पर्यंत जानने। बहुरि दोय गुण के दोय गुण बिना अर एक, तीन, च्यारि, पाच इत्यादिक अरूपी है।

भावार्थ – एक परमाणू दोय गुण धारक है। अर दूसरा परमाणू भी दोय गुणधारक है। तौ तहा तिनको परस्पर रूपी कहिये। और हीनाधिक गुण धारक परमाणू कौं अरूपी असी सज्ञा कहिए। असै ही च्यारि, छह इत्यादिक विषै जानना। बहुरि विषम पक्ति विषै तीन गुण कै तीन गुण, पच गुण कै पच गुण इत्यादिक सख्यात, असख्यात, अनत पर्यंत सम . गुणधारक परमाणू परस्पर रूपी हैं। अवशेष हीनाधिक गुण धारक है, ते परस्पर अरूपी हैं, असी सज्ञा करि कहिये है। सो सम अर विषम दोऊ पक्तिनि विषै ही समान गुण धारक रूपी परमाणू, तिनकै परस्पर बध न हो है। तत्त्वार्थसूत्र विषै भी कह्या है – **'गुणसाम्ये सदृशानां'**[1] याका अर्थ यहु ही– गुणनि की समानता होतै सदृश परमाणूनि कै परस्पर बध न हो है। बहुरि अरूपी परमाणूनि कै यथोचित स्वस्थान वा परस्थान विषै बध हो है। स्निग्ध अर स्निग्ध का, बहुरि रूक्ष अर रूक्ष का बध, सो स्वस्थान बध कहिए। स्निग्ध अर रूक्ष का बध होइ, सो परस्थान बध कहिए।

आगे इस ही अर्थ कौं और – प्रकार करि कहैं हैं—

दो-त्तिग-पभवदुउत्तरगदेसुणंतरदुगाण बंधो दु।
णिद्धे लुक्खे वि तहा वि जहण्णुभये वि सव्वत्थ ॥६१७॥

द्वित्रिप्रभवद्व्युत्तरगतेष्वनन्तरद्विकयोः बन्धस्तु।
स्निग्धे रूक्षेऽपि तथापि जघन्योभयेऽपि सर्वत्र ॥६१७॥

टीका – स्निग्ध विषै वा रूक्ष विषै समपक्ति विषै दोय आदि दोय दोय बधता अर विषम पक्ति विषै तीन आदि दोय दोय बधता अश क्रम करि पाइए है। तहा अनतर द्विकनि का बध होइ। कैसे ? स्निग्ध का च्यारि अश वा रूक्ष का च्यारि अश

१ तत्त्वार्थसूत्र अध्याय-५, सूत्र-३५।

सहित पुद्गल के दोय अश सहित रूक्ष पुद्लग सहित वध होइ । वा पच अंश स्निग्ध का वा रूक्ष का सहित पुद्गल कै स्निग्ध तीन अंश युक्त पुद्गल सहित बध होइ । ऐसें दोय अधिक भए बध जानना । परतु एक अशरूप जघन्य गुण युक्त विषे वध न हो है । अन्यत्र स्निग्ध रूक्ष विषै सर्वत्र बध जानना ।

णिद्धिदरवरगुणाणू, सपरट्ठाणे वि णेदि बंधट्ठं ।
बहिरंतरंग-हेदुहि, गुणंतरं संगदे एदि ।।६१८।।

स्निग्धेतरावरगुणाणुः स्वपरस्थानेऽपि नैति वंधार्थम् ।
बहिरंतरंगहेतुभिर्गुणांतरं संगते एति ।।६१८।।

टीका – स्निग्ध वा रूक्ष तौ जघन्य एक गुण युक्त परमाणू होइ, सो स्वस्थान वा परस्थान विषे बंध के अर्थि योग्य नाही है । बहुरि सो परमाणू, जो बाह्य अभ्यंतर कारण तै दोय आदि और अशनि कौ प्राप्त होइ जाइ, तो वध योग्य होइ । तत्त्वार्थ सूत्र विषै भी कह्या है, 'न जघन्यगुणाना' याका अर्थ यहु ही जो जघन्य गुण धारक पुद्गलनि कै परस्पर बध न हो है ।

णिद्धिदरगुणा अहिया, हीणं परिणामयंति बंधम्मि[1] ।
संखेज्जासंखेज्जाणंतपदेसाण खंधाणं ।।६१९।।

स्निग्धेतरगुणा अधिका, हीनं परिणामयंति बंधे ।
सख्येयासंख्येयानंतप्रदेशानां स्कंधानाम् ।।६१९।।

टीका – सख्यात, असख्यात, अनत प्रदेशनि के स्कध, तिनिविषै स्निग्ध गुण स्कध वा रूक्ष गुण स्कध जे दोय गुण अधिक होइ, ते वध कौ होत सतै हीन स्कध कौ परिणामावै है । जैसे दोय स्कध हैं एक स्कध विषै स्निग्धका वा रूक्ष का पचास अंश है । अर एक मे वावन अंश है अर तिनि दोऊ स्कधनि का एक स्कध भया, तौ तहा पचास अशवाले कौ वावन अंश रूप परिणमावै है । ऐसें सर्वत्र जानना । तत्त्वार्थ सूत्र विषै भी कह्या है – 'वंधेऽधिकौ पारिणामिकौ च' याका अर्थ यहु ही जो वंध होतैं अधिक अश है, सो हीन अशनि कौ अपनेरूप परिणमावनहारे है । इति फलाधिकार: ।

1. बंधेऽधिकौ पारिणामिकौ च । तत्त्वार्थसूत्र : अध्याय-५, सूत्र-३७ ।

अैसें सात अधिकारनि करि षट् द्रव्य कहे ।

आगे पचस्तिकायनि कौ कहैं हैं—

दव्वं छक्कमकालं, पंचत्थीकायसण्णिदं होदि[1] ।
काले पदेसपचयो, जम्हा णत्थि त्ति णिद्दिट्ठं ॥६२०॥

द्रव्यं षटकमकालं, पंचास्तिकायसज्ञितं भवति ।
काले प्रदेशप्रचयो, यस्मात् नास्तीति निर्दिष्टम् ॥६२०॥

टीका – पूर्वे जे षट् द्रव्य कहे, ते अकालं कहिए काल द्रव्य रहित पचास्तिकाय नाम पावै हैं । जातै काल कै प्रदेश प्रचय नाही है । काल एक प्रदेश मात्र ही है । अर पुद्गलवत् परस्पर मिलै नाही, तातै काल कै कायपणा नाही है । जे प्रदेशनि का प्रचय जो समूह ताकरि युक्त होहि, ते अस्तिकाय है, असा परमागम विषै कह्या है ।

आगे नव पदार्थनि कौं कहै हैं –

णव य पदत्था जीवाजीवा ताणं च पुण्णपावदुगं ।
आसव-संवर[2]-णिज्जर-बंधा मोक्खो य होंति त्ति ॥६२१॥

नव च पदार्था जीवाजीवाः तेषां च पुण्यपापद्विकम् ।
आस्रवसंवरनिर्जराबधा मोक्षश्च भवंतीति ॥६२१॥

टीका — जीव अर अजीव ए तौ दोय मूल पदार्थ अर तिनही के पुण्य अर पाप दो ए पदार्थ हैं । अर पुण्य - पाप ही का आस्रव, बध, सवर, निर्जरा, मोक्ष ए पाच पदार्थ, अैसें सर्व मिले हुए ए नव पदार्थ हैं । पदार्थ शब्द सर्वत्र लगावना । जीव पदार्थ, अजीव पदार्थ इत्यादि जानना ।

जीवदुगं उत्तट्ठं, जीवा पुण्णा हु सम्मगुणसहिदा ।
वदसहिदा वि य पावा, तव्विवरीया हवंति त्ति ॥६२२॥

---

१ उत्त कालविजुत णायव्वा पच अत्थिकाया दु । द्रव्यसग्रह गाथा स २३ ।

२ सवर, निर्जरा और मोक्ष इनके द्रव्य और भाव की अपेक्षा दो-दो भेद हैं । देखो द्रव्यसग्रह गाथा स. ३४, ३६, ३७, तथा समयसार गाथा १३ की टीका आदि ।

जीवद्विकमुक्तार्थं, जीवाः पुण्या हि सम्यक्त्वगुणसहिताः ।
व्रतसहिता अपि च, पापास्तद्विपरीता भवंति ॥६२२॥

टीका — जीव पदार्थ अर अजीव पदार्थ तौ पूर्वे जीवसमास अधिकार विषै वा इहा षट् द्रव्य अधिकार विषै कहे है । बहुरि जे सम्यक्त्व गुणयुक्त होंइ अर व्रत युक्त होइ, ते पुण्य जीव कहिए । बहुरि इनिस्यो विपरीत सम्यक्त्व व्रत रहित जे जीव तें पाप जीव नियमकरि जानने ।

तहां गुणस्थाननि विषै जीवनि की संख्या कहिए है– तिनि विषै मिथ्यादृष्टी अर सासादन ए तौ पाप जीव है; असा कहै हैं ।

मिच्छाइट्ठी पावा, णंताणंता य सासणगुणा वि ।
पल्लासंखेज्जदिमा, अणअण्णदरुदयमिच्छगुणा[1] ॥६२३॥

मिथ्यादृष्टयः पापा, अनतानंताश्च सासनगुणा अपि
पल्यासंख्येया अनन्यतरोदयमिथ्यात्वगुणाः ॥६२३॥

टीका — मिथ्यादृष्टी पापी जीव है, ते अनतानत है । जाते ससारी राशि मैं अन्य गुणस्थानवालो का प्रमाण घटाए, मिथ्यादृष्टी जीवनि का प्रमाण हो है । बहुरि सासादन गुणस्थानवाले भी पाप जीव है, जाते अनतानुबधी की चौकड़ी विषैं किसी एक प्रकृति का उदय करि मिथ्यात्व सदृश गुण कौ प्राप्त हो है । ते सासादन वाले जीव पल्य के असख्यातवे भाग प्रमाण है ।

मिच्छा सावयसासणमिस्साविरदा दुवारणंता य ।
पल्लासंखेज्जदिममसंखगुणं संखसंखगुणं[2] ॥६२४॥

मिथ्याः श्रावकसासनमिश्राविरता द्विवारानंताश्च ।
पल्यासंख्येयमसंख्यगुणं संख्यासंख्यगुणम् ॥६२४॥

टीका – मिथ्यादृष्टी किंचित् ऊन संसार राशि प्रमाण है, तातै अनतानंत हैं । बहुरि देशसयत गुणस्थानवाले जीव तेरह कोडि मनुष्यनि करि अधिक, तिर्यंच

१ षट्खण्डागम धवला पुस्तक–३, पृष्ठ १० ।
२. षट्खण्डागम धवला पुस्तक–३, पृष्ठ ६३ ।

पल्य के असख्यातवे भाग प्रमाण है । इहां अन्य 'गुणस्थान कथन की अपेक्षा पल्य कौं तीन बार असख्यात अर एक बार सख्यात का भाग जानना । बहुरि सासादन गुणस्थानवर्ती जीव बावन कोडि मनुष्यनि करि अधिक इतर तीन गति के जीव देशसयमी तिर्यंचनि स्यो असख्यात गुणे जानने । इहा पल्य कौं दोय बार असख्यात अर एक बार सख्यात का भाग जानना । बहुरि मिश्र गुणस्थानवर्ती जीव एक सौ च्यारि कोडि मनुष्यनि करि सहित इतर तीन गति के जीव सासादन वालौ तै सख्यातगुणे जानने। इहा पल्य कौ दोय बार असख्यात का भाग जानना । बहुरि अविरत गुणस्थानवर्ती जीव सात सै कोडि मनुष्यनि करि सहित इतर तीन गति के जीव मिश्रवालौ तै असख्यात गुणे जानने । इहा पल्य कौ एक बार असख्यात का भाग जानना ।

तिरधिय-सय-णव-णउदी, छण्णउदी अप्पमत्त बे कोडी ।
पंचेव य तेणउदी णव-ट्ठ-बि-सय-च्छउत्तरं पमदे ॥६२५॥

त्र्यधिकशतनवनवतिः षण्णवतिः अप्रमत्ते द्वे कोटी ।
पंचैव च त्रिनवतिः, नवाष्टद्विशतषडुत्तरं प्रमत्ते ॥६२५॥

टीका – प्रमत्तगुणस्थान विषै जीव पाच कोडि तिराणवै लाख अठ्याणवै हजार दोय सै छह (५९३९८२०६) हैं । बहुरि अप्रमत्त गुणस्थान विषै जीव तीन अधिक एक सौ अर निन्यानवै हजार अर छिनवै लाख अर दोय कोडी (२९६९९१०३) इतने है । गाथा विषै पहिलै अप्रमत्त की सख्या कही प्रमत्त की सख्या छद मिलने के अर्थी कही है ।

ति-सयं भणंति केई, चउरुत्तरमत्थपंचयं केई ।
उवसामग-परिमाणं, खवगाणं जाण तद्दुगुणं[2] ॥६२६॥

त्रिशतं भणंति केचित् चतुरुत्तमस्तपंचकं केचित् ।
उपशामकपरिमाणं क्षपकाणां जानीहि तद्द्विगुणम् ॥६२६॥

टीका — आठवै, नवै, दशवै, ग्यारवें गुणस्थान उपशम श्रेणीवाले जीवनि का प्रमाण केई आचार्य तीन सै कहैं हैं । केई तीन सै च्यारि कहै है । केई पाच घाटि

---

१ षटखण्डागम – धवला पुस्तक–३, पृष्ठ ९०, गाथा स ४१
२. षटखण्डागम – धवला पुस्तक–३, पृष्ठ ९४, गाथा स ४५.

अर च्यारि अधिक तीन सै कहै है। ताके एक घाटि तीन सै भए। बहुरि आठवैं, नवै, दशवैं, बारहवैं गुणस्थानी क्षपक जीवनि का प्रमाण उपशमकवालौ तै दूणा हे शिष्य! तू जानि।

इहां तीन सै च्यारि उपशम श्रेणीवाले जीवनि की संख्या का निरंतर आठ समयनि विषै विभाग करै है—

सोलसयं चउवीसं, तीसं छत्तीस तह य बादालं।
अडदालं चउवण्णं, चउवण्णं होंति उवसमगे[1] ॥६२७॥

षोडशकं चतुर्विंशतिः, त्रिंशत् षट्त्रिंशत् तथा च द्वाचत्वारिंशत्।
अष्टचत्वारिंशत् चतुःपंचाशत् चतुःपंचाशत् भवंति उपशमके ॥६२७॥

टीका – बीचि में अंतराल न पडै अर उपशम श्रेणी कौ जीव माडै तौ आठ समयनि विषै उत्कृष्टपनै एते जीव उपशम श्रेणी माडै, पहिला समय तै लगाइ आठवा समय पर्यंत अनुक्रम तै सोलह, चौईस, तीस, छत्तीस, बियालीस, अडतालीस, चौवन, चौवन जीव निरन्तर अष्ट समयनि विषै होंहि (१६, २४, ३०, ३६, ४२, ४८, ५४, ५४)।

बत्तीसं अडदालं, सट्ठी बावत्तरी य चुलसीदी।
छण्णउदी अट्ठुत्तर-सयमट्ठुत्तर-सयं च खवगेसु[2] ॥६२८॥

द्वात्रिंशदष्टचत्वारिंशत, षष्टिः द्वासप्ततिश्च चतुरशीतिः।
षण्णवतिः अष्टोत्तरशतमष्टोत्तरशतं च क्षपकेषु ॥६२८॥

टीका – बहुरि निरन्तर अष्ट समयनि विषै क्षपक श्रेणी को माडै अैसे जीव उपशम श्रेणीवालो तै दूणे जानने। तहा पहिला समय तै लगाइ अनुक्रम तै बत्तीस, अडतालीस, साठि, बहत्तरि, चउरासी, छिनवै, एक सौ आठ, एक सौ आठ (३२, ४८, ६०, ७२, ८४, ९६, १०८, १०८) जीव निरंतर अष्ट समयनि विषै हो हैं। इस ही संख्या को घाटि बाधि कौ बरोबरि करि पहिलै चौतीस माडै, पीछै आठ समय ताईं बारह-२ अधिक माडै, तहां आदि चौतीस (३४) उत्तर बारह (१२) गच्छ आठ ८,

---

२ षटखण्डागम – धवला पुस्तक ३, पृष्ठ ९१, गाथा सं० ४२
१. षड्खण्डागम – धवला पुस्तक ३, पृष्ठ ९३, गाथा स० ४३.

याका 'पदमेगेण विहीण' इत्यादिक सूत्र करि जोड दीजिए। तहा गच्छ आठ, तामैं एक घटाए सात रहे, दोय का भाग दीए, साढातीन रहे, उत्तर करि गुणे बियालीस भए, आदि करि युक्त कीए, छिहतरि भए, गच्छ करि गुणे, छह सै आठ भए, सो निरन्तर आठ समयनि विषै क्षपक श्रेणी माडि करि जीव एकठे होंहि, तिनिका प्रमाण छह सै आठ जानना। बहुरि उपशमकनि विषैं आदि सतरह (१७) उत्तर छह (६) गच्छ आठ (८) जोड दीए, तीन सै च्यारि भए, सो प्रमाण जानना।

अट्ठेव सय-सहस्सा, अट्ठा-णउदी तहा सहस्साणं।
संखा जोगिजिणाणं, पंच-सय-बि-उत्तरं वंदे[1] ॥६२९॥

अष्टैव शतसहस्राणि, अष्टानवतिस्तथा सहस्राणाम्।
संख्या योगिजिनानां, पञ्चशतद्व्युत्तरं वन्दे ॥६२९॥

टीका — सयोग केवली जिननि की संख्या आठ लाख अठ्याणवै हजार पांच सै दोय (८९८५०२) है। तिनिकौं मैं सदाकाल वदौ हू। इहां निरन्तर आठ समयनि विषै एकठे भए सयोगी जिन अन्य आचार्य अपेक्षा सिद्धात विषै असैं कहैं है- **छसु सुद्धसमयेसु तिण्णि तिण्णि जीवा केवलमुप्पाययंति दोसु समयेसु दो दो जीवा केवलमुप्पायर्यंति एवमट्ठसमयेसु संचिदजीवा बावीसा हवंति ।१।**

याका अर्थ – छह शुद्ध समयनि विषै तीन तीन जीव केवलज्ञान कौं उपजावैं हैं। दोय समयनि विषै दोय दोय जीव केवलज्ञान कौ उपजावै है। असैं आठ समयनि विषै एकठे भए जीव बावीस हो है।

भावार्थ — केवलज्ञान उपजने का छह महिने का अतराल होइ, तब बीचि मे अन्तराल न पडै, असैं निरतर आठ समयनि विषै बाईस जीव केवलज्ञान उपजावै है।

सो इहा विशेष कथन विषै छह त्रैराशिक हो है।

---

१. षट्खण्डागम – धवला पुस्तक ३, पृष्ठ ९६ गाथा स. ४६। पाठभेद—पचसदविउत्तर जाण।

छह त्रैराशिक का यंत्र			
प्रमाणराशि	फलराशि	इच्छाराशि	लब्धप्रमाण
केवली २२	काल मास ६, समय ८	केवली ८९८५०२	काल ४०८४१ छह मास आठ समय गुणा
काल मास ६, समय ८	समय ८	काल ४०८४१ छह मास आठ समय गुणा	समय ३२६७२८
समय ८	केवली २२	समय ३२६७२८	केवली ८९८५०२
समय ८	केवली ४४	समय ३२६७२८/२ आधा	केवली ८९८५०२
समय ८	केवली ८८	समय ३२६७२८/४ चौथाई	केवली ८९८५०२
समय ८	केवली १७६	समय ३२६७२८ ८ (आठवा) भाग	केवली ८९८५०२

तहा बाईस केवलज्ञानी आठ समय अधिक छह मास मात्र काल विषै होइ, तौ आठ लाख अठ्याणवै हजार पाच सै दोय केवलज्ञानी केते काल विषै होइ ? ऐसै त्रैराशिक कीए चालीस हजार आठ सै इकतालीस कौ छह मास आठ समयनि करि गुणै, जो प्रमाण होइ, तितना काल का प्रमाण आवै है । बहुरि आठ समय अधिक छह मास काल विषै निरतर केवल उपजने के आठ समय है, तौ पूर्वोक्त काल प्रमाण विषै केते समय हैं ? ऐसै त्रैराशिक कीए तीन लाख छब्बीस हजार सात सै अठाईस समय आवै है । बहुरि आठ समयनि विषै आचार्यनि के मतनि की अपेक्षा बाईस वा चवालीस वा अठ्यासी वा एक सौ छिहंतरि केवलज्ञान उपजावै, तौ पूर्वोक्त समयनि का प्रमाण विषै वा तिसतै आधा विषै वा चौथाई विषै वा आठवा भाग विषै केते केवलज्ञान उपजावै ऐसै चारि प्रकार त्रैराशिक कीए केवलानि का प्रमाण आठ लाख अठ्याणवै हजार पाच सै दोय आवै है, ऐसै जानना ।

आगै एक समय विषै युगपत् संभवती ऐसी क्षपक वा उपशमक जीवनि की विशेष सख्या गाथा तीनि करि कहैं है--

होंति खवा इगिसमये, बोहियबुद्धा य पुरिसवेदा य ।
उक्कस्सेणट्ठुत्तरसयप्पमा सग्गदो य चुदा ॥६३०॥

पत्तेयबुद्ध-तित्थयर-त्थि-णउंसय-मणोहिणाणजुदा ।
दस-छक्क-वीस-दस-वीसट्ठावीसं जहाकमसो ॥६३१॥[1]

जेट्ठावरबहुमज्झिम-ओगाहणगा दु चारि अट्ठेव ।
जुगवं हवंति खवगा, उवसमगा अद्धमेदेसिं ॥६३२॥ विसेसयं ।

भवन्ति क्षपका एकसमये, बोधितबुद्धाश्च पुरुषवेदाश्च ।
उत्कृष्टेनाष्टोत्तरशतप्रमाः, स्वर्गतश्च च्युताः ॥६३०॥

प्रत्येकबुद्धतीर्थंकरस्त्रीपुंनपुंसकमनोऽवधिज्ञानयुताः ।
दशषट्कविंशतिदशविंशत्यष्टाविंशो यथाक्रमशः ॥६३१॥

ज्येष्ठावरबहुमध्यामावगाहा द्वौ चत्वारः अष्टैव ।
युगपद् भवन्ति क्षपका, उपशमका अर्द्धमेतेषाम् ॥६३२॥ विशेषकम् ।

टीका – युगपत् एक समय विषै क्षपक श्रेणीवाले जीव ऐसे उत्कृष्टता करि पाइये हैं । बोधित-बुद्ध तौ एक सौ आठ, पुरुषवेदी एक सौ आठ, स्वर्ग तै चय करि मनुष्य होइ क्षपक भए ऐसे एक सौ आठ, प्रत्येक बुद्धि ऋद्धि के धारक दश, तीर्थंकर छह, स्त्री वेदी बीस, नपुंसक वेदी दश, मनःपर्ययज्ञानी बीस, अवधिज्ञानी अठाईस मुक्त होने योग्य शरीर की उत्कृष्ट अवगाहना के धारक दोय, जघन्य अवगाहना के धारक च्यारि, सर्व अवगाहना के मध्यवर्ती ऐसी अवगाहना के धारक आठ ऐसे ए सर्व मिले हुवे च्यारि सै बत्तीस भए । बहुरि उपशमक इनि तै आधे सर्व पाइए । तातै सर्व मिले हुवे दोय सै सोलह भए पूर्वै गुणस्थाननि विषै एकठे भए जीवनि की सख्या कही थी, इहा ऐसा कह्या है – जो श्रेणी विषै युगपत् उत्कृष्ट होइ तौ पूर्वोक्त जीव पूर्वोक्त प्रमाण होइ, अधिक न होइ ।

१ गाथा स ६३०, ६३१ के लिए षट्खण्डागम – धवला पुस्तक ५ के पृष्ठ क्रम से ३०४, ३११, ३२१, और ३०७, ३२०, २३ देखें ।

आगे सर्वसंयमी जीवनि की संख्या कहै है—

सत्तादी अट्ठंता छण्णवमज्झा य संजदा सव्वे ।
अंजलि-मौलिय-हत्थो तियरणसुद्धे णमंसामि[1] ॥६३३॥

सप्तादयः अष्टान्ताः षण्णवमध्याश्च संयताः सर्वे ।
अंजलिमौलिकहस्तस्त्रिकरणशुद्ध्या नमस्यामि ॥६३३॥

टीका – सात का अंक आदि अर आठ का अंक अंत अर मध्य विषै छह नव के अंक ८९९९९९९७ असे लिखै, भई तीन घाटि नव कोडि संख्या तीहिं प्रमाण जे संयमी छठे गुणस्थान तै लगाइ चौदहवा गुणस्थान पर्यंत है । तिनिकौ अंजुली करि मस्तक हस्त लगावतौ संतौ मन, वचन, कायरूप त्रिकरण शुद्धता करि नमस्कार मैं करौ हौ । तहा प्रमत्तवाले ५९३९८२०६, अप्रमत्तवाले २९६९९१०३, च्यार्यो गुणस्थानवर्ती उपशम श्रेणीवाले ११९६, च्यारचो गुणस्थानवर्ती क्षपक श्रेणीवाले २३९२, सयोगी जिन ८९८५०२, मिले हूवे जे (८९९९९३९९) भए ते नव कोडि तीन घाटि विषै घटाए अवशेष पाच सै अठ्याणवै रहे, ते अयोगी जिन जानने ।

आगे च्यारि गतिनि का मिथ्यादृष्टी, सासादन, मिश्र, अविरत गुणस्थानवर्ती तिनकी संख्या का साधक पल्य के भागहार का विशेष कहै है – जाका भाग दीजिए ताकौं भागहार कहिए सो आगे जो जो भागहार का प्रमाण कहै है, तिस तिसका पल्य कौं भाग दीजिए, जो जो प्रमाण आवै, तितना तितना तहा जीवनि का प्रमाण जानना । जहा भागहार का प्रमाण थोरा होइ, तहा जीवनि का प्रमाण बहुत जानना । जहा भागहार का प्रमाण बहुत होइ, तहा जीवनि का प्रमाण थोरा जानना । असै एक हजार कौ पाच का भाग दीएं दोय सै पावै, दोय सै का भाग दीए पाच ही पावै असै जानना ।

सो अब भागहार कहै हैं—

ओघा-संजद-मिस्सय-सासण-सम्माण भागहारा जे ।
रूऊणावलियासंखेज्जेणिह भजिय तत्थ णिक्खित्ते[2] ॥६३४॥

---

१ षट्खण्डागम – धवला पुस्तक ३, पृष्ठ ९८, निर्जभजिदा समगुणिदापमत्तरासी प्रमता ।
२ षट्खण्डागम – धवला पुस्तक ३, पृष्ठ १६०-१९४ ।

देवाणं अवहारा, होंति असंखेण ताणि अवहरिय ।
तत्थेव य पक्खित्ते, सोहम्मीसाणअवहारा[1] ॥६३५॥ जुम्मं ।

ओघा असंयतमिश्रकसासनसमीचां भागहारा ये ।
रूपोनावलिकासंख्यातेनेह भक्त्वा तत्र निक्षिप्ते ॥६३४॥

देवानामवहारा, भवंति असंख्येन तानवहृत्य ।
तत्रैव च प्रक्षिप्ते, सौधर्मैशानावहाराः ॥६३५॥

टीका – गुणस्थान सख्या विषै पूर्वै जो असंयत, मिश्र, सासादन की सख्या विषै जो पल्य कौ भागहार कह्या है, तिनकौं एक घाटि आवली का असख्यातवा भाग का भाग दीए, जो प्रमाण आवै, तितना तितना तिन भागहारनि मे मिलाए देवगति विषै भागहार हो है। तहा पूर्वै असयत गुणस्थान विषै भागहार का प्रमाण एक बार असख्यात कह्या था, ताकौं एक घाटि आवली का असख्यातवा भाग का भाग दीजिये, जो प्रमाण आवै, तितने तिस भागहार में मिलाइए, जो प्रमाण होइ, तितना देवगति सम्बन्धी असयत गुणस्थान विषै भागहार जानना। इस भागहार का भाग पल्य कौं दीए, जो प्रमाण होइ, तितने देवगति विषै असंयत गुणस्थानवर्ती जीव हैं। असै ही आगै भी पल्य के भागहार जानने। बहुरि मिश्र विषै दोय बार असख्यात रूप अर सासादन विषै दोय बार असख्यात अर एक बार सख्यात रूप पूर्वै जो भागहार का प्रमाण कह्या था, तिसका एक घाटि आवली का असख्यातवा भाग का भाग दीए, जो जो प्रमाण आवै, तितना तितना तहां मिलाए, देवगति सबधी मिश्र विषै वा सासादन विषै भागहार का प्रमाण हो है। बहुरि देवगति सबधी असयत वा मिश्र वा सासादन विषै जो जो भागहार का प्रमाण कह्या, तिस तिसकौं एक घाटि आवली का असख्यातवा भाग का भाग दीएं, जो जो प्रमाण आवै, तितना तितना तिस तिस भागहार मे मिलाये, जो जो प्रमाण होइ, सो सो सौधर्म-ईशान सबधी अविरत वा मिश्र वा सासादन विषै भागहार जानना। जो देवगति सबधी अविरत विषै भागहार कह्या था, ताकौं एक घाटि आवली का असंख्यातवा भाग का भाग दीए, जो प्रमाण होइ, तितना तिस भागहार विषै मिलाए, सौधर्म – ईशान स्वर्ग सबधी असयत विषै भागहार हो है। इस ही प्रकार मिश्र विषै वा सासादन विषै भागहार जानना।

---

१ षट्खण्डागम – धवला पुस्तक–३, पृष्ठ १६०–१८४।

सोहम्मेसाणहारमसंखेण य संखरूवसंगुणिदे ।
उवरि असंजद-मिस्सय-सासणसम्माण अवहारा[1] ॥६३६॥

सौधर्मेशानहारमसंख्येन च संख्यरूपसंगुणिते ।
उपरि असंयतमिश्रकसासनसमीचामवहाराः ॥६३६॥

टीका – बहुरि ताके ऊपरि सनत्कुमार - माहेंद्र स्वर्ग है । तहा असयत विषै सौधर्म - ईशान सबधी सासादन का भागहार तै असंख्यात गुणा भागहार जानना । इस असयत का भागहार तै चकार करि असंख्यात गुणा मिश्र विषै भागहार जानना । यातै सख्यात गुणा सासादन विषै भागहार जानना ।

आगे इस गुणने का अनुक्रम की व्याप्ति दिखावै हैं–

सोहम्मादासारं, जोइसि-वण-भवण-तिरिय-पुढवीसु ।
अविरद-मिस्सेऽसंखं, संखासंखगुण सासणे देसे[2] ॥६३७॥

सौधर्मादासहस्रारं, ज्योतिषिवनभवनतिर्यक्पृथ्वीषु ।
अविरतमिश्रेऽसख्यं संख्यासंख्यगुणं सासने देशे ॥६३७॥

टीका – सौधर्म - ईशान के ऊपरि सानत्कुमार - माहेन्द्र तै लगाइ शतार-सहस्रार पर्यंत पच युगल अर ज्योतिषी अर व्यतर अर भवनवासी अर तिर्यंच अर सात नरक की पृथ्वी इनि सोलह स्थान संबधी अविरत विषै अर मिश्र विषै असख्यात गुणा अनुक्रम जानना । अर सासादन विषै सख्यात गुणा अनुक्रम जानना । अर तिर्यंच सबधी देशसंयत विषै असख्यात गुणा अनुक्रम जानना, सो इस कथन कौ दिखाइए हैं–

सानत्कुमार - माहेद्र विषै जो सासादन का भागहार कह्या, तीहिंस्यो ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर विषै असंयत का भागहार असंख्यात गुणा है । यातै मिश्र का भागहार असख्यात गुणा है । यातै सासादन का भागहार संख्यात गुणा है । संख्यात की सहनानी च्यारि ।४। का अक है । बहुरि यातैं लांतव कापिष्ठ विषै असंयत का भागहार असख्यात गुणा है । यातै मिश्र का भागहार असख्यात गुणा है । यातै सासादन का भाग-

---

१ षट्खण्डागम – धवला पुस्तक ३, पृष्ठ सख्या २८२ से २८५ तक ।
२. षट्खण्डागम – धवला पुस्तक ३, पृष्ठ सख्या २८२ से २८५ तक ।

हार सख्यात गुणा है। बहुरि याते शुक्र - महाशुक्र विषे असयत का भागहार असख्यात गुणा है । याते मिश्र का भागहार असख्यात गुणा है । याते सासादन का भागहार सख्यात गुणा है । बहुरि याते शतार-सहस्रार विषे असयत का भागहार असख्यात गुणा है । याते मिश्र का भागहार असख्यात गुणा है । याते सासादन का भाग हार सख्यात गुणा है । बहुरि याते ज्योतिषीनि विषे असयत का भागहार असख्यात गुणा है। याते मिश्र का असंख्यात गुणा है । याते सासादन का भागहार सख्यात गुणा है । बहुरि याते व्यंतरनि विषे असयत का भागहार असंख्यात गुणा है। याते मिश्र का भागहार असंख्यात गुणा है। याते सासादन का भागहार सख्यात गुणा है । बहुरि याते भवनवासीनि विषे असयत का भागहार असख्यात गुणा है । याते मिश्र का भागहार असख्यात गुणा है । याते सासादन का भागहार सख्यात गुणा है ।

बहुरि याते तिर्यंचनि विषे असयत का भागहार असख्यात गुणा है । याते मिश्र का भागहार असख्यात गुणा है । याते सासादन का भागहार सख्यात गुणा है। याते तिर्यंच विषै ही देशसयत का भागहार असख्यात गुणा है । सो जो देशसयत विषै जो भागहार का प्रमाण है, सोई प्रथम नरक पृथ्वी विषै असयत का भागहार है । याते मिश्र का भागहार असख्यात गुणा है । याते सासादन का भागहार सख्यात गुणा हे । बहुरि याते दूसरी नरक पृथ्वी विषै असयत का भागहार असख्यात गुणा है। याते मिश्र का भागहार असख्यात गुणा है । याते सासादन का भागहार सख्यात गुणा है । बहुरि याते तीसरी नरक पृथ्वी विषै असयत का भागहार असख्यात गुणा है। याते मिश्र का भागहार असख्यात गुणा है । याते सासादन का भागहार सख्यात गुणा है । याते चौथी नरक पृथ्वी विषै असयत का भागहार असख्यात गुणा है। याते मिश्र का भागहार असख्यात गुणा है । याते सासादन का भागहार सख्यात गुणा है। बहुरि याते पचम नरक पृथ्वी विषै असयत का भागहार असख्यात गुणा है । याते मिश्र का भागहार असख्यात गुणा है। याते सासादन का भागहार सख्यात गुणा है। बहुरि याते पष्ठम पृथ्वी विषै असयत का भागहार असख्यात गुणा है । याते मिश्र का भागहार असख्यात गुणा है । याते सासादन का भागहार सख्यात गुणा है । बहुरि याते सप्तम नरक पृथ्वी विषै असयत का भागहार असख्यात गुणा है । याते मिश्र का भागहार असख्यात गुणा है । याते सासादन का भागहार सख्यात गुणा है ।

आगे आनतादि विषै तीनि गाथानि करि कहै है—

चरम-धरासण-हारा आणदसम्माण आरणप्पहुदिं ।
अंतिम-गेवेज्जंतं, सम्माणमसंखसंखगुणहारा ॥६३८॥

चरमधरासनहारादानतसमीचामारणप्रभृति ।
अंतिमग्रैवेयकांतं, समीचामसंख्यसंख्यगुणहाराः ॥६३८॥

टीका — तीहि सप्तम पृथ्वी सबंधी सासादन के भागहार तै आनत-प्राणत संबंधी अविरत का भागहार असख्यात गुणा है । बहुरि यातै आरण-अच्युत तै लगाइ नवमा ग्रैवेयक पर्यंत दश स्थानकनि विषै असयत का भागहार अनुक्रम तै सख्यात गुणा सख्यात गुणा जानना । इहा सख्यात की सहनानी पाच का अक है ।

तत्तो ताणुत्ताणं, वामाणमणुद्दिसाण विजयादी ।
सम्माणं संखगुणो, आणदमिस्से असंखगुणो[1] ॥६३९॥

ततस्तेषामुक्तानां, वामानामनुदिशानां विजयादि ।
समीचां संख्यगुणः, आनतमिश्रे असंख्यगुणः ॥६३९॥

टीका — तीहि अतिम ग्रैवेयक सबधी असयत का भागहार तै आनत-प्राणत युगल तै लगाइ नवमा ग्रैवेयक पर्यंत ग्यारह स्थानकनि विषै वामे जे मिथ्यादृष्टी जीव, तिनिका सख्यात गुणा, सख्यात गुणा भागहार अनुक्रम तै जानना । इहा सख्यात की सहनानी छह का अक है । बहुरि तीहि अतिम ग्रैवेयक सम्बन्धी मिथ्यादृष्टी का भागहार तै नवानुदिश विमान वा विजयादिक च्यारि विमान, इनि दोऊ स्थानकनि विषै असयत का भागहार सख्यात गुणा, सख्यात गुणा क्रमतै जानना । इहा सख्यात की सहनानी सात का अक है । बहुरि विजयादिक सम्बन्धी असयत का भागहार तै आनतप्राणत सम्बन्धी मिश्र का भागहार असख्यात गुणा है ।

तत्तो संखेज्जगुणो, सासाणसम्माण होदि संखगुणो ।
उत्तट्ठाणे कमसो, पणछस्सत्तट्ठचदुरसंदिट्ठी[2] ॥६४०॥

---

१ षट्खण्डागम धवला पुस्तक–३, पृष्ठ स २८५ ।
२. षट्खण्डागम धवला, पुस्तक–३, पृष्ठ स. २८५ ।

ततः संख्येयगुणः, सासनसमीचां भवति संख्यगुणः ।
उक्तस्थाने क्रमशः पचषट्सप्ताष्टचतुःसंदृष्टिः ।।६४०।।

टीका – तीहिं आनत-प्राणत सम्बन्धी मिश्र का भागहार तै आरण-अच्युत तै लगाइ नवमा ग्रैवेयक पर्यंत दश स्थानकनि विषै मिश्र गुणस्थान संवधी भागहार अनुक्रम तै सख्यात गुणा, सख्यात गुणा जानना । इहा सख्यात की सहनानी आठ का अक है । बहुरि अतिम ग्रैवेयक के मिश्र का भागहार तैं आनत - प्राणत तै लगाइ नवमा ग्रैवेयक पर्यंत ग्यारह स्थानकनि विषै सासादन का भागहार अनुक्रम तै सख्यात गुणा सख्यात गुणा जानना । इहा सख्यात को सहनानी च्यारि ।४। का अक है । ए कहे पच स्थानक, तिनिविषै सख्यात की सहनानी क्रमतै पाच, छह, सात, आठ, च्यारि का अक जानना; सो कहते ही आए हैं ।

सग-सग-अवहारेहिं, पल्ले भजिदे हवंति सगरासी ।
सग-सग-गुणपडिवण्णे सग-सग-रासीसु अवणिदे वामा ।।६४१।।

स्वकस्वकावहारैः, पल्ये भक्ते भवंति स्वकराशयः ।
स्वकस्वकगुणप्रतिपन्नेषु, स्वकस्वकराशिषु अपनीतेषु वामाः ।।६४१।।

टीका — पूर्वै कह्या जो अपना–अपना भागहार, तिनिका भाग पल्य कौं दीए, जो जो प्रमाण आवै, तितने–तितने जीव तहा जानने । बहुरि अपना-अपना सासादन, मिश्र, असयत अर देशसयत गुणस्थाननि विषै जो-जो प्रमाण भया, तिनिका जोड दीए, जो-जो प्रमाण होइ, तितना-तितना प्रमाण अपना-अपना राशि का प्रमाण मे घटाए, जो-जो अवशेष प्रमाण रहैं, तितने-तितने जीव, तहा मिथ्यादृष्टी जानने। तहा सामान्यपनै मिथ्यादृष्टी किंचित् ऊन ससारी-राशि प्रमाण हैं। सामान्यपनै देवगति विषै ऊन किंचित् देवराशि प्रमाण मिथ्यादृष्टी जानने । सौधर्मादिक विषै जो-जो जीवनि का प्रमाण कह्या है, तहा द्वितीयादि गुणस्थान सबधी प्रमाण घटावने के निमित्त किंचित् ऊनता कीए, जो-जो प्रमाण रहै, तितने-तितने मिथ्यादृष्टी हैं । सो सौधर्मादिक विषै जीवनि का प्रमाण कितना-कितना है ? सो गति मार्गणा विषै कह्या ही है । इहा भी किछू कहिए हैं–

सौधर्म - ईशानवाले घनागुल का तृतीय वर्गमूल करि जगच्छ्रेणी कौं गुणै, जो प्रमाण होइ, तितने हैं । सनत्कुमार युगल आदिक पच युगलनि विषै क्रम तै जग-

च्छ्रेणी का ग्यारह्वा, नवमां, सातवां, पांचवां, चौथा वर्गमूल का भाग जगच्छ्रेणी कौं दीएं, जो-जो प्रमाण आवै, तितने-तितने हैं। ज्योतिषी पण्णट्ठि प्रमाण प्रतरांगुल का भाग जगत्प्रतर कौ दीए, जो प्रमाण आवै, तितने है। व्यतर सख्यात प्रतरागुल का भाग जगत्प्रतर कौ दीएं, जो प्रमाण आवै, तितने हैं। भवनवासी घनागुल के प्रथम वर्गमूल करि जगच्छ्रेणी कौं गुणै, जो प्रमाण आवै, तितने है। तिर्यंच किंचित् ऊन ससारीराशि प्रमाण है। प्रथम पृथ्वी विषै नारकी घनागुल का द्वितीय वर्गमूल करि साधिक बारह्वां भाग करि हीन जो जगच्छ्रेणी, ताकौ गुणै, जो प्रमाण होइ, तितने हैं। द्वितीयादिक पृथ्वी विषै क्रमतै जगच्छ्रेणी का बारह्वा, दशवा, आठवां, छठा, तीसरा, दूसरा वर्गमूल का भाग जगच्छ्रेणी कौ दीए, जो जो प्रमाण होइ, तितवे-तितने जानने। इनि सबनि विषै अन्य गुणस्थानवालो का प्रमाण घटावने के अर्थी किंचित् ऊन कीए, मिथ्यादृष्टी जीवनि का प्रमाण हो है। बहुरि आनतादिक विषै मिथ्यादृष्टी जीवनि का प्रमाण इहां ही पूर्वै कह्या है। बहुरि सर्वार्थसिद्धि विषै अहमिंद्र सर्व असयत ही है। ते द्रव्य स्त्री मनुष्यणी तिनितै तिगुणे वा कोई आचार्य के मत करि सात गुणे कहे है।

आगै मनुष्य गति विषै सख्या कहे है-

तेरसकोडी देसे, बावण्णं सासणे मुणेदव्वा।
मिस्सा वि य तद्दुगुणा, असंजदा सत्त-कोडि-सयं[1] ॥६४२॥

त्रयोदशकोट्यो देशे, द्वापंचाशत् सासने मंतव्याः।
मिश्रा अपि च तद्द्विगुणा असंयताः सप्तकोटिशतम् ॥६४२॥

टीका – मनुष्य जीव देशसयत विषै तेरह कोडि है। बावन कोडि सासादन विषै जानने। मिश्र विषै तिनतै दुगुणे एक सौ च्यारि कोडि जानने। असयत विषै सातसै कोडि जानने और प्रमत्तादिक की संख्या पूर्वै कही है; सोई जाननी। ऐसैं गुणस्थाननि विषै जीवनि का प्रमाण कह्या है।

जीविदरे कम्मचये, पुण्णं पावो त्ति होदि पुण्णं तु।
सुहपयडीणं दव्वं, पावं असुहाण दव्वं तु ॥६४३॥

---

१ षट्खण्डागम धवला पुस्तक-३, पृष्ठ-२५२, गाथा स. ६८ तथा पृष्ठ-२५४, गाथा स. ७० तक

जीवेतरस्मिन् कर्मचये, पुण्यं पापमिति भवंति पुण्यं तु ।
शुभप्रकृतीनां द्रव्य; पापं अशुभप्रकृतीनां द्रव्यं तु ।।६४३।।

टीका — जीव पदार्थ संबंधी प्रतिपादन विषै सामान्यपनै गुणस्थाननि विषै मिथ्यादृष्टी अर सासादन ए तौ पापजीव है। बहुरि मिश्र है ते पुण्य-पापरूप मिश्र जीव हैं, जातै युगपत् सम्यक्त्व अर मिथ्यात्वरूप परिणए है। बहुरि असयत तौ सम्यक्त्व करि सयुक्त हैं। अर देशसयत सम्यक्त्व अर देशव्रत करि संयुक्त हैं। अर प्रमत्तादिक सम्यक्त्व अर सकलव्रत करि सयुक्त है। तातै ए पुण्यजीव हैं। असैं कहि, याके अनतरि अजीव पदार्थ सवधी प्ररूपणा करै हैं।

तहा कर्मचय कहिए कार्माणस्कध, तिसविषै पुण्यपापरूप दोय भेद हैं। तातै अजीव दोय प्रकार है। तहा साता वेदनी नरक बिना तीन आयु, शुभ नाम, उच्चगोत्र ए शुभ प्रकृति है। तिनिकौ द्रव्यपुण्य कहिए। बहुरि घातिया कर्मनि की सर्व प्रकृति, असाता वेदनी, नरक आयु, अशुभ नाम, नीच गोत्र ए अशुभ प्रकृति हैं। तिनिकौ द्रव्यपाप कहिए।

आसव-संवरदव्वं, समयपबद्धं तु णिज्जरादव्वं ।
तत्तो असंखगुणिदं, उक्कस्सं होदि णियमेण ।।६४४।।

आस्रवसवरद्रव्यम्, समयप्रबद्ध तु निर्जराद्रव्यम् ।
ततोऽसख्यगुणितमुत्कृष्ट भवति नियमेन ।।६४४।।

टीका – बहुरि आस्रव द्रव्य अर सवर द्रव्य समयप्रबद्ध प्रमाण है, जातै एक समय विषै आस्रव समयप्रबद्ध प्रमाण पुद्गल परमाणूनि ही का हो है। बहुरि सवर होइ तौ तितने ही कर्मनि का आस्रव न होइ, तातै द्रव्य सवर भी तितना ही कह्या। बहुरि उत्कृष्ट निर्जरा द्रव्य समयप्रबद्ध तै असख्यात गुणा नियम करि जानना; जातै गुणश्रेणी निर्जरा विषै उत्कृष्टपनै एक समय विषै असख्यात समयप्रबद्धनि की निर्जरा करै है।

बंधो समयपबद्धो, किंचूणदिवड्ढमेत्तगुणहाणी ।
मोक्खो य होदि एवं, सद्दहिदव्वा दु तच्चट्ठा ।।६४५।।

बंधः समयप्रबद्धः, किंचिदूनद्व्यर्धमात्रगुणहानिः ।
मोक्षश्च भवत्येवं, श्रद्धातव्यास्तु तत्त्वार्थाः ।।६४५।।

टीका – बहुरि बंध द्रव्य भी समयप्रबद्ध प्रमाण है, जातै एक समय विषै समयप्रबद्ध प्रमाण कर्म परमाणूनि ही का बंध हो है। बहुरि मोक्ष द्रव्य किंचिदून द्वयर्धगुणहानि करि गुणित समयप्रबद्ध प्रमाण है, जातै अयोगी के चरम समय विषै द्वयर्धगुणहानि करि गुणित समयप्रबद्ध प्रमाण सत्ता पाइए। तिस ही का मोक्ष हो है; इस प्रकार तत्वार्थ है, ते श्रद्धान करणे, इस तत्त्वार्थ श्रद्धान ही का नाम सम्यक्त्व है।

आगे सम्यक्त्व के भेद कहै है—

खीणे दंसणमोहे, जं सद्दहणं सुणिम्मलं होई[1]।
तं खाइय-सम्मत्तं, णिच्चं कम्म-क्खवण-हेदू ॥६४६॥

क्षीणे दर्शनमोहे, यच्छ्रद्धानं सुनिर्मलं भवति।
तत्क्षायिकसम्यक्त्वं नित्यं कर्मक्षपणहेतुः ॥६४६॥

टीका – मिथ्यात्व मोहनी, सम्यग्मिथ्यात्व मोहनी, सम्यक् मोहनी अर अनंतानुबंधी की चौकड़ी इनि सात प्रकृतिनि का करणलब्धिरूप परिणामनि का बल तै नाश होत संतै जो अति निर्मल श्रद्धान होइ, सो क्षायिक सम्यक्त्व है। सो प्रतिपक्षी कर्म का नाश करि आत्मा का गुण प्रगट भया है, तातै नित्य है। बहुरि समय समय प्रति गुणश्रेणी निर्जरा कौ कारण है; तातै कर्मक्षय का हेतु है।

उक्तं च—

दंसणमोहे खविदे, सिज्झदि एक्केव तदियतुरियभवे।
णादिक्कदि तुरियभवं ण विणस्सदि सेससम्मं च ॥

दर्शन मोह का क्षय होतै, तीहि भव विषै वा देवायु का बंध भए तीसरा भव विषै वा पहिलै मिथ्यात्वदशा विषै मनुष्य, तिर्यंच आयु का बंध भया होइ तौ चौथा भव विषै सिद्ध पद कौ प्राप्त होइ, चौथा भव कौ उलंघै नाहीं। बहुरि अन्य सम्यक्त्ववत् यह क्षायिक सम्यक्त्व विनशै भी नाही, तीहिस्यो नित्य कह्या है। सादि अक्षयानन्त है। आदि सहित अविनाशी अंत रहित है, यहु अर्थ जानना।

1. षट्खण्डागम धवला पुस्तक–१, पृष्ठ ३९७, गाथा सं २१३।

इस ही अर्थ कौं कहैं हैं–

वयणेहिं वि हेदूहिं वि, इंदियभयआणएहिं रूवेहिं ।
बीभच्छजुगंछाहिं य, तेलोक्केण वि ण चालेज्जो[1] ॥६४७॥

वचनैरपि हेतुभिरपि इंद्रियभयानीतैः रूपैः ।
बीभत्स्यजुगुप्साभिश्च त्रैलोक्येनापि न चाल्यः ॥६४७॥

टीका – श्रद्धान नष्ट होने कौं कारण अैसे कुत्सित वचननि करि वा कुत्सित हेतु दृष्टातनि करि वा इद्रियनि कौ भयकारी अैसे विकाररूप अनेक भेष आकारनि करि वा ग्लानि कौं कारण अैसी वस्तु तै निपज्या जुगुप्सा, तिन करि क्षायिक सम्यक्त्व चलै नाही । बहुत कहा कहिए तीन लोक मिलि करि क्षायिक सम्यक्त्व कौं चलाया चाहैं तौ क्षायिक सम्यक्त्व चलावने कौं समर्थ न होइ।

सो क्षायिक सम्यक्त्व कौन कै हो है ? सो कहै है–

दंसणमोहक्खवणापट्ठवगो कम्मभूमिजादो हु ।
मणुसो केवलिमूले, णिट्ठवगो होदि सव्वत्थ ॥६४८॥

दर्शनमोहक्षपणाप्रस्थापकः कर्मभूमिजातो हि ।
मनुष्यः केवलिमूले, निष्ठापको भवति सर्वत्र ॥६४८॥

टीका – दर्शन मोह की क्षपणा का प्रारभ तौ कर्मभूमि का उपज्या मनुष्य ही का केवली के पाद्मूल विषै ही हो है । अर निष्ठापक सर्वत्र च्यारयो गति विषै हो है ।

भावार्थ — जो दर्शन मोह का क्षय होने का विधान है, तिसका प्रारभ तौ केवली वा श्रुतकेवली के निकट कर्मभूमिया मनुष्य ही करै है । बहुरि सो विधान होतै मरण हो जाय तौ जहा सपूर्ण दर्शन मोह के नाश का कार्य होइ निवरै, तहा ताकौं निष्ठापक कहिए, सो च्यार्यो गति विषै हो है ।

आगै वेदक सम्यक्त्व का स्वरूप कहै है–

दंसणमोहुदयादो, उप्पज्जइ जं पयत्थसद्दहणं ।
चलमलिणमगाढं तं, वेदयसम्मत्तमिदि जाणे[2] ॥६४९॥

---

१ षट्खण्डागम धवला पुस्तक–१ पृष्ठ ३९७, गाथा स २१४ ।
२ षट्खण्डागम धवला पुस्तक–१ पृष्ठ ३९८, गाथा स. २१५ ।

दर्शनमोहोदयादुत्पद्यते यत्पदार्थश्रद्धानम् ।
चलमलिनमगाढं तद् वेदकसम्यक्त्वमिति जानीहि ॥६४९॥

टीका – दर्शनमोह का भेद सम्यक्त्वमोहनी, ताका उदय करि जो तत्त्वार्थ श्रद्धान चल वा मल वा अगाढ होइ, सो वेदक सम्यक्त्व है; असा तू जानि । चल, मलिन, अगाढ का लक्षण पूर्वे गुणस्थानप्ररूपणा विषै कह्या है ।

आगे उपशम सम्यक्त्व का स्वरूप अर तिस ही की सामग्री का विशेष तीन गाथानि करि कहै है–

दंसणमोहुवसमदो, उप्पज्जइ जं पयत्थसद्दहणं ।
उवसमसम्मत्तमिणं, पसण्णमलपंकतोयसमं ॥६५०॥

दर्शनमोहोपशमादुत्पद्यते यत्पदार्थश्रद्धानम् ।
उपशमसम्यक्त्वमिदं प्रसन्नमलपंकतोयसमम् ॥६५०॥

टीका — अनंतानुबंधी की चौकड़ी अर दर्शनमोह का त्रिक, इनि सात प्रकृतिनि के उदय का अभाव है लक्षण जाका असा प्रशस्त उपशम होवेतै जैसे कतक फलादिक तै मल कर्दम के नीचै बैठवे करि जल प्रसन्न हो है; तैसे जो तत्वार्थ श्रद्धान उपजै, सो यहु उपशम नामा सम्यक्त्व है ।

खयउवसमिय-विसोही, देसण-पाउग्ग-करणलद्धीय ।
चत्तारि वि सामण्णा, करणं पुण होदि सम्मत्ते ॥६५१॥

क्षायोपशमिकविशुद्धी, देशना प्रायोग्यकरणलब्धी च ।
चतस्रोऽपि सामान्याः करणं पुनर्भवति सम्यक्त्वे ॥६५१॥

टीका – सम्यक्त्व के पूर्वै जैसा कर्म का क्षयोपशम चाहिए तैसा होना, सो क्षायोपशमिकलब्धि । बहुरि जैसी विशुद्धता चाहिए तैसी होनी, सो विशुद्धिलब्धि । बहुरि जैसा उपदेश चाहिए तैसा पावना, सो देशनालब्धि । बहुरि पचेंद्रियादिक रूप योग्यता जैसी चाहिए तैसी होनी, सो प्रायोग्यलब्धि । बहुरि अध , अपूर्व, अनिवृत्ति-करणरूप परिणामनि का होना, सो करणलब्धि जाननी ।

तहां च्यारि लब्धि तौ सामान्य हैं; भव्य-अभव्य सर्व कैं हो हैं । बहुरि करण-लब्धि है, सो भव्य कै ही हो है । सो भी सम्यक्त्व अर चारित्र का ग्रहण विषै ही हो है ।

भावार्थ — च्यारि लब्धि तौ ससार विषै अनेक बार हो है। बहुरि करण-लब्धि की प्राप्ति भए सम्यक्त्व वा चारित्र अवश्य हो है।

आगे उपशमसम्यक्त्व के ग्रहण को योग्य जो जीव ताका स्वरूप कहै हैं—

चदुगदिभव्वो सण्णी, पज्जत्तो सुज्झगो य सागारो।
जागारो सल्लेस्सो, सलद्धिगो सम्ममुवगमई ॥६५२॥

चतुर्गतिभव्यः संज्ञी, पर्याप्तश्च शुद्धकश्च साकारः।
जागरूकः सल्लेश्यः, सलब्धिकः सम्यक्त्वमुपगच्छति ॥६५२॥

टीका — जो जीव च्यारि गति मे कोई एक गति विषै प्राप्त ऐसा भव्य होइ, सैनी होइ, पर्याप्त होइ, मंदकषायरूप परिणामता विशुद्ध होइ, स्त्यानगृद्धयादिक तीन निद्रा तै रहित होने तै जागता होइ, भावित शुभ तीन लेश्यानि विषै कोई एक लेश्या का धारक होइ, करणलब्धिरूप परिणया होइ, ऐसा जीव यथासभव सम्यक्त्व कौ प्राप्त हो है।

चत्तारि वि खेत्ताइं, आउगबंधेण होइ सम्मत्तं।
अणुवदमहव्वदाइं, ण लहइ देवाउगं मोत्तुं ॥६५३॥

चत्वार्यपि क्षेत्राणि, आयुष्कबंधेन भवति सम्यक्त्वम्।
अणुव्रतमहाव्रतानि, न लभते देवायुष्कं मुक्त्वा ॥६५३॥

टीका — च्यारि आयु विषै किसी ही परभव का आयु बध कीया होइ, तिस बद्धायु जीव कै सम्यक्त्व उपजै, इहा किछू दोष नाही। बहुरि अणुव्रत अर महाव्रत जिसकै देवायु का बध भया होइ, तिसहीकै होइ। जो पहिलै नारक, तिर्यंच, मनुष्यायु का बध मिथ्यात्व मे भया होइ, तौ पीछे अणुव्रत, महाव्रत होइ नाहीं। यहु नियम है।

ण य मिच्छत्तं पत्तो, सम्मत्तादो य जो य परिवडिदो।
सो सासणो त्ति णेयो, पंचमभावेण संजुत्तो ॥६५४॥

न च मिथ्यात्वं प्राप्तः सम्यक्त्वतश्च यश्च परिपतितः।
स सासन इति ज्ञेयः, पंचमभावेन संयुक्तः ॥६५४॥

टीका – जो जीव सम्यक्त्व तै पडचा अर मिथ्यात्व कौ यावत् प्राप्त न भया, तावत् काल सासादन है; असा जानना । सो दर्शन मोह ही की अपेक्षा पाचवा पारणामिक भाव करि सयुक्त है, जातै चारित्र मोह की अपेक्षा अनतानुबधी के उदय तै सासादन हो है, तातै इहा औदयिक भाव है । यहु सासादन जुदी ही जाति का श्रद्धान रूप सम्यक्त्व मार्गणा का भेद जानना ।

सद्दहणासद्दहणं, जस्स य जीवस्स होइ तच्चेसु ।
विरयाविरयेण समो, सम्मामिच्छो त्ति णायव्वो ॥६५५॥

श्रद्धानाश्रद्धानं, यस्य च जीवस्य भवति तत्त्वेषु ।
विरताविरतेन समः, सम्यग्मिथ्या इति ज्ञातव्यः ॥६५५॥

टीका – जिस जीव कैं जीवादि पदार्थनि विषैं श्रद्धान वा अश्रद्धान एक काल विषै होइ, जैसे देशसयत कै सयम वा असयम एकै काल हो है; तैसे होइ, सो जीव सम्यग्मिथ्यादृष्टी है, असा जानना । यहु सम्यक्त्व मार्गणा का मिश्र नामा भेद कह्या है ।

मिच्छाइट्ठी जीवो, उवइट्ठं पवयणं ण सद्दहदि ।
सद्दहदि असब्भावं, उवइट्ठं वा अणुवइट्ठं ॥६५६॥

मिथ्यादृष्टिर्जीवः उपदिष्टं प्रवचनं न श्रद्दधाति ।
श्रद्दधाति असद्भावं, उपदिष्टं वा अनुपदिष्टम् ॥६५६॥

टीका – मिथ्यादृष्टी जीव जिन करि उपदेशित असे आप्त, आगम, पदार्थ, तिनिका श्रद्धान करै नाही । बहुरि कुदेवादिक करि उपदेश्या वा अनुपदेश्या झूठा आप्त, आगम, पदार्थ, तिनिका श्रद्धान करै है । यहु सम्यक्त्व मार्गणा का मिथ्यात्व नामा भेद कह्या । असै सम्यक्त्व मार्गणा के छह भेद कहे । उपशम, क्षायिक, सम्यक्त्व का विशेष विधान लब्धिसार नामा ग्रथ विषै कह्या है । ताके अनुसारि इहा भाषा टीका विषै आगै किछू लिखेंगे, तहा जानना ।

आगै सम्यक्त्व मार्गणा विषै जीवनि की संख्या तीन गाथानि करि कहै हैं–

वासपुधत्ते खइया, संखेज्जा जइ हवंति सोहम्मे ।
तो संखपल्लठिदिये, केवडिया एवमणुपादे ॥६५७॥

वर्षपृथक्त्वे क्षायिकाः, संख्येया यदि भवंति सौधर्मे ।
तर्हि संख्यपल्यस्थितिके, कति एवमनुपाते ॥६५७॥

टीका – क्षायिक सम्यक्त्वी बहुत कल्पवासी देव हो है । बहुरि कल्पवासी देव बहुत सौधर्म – ईशान विषै हैं, तातै कहैं । जो पृथक्त्व वर्ष विषै क्षायिक सम्यक्त्वी सौधर्म - ईशान विषै सख्यात प्रमाण उपजै तौ सख्यात पल्य की स्थिति विषै कितने उपजै ? असा त्रैराशिक करना । इहा प्रमाण राशि पृथक्त्व वर्ष प्रमाण काल, फलराशि सख्यात जीव, इच्छा राशि सख्या पल्य प्रमाण, कालसो फलतै इच्छा कौं गुणै, प्रमाण का भाग दीएं जो लब्धि राशि भया, सो कहैं हैं—

संखावलिहिदपल्ला, खइया तत्तो य वेदमुवसमया ।
आवलिअसंखगुणिदा, असंखगुणहीणया कमसो ॥६५८॥

संख्यावलिहितपल्याः, क्षायिकास्ततश्च वेदमुपशमकाः ।
आवल्यसंख्यगुणिता, असंख्यगुणहीनकाः क्रमशः ॥६५८॥

टीका — सो लब्ध राशि का प्रमाण सख्यात आवली का भाग पल्य कौं दीएं, जो प्रमाण होइ, तितना आया, सो तितने ही क्षायिक सम्यग्दृष्टी जानने । बहुरि इनिकौं आवली का असख्यातवां भाग करि गुणै, जो प्रमाण होइ, तितने वेदक सम्यग्दृष्टी जानने । बहुरि क्षायिक जीवा का परिमाण ही तै असख्यात गुणा घाटि उपशम सम्यग्दृष्टी जीव जानने ।

पल्लासंखेज्जदिमा, सासाणमिच्छा य संखगुणिदा हु ।
मिस्सा तेहिं विहीणो, संसारी वामपरिमाणं ॥६५९॥

पल्यासंख्याताः, सासनमिथ्याश्च संख्यगुणिता हि ।
मिश्रास्तैर्विहीनः, संसारी वामपरिमाणम् ॥६५९॥

टीका – पल्य के असख्यातवे भाग प्रमाण सासादन, तेई मिथ्याती सामान्य हैं, तिनिका परिमाण है, तिनतै सख्यात गुणे सम्यग्मिथ्यादृष्टी जीव हैं । बहुरि इन पच सम्यक्त्व सयुक्त जीवनि का मिलाया हूवा परिमाण कौं ससारी राशि मे घटाए, जो प्रमाण अवशेष रहे, तितने वाम कहिए मिथ्यादृष्टी, तिनिका परिमाण है ।

अब इहा नव पदार्थनि का परिमाण कहिए है–

जीव द्रव्य तौ द्विरूपवर्गधारा विषै कहे अपने प्रमाण लीए है। बहुरि अजीवविषै पुद्गल द्रव्य जीवराशि तै अनंत गुणे है। धर्मद्रव्य एक है। अधर्मद्रव्य एक है। आकाश द्रव्य एक है। कालद्रव्य जगच्छ्रेणी का घन, जो लोक, तीहिं प्रमाण है। सो पुद्गल का परिमाण विषै धर्म, अधर्म, आकाश, काल का परिमाण मिलाए, अजीव पदार्थ का परिमाण हो है।

बहुरि असयत अर देशसयत का परिमाण मिलाए, तिन विषै प्रमत्तादिकनि का प्रमाण सख्यात मिलाए, जो प्रमाण होइ, तितने पुण्य जीव है। बहुरि किंचिदून द्वयर्द्धगुणहानि करि गुणित समयप्रबद्ध प्रमाण कर्म परमाणूनि की सत्ता है ताके सख्यातवे भागमात्र शुभ प्रकृतिरूप अजीव पुण्य है। बहुरि मिश्र अपेक्षा किछू अधिक जो पुण्य जीवनि का प्रमाण, ताकौ ससारी राशि मे घटाए, जो प्रमाण रहै, तितने पाप जीव है। बहुरि द्वयर्धगुणहानि करि गुणित समयप्रबद्ध कौ सख्यात का भाग दीजिए, तहा एक भाग बिना अवशेष भाग प्रमाण अशुभ प्रकृतिरूप अजीव पाप हैं। बहुरि आस्रव पदार्थ समयप्रबद्ध प्रमाण है। संवर पदार्थ समयप्रबद्ध प्रमाण है। निर्जराद्रव्य गुणश्रेणी निर्जरा विषै उत्कृष्टपनै जितनी निर्जरा होइ तीहिं प्रमाण है। बध पदार्थ समयप्रबद्ध प्रमाण है। मोक्षद्रव्य द्वयर्ध गुणित समयप्रबद्ध प्रमाण है।

इति आचार्य श्री नेमिचन्द्र विरचित गोम्मटसार द्वितीय नाम पचसग्रह ग्रथ की जीवतत्त्वप्रदीपिका नाम सस्कृत की टीका के अनुसारि सम्यग्ज्ञानचद्रिका नामा भाषाटीका विषै जीवकाण्ड विषै प्ररूपित जे बीस प्ररूपणा तिनविषै सम्यक्त्वमार्गणा प्ररूपणा नाम सतरहवा अधिकार सपूर्ण भया ॥१७॥

> जो उपदेश सुनकर पुरुषार्थ करते हैं, वे मोक्ष का उपाय कर सकते हैं और जो पुरुषार्थ नही करते वे मोक्ष का उपाय नही कर सकते। उपदेश तो शिक्षामात्र है, फल जैसा पुरुषार्थ करे, वैसा लगता है।
>
> – मोक्षमार्ग प्रकाशक – अध्याय ६–पृष्ठ–३१०

अठारहवां अधिकार : संज्ञीमार्गणा

अरि रजविघ्न विनाशकर, अमित चतुष्टय थान ।
शत इंद्रनि करि पूज्य पद, द्यो श्री अर भगवान ।।१८।।

आगे सज्ञी मार्गणा कहैं है–

णोइंदियआवरणखओवसमं तज्जबोहणं सण्णा ।
सा जस्स सो दु सण्णी, इदरो सेसिंदिअवबोहो ।।६६०।।

नोइंद्रियावरणक्षयोपशमस्तज्जबोधनं संज्ञा ।
सा यस्य स तु सज्ञी, इतरः शेषेंद्रियावबोधः ।।६६०।।

टीका – नो इन्द्रिय जो मन, ताके आवरण का जो क्षयोपशम तीहिंकरि उत्पन्न भया जो बोधन, ज्ञान, ताकौं सज्ञा कहिए । सो सज्ञा जाकै पाइए ताकौं सज्ञी कहिए है । मन-ज्ञान करि रहित अवशेष यथासंभव इन्द्रियनि का ज्ञान करि सयुक्त जो जीव, सो असज्ञी है ।

सिक्खाकिरियुवदेसालावग्गाही मणोवलंबेण ।
जो जीवो सो सण्णी, तव्विवरीओ असण्णी दु ।।६६१।।

शिक्षाक्रियोपदेशालापग्राही मनोवलबेन ।
यो जीवः स संज्ञी, तद्विपरीतोऽसंज्ञी तु ।।६६१।।

टीका – हित-अहित का करने – त्यजनेरूप शिक्षा, हाथ-पग का इच्छा करि चलावने आदिरूप क्रिया, चामठी (बेत) इत्यादि करि उपदेश्या वधविधानादिक सो उपदेश, श्लोकादिक का पाठ सो आलाप, इनिका ग्रहण करणहारा जो मन ताका अवलबन करि क्रम तै मनुष्य वा वलध वा हाथी वा सूवा इत्यादि जीव, सो सज्ञी नाम है । बहुरि इस लक्षण तै उलटा लक्षण का जो जीव, सो असज्ञी नाम जानना ।

, कज्जमकज्जं च तच्चमिदरं च ।
य, समणो अमणो य विवरीदो ।।६६२।।

मीमांसति यः पूर्वं, कार्यमकार्यं च तत्त्वमितरच्च ।
शिक्षते नाम्ना एति च, समनाः अमनाश्च विपरीतः ॥६६२॥

टीका – जो पहिलै कार्य – अकार्य कौ विचारै, तत्त्व – अतत्त्व कौं सीखै, नाम करि बुलाया हुवा आवै, सो जीव मन सहित समनस्क, सज्ञी जानना । इस लक्षण तै उलटा लक्षण कौ जो धरै होइ, सो जीव मन रहित अमनस्क असज्ञी जानना ।

इहा जीवनि की संख्या कहै है –

देवेहिं सादिरेगो, रासी सण्णीण होदि परिमाणं ।
तेणूणो संसारी, सव्वेसिमसण्णिजीवाणं ॥६६३॥

देवैः सातिरेको, राशिः संज्ञिनां भवति परिमाणम् ।
तेनोनः संसारी सर्वेषामसंज्ञिजीवानाम् ॥६६३॥

टीका – च्यारि प्रकार के देवनि का जो प्रमाण, तिनितै किछू अधिक संज्ञी जीवनि का प्रमाण है । सज्ञी जीवनि विषै देव बहुत हैं । तिनिविषै नारक, मनुष्य, पंचेंद्री सैनी तिर्यंच मिलाए सज्ञी जीवनि का प्रमाण हो है । इस प्रमाण कौ संसारी जीवनि का प्रमाण मे घटाए, अवशेष सर्व असज्ञी जीवनि का प्रमाण हो है ।

इति आचार्य श्रीनेमिचन्द्र विरचित गोम्मटसार द्वितीय नाम पचसग्रह ग्रथ की जीवतत्त्व-प्रदीपिका नाम सस्कृत टीका के अनुसारि सम्यग्ज्ञान चन्द्रिका नाम भाषा टीका विषै जीवकाण्ड विषै प्ररूपित जे बीस प्ररूपणा, तिनिविषै सज्ञी-मार्गणा प्ररूपणा नामा अठारहवा अधिकार सपूर्ण भया ॥१८॥

> तत्त्वनिर्णय करने मे उपयोग न लगावे वह तो इसी का दोष है । तथा पुरुषार्थ से तत्त्वनिर्णय मे उपयोग लगावे तब स्वयमेव ही मोह का अभाव होने पर सम्यक्त्वादि रूप मोक्ष के उपाय का पुरुषार्थ बनता है ।
>
> – मोक्षमार्ग प्रकाशक अध्याय ९, पृष्ठ–३११

उन्नीसवां अधिकार : आहार-मार्गणा

मल्लिकुसुम समगंधजुत मोह शत्रुहर मल्ल ।
बहिरतर श्रीसहित जिन, मल्लि हरहु मम शल्ल ।।१९।।

आगै आहार-मार्गणा कहैं है–

उदयावण्णसरीरोदयेण तद्देहवयणचित्ताणं ।
णोकम्मवग्गणाणं, गहणं आहारयं णाम ।।६६४।।

उदयापन्नशरीरोदयेन तद्देहवचनचित्तानाम् ।
नोकर्मवर्गणाना, ग्रहणमाहारकं नाम ।।६६४।।

टीका – औदारिक, वैक्रियिक, आहारक इन तीन शरीर नामा नामकर्म विषै किसी ही का उदय करि जो तिस शरीररूप वा वचनरूप वा द्रव्य मनरूप होने योग्य जो नोकर्म वर्गणा, तिनिका जो ग्रहण करना, सो आहार असा नाम है।

आहरदि सरीराणं, तिण्हं एयदरवग्गणाओ य ।
भासामणाण णियदं, तम्हा आहारयो भणियो ।।६६५।।

आहारति शरीराणा त्रयाणामेकतरवर्गणाश्च ।
भासामनसोर्नित्यं तस्मादाहारको भणितः ।।६६५।।

टीका – औदारिकादिक शरीरनि विषै जो उदय आया कोई शरीर, तीहि रूप आहारवर्गणा, बहुरि भाषावर्गणा, बहुरि मनोवर्गणा इन वर्गणानि कौ यथायोग्य जीवसमास विषै यथायोग्य काल विषै यथायोग्यपनै नियमरूप आहरति कहिए ग्रहण करै, सो आहार कह्या है।

विग्गहगदिमावण्णा, केवलिणो समुग्घदो अयोगी य ।
सिद्धा य अणाहारा, सेसा आहारया जीवा ।।६६६।।

विग्रहगतिमापन्नाः, केवलिनः समुद्घाता अयोगिनश्च ।
सिद्धाश्च अनाहाराः, शेषा आहारका जीवाः ।।६६६।।

टीका – विग्रहगति कौ जे प्राप्त भए, असे च्यारचो गतिवाले जीव, बहुरि प्रतर अर लोकपूरणरूप केवल समुद्घात कौ प्राप्त भए असे सयोगी-जिन, बहुरि सर्व अयोगी-जिन, बहुरि सर्व सिद्ध भगवान ए सर्व अनाहारक है । अवशेष सर्व जीव आहारक ही है ।

सो समुद्घात कै प्रकार है ? सो कहै है–

वेयणकसायवेगुव्वियो य मरणंतियो समुग्घादो ।
तेजाहारो छट्ठो, सत्तमओ केवलीणं तु ॥६६७॥

वेदनाकषायवैर्गूविकाश्च, मारणांतिकः समुद्घातः ।
तेजआहारः षष्ठः, सप्तमः केवलिनां तु ॥६६७॥

टीका – वेदना, कषाय, वैक्रियिक, मारणातिक, तैजस, छठा आहारक, सातवां केवल ए सात समुद्घात जानने । इनिका स्वरूप लेश्या मार्गणा विषै क्षेत्राधिकार मे कह्या था, सो जानना ।

समुद्घात का स्वरूप कहा, सो कहै है–

मूलसरीरमछंडिय, उत्तरदेहस्स जीवपिंडस्स ।
णिग्गमणं देहादो, होदि समुग्घादणामं तु ॥६६८॥

मूलशरीरमत्यक्त्वा उत्तरदेहस्य जीवपिंडस्य ।
निर्गमनं देहाद्भवति समुद्घातनाम तु ॥६६८॥

टीका – मूल शरीर कौ तौ छोडै नाही, बहुरि कार्माण, तैजसरूप उत्तर शरीर सहित जीव के प्रदेश समूह का मूल शरीर तै बाह्य निकसना, सो समुद्घात असा नाम जानना ।

आहारमारणंतिय दुगं पि णियमेण एगदिसिगं तु ।
दस-दिसि गदा हु सेसा, पंच समुग्घादया होंति ॥६६९॥

आहारमारणांतिकद्विकमपि नियमेन एकदिशिकं तु ।
दशदिशि गताहि शेषाः पंच समुद्घातका भवति ॥६६९॥

टीका – आहारक अर मारणांतिक ए दोऊ समुद्घात तौ नियम करि एक दिशा कौ ही प्राप्त हो हैं, जाते इन विषै सूच्यंगुल का संख्यातवा भाग प्रमाण ही उचाई, चौडाई होइ । अर लंबाई बहुत होइ । ताते एक दिशा कौं प्राप्त कहिए । बहुरि अवशेष पंच समुद्घात रहे, ते दशो दिशा कौ प्राप्त हैं, जाते इनि विषै यथा-योग्य लंबाई, चौडाई, उचाई सर्व ही पाइए है ।

आगे आहार अनाहार का काल कहै हैं–

अंगुलअसंखभागो, कालो आहारयस्स उक्कस्सो ।
कम्मम्मि अणाहारो, उक्कस्सं तिण्णि समया हु ॥६७०॥

अंगुलासंख्यभागः, कालः आहारकस्योत्कृष्टः ।
कार्मणे अनाहारः, उत्कृष्टः त्रयः समया हि ॥६७०॥

टीका – आहार का उत्कृष्ट काल सूच्यंगुल के असंख्यातवे भागप्रमाण है । सूच्यंगुल का असंख्यातवा भाग के जेते प्रदेश होहि, तितने समय प्रमाण आहारक का काल है ।

इहा प्रश्न – जो मरण तौ आयु पूरी भए पीछै होइ ही होइ, तहा अनाहार होइ इहा आहार का काल इतना कैसे कह्या ?

ताका समाधान – जो मरण भए भी जिस जीव के वक्ररूप विग्रह गति न होइ, सूधी एक समय रूप गति होइ, ताकै अनाहारकपणा न हो है । आहारकपणा ही रहै है, ताते आहारक का पूर्वोक्तकाल उत्कृष्टपनै करि कह्या है । बहुरि आहारक का जघन्य काल तीन समय घाटि सास का अठारहवा भाग जानना, जाते क्षुद्रभव विषै विग्रहगति के समय घटाए इतना काल हो है । बहुरि अनाहारक का काल कार्माण शरीर विषै उत्कृष्ट तीन समय जघन्य एक समय जानना, जाते विग्रह गति विषै इतने काल पर्यंत ही नोकर्म वर्गणानि का ग्रहण न हो है ।

आगे इहा जीवनि की संख्या कहैं हैं—

कम्मइयकायजोगी, होदि अणाहारयाण परिमाणं ।
तव्विरहिदसंसारी, सव्वो आहारपरिमाणं ॥६७१॥

कार्मणकाययोगी, भवति अनाहारकाणां परिमाणम् ।
तद्विरहितसंसारी, सर्वं आहारपरिमाणम् ॥६७१॥

टीका - कार्माण काययोगवाले जीवनि का जो प्रमाण योगमार्गणा विषै कह्या, सोई अनाहारक जीवनि का प्रमाण जानना। इसकौ ससारी जीवनि का प्रमाण मे घटाए, अवशेष रहै, तितना आहारक जीवनि का प्रमाण जानना। सोई कहै है - प्रथम योगनि का काल कहिए है - कार्माण का तौ तीन समय, औदारिक मिश्र का अतर्मुहूर्त प्रमाण, औदारिक का तीहिस्यों सख्यात गुणा काल, तहा सर्वकाल मिलाएं तीन समय अधिक सख्यात अतर्मुहूर्त प्रमाण काल भया। याका किचित् ऊन ससारी राशि का भाग दीए, जो प्रमाण आवै, ताकौ तीन करि गुणै, जो प्रमाण आवै तितने अनाहारक जीव है, अवशेष सर्व ससारी आहारक जीव है। वैक्रियिक, आहारकवाले थोरे है, तिन की मुख्यता नाही है ।

इहा **प्रक्षेप योगोद्धृतमिश्रपिंडः प्रक्षेपकाणां गुणको भवेदिति**, ऐसा यह करणसूत्र जानना। **याका अर्थ** - प्रक्षेप कौ मिलाय करि मिश्र पिंड का भाग देइ, जो प्रमाण होइ ताकौ प्रक्षेपक करि गुणै, अपना अपना प्रमाण होइ। जैसे कोई एक हजार प्रमाण वस्तु है, तातै किसी का पच्र बट है, किसी का सात बट है, किसी का आठ बट है। सब कौ मिलाए प्रक्षेपक का प्रमाण बीस भए। तिस बीस का भाग हजार कौ दीए पचास पाए, तिनकौ पच करि गुणै, अढाई सै भए, सो पच बटवाले कै आए। सात करि गुणै, साढा तीन सौ भए, सो सात बटवाले कै आए। आठ करि गुणै, च्यारि सै भए, सो आठ बटवाले कै आए। ऐसे मिश्रक व्यवहार विषै अन्यत्र भी जानना।

इति आचार्य श्रीनेमिचन्द्र विरचित गोम्मटसार द्वितीय नाम पचसग्रह ग्र थ की जीवतत्त्व प्रदीपिका नाम सस्कृत टीका के अनुसारि सम्यग्ज्ञानचद्रिका नामा भाषाटीका विषै जीवकाण्ड विषै प्ररूपित जे बीस प्ररूपणा तिनिविषै आहार-मार्गणा प्ररूपणा नाम उगनीसवा अधिकार सपूर्ण भया ॥१९॥

सच्चे उपदेश से निर्णय करने पर भ्रम दूर होता है, परतु ऐसा पुरुपार्थ नही करता, इसी से भ्रम रहता है। निर्णय करने का पुरुषार्थ करे-तो भ्रम का कारण जो मोह-कर्म, उसके भी उपशमादि हो, तब भ्रम दूर हो जाये, क्योकि निर्णय करते हुए परिणामो की विशुद्धता होती है, उससे मोह के स्थिति अनुभाग घटते है।

— मोक्षमार्ग प्रकाशक अधिकार ९, पृष्ठ—३१०

बीसवां अधिकार : उपयोगाधिकार

सुव्रत पावन कौं भजें, जाहि भक्त व्रतवंत ।
निज सुव्रत श्री देहु मम, सो सुव्रत अरहंत ॥२०॥

आगे उपयोगाधिकार कहैं हैं—

वत्थुणिमित्तं भावो, जादो जीवस्स जो दु उवजोगो ।
सो दुविहो णायव्वो, सायारो चेव णायारो ॥६७२॥

वस्तुनिमित्तं भावो, जातो जीवस्य यस्तूपयोगः ।
स द्विविधो ज्ञातव्यः साकारश्चेवानाकारः ॥६७२॥

टीका — बसै है, एकीभाव रूप निवसै हैं, गुण, पर्याय जा विषै, सो वस्तु, ज्ञेय पदार्थ जानना । ताके ग्रहण के अर्थि जो जीव का परिणाम विशेष रूप भाव प्रवर्तै, सो उपयोग है । बहुरि सो उपयोग साकार - अनाकार भेद तैं दोय प्रकार जानना ।

आगे साकार उपयोग आठ प्रकार है, अनाकार उपयोग च्यारि प्रकार हैं, असा कहै हैं—

णाणं पंचविहं पि य, अण्णाण-तियं च सागरुवजोगो ।
चदु-दंसणमणगारो, सव्वे तल्लक्खणा जीवा ॥६७३॥

ज्ञानं पंचविधमपि च, अज्ञानत्रिकं च साकारोपयोगः ।
चतुर्दर्शनमनाकारः, सर्वे तल्लक्षणा जीवाः ॥६७३॥

टीका — मति, श्रुत, अवधि, मनःपर्यय, केवल ए पच प्रकार ज्ञान, बहुरि कुमति, कुश्रुत, विभग ए तीन अज्ञान, ए आठौ साकार उपयोग हैं । बहुरि चक्षु, अचक्षु अवधि, केवल ए च्यारयो दर्शन अनाकार उपयोग हैं । सो सर्व ही जीव ज्ञान - दर्शन रूप उपयोग लक्षण कौ धरै हैं ।

इस लक्षण विषै अतिव्याप्ति, अव्याप्ति, असभवी दोष न सभवै हैं । जहा लक्ष्य विषै वा अलक्ष्य विषै लक्षण पाइए, तहा अतिव्याप्ति दोष हैं । जैसे जीव का

लक्षण अमूर्तिक कहिए तौ अमूर्तिकपना जीव विषै भी है अर धर्मादिक विषै भी है। बहुरि जहां लक्षण का एकदेश विषै लक्षण पाइए, तहा अव्याप्ति दोष है। जैसे जीव का लक्षण रागादिक कहिए तौ रागादिक ससारी विषै तौ सभवै, परि सिद्ध जीवनि विषै सभवै नाही। बहुरि जो लक्ष्य तै विरोधी लक्षण होइ, सो असभवी कहिए। जैसै जीव का लक्षण जड़त्व कहिए. सो सभवै ही नाही। असै त्रिदोष रहित उपयोग ही जीव का लक्षण जानना।

मदि-सुद-ओहि-मणेहिं य सग-सग-विसये विसेसविण्णाणं।
अंतोमुहुत्तकालो, उवजोगो सो दु सायारो ॥६७४॥

मतिश्रुतावधिमनोभिश्च स्वकस्वकविषये विशेषविज्ञानं।
अंतर्मुहूर्तकाल, उपयोगः स तु साकारः ॥६७४॥

टीका – मति, श्रुत, अवधि, मनःपर्यय ज्ञाननि करि अपने - अपने विषय विषै जो विशेष ज्ञान होइ, अतर्मुहूर्त काल प्रमाण पदार्थ का ग्रहण रूप लक्षण धरै, जो उपयोग होइ, सो साकार उपयोग है। इहा वस्तु का ग्रहण रूप जो चैतन्य का परिणमन, ताका नाम उपयोग है। मुख्यपनै उपयोग है, सो छद्मस्थ के एक वस्तु का ग्रहण रूप चैतन्य का परिणमन अतर्मुहूर्त मात्र ही रहै है। तातै अतर्मुहूर्त ही कह्या है।

इंदियमणोहिणा वा, अत्थे अविसेसिदूण जं गहणं।
अंतोमुहुत्तकालो, उवजोगो सो अणायारो ॥६७५॥

इंद्रियमनोऽवधिना, वा अर्थे अविशेष्य यद्ग्रहणम्।
अंतर्मुहूर्तकालः उपयोगः स अनाकारः ॥६७५॥

टीका – नेत्र इन्द्रियरूप चक्षुदर्शन वा अवशेष इन्द्रिय अर मनरूप अचक्षु दर्शन वा अवधि दर्शन, इनकरि जो जीवादि पदार्थनि का विशेष न करिकै निर्विकल्पपनै ग्रहण होइ, सो अतर्मुहूर्त काल प्रमाण सामान्य अर्थ का ग्रहण रूप निराकार उपयोग है।

भावार्थ – वस्तु सामान्य विशेषात्मक है। तहा सामान्य का ग्रहण कौं निराकार उपयोग कहिए, विशेष का ग्रहण कौ साकार उपयोग कहिए। जातै सामान्य विषै वस्तु का आकार प्रतिभासै नाही, विशेष विषै आकार प्रतिभासै है।

आगे इहा जीवनि की सख्या कहै है –

णाणुवजोगजुदाणं, परिमाणं णाणमग्गणं व हवे ।
दंसणुवजोगियाणं, दंसणमग्गण व उत्तकमो ॥६७६॥

ज्ञानोपयोगयुतानां परिमाणं ज्ञानमार्गणावद्भवेत् ।
दर्शनोपयोगिनां दर्शनमार्गणावदुक्तक्रमः ॥६७६॥

टीका – ज्ञानोपयोगी जीवनि का परिमाण ज्ञानमार्गणावत् है । बहुरि दर्शनोपयोगी जीवनि का परिमाण दर्शनमार्गणावत् है । सो कुमतिज्ञानी, कुश्रुतज्ञानी, विभगज्ञानी, मतिज्ञानी, श्रुतज्ञानी, अवधिज्ञानी, मन पर्ययज्ञानी, केवलज्ञानी, बहुरि तिर्यंच-विभगज्ञानी, मनुष्य-विभगज्ञानी, नारक–विभगज्ञानी, इनिका प्रमाण जैसै ज्ञानमार्गणा विषै कह्या है । तैसे ही ज्ञानोपयोग विषै प्रमाण जानना । किछू विशेष नाही । बहुरि शक्तिगत चक्षुदर्शनी, व्यक्तगत चक्षुदर्शनी, अचक्षुदर्शनी, अवधिदर्शनी केवल दर्शनी, इनिका प्रमाण जैसै दर्शन–मार्गणा विषै कह्या है, तैसे इहा निराकार उपयोग विषै प्रमाण जानना । किछू विशेष नाही ।

इति श्री आचार्य नेमिचद्र विरचित गोम्मटसार द्वितीयनाम पचसग्रह ग्रथ की जीवतत्त्व प्रदीपिका नाम सस्कृत टीका के अनुसारि सम्यग्ज्ञानचद्रिका नामा भाषाटीका विषै जीवकाण्ड विषै प्ररूपित बीस प्ररूपणा तिनिविषै उपयोग-मार्गणाप्ररूपणा नामा बीसवा अधिकार सपूर्ण भया ॥२०॥

> तत्त्वनिर्णय न करने मे किसी कर्म का दोष नही है, तेरा ही दोष है, परतु तू स्वय तो महन्त रहना चाहता है और अपना दोष कर्मादिक को लगाता है, सो जिन आज्ञा माने तो ऐसी अनीति सभव नही है । तुझे विषय कषाय रूप ही रहना है इसलिए झूठ बोलता है । मोक्ष की सच्ची अभिलाषा हो तो ऐसी युक्ति किसलिए बनाए ? सासारिक कार्यो मे अपने पुरुषार्थ से सिद्धि न होती जाने तथापि पुरुषार्थ उद्यम किया करता है, यहाँ पुरुषार्थ खो बैठा है, इसलिए जानते हैं कि मोक्ष को देखा-देखी उत्कृष्ट कहता है, उसका स्वरूप पहिचान कर उसे हितरूप नही जानता । हित जानकर उसका उद्यम बने सो न करे यह असभव है ।
>
> – मोक्षमार्ग प्रकाशक । अधिकार ६, पृष्ठ–३११

इक्कीसवां अधिकार : अंतरभावाधिकार

विभव अमित ज्ञानादि जुत, सुरपति नुत नमिनाथ ।
जय मम ध्रुवपद देहु जिहि, हत्यो घातिया साथ ।।२१।।

आगै बीस प्ररूपणा का अर्थ कहि, अब उत्तर अर्थ कौ कहै है—

गुणजीवा पज्जत्ती, पाणा सण्णा य मग्गणुवजोगो ।
जोग्गा परूविदव्वा, ओघादेसेसु पत्तेयं ।।६७७।।

गुणजीवाः पर्याप्तयः, प्राणाः संज्ञाश्च मार्गणोपयोगौ ।
योग्याः प्ररूपितव्या, ओघादेशयो. प्रत्येकम् ।।६७७।।

टीका – कही जे बीस प्ररूपणा, तिनिविषै गुणस्थान अर मार्गणास्थान, इनि विषै गुणस्थान अर जीवसमास अर पर्याप्ति अर प्राण अर सज्ञा अर चौदह मार्गणा अर उपयोग ए बीस प्ररूपणा जैसै सभवै, तैसे निरूपण करनी । सोई कहैं है–

चउ पण चोद्दस चउरो, णिरयादिसु चोद्दसं तु पंचक्खे ।
तसकाये सेसिंदियकाये मिच्छं गुणट्ठाणं ।।६७८।।

चत्वारि पंच चतुर्दश, चत्वारि निरयादिषु चतुर्दश तु पंचाक्षे ।
त्रसकाये शेषेंद्रियकाये मिथ्यात्व गुणस्थानम् ।।६७८।।

टीका – गति-मार्गणा विषै क्रम तै गुणस्थान मिथ्यादृष्टयादि नरक विषै च्यारि, तिर्यंच विषै पाच, मनुष्य विषै चौदह, देव विषै च्यारि जानने । बहुरि इन्द्रिय-मार्गणा विषै अर काय-मार्गणा विषै पचेद्रिय मे अर त्रसकाय मे तौ चौदह गुणस्थान हैं । अवशेष इ द्रिय अर काय में एक मिथ्यादृष्टी गुणस्थान है । बहुरि जीवसमास नरकगति अर देवगति विषै सैनी पर्याप्त, निर्वृ त्ति अपर्याप्त ए दोय है, अर तिर्यंच विषै सर्व चौदह ही है । मनुष्य विषै सैनी पर्याप्त, अपर्याप्त ए दोय हैं । इहा नरक देवगति विषै लब्धि-अपर्याप्तक नाही; तातै निर्वृ त्ति-अपर्याप्त कह्या । मनुष्य विषै निर्वृ त्ति-अपर्याप्त, लब्धि-अपर्याप्त दोऊ पाइए, तातै सामान्यपनै अपर्याप्त ही कह्या है । बहुरि इ द्रिय–मार्गणा विषै एकेद्रिय मे बादर, सूक्ष्म, एकेंद्री तो पर्याप्त अर अपर्याप्त अैसै च्यारि जीवसमास है । बेद्री, तेइन्द्री मे अपना अपना पर्याप्त अपर्याप्त रूप दोय जीवसमास है । पचेद्रिय मे सैनी, असैनी पर्याप्त वा अपर्याप्त ए च्यारि

जीवसमास हैं । बहुरि कायमार्गणा विषै पृथ्वी आदि पच स्थावरनि मे एकेंद्रियवत् च्यारि च्यारि जीवसमास है । त्रस विषै अवशेष दश जीवसमास है ।

मज्झिम-चउ-मण-वयणे, सण्णिप्पहुदिं दु जाव खीणो त्ति ।
सेसाणं जोगि त्ति य, अणुभयवयणं तु वियलादो ॥६७९॥

मध्यमचतुर्मनवचनयोः, संज्ञिप्रभृतिस्तु यावत् क्षीण इति ।
शेषाणां योगीति च, अनुभयवचन तु विकलतः ॥६७९॥

टीका – मध्यम जो असत्य अर उभय मन वा वचन इनि च्यारि योगनि विषै सैनी मिथ्यादृष्टी तै लगाइ क्षीणकषाय पर्यंत बारह गुणस्थान हैं । बहुरि सत्य अर अनुभव मनोयोग विषै अर सत्य वचन योग विषै सैनी पर्याप्त मिथ्यादृष्टी तै लगाइ सयोगी पर्यंत तेरह गुणस्थान है । बहुरि इनि सबनि विषै जीवसमास एक सैनी पर्याप्त है । बहुरि अनुभय वचनयोग विषै विकलत्रय मिथ्यादृष्टी तै लगाइ तेरह गुणस्थान हैं । बहुरि बेइद्री, तेइद्री, चौइद्री, सैनी पचेद्री, असैनी पचेद्री इनका पर्याप्तरूप पाच जीवसमास है ।

ओरालं पज्जत्ते, थावरकायादि जाव जोगो त्ति ।
तम्मिस्समपज्जत्ते, चदुगुणठाणेसु णियमेण ॥६८०॥

औरालं पर्याप्ते, स्थावरकायादि यावत् योगीति ।
तन्मिश्रमपर्याप्ते, चतुर्गुणस्थानेषु नियमेन ॥६८०॥

टीका – औदारिक काययोग एकेद्री स्थावर पर्याप्त मिथ्यादृष्टी तै लगाइ, सयोगी पर्यंत तेरह गुणस्थाननि विषै है । बहुरि औदारिक मिश्रकाययोग अपर्याप्त च्यारि गुणस्थाननि विषै ही है नियमकरि । किनविषै ? सो कहै हैं–

मिच्छे सासणसम्मे, पुंवेदयदे कवाडजोगिम्मि ।
णर-तिरिये वि य दोण्णि वि, होंति त्ति जिणेहिं णिद्दिट्ठं ॥६८१॥

मिथ्यात्वे सासनसम्यक्त्वे, पुवेदायते कपाटयोगिनि ।
नरतिरश्चोरपि च द्वावपि भवतीति जिनैर्निर्दिष्टम् ॥६८१॥

टीका – मिथ्यादृष्टी, सासादन पुरुषवेद का उदय करि सयुक्त असयत, कपाट समुद्घात सहित सयोगी इनि अपर्याप्तरूप च्यारि गुणस्थाननि विषै, सो औदा-

रिक मिश्रयोग पाइए है । बहुरि औदारिक वा औदारिक-मिश्र ए दोऊ योग मनुष्य अर तिर्यंचनि ही कै है, अैसा जिनदेवने कह्या है । बहुरि औदारिक विषै तौ पर्याप्त सात जीवसमास है, अर औदारिक मिश्र विषै अपर्याप्त सात जीवसमास अर सयोगी कै एक पर्याप्त जीवसमास अैसै आठ जीवसमास है ।

वेगुव्वं पज्जत्ते, इदरे खलु होदि तस्स मिस्सं तु ।
सुर-णिरय-चउट्ठाणे, मिस्से ण हि मिस्सजोगो हु ॥६८२॥

वैगूर्वं पर्याप्ते, इतरे खलु भवति तस्य मिश्रं तु ।
सुरनिरयचतुःस्थाने, मिश्रे नहि मिश्रयोगो हि ॥६८२॥

टीका – वैक्रियिक योग पर्याप्त देव, नारकीनि के मिथ्यादृष्टी तै लगाइ च्यारि गुणस्थाननि विषै हैं । बहुरि वैक्रियिक-मिश्र योग मिश्रगुणस्थान विषै नाही; तातै देवनारकी संबधी मिथ्यादृष्टी, सासादन, असयत इनही विषै है । बहुरि जीवसमास वैक्रियिक विषै एक सैनी पर्याप्त है । अर वैक्रियिक मिश्र विषै एक सैनी निर्वृत्ति-अपर्याप्त है ।

आहारो पज्जत्ते, इदरे खलु होदि तस्स मिस्सो दु ।
अंतोमुहुत्तकाले, छट्ठगुणे होदि आहारो ॥६८३॥

आहारः पर्याप्ते, इतरे खलु भवति तस्य मिश्रस्तु ।
अंतर्मुहूर्तकाले, षष्ठगुणे भवति आहारः ॥६८३॥

टीका – आहारक योग सैनी पर्याप्तक छट्ठा गुणस्थान विषै जघन्यपनै वा उत्कृष्टपनै अतर्मुहूर्त काल विषै ही है । बहुरि आहारक-मिश्र योग है, सो इतर जो संज्ञी अपर्याप्तरूप छट्ठा गुणस्थान विषै जघन्यपनै वा उत्कृष्टपनै अतर्मुहूर्त काल विषै ही हो है । तातै तिन दोऊनि कै गुणस्थान एक प्रमत्त अर जीवसमास सोई एक एक जानना ।

ओरालियमिस्सं वा, चउगुणठाणेसु होदि कम्मइयं ।
चदुगदिविग्गहकाले, जोगिस्स य पदरलोगपूरणगे ॥६८४॥

औरालिकमिश्रो वा, चतुर्गुणस्थानेषु भवति कार्मणम् ।
चतुर्गतिविग्रहकाले, योगिनश्च प्रतरलोकपूरणके ॥६८४॥

टीका – कार्माणयोग औदारिक मिश्रवत् च्यारि गुणस्थाननि विषै है। सो कार्माणयोग च्यार्यो गति सबधी विग्रहगति विषै वा सयोगी कै प्रतर लोक पूरण काल विषै पाइए हैं। तातै गुणस्थान च्यारि अर जीवसमास आठ औदारिक मिश्रवत् इहा जानने।

थावरकायप्पहुदी, संढो सेसा असण्णिआदी य।
अणियट्टिस्स य पढमो, भागो त्ति जिणेहिं णिद्दिट्ठं ॥६८५॥

स्थावरकायप्रभृतिः, षंढः शेषा असंज्ञ्यादयश्च ।
अनिवृत्तेश्च प्रथमो, भागः इति जिनैर्निर्दिष्टम् ॥६८५॥

टीका – वेदमार्गणा विषै नपुसकवेद है, सो स्थावरकाय मिथ्यादृष्टी तै लगाइ अनिवृत्तिकरण का पहिला सवेद भागपर्यंत हो है; तातै गुणस्थान नव, जीवसमास सर्व चौदह हैं। बहुरि शेष स्त्रीवेद अर पुरुषवेद सैनी, असैनी पचेद्रिय मिथ्यादृष्टी तैं लगाइ, अनिवृत्तिकरण का अपना-अपना सवेद भागपर्यंत हैं। तातै गुणस्थान नव, जीवसमास सैनी, असैनी, पर्याप्त वा अपर्याप्तरूप च्यारि जिनदेवनि करि कहे हैं।

थावरकायप्पहुदी, अणियट्टीबितिचउत्थभागो त्ति।
कोहतियं लोहो पुण, सुहुमसरागो त्ति विण्णेयो ॥६८६॥

स्थावरकायप्रभृति, अनिवृत्तिद्वित्रिचतुर्थभाग इति ।
क्रोधत्रिकं लोभः पुनः, सूक्ष्मसराग इति विज्ञेयः ॥६८६॥

टीका – कषायमार्गणा विषै स्थावरकाय मिथ्यादृष्टी तै लगाइ क्रोध, मान, माया तौ क्रमतै अनिवृत्तिकरण का दूसरा, तीसरा, चौथा भागपर्यंत हैं। अर लोभ सूक्ष्मसापराय पर्यंत है, तातै क्रोध, मान, माया विषै गुणस्थान नव, लोभविषै दश, अर जीवसमास सर्वत्र चौदह जानने।

थावरकायप्पहुदी, मदिसुदअण्णाणयं विभगो दु।
सण्णीपुण्णप्पहुदी, सासणसम्मो त्ति णायव्वो ॥६८७॥

स्थावरकायप्रभृति, मतिश्रुताज्ञानकं विभंगस्तु ।
संज्ञिपूर्णप्रभृति, सासनसम्यगिति ज्ञातव्यः ॥६८७॥

टीका – ज्ञानमार्गणा विषै कुमति, कुश्रुत अज्ञान दोऊ स्थावरकाय मिथ्यादृष्टी तै लगाइ सासादनपर्यंत है । तातै तहा गुणस्थान दोय, अर जीवसमास चौदह हैं । बहुरि विभगज्ञान सज्ञी पर्याप्त मिथ्यादृष्टी आदि सासादन पर्यंत जानना; तातै गुणस्थान दोय अर जीवसमास एक सैनी पर्याप्त ही है ।

सण्णाणतिगं अविरदसम्मादी छट्ठगादि मणपज्जो ।
खीणकसायं जाव दु, केवलणाणं जिणे सिद्धे ।।६८८।।

सद्ज्ञानत्रिकमविरतसम्यगादि षष्ठकादिर्मनःपर्ययः ।
क्षीणकषायं यावत्तु, केवलज्ञानं जिने सिद्धे ।।६८८।।

टीका – मति, श्रुत, अवधि ए तीन सम्यग्ज्ञान असंयतादि क्षीणकषाय पर्यंत हैं; तातै गुणस्थान नव अर जीवसमास सैनी पर्याप्त अपर्याप्त ए दोय जानने । बहुरि मन पर्ययज्ञान छट्ठा तै क्षीणकषाय पर्यंत है; तातै गुणस्थान सात अर जीवसमास एक सैनी पर्याप्त ही है । मन पर्ययज्ञानी कै आहारक ऋद्धि न होइ, तातै आहारक मिश्र अपेक्षा भी अपर्याप्तपना न संभवै है । बहुरि केवलज्ञान सयोगी, अयोगी अर सिद्ध विषै हैं, तातै गुणस्थान दोय, जीवसमास सैनी पर्याप्त अर सयोगी की अपेक्षा अपर्याप्त ए दोय जानने ।

अयदो त्ति हु अविरमणं, देसे देसो पमत्त इदरे य ।
परिहारो सामाइयछेदो छट्ठादि थूलो त्ति ।।६८९।।

सुहुमो सुहुमकसाये, संते खीणे जिणे जहक्खादं ।
संजममग्गणभेदा, सिद्धे णत्थित्ति णिद्दिट्ठं ।।६९०।। जुम्मं ।

अयत इति अविरमणं, देशे देशः प्रमत्तेतरस्मिन् च ।
परिहार सामायिकश्छेदः षष्ठादिः स्थूल इति ।।६८९।।

सूक्ष्मः सूक्ष्मकषाये, शांते क्षीणे जिने यथाख्यातम् ।
संयममार्गणा भेदाः, सिद्धे न संतीति निर्दिष्टम् ।।६९०।।

टीका – संयममार्गणा विषै असयम है, सो मिथ्यादृष्टयादिक असयत पर्यंत च्यारि गुणस्थाननि विषै है । तहां जीवसमास चौदह है । बहुरि देशसयम एकदेश

सयत गुणस्थान विषै ही है । तहा जीवसमास एक सैनी पर्याप्त है । बहुरि सामायिक छेदोपस्थापना सयम प्रमत्तादिक अनिवृत्तिकरण पर्यंत च्यारि गुणस्थानन विषै है। तहा जीवसमास सज्ञी पर्याप्त अर आहारक मिश्र अपेक्षा अपर्याप्त ए दोय हैं । बहुरि परिहारविशुद्धि संयम प्रमत्त अप्रमत्त दोय गुणस्थाननि विषै ही है । तहा जीवसमास एक सैनी पर्याप्त हैं; जातै इस सहित आहारक होइ नाही । बहुरि सूक्ष्मसापराय सयम सूक्ष्मसापराय गुणस्थान विषै ही है । तहा जीवसमास एक सैनी पर्याप्त है । बहुरि यथाख्यात सयम उपशातकषायादिक च्यारि गुणस्थाननि विषै है । तहा जीवसमास एक सैनी पर्याप्त अर समुद्घात केवली की अपेक्षा अपर्याप्त ए दोय हैं । बहुरि सिद्ध विषै सयम नाही है, जातै चारित्र है, सो मोक्ष का मार्ग है, मोक्षरूप नाही है, ऐसे परमागम विषै कह्या है ।

चउरक्खथावराविरदसम्मादिट्ठी दु खीणमोहो त्ति ।
चक्खु-अचक्खू-ओही, जिणसिद्धे केवलं होदि ॥६६१॥

चतुरक्षस्थावराविरतसम्यग्दृष्टिस्तु क्षीणमोह इति ।
चक्षुरचक्षुरवधिः, जिनसिद्धे केवलं भवति ॥६९१॥

टीका – दर्शनमार्गणा विषै चक्षुदर्शन है । सो चौइद्री मिथ्यादृष्टी आदि क्षीणकषाय पर्यंत बारह गुणस्थान विषै है । तहा जीवसमास चौइद्री, सैनी पचेद्री असैनी पचेद्री पर्याप्त वा अपर्याप्त ए छह है । बहुरि अचक्षु दर्शन स्थावरकाय मिथ्या दृष्टी आदि क्षीणकषाय पर्यंत बारह गुणस्थान विषै है । तहा जीवसमास चौदह हैं । बहुरि अवधि दर्शन असयतादि क्षीणकषाय पर्यंत नव गुणस्थान विषै है । तहा जीवसमास सैनी पर्याप्त वा अपर्याप्त दोय हैं । बहुरि केवलदर्शन सयोग - अयोग दोय गुणस्थान विषै है । तहा जीवसमास केवलज्ञानवत् दोय हैं अर सिद्ध विषै भी केवल दर्शन है ।

थावरकायप्पहुदी, अविरदसम्मो त्ति असुह-तिय-लेस्सा ।
सण्णीदो अपमत्तो, जाव दु सुहतिण्णिलेस्साओ ॥६६२॥

स्थावरकायप्रभृति, अविरतसम्यगिति अशुभत्रिकलेश्याः ।
संज्ञितोऽप्रमत्तो यावत्तु शुभास्तिस्रो लेश्याः ॥६९२॥

टीका – लेश्यामार्गणा विषै कृष्णादिक अशुभ तीन लेश्याए है । ते स्थावर मिथ्यादृष्टी आदि असयत पर्यंत हैं । तहा जीवसमास चौदह है । बहुरि तेजोलेश्या अर पद्मलेश्या सैनी मिथ्यादृष्टी आदि अप्रमत्त पर्यंत है । तहा जीवसमास सैनी पर्याप्त वा अपर्याप्त ए दोय है ।

णवरि य सुक्का लेस्सा, सजोगिचरिमो त्ति होदि णियमेण ।
गयजोगिम्मि वि सिद्धे, लेस्सा णत्थि त्ति णिद्दिट्ठं ॥६९३॥

नवरि च शुक्ला लेश्या, सयोगिचरम इति भवति नियमेन ।
गतयोगेऽपि च सिद्धे, लेश्या नास्तीति निर्दिष्टम् ॥६९३॥

टीका – शुक्ललेश्या विषै विशेष है, सो कहा ? शुक्ललेश्या सैनी मिथ्यादृष्टी आदि सयोगी पर्यंत है । तहा जीवसमास सैनी पर्याप्त वा अपर्याप्त ए दोय है नियम करि, जातै केवलसमुद्घात का अपर्याप्तपना इहा अपर्याप्त जीवसमास विषै गर्भित है । बहुरि अयोगी जिन विषै वा सिद्ध विषै लेश्या नाही, असा परमागम विषै कह्या है ।

थावरकायप्पहुदी, अजोगिचरिमो त्ति होंति भवसिद्धा ।
मिच्छाइट्ठिट्ठाणे, अभव्वसिद्धा हवंति त्ति ॥६९४॥

स्थावरकायप्रभृति, अयोगिचरम इति भवंति भवसिद्धाः ।
मिथ्यादृष्टिस्थाने, अभव्यसिद्धा भवंतीति ॥६९४॥

टीका – भव्यमार्गणा विषै भव्यसिद्ध है, ते स्थावरकाय मिथ्यादृष्टी आदि अयोगी पर्यंत है । अर अभव्यसिद्ध एक मिथ्यादृष्टी गुणस्थान विषै ही है । इनि दोऊनि विषै जीवसमास चौदह-चौदह है ।

मिच्छो सासणमिस्सो, सग-सग-ठाणम्मि होदि अयदादो ।
पढमुवसमवेदगसम्मत्तदुगं अप्पमत्तो त्ति ॥६९५॥

मिथ्यात्वं सासनमिश्रौ, स्वकस्वकस्थाने भवति अयतात् ।
प्रथमोपशमवेदकसम्यक्त्वद्विकमप्रमत्त इति ॥६९५॥

टीका – सम्यक्त्वमार्गणा विषै मिथ्यादृष्टी, सासादन, मिश्र ए तीन तौ अपने-अपने एक-एक गुणस्थान विषै है । बहुरि जीवसमास मिथ्यादृष्टी विषै तौ

चौदह हैं। सासादन विषै बादर एकेंद्री, बेंद्री, तेंद्री, चौइन्द्री, सैनी, असैनी अपर्याप्त अर सैनी पर्याप्त ए सात पाइए। द्वितीयोपशम सम्यक्त्व तें पडि जो सासादन कौं प्राप्त भया होइ, ताकी अपेक्षा तहा सैनी पर्याप्त अर देव अपर्याप्त ए दोय ही जीवसमास हैं। मिश्र विषै सैनी पर्याप्त एक ही जीवसमास हे। बहुरि प्रथमोपशम सम्यक्त्व अर वेदक सम्यक्त्व ए दोऊ असयतादि अप्रमत्त पर्यंत है। तहा जीवसमास प्रथमोपशम सम्यक्त्व विषै तौ मरण नाही है, तातै एक सज्ञी पर्याप्त ही है। अर वेदक सम्यक्त्व विषै सैनी पर्याप्त वा अपर्याप्त ए दोय हैं; जातै धम्मानरक, भवनत्रिक बिना देव, भोगभूमिया मनुष्य वा तिर्यंच, इनिकै अपर्याप्त विषै भी वेदक सम्यक्त्व सभवै है।

द्वितीयोपशम सम्यक्त्व को कहै है–

बिदियुवसमसम्मत्तं, अविरदसम्मादि संतमोहो त्ति।
खइगं सम्मं च तहा, सिद्धो त्ति जिणेहिं णिद्दिट्ठं ॥६९६॥

द्वितीयोपशमसम्यक्त्वमविरतसम्यगादिशातमोह इति।
क्षायिकं सम्यक्त्वं च तथा, सिद्ध इति जिनैर्निर्दिष्टम् ॥६९६॥

टीका – द्वितीयोपशम सम्यक्त्व असयतादि उपशात कषाय पर्यंत है, जातै इस द्वितीयोपशम सम्यक्त्व कौं अप्रमत्त विषै उपजाय ऊपरि उपशातकषाय पर्यंत जाइ, नीचै पडै, तहा असयत पर्यंत द्वितीयोपशम सम्क्त्व सहित आवै, तातै असयत आदि विषै भी कह्या। तहा जीवसमास सज्ञी पर्याप्त अर देव असयत अपर्याप्त ए दोय पाइए हैं, जातै द्वितीयोपशम सम्यक्त्व विषै मरण है, सो मरि देव ही हो है। बहुरि क्षायिक सम्यक्त्व असयतादि अयोगी पर्यंत ही है। तहा जीवसमास सज्ञी पर्याप्त है। अर जाकै आयु बध हुवा होइ, ताकै धम्मा नरक, भोगभूमिया मनुष्य, तिर्यंच, वैमानिक देव, इनिका अपर्याप्त भी है, तातै दोय जीवसमास है। बहुरि सिद्ध विषै भी क्षायिक सम्यक्त्व है, असा जिनदेवने कह्या है।

सण्णी सण्णिप्पहुदी, खीणकसाओ त्ति होदि णियमेण।
थावरकायप्पहुदी, असण्णि त्ति हवे असण्णी हु ॥६९७॥

संज्ञी संज्ञिप्रभृतिः क्षीणकषाय इति भवति नियमेन।
स्थावरकायप्रभृतिः, असंज्ञीति भवेदसज्ञी हि ॥६९७॥

टीका – सञ्ज्ञी मार्गणा विषै सञ्ज्ञी जीव मिथ्यादृष्टी आदि क्षीणकषाय पर्यंत है। तहां जीवसमास सञ्ज्ञी पर्याप्त अपर्याप्त ए दोय है। बहुरि असञ्ज्ञी जीव स्थावर कायादिक असैनी पचेद्री पर्यंत मिथ्यादृष्टी गुणस्थान विषै ही है नियमकरि। तहा जीवसमास सैनी संबधी दोय बिना बारह जानने।

थावरकायप्पहुदी, सजोगिचरिमो त्ति होदि आहारी।
कम्मइय अणाहारी, अजोगिसिद्धे वि णायव्वो ॥६६८॥

स्थावरकायप्रभृतिः, सयोगिचरम इति भवति आहारी।
कार्मण अनाहारी, अयोगिसिद्धेऽपि ज्ञातव्यः ॥६९८॥

टीका – आहारमार्गणा विषै स्थावर काय मिथ्यादृष्टी आदि सयोगी पर्यंत आहारी है। तहां जीवसमास चौदह है। बहुरि मिथ्यादृष्टी, सासादन, असंयत, सयोगी इनिकै कार्माण अवस्था विषै अर अयोगी जिन अर सिद्ध भगवान इनि विषै अनाहार है। तहा जीवसमास अपर्याप्त सात, अयोगी की अपेक्षा एक पर्याप्त ए आठ है।

आगै गुणस्थाननि विषै जीवसमासनि कौ कहै है—

मिच्छे चोद्दसजीवा, सासण अयदे पमत्तविरदे य।
सण्णिदुगं सेसगुणे, सण्णीपुण्णो दु खीणो त्ति ॥६६६॥

मिथ्यात्वे चतुर्दश जीवाः, सासानायते प्रमत्तविरते च।
संज्ञिद्विकं शेषगुणे, संज्ञिपूर्णस्तु क्षीण इति ॥६९९॥

टीका – मिथ्यादृष्टी विषै जीवसमास चौदह है। सासादन विषै, अविरत विषै, प्रमत विषै चकार तै सयोगी विषै सञ्ज्ञी पर्याप्त, अपर्याप्त ए दोय जीवसमास हैं। इहा प्रमत्त विषै आहारक मिश्र अपेक्षा अर सयोगी विषै केवल समुद्घात अपेक्षा अपर्याप्तपना जानना। बहुरि अवशेष आठ गुणस्थाननि विषै अपि शब्द तै अयोगी विषै भी एक सञ्ज्ञीपर्याप्त जीवसमास है।

आगै मार्गणास्थाननि विषै जीवसमासनि कौ दिखावै है–

तिरिय-गदीए चोद्दस, हवंति सेसेसु जाण दो दो दु।
मग्गणठाणस्सेवं, णेयाणि समासठाणाणि ॥७००॥

तिर्यग्गतौ चतुर्दश, भवंति शेषेषु जानीहि द्वौ द्वौ तु ।
मार्गणास्थानस्यैवं, ज्ञेयानि समासस्थानानि ।।७००।।

टीका – तिर्यंचगति विषै जीवसमास चौदह हैं । अवशेष गतिनि विषै संज्ञी पर्याप्त वा अपर्याप्त ए दोय दोय जीवसमास जानने । ऐसे मार्गणास्थानकनि विषै यथायोग्य पूर्वोक्त अनुक्रम करि जीवसमास जानने ।

आगे गुणस्थाननि विषै पर्याप्ति वा प्राण कहैं हैं–

पज्जत्ती पाणा वि य, सुगमा भाविंदियं ण जोगिम्हि ।
तहि वाचुस्सासाउगकायत्तिगदुगमजोगिणो आऊ ।।७०१।।

पर्याप्तयः प्राणा अपि च, सुगमा भावेंद्रियं न योगिनि ।
तस्मिन् वागुच्छ्वासायुष्ककायत्रिकद्विकमयोगिन आयुः ।।७०१।।

टीका – चौदह गुणस्थाननि विषै पर्याप्ति अर प्राण जुदे न कहिए है, जातै सुगम है । तहा क्षीणकषाय पर्यंत तौ छहौ पर्याप्ति हैं, दशौ प्राण है । बहुरि सयोगी जिन विषै भावेद्रिय तौ है नाही, द्रव्येन्द्रिय की अपेक्षा छह पर्याप्ति हैं । बहुरि सयोगी के प्राण च्यारि है – १ वचनबल, २ सासोस्वास, ३ आयु, ४ कायबल ए च्यारि हैं। अवशेष पचेद्रिय अर मन ए छह प्राण नाही हैं । तहा वचनबल का अभाव होतै तीन ही प्राण रहै है । उस्वास निश्वास का अभाव होतै दोय ही रहै हैं । बहुरि अयोगी विषै एक आयु प्राण ही रहे है । तहा पूर्वै सचित भया था, जो कर्मनोकर्म का स्कध, सो समय समय प्रति एक एक निषेक गलतै अवशेष द्वयर्धगुणहानि करि गुणित समयप्रबद्ध प्रमाण सत्व रह्या, सो द्रव्यार्थिक नय करि तौ अयोगी का अतसमय विषै नष्ट हो है । पर्यायार्थिक नय करि ताके अनतर समय विषै नष्ट हो है – यह तात्पर्य है ।

आगे गुणस्थाननि विषै सज्ञा कहै हैं–

छट्ठो त्ति पढमसण्णा, सकज्ज सेसा य कारणावेक्खा ।
पुव्वो पढमणियट्टी, सुहुमो त्ति कमेण सेसाओ ।।७०२।।

षष्ठ इति प्रथमसंज्ञा, सकार्या शेषाश्च कारणापेक्षाः ।
अपूर्वः प्रथमानिवृत्तिः, सूक्ष्म इति क्रमेण शेषाः ।।७०२।।

टीका – मिथ्यादृष्टी आदि प्रमत्तपर्यंत अपना कार्यसहित च्यार्यो सज्ञा है। तहां छठे गुणस्थानि आहार सज्ञा का विच्छेद हूवा, अवशेष तीन सज्ञा अप्रमत्तादि विषै है, सो तिनिका निमित्तभूत कर्म पाइए है। तहा ताकी अपेक्षा है, कार्य रहित है, सो अपूर्वकरण पर्यंत तीन सज्ञा है। तहा भय सज्ञा का विच्छेद भया। अनिवृत्तिकरण का प्रथम सवेदभाग पर्यंत मैथुन, परिग्रह दोय सज्ञा है। तहा मैथुन सज्ञा का विच्छेद भया। सूक्ष्मसापराय विषैं एक परिग्रह सज्ञा रही। ताका तहा ही विच्छेद भया। ऊपरि उपशात कषायादिक विषै कारण का अभाव तै कार्य का भी अभाव है। तातै कार्य रहित भी सर्व संज्ञा नाही है।

मग्गण उवजोगा वि य, सुगमा पुव्वं परूविदत्तादो।
गदिआदिसु मिच्छादी, परूविदे रूविदा होंति ॥७०३॥

मार्गणा उपयोगा अपि च, सुगमाः पूर्वं प्ररूपितत्वात्।
गत्यादिषु मिथ्यात्वादौ, प्ररूपिते रूपिता भवंति ॥७०३॥

टीका – गुणस्थानकनि विषै चौदह मार्गणा अर उपयोग लगाना सुगम है, जातै पूर्वै प्ररूपण करि आए हैं। मार्गणानि विषै गुणस्थान वा जीवसमास कहे। तहा ही कथन आय गया, तथापि मदबुद्धिनि के समझने के निमित्त बहुरि कहिए है। नरकादि गतिनामा नामकर्म के उदय तै उत्पन्न भई पर्याय, ते गति कहिए, सो मिथ्यादृष्टी विषै च्यार्यो नारकादि गति, पर्याप्त वा अपर्याप्त है। सासादन विषै नारक अपर्याप्त नाही, अवशेष सर्व है। मिश्र विषै च्यार्यो गति पर्याप्त ही हैं। असयत विषै धम्मानारक तौ पर्याप्त अपर्याप्त दोऊ है। अवशेष नारक पर्याप्त ही है। बहुरि भोगभूमिया तिर्यंच वा मनुष्य अर कर्मभूमिया मनुष्य अर वैमानिक देव तौ पर्याप्त वा अपर्याप्त दोऊ है। अर कर्मभूमिया तिर्यंच अर भवनत्रिक देव ए पर्याप्त ही चतुर्थ गुणस्थान विषै पाइए हैं। बहुरि देशसंयत विषै कर्मभूमिया तिर्यंच वा मनुष्य पर्याप्त ही है। बहुरि प्रमत्त विषैं मनुष्य पर्याप्त ही है, आहारक सहित पर्याप्त, अपर्याप्त दोऊ है। बहुरि प्रमत्तादि क्षीणकषाय पर्यंत मनुष्य पर्याप्त ही है, सयोगी विषै पर्याप्त वा समुद्घात अपेक्षा अपर्याप्त है। अयोगी पर्याप्त ही है।

बहुरि एकेंद्रियादिक जातिनामा नामकर्म के उदय तै निपज्या जीव कै पर्याय सो इन्द्रिय है। तिनकी मार्गणा एकेंद्रियादिक पंच है। ते मिथ्यादृष्टी विषै तौ पाचौं

पर्याप्त वा अपर्याप्त है । सासादन विषै अपर्याप्त तौ पाचौं पाइए अर पर्याप्त एक पचेद्रिय पाइए है । मिश्र विषै पर्याप्त पचेद्रिय ही है । असयत विषै पर्याप्त वा अपर्याप्त पचेद्री है । देशसयत विषै पर्याप्त पचेद्री ही है । प्रमत्त विषै आहारक अपेक्षा दोऊ है । अप्रमत्तादि क्षीणकषाय पर्यंत एक पचेद्रिय पर्याप्त ही है । सयोगी विषै पर्याप्त है, समुद्घात अपेक्षा दोऊ हैं । अयोगी विषै पर्याप्त ही पचेद्रिय हैं ।

पृथ्वीकायादिक विशेष कौ लीए एकेंद्रिय जाति अर स्थावर नामा नामकर्म का उदय अर त्रस नामा नामकर्म का उदय तै निपजे जीव के पर्याय ते काय कहिए, ते छह प्रकार है । तहा मिथ्यादृष्टी विषै तौ छहौ पर्याप्त वा अपर्याप्त हैं । सासादन विषै बादर पृथ्वी, अप, वनस्पती ए स्थावर अर त्रस विषै बेद्री, तेंद्री, चौंद्री, असैनी पचेंद्री ए तौ अपर्याप्त ही है । अर सैनी त्रस काय पर्याप्त, अपर्याप्त दोऊ हैं । आगै सज्ञी पचेद्रिय त्रस काय ही हैं, तहा मिश्र विषै पर्याप्त ही हैं । अविरत विषै दोऊ हैं। देशसयत विषै पर्याप्त ही है । प्रमत्त विषै पर्याप्त है । आहारक सहित दोऊ हैं । अप्रमत्तादि क्षीणकषाय पर्यंत पर्याप्त ही हैं, सयोगी विषै पर्याप्त ही है । समुद्घात सहित दोऊ है । अयोगी विषै पर्याप्त ही है ।

पुद्गल विपाकी शरीर अर अगोपाग नामा नामकर्म के उदय तै मन, वचन, काय करि सयुक्त जो जीव, ताके कर्म नोकर्म आवने कौ कारण जो शक्ति वा ताकरि उत्पन्न भया जो जीव के प्रदेशनि का चचलपना, सो योग है । सो मन-वचन-काय भेद तै तीन प्रकार है । तहा वीर्यांतराय अर नोइन्द्रियावरण कर्म, तिनके क्षयोपशम करि अगोपाग नामकर्म के उदय करि मनःपर्याप्ति सयुक्त जीव कै मनोवर्गणारूप जे पुद्गल आए, तिनिका आठ पाखडी का कमल के आकार हृदय स्थानक विषै जो निर्माण नामा नामकर्म तै निपज्या, सो द्रव्य मन है । तहा जो कमल की पाखडीनि का अग्रभागनि विषै नोइन्द्रियावरण का क्षयोपशमयुक्त जीव का प्रदेश समूह है, तिनिविषै लब्धि उपयोग लक्षण कौ धरै, भाव मन है । ताका जो परिणमन, सो मनोयोग है। सो सत्य, असत्य, उभय, अनुभय रूप विषय के भेद तै च्यारि प्रकार है। बहुरि भाषापर्याप्ति करि सयुक्त जो जीव, ताकै शरीर नामा नामकर्म के उदय करि अर स्वरनामा नामकर्म का उदय का सहकारी कारण करि भाषावर्गणारूप आए जे पुद्गल स्कध तिनिका च्यारि प्रकार भाषारूप होइ परिणमन, सो वचन योग है। सो वचन योग भी सत्यादिक पदार्थनि का कहनहारा है, तातै च्यारि प्रकार है ।

बहुरि औदारिक, वैक्रियिक, आहारक शरीर नामा नामकर्म के उदय करि आहार वर्गणारूप आए जे पुद्गल स्कंध, तिनिका निर्माण नामा नामकर्म के उदय करि निपज्या जो शरीर, ताके परिणमन के निमित्त तै जीव का प्रदेशनि का जो चचल होना, सो औदारिक आदि काय योग है । बहुरि शरीरपर्याप्ति पूर्ण न होइ तावत् एक समय घाटि अतर्मुहूर्त पर्यंत, तिनके मिश्र योग है । इहा मिश्रपना कह्या है, सो औदारिकादिक नोकर्म की वर्गणानि का आहरण आप ही तै न हो है, कार्माण वर्गणा का सापेक्ष लीए है, तातै कह्या है । बहुरि विग्रह गति विषै औदारिकादिक नोकर्म की वर्गणानि का तौ ग्रहण है नाही, कार्माण शरीर नामा नामकर्म का उदय करि कार्माण वर्गणारूप आए जे पुद्गल स्कंध, तिनिका ज्ञानावरणादिक कर्म पर्याय करि जीव के प्रदेशनि विषै बध होतै भया जो जीव के प्रदेशनि का चचलपना, सो कार्माण काययोग है । असै ए पद्रह योग है ।

तिसु तेरं दस मिस्से, सत्तसु णव छट्ठयम्मि एगारा ।
जोगिम्मि सत्त जोगा, अजोगिठाणं हवे सुण्णं ॥७०४॥

त्रिषु त्रयोदश दश मिश्रे, सप्तसु नव षष्ठे एकादश ।
योगिनि सप्त योगा, अयोगिस्थानं भवेत् शून्यम् ॥७०४॥

टीका – कहे पद्रह योग, तिनि विषै मिथ्यादृष्टी, सासादन, असयत इन तीनों विषै तेरह तेरह योग है, जातै आहारक, आहारकमिश्र, प्रमत्त बिना अन्यत्र नाही हैं। बहुरि मिश्र विषै औदारिक मिश्र, वैक्रियिकमिश्र, कार्माण ए तीनो भी नाही; तातै दश ही है । बहुरि ऊपरि सात गुणस्थानकनि विषै वैक्रियिक योग भी नाही है, तातै प्रमत्त विषै तौ आहारकद्विक के मिलने तै ग्यारह योग है, औरनि विषै नव नव योग है । बहुरि सयोगी विषै सत्य-अनुभय मनोयोग, सत्य-अनुभय वचनयोग, औदारिक, औदारिकमिश्र, कार्माण ए सात योग है । अयोगी गुणस्थान विषै योग नाही तातै शून्य है । बहुरि स्त्री, पुरुष, नपुसक वेदनि करि उदय करि वेद हो है, ते तीनौ अनिवृत्तिकरण के सवेदभाग पर्यंत है, ऊपरि नाही ।

बहुरि क्रोधादिक च्यारि कषायनि का यथायोग्य अनतानुबधी इत्यादि रूप उदय होत संतै क्रोध, मान, माया, लोभ हो हैं । तहा मिथ्यादृष्टी सासादन विषै तौ अनतानुबंधी आदि च्यारि च्यारि प्रकार है । मिश्र असयत विषै अनतानुबधी विना

तीनतीन प्रकार है। देशसयत विषै अप्रत्याख्यान विना दोय दोय प्रकार है। प्रमत्तादि अनिवृत्तिकरण का दूसरा भागपर्यंत सज्वलन क्रोध है। तीसरा भाग पर्यंत मान है। चौथा भाग पर्यंत माया है। पचम भाग पर्यंत बादर लोभ है। सूक्ष्मसापराय विषै सूक्ष्म लोभ है। ऊपर सर्व कषाय रहित है।

मति, श्रुत, अवधि, मन पर्ययज्ञानावरण के क्षयोपशम तै मति आदि ज्ञान हो है। केवल ज्ञानावरण के समस्त क्षय तै केवलज्ञान हो है। मिथ्यात्व का उदय करि सहवर्ती असै मति, श्रुत, अवधि ज्ञानावरण के क्षयोपशम तै कुमति, कुश्रुत, विभग ज्ञान हो है, सो सर्व मिलि आठ ज्ञान भए। तहा मिथ्यादृष्टी सासादन विषै तौ तीन कुज्ञान हैं। मिश्र विषै तीन कुज्ञान वा सुज्ञान मिश्ररूप है। अविरत अर देशसयत विषै मति, श्रुत, अवधि ए आदि के तीन सुज्ञान हैं। प्रमत्तादि क्षीणकषायपर्यंत विषै मन·पर्यय सहित आदिक के च्यारि सुज्ञान है। सयोगी, अयोगी विषै एक केवलज्ञान है।

बहुरि सज्वलन की चौकडी अर नव नोकषाय इनके मद उदय करि व्रत का धारना, समिति का पालना, कषाय का निग्रह, दड का त्याग, इद्रियनि का जय असै भावरूप सयम हो है। सो सयम सामान्यपनै एक सामायिक स्वरूप है, जातै **सर्वसावद्ययोगविरतोऽस्मि'** मैं सर्व पाप सहित योग का त्यागी हू, असै भाव विषै सर्व गर्भित भए। विशेषपनै असयम, देशसयम, सामायिक, छेदोपस्थापना, परिहारविशुद्धि, सूक्ष्मसापराय, यथाख्यात भेद तै सात प्रकार है। तहा असयत पर्यंत च्यारि गुणस्थाननि विषै असयम ही है। देशसयत विषै देशसयम है। प्रमत्तादिक अनिवृत्तिकरण पर्यंत सामायिक, छेदोपस्थापना है। प्रमत्त-अप्रमत्त विषै परिहार विशुद्धि भी है। सूक्ष्मसापराय विषै सूक्ष्मसापराय है। उपशात कषायादिक विषै यथाख्यात सयम है।

बहुरि चक्षु, अचक्षु, अवधि दर्शनावरण के क्षयोपशम तै अर केवलदर्शनावरण के समस्त क्षय तै चक्षु, अचक्षु, अवधि, केवल दर्शन हो है। तहा मिश्रगुणस्थान पर्यंत तौ चक्षु, अचक्षु, दोय दर्शन है। असयतादि क्षीणकषाय पर्यंत विषै चक्षु, अचक्षु, अवधि तीन दर्शन है। सयोग, अयोग अर सिद्ध विषै केवल दर्शन है।

कषाय के उदय करि अनुरजित असी मन, वचन, कायरूप योगनि की प्रवृत्ति सो लेश्या है। सो शुभ-अशुभ के भेद तै दोय प्रकार है। तहा अशुभलेश्या कृष्ण, नील, कपोत भेद तै तीन प्रकार है। शुभ लेश्या तेज, पद्म, शुक्लभेद तै तीन प्रकार

है। तहा असयत पर्यंत तौ छहौ लेश्या है। देशसयतादि अप्रमत्त पर्यंत विषै तीन शुभ-लेश्या ही है। अपूर्वकरणादि सयोगी पर्यंत विषै शुक्ललेश्या ही है। अयोगी, योग के अभाव तै लेश्या रहित है।

सामग्रीविशेष करि रत्नत्रय वा अनंत चतुष्टयरूप परिणमने कौं योग्य, सो भव्य कहिए। परिणमने को योग्य नाही, सो अभव्य कहिए। इहा अभव्य राशि जघन्य युक्तानन्त प्रमाण है। संसारी राशि मे इतना घटाए, अवशेष रहै, तितने भव्य सिद्ध हैं। सो भव्य तीन प्रकार – १ आसन्नभव्य, २ दूरभव्य, ३ अभव्यसमभव्य। जे थोरे काल मे मुक्त होने योग्य होइ, ते आसन्नभव्य है। जे बहुत काल मे मुक्त होने होइ, ते दूर भव्य है। जे त्रिकाल विषै मुक्त होने के नाही, केवल मुक्त होने की योग्यता ही कौ धरै हैं, ते अभव्यसम भव्य है। सो इहा मिथ्यादृष्टी विषै भव्य-अभव्य दोऊ हैं। सासादनादि क्षीणकषायपर्यंत विषै एक भव्य ही है। सयोग-अयोग विषै भव्य अभव्य का उपदेश नाही है।

बहुरि अनादि मिथ्यादृष्टी जीव क्षयोपशमादिक पचलब्धि का परिणामरूप परिणया। तहा मिथ्यादृष्टी ही विषै करण कीए, तहा अनिवृत्तिकरण का अंत समय विषै अनतानुबधी अर मिथ्यात्व इनि पचनि का उपशम करि ताके अनतर समय विषै मिथ्यात्व का ऊपरि के वा नीचे के निषेक छोडि, बीचि के निषेकनि का अभाव करना, सो अतर कहिए, सो अतर्मुहूर्त के जेते समय तितने निषेकनि का अभाव अनिवृत्तिकरण विषै ही कीया था, सो तिनि निषेकनिरूप जो अतरायाम सबधी अतर्मुहूर्त काल, ताका प्रथम समय विषै प्रथमोपशम सम्यक्त्व कौ पाइ असयत हो है। वा प्रथमोपशम सम्यक्त्व अर देशव्रत, इनि दोऊनि कौ युगपत् पाइ करि देशसयत हो है। अथवा प्रथमोपशम सम्यक्त्व अर महाव्रत, इनि दोऊनि कौ युगपत् पाइ करि अप्रमत्तसयत हो है। तहा तिस पावने के प्रथम समय तै लगाइ, अतर्मुहूर्त ताईं गुण सक्रमण विधान करि मिथ्यात्वरूप द्रव्यकर्म कौं गुणसक्रमण भागहार करि घटाइ घटाइ तीन प्रकार करै है। गुणसक्रमण विधान अर गुणसक्रमण भागहार का कथन आगे करैगे, तहा जानना। सो मिथ्यात्व प्रकृति रूप अर सम्यक्त्वमिथ्यात्व प्रकृतिरूप वा सम्यक्त्व प्रकृतिरूप असैं एक मिथ्यात्व तीन प्रकार तहां कीजिए है; सो इनि तीनो का द्रव्य जो परमाणूनि का प्रमाण, सो असख्यात गुणा, असख्यात गुणा घाटि अनुक्रम तै जानना।

इहा प्रश्न – जो मिथ्यात्व कौ मिथ्यात्व प्रकृतिरूप कहा कीया ?

ताकां समाधान – पूर्वे जो उस मिथ्यात्व की स्थिति थी, तामै अतिस्थापनावली मात्र घटावै है, सो अतिस्थापनावली का भी स्वरूप आगै कहैगे। जो अप्रमत्त गुणस्थान कौं प्राप्त हो हैं, सो अप्रमत्तस्यो-प्रमत्त मे अर प्रमतस्यो-अप्रमत्त मे सख्यात हजार बार आवै जाय है। तातै प्रथमोपशम सम्यक्त्व प्रमत्त विषै भी कहिए ते ए च्यार्यो गुणस्थानवर्ती प्रथमोपशमसम्यक्त्व का अतर्मुहूर्त काल विषै जघन्य एक समय उत्कृष्ट छह आवली अवशेप रहै, अर तहा अनतानुबधी की किसी प्रकृति का उदय होइ तौ सासादन होइ। बहुरि जो भव्यता गुण का विशेष करि सम्यक्त्व गुण का नाश न होइ तौ उस उपशम सम्यक्त्व का काल कौ पूर्ण होते सम्यक्त्व प्रकृति के उदय तै वेदक सम्यग्दृष्टी हो है। बहुरि जो मिश्र प्रकृति का उदय होइ, तौ सम्यग्मिथ्यादृष्टी हो है। बहुरि जो मिथ्यात्व ही का उदय आवै तो मिथ्यादृष्टी ही होइ जाइ।

बहुरि द्वितीयोपशम सम्यक्त्व विषै विशेष है, सो कहा ?

उपशम श्रेणी चढने के निमित्त कोई सातिशय अप्रमत्त वेदक सम्यग्दृष्टी तहा अप्रमत्त विषे तीन करण की सामर्थ्य करि अनतानुबंधी का प्रशस्तोपशम बिना अप्रशस्तोपशम करि ऊपरि के जे निषेक, जिनिका काल न आया है, ते तौ हैं ही, जे नीचे के निषेक अनतानुबधी के हैं, तिनिकौ उत्कर्षण करि ऊपरि के निषेकनि विषै प्राप्त करै है वा विसयोजन करि अन्य प्रकृतिरूप परिणमावै है, असै क्षपाइ दर्शनमोह की तीन प्रकृति, तिनिका बीचि के निषेकनि का अभाव करने रूप अतरकरण करि अतर कीया। बहुरि उपशमविधान करि दर्शनमोह की प्रकृतिनि कौ उपशमाइ, अतर कीए निषेक सबधी अतर्मुहूर्त काल का प्रथम समय विषै द्वितीयोपशम सम्यग्दृष्टी होइ, उपशम श्रेणी कौ चढि, क्रम तै उपशात कषाय पर्यंत जाइ, तहा अतर्मुहूर्त काल तिष्ठि करि, अनुक्रम तै एक एक गुणस्थान उतरि करि, अप्रमत्त गुणस्थान को प्राप्त होइ, तहा अप्रमत्त स्यो प्रमत्त मे वा प्रमत्त स्यो अप्रमत्त मे हजारा बार आवै जाइ, तहास्यो नीचै देशसयत होइ, तहा तिष्ठै, वा असयत होइ तहा तिष्ठै। अथवा जो ग्यारह्वा आदि गुणस्थाननि विषै मरण होइ, तौ तहा स्यो अनुक्रम बिना देव पर्यायिरूप असयत हो है। वा मिश्र प्रकृति के उदय तै मिश्र गुणस्थानवर्ती हो है वा अनतानुबधी के उदय होतै द्वितीयोपशम सम्यक्त्व कौं विराधै है, असी किसी आचार्य की पक्ष की अपेक्षा सासादन हो है। वा मिथ्यात्व का उदय करि मिथ्या-

दृष्टी हो है । बहुरि असयतादिक च्यारि गुणस्थानवर्ती जे मनुष्य, बहुरि असयत, देश-सयत गुणस्थानवर्ती उपचार महाव्रत जिनके पाइए है, असी आर्या स्त्री, ते कर्मभूमि के उपजे असे वेदक सम्यक्त्वी होइ, तिनहीके केवली श्रुतकेवली दोन्यो विषै किसी का चरण के निकटि सात प्रकृति का सर्वथा क्षय होते क्षायिक सम्यक्त्व हो है, सो असे सम्यक्त्व का विधान कह्या ।

सो सम्यक्त्व सामान्यपनै एक प्रकार है। विशेषपनै १ मिथ्यात्व, २ सासादन ३ मिश्र, ४ उपशम, ५ वेदक, ६ क्षायिक भेद तै छह प्रकार है। तहा मिथ्यादृष्टी विषै तो मिथ्यात्व ही है । सासादन विषै सासादन है । मिश्र विषै मिश्र है। असयतादिक अप्रमत्त पर्यंत विषै उपशम (औपशमिक), वेदक, क्षायिक तीन सम्यक्त्व है । अपूर्व-करणादि उपशांत कषाय पर्यंत उपशमश्रेणी विषै उपशम, क्षायिक दोय सम्यक्त्व है। क्षपक श्रेणीरूप अपूर्वकरणादिक सिद्ध पर्यंत एक क्षायिक सम्यक्त्व ही है ।

बहुरि नो इंद्रिय, जो मन, ताके आवरण के क्षयोपशम तै भया जो ज्ञान, ताकौं सज्ञा कहिए । सो जिसके पाइए, सो सज्ञी है । जाकै न पाइए अर यथासभव अन्य इन्द्रियनि का ज्ञान पाइए, सो असज्ञी है । तहा सज्ञी मिथ्यादृष्टि आदि क्षीण कषाय पर्यंत है । असज्ञी मिथ्यादृष्टी विषै ही है । सयोग अयोग विषै मन-इन्द्रिय सम्बन्धी ज्ञान नाही है; तातै सज्ञी-असज्ञी न कहिए है ।

बहुरि शरीर अर अगोपाग नामा नामकर्म के उदय तै उत्पन्न भया जो शरीर वचन, मन रूप नोकर्म वर्गणा का ग्रहण करना, सो आहार है । विग्रहगति विषै वा प्रतर लोक पूर्ण सहित सयोगी विषै वा अयोगी विषै वा सिद्ध विषै अनाहार है, तातै मिथ्यादृष्टी, सासादन, असयत, सयोगी इनि विषै तौ दोऊ है । अवशेष नव गुण-स्थान विषै आहार ही है । अयोगी विषै वा सिद्ध विषै अनाहार ही है ।

गुणस्थाननि विषै उपयोग कहै है –

दोण्हं पंच य छच्चेव, दोसु मिस्सम्मि होंति वामिस्सा ।
सत्तुवजोगा सत्तसु, दो चेव जिणे य सिद्धे य ।।७०५।।

द्वयोः पंच च षट्चैव, द्वयोर्मिश्रे भवंति व्यामिश्राः ।
सप्तोपयोगाः सप्तसु, द्वौ चैव जिने च सिद्धे च ।।७०५।।

टीका – गुण पर्यायवान् वस्तु है, ताके ग्रहणरूप जो व्यापार प्रवर्तन, सो उपयोग है। ज्ञान है, सो जानने योग्य जो वस्तु, तातै नाही उपजै हैं। सो कह्या है –

स्वहेतुजनितोऽप्यर्थः, परिच्छेद्यः स्वतो यथा ।
तथा ज्ञानं स्वहेतूत्थं, परिच्छेदात्मकं स्वतः ।।१।।

याका अर्थ – जैसे वस्तु अपने ही उपादान कारण तै निपज्या, आपही तै जानने योग्य है। तैसे ज्ञान अपने ही उपादान कारण तै निपज्या, आपही तै जानने-हारा है। बहुरि ज्ञेय पदार्थ अर प्रकाशादिक ए ज्ञानका कारण नाही, जातै ए तौ ज्ञेय है। जैसे अधकार ज्ञेय है, तैसे ए भी ज्ञेय है – जानने योग्य हैं। जानने कौं कारण नाही, असा जानना। बहुरि सो उपयोग ज्ञान दर्शन के भेद तै दोय प्रकार है। तहा कुमति, कुश्रुत, विभग, मति, श्रुत, अवधि, मनःपर्यय, केवल भेद तै ज्ञानोपयोग आठ प्रकार है। चक्षु, अचक्षु, अवधि, केवल भेद तै दर्शनोपयोग च्यारि प्रकार है। तहा मिथ्यादृष्टी सासादन विषै तो कुमति, कुश्रुत, विभग ज्ञान, चक्षु, अचक्षु, दर्शन ए पाच उपयोग हैं। बहुरि मिश्रविषै मिश्ररूप मति, श्रुत, अवधि ज्ञान, चक्षु, अचक्षु, अवधि दर्शन, ए छह उपयोग हैं। असयत देशसयत विषै मति, श्रुत, अवधिज्ञान, चक्षु, अचक्षु, अवधिदर्शन ए छह उपयोग है। प्रमत्तादि क्षीणकषाय पर्यंत विषै तेई मन-पर्यय सहित सात उपयोग है। सयोगी, अयोगी, सिद्ध विषै केवलज्ञान केवलदर्शन ए दोय उपयोग है।

इति आचार्य श्रीनेमिचन्द्र विरचित गोम्मटसार द्वितीय नाम पचसग्रह ग्रथ की जीवतत्त्व प्रदीपिका नाम सस्कृत टीका के अनुसार सम्यग्ज्ञान चन्द्रिका नामा भाषाटीका विषै प्ररूपित जे बीस प्ररूपणा, तिनिविषै गुणस्थाननिविषै बीस प्ररूपणा निरूपण नामा इकवीसवा अधिकार सम्पूर्ण भया ।।२१।।

———

बाईसवां अधिकार : आलापाधिकार

सुरनर गणपति पूज्यपद, बहिरंतर श्री धार ।
नेमि धर्मरथनेमिसम, भजौं हौंहु श्रीसार ।।२२।।

आगे आलाप अधिकार कौं अपने इष्टदेव को नमस्कार पूर्वक कहनेकौ प्रतिज्ञा करे हैं –

गोयमथेरं पणमिय, ओघादेसेसु वीसभेदाणं ।
जोजणिकाणालावं, वोच्छामि जहाकमं सुणह ।।७०६।।

गौतमस्थविरं प्रणम्य, ओघादेशयोर्विंशभेदानाम् ।
योजनिकानामालापं, वक्ष्यामि यथाक्रमं शृणुत ।।७०६।।

टीका – विशिष्ट जो **गो** कहिए भूमि, आठवी पृथ्वी, सो है स्थविर कहिए सास्वती, जाकै असा सिद्धसमूह, अथवा गौतम है स्थविर कहिए गणधर जाके असा वर्धमान स्वामी अथवा विशिष्ट है **गो** कहिए वाणी जाकी असा स्थविर कहिए मुनि-समूह, सो असे जु गौतम स्थविर ताहि **प्रणम्य** नमस्कार करिकै ओघ जो गुणस्थान अर आदेश जो मार्गणास्थान, इनिविषै जोडनेरूप जो गुणस्थानादिक बीस प्ररूपणा, तिनिका आलाप, ताहि यथाक्रम कहौगा, सो सुनहु । जहा बीस प्ररूपणा प्ररूपिए, असे विवक्षित स्थाननि का कहना ताका नाम आलाप जानना । सो कहै है –

ओघे चोदसठाणे, सिद्धे वीसदिविहाणमालावा ।
वेदकसायविभिण्णे, अणियट्टीपंचभागे य ।।७०७।।

ओघे चतुर्दशस्थाने, सिद्धे विंशतिविधानामालापाः ।
वेदकषायविभिन्ने, अनिवृत्तिपंचभागे च ।।७०७।।

टीका – ओघ जो गुणस्थान अर चौदह मार्गणास्थान ए परमागम विषै प्रसिद्ध है । सो इनिविषै **गुणजीवा पज्जत्ती** इत्यादिक बीस प्ररूपणानि का सामान्य पर्याप्त, अपर्याप्त ए तीन आलाप हो है । बहुरि वेद अर कषाय करि है भेद जिनि विषै असे अनिवृत्तिकरण के पंच भाग तिनिविषै आलाप जुदे-जुदे जानने ।

तहा गुणस्थाननि विषै कहै हैं –

ओघे मिच्छदुगे वि य, अयदपमत्ते सजोगिठाणम्मि ।
तिण्णेव य आलावा, सेसेसिक्को हवे णियमा ॥७०८॥

ओघे मिथ्यात्वद्विकेऽपि च, अयतप्रमत्तयोः सयोगिस्थाने ।
त्रय एव चालापाः, शेषेष्वेको भवेन्नियमात् ॥७०८॥

टीका – गुणस्थाननि विषै मिथ्यादृष्टी, सासादन, असयत, प्रमत्त, सयोगी इनि विषै तीन तीन आलाप हैं । अवशेष गुणस्थाननि विषै एक पर्याप्त आलाप है नियमकरि ।

इस ही अर्थ कौं प्रकट करै हैं –

सामण्णं पज्जत्तमपज्जत्तं, चेदि तिण्णि आलावा ।
दुवियप्पमपज्जत्तं, लद्धी णिव्वत्तगं चेदि ॥७०९॥

सामान्यः पर्याप्तः, अपर्याप्तश्चेति त्रय आलापा ।
द्विविकल्पोऽपर्याप्तो, लब्धिर्निर्वृत्तिकश्चेति ॥७०९॥

टीका – ते आलाप तीन है, सामान्य, पर्याप्त, अपर्याप्त । जहा पर्याप्त-अपर्याप्त दोऊ का समुदायरूप सामान्यपनै ग्रहण कीजिए, सो सामान्य आलाप है । बहुरि जहा पर्याप्त ही का ग्रहण होइ, सो पर्याप्त आलाप है । जहा अपर्याप्त ही का ग्रहण होइ, तहा अपर्याप्तालाप है । तहा अपर्याप्तालाप दोय प्रकार है – एक लब्धि अपर्याप्त १, एक निर्वृत्ति अपर्याप्त । जाका क्षुद्रभव प्रमाण आयु होइ, पर्याप्ति पूर्ण भए पहिलै ही मरण कौ प्राप्त होइ, सो लब्धि अपर्याप्त है । बहुरि जाकै शरीर पर्याप्ति पूरण होगा यावत् पूर्ण न हुआ होइ, तावत् निर्वृत्ति अपर्याप्त है ।

दुविहं पि अपज्जत्तं, ओघे मिच्छेव होदि णियमेण ।
सासणअयदपमत्ते, णिव्वत्तिअपुण्णगो होदि ॥७१०॥

द्विविधोप्यपर्याप्त, ओघे मिथ्यात्व एव भवंति नियमेन ।
सासादनायतप्रमत्तेषु निर्वृत्यपूर्णको भवति ॥७१०॥

टीका – सो दोऊ प्रकार अपर्याप्त आलाप सामान्य मिथ्यादृष्टी विषै ही पाइए है। बहुरि सासादन, असयत, प्रमत्त विषै निर्वृत्ति अपर्याप्त ही आलाप है।

जोगं पडि जोगिजिणे, होदि हु णियमा अपुण्णगत्तं तु।
अवसेस-णव-ट्ठाणे, पज्जत्तालावगो एक्को ॥७११॥

योगं प्रति योगिजिने, भवति हि नियमादपूर्णकत्वं तु।
अवशेषनवस्थाने पर्याप्तालापक एकः ॥७११॥

टीका – सयोगीजिन विषै नियमकरि योगनि की अपेक्षा ही अपर्याप्त आलाप है। अैसै अपर्याप्त आलाप विषै विशेष है, सो इनि पंच गुणस्थाननि विषै तौ तीनूं आलाप है। बहुरि अवशेष नव गुणस्थान रहे, तिनिविषै एक पर्याप्त आलाप ही है।

आगै चौदह मार्गणा स्थानकनि विषै कहै है–

सत्तण्हं पुढवीणं, ओघे मिच्छे य तिण्णि आलावा।
पढमाविरदे वि तहा, सेसाणं पुण्णगालावो ॥७१२॥

सप्तानां पृथिवीनां, ओघे मिथ्यात्वे च त्रय आलापाः।
प्रथमाविरतेऽपि तथा, शेषाणां पूर्णकालापाः ॥७१२॥

टीका – नरकगति विषै सामान्यपनै सप्तपृथ्वी सबधी मिथ्यादृष्टी विषै तीन आलाप है। अर तैसै ही प्रथम पृथ्वी संबधी असयत विषै तीन आलाप है। जो नर-कायु पहिले बाध्या होइ, अैसा वेदक, क्षायिक सम्यग्दृष्टी जीव सो तहा ही प्रथम पृथ्वी विषै उपजै है। बहुरि अवशेष पृथ्वी सबधी अविरत अर सर्व पृथ्वी का सासा-दन, मिश्र, इनकै एक पर्याप्त आलाप ही है।

तिरियचउक्काणोघे, मिच्छदुगे अविरदे य तिण्णेव।
णवरि य जोणिणि अयदे, पुण्णो सेसे वि पुण्णो दु ॥७१३॥

तिर्यक्चतुष्काणामोघे, मिथ्यात्वद्विके अविरते च त्रय एव।
नवरि च योनिन्ययते, पूर्णः शेषेऽपि पूर्णस्तु ॥७१३॥

टीका – तिर्यंच पंच प्रकार। सर्व भेद जामै गर्भित अैसा सामान्य तिर्यंच। बहुरि जाकै पाचो इन्द्रिय पाइए अैसा पचेंद्री तिर्यंच। बहुरि जो पर्याप्त अवस्था कौं

धारै सो पर्याप्त तिर्यंच। बहुरि जो स्त्रीवेदरूप है, सो योनिमत तिर्यंच। जो लब्धि अपर्याप्त अवस्था कौं धारै सो लब्धि अपर्याप्त तिर्यंच।

तहा सामान्यादिक चारि प्रकार तिर्यंचनि कै पच गुणस्थान पाइए। तहा मिथ्यादृष्टी, सासादन, अविरत विषै तीन तीन आलाप हैं। तहा इतना विशेष है- योनिमत तिर्यंच कै अविरत विषै एक पर्याप्त आलाप ही है, जातै जो पहिलै तिर्यंच आयु बाध्या होइ तो भी सम्यग्दृष्टी स्त्रीवेद नपुसकवेद विषै न उपजै। बहुरि मिश्र वा देशविरत विषै पर्याप्त आलाप ही है।

तेरिच्छियलद्धियपज्जत्ते, एक्को अपुण्ण आलावो।
मूलोघं मणुसतिए, मणुसिणिअयदम्हि पज्जत्तो ॥७१४॥

तिर्यग्लब्ध्यपर्याप्ते, एक अपूर्ण आलापः।
मूलोघं मनुष्यत्रिके, मानुष्ययते पर्याप्तः ॥७१४॥

टीका – लब्धि अपर्याप्त तिर्यंच विषै एक अपर्याप्त आलाप ही है।

बहुरि मनुष्य च्यारि प्रकार - तहा सर्वभेद जामे गर्भित होइ असा सामान्य मनुष्य। बहुरि जो पर्याप्त अवस्था कौ धारै, सो पर्याप्त मनुष्य, बहुरि जो स्त्री वेद-रूप सो योनिमत मनुष्य, बहुरि जो लब्धि अपर्याप्तपना कौं धारै, सो लब्धि अपर्याप्त मनुष्य है।

तहा सामान्यादिक तीन प्रकार मनुष्यनि के प्रत्येक चौदह गुणस्थान पाइए। इहा भाव वेद अपेक्षा योनिमत मनुष्य के चौदह गुणस्थान कहे है। गुणस्थानवत् आलाप जानने। विशेष इतना - जो योनिमत मनुष्य कै असयत विषै एक पर्याप्त आलाप ही है। कारण पूर्वै कह्या ही है।

बहुरि इतना विशेष है – जो असयत तिर्यंचिणी कै प्रथमोपशम, वेदक ए दोय सम्यक्त्व है। अर मनुष्यणी कै प्रथमोपशम, वेदक, क्षायिक ए तीन सम्यक्त्व सभवै है। तथापि जहा सम्यक्त्व हो है, तहा पर्याप्त आलाप ही है। सम्यक्त्व सहित मरै, सो स्त्रीवेदनि विषै न उपजै है। बहुरि द्रव्य अपेक्षा योनिमती पचम गुणस्थान तै ऊपरि गमन करै नाही, तातै तिनकै द्वितीयोपशम सम्यक्त्व नाही है।

मणुसिणि पमत्तविरदे, आहारदुगं तु णत्थि णियमेण ।
अवगदवेदे मणुसिणि, सण्णा भूदगदिमासेज्ज ॥७१५॥

मानुष्यां प्रमत्तविरते, आहारद्विकं तु नास्ति नियमेन ।
अपगतवेदायां मानुष्यां, संज्ञा भूतगतिमासाद्य ॥७१५॥

टीका – द्रव्य पुरुष अर भाव स्त्री असा मनुष्य प्रमत्तविरत गुणस्थान विषै होइ, ताकै आहारक अर आहारक आगोपाग नामकर्म का उदय नियम करि नाही है।

तु शब्द तै स्त्रीवेद, नपुसकवेद का उदय विषै मन पर्ययज्ञान अर परिहार विशुद्धि सयम ए भी न हो है।

बहुरि भाव मनुष्यणी विषै चौदह गुणस्थान है। द्रव्य मनुष्यणी विषै पाच ही गुणस्थान हैं।

बहुरि वेद रहित अनिवृत्तिकरण विषै मनुष्यणी कै मैथुन सज्ञा कही है। सो कार्य रहित भूतपूर्वगति न्याय करि जाननी। जैसै कोऊ राजा था, वाकौ राजभ्रष्ट भए पीछे भी राजा ही कहिए है, तैसै जाननी। सो भाव स्त्री भी नववा ताई ही है। इहा चौदह गुणस्थान कहे, सो भूतपूर्वगति न्यायकरि ही कहे है। बहुरि आहारक ऋद्धि कौ जो प्राप्त भया, ताकै भी वा परिहार विशुद्धि सयम विषै द्वितीयोपशम सम्यक्त्व अर मन पर्यय ज्ञान न हो है; जातै तैतीस वर्ष बिना सो परिहार विशुद्धि सयम होइ नाही। प्रथमोपशम सम्यक्त्व की इतनी स्थिति नाही। अर परिहार विशुद्धि सयम सहित श्रेणी न चढै, तातै द्वितीयोपशम सम्यक्त्व भी बनै नाही, तातै तिन दोऊनि का सयोग नाही सभवै है।

णरलद्धिअपज्जत्ते, एक्को दु अपुण्णगो दु आलावो ।
लेस्साभेदविभिण्णा, सत्तवियप्पा सुरट्ठाणा ॥७१६॥

नरलब्ध्यपर्याप्ते, एकस्तु अपूर्णकस्तु आलापः ।
लेश्याविभिन्नानि, सप्तविकल्पानि सुरस्थानानि ॥७१६॥

टीका – बहुरि लब्धि अपर्याप्त मनुष्य विषै एक अपर्याप्त आलाप ही है। बहुरि लेश्या भेद करि भिन्न असे देवनि के स्थानक सात हैं, ते कहै हैं।

भवनत्रिक देव, बहुरि सौधर्म युगल, बहुरि सनत्कुमार युगल, बहुरि ब्रह्मादिक छह, बहुरि शतारयुगल, बहुरि आनतादिक नवम ग्रैवेयक पर्यंत तेरह, बहुरि अनुदिश, अनुत्तर विमान चौदह, इनि सात स्थानकनि विषै क्रम तै तेज का जघन्यांश, बहुरि तेज का मध्यमांश, बहुरि तेज का उत्कृष्टांश, पद्म का जघन्यांश, बहुरि पद्म का मध्यमांश, बहुरि पद्म का उत्कृष्टांश, शुक्ल का जघन्यांश, बहुरि शुक्ल का मध्यमांश, बहुरि शुक्ल का उत्कृष्टांश ए लेश्या पाइए हैं ।

सव्वसुराणं ओघे, मिच्छदुगे अविरदे य तिण्णेव ।
णवरि य भवणतिकप्पित्थीणं च य अविरदे पुण्णो ॥७१७॥

सर्वसुराणामोघे, मिथ्यात्वद्विके अविरते च त्रय एव ।
नवरि च भवनत्रिकल्पस्त्रीणां च च अविरते पूर्णः ॥७१७॥

टीका – सर्व सामान्य देव विषै मिथ्यादृष्टी सासादन, असंयत इनिविषै तीन तीन आलाप हैं । बहुरि इतना विशेष – जो भवनत्रिक देव अर कल्पवासिनी स्त्री, इनके असंयत विषै एक पर्याप्त आलाप ही है । जातै असंयत तिर्यंच मनुष्य मरि करि तहां उपजै नाहीं ।

मिस्से पुण्णालाओ, अणुद्दिसाणुत्तरा हु ते सम्मा ।
अविरद तिण्णालावा, अणुद्दिस्साणुत्तरे होंति ॥७१८॥

मिश्रे पूर्णालापः, अनुदिशानुत्तरा हि ते सम्यक् ।
अविरते त्रय आलापाः, अनुदिशानुत्तरे भवति ॥७१८॥

टीका – नव ग्रैवेयक पर्यंत सामान्य देव, तिनिकै मिश्र गुणस्थान विषै एक पर्याप्त आलाप ही है । बहुरि अनुदिश अर अनुत्तर विमानवासी अहमिंद्र सर्व सम्यग्दृष्टी ही हैं । तातै तिनके असंयत विषै तीन आलाप हैं ।

आगै इंद्रिय मार्गणा विषै कहै हैं–

बादरसुहमेइंदिय-बि-ति-चउ-रिंदियअसण्णिजीवाणं ।
ओघे पुण्णे तिण्ण य, अपुण्णगे पुण्ण अपुण्णो दु ॥७१९॥

बादरसूक्ष्मैकेंद्रियद्वित्रिचतुरिंद्रियासंज्ञिजीवानाम् ।
ओघे पूर्णे त्रयश्च, अपूर्णके पुनः अपूर्णस्तु ॥७१९॥

टीका – बादर सूक्ष्म एकेंद्रिय, बहुरि बेद्री, तेद्री, चौद्री, असैनी पचेद्री इनकी सामान्य रचना पर्याप्त नामकर्म का उदय सयुक्त, तीहि विषै तीन आलाप है। निर्वृत्ति अपर्याप्त अवस्था विषै भी पर्याप्त नामकर्म ही का उदय जानना।

सण्णी ओघे मिच्छे, गुणपडिवण्णे य मूलआलावा ।
लद्धियपुण्णे एक्कोऽपज्जत्तो होदि आलाओ ॥७२०॥

संज्ञ्योघे मिथ्यात्वे, गुणप्रतिपन्ने च मूलालापाः ।
लब्ध्यपूर्णे एकः, अपर्याप्तो भवति आलापः ॥७२०॥

टीका – सैनी पचेद्री तिर्यंच की सामान्य रचना विषै पच गुणस्थान है। तिनि विषै मिथ्यादृष्टी मे तो मूल मे कहे थे, तेई तीन आलाप है। बहुरि जो विशेष गुण को प्राप्त भया, ताकै सासादन अर सयत विषै मूल मे कहे ते तीन, तीनो आलाप है। मिश्र अर देशसंयत विषै एक पर्याप्त आलाप है। बहुरि सैनी लब्धि अपर्याप्त विषै एक लब्धि अपर्याप्त आलाप ही है।

आगे कायमार्गणा विषै दोय गाथानि करि कहै है –

भू-आउ-तेउ-वाऊ-णिच्चचदुग्गदि-णिगोदगे तिण्णि ।
ताणं थूलिदरेसु वि, पत्तेगे तद्दुभेदे वि ॥७२१॥

तसजीवाणं ओघे, मिच्छादिगुणे वि ओघ आलाओ ।
लद्धिअपुण्णे एक्कोऽपज्जत्तो होदि आलाओ ॥७२२॥ जुम्मं ।

भ्वप्तेजोवायुनित्यचतुर्गतिनिगोदके त्रयः ।
तेषां स्थूलेतरयोरपि, प्रत्येके तद्द्विभेदेऽपि ॥७२१॥

त्रसजीवानामोघे, मिथ्यात्वादिगुणेऽपि ओघ आलापः ।
लब्ध्यपूर्णे एकः, अपर्याप्तो भवत्यालापः ॥७२२॥ युग्मम् ।

टीका – पृथ्वी, अप, तेज, वायु, नित्यनिगोद, चतुर्गतिनिगोद इनके बादर-सूक्ष्म भेद, बहुरि प्रत्येक वनस्पती याके सप्रतिष्ठित-अप्रतिष्ठित भेद, इनि सबनि विषै तीन-तीन आलाप हैं। त्रस जीवनि के सामान्य करि चौदह गुणस्थाननि विषै,

गुणस्थाननि विषै कहे तैसे ही आलाप हैं, किछू विशेष नाही। पृथ्वी आदि त्रस पर्यंत जो लब्धि अपर्याप्त है, ताकै एक लब्धि अपर्याप्त ही आलाप है।

आगै योगमार्गणा विषै कहै है–

एक्कारसजोगाणं, पुण्णगदाणं सपुण्ण आलाओ।
मिस्सचउक्कस्स पुणो, सगएक्कअपुण्ण आलाओ ॥७२३॥

एकादशयोगानां, पूर्णगतानां स्वपूर्णालापः।
मिश्रचतुष्कस्य पुनः, स्वकैकापूर्णालापः ॥७२३॥

टीका – पर्याप्त अवस्था विषै होंहि असे च्यारि मन, च्यारि वचन, औदारिक, वैक्रियक, आहारक इन ग्यारह योगनि कै अपना-अपना एक पर्याप्त आलाप ही है। जैसै सत्य मनोयोग के सत्य मन.पर्याप्त आलाप है। असै सबनि कै जानना। बहुरि अवशेष रहे च्यारि, मिश्र योग, तिनिकै अपना अपना एक अपर्याप्त आलाप ही हैं। जैसै औदारिक मिश्र के एक औदारिक मिश्र अपर्याप्त आलाप है। असैं सबनि कै जानना।

आगै अवशेष मार्गणा विषै कहै है –

वेदादाहारो त्ति य, सगुणट्ठाणाणमोघ आलाओ।
णवरि य संढिच्छीणं, णत्थि हु आहारगाण दुगं ॥७२४॥

वेदादाहार इति च, स्वगुणस्थानानामोघ आलापः।
नवरि च षंढस्त्रीणां, नास्ति हि आहारकाना द्विकम् ॥७२४॥

टीका – वेदमार्गणा तें लगाइ आहारमार्गणा पर्यंत दश मार्गणानि विषै अपना अपना गुणस्थाननि का आलापनि का अनुक्रम गुणस्थाननि विषै कहे, तैसै ही जानना। इतना विशेष है जो भावनपुंसक वा स्त्री वेद होइ अर द्रव्य पुरुष होइ असे जीव के आहारक, आहारकमिश्र आलाप नाही है, जातै आहारक शरीर विषै प्रशस्त प्रकृतिक का ही उदय है। तहा वेदनि के अनिवृत्तिकरण का सवेद भाग पर्यंत गुणस्थान है। क्रोध, मान, माया, बादर लोभ इनिकै अनिवृत्तिकरण के वेद रहित च्यारि भाग तहा पर्यंत क्रम तै गुणस्थान हैं। सूक्ष्म लोभ के सूक्ष्म सापराय ही है। कुमति, कुश्रुत, विभंग इनि कै दोय गुणस्थान हैं। मति, श्रुत, अवधि के नव है।

मन पर्यय कै सात है। केवलज्ञान कै दोय हैं। असयम कै च्यारि है। देशसयम कै एक है। सामायिक, छेदोपस्थापना कै च्यारि है। परिहार विशुद्धि कै दोय है। सूक्ष्मसापराय कै एक है। यथाख्यात चारित्र कै च्यारि है। चक्षु, अचक्षु दर्शन कै बारह है। अवधि दर्शन के नव है। केवल दर्शन कै दोय है। कृष्ण, नील, कपोत लेश्या कै च्यारि हैं। पीत पद्म कै सात है। शुक्ल कै तेरह है। भव्य कै चौदह है। अभव्य कै एक है। मिथ्यात्व, सासादन, मिश्र कै एक एक है। द्वितीयोशम सम्यक्त्व कै आठ है। प्रथमोपशम सम्यक्त्व अर वेदक कै च्यारि है। क्षायिक के ग्यारह है। सज्ञी कै बारह हैं। असज्ञी कै एक है। आहारक कै तेरह है। अनाहारक कै पांच है। ऐसै ए गुणस्थान कहे, तिन गुणस्थाननि विषै आलाप मूल मे जैसै सामान्य गुणस्थाननि विषै अनुक्रम करि आलाप कहे थे, तैसै ही जानने।

गुणजीवा पज्जत्ती, पाणा सण्णा गइंदिया काया।
जोगा वेदकसाया, णाणजमा दंसणा लेस्सा ॥७२५॥

भव्वा सम्मत्ता वि य, सण्णी आहारगा य उवजोगा ।
जोग्गा परूविदव्वा, ओघादेसेसु समुदायं ॥७२६॥ जुम्मं।

गुणजीवाः पर्याप्तयः, प्राणाः संज्ञाः गतींद्रियाणि कायाः।
योगा वेदकषायाः, ज्ञानयमाः दर्शनानि लेश्याः ॥७२५॥

भव्याः सम्यक्त्वान्यपि च, संज्ञिनः आहारकाश्चोपयोगाः।
योग्याः प्ररूपितव्या, ओघादेशयोः समुदायम् ॥७२६॥ युग्मम्।

टीका – गुणस्थान चौदह, मूल जीवसमास चौदह, तहा पर्याप्त सात, अपर्याप्त सात, पर्याप्ति छह, तहा सज्ञी पचेद्रिय कै पर्याप्ति अवस्था विषै पर्याप्ति अवस्था सबंधी छह अर अपर्याप्ति अवस्था विषै अपर्याप्त संबंधी छह, असज्ञी वा विकलत्रय के पर्याप्ति-अपर्याप्ति सबधी पाच-पाच, एकेंद्री कै च्यारि-च्यारि जानने।

प्राण – सज्ञी पंचेद्रिय कै दश, तीहि अपर्याप्त के सात, असज्ञी पचेद्री के नव तीहि अपर्याप्त के सात, चौइन्द्री के आठ, तीहि अपर्याप्त के छह, तेइन्द्री के सात, तीहिं अपर्याप्त के पाच, वेइन्द्री के छह, तीहि अपर्याप्त के च्यारि, एकेंद्रिय के च्यारि, तीहिं अपर्याप्त के तीन है। सयोग केवली कै वचन, काय, उस्वास, आयु ए च्यरि

प्राण हैं। तिसही के वचन बिना तीन हो है। कायबल विना दोय होय है। अयोगी के एक आयु प्राण है।

बहुरि सज्ञा च्यारि, गति च्यारि, इन्द्रिय पाच, काय छह, योग पंद्रह तिनमे पर्याप्त अवस्था संबधी ग्यारह, अपर्याप्त अवस्था सबधी तीन मिश्र अर एक कार्माण ए च्यारि है। वेद तीन, कषाय च्यारि, ज्ञान आठ, सयम सात, दर्शन च्यारि, लेश्या छह, भव्य दोय, सम्यक्त्व छह, सज्ञी दोय, आहार दोय, उपयोग बारह, ए सर्व समुच्चय गुणस्थान वा मार्गणा स्थाननि विषै यथायोग्य प्ररूपण करने।

जीवसमास विषै विशेष कहैं है –

ओघे आदेसे वा, सण्णीपज्जंतगा हवे जत्थ।
तत्थ य उणवीसंता, इगि-बि-ति-गुणिदा हवे ठाणा ।।७२७।।

ओघे आदेशे वा, संज्ञिपर्यन्तका भवेयुर्यत्र।
तत्र चैकोनर्विशांता, एकद्वित्रिगुणिता भवेयुः स्थानानि ।।७२७।।

टीका – गुणस्थान वा मार्गणास्थान विषै जहा सज्ञी पचेंद्री पर्यंत मूल चौदह जीवसमास निरूपण करिए, तहा उत्तर जीवसमास एक नै आदि देकरि उगणीस पर्यंत सामान्य करि, दोय पर्याप्त अपर्याप्त करि, तीन पर्याप्त, अपर्याप्त, लब्धि अपर्याप्त करि गुणे, एकनै आदि देकरि उगणीस पर्यंत वा दोय नै आदि देकरि अठतीस पर्यंत वा तीन नै आदि देकरि सत्तावन पर्यंत जीवसमास के भेद हैं। ते सर्व भेद तहा जानने। सामान्य जीवसमास एक, त्रस-स्थावर भेदतै दोय, इत्यादि सर्वभेद जीवसमास अधिकार विषै कहे है, सो जानने। इनिकौं एक, दोय, तीन करि गुणें क्रमतै एक, दोय, तीन आदि उगणीस, अठतीस सत्तावन पर्यंत भेद हो है।

इहा तै आगै गुणस्थानमार्गणा विषै गुणस्थान, जीवसमास इत्यादि बीस भेद जोडिए है, सो कहिए है –

वीर-मुह-कमल-णिग्गय-सयल-सुय-ग्गहण-पयडण-समत्थं।
णमिऊण गोयममहं, सिद्धंतालावमणुवोच्छं ।।७२८।।

वीरमुखकमलनिर्गतसकलश्रुतग्रहणप्रकटनसमर्थम्।
नत्वा गौतममहं सिद्धांतालापमनुवक्ष्ये ।।७२८।।

टीका – वर्धमान स्वामी के मुख कमल तै निकस्या अैसा सकल शास्त्र महा-गभीर, ताके प्रकट करने कौ समर्थ अैसा सिद्धपर्यंत आलाप, सो श्रीगौतम स्वामी कौ नमस्कार करि मैं कहौ हौ ।

तहां सामान्य गुणस्थान रचना विषै जैसै चौदह गुणस्थानवर्ती जीव है । गुण-स्थान रहित सिद्ध है । चौदह जीवसमास युक्त जीव है । तिनकरि रहित जीव है । छह-छह, पाच-पाच, च्यारि-च्यारि, पर्याप्ति, अपर्याप्ति युक्त जीव है । तिनकरि रहित जीव हैं । दश, सात, नव, सात, आठ, छह, सात, पाच, छह, च्यारि, च्यारि, तीन, च्यारि, दोय, एक प्राण के धारी जीव हैं । तिनकरि रहित जीव हैं । पद्रह योग युक्त जीव है । अयोगी जीव हैं । तीन वेद युक्त जीव है । तिनकरि रहित जीव है । च्यारि कषाय युक्त जीव है । तिनकरि रहित जीव है । आठ ज्ञान युक्त जीव है । ज्ञान रहित जीव नाही । सप्त संयम युक्त जीव है । तिनकरि रहित जीव हैं । च्यारि दर्शन युक्त जीव हैं । दर्शन रहित जीव नाही । द्रव्य, भाव छह लेश्या युक्त जीव है । लेश्या रहित जीव हैं । भव्य वा अभव्य जीव है । दोऊ रहित जीव है । छह सम्यक्त्व युक्त जीव है । सम्य-क्त्व रहित नाही । सज्ञी वा असंज्ञी जीव है । दोऊ रहित जीव हैं । आहारी जीव हैं । अनाहारी जीव है । दोऊ रहित नाही । साकारोपयोग वा अनाकारोपयोग वा युगपत् दोऊ उपयोग युक्त जीव है । उपयोग रहित जीव नाही है । अैसे अन्यत्र यथासभव जानना ।

अथ गुणस्थान वा मार्गणास्थाननि विषै यथायोग्य वीस प्ररूपणा निरूपणा कीजिए है ।

सो यन्त्रनि करि विवक्षित गुणस्थान वा मार्गणास्थान का आलाप विषै जो जो प्ररूपणा पाइए, सो सो लिखिए है । तहा यन्त्रनि विषै अैसी सहनानी जाननी । पहिलै तौ एक बडा कोठा, तिस विषै तौ जिस आलाप विषै वीस प्ररूपणा लगाई, तिसका नाम लिखिए है । बहुरि तिस कोठे के आगै आगै बराबरि वीस कोठे, तिन-विषै प्रथमादि कोठे तै लगाइ, अनुक्रम तै गुणस्थान, जीवसमास, पर्याप्ति, प्राण, संज्ञी, गति, इंद्रिय, काय, योग, वेद, कषाय, ज्ञान, सयम, दर्शन, लेश्या, भव्य, सम्यक्त्व, संज्ञी, आहार, उपयोग ए वीस प्ररूपणा जो जो पाइए, सो सो लिखिए है । तिनविषै गुणस्थानादिक का नाम नाही लिखिए हैं । तथापि पहिला कोठा विषै गुणस्थान, दूसरा विषै जीवसमास, तीसरा विषै पर्याप्ति इत्यादि वीसवां कोठा विषै उपयोग जानने । तहा तिनि कोठेनि विषै जहां जिस प्ररूपणा का जितना प्रमाण

ही का अक लिख्या होइ, तहा तौ सो प्ररूपणा सर्व जाननी । जैसे पहिले कोठे मे चौदह का अक जहा लिख्या होइ, तहा सर्व गुणस्थान जानने । दूसरा कोठे विषै जहा चौदह का अक लिख्या होइ, तहा सर्व जीवसमास जानने । असे ही तृतीयादि कोठेनि विषै जहा छह, दश, च्यारि, च्यारि, छह, पद्रह, तीन, च्यारि, आठ, सात, च्यारि, छह, दोय, छह, दोय-दोय बारह के अक लिखे होइ, तहा अपने अपने कोठेनि विषै सो सो प्ररूपणा सर्व जाननी । बहुरि जहा प्ररूपणा का अभाव होइ, तहा बिंदी लिखिए है । जैसे पहिले कोठे विषै जहा बिंदी लिखी होइ, तहा गुणस्थान का अभाव जानना । दूसरा कोठा विषै जहा बिंदी लिखी होइ, तहा जीवसमास का अभाव जानना । असे अन्यत्र जानना । बहुरि जहा प्ररूपणा विषै केतेक भेद पाइए, तहा अपने अपने कोठानि विषै जितने भेद पाइए, तितनेका अक लिखिए है । बहुरि तिन भेदनि के नाम जानने के अर्थि नाम का पहिला अक्षर वा पहिले दोय आदि अक्षर वा दोय विशेपण जानने के अर्थि दोऊ विशेषणनि के आदि के दोय अक्षर वा तिन अक्षरनि के आगे अपनी सख्या के अक लिखिए है, सोई कहिए है–

जितने गुणस्थान पाइए, तितने का अक पहिले कोठे मे लिखिए है । तिस अक के नीचे तिन गुणस्थाननि का नाम जानने के अर्थि तिनके नामनि के आदि अक्षर लिखिए है । सो आदि अक्षर की सहनानी तै सर्व नाम जानि लेना ।

तहा मिथ्यादृष्टि आदि गुणस्थाननि के नाम की असी सहनानी । **मि । सा। मिश्र । अवि । देश । प्र । अप्र । अपू । अनि । सू । उ । क्षी । स । अ ।**

बहुरि जहा आदि के असा लिख्या होइ, तहा मिथ्यादृष्टि आदि जितने लिखे होइ, तितने गुणस्थान जानने । बहुरि असे ही दूसरा कोठा विषै जीवसमास, सो जीवसमास दोय प्रकार पर्याप्त वा अपर्याप्त, तहा सहनानी असी **प । अ ।** बहुरि तहा सूक्ष्म, बादर, बेद्री, तेद्री, चौंद्री, असज्ञी, सज्ञी की सहनानी असी **सू । बा । बें । तें । चौं । अ । स ।** तहा सूक्ष्म के पर्याप्त, अपर्याप्त दोऊ होइ, तौ सहनानी असी **सू २** पर्याप्त ही होइ तौ सहनानी असी **सू प १** । अपर्याप्त ही होइ, तौ असी **सूअ १** सज्ञी पर्याप्त अपर्याप्त की असी **सं २** पर्याप्त की असी **स प १** सज्ञी अपर्याप्त की असी **सं अ १** सहनानी है । असे ही औरनि की जाननी । बहुरि जहा अपर्याप्त ही जीवसमास होइ, तहा **'अपर्याप्त'** असा लिखिए है । जहा पर्याप्त ही होइ, तहा **'पर्याप्त'** असा लिखिए है । बहुरि प्रमत्त विषै आहारक अपेक्षा, सयोगी विषै केवल-

समुद्घात अपेक्षा, पर्याप्त-अपर्याप्त जीवसमास जानने । बहुरि कायमार्गणा की रचना विषै जहां सत्तावन, अठ्याणवै, च्यारि सै छह जीवसमास कहे है, ते यथासभव पर्याप्त, अपर्याप्त सामान्य आलाप विषै जानि लेने । बहुरि वनस्पती रचना विषै प्रतिष्ठित अप्रतिष्ठित प्रत्येक बादर सूक्ष्म, नित्य-इतर निगोद के पर्याप्त अपर्याप्त की अपेक्षा यथासंभव जीवसमास बारह नै आदि देकरि जानने ।

बहुरि तीसरा कोठा विषै पर्याप्ति, सो पर्याप्ति जितनी पाइए, तिनके अक ही लिखिए है, नाम नाही लिखिए है । तहां असा जानना छह तौ सज्ञी पचेद्री के, पंच असज्ञी वा विकलत्रय के, च्यारि एकेंद्री के जानने । ते पर्याप्त आलाप विषै तौ पर्याप्त जानने । अपर्याप्त आलाप विषै अपर्याप्त जानने । सामान्य आलाप विषै ते दोय दोय बार जहा लिखे होइ, तहा पर्याप्त, अपर्याप्त दोऊ जानने ।

बहुरि चौथा कोठा विषै प्राण, ते प्राण जितने पाइए हैं तिनके अक ही लिखिए है, नाम नाही लिखिए है । तहा असा जानना ।

पर्याप्त आलाप विषै तौ दश सज्ञी के अर नव असज्ञी के आठ चौद्री के, सात तेद्री के, छह बेद्री के, च्यारि एकेद्री के, बहुरि च्यारि सयोगी के, एक अयोगी का यथासभव जानने । बहुरि अपर्याप्त आलाप विषै सात सज्ञी के, सात असज्ञी के, छह चौंद्री के, पाच तेद्री के, च्यारि बेद्री के, तीन एकेद्री के, बहुरि दोय सयोगी के, यथा-सभव जानने । बहुरि जहा सामान्य आलाप विषै ते पूर्वोक्त दोऊ लिखिए, तहा पर्याप्त अपर्याप्त दोऊ जानने ।

बहुरि पाचवा कोठा विषै सज्ञा, तहा आहारादिक की असी सहनानी है **आ । भ । मै । प ।**

बहुरि छठा कोठा विषै गति, तहा नरकादिक की असी सहनानी है **न । ति । म । दे ।**

बहुरि सातवा कोठा विषै इन्द्रिय, तहा एकेद्रियादिक की असी सहनानी है **ए । बें । तें । चौं । पं ।**

बहुरि आठवां कोठा विषै काय, सो पृथ्वी आदि की असी **पृ । अ । ते । वा । व ।** बहुरि पाचो ही स्थावरनि की असी—**स्था ५** । बहुरि त्रस की असी **त्र** । सहनानी है।

बहुरि नवमा कोठा विषै योग, तहा मन के च्यारि, तिनकी ऐसी **म ४** । वचन के च्यारि, तिनकी ऐसी **व ४** ।काय के विषै औदारिकादिकनि की ऐसी **औ** । **औ मि** । **वै** । **वै मि** । **आ** । **आ मि** । **का** । अथवा औदारिक, औदारिकमिश्र इनि दोऊनि की ऐसी **औ २** । वैक्रियिक द्विक की ऐसी **वै २** । आहारक द्विक की ऐसी **आ २** । बहुरि सयोगी के सत्य, अनुभय, मन-वचन पाइए । तिनकी ऐसी **म २** । **व २** । बहुरि बेंद्रियादिक के अनुभय वचन पाइए, ताकी ऐसी **अनु व १** । सहनानी है ।

बहुरि दशवा कोठा विषै वेद, तहा नपु सकादिक की ऐसी **न** । **पु** । **स्त्री** सहनानी है ।

बहुरि ग्यारहवा कोठा विषै कषाय, तहा क्रोधादिक की ऐसी **क्रो** । **मा** । **माया** । **लो** । सहनानी है । बहुरि बारह्वा कोठा विषै ज्ञान, तहा कुमति, कुश्रुत, विभंग की ऐसी **कुम** । **कुश्रु** । **वि** । अथवा इन तीनो की ऐसी **कुज्ञान ३** । बहुरि मतिज्ञानादिक की **म** । **श्रु** । **अ** । **म** । **के** । अथवा मति, श्रुत, अवधि तीनो की ऐसी **मत्यादि ३** । मति, श्रुत, अवधि, मन पर्यय की ऐसी **मत्यादि ४** । सहनानी है ।

बहुरि तेरहवा कोठा विषै सयम, तहा सयमादिक की ऐसी **अ** । **दे** । **सा** । **छे** । **प** । **सू** । **य** । सहनानी है ।

बहुरि चौदहवा कोठा विषै दर्शन, तहा चक्षु आदि की ऐसी **च** । **अच** । **अव**। **के** । अथवा चक्षु अचक्षु अवधि तीनो की ऐसी **चक्षु आदि ३** सहनानी है ।

बहुरि पद्रह्वा कोठा विषै लेश्या, तहा द्रव्य लेश्या की सहनानी ऐसी **द्र** । याके आगै जितनी द्रव्य लेश्या पाइए, तितने का अक जानना । बहुरि भाव लेश्या की सहनानी ऐसी **भा** । याके आगै जितनी भावलेश्या पाइए तितने का अक जानना । दोऊ ही जागै कृष्णादिक नामनि की ऐसी **कृ** । **नी** । **क** । इनि तीनो की ऐसी **अशुभ ३** । तेज आदिक की ऐसी **ते** । **प** । **शु** । इन तीनो की ऐसी **शुभ ३** । सहनानी जाननी ।

बहुरि सोलहवा कोठाविषै भव्य, सो भव्य अभव्य की ऐसी **भ** । **अ** । सहनानी है।

सतरहवा कोठा विषै सम्यक्त्व, तहा मिथ्यादिक की ऐसी **मि** । **सा** । **मिश्र** । **उ** । **वे** । **क्षा** । सहनानी है ।

बहुरि अठारहवा कोठा विषै संज्ञी, तहा सज्ञी असज्ञी की अैसी **सं । अ ।** सहनानी है ।

बहुरि उगणीसवा कोठा विषै आहार, तहा आहार-अनाहार की अैसी **आ । अन** । सहनानी है ।

बहुरि बीसवा कोठा विषै उपयोग, तहा ज्ञानोपयोग – दर्शनोपयोग की अैसी **ज्ञा । द** । सहनानी है । अैसे इन सहनानीनि करि यत्रनि विषै कहिए है अर्थ सो नीकै जानना ।

बहुरि जहा गुणस्थानवत् वा मूलौघवत् अैसा कह्या होइ, गुणस्थान वा सिद्ध रचना विषै जैसै प्ररूपणा होइ, तैसै यथसभव जानना । बहुरि और भी जहा जिसवत् कह्या होइ, तहा ताके समान प्ररूपणा जानि लेना । तहा जो किछू जिस कोठा विषै विशेष कह्या होइ, सो विशेष जानि लेना । बहुरि जहा स्वकीय अैसा कह्या होइ, तहां जिसका आलाप होइ, तहा तिस विषै सभवती प्ररूपणा वा जिसका आलाप कीजिए, सो ही प्ररूपणा जानि लेना । बहुरि इतना कथन जानि लेना –

सव्वेसिं सुहुमाणं, काऊदा सव्वविग्गहे सुक्का ।
सव्वो मिस्सो देहो, कओदवण्णो हवे णियमा ।।१।।

इस सूत्र करि सर्व पृथ्वीकायादिक सूक्ष्म जीवनि कै द्रव्यलेश्या कपोत है । विग्रहगति सबधी कार्माण विषै शुक्ल है । मिश्र शरीर विषै कपोत है । अैसे अपर्याप्त आलापनि विषै द्रव्यलेश्या कपोत अर शुक्ल ही जानि लेना ।

बहुरि द्वितीयादि पृथ्वी का रचना विषै लेश्या अपनी अपनी पृथ्वी विषै सभवती स्वकीय जाननी ।

बहुरि मनुष्य रचना विषै प्रमत्तादिक विषै तीन भेद भाव अपेक्षा है । द्रव्य अपेक्षा एक पुरुषवेद ही है । बहुरि सप्तमादि गुणस्थाननि विषै आहार सज्ञा का अभाव, साता-असाता वेदनीय की उदीरणा का अभाव तै जानना । बहुरि स्त्री, नपुंसक वेद का उदय होतै आहारकयोग, मन पर्ययज्ञान, परिहारविशुद्धि सयम न होइ, अैसा जानना । बहुरि श्रेणी तै उतरि द्वितीयोपशम सम्यग्दृष्टी चतुर्थादि गुणस्थाननि तै मरि देव होइ, तीहि अपेक्षा वैमानिक देवनि कै अपर्याप्तकाल विषै उपशम सम्यक्त्व कह्या है ।

बहुरि एकेंद्री जीवनि कै पर्याप्त नामकर्म के उदय तै पर्याप्त, निर्वृत्तिअपर्याप्त अवस्था है। बहुरि अपर्याप्त नामकर्म के उदय तै लब्धि अपर्याप्तक हो है, ऐसा जानना। बहुरि कायमार्गणा रचना विषै पर्याप्त, बादर, पृथ्वी, वनस्पती, त्रस कैं द्रव्यलेश्या छहो हैं। अप कै शुक्ल, तेज कै पीत, वायु कै हरित वा गोमूत्र वा अव्यक्त वर्णरूप द्रव्य लेश्या स्वकीय जानना।

बहुरि साधारण शरीर जानने के अर्थि गाथा—

पुढवी आदि चउण्ह, केवलि आहारदेवणिरयगा।
अपदिट्ठिदाहु सव्वे, परिट्ठिदंगा हवे सेसा ॥१॥

पृथ्वी आदि च्यारि, अर केवली, आहारक, देव, नारक के शरीर निगोद रहित अप्रतिष्ठित है। अवशेष सर्व निगोद सहित सप्रतिष्ठित है, ऐसा साधारण रचना विषै स्वरूप जानना।

बहुरि सासादन सम्यग्दृष्टी मरि नरक न जाय, तातै नारकी अपर्याप्त सासादन न होइ। बहुरि पचमी आदि पृथ्वी के आये अपर्याप्त मनुष्यनि के कृष्ण नील लेश्या होतै वेदक सम्यक्त्व हो है, तातै कृष्ण – नील लेश्या की रचना विषै अपर्याप्त आलाप विषै मनुष्यगति कहिए है। बहुरि पर्याप्त विषै कृष्णलेश्या नाही। अपर्याप्त मे मिश्रगुणस्थान नाही, तातै कृष्णलेश्या का मिश्रगुणस्थान विषै देव बिना तीन गति है। इत्यादिक यथासभव अर्थ जानि यत्रनि करि कहिए है अर्थ, सो जानना। अथ यन्त्र रचना—

स्वनामित आलोकनिके नाम	गुणस्थान	जीवसमास	पर्याप्ति	प्राण	संज्ञा	गति	इंद्री	काय	जोग	वेद	कषाय	ज्ञान	संयम	दर्शन	लेश्या	भव्य	सम्यक्त्व	संज्ञी	आहारक	उपयोग
पर्याप्तगुणस्थानवाले जीवनिकी रचना	१४	७ पर्याप्त	६।५। ४। पर्याप्त	१०।९ ८।७।६।४ ४।१ पर्याप्त	४	४	५	६ पर्याप्त	११ पर्याप्त	३	४	८	७	४	द्र ६ भा ६	२	६	२	१ आहारक	१२
अपर्याप्तगुणस्थानवाले जीवनिकी रचना	५ मि १ सा १ अवि १ प्र १ सजो १	७ अपर्याप्त	६।५।४ अपर्याप्त	७।७।६।५ ।४।३।२ अपर्याप्त	४	४	५	६	४औ मि१ वैमि१ आमि १ का१	३	४	६ विभंग मनःपर्यय विना	४ असं १ सा १ छे १ यथा १	४	द्र २ का१शु१ भा ६	२	५ मिश्र विना	२	२	१० ज्ञा ६ द ४
मिथ्यादृष्टि गुणस्थानकी सामान्य रचना	१ मिथ्या	१४	६।६। ५।५। ४।४।	१०।७।९। ७।८।६।७। ५।६।४। ४।३।	४	४	५	६	१३ आहारक द्विक विना	३	४	३ कुज्ञान	१ असंयम	२ च १ अच १	द्र ६ भा६	२	१ मिथ्या	२	२	५ ज्ञा ३ द २
मिथ्या दृष्टि गुणस्थानकी पर्याप्तकी रचना	१ मिथ्या	७ पर्याप्त	६।५। ४। पर्याप्त	१०।९। ८।७। ६।४।	४	४	५	६	१० म ४ व४ औ दा१ वै १	३	४	३ कुज्ञान	१ असंयम	२ च १ अच १	द्र ६ भा६	२	१ मिथ्या	२	१ आहारक	५ ज्ञा३ द २
मिथ्यादृष्टि अपर्याप्तकी रचना	१ मिथ्या	७ अपर्याप्त	६।५। ४। अपर्याप्त	७।७। ६।५। ४।३।	४	४	५	६	३औ मि१ वैमि १ का१	३	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ असंयम	२ च१ अच१	द्र २ का१शु१ भा६	२	१ मिथ्या	२	२	४ ज्ञा२ द २
सासादन सामान्यकी रचना	१ सासादन	२ संप १ सअ १	६।६।	१०।७।	४	४	१ पचेंद्री	१ त्रस	१३ आहारकद्विक विना	३	४	३ कुज्ञान	१ असंयम	२ च १ अच१	द्र ६ भा६	१ भव्य	१ सासादन	१ संज्ञी	२	५ ज्ञा३ द २

सासादन पर्याप्तकी रचना	१ सासा	१ सप	६। प	१०	४	४	१ प	१ त्र	१० म४ व४औ १वै१	३	४	३ कुज्ञान	१ अस	२ च १ अच१	द्र ६ भा ६	१ भ	१ सासा	१ स	१ आहा	५ ज्ञा३ द २
सासादन अपर्याप्तकी रचना	१ सासा	१ सअ	६ अ	७ अ	४	३ ति१म १ दे १	१ प	१ त्र	३औ मि१ वैमि १ का१	३	४	२ कुम१ कुश्रु १	१ अस	२ च १ अच१	द्र २ का१शु १भा६	१ भ	१ सासा	१ स	२	५ ज्ञा३ द २
सम्यग्मिथ्या दृष्टि रचना	१ मिश्र	१ सप	६ प	१०	४	४	१ प	१ त्र	१० म४व ४औ१ वै १	३	४	३ मि ३	१ अस	२ च १ अच१	द्र ६ भा ६	१ भ	१ मिश्र	१ स	१ आहा	५ ज्ञा३ द २
असंयत सामान्य रचना	१ असंयत	२ सप सअ	६।६	१०।७	४	४	१ प	१ त्र	१३ आहा रक द्विक विना	३	४	३ म१ श्रु१ अ१	१ अस	३ च१ अच१ अव१	द्र ६ भा ६	१ भ	३ उप१ वे१ क्षा१	१ सं	२	६ ज्ञा३ द ३
असंयत पर्याप्त रचना	१ अस	१ सप	६ प	१०	४	४	१ प	१ त्र	१० म४व ४औ१ वै १	३	४	३ म श्रु१ अ१	१ अस	३ च१ अच१ अव१	द्र ६ भा ६	१ भ	३ उ१ वे१ क्षा१	१ स	१ आहा	६ ज्ञा३ द३
असंयत अपर्याप्तरचना	१ अस	१ सअ	६ अ	७ अ	४	४	१ प	१ त्र	३औ मि१ वैमि १ का १	२ न१पु१	४	३ म१ श्रु न१ अ १	१ अस	३ आदि के	द्र २ का१शु १भा६	१ भ	३ उ१ वे १ क्षा१	१ स	२	६ ज्ञा३ द ३
देशसंयत रचना	१ देशसंयत	१ सप	६	१०	४	२ म१ ति१	१ प	१ त्र	९ म४ व४ औ१	३	४	३ मत्या दि ज्ञा	१ देश सयत	३ आदि के	द्र ६ भा३ शुभ	१ भ	३ उ१ वे१ क्षा१	१ स	१ आहा	६ ज्ञा३ द ३
प्रमत्त रचना	१ प्रमत्त	२ सप१ सअ १	६।६	१०।७	४	१ मनु	१ प	१ त्र	११ म४व ४औ १ आहार२	३	४	४ मत्या दिक	३ सा१ छे१ प १	३ आदि के	द्र ६ भा३ शुभ	१ भ	३ उ १ वे १ क्षा१	१ सं	१ आ	७ ज्ञा४ द ३

अप्रमत्त रचना	१ अप्रमत्त	१ संप	६	१०	३ आहार विना	१ म	१ प	१ त्र	९ म४ व४ औ१	३	४	४ मत्यादिक	३ सा१ छे१ प१	३ आदि के	द्र ६ भा३ शुभ	१ भ	३ उ१ वे१ क्षा१	१ स	१ आ	७ ज्ञा४ द३
अपूर्वकरण रचना	१ अपू	१ सप	६	१०	३ आहार विना	१ म	१ प	१ त्र	९ म०४ व०४ औ०४	३	४	४ मत्यादिक	२ सा१ छे१	३ आदि के	द्र ६ भा१ शुक्ल	१ भ	२ उ१ क्षा१	१ स	१ आहा	७ ज्ञा४ द३
अनिवृत्तिकरण प्रथम भाग रचना	१ अनि	१ सप	६	१०	२ मै१ प१	१ म	१ प	१ त्र	९ म०४ व०४ औ१	३	४	४ मत्यादिक	२ सा१ छे१	३ आदि के	द्र ६ भा१ शुक्ल	१ भ	२ उ१ क्षा१	१ स	१ आहा	७ ज्ञा४ द३
अनिवृत्तिकरण द्वितीय भाग रचना	१ अनि	१ सप	६	१०	१ प	१ म	१ प	१ त्र	९ म४ व४ औ१	०	४	४ मत्यादिक	२ सा१ छे१	३ आदि के	द्र ६ भा१ शुक्ल	१ भ	२ उ१ क्षा१	१ स	१ आहा	७ ज्ञा४ द३
अनिवृत्तिकरण तृतीय भाग रचना	१ अनि	१ सप	६	१०	१ प	१ म	१ प	१ त्र	९ म४ व४ औ१	०	३ क्रोध विना	४ मत्यादिक	२ सा१ छे१	३ आदि के	द्र ६ भा१ शुक्ल	१ भ	२ उ१ क्षा१	१ स	१ आहा	७ ज्ञा४ द३
अनिवृत्तिकरण चतुर्थ भाग रचना	१ अनि	१ सप	६	१०	१ प	१ म	१ प	१ त्र	९ म४ व४ औ१	०	२ माया१ लोभ	४ मत्यादिक	२ सा१ छे१	३ आदि के	द्र ६ भा१ शुक्ल	१ भ	२ उ क्षा१	१ स	१ आहा	७ ज्ञा४ द३
अनिवृत्तिकरण पंचम भाग रचना	१ अनि	१ सप	६	१०	१ प	१ म	१ प	१ त्र	९ म४ व४ औ१	०	१ लो	४ मत्यादिक	२ सा१ छे१	३ आदि के	द्र ६ भा१ शुक्ल	१ भ	२ उ१ क्षा१	१ स	१ आहा	७ ज्ञा४ द३
सूक्ष्मसाम्पराय रचना	१ सूक्ष्म	१ सप	६	१०	१ प	१ म	१ प	१ त्र	९ म४ व४ औ१	०	१ लो	४ मत्यादिक	१ सूक्ष्म	३ आदि के	द्र ६ भा१ शुक्ल	१ भ	२ उ१ क्षा१	१ स	१ आहा	७ ज्ञा४ द३

उपसातक-षय रचना	१ उप	१ स प	६	१०	०	१ म	१ प	१ त्र	६ म४ व४ औ१	०	०	४ म दा दिक	१ यथा	३ आद के	द्र ६ भा१ शुक्ल	१ भ	२ उ१ क्षा१	१ स	१ आहा	७ क्षा४ द३
क्षीणकषाय रचना	१ क्षीण	१ संप	६	१०	०	१ म	१ प	१ त्र	६ म४ व४ औ१	०	०	४ मत्या दिक	१ यथा	३ आदि क	द्र६ भा१ शुक्ल	१ भ	१ क्षा	१ स	१ आहा	७ क्षा४ द३
सयोगकेवली रचना	१ सयो	२ प१ ५१	६।६	४।२	०	१ म	१ प	१ त्र	७ मन२ वच२ औदा २ का१	०	०	१ के	१ यथा	१ के	द्र६ भा१ शुक्ल	०	१ क्षा	०	२	२ क्षा१ द१
अयोगकेवली रचना	१ सयो	१ प	६	१ आयु	०	१ म	१ प	१ त्र	०	०	०	१ के	१ यथा	१ के	द्र६ भा०	०	१ क्षा	०	१ अना हारक	२ क्षा१ द१
गुणस्थानातीतसिद्धपरमेष्ठीरचना	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	१ के	०	१ के	०	०	१ क्षा	०	१ अना हारक	२ क्षा१ द१
सामान्य नारक जीवनि की रचना	४ आदिके	२ संप १ सअ १	६।६	१०।७	४	१ न	१ पं	१ त्र	६ म४ व४ वै २ का१	१ नपु	४	६ अज्ञान३ मत्या दिक३	१ अस	३ आदि के	द्रव्य३ कृ१फ १शु१ भा३ अशुभ	२	६	१ स	२	६ क्षा ६ द३
सामान्य नारक पर्याप्त रचना	४ आदिके	१ सप	६ प	१०	४	१ न	१ प	१ त्र	६ म४ व४ वै १	१ नपु	४	६ अज्ञान३ मत्या दिक३	१ अस	३ आदि के	द्र १ कृ १ भा३ अशुभ	२	६	१ स	१ आहा रक	६ ज्ञा६ द ३

सामान्य नारक अपर्याप्त रचना	२ मि १ अवि १	१ स अ	६ अप	७	४	१ न	१ पं	१ त्र	२ वैमि१ का १	१ नपुं	४	५ कुम१ कुश्रु १ मत्यादि ३	१ असं	३ आदि के	द्र २ का१ शु १भा३ अशुभ	२	३ मिथ्या १वेद१ क्षा१	१ सं	२	८ ज्ञा५ द ३
सामान्य नारक मिथ्या दृष्टि रचना	१ मिथ्या	२ संप १ संअ १	६।६	१०।७	४	१ न	१ पं	१ त्र	११ म४ व४ वैक्रि२ का१	१ नपुं	४	३ कुज्ञान	१ असं	२ च१ अच१	द्र ३ क१क १शु१ भा३ अशुभ	२	१ मिथ्या	१ स	२	५ ज्ञा ३ द२
सामान्य नारकमिथ्या दृष्टिपर्याप्त रचना	१ मि	१ सं प	६	१०	४	१ न	१ प	१ त्र	९ म४ व४ वै१	१ नपुं	४	३ कुज्ञान	१ असं	२ च१ अच१	द्र१ क भा३ अशुभ	२	१ मिथ्या	१ सं	१ आहा	५ ज्ञा३ द२
सामान्यनारकमिथ्या दृष्टिअपर्याप्त रचना	१ मि	१ सं अ	६	७	४	१ न	१ पं	१ त्र	२ वैमि१ का१	१ नपुं	४	२ कुम१ कुश्रु १	१ असं	२ च१ अच१	द्र २ क१ शु१ भा३ अशुभ	२	१ मिथ्या	१ सं	२	४ ज्ञा२ द२
सामान्यनारकसासादनरचना	१ सा	१ स प	६	१०	४	१ न	१ पं	१ त्र	९ म४ व४ वै१	१ नपुं	४	३ कुज्ञान	१ असं	२ च१ अच१	द्र१ कृष्ण भा३ अशुभ	१ भ	१ सासा	१ सं	१	५ ज्ञा३ द२
सामान्यनारकमिश्रगुणस्थानरचना	१ मिश्र	१ सं प	६	१०	४	१ न	१ पं	१ त्र	९ म४ व४ वै१	१ नपुं	४	३ मिश्र	१ असं	२ च१ अच१	द्र१ कृष्ण भा३ अशुभ	१ भ	१ मिश्र	१ सं	१ आहा	५ ज्ञा३ द २
सामान्यनारकअसंयत रचना	१ असं	२ संप१ संअ१	६-६	१०।७	४	१ न	१ पं	१ त्र	११ म४ व४ वै२ का१	१ नपुं	४	३ मत्यादिक	१ असं	३ आदि के	द्र ३ कृ१क१ शु१ भा३ अशुभ	१ भ	३ उ१ वे१ क्षा१	१ सं	२	६ ज्ञा३ द३

सामान्यनारक असंयत पर्याप्त रचना	१ अस	१ सप	६	१०	४	१ न	१ प	१ त्र	९ म ४ व ४ वै १	१ नपु	४	३ मत्यादिक	१ अस	३ आदि के	द्र १ क १ भा ३ अशुभ	१ भ	३ उ १ वे १ क्षा १	१ स	१ आहा	६ ज्ञा ३ द ३
सामान्यनारक असंयत अपर्याप्त रचना	१ अस	१ सअ	६	७	४	१ पं	१ पं	१ त्र	२ वैमि १ का १	१ नपु	४	१ मत्यादिक	१ अस	३ आदि- क	द्र २ क १ शु १ भा ३ अशुभ	१ भ	२ वे १ क्षा १	१ स	२	६ ज्ञा ३ द ३
धर्मानारक सामान्य रचना	४ आदिके	२ सप १ सअ १	६-६	१०।७	४	१ न	१ प	१ त्र	११ म ४ व ४ वै २ का १	१ नपु	४	६ अज्ञान ३ मत्यादि क ३	१ अस	२ आदि क	द्र ३ क १ का १ शु १ भा १ कपोत	२	६	१ स	२	६ ज्ञा ६ द ३
धर्मानारक पर्याप्त रचना	४ आदिके	१ स प	६	१०	४	१ न	१ पं	१ त्र	९ म ४ व ४ वै १	१ नपु	४	६ कुज्ञान ३ मत्यादि ३	१ अस	३ आदि के	द्र ३ क १ भा १ कपोत	२	६	१ स	१ आहा	६ ज्ञा ६ द ३
धर्मानारक अपर्याप्त रचना	२ मि १ अवि १	१ संअ	६	७	४	१ न	१ प	१ त्र	२ वैमि १ का १	१ नपुं	४	५ कुम १ कुश्रु १ मत्यादि ३	१ अस	३ अ दि के	द्र २ क १ शु १ भा १ कपोत	२	३ मि १ वे १ क्षा १	१ स	२	८ ज्ञा ५ द ३
धर्मानारक मिथ्यादृष्टि रचना	१ मि	२ स प १ स अ १	६।६	१०।७	४	१ न	१ प	१ त्र	११ म ४ व ४ वै २ का १	१ नपु	४	३ कुज्ञान	१ अस	२ च १ अच १	द्र ३ क १ क १ शु १ भा १ कपोत	२	१ मिथ्या	१ स	२	५ ज्ञा ३ द २
धर्मानारक मिथ्यादृष्टि पर्याप्त रचना	१ मि	१ स प	६	१०	४	१ न	१ प	१ त्र	९ म ४ व ४ वै १	१ नपु	४	३ कुज्ञान	१ अस	२ च १ अच १	१ कृष्ण भा १ कपोत	२	१ मिथ्या	१ स	१ आहा	५ ज्ञा ३ द २

धर्मानारक मिथ्यादृष्टि अपर्याप्त रचना	१ मि	१ सअ	६	७	४	१ न	१ प	१ त्र	२ वैमि १ का १	१ नपुं	४	२ कुम १ कुश्रु	१ अस	२ च १ अच १	द्र २ का१ शु१ भा १ कपोत	२	१ मिथ्या	१ स	२	४ ज्ञा २ द २
धर्मानारक सासादन रचना	१ सा	१ सप	६	१०	४	१ न	१ प	१ त्र	९ म ४ व ४ वै १	१ नपुं	४	३ कुज्ञान	१ अस	२ च १ अच १	द्र १ कृष्ण भा१ कपोत	१ भ	१ सासा	१ सं	१ आहा	५ ज्ञा३ द २
धर्मानारक मिश्र रचना	१ मिश्र	१ सप	६	१०	४	१ न	१ प	१ त्र	९ म ४ व ४ वै १	१ नपु	४	१ मिश्र	१ असं	२ च१ अच१	द्र १ कृष्ण भा१ कपोत	१ भ	१ मिश्र	१ सं	१ आहा	५ ज्ञा३ दे २
धर्मानारक असंयत रचना	असं	२ सप सअ	६।६	१०।७	४	१ न	१ प	१ त्र	११ म ४ व ४ वै २ का१	१ नपुं	४	३ मत्यादिक	१ अस	३ आदि के	द्र ३ कृ१क १ शु१ भा १ क	१ भ	३ उ १ वे १ क्षा१	२ स	२	६ ज्ञा३ द ३
धर्मानारक असंयत पर्याप्त रचना	१ असं	१ सप	६	१०	४	१ न	१ प	१ त्र	९ म४ व ४ वै १	१ नपुं	४	३ मत्यादिक	१ अस	३ आदि के	द्र१कृ भा१ क	१ भ	३ उ १ वे१ क्षा१	१ स	१ आहा	६ ज्ञा३ द ३
धर्मानारक असंयत अपर्याप्त रचना	१ असं	१ सअ	६	७	४	१ न	१ प	१ त्र	२ वैमि१ का१	१ नपु	४	३ मत्यादिक	१ अस	३ आदि के	द्र २ का१ शु १ भा १ कपोत	१ भ	२ वे १ क्षा१	१ स	२	६ ज्ञा३ द ३
[illegible] नारकनिकी सामान्य रचना	४ आदिके	२ सप सअ	६।६	१०।७	४	१ न	१ प	१ त्र	११ म ४ व ४ वै २ का १	१ नपु	४	६ कुज्ञान ३ मत्यादि ३	१ अस	३ आदि के	द्र ३ कृ१का१ शु१भा १त्रस्व पृथ्वी सबधी	२	५ उ१वे१ मि१ सा१ मि १	१ स	२	६ ज्ञा६ द ३

द्वितीयपृथ्वीके नारक असंयत रचना	१ असं	१ सप	६	१०	४	१ न	१ प	१ त्र	६ म४ व४ वै१	१ नपु	४	३ मत्यादिक	१ अस	३ आदि के	द्र १ कृ भा, स्वकीय	१ भ	२ उ १ वे १	१ सं	१ आहा	६ ज्ञा३ द ३
पंचप्रकार तिर्यंचनि विषैसामान्य तिर्यंच रचना	५ आदि के	१४	६।६ ५।५ ४।४	१०।७।९।७ ८।६।७।५ ६।४।४।३	४	१ ति	५	६	११ म४ व४ औ२ का१	३	४	६ मनपर्ययके वल विना	२ असं१ देश१	३ आदि के	द्र६ भा६	२	६	२	२	६ ज्ञा६ द३
सामान्यतिर्यंच पर्याप्त रचना	५ आदि के	७ पर्याप्त	६। ५। ४।	१०।९ ८।७ ६।४	४	१ ति	५	६	९ म४ व४ औ१	३	४	६ कुज्ञा न३ मत्यादि३	२ असं१ देश१	३ आदि के	द्र६ भा६	२	६	२	१ आहा	६ ज्ञा६ द३
सामान्यतिर्यंच अपर्याप्त रचना	३ मि१ सा१ अवि१	७ अपर्याप्त	६। ५। ४।	७।७ ६।५ ४।३	४	१ ति	५	६	२ औमि १ का१	३	४	५ कुम१ कुश्रु१ मत्यादि ३	१ असं	३ आदि के	द्र २ क १ शु १ भा३ अशुभ	२	४ मि१ सा१ क्षा१ वे१	२	२	८ ज्ञा ५ द ३
सामान्य तिर्यंच मिथ्या दृष्टि रचना	१ मि	१४	६।६। ५।५। ४।४।	१०।७। ९।७।८।६ ७।५।६। ४।४।३।	४	१ ति	५	६	११ म ४ व ४ औ२ का १	३	४	३ कुज्ञान	१ अस	२ च १ अच१	द्र ६ भा६	२	१ मिथ्या	२	२	५ ज्ञा३ द २
सामान्य तिर्यंचमिथ्या दृष्टि पर्याप्त रचना	१ मि	७ पर्याप्ति	६।५। ४।	१०।९ ८।७ ६।५।	४	१ ति	५	६	९ म ४ व ४ औ १	३	४	३ कुज्ञान	१ अस	२ च १ अच १	द्र ६ भा ६	२	१ मिथ्या	२	१ आहा	५ ज्ञा ३ द २
सामान्य तिर्यंचमिथ्या दृष्टि अपर्याप्त रचना	१ मिथ्या	७ अप	६।५। ४।	७।७ ६।५। ४।३	४	१ ति	५	६	२ औमि १ का१	३	४	२ कुम १ कुश्रु १	१ अस	२ च १ अच १	द्र २ का१ शु १ भा३ अशुभ	२	१ मिथ्या	२	२	४ ज्ञा २ द २

सामान्य ति- र्यंच सासाद न रचना	१ सासा	२ संप १ स अ१	६।६	१०।७	४	१ ति	१ पं	१ त्र	११ म ४ व ४ औ२ का १	३	४	३ कुज्ञान	१ अस	२ च १ अच १	द्र ६ भा ६	१ भ	१ सासा	१ सं	२	५ ज्ञा३ द २
सामान्य ति र्यंच सासा- दन पर्याप्त रचना	१ सासा	१ सं प	६	१०	४	१ ति	१ प	१ त्र	६ म ४ व ४ औ१	३	४	१ कुज्ञान	१ अस	२ च १ अच १	द्र ६ भा ६	१ भ	१ सा	१ सं	१ आहा	५ ज्ञा ३ द २
सामान्य ति- र्यंच सासा- दन अपर्याप्त रचना	१ सासा	१ स अ	६	७	४	१ ति	१ पं	१ त्र	२ औमि १का	३	४	२ कुम १ कुश्रु १	१ असं	२ च १ अच १	द्र२क २ शु१ भा ३ अशु	१ भ	१ सा	१ सं	२	४ ज्ञा२ द२
सामान्य ति- र्यंच सम्यग्मि- थ्यादृष्टि रचना	१ मिश्र	१ सं प	६	१०	४	१ ति	१ प	१ त्र	६ म४ व ४ औ१	३	४	३ मिश्र	१ असं	२ च १ अच १	द्र ६ भा६	१ भ	१ मिश्र	१ सं	१ आहा	५ ज्ञा३ द -
सामान्य ति- र्यंच असंयत रचना	१ अस	२ संप सअ	६।६	१०।७	४	१ ति	१ पं	१ त्र	११ म ४ व ४ औ२ का १	३	४	३ मत्या दिक	१ अस	३ आदि के	द्र ६ भा ६	१ भ	३ उ १ व १ क्षा १	१ सं	२	६ ज्ञा द ३
सामान्य ति- र्यंच असंयत- पर्याप्त रचना	१ असं	१ सप	६	१०	४	१ ति	१ प	१ त्र	६ म ४ व ४ औ१	३	४	३ मत्या दिक	१ अस	३ आदि के	द्र ३ भा६	१ भ	३ उ १ वे १ क्षा१	१ स	१ आहा	६ ज्ञा३ द ३
सामान्य ति- र्यंचअसंयतअ पर्याप्त रचना	१ अस	१ संअ	६	७	४	१ ति	१ पं	१ त्र	२ औमि १का१	१ पुरुष	४	३ मत्या दिक	१ असं	३ आदि- क	द्र २ क१शु१ भा १ कपोत	१ भ	२ वे१ क्षा १	१ स	२	६ ज्ञा३ द ३

सामान्यतिर्यंचदेश संयम रचना	१ देश	१ सप	६	१०	४	१ ति	१ पं	१ त्र	६ म४ व४ औ१	३	४	३ मत्यादिक	१ देश	३ आदि के	द्र ६ भा३ शुभ	१ भ	२ औ१ वे १	१ स	१ आ	६ ज्ञा३ द ३
पंचेंद्री तिर्यंच रचना	५ आदिके	४ सप१ सअ १ असंप १ असंअ १	६।६ ५।५	१०।७ ९।७	४	१ ति	१ पं	१ त्र	११ म४ व४ औ२ का१	३	४	६ मत्यादिक३ कुज्ञान ३	२ असं१ देश१	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा६	२	६	२	२	६ ज्ञा६ द ३
पंचेंद्री तिर्यंच पर्याप्त रचना	५ आदिके	१ सप१ असंप१	६।५	१०।९	४	१ ति	१ प	१ त्र	९ म४ व४ औ१	३	४	६ कुज्ञान ३ मत्यादि३	२ असं१ देश १	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा ६	२	६	२	१ आहा	६ ज्ञा६ द ३
पंचेंद्री तिर्यंच अपर्याप्त रचना	३ मि१ सा १ अवि १	२ सअ १ असंअ १	६।५	७।७	४	१ ति	१ पं	१ त्र	२ औमि १का१	३	४	५ कुम १ कुश्रुत १ मत्यादि ३	१ असं	३ चक्षु आदि	द्र २ क १ शु १ भा३ अशुभ	२	४ मिथ्या १ सा१ वे १ क्षा १	२	२	८ ज्ञा५ द ३
पंचेंद्री तिर्यंच मिथ्या दृष्टि रचना	१ मिथ्या	४ सप १ सअ १ असंप १ असंअ १	६।६ ५।५	१०।७ ९।७	४	१ ति	१ पं	१ त्र	११ म४ व४ औ२ का१	३	४	३ कुज्ञान	१ असं	२ च१ अच१	द्र ६ भा६	२	१ मिथ्या	२	२	५ ज्ञा ३ द २
पंचेंद्री तिर्यंच मिथ्यादृष्टि पर्याप्त रचना	१ मि	२ सप१ असंप१	६।५	१०।९	४	१ ति	१ प	१ त्र	९ म४ व४ औ१	३	४	३ कुज्ञान	१ असं	२ च १ अच १	द्र ६ भा६	२	१ मिथ्या	२	१ आहा	५ ज्ञा३ द २
पंचेंद्री तिर्यंच मिथ्या दृष्टि अपर्याप्त रचना	१ मि	२ सअ असंअ १	६।५	७।७	४	१ ति	१ पं	१ त्र	२ औमि १का१	३	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ असं	२ च १ अच१	द्र २ क१ शु १ भा३ अशुभ	२	१ मिथ्या	२	२	४ ज्ञा द २

पचेंद्री तिर्यं- च सासादन र ना	१ सा	२ संप१ सअ१	६-६	१०।७	४	१ ति	१ प	१ त्र	१० म४ व४ औ२ का१	३	४	३ कुज्ञान	१ अस	२ च१ अच१	द्र ६ भा६	१ भ	१ सासा	१ स	२	५ क्षा३ द२
पचेंद्री तिर्यंच सासादन पर्याप्त रचना	१ सा	१ सं प	६	१०	४	१ ति	१ प	१ त्र	९ म४ व४ औ१	३	४	३ कुज्ञान	१ असं	२ च१ अच१	द्र ६ भा६	१ भ	१ सा	१ स	१ आहा	५ क्षा३ द२
पंचेंद्री तिर्यंच सासादन अपर्याप्त रचना	१ सा	१ स अ	६	७	४	१ ति	१ पं	१ त्र	२ औमि का१	३	४	२ कुम कुश्रु१	१ अस	२ च१ अच१	द्र२ का१शु १भा३ अशुभ	१ भ	१ सा	१ सं	१	४ क्षा२ द२
पंचेंद्री तिर्यंच मिश्र रचना	१ मिश्र	१ सं प	६	१०	४	१ ति	१ पं	१ त्र	९ म४ व४ औ१	३	४	३ मिश्र	१ अस	२ च१ अच१	द्र ६ भा६	१ भ	१ मिश्र	१ स	१ आहा	५ क्षा३ द२
पचेंद्री तिर्यंच असंयत रचना	१ असं	२ सप १ संअ १	६ ६	१०।७	४	१ ति	१ पं	१ त्र	११ म४ व४ औ२ का१	३	४	३ मत्यादिक	१ असं	३ चक्षु आदि	द्र६ भा६	१ भ	३ उ१ वे१ क्षा१	१ सं	२	६ क्षा३ द३
पंचेंद्री तिर्यंच असंयत पर्याप्त रचना	१ असं	१ सं प	६	१०	४	१ ति	१ पं	१ त्र	९ म४ व४ औ१	३	४	३ मत्यादिक	१ असं	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा६	१ भ	३ उ१ वे१ क्षा१	१ सं	१ आहा	६ क्षा३ द३
पचेंद्री तिर्यंच असंयतअपर्याप्तरचना	१ असं	१ सअ	६	७	४	१ ति	१ पं	१ त्र	२ औमि१ का१	१ पुरुष	४	३ मत्यादि	१ अस	३ चक्षु आदि	द्र ६ का१शु १भा२ कपोत	१ भ	२ क्षा१ वे१	१ स	२	६ क्षा३ द३

पचेंद्री तिर्यंच देश संयत रचना	१ देश	१ सं प	६	१०	४	१ ति	१ पं	१ त्र	६ म ४ व ४ औ १	३	४	३ मत्या दिक	१ देश	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा३ शुभ	१ भ	२ उ१ वे १	१ सं	१ आहा	६ क्षा ३ द ३
पचेंद्री पर्याप्त तिर्यंचरचना पचेंद्री तिर्यंच वत् है	पंचें द्रीवत्	पं० वत्	पं० वत्	पं० वत्	पं० वत्	पं० वत्	पं० वत्	पं० वत्	पं० वत्	पं० वत्	पं० वत्	पं० वत्	पं० वत्	पं० वत्	पं० वत्	पं० वत्	पं० वत्	पं० वत्	पं० वत्	पं० वत्
योनिमती तिर्यंच जो तिर्यंचणी ताकी रचना	५ आदिके	४सं प १सं अ १असं प १ अ सं अ१	६।६ ५।५	१०।७ ६।७	४	१ ति	१ पं	१ त्र	११ म ४ व ४ औ २ का१	१ स्त्री	४	६ कुज्ञा न ३ मत्या दि३	२ असं१ देश१	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा६	२	५ क्षायि क विना	२	२	६ क्षा६ द३
योनिमती तिर्यंच पर्याप्त रचना	५ आदिके	२ सं प१ असं प १	६।५	१०।६	४	१ ति	१ पं	१ त्र	६ म ४ व ४ औ १	१ स्त्री	४	६ कुज्ञा न३ मत्या दिक३	२ असं १ देश१	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा६	२	५ क्षा यिक विना	२	१ आहा	६ क्षा६ द ३
योनिमती तिर्यंच अपर्याप्त रचना	२ मिथ्या१ सा १	१ संअ१ असं अ१	६।५	७।७	४	१ ति	१ पं	१ त्र	२ औमि१ का१	१ स्त्री	४	२ कुम १ कुश्रु १	१ असं	२ च १ अच१	द्र २ का१ शु १ भा३ अशुभ	२	२ मिथ्या १ सा सा १	२	२	४ क्षा २ द २
योनिमती तिर्यंच मिथ्यादृष्टि रचना	१ मिथ्या	४संप१ संअ १ असंप १ असं अ १	६।६ ५।५	१०।७ ६।७	४	१ ति	१ पं	१ त्र	११ म ४ व ४ औ २ का१	१ स्त्री	४	३ कुज्ञान	१ असं	२ च १ अच१	द्र ६ भा६	२	१ मिथ्या	२	२	५ क्षा ३ द २
योनिमती तिर्यंच मिथ्या दृष्टि पर्याप्त रचना	१ मिथ्या	२ सं प असं प१	६।५	१०९	४	१ ति	१ पं	१ त्र	६ म४ व४ औ१	१ स्त्री	४	३ कुज्ञान	१ असं	२ च १ अच १	द्र ६ भा६	२	१ मिथ्या	२	१ आहा	५ क्षा ३ द २

योनिमती तिर्यंच मिथ्यादृष्टि अपर्याप्त रचना	१ मिथ्या	२ मअ १ अस अ १	६।५	७।७	४	१ ति	१ प	१ त्र	२ औमि १ का १	१ स्त्री	४	२ कुम १ कुश्रु १	१ अस	२ च १ अच १	द्र २ का शु १ भा ३ अशुभ	२	१ मिथ्या	२	२	४ ज्ञा २ द २
योनिमती तिर्यंच सासादन रचना	१ सा	२ स प १ स अ १	६।६	१०।७	४	१ ति	१ प	१ त्र	११ म ४ व ४ औ २ का १	१ स्त्री	४	३ कुज्ञान	१ अस	२ च १ अच १	द्र ६ भा ६	१ भ	१ सा	१ स	२	५ ज्ञा ३ द २
योनिमती तिर्यंच सासादन पर्याप्त रचना	१ सा	१ स प	६	१०	४	१ ति	१ प	१ त्र	९ म ४ व ४ औ १	१ स्त्री	४	३ कुज्ञान	१ अस	२ च १ अच १	द्र ६ भा ६	१ भ	१ सा	१ स	१ आहा	५ ज्ञा ३ द २
योनिमती तिर्यंच सासादन अपर्याप्त रचना	१ सा	१ स अ	६	७	४	१ ति	१ प	१ त्र	२ औमि १ का १	१ स्त्री	४	२ कुम १ कुश्रु १	१ अस	२ च १ अच १	द्र २ का शु १ भा ३ अशुभ	१ भ	१ सा	१ स	२	४ ज्ञा २ द २
योनिमती तिर्यंच मिश्र रचना	१ मिश्र	१ सप	६	१०	४	१ ति	१ प	१ त्र	९ म ४ व ४ औ १	१ स्त्री	४	३ मिश्र	१ अस	२ च १ अच १	द्र ६ भा ६	१ भ	१ मिश्र	१ स	१ आहा	५ ज्ञा ३ द २
योनिमती तिर्यंच असंयत रचना	१ अस	१ स प	६	१०	४	१ ति	१ प	१ त्र	९ म ४ व ४ औ १	१ स्त्री	४	३ मत्यादिक	१ अस	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा ६	१ भ	२ उ १ वे १	१ स	१ आहा	६ ज्ञा ३ द ३
योनिमती तिर्यंच देशसंयत रचना	१ देश	१ स प	६	१०	४	१ ति	१ प	१ त्र	९ म ४ व ४ औ १	१ स्त्री	४	३ मत्यादि	१ देश	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा ३ शुभ	१ भ	२ उ १ वे	१ स	१ आहा	६ ज्ञा ३ द ३

पचेंद्रिय तिर्यंच लब्धि अपर्याप्तक रचना	१ मिथ्या	२ सअ१ अस अ१	६।५	७।७	४	१ ति	१ प	१ त्र	२ औ १ का१	१ नपु	४	१ कुम १ कुश्रु १	१ असं	२ च १ अच१	द्र २ का१शु१ भा ३ अशुभ	२	१ मिथ्या	२	२	४ ज्ञा २ द २
व्याप्तिकार मनुष्यनिविषे सामान्य मनुष्यरचना	१४	२ सं प१ सं अ१	६।६	१०।७ ४।३ १	४	१ म	१ प	१ त्र	१३ वैकि-यकद्वि कवि-ना	३	४	८	७	४	द्र६ भा६	२	६	१ सं	२	१२
सामान्य मनुष्य पर्याप्त रचना	१४	१ स प	६	१० ४ १	४	१ म	१ प	१ त्र	१० म ४ व ४ औ१ आ१	३	४	८	७	४	द्र६ भा६	२	६	१ सं	१ आहा	१२
सामान्य मनुष्य अपर्याप्त रचना	५ मिथ्या१ सा१ अवि१ प्र१स१	१ सं अ	६	७ २	४	१ म	१ प	१ त्र	३ औमि१ आमि १का१	३	४	६ विभंग मन. पर्यय विना	४ असं १सा१ छे१ यथा १	४	द्र २ का१शु १ भा६	२	४ मिथ्या १ सा१ वेद१ क्षा१	१ सं	२	१० ज्ञा६ द४
सामान्य मनुष्यमिथ्यादृष्टिरचना	१ मिथ्या	२ सप१ सअ१	६।६	१०।७	४	१ म	१ प	१ त्र	११ म४ व४ औ २ का१	३	४	३ कुज्ञान	१ अस	२ च १ अच१	द्र ६ भा६	२	१ मिथ्या	१ स	२	५ ज्ञा ३ द २
सामान्यमनुष्यमिथ्यादृष्टि पर्याप्त रचना	१ मि	१ सप	६	१०	४	१ म	१ प	१ त्र	६ म ४ व ४ औ१	३	४	३ कुज्ञान	१ अ	२ च १ अच १	द्र ६ भा६	२	१ मिथ्या	१ स	१ आहा	५ ज्ञा ३ द २
सामान्य मनुष्यमिथ्यादृष्टि अपर्याप्त रचना	१ मि	१ सअ	६	७	४	१ म	१ प	१ त्र	२ औमि१ का१	३	४	२ कुम १ कुश्रु १	१ अस	२ च १ अच १	द्र २ क १शु १ भा३ अशुभ	२	१ मिथ्या	१ स	२	४ ज्ञा २ द २

सामान्यमनुष्य अपर्याप्त रचना	१ सा	२ सप १ सं अ १	६।६	१०।७	४	१ म	१ पं	१ त्र	११ म ४ व ४ औ २ का १	३	४	३ कुज्ञान	१ असं	२ च १ अच १	द्र ६ भा ६	१ भ	१ सा	१ सं	२	५ ज्ञा ३ द २
सामान्य मनुष्य सासादन पर्याप्त रचना	१ सा	१ सप	६	१०	४	१ म	१ पं	१ त्र	६ म ४ व ४ औ १	३	४	३ कुज्ञान	१ असं	२ च १ अच १	द्र ६ भा ६	१ भ	१ सा	१ सं	१ आहा	५ ज्ञा ३ द २
सामान्य मनुष्य सासादन अपर्याप्त	१ सा	१ सअ	६	७	४	१ म	१ पं	१ त्र	२ औमि १ का १	३	४	२ कुम १ कुश्रु १	१ असं	२ च १ अच १	द्र २ का १ शु १ भा ३ अशुभ	१ भ	१ सा	१ स	२	४ ज्ञा २ द २
सामान्य मनुष्य सम्यग्मिथ्यादृष्टि रचना	१ मिश्र	१ सप	६	१०	४	१ म	१ पं	१ त्र	६ म ४ व ४ औ १	३	४	३ मिश्र	१ अस	२ च १ अच १	द्र ६ भा ६	१ भ	१ मिश्र	१ स	१ आहा	५ ज्ञा ३ द २
सामान्यमनुष्य असंयत रचना	१ असं	२ सप १ स अ १	६।६	१०।७	४	१ म	१ पं	१ त्र	११ म ४ व ४ औ २ का १	३	४	३ मत्यादिक	१ अस	३ चक्षु-आदि	द्र ६ भा ६	१ भ	३ उ १ वे १ क्षा १	१ सं	२	६ ज्ञा ३ द ३
सामान्य मनुष्य असंयत पर्याप्त रचना	१ असं	१ संप	६	१०	४	१ ति	१ पं	१ त्र	६ म ४ व ४ औ १	३	४	१ मत्यादिक	१ असं	३ चक्षु-आदि	द्र ६ भा ६	१ भ	३ उ १ वे १ क्षा १	१ सं	१ आहा	६ ज्ञा ३ द ३
सामान्य मनुष्य असंयत अपर्याप्त रचना	१ असं	१ संअ	६	७	४	१ म	१ पं	१ त्र	२ औमि २ का १	१ पु	४	३ मत्यादिक	१ अस	३ चक्षु आदि	द्र २ का १ शु १ भा ६	१ भ	२ वे १ क्षा १	१ सं	२	६ ज्ञा ३ द ३

सामान्य मनुष्य देशसंयतरचना	१ दे	१ सं प	६	१०	४	१ म	१ पं	१ त्र	९ म४ व४ औ१	३	४	३ मत्यादिक	१ दे	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा३ शुभ	१ भ	३ उ १ वे १ क्षा१	१ स	१ आहा	६ ज्ञा३ द ३
सामान्य मनुष्य प्रमत्त रचना	१ प्र	२ संप१ संअ१	६।६	१०।७	४	१ म	१ पं	१ त्र	११ म४ व ४ औ१ आहा२	३ भाव अपेक्षा द्रव्य पुरुष	४	४ मत्यादिक	३ सा१ छे१ प१	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा ३ शुभ	१ भ	३ उ १ वे १ क्षा १	१ सं	१ आहा	७ ज्ञा४ द ३
सामान्य मनुष्य प्रमत्त पर्याप्त रचना	१ प्र	१ सप	६	१०	४	१ म	१ प	१ त्र	१० म ४ व ४ औ १ आ१	३	४	४ मत्यादिक	३ सा१ छे १ प १	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा३ शुभ	१ भ	३ उ १ वे १ क्षा१	१ स	१ आहा	७ ज्ञा३ द ३
सामान्य मनुष्य प्रमत्त आहारक अपेक्षा अपर्याप्त रचना	१ प्र	१ संअ	६	७	४	१ म	१ प	१ त्र	१ आहारक मिश्र	१ पुरुष	४	३ मत्यादिक	२ सा१ छे१	३ चक्षु आदि	द्र १ कपोत भा ३ शुभ	१ भ	२ वे१ क्षा१	१ स	१ आहा	६ ज्ञा३ द ३
सामान्य मनुष्य अप्रमत्त रचना	१ अप्र	१ सप	६	१०	३ आहार विना	१ म	१ प	१ त्र	९ म ४ व ४ औ१	३	४	३ मत्यादिक	३ सा१ छे१ प १	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा ३ शुभ	१ भ	३ उ१ वे१ क्षा१	१ सं	१ आहा	७ ज्ञा४ द ३
सामान्य मनुष्य अपूर्वकरण रचना	१ अपू	१ सं प	६	१०	३ आहार विना	१ म	१ पं	१ त्र	९ म४ व४ औ१	३	४	३ मत्यादिक	२ सा१ छे १	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा१ शुक्ल	१ भ	२ द्वितीयोपशम १ क्षायिक १	१ सं	१ आहा	७ ज्ञा४ द३
सामान्यमनुष्य अनिवृत्तिकरण प्रथमभाग रचना	१ अनि	१ संप	६	१०	२ मै १ प १	१ मं	१ प	१ त्र	९ म ४ व ४ औ१	३	४	४ मत्यादिक	२ सा १ छे १	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा १ शुक्ल	१ भ	२ उ १ क्षा१	१ स	१ आहा	७ ज्ञा ४ द ३

सामान्य मनुष्य अनिवृत्ति करण द्वितीय भाग रचना	१ अनि	१ संप	६	१०	१ प	१ म	१ पं	१ त्र	९ म ४ व ४ औ १	०	४	४ मत्यादिक	२ सा १ छे १	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा १ शुक्ल	१ भ	२ उ १ क्षा १	१ सं	१ आहा	७ ज्ञा ४ द ३
सामान्य मनुष्य अनिवृत्ति करण तृतीय भाग रचना	१ अनि	१ संप	६	१०	१ प	१ म	१ पं	१ त्र	९ म४ व४ औ१	०	३ मान१ माया१ लोभ१	४ मत्यादिक	२ सा१ छे१	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा१ शुक्ल	१ भ	२ उ क्षा१	१ सं	१ आहा	७ ज्ञा४ द ३
सामान्य मनुष्य अनिवृत्ति करण चतुर्थ भाग रचना	१ अनि	१ संप	६	१०	१ प	१ म	१ पं	१ त्र	९ म ४ व ४ औ १	०	२ माया१ लोभ१	४ मत्यादिक	२ सा१ छे१	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा १ शुक्ल	१ भ	२ उ१ क्षा१	१ सं	१ आहा	७ ज्ञा४ द ३
सामान्य मनुष्य अनिवृत्ति करण पंचम भाग रचना	१ अनि	१ संप १	६	१०	१ प	१ म	१ पं	१ त्र	९ म ४ व ४ औ१	०	१ लोभ	४ मत्यादिक	२ सा१ छे१	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा १ शुक्ल	१ भ	२ उ १ क्षा१	१ सं	१ आहा	७ ज्ञा४ द ३
सामान्य मनुष्य सूक्ष्म सांपराय रचना	१ सू	१ संप	६	१०	१ प	१ म	१ पं	१ त्र	९ म ४ व ४ औ १	०	१ लोभ	४ मत्यादिक	१ सूक्ष्म	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा १ शुक्ल	१ भ	२ उ १ क्षा१	१ सं	१ आहा	७ ज्ञा४ द ३
सामान्य मनुष्य उपशान्त कषाय रचना	१ उ	१ संप	६	१०	१ प	१ म	१ पं	१ त्र	९ म४ व४ औ १	०	०	४ मत्यादिक	१ यथा	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा १ शुक्ल	१ भ	२ द्वि१ क्षा१	१ सं	१ आहा	७ ज्ञा४ द ३
सामान्य मनुष्य [illegible]	१ [illegible]	१ [illegible]	६	१०	०	१ म	१ पं	१ त्र	९ म ४ व ४ औ १	०	०	[illegible] मत्यादिक	१ यथा	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा १ शुक्ल	१ भ	१ क्षा	१ सं	१ आहार	७ ज्ञा ४ द ३

सामान्य मनुष्य सयोग केवलीरचना	१ सयो	२ स प१ सअ१	६।६	४।२	०	१ म	१ पं	१ त्र	७ मर वर और का१	०	०	१ के	१ यथा	१ के	द्र ६ भा१ शुक्ल	१ भ	१ क्षा	०	२	२ क्षा १ द १
सामान्य मनुष्य अयोग केवली रचना	१ अयो	१ प	६	१ आयु	०	१ म	१ पं	१ त्र	०	०	०	१ के	१ यथा	१ के	द्र ६ भा० नास्ति	१ भ	१ क्षा	०	१ अनाहारक	२ क्षा १ द १
पर्याप्त मनुष्य रचना सामान्य मनुष्य पर्याप्तवत्	सामान्य मनुष्य पर्याप्त वत	सा० वत्	सा० वत्	सा० वत्	सा० वत्	मा० त्	सा० वत्	सा० वत्	सा० वत्	सा० वत्	सा० वत्	सा० वत्	सा० वत्	सा० वत्	सा० वत्	सा० वत्	सा० वत्	सा० वत्	सा० वत्	सा० वत्
योनिमत मनुष्यणीकी रचना	१४	२ सं प१ सअ	६।६	१०।७ ४।२ १	४	१ म	१ प	१ त्र	११ म४ व४ औ२ का१	१ स्त्री	४	७ मनःपर्यय विना	६ परिहारविशुद्धि विना	४	द्र ६ भा६	२	६	१ सं	२	११ ज्ञा७ द४
मनुष्यणी पर्याप्त रचना	१४	१ सप	६	१० ४ १	४	१ म	१ प	१ त्र	६ म४ व४ औ१	१ स्त्री	४	७ मनःपर्ययविना	६ परिहारविशुद्धि विना	४	द्र ६ भा६	२	६	१ सं	२ आहा	११ ज्ञा७ द ४
मनुष्यणी अपर्याप्त रचना	३ मि सा मवा	१ स अ	६	७।२	४	१ म	१ पं	१ त्र	२ औमि १ का१	१ स्त्री	४	३ कुम १ कुश्रु१ केवल १	२ अस १ यथा १	३ च १ अच १ केव १	द्र२क१ शु, भा ४ अशु ३ शुक्ल१	२	३ मिथ्या १ सा१ क्षा १	१ सं	२	६ ज्ञा ३ द ३
मनुष्यणी निर्वृत्त्यपर्याप्त रचना	१ मि	२ सप१ सअ१	६।६	१०।७	४	१ म	१ प	१ त्र	११ म४ व४ औ२ का१	१ स्त्री	४	३ कुज्ञान	१ अस	२ च१ अच१	द्र ६ भा ६	२	१ मिथ्या	१ स	२	५ ज्ञा३ द २

मनुष्यणी देश संयत रचना	१ देश	१ सं प	६	१०	४	१ म	१ पं	१ त्र	६ म ४ व ४ औ१	१ स्त्री	४	३ मत्यादिक	१ देश	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा३ शुभ	१ भ	३ उ१ वे १ क्षा१	१ सं	१ आहा	६ ज्ञा३ द३
मनुष्यणी प्रमत्त रचना	१ प्र	१ संप१	६	१०	४	१ म	१ पं	१ त्र	६ म४ व४ औ १	१ स्त्री	४	३ मति आदि	२ सा छे	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा३ शुभ	१ भ	३ उ१ वे १क्षा१	१ सं	१ आहा	६ ज्ञा ३ द ३
मनुष्यणी अप्रमत्त रचना	१ अप्र	१ सप	६	१०	३ आहार विना	१ म	१ पं	१ त्र	६ म ४ व ४ औ१	१ स्त्री	४	३ मत्यादिक	२ सा१ छे१	२ चक्षु आदि	द्र ६ भा३ शुभ	१ भ	३ उ१ वे१ क्षा१	१ सं	१ आहा	६ ज्ञा ३ द ३
मनुष्यणी अपूर्व करण रचना	१ अपू	१ सप	६	१०	३ आहार विना	१ म	१ प	१ त्र	६ म ४ व ४ औ १	१ स्त्री	४	३ मति आदि	२ सा१ छे१	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा१ शुक्ल	१ भ	२ उ१ क्षा१	१ स	१ आहा	६ ज्ञा ३ द ३
मनुष्यणी अनिवृत्तिकरण प्रथम भाग रचना	१ अनि	१ सप	६	१०	२ मै१ प१	१ म	१ पं	१ त्र	६ म४ व ४ औ१	१ स्त्री	४	३ मति आदि	२ सा१ छे१	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा१ शुक्ल	१ भ	२ उ १ क्षा१	१ सं	१ आहा	६ ज्ञा ३ द ३
मनुष्यणी-अनिवृत्तिकरणद्वितीय भागरचना	१ अनि	१ संप	६	१०	१ प	१ म	१ पं	१ त्र	६ म ४ व ४ औ१	०	४	३ मति आदि	२ सा १ छे १	३ चक्षु आदि	द्र६ भा१ शुक्ल	१ भ	२ उ १ क्षा १	१ सं	१ आहा	६ ज्ञा ३ द ३
मनुष्यणी-अनिवृत्तिकरणतृतीय भागरचना	१ अनि	१ सप	६	१०	१ प	१ म	१ प	१ त्र	६ म ४ व ४ औ १	०	३ मान१ माया१ लोभ १	३ मति आदि	२ सा१ छे १	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा १ शुक्ल	१ भ	२ उ १ क्षा १	१ सं	१ आहा	६ ज्ञा३ द ३

मनुष्यणी अनिवृत्तिकरण चतुर्थ भागरचना	१ अनि	१ सप	६	१०	१ प	१ म	१ प	१ त्र	६ म४ व४ औ१	०	२ माया१ लोभ१	३ मति आदि	२ सा १ छे १	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा१ शुक्ल	१ भ	२ औ १ क्षा १	१ स	१ आहा	६ ज्ञा ३ द ३
मनुष्यणी अनिवृत्तिकरण पञ्चम भागरचना	१ अनि	१ सप	६	१०	१ प	१ म	१ पं	१ त्र	६ म४ व४ औ१	०	१ बादर लोभ	३ मति आदि	२ सा १ छे १	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा१ शुक्ल	१ भ	२ उ १ क्षा१	१ स	१ आहा	६ ज्ञा ३ द ३
मनुष्यणी सूक्ष्मसाम्परायरचना	१ सू	१ स प	६	१०	१ प	१ म	१ पं	१ त्र	६ म ४ व ४ औ १	०	१ सूक्ष्म लोभ	३ मति आदि	१ सूक्ष्म	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा १ शुक्ल	१ भ	२ उ १ क्षा१	१ सं	१ आहा	६ ज्ञा ३ द
मनुष्यणी उपशान्त कषाय रचना	१ उप	१ स प	६	१०	०	१ म	१ पं	१ त्र	६ म ४ व४ औ१	०	०	३ मति आदि	१ यथा	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा१ शुक्ल	१ भ	२ उ१ क्षा१	१ स	१ आहा	६ ज्ञा३ द३
मनुष्यणी क्षीणकषाय रचना	१ क्षी	२ स प	६	१०	०	१ म	१ प	१ त्र	६ म४ व४ औ१	०	०	३ मति आदि	१ यथा	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा१ शुक्ल	१ भ	१ क्षा	१ सं	१ आहा	६ ज्ञा३ द३
मनुष्यणी सयोगी रचना	१ सयो	२ स प १ स अ१	६।६	४।२	०	१ म	१ प	१ त्र	७ म २ व २ औ२ का १	०	०	१ के	१ यथा	१ के	द्र ६ भा १ शुक्ल	१ भ	१ क्षा	०	२	२ ज्ञा१ द१
मनुष्यणी अयोगी रचना	१ अयो	१ प	६	१ आयु	०	१ म	१ प	१ त्र	०	०	०	१ के	१ यथा	१ के	द्र ६ भा०	१ भ	१ क्षा	०	१ अना	२ ज्ञा१ द १

मनुष्य लब्धि अपर्याप्तक रचना	१ मिथ्या	१ सअ	६	७	४	१ म	१ पं	१ त्र	२ औमि१ का१	१ नपुं	४	२ कुम१ कुश्रु	१ अस	२ च १ अच १	द्र २ का१शु १भा३ अशुभ	२	१ मिथ्या	१ सं	२	४ ज्ञा २ द २
देवगति रचना	४ आदिके	२ स प१ संअ१	६-६	१०-७	४	१ दे	१ प	१ त्र	११ म ४ व ४ वै २ का१	२ स्त्री१ पुं१	४	६ कुज्ञान ३मत्या दि३	१ अस १	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा६	२	६	१ सं	१ आहा	६ ज्ञा६ द ३
देवगति पर्याप्त रचना	४ आदिके	१ सप	६	१०	४	१ दे	१ पं	१ त्र	९ म ४ व ४ वै १	२ स्त्री१ पुं१	४	६ कुज्ञान ३मत्या दि३	१ असं	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा ३ शुभ	२	६	१ स	१ आहा	६ ज्ञा६ द ३
देवगति अपर्याप्त रचना	३ मि१ सा१ अवि१	१ सअ	६	७	४	१ दे	१ पं	१ त्र	२ वैमि१ का१	२ स्त्री१ पु १	४	५ कुम१ कुश्रु१ मत्या दि३	१ असं	३ चक्षु आदि	द्र २ का१ शु१ भा६	२	५ मिश्र विना	१ सं	२	८ ज्ञा५ द ३
देव मिथ्या दृष्टि रचना	१ मि	२ सप१ सअ१	६।६	१०।७	४	१ दे	१ पं	१ त्र	११ म ४ व ४ वै २ का१	२ स्त्री१ पुं१	४	३ कुज्ञान	१ अस	२ च१ अच१	द्र ६ भा ६	२	१ मिथ्या	१ स	२	५ ज्ञा३ द २
देव मिथ्या दृष्टि पर्याप्त रचना	१ मि	१ सप १	६	१०	४	१ दे	१ पं	१ त्र	९ म ४ व ४ वै १	२ स्त्री१ पुं१	४	३ कुज्ञान	१ असं	२ च१ अच१	द्र ६ भा ३ शुभ	२	१ मिथ्या	१ सं	१ आहा	५ ज्ञा३ द२
देव मिथ्या दृष्टि अपर्याप्त रचना	१ मि	१ स अ	६	७	४	१ दे	१ पं	१ त्र	२ वैमि का१	२ स्त्री१ पुं१	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ अस	२ च१ अच१	द्र २ का१शु १ भा६	२	१ मिथ्या	१ स	२	५ ज्ञा३ द २

देव सासादन पर्याप्त रचना	१ सा	२ स प१ सअ१	६।६	१० ७	४	१ दे	१ प	१ त्र	११ म४ व४ वै २ का१	२ स्त्री१ पु १	४	३ कुज्ञान	१ अस	२ च १ अच १	द्र ६ भा ६	१ भ	१ सासा	१ स	२	५ ज्ञा ३ द २
देव सासादन पर्याप्त रचना	२ सा	१ सप	६	१०	४	१ दे	१ प	१ त्र	९ म४ व ४ वै १	२ स्त्री१ पु १	४	३ कुज्ञान	१ अस	२ च १ अच१	द्र ६ भा३ शुभ	१ भ	१ सा	१ स	२	५ ज्ञा३ द २
देव सासादन अपर्याप्त रचना	१ सा	१ स अ	६	७	४	१ दे	१ प	१ त्र	२ वैमि१ का१	२ स्त्री१ पु१	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ अस	२ च१ अच१	द्र २ का१ शु१ भा३	१ भ	१ सा	१ स	२	४ ज्ञा२ द२
देव सम्यग्मिथ्या दृष्टि रचना	१ मिश्र	१ स प	६	१०	४	१ दे	१ प	१ त्र	९ म४ व४ वै १	२ स्त्री१ पु१	४	३ मिश्र	१ अस	२ च १ अच१	द्र६ भा३ शुभ	१ भ	१ मिश्र	१ स	१ आहा	५ ज्ञा३ द२
देव असंयत रचना	१ अस	२ स प१ सअ१	६।६	१०।७	४	१ दे	१ प	१ त्र	११ म ४ व ४ वै २ का१	२ स्त्री१ पु १	४	३ मत्या-दिक	१ अस	३ चक्षु-आदि	द्र ६ भा ३ शुभ	१ भ	३ उ १ वे १ क्षा१	१ सं	२	६ ज्ञा३ द ३
देव असंयत पर्याप्त रचना	१ असं	१ सप	६	१०	४	१ दे	१ प	१ त्र	९ म ४ व ४ वै १	२ स्त्री१ पु१	४	३ मति आदि	१ अस	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा ३ शुभ	१ भ	३ उ १ वे १ क्षा १	१ सं	१ आहा	७ ज्ञा४ द ३
देव असंयत अपर्याप्त रचना	१ अस	१ संअ	६	७	४	१ दे	१ प	१ त्र	२ वैमि१ का१	१ पुरुष	४	३ मति आदि	१ अस	३ चक्षु आदि	द्र २ का१शु १भा३ शुभ	१ भ	३ उ १ वे १ क्षा१	१ स	२	६ ज्ञा३ द ३

भवनत्रिक देव रचना	४ आदिके	२ सं.प१ संअ१	६-६	१०-७	४	१ दे	१ पं	१ त्र	११ म ४ व ४ वै २ का१	२ स्त्री१ पुं१	४	६ कुज्ञान३ मत्या दि३	१ असं१	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा४ अशुभ ३ पी१	२	५ क्षायिक बिना	१ सं	१ आहा	६ ज्ञाद द ३
भवनत्रिक देव पर्याप्त रचना	४ आदिके	१ संप	६	१०	४	१ दे	१ पं	१ त्र	६ म ४ व ४ वै १	२ स्त्री१ पुं१	४	६ कुज्ञान ३ मत्या दि३	१ असं	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा १ पीत	२	५ क्षायिक बिना	१ सं	१ आहा	६ ज्ञाद द ३
भवनत्रिक देव अपर्याप्त रचना	२ मि१ सा१	१ संअ	६	७	४	१ दे	१ पं	१ त्र	२ वैमि१ का१	२ स्त्री१ पुं१	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ असं	२ च१ अच१	द्र २ का१शु१ भा३ अशुभ	२	२ मिथ्या१ सा१	१ सं	२	४ ज्ञा२ द २
भवनत्रिक देवमिथ्या दृष्टि रचना	१ मि	२ संप१ संअ१	६।६	१०।७	४	१ दे	१ पं	१ त्र	११ म ४ व ४ वै २ का१	२ स्त्री१ पुं१	४	३ कुज्ञान	१ अस	२ च१ अच१	द्र ६ भा ४ अशुभ ३ पी१	२	१ मिथ्या	१ सं	२	५ ज्ञा३ द २
भवनत्रिक देव मिथ्या दृष्टि पर्याप्त रचना	१ मि	१ संप १	६	१०	४	१ दे	१ पं	१ त्र	६ म ४ व ४ वै १	२ स्त्री१ पुं१	४	३ कुज्ञान	१ असं	२ च१ अच१	द्र ६ भा १ पीत	२	१ मिथ्या	१ सं	१ आहा	५ ज्ञा३ द२
भवनत्रिक देव मिथ्या दृष्टि अपर्याप्त रचना	१ मि	१ संअ	६	७	४	१ दे	१ पं	१ त्र	२ वैमि१ का१	२ स्त्री१ पुं१	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ असं	२ च१ अच१	द्र २ का१शु१ भा३ अशुभ	२	१ मिथ्या	१ सं	२	४ ज्ञा२ द २
भवनत्रिक देव सासादन रचना	१ सा	२ सं.प१ संअ१	६।६	१०।७	४	१ दे	१ पं	१ त्र	११ म४ व४ वै २ का१	२ स्त्री१ पुं १	४	३ कुज्ञान	१ असं	२ च १ अच १	द्र ६ भा४ अशुभ ३ पी१	१ भ	१ सा	१ सं	२	५ ज्ञा३ द २

भवनत्रिक देव सासादन पर्याप्त रचना	१ सा	१ संप	६	१०	४	१ दे	१ पं	१ त्र	६ म४ व४ वै१	२ स्त्री१ पु१	४	३ कुज्ञान	१ अस	२ च१ अच१	द्र ६ भा१ पीत	१ भ	१ सा	१ स	१ आहा	५ ज्ञा३ द२
भवनत्रिक देव सासादन अपर्याप्त रचना	१ सा	१ स अ	६	७	४	१ दे	१ पं	१ त्र	२ वैमि१ का१	२ स्त्री१ पु१	४	२ कुम१ कुश्रु	१ अस	२ च१ अच१	द्र २ का१ शु१ भा३ अशुभ	१ भ	१ सा	१ स	२	४ ज्ञा२ द२
भवनत्रिक देव सम्यग्मिथ्या दृष्टि रचना	१ मिश्र	१ स प	६	१०	४	१ दे	१ पं	१ त्र	६ म४ व४ वै१	२ स्त्री१ पु१	४	३ मिश्र	१ अस	२ च१ अच१	द्र ६ भा१ पीत	१ भ	१ मिश्र	१ स	१ आहा	५ ज्ञा३ द२
भवनत्रिक देव असंयत रचना	१ अस	१ संप	६	१०	४	१ दे	१ पं	१ त्र	६ म४ व४ वै१	२ स्त्री१ पु१	४	३ मत्यादि	१ अस	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा१ पीत	१ भ	२ उ१ वे१	१ स	१ आहा	६ ज्ञा३ द३
सौधर्म ईशान देव रचना	४ आदि के	२ सं प१ सअ१	६।६	१०।७	४	१ दे	१ पं	१ त्र	११ म४ व४ वै२ का१	२ स्त्री१ पु१	४	६ कुज्ञान३ मत्यादि३	१ अस	३ चक्षु आदि	द्र ३ पी१ क१ शु१ भा१ पीत	२	६	१ स	२	६ ज्ञा६ द३
सौधर्म ईशान देव पर्याप्त रचना	४ आदि के	१ सप	६	१०	४	१ दे	१ पं	१ त्र	६ म४ व४ वै१	२ स्त्री१ पु१	४	६ कुज्ञान३ मत्यादि ३	१ अस	३ चक्षु आदि	द्र १ पीत भा१ पीत	२	६	१ स	१ आहा	६ ज्ञा६ द३
सौधर्म ईशान देव अपर्याप्त रचना	३ मि१ सा१ अवि१	१ सअ	६	७	४	१ दे	१ पं	१ त्र	२ वैमि१ का१	२ स्त्री१ पु१	४	५ कुम१ कुश्रु१ मत्यादि ३	१ असं	३ चक्षु आदि	द्र २ का१ शु१ भा१ पीत	२	५ मिश्र विना	१ स	२	८ ज्ञा५ द३

सौधर्मईशान देवमिथ्या दृष्टिरचना	१ मि	२ संप१ सअ१	६।६	१०।७	४	१ दे	१ पं	१ त्र	११ म४ व४ वै२ का१	२ स्त्री१ पुं१	४	३ कुज्ञान	१ असं	२ च१ अच१	द्र २ पी१क १शु भा१ पीत	२	१ मिथ्या	१ सं	२	५ ज्ञा ३ द २
सौधर्मईशान देवमिथ्या दृष्टिपर्याप्त रचना	१ मि	१ सप	६	१०	४	१ दे	१ पं	१ त्र	६ म४ व४ वै१	२ स्त्री१ पुं१	४	३ कुज्ञान	१ असं	२ च१ अच१	द्र१ पीत भा१ पीत	२	१ मिथ्या	१ सं	१ आहा	५ ज्ञा ३ द २
सौधर्मईशान देवमिथ्या दृष्टिअपर्याप्त रचना	१ मि	१ सअ	६	७	४	१ दे	१ पं	१ त्र	२ वै मि१ का१	२ स्त्री१ पुं१	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ असं	२ च१ अच१	द्र २ का१शु १भा१ पीत	२	१ मिथ्या	१ सं	२	४ ज्ञा२ द २
सौधर्मईशान देवसासादनरचना	१ सा	२ संप१ सअ१	६।६	१०।७	४	१ दे	१ पं	१ त्र	११ म४ व४ वै २ का१	२ स्त्री१ पुं१	४	३ कुज्ञान	१ असं	२ च१ अच१	द्र पी १क१ शु१भा १पीत	१ भ	१ सा१	१ सं	२	५ ज्ञा३ द २
सौधर्मईशानदेवसासादन पर्याप्त रचना	१ सा	१ संप	६	१०	४	१ दे	१ पं	१ त्र	६ म४ व४ वै१	२ स्त्री१ पुं१	४	३ कुज्ञान	१ असं	२ च१ अच१	द्र १ पीत भा१ पीत	१ भ	१ सा	१ सं	१ आहा	५ ज्ञा३ द
सौधर्मईशानसासादन अपर्याप्त रचना	१ सा	१ सअ	६	७	४	१ दे	१ पं	१ त्र	२ वै मि१ का १	२ स्त्री१ पुं१	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ असं	२ च१ अच१	द्र२ का१शु १भा १ पीत	१ भ	१ सा	१ सं	२	४ ज्ञा२ द
सौधर्मईशानदेवसम्यग्मिथ्यादृष्टि रचना	१ मिश्र	१ संप१	६	१०	४	१ दे	१ पं	१ त्र	६ म४ व४ वै१	२ स्त्री१ पुं१	४	१ मिश्र	१ असं	२ च१ अच१	द्र १ पीत भा१ पीत	१ भ	१ मिश्र	१ सं	१ आहा	५ ज्ञा३ द २

सौधर्म ईशान देव असयत रचना	१ असं	१ संप१ संअ१	६।६	१०।७	४	१ दे	१ प	१ त्र	११ म ४ व ४ वै२ का१	२ स्त्री१ पु १	४	३ मत्या दि	१ अस	३ चक्षु आदि	द्र २ पी१का१ शु१भा१ पीत	१ भ	३ उ१ वे १ क्षा१	१ सं	२	६ ज्ञा३ द३
सौधर्म ईशान देव अस यत पर्याप्त रचना	१ असं	१ सप	६	१०	४	१ दे	१ प	१ त्र	६ म४ व४ वै १	२ स्त्री १ पु १	४	३ मत्या दिक	१ असं	३ चक्षु आदि	द्र १ पीत भा१ पीत शुभ	१ भ	३ उ१ वे १क्षा१	१ स	१ आहा	६ ज्ञा ३ द ३
सौधर्म ईशान देव असंयत अपर्याप्त रचना	१ असं	१ संअ	६	७	४	१ दे	१ प	१ त्र	२ वैमि १ का १	१ पु	४	३ मत्या दिक	१ असं	३ चक्षु आदि	द्र २ क१शु १भा१ पीत	१ भ	३ छितो यो१श म१वे१ क्षा१	१ स	२	६ ज्ञा३ द३
कल्पवासिनी देवांगनाके असंयतविषैं पर्याप्तपर्याप्ती ताकी रचना	सौधर्म असंयत पर्याप्तवत्	सौ० अ०प० वत्	सौ० अ०प० वत्	सौ० अ०प० वत्	सौ० अ०प० वत्	सौ० अ०प० वत्	सौ० अ०प० वत्	सौ० अ०प० वत्	सौ० अ०प० वत्	१ स्त्री	सौ० अ०प० वत्	सौ० अ०प० वत्	सौ० अ०प० वत्	सौ० अ०प० वत्	सौ० अ०प० वत्	सौ० अ०प० वत्	२ उ१ वे १	सौ० अ०प० वत्	सौ० अ०प० वत्	सौ० अ०प० वत्
सनत्कुमार माहेंद्र देव रचना	४ आदिके	१ सप१ सअ१	६६	१०।७	४	१ दे	१ पं	१ त्र	११ म ४ व ४ वै २ का१	१ पुरुष देवांगनानिमें मर्दिकमैं ही उपजैहैं	४	६ कुज्ञान३ मत्या दि३	१ असं	३ चक्षु आदि	द्र ४ पी१प१ का१शु१ भा २ पी१प१	२	६	१ सं	२	६ ज्ञा ६ द ३
सनत्कुमार माहेंद्र देव पर्याप्त रचना	४ आदिके	१ संप	६	१०	४	१ दे	१ पं	१ त्र	६ म ४ व ४ वै१	१ पु	४	६ कुज्ञान३ मत्या दि३	१ अस	३ चक्षु आदि	द्र २ पी१प१ भा २ पी१प१	२	६	१ सं	१ आह	६ ज्ञा द ३
सनत्कुमार माहेंद्र देव अपर्याप्त रचना	३ मि१ सा१ अवि	१ सअ	६	७	४	१ दे	१ प	१ त्र	२ वै१मि १का१	१ पु	४	५ कुम१ कु श्रु१ मत्या दि३	१ अस	३ चक्षु आदि	द्र २ का१शु१ भा पी१प१	२	५ मिश्र विना	१ सं	२	८ ज्ञा५ द ३

सनत्कुमार माहेंद्र मिथ्यादृष्टयादि असंयतगुणांत सौधर्म पुरुषवत् रचना	सौधर्म वत्	सौ० वत्	सौ० वत्	सौ० वत्	सौ० वत्	सौ० वत्	सौ० वत्	सौ० वत्	सौ० वत्	१ पुरुष वत्	सौ० वत्	सौ० वत्	सौ० वत्	सौ० वत्	स्वकीय स्वर्गसंभवती	सौ० वत्	सौ० वत्	सौ० वत्	सौ० वत्	सौ० वत्
ब्रह्मकल्पोत्तरादि ग्रैवेयकपर्यंत सनत्कुमारवत् रचना	सनत्कुमार वत्	स० वत्	स० वत्	स० वत्	स० वत्	स० वत्	स० वत्	स० वत्	स० वत्	स० वत्	स० वत्	स० वत्	स० वत्	स० वत्	स्वकीय संभवती	स० वत्	स० वत्	स० वत्	स० वत्	स० वत्
अनुदिशानुत्तरदेवरचना सौधर्मपुरुष असंयतवत्	सौधर्म असंयत वत्	सौध वत्	सौध वत्	सौध वत्	सौध वत्	सौध वत्	सौध वत्	सौध वत्	सौध वत्	१ पुरुष वत्	सौध वत्	सौध वत्	सौध वत्	सौध वत्	स्वकीयसम्भवती	सौध वत्	सौध वत्	सौध वत्	सौध वत्	सौध वत्
सिद्धगति रचना	०	०	०	०	०	सिद्ध गति	०	०	०	०	०	१ के	०	२ के	०	०	१ क्षा	०	१ अना	२ क्षा१ द १
इंद्रियमार्गणाविषै सामान्यएकेंद्री रचना	१ मि	४ बादर सूक्ष्मपर्याप्त अपर्याप्त	४।४	४।३	४	१ ति	१ ए	५ त्रस विना	३ औ२ का१	१ नपुं	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ असं	१ अच	द्र ६ भा३ अशुभ	२	१ मि	१ असं	२	३ क्षा२ द १
सामान्यएकेंद्रीपर्याप्त रचना	१ मि	२ बादर सूक्ष्म पर्याप्त	४	४	४	१ ति	१ ए	५ त्रस विना	१ औदा	१ नपुं	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ असं	२ अच	द्र ६ भा३ अशुभ	२	१ मि	१ असं	१ आहा	३ क्षा२ द १
सामान्यएकेंद्री अपर्याप्त रचना	१ मि	२ बादर सूक्ष्म अपर्याप्त	४	३	४	१ ति	१ ए	५ त्रस विना	२ औमि१ का१	१ नपुं	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ असं	१ अच	द्र २ का१ शु१ भा३ अशुभ	२	१ मि	१ असं	२	३ क्षा द १

बादरएकेंद्री रचना	१ मि	२ बादर पर्याप्त अपर्याप्त	४।४	४।३	४	१ ति	१ ए	५ त्रस विना	३ औ२ का१	१ नपुं	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ अस	१ अच	द्र६ भा३ अशुभ	२	१ मि	१ असं	२	३ ज्ञा२ द१
बादरएकेंद्री पर्याप्त रचना	१ मि	१ बादर पर्याप्त	४	४	४	१ ति	१ ए	५ त्रस विना	१ औदा	१ नपु	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ असं	१ अच	द्र ६ भा३ अशुभ	२	१ मि	१ अस	१ आहा	३ ज्ञा २ द १
एकेंद्रीय पर्याप्तरचना बादरएकेंद्रीलब्धिअपर्याप्तरचना	१ मि	१ बादर अपर्याप्त	४	३	४	१ ति	१ ए	५ त्रस विना	२ औमि १का१	१ नपु	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ अस	१ अच	द्र २ का१शु १भा३ अशुभ	२	१ मि	१ असं	२	३ ज्ञा२ द १
सूक्ष्म एकेंद्री रचना	१ मि	२ सूक्ष्म प१अ१	४।४	४।३	४	१ ति	१ ए	५ त्रस विना	३ औ, का१	१ नपु	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ असं	१ अच	द्र २ का१शु १भा३ अशुभ	२	१ मि	१ असं	२	३ ज्ञा२ द १
सूक्ष्म एकेंद्री पर्याप्त रचना	१ मि	१ सूक्ष्म पर्याप्त	४	४	४	१ ति	१ ए	५ त्रस विना	१ औ१	१ नपु	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ अस	१ अच	द्र१ कपोत भा३ अशुभ	२	१ मि	१ अस	१ आहा	३ ज्ञा२ द १
सूक्ष्मएकेंद्री अपर्याप्तवाअपर्याप्तनामकर्मकेउदयतैंलब्धिअपर्याप्तकरचना	१ मि	१ सूक्ष्म अपर्याप्त	४	३	४	१ ति	१ ए	५ त्रस विना	२ औमि १का१	१ नपुं	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ असं	१ अच	द्र २ का१शु १भा३ अशुभ	२	१ मि	१ अस	२	३ ज्ञा२ द १
बेंद्री रचना	१ मि	२ बेंद्री प१ अ१	५।५	६।४	४	१ ति	१ बे	१ त्र	४ औ२ का१ व१ अनु	१ नपुं	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ अस	१ अच	द्र ६ भा ३ अशुभ	२	१ मि	१ अ	२	३ ज्ञा२ द१

बेंद्री पर्याप्त रचना	१ मि	१ बेंद्री पर्याप्त	५	६	४	१ ति	१ बे	१ त्र	२ व१ अनु औ१	१ नपुं	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ असं	१ अच	द्र ६ भा३ अशुभ	२	१ मि	१ अ	१ आहा	३ ज्ञा२ द १
बेंद्री अपर्याप्त या लब्धि अपर्याप्त रचना	१ मि	१ बेंद्री अपर्याप्त	५	४	४	१ ति	१ बे	१ त्र	२ औमि १ का१	१ नपुं	४	२ कुम १ कुश्रु १	१ असं	१ अच	द्र २ का१ शु१ भा३ अशुभ	२	१ मि	१ अ	२	३ ज्ञा २ द १
तेंद्री रचना	१ मि	२ तेंद्री प१ अ१	५।५	७।५	४	१ ति	१ ते	१ त्र	४ व १ अनु औ२ का१	१ नपुं	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ अ	१ अच	द्र ६ भा३ अशुभ	२	१ मि	१ अ	२	३ ज्ञा२ द१
तेंद्री पर्याप्त रचना	१ मि	१ तेंद्री पर्याप्त	५	७	४	१ ति	१ ते	१ त्र	२ व १ अनु औ१	१ नपुं	४	२ कुम१ कुश्रु १	१ अ	१ अच	द्र ६ भा ३ अशुभ	२	१ मि	१ अ	१ आहा	३ ज्ञा २ द १
तेंद्री अपर्याप्त या लब्धि अपर्याप्त रचना	१ मि	१ तेंद्री अपर्याप्त	५	५	४	१ ति	१ ते	१ त्र	२ औमि १ का१	१ नपुं	४	२ कुम १ कुश्रु १	१ अ	१ अच	द्र २ का१ शु१ भा ३ अशुभ	२	१ मि	१ अ	२	३ ज्ञा२ द १
चौंद्री रचना	१ मि	२ चौंद्री प १ अ १	५।५	८।६	४	१ ति	१ चौ	१ त्र	४ व १ अनु औ२ का १	१ नपुं १	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ अ	२ च १ अच१	द्र ६ भा३ अशुभ	२	१ मि	१ अ	२	४ ज्ञा२ द २
चौंद्री पर्याप्त रचना	१ मि	१ चौंद्री पर्याप्त	५	८	४	१ ति	१ चौ	१ त्र	२ व १ अनु औ१	१ नपुं	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ अ	२ च१ अच१	द्र ६ भा३ अशुभ	२	१ मि	१ अ	१ आहा	४ ज्ञा२ द२

चौंद्री अपर्याप्त वा लब्धि अपर्याप्त रचना	१ मि	१ चौंद्री अपर्याप्त	५	६	४	१ ति	१ चौं	१ त्र	२ औमि १ का १	१ नपु	४	२ कुम १ कुश्रु १	१ अ	२ च १ अच १	द्र १ शु १ भा ३ अशुभ	२	१ मि	१ अ	२	४ ज्ञा २ द २
पचेंद्री रचना	१४	१ स अ संज्ञी पर्याप्त अ पर्याप्त रचना	६।६ ५।५	१०।७ ६।७ ४।२ अ०१	४	४	१ प	१ त्र	१५	३	४	८	७	४	द्र ६ भा ६	२	६	२	२	१२ ज्ञा ८ द ४
पचेंद्री पर्याप्त रचना	१४	२ संज्ञी असंज्ञी पर्याप्त	६।५	१०।९ स०।९ अ० १	४	४	१ प	१ त्र	११ म ४ व ४ औ १ वै १ आ १	३	४	८	७	४	द्र ६ भा ६	२	६	२	१ आहा	१२ ज्ञा ८ द ४
पचेंद्री अपर्याप्त रचना	५ मि १ सा १ अवि १ प्र १ स १	२ संज्ञी असंज्ञी अपर्याप्त	६।५	७।७ स०२	४	४	१ प	१ त्र	४ औमि १ वैमि १ आमि १ का १	३	४	६ विभंग मनःपर्यय विना	४ अ १ सा १ छे १ य १	४	द्र २ का १ शु १ भा ६	२	५ मिश्र विना	२	२	१० ज्ञा ६ द ४
पचेंद्री मिथ्यादृष्टि रचना	१ मि	१ स०अ स प० अ०	६।६ ५।५	१०।७ ६।७	४	४	१ प	१ त्र	१३ आहारकद्विक विना	३	४	३ कुज्ञान	१ असं	२ च १ अच १	द्र ६ भा ६	२	१ मि	२	२	५ ज्ञा ३ द २
पचेंद्रीमिथ्यादृष्टि पर्याप्त रचना	१ मि	२ स अ स पर्याप्त	६।५	१०।९	४	४	१ प	१ त्र	१० म ४ व ४ औ १ वै १	३	४	२ कुज्ञान	१ असं	२ च १ अच १	द्र ६ भा ६	२	१ मि	२	१ आहा	५ ज्ञा ३ द २
पचेंद्रीमिथ्यादृष्टि अपर्याप्त रचना	१ मि	२ स अ स अ पर्याप्त	६।५	७।७	४	४	१ प	१ त्र	३ औमि १ वैमि १ का १	३	४	२ कुम १ कुश्रु १	१ असं	२ च १ अच १	द्र २ क १ शु १ भा ६	२	१ मि	२	२	४ ज्ञा २ द २

पंचेंद्री सा स. दनादिक रचना गुण स्थान वत्	गुणस्थान वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्
असंज्ञीपंचेंद्री रचना	१ मि	२ असंज्ञी पर्याप्त अपर्याप्त	५।५	६।७	४	१ ति	१ पं	१ त्र	४ अनुभयवचन १ औ२ का१	३	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ अ	२ च १ अच १	द्र ६ भा ४ अशुभ ३ पीत १	२	१ मि	१ असं	२	४ ज्ञा२ द २
असंज्ञीपंचेंद्री पर्याप्तरचना	१ मि	१ असंज्ञी पर्याप्त	५	६	४	१ ति	१ पं	१ त्र	२ अनुभयवचन १ औदा १	३	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ अ	२ च १ अच१	द्र ६ भा ४ अशुभ ३ पीत १	२	१ मि	१ असं	१ आहा	४ ज्ञा२ द २
असंज्ञीपंचेंद्री अपर्याप्त रचना	१ मि	१ असंज्ञी अपर्याप्त	५	७	४	१ ति	१ पं	१ त्र	२ औमि १ का१	३	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ अ	२ च १ अच१	द्र २ का१ शु १ भा३ अशुभ	२	१ मि	१ असं	२	४ ज्ञा २ द २
पंचेंद्रीलब्धि अपर्याप्त रचना	१ मि	२ सं० असं० अ २	६।५	७।७	४	२ ति १ म १	१ पं	१ त्र	२ औमि १ का१	१ नपुं	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ अ	२ च १ अच१	द्र २ क १ शु १ भा३ अशुभ	२	१ मि	२	२	४ ज्ञा२ द २
संज्ञीपचेंद्रील ब्धिअपर्याप्त रचना	१ मि	१ संज्ञी अपर्याप्त	६	७	४	२ ति१ म१	१ पं	१ त्र	२ औमि १ का१	१ नपुं	४	२ कुम १ कुश्रु१	१ अ	२ च १ अच १	द्र २ का१ शु १ भा३ अशुभ	२	१ मि	१ सं	२	४ ज्ञा२ द २
असंज्ञीपचेंद्री लब्धिअपर्याप्त रचना	१ मि	१ असंज्ञी अपर्याप्त	५	७	४	१ ति	१ पं	१ त्र	२ औमि १ का१	१ नपुं	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ असं	२ च १ अच १	द्र २ क १ शु १ भा३ अशुभ	२	१ मि	१ असं	२	४ ज्ञा२ द २

अ गैंद्रियग्च न. सिद्धगति वत्	सिद्धगति वत्	सि० वत	सि० वत्	सि० वत्	सि० वत्	सि० वत्	सि० वत्	सि० वत्	सि० वत्	सि० घत्	सि० वत्	सि० घत्	सि० वत्	सि० वत्	सि० घत्	सि० वत्	सि० वत्	सि० वन्	सि० वत्	सि० वत
षट्कायमार्गणाविषैसामान्यषट्काय रचना	१४	५७। ६८। ४०६।	६।६। ५।५। ४।४	१०।७।६। ७।८।६। ७।५।६।४। ४।३।४। २।१।	४	४	५	६	१५	३	४	८	७	४	द्र६ भा६	२	६	२	२	१
षट्कायपर्याप्तरचना	१४	१९। ३७। १८६।	६ ५ ४	१०।९।८। ७।६।४। ४।१	४	४	५	६	११ म४ व४ औ१ वै१ आ१	३	४	८	७	४	द्र६ भा६	२	६	२	१ आ	१२
षट्कायअपर्याप्तरचना	५ मि१ सा१ अवि१ प्र१ स१	३८। ६२। २२०।	६ ५ ४	७।७।६। ५।४।३।२	४	४	५	६	४ औमि१ वैमि१ आमि१ का१	३	४	६ मनपर्यय विभंग विना	४ अ१ सा१ छे१ यथा१	४	द्र२ का१ शु१ भा६	२	५ मिश्र विना	२	२	१० ज्ञा६ द४
षट्कायमिथ्यादृष्टिआदिरचना गुणस्थान वत्	गुणस्थान वत्	मिथ्यादृष्टि मूलोघवत् शेष गुणस्थान	गु० वत्	गु० वत्	गु० घत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वन्	गु० वत्	गु० घत्	गु० वत्	गु० घत्	गु० घत्	गु० वत्	गु० घत्	गु० वत्	गु० वत्
पृथ्वीकायिक रचना	१ मि	४ बादर सूक्ष्म पर्याप्त अपर्याप्त	४।३	४।३	४	१ ति	१ ए	१ पृ	३ औ२ का१	१ नपुं	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ अस	१ अच	द्र६ भा३ अशुभ	२	१ मि	१ अ	२	३ ज्ञा२ द१
पृथ्वीकायिक पर्याप्त रचना	१ मि	२ बादर सूक्ष्म पर्याप्त	४।	४	४	१ ति	१ ए	१ पृ	१ औदा	१ नपु	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ अस	१ अच	द्र६ भा३ अशुभ	२	१ मि	१ अ	१ आ	३ ज्ञा२ द१

पृथ्वीकायिक अपर्याप्त रचना	१ मि	२ वादर सूक्ष्म अप र्याप्त	४	३	४	१ ति	१ ए	१ पृ	२ औमि १का१	१ नपुं	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ असं	१ अच	द्र २ क१ शु१ भा३ अशुभ	२	१ मि	१ असं	२	३ ज्ञा २ द १
पृथ्वीकायिक वादर रचना	१ मि	२ वादर पर्याप्त अप र्याप्त	४।४	४।३	४	१ ति	१ ए	१ पृ	३ औमि का१	१ नपुं	४	२ कुम १ कुश्रु १	१ असं	१ अच	द्र ६ भा३ अशुभ	२	१ मि	१ अ	२	३ ज्ञा २ द १
पृथ्वीकायिक वादरपर्याप्त रचना	१ मि	१ वादर पर्याप्त	४	४	४	१ ति	१ ए	१ पृ	१ औ	१ नपुं	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ असं	१ अच	द्र ६ भा३ अशुभ	२	१ मि	१ अ	१ आहा	३ ज्ञा२ द१
पृथ्वीकायिक वादरअपर्याप्त वा लब्धि अप र्याप्तरचना	१ मि	१ वादर अप र्याप्त	४	३	४	१ ति	१ ए	१ पृ	२ औमि १का १	१ नपुं	४	२ कुम१ कुश्रु १	१ असं	१ अच	द्र २ क१शु१ भा ३ अशुभ	२	१ मि	१ अ	२	३ ज्ञा २ द १
पृथ्वीकायिक सूक्ष्मरचनासूक्ष्मएकेंद्रीवत्	सूक्ष्मएकें द्रीवत्	सू० प० वत्	सू० प० वत्	सू०प० वत	सू० प० वत	सू० प० वत्	१ पृ	सू० प० वत्	सू० प, वत्	सू०प० वत्	सू० प० वत्	सू० प० वत्	सू० प० वत्	सू० प० वत्	सू० प० वत्	सू० प० वत्	सू० प० वत्	सू० प० वत्	सू० प० वत्	सू० प० वत्
अप्कायिकतेजकायिकवायुकायिकाश्च नापृथ्वावत्	पृथ्वीवत्	पृ. वत्	पृ. वत्	पृथ्वीवत	पृ. वत्	पृ वत्	१ स्वकीय पृ० वत्	पृ. वत्	पृ. वत्	पृथ्वीवत्	पृ. वत्	पृ. वत्	पृ. वत्	पृ. वत्	स्वकीय संभवती	पृ. वत्	पृ. वत्	पृ. वत्	पृ. वत्	पृ. त्
वनस्पती कायिक रचना	१ मि	१२प्रतिष्ठितअप्रतिष्ठितप्रत्येक वादरसूक्ष्मनित्यइतरनिगोदपर्याप्त अप०	४।४	४।३	४	१ ति	१ ए	१ व	३ औ२ का१	१ नपुं	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ असं	१ अच१	द्र ६ भा ३ अशुभ	२,	१ मि	१ अ	२	३ ज्ञा२ द२

वनस्पतिकायिक पर्याप्त रचना	१ मि	६ पर्याप्त	४।	४	४	१ ति	१ ए	१ व	१ औ	१ न	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ अस	१ अच	द्र६ भा३ अशुभ	२	१ मि	१ अ	१ आहा	३ आ२ द१
वनस्पतिकायिक अपर्याप्त रचना	१ मि	४ अपर्याप्त	४	३	४	१ ति	१ ए	१ व	२ औमि १ का१	१ न	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ अ	१ अच	द्र २ का१ शु १ भा३ अशुभ	२	१ मि	१ अ	२	३ आ२ द१
प्रत्येकवनस्पतिरचना	१ मि	४ प०अ० प०अ०	४।४	४।३	४	१ ति	१ ए	१ व	३ औ२ का१	१ न	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ अ	१ अच	द्र ६ भा३ अशुभ	२	१ मि	१ अ	२	३ आ२ द१
प्रत्येकवनस्पतिपर्याप्त रचना	१ मि	२ प्रतिष्ठितअ प्रतिष्ठित पर्याप्त	४	४	४	१ ति	१ ए	१ व	१ औ	१ न	४	१ कुम१ कुश्रु१	४ अ	१ अच	द्र ६ भा३ अशुभ	२	१ मि	१ अ	१ आहा	३ आ२ द१
प्रत्येकवनस्पतिअपर्याप्त या लब्धिअपर्याप्त रचना	१ मि	२ प्रति अप्र, अपर्याप्त	४	३	४	१ ति	१ ए	१ व	२ औमि १ का १	१ न	४	२ कुम १ कुश्रु १	१ अ	१ अच	द्र २ का१ शु १ भा३ अशुभ	२	१ मि	१ अ	२	३ आ २ द १
साधारणवनस्पति रचना	१ मि	८ सू बा नि इ, प अ	४।४	४।३	४	१ ति	१ ए	१ व	३ औ२ का१	१ न	४	२ कुम १ कुश्रु १	१ अ	१ अच	द्र६ भा ३ अशुभ	२	१ मि	१ अ	२	५ आ२ द १
साधारणवनस्पतिपर्याप्त रचना	१ मि	४ सू बा नि इ पर्याप्त	४	४	४	१ ति	१ ए	१ व	१ औ	१ न	४	२ कुम १ कुश्रु १	१ अ	१ अच	द्र ६ भा३ अशुभ	२	१ मि	१ अ	१ आहा	३ आ२ द १

साधारण वनस्पती अपर्याप्त रचना	१ मि	४ सू धा नि. इ अप र्याप्त	४	३	४	१ ति	१ प	१ व	२ औमि १का१	१ न	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ अ	१ अच	द्र २ क१ शु१ भा३ अशुभ	२	१ मि	१ अ	२	३ क्षा २ द १
साधारणवनस्पतीबादर रचना	१ मि	४घाति इतरनि गोत्रप र्याप्तअ पर्याप्त	४।४	४।३	४	१ ति	१ प	१ व	३ औ, का१	१ न	४	२ कुम १ कुश्रु १	१ अ	१ अच	द्र ६ भा३ अशुभ	२	१ मि	१ अ	२	३ क्षा २ द
साधारण वनस्पती बादरपर्याप्त रचना	१ मि	२ वा नि त्याइतर पर्याप्त	४	४	४	१ ति	१ प	१ व	१ औ	१ न	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ अ	१ अच	द्र ६ भा३ अशुभ	२	१ मि	१ अ	१ आहा	३ क्षा२ द१
साधारणवनस्पतीबादर अपर्याप्त वालब्धि अपर्याप्त रचना	१ मि	२ वा नि त्यइतर रअप र्याप्त	४	३	४	१ ति	१ प	१ व	२ औमि १का १	१ न	४	२ कुम१ कुश्रु १	१ अ	१ अच	द्र २ का१शु१ भा ३ अशुभ	२	१ मि	१ अ	२	३ क्षार द १
साधारणअरु सर्वसूक्ष्मनिकोरचनासूक्ष्मपृथ्वी कायवत्	सूक्ष्मपृथ्वीकाय वत्	४सूनि त्यइतर रपर्या सअप र्याप्त	सू० पृ० वत्	सू०पृ० वत्	सू० पृ० वत्	सू० पृ० वत्	सू० पृ० वत्	वन स्पति	सू० पृ० वत्	सू०पृ० वत्	सू० पृ० वत्	सू० पृ० वत्	सू० पृ० वत्	सू० पृ० वत्	सू० पृ० वत्	सू० पृ० वत्	सू० पृ० वत्	सू० पृ० वत्	सू० पृ० वत्	सू० पृ० वत्
नित्यनिगोद चतुर्गतिनिगोदरचना साधारण वत्	साधारणवत्	स्वकीयवत्	सा. वत्	सा. वत्	सा. वत्	सा. वत्	सा० वत्	सा. वत्	सा. वत्	सा. वत्	सा. वत्	सा. वत्	सा. वत्	सा. वत्	सा वत्	सा. वत्	सा. वत्	सा. वत्	सा. वत्	सा. वत्
त्रसकाय रचना	१४	१० वे२ते २चौ संर अर	६।६ ५।५	१०।७।६। ७।८।६।७। ५।६।८। ४।२।१	४	४	४ वे१ते चौ१ पं१	१ त्र	१५	३	४	८	७	४	द्र ६ भा६	२	६	२	२	१२

त्रसकाय पर्याप्त रचना	१३	५ वे ते१ चौ१ स१ अ१	६।५	१०।६ ८।७ ६। ६।१	४	४	४ वे१ ते१ चौ१ प१	१ त्र	११ म४ व४ औ१ वै१ आ१	३	४	८	७	४	द्र६ भा६	२	६	२	१ आहा	१२
त्रसकाय अपर्याप्त रचना	५ मि१ सा१ अवि१ प्र१ स१	५ वे१ ते१ च१ अ१ स१	६।५	७।७ ६ ५। ४। २।	४	४	४ वे१ ते१ चौ१ प१	१ त्र	४ औमि१ वैमि१ आमि१ का१	३	४	६ विभंग मनःपर्यय विना	४ सा१ छे१ य१ अ१	४	द्र२ का१ शु१ भा६	२	५ मिश्र विना	२	२	१० ज्ञा६ द४
त्रसकाय मिथ्यादृष्टि रचना	१ मि	१० वे२ ते२ चौ२ स२ अ२	६।६ ५।५	१०।७ ९।७ ८।६ ७।५ ६।-	४	४	४ वे१ ते१ चौ१ प१	१ त्र	१३ आहार द्विक विना	३	४	३ कुज्ञान	१ अ	२ च१ अच१	द्र६ भा६	२	१ मि	२	२	५ ज्ञा३ द२
त्रसकायमिथ्यादृष्टि पर्याप्तरचना	१ मि	५ पर्याप्त वे१ ते१ चौ१ अ१ स१	६।५	१०। ९। ८। ७। ६।	४	४	४ वे१ ते१ चौ१ प१	१ त्र	१० म४ व४ औ१ वै१	३	४	३ कुज्ञान	१ अ	२ च१ अच१	द्र६ भा६	२	१ मि	१	१ आहा	५ ज्ञा३ द२
त्रसकायमिथ्यादृष्टि अपर्याप्त रचना	१ मि	५ अप. वे१ ते१ चौ१ अ१ स१	६।५	७। ७। ६। ५। ४।	४	४	४ वे१ ते१ चौ१ प१	१ त्र	३ औमि१ वैमि१ का१	३	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ अ	२ च१ अच१	द्र२ का१ शु१ भा६	२	१ मि	२	२	४ ज्ञा२ द२
त्रसकाय [illegible] गुणस्थानवत्	गुणस्थानवत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्
अकाय रचना	०	०	०	०	०	सिद्धगति	०	०	०	०	०	१ के	०	१ के	०	०	१ क्षा	०	१ अनाहार	२ ज्ञा१ द१

त्रसकायलब्धिअपर्याप्त रचना	१ मि	५अ पर्याप्त वे१ते१ चा१स १अ१	६।५	७।७ ६।५। ४	४	२ ति१ म१	४ वे१ते१ चौ १ प१	१ त्र	२ औमि १का१	१ न	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ अ	२ च १ अच १	द्र २ का१शु १भा३ अशुभ	२	१ मि	२	२	४ आर२ द २
योगमार्गणा रचना गुणस्थानवत् गुणस्थान तरह	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्
मनोयोगी रचना	१३ आ द्रके	१ सप	६	१० ४	४	४	१ पं	१ त्र	४ मनका	३	४	८	७	४	द्र ६ भा ६	२	६	१ स	१ आहा	१२
मनोयोगी मिथ्यादृष्टि रचना	१ मि	१ सप	६	१०	४	४	१ प	१ त्र	४ मनका	३	४	३ कुज्ञान	१ अ	२ च १ अच१	द्र ६ भा६	२	१ मि	१ स	१ आहा	५ ज्ञा३ द २
मनोयोगी सासादन रचना	१ सा	१ सप	६	१०	४	४	१ प	१ त्र	४ मनका	३	४	३ कुज्ञान	१ अ	२ च १ अच१	द्र६ भा६	१ भ	१ सा	१ स	१ आहा	५ ज्ञा३ द २
मनोयोगी मिश्र रचना	१ मिश्र	१ सप	६	१०	४	४	१ प	१ त्र	४ मनका	३	४	३ मिश्र	१ अ	२ च १ अच १	द्र ६ भा६	१ भ	१ मिश्र	१ स	१ आहा	५ ज्ञा३ द २
मनोयोगी असंयत रचना	१ अस	१ सप	६	१०	४	४	१ प	१ त्र	४ मनका	३	४	३ मत्यादिक	१ अ	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा६	१ भ	३ उ१ वे१ क्षा१	१ सं	१ आहा	६ ज्ञा३ द ३

मनोयोगी देश संयत रचना	१ दे	१ संप	६	१०	४	२ ति१ म१	१ प	१ त्र	४ मनका	३	४	३ मत्यादिक	१ ३	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा३ शुभ	१ म	३ उ१ वे१ क्षा१	१ स	१ आहा	६ क्षा२ द३
मनो योगी प्रमत्त रचना	१ प्र	१ सप	६	१०	४	१ म	१ प	१ त्र	४ मनका	३	४	४ मत्यादिक	३ सामा आदि	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा३ शुभ	१ म	३ उ१ वे१ क्षा१	१ स	१ आहा	७ क्षा८ द३
मनोयोगीअ प्रमत्तादिस योग पर्यन्तगु णस्थान वद्	गुणस्थानवत	गु० वत	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत	४।२ मनका	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्
सत्यमनोया गीअनुभयम नोयोगीरची ना मनोयोग वद्	म० वद्	म० वद्	म० वद्	म० वद्	म० वद्	म० वद्	म० वद्	म० वद्	सत्य वाअनुभय म० वद्	म० वद	म० वद	म० वद्	म० वद	म० वद	म० वद्	म० वद्	म० वद्	म० वद्	म० वद्	म० वद्
असत्यमनो योगी वा उभयमनो योगी रच १	१२ आदिके	१ संप	६	१०	४	४	१ पं	१ त्र	२ असत्यमन वाउभयमन	३	४	७ केवल विना	७	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा६	२	६	१ सं	१ आहा	१० क्षा७ द३
असत्यउभय मनोयोगीरच नामिथ्यादृष्टा दिक्षीणकषा यपर्यंतसत्य मनोयोगी	सत्यम नो योगी वद्	स० वद्	स० वद्	स० वद्	स० वद्	स० वद्	स० वद्	स० वद्	२ असत्या उभय	स० वद्	स० वद्	स० वद्	स० वद्	स० वद्	स० वद्	स० वद्	स० वद्	स० वद्	स० वद्	स० वद्
वचन योगी रचना	१३ आदिके	५ पर्याप्ते ते१ स्त्री१ संज्ञि१	६।६ ५ ५	१०।९।८ ७।६।४	४	४	४ एकेंद्री विना	१ त्र	४ वचन का	३	४	८	७	४	द्र६ भा६	२	६	२	१ आहा	१०

वचनयोगी मिथ्यादृष्टि रचना	१ मि	५ पर्याप्त द्वे१ ते१ चौ१ अ१ सं१	६।५	१०।६। ८।७। ६।४	४	४	४ एकेंद्री विना	१ त्र	४ वचन का	३	४	३ कुज्ञान	१ अ	२ च१ अच१	द्र६ भा६	२	१ मि	२	१ आहा	५ ज्ञा द२
वचनयोगी सासादनादि सयोगीपर्यंत मनोयोगीवत् वचनयोग में विशेष	मनोयोगी वत्	म० वत्	म० वत्	म० वत्	म० वत्	म० वत्	म० वत्	म० वत्	वचन काय	म० वत्	म० वत्	म० वत्	म० वत्	म० वत्	म० वत्	म० वत्	म० वत्	म० वत्	म० वत्	म० वत्
काययोगी रचना	१३ आदिके	१४	६।६। ५।५। ४।४।	१०।७।६। ७।८।६।७। ५।६।४।४। ३।४।२।	४	४	५	६	७ काय के	३	४	८	७	४	द्र६ भा६	२	६	२	२	१२
काययोगी पर्याप्तरचना	१३ आदि	७ पर्याप्त	६ ५ ४	१०।६।८ ७।६।४।४	४	४	५	६	३ औ१ वै१ आ१	३	४	८	७	४	द्र६ भा६	२	६	२	१ आहा	१२
काययोगी अपर्याप्त रचना	५ मि१ सा१ अवि१ प्र१ स१	७ अपर्याप्त	६ ५ ४	७।७ ६।५ ४।३ २	४	४	५	६	४ औमि१ वैमि१ आमि१ का१	३	४	६ विभंग मन:पर्यय विना	४ अ१ सा१ छे१ य१	४	द्र२ क१ शु१ भा६	२	५ मिश्र विना	२	२	१० ज्ञा६ द४
काययोगी मिथ्यादृष्टि रचना	१ मि	१४	६।६ ५।५ ४।४	१०।७।६। ७।८।६। ७।५। ६।४ ४।३	४	३	५	६	५ काय के आहारक द्विक विना	३	४	३ कुज्ञान	१ अ	२ च१ अच१	द्र६ भा६	२	१ मि	२	२	५ ज्ञा३ द२
कायोगी मिथ्या दृष्टि पर्याप्त रचना	१ मि	७ पर्याप्त	६ ५ ४	१०।६ ८।७ ६।४	४	४	५	६	२ औ१ वै१	३	४	३ कुज्ञान	१ अ	२ च१ अच१	द्र६ भा६	२	१ मि	२	१ आहा	५ आ३ द२

काययोगी मिथ्यादृष्टि अपर्याप्त रचना	१ मि	७ अपर्याप्त	६ ५ ४	७।७।६। ५।४।३।	४	४	५	६	३ औमि १ वैमि १ का१	३	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ अ	२ च१ अच१	द्र २ क१ शु१ भा६	२	१ मि	२	२	४ क्षा २ द २
काययोगी सासादन रचना	१ सा	२ सप० सअ०	६।६	१०।७।	४	४	१ पं	१ त्र	५ औ२ वै २ का१	३	४	३ कुज्ञान	१ अ	२ च१ अच१	द्र ६ भा६	१ भ	१ सा	१ स	२	५ क्षा३ द २
काययोगी सासादन पर्याप्त रचना	१ सा	१ सप	६	१०	४	४	१ पं	१ त्र	२ औ१ वै१	३	४	३ कुज्ञान	१ अ	२ च१ अच१	द्र ६ भा६	१ भ	१ सा	१ स	१ आहा	५ क्षा३ द२
काययोगी सासादन अपर्याप्त रचना	१ सा	१ सअ	६	७	४	३ नरक विना	१ पं	१ त्र	३ औमि १ वैमि १ का१	३	४	२ कुम१ कुश्रु १	१ अ	२ च१ अच१	द्र २ क१ शु१ भा ६	१ भ	१ सा	१ स	२	४ क्षा२ द २
काययोगी सम्यग्मिथ्या दृष्टि रचना	१ मिश्र	१ सप	६	१०	४	४	१ पं	१ त्र	२ औ१ वै१	३	४	३ मिश्र	१ अस	२ च१ अच१	द्र ६ भा६	१ भ	१ मिश्र	१ स	१ आहा	५ क्षा३ द २
काययोगी असंयत रचना	१ अस	२ सप१ सअ१	६।६	१०।७	४	४	१ पं	१ त्र	५ औ२ वै२ का१	३	४	३ मत्यादिक	१ अ	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा६	१ भ	३ उ १ वे १ क्षा१	१ स	"	६ क्षा३ द ३
काययोगी असंयत पर्याप्त रचना	१ अस	१ स प	६	१०	४	४	१ पं	१ त्र	२ औ१ वै१	३	४	३ मत्यादिक	१ अ	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा ६	१ भ	३ उ १ वे १ क्षा१	१ स	१ आहा	६ क्षा३ द३

काययोगी असंयत अपर्याप्त रचना	१ अस	१ संभ	६	७	४	४	१ पं	१ त्र	३ औमि १ वैमि १ का१	२ नपुं १ पु१	४	३ मत्यादिक	१ असं	३ चक्षु आदि	द्र २ का१ शु१ भा६	१ भ	३ उ१ वे१ क्षा१	१ सं	२	६ ज्ञा३ द ३
काययोगी देश संयत रचना	१ दे	१ संप	६	१०	४	२ ति१ म१	१ पं	१ त्र	१ औ	३	४	३ मत्यादिक	१ दे	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा३ शुभ	१ भ	३ उ१ वे१ क्षा१	१ स	१ आहा	६ ज्ञा३ द ३
काययोगी प्रमत्त रचना	१ प्र	२ सप१ सं अ१	६।६	१०।७	४	१ म	१ पं	१ त्र	३ औ १ आ२	३	४	४ मत्यादिक	३ सा१ छे१ प१	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा३ शुभ	१ भ	३ उ १ वे १ क्षा१	१ सं	१ आहा	७ ज्ञा४ द ३
काययोगी अप्रमत्त रचना	१ अप्र	१ संप	६	१०	४	१ म	१ प	१ त्र	१ औ	३	४	४ मत्यादिक	३ सा१ छे१ प१	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा३ शुभ	१ भ	३ उ१ वे१ क्षा१	१ सं	१ आहा	७ ज्ञा४ द ३
काययोगीअपूर्वकरणादि क्षी. कषायपर्यंतरचनागुणस्थान वत् योगकाय	गुण स्थान वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	काय योग औ	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्
काययोगी सयोगकेवली रचना	१ सयो	२ प अ	६।६	४ २	०	१ म	१ पं	१ त्र	३ औ२ का१	०	०	१ के	१ य	१ के	द्र ६ भा १ शुक्ल	१ भ	१ क्षा	०	२	२ ज्ञा१ द१
औदारिककाययोगी रचना	१३ आदिके	७ पर्याप्त	६।५ ४	१०।६।८। ७।६।४।४	४	२ म१ ति१	५	६	१ औदा	३	४	८	७	४	द्र ५ भा६	२	६	२	१ आ	१२

औदारिककाययोगीमिथ्यादृष्टि रचना	१ मि	७ पर्याप्त	६।५।४।	१०।९।८।७।६।४	४	२ म१ ति१	५	६	१ औ	३	४	३ कुज्ञान	१ अ	३ च१ अच१	द्र६ भा६	२	१ मि	२	१ आ	५ ज्ञा३ द२
औदारिक काययोगी सासादन रचना	१ सा	१ सप	६	१०	४	२ म१ ति१	१ प	१ त्र	१ औ	३	४	३ कुज्ञान	१ अ	२ च१ अच१	द्र६ भा६	१ भ	१ सा	१ स	१ आ	५ ज्ञा३ द२
औदारिक काययोगी सम्यग्मिथ्या दृष्टिरचना	१ मिश्र	१ सप	६	१०	४	२ म१ ति१	१ प	१ त्र	१ औ	३	४	३ मिश्र	१ अ	२ च१ अच१	द्र६ भा६	१ भ	१ मिश्र	१ स	१ आ	५ ज्ञा३ द२
औदारिककाययोगीअसंयत रचना	१ असं	१ सप	६	१०	४	२ म१ ति१	१ प	१ त्र	१ औ	३	४	३ मत्यादिक	१ अ	३ चक्षु आदि	द्र६ भा६	१ भ	३ औ१ वे१ क्षा१	१ स	१ आ	६ ज्ञा३ द३
औदारिक काययोगी देशसंयत रचना	१ देश	१ सप	६	१०	४	२ म१ ति१	१ प	१ त्र	१ औ	३	४	३ मत्यादिक	१ दे	३ चक्षु आदि	द्र६ भा३ शुभ	१ भ	३ औ१ वे१ क्षा१	१ स	१ आ	६ ज्ञा३ द३
औदारिककाययोगीप्रमत्तादिसयोगीपर्यन्त रचनाकाययोगवत् औदारिक	का० वत्	का० वत	का० वत्	का० वत	का० वत्	का० वत्	का० वत्	का० वत	औदारिक	का० वत्	का० वत्	का० वत्	का० वत्	का० वत्	का० वत्	का० वत्	का० वत	का० वत्	का० वत्	का० वत्
औदारिक मिश्र योगी रचना	४ मि१ सा१ अवि१ स१	७ अपर्याप्त	६ ५ ४	७।७।६।५। ४।३।२	४	२ म१ ति१	५	६	१ औमि	३	४	६ विभंग मनःपर्यय विना	२ अ१ य१	४	द्र१ कपोत भा६	२	४ मि१ सा१ वे१ क्षा१	२	१ आहा	१० ज्ञा६ द४

औदारिक मिश्रयोगी मिथ्या दृष्टि रचना	१ मि	७ अपर्याप्त	६ ५ ४	७।७।६ ५।४।३	४	२ म१ ति१	५	६	१ औमि	३	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ अ	२ च१ अच१	द्र १ कपोत भा३ अशुभ	२	१ मि	२	१ आहा	४ ज्ञा२ द२
औदारिक मिश्रयोगी सासादन रचना	१ सा	१ संअ	६	७	४	२ म१ ति१	१ पं	१ त्र	१ औमि	३	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ अ	२ च१ अच१	द्र १ कपोत भा३ अशुभ	१ भ	१ सा	१ सं	१ आहा	४ ज्ञा२ द२
औदारिक मिश्रयोगी असयत रचना	१ असं	१ संअप	६ अ	७ प	४	२ ति१ म१	१ प	१ त्र	१ औमि	१ पुं	४	३ मत्यादिक	१ अ	३ चक्षु आदि	द्र १ कपोत भा६	१ भ	२ वे१ क्षा१	१ सं	१ आ	६ ज्ञा३ द३
औदारिक मिश्रयोगी सयोगी रचना	१ सयो	१ अ	६ प	२	०	१ म	१ प	१ त्र	१ औमि	०	०	१ के	१ य	१ के	द्र१ कपोत भा१ शुक्ल	१ भ	१ क्षा	०	१ आ	२ ज्ञा१ द१
वैक्रियिक काययोगी रचना	४ मि१ सा१ मि१ अ१	१ संप	६	१०	४	२ न१ दे१	१ प	१ त्र	१ वै	३	४	६ कुज्ञान३ मत्यादि ३	१ अ	३ चक्षु आदि	द्र६ भा६	२	६	१ सं	१ आ	९ ज्ञा६ द३
वैक्रियिककायोगी मिथ्या दृष्टि रचना	१ मि	१ संप	६	१०	४	२ न१ दे१	१ पं	१ त्र	१ वै	३	४	३ कुज्ञान	१ अ	२ च१ अच१	द्र६ भा६	२	१ मि	१ सं	१ आ	५ ज्ञा ३ द २
वैक्रियिक योगी सासादन रचना	१ सा	१ सप	६	१०	४	२ न१ दे१	१ पं	१ त्र	१ वै	३	४	३ कुज्ञान	१ अ	२ च१ अच१	द्र६ भा६	१ भ	१ सा	१ सं	१ आ	५ ज्ञा३ द२

वैक्रियिककायोगी सम्यग्मिथ्या दृष्टि रचना	१ मिश्र	१ संप	६	१०	४	२ न१ दे१	१ पं	१ त्र	१ वै	३	४	३ मिश्र	१ अ	२ च१ अच१	द्र ६ भा६	१ भ	१ मिश्र	१ स	१ आ	५ ज्ञा३ द२
वैक्रियिक योगी असंयत रचना	१ अस	१ सप	६	१०	४	२ न १ दे १	१ पं	१ त्र	१ वै	३	४	३ मत्यादि	१ अ	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा ६	१ भ	३ उ १ वे १ क्षा १	१ सं	१ आ	६ ज्ञा ३ द ३
वैक्रियिक मिश्र योगी रचना	मि१सा१ अवि१	१ सअ	६	७	४	२ न १ दे १	१ पं	१ त्र	१ वैमि	३	४	५ कुम१ कुश्रु१ मत्यादि३	१ अ	३ चक्षु आदि	द्र १ कपोत भा६	२	५ मिश्र विना	१ सं	१ आ	८ ज्ञा५ द३
वैक्रियिकमिश्रयोगी मिथ्यादृष्टि रचना	१ मि	१ संअ	६	७	४	२ न १ दे १	१ पं	१ त्र	१ वैमि	३	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ अ	२ च१ अच १	द्र १ कपोत भा६	२	१ मि	१ स	१ आ	४ ज्ञा २ द २
वैक्रियिकमिश्रयोगी सासादन रचना	१ सा	१ सअ	६	७	४	१ दे	१ पं	१ त्र	१ वैमि	२ स्त्री १ पुं १	४	३ कुम १ कुश्रु १	१ अ	२ च१ अच१	द्र १ कपोत भा ६	१ भ	१ सा	१ सं	१ आ	४ ज्ञा २ द २
वैक्रियिकमिश्रयोगीअसंयत रचना	१ असं	१ संअ	६	७	४	२ न १ दे १	१ पं	१ त्र	१ वैमि	२ नपु पु १	४	३ मत्यादि	१ अ	३ चक्षु आदि	द्र १ कपोत भा४शुभ ३ कपोत१	१ भ	३ औ१ वे १ क्षा १	१ सं	१ आ	६ ज्ञा३ द३
आहारककाययोगी रचना	१ प्रमत्त	१ पर्याप्त	६	१०	४	१ म	१ पं	१ त्र	१ आ	१ पुं	४	३ मत्यादि	२ सा १ छे १	३ चक्षु आदि	द्र १ शुक्ल भा ३ शुभ	१ भ	२ वे १ क्षा १	१ सं	१ आ	६ ज्ञा३ द ३

अहारकमिश्रकाययोगी रचना	१ प्रमत्त	१ अपर्याप्त	६	७	४	१ म	१ पं	१ त्र	१ आमि	१ पु	४	३ मति आदि	२ सा१ छे१	३ चक्षु आदि	द्र १ कपोत भा३ शुभ	१ भ	२ वे १ सा १	१ सं	१ आ	६ ज्ञा ३ द ३
कार्मण काययोगी रचना	४ मि १ सा १ अवि १ स १	७ अपर्याप्त	६ ५ ४	७।७ ६।५ ४।३।२	४	४	५	६	१ का	३	४	६ विभंग मनःपर्यय विना	२ अ १ य १	४	द्र १ शुक्ल भा ६	२	५ मिश्र विना	२	१ अनाहारक	१० ज्ञा६ द ४
कार्मण काययोगी मिथ्यादृष्टि रचना	१ मि	१ अपर्याप्त	६ ५ ४	७।७ ६।५ ४।३	४	४	५	६	१ का	३	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ अ	२ च १ अच१	द्र १ शुक्ल भा ६	२	१ मि	२	१ अना	४ ज्ञा२ द २
कार्मण काययोगी सासादन रचना	१ सा	१ संज्ञ	६	७	४	३ ति १ म १ दे १	१ पं	१ त्र	१ का	३	४	२ कुम १ कुश्रु १	१ अ	२ च १ अच१	द्र१ शुक्ल भा ६	१ भ	१ सा	१ सं	१ अना	४ ज्ञा २ द २
कार्मण काययोगी असंयत रचना	१ अस	१ सं अ	६	७	४	४	१ प	१ त्र	१ का	२ नपुं १ पु१	४	३ मति आदि	१ असं	२ चक्षु आदि	द्र१ शुक्ल भा ६	१ भ	३ उ१ वे१ क्षा१	१ सं	१ अना	६ ज्ञा३ द३
कार्मण काययोगी सयोगी रचना	१ सयो	१ अ	६	२	०	१ म	१ पं	१ त्र	१ का	०	०	१ के	१ य	१ के	द्र १ शुक्ल भा१ शुक्ल	१ भ	१ क्षा	०	१ अना	२ ज्ञा१ द १
वेदमार्गणा मुख्यतया स्त्री वेदी रचना	९ आदिके	४ संज्ञी असंज्ञी प० २ अ०२	६।६ ५।५	१०।७ ९।७	४	३ म१ ति१ दे१	१ पं	१ त्र	१३ आहारक द्विक विना	१ स्त्री	४	६ मनःपर्यय केवल विना	४ अ१ दे१ सा१ छे१	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा६	२	६	२	२	९ ज्ञा६ द ३

स्त्रीवेदीपर्याप्त रचना	९ आदिके	२ सं० अ० पर्याप्त	६।५	१०।९	४	३ ति१ म१ दे१	१ पं	१ त्र	१० म४ व४ औ१ वै१	१ स्त्री	४	६ मन.पर्ययकेवल विना	४ अ१ दे१ सा१ छे१	३ चक्षु आदि	द्र६ भा६	२	६	२	१ आहा	९ ज्ञा६ द३
स्त्रीवेदी अपर्याप्त रचना	२ मि१ सा१	२ स० अ० अपर्याप्त	६।५	७।७	४	३ नरक विना	१ पं	१ त्र	३ औमि१ वैमि१ का१	१ स्त्री	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ अ	२ च१ अच१	द्र२ का१ शु१ भा३ अशुभ	२	२ मि१ सा१	२	२	४ ज्ञा२ द२
स्त्रीवेदीमिथ्यादृष्टि रचना	१ मि	४ स० अ, प २अप	६।६ ५।५	१०।७ ९।७	४	३ नरक विना	१ प	१ त्र	१३ आहारकद्विक विना	१ स्त्री	४	३ कुज्ञान	१ अ	२ च१ अच१	द्र६ भा६	२	१ मि	२	२	५ ज्ञा३ द२
स्त्रीवेदीमिथ्यादृष्टि पर्याप्त रचना	१ मि	२ स अ पर्याप्त	६।५	१०।९	४	३ नरक विना	१ प	१ त्र	१० म४ व४ औ१ वै१	१ स्त्री	४	३ कुज्ञान	१ अ	२ च१ अच१	द्र६ भा६	२	१ मि	२	१ आहा	५ ज्ञा३ द२
स्त्रीवेदीमिथ्यादृष्टि अपर्याप्तरचना	१ मि	२ सं अ अपर्याप्त	६६	७।७	४	३ नरक विना	१ प	१ त्र	३ औमि१ वैमि१ का१	१ स्त्री	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ अ	२ च१ अच१	द्र२ क१ शु१ भा३ अशुभ	२	१ मि	२	२	४ ज्ञा२ द२
स्त्रीवेदी सासादन रचना	१ सा	२ संप१ स अ१	६।६	१०।७	४	३ नरक विना	१ प	१ त्र	१३ आहारकद्विक विना	१ स्त्री	४	३ कुज्ञान	१ अ	२ च१ अच१	द्र६ भा६	१ भ	१ सा	१ स	२	५ ज्ञा३ द२
स्त्रीवेदी सासादन पर्याप्त रचना	१ सा	१ संप१	६	१०	४	३ नरक विना	१ प	१ त्र	१० म४ व४ औ१ वै१	१ स्त्री	४	३ कुज्ञान	१ अ	२ च१ अच१	द्र६ भा६	१ भ	१ सा	१ स	१ आहा	५ ज्ञा३ द२

स्त्रीवेदीसासादनअपर्याप्तरचना	१ सा	१ संभ	६	७	४	३ नरक विना	१ पं	१ त्र	३ औमि १ वैमि १ का१	१ स्त्री	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ अ	२ च१ अच१	द्र२ का१ शु१ भा३ अशुभ३	१ भ	१ सा	१ सं	२	४ ज्ञा२ द२
स्त्रीवेदीसम्यग्मिथ्यादृष्टि रचना	१ मिश्र	१ संप	६	१०	४	३ नरक विना	१ पं	१ त्र	१० म४ व४ औ१ वै१	१ स्त्री	४	३ मिश्र	१ अ	२ च१ अच१	द्र६ भा६	१ भ	१ मिश्र	१ सं	१ आहा	५ ज्ञा३ द२
स्त्रीवेदी असंयत रचना	१ असं	१ संप	६	१०	४	३ नरक विना	१ पं	१ त्र	१० म४ व४ औ१ वै१	१ स्त्री	४	३ मति आदि	१ अ	३ चक्षु आदि	द्र६ भा६	१ भ	३ उ१ वे१ क्षा१	१ सं	१ आहा	६ ज्ञा३ द३
स्त्रीवेदी देशसंयत रचना	१ दे	१ संप	६	१०	४	२ ति१ म१	१ प	१ त्र	९ म४ व४ औ१	१ स्त्री	४	३ मति आदि	१ दे	३ चक्षु आदि	द्र६ भा३ शुभ	१ भ	३ उ१ वे१ क्षा१	१ सं	१ आहा	६ ज्ञा३ द३
स्त्रीवेदी प्रमत्त रचना	१ प्र	१ संप	६	१०	४	[illegible]	१ प	१ त्र	९ म४ व४ औ१	१ स्त्री	४	३ मति आदि मनःपर्यय [illegible]	२ सा१ छे१	३ चक्षु आदि	द्र६ भा३ शुभ	१ भ	३ उ१ वे१ [illegible]	१ सं	१ आहा	६ ज्ञा३ द३
स्त्रीवेदी अप्रमत्त रचना	१ अप्र	१ संप	६	१०	१ आहार विना	१ म	१ प	१ त्र	९ म४ व४ औ१	१ स्त्री	४	३ मति आदि	२ सा१ छे१	३ चक्षु आदि	द्र६ भा३ शुभ	१ भ	३ उ१ वे१ क्षा१	१ सं	१ आहा	६ ज्ञा३ द३
स्त्रीवेदीअपूर्वकरण रचना	१ अपू	१ संप	६	१०	३ आहार विना	१ म	१ पं	१ त्र	९ म४ व४ औ१	१ स्त्री	४	३ मति आदि	२ सा१ छे१	३ चक्षु आदि	द्र६ भा१ शुक्ल	१ भ	२ उ१ क्षा१	१ सं	१ आहा	६ ज्ञा३ द३

स्त्रीवेदोअनि वृत्तिकरण रचना	१ अनि	१ सप	६	१०	२ मै १ प १	१ म	१ पं	१ त्र	६ म ४ व ४ औ १	१ स्त्री	४	३ मति आदि	२ सा १ छे १	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा १ शुक्ल	१ भ	२ उ १ क्षा १	१ स	१ आहा	६ ज्ञा ३ द ३
पुरुषवेदी रचना	६ आदिके	४ सं अ प० २ अ० २	६।६ ५।५	१०।७ ६।७	४	३ नरक विना	१ प	१ त्र	१५	१ पु	४	७ केवल विना	५ अ १ दे १ सा १ छे १ प १	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा ६	२	६	२	२	१० ज्ञा ७ द -
पुरुषवेदी पर्याप्त रचना	६ आदिके	२ स अ पर्याप्त	६।५	१०।६	४	३ नरक विना	१ प	१ त्र	११ म४व ४औ१ वै१आ १	१ पु	४	७ केवल विना	५ अ १ दे १ सा १ छे १ प १	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा ६	२	६	२	१ आहा	१० ज्ञा ७ द -
पुरुषवेदी अपर्याप्त रचना	४ मि १ सा १ अवि १ प्र १	२ स अ अप र्याप्त	६।५	७।७	४	३ नरक विना	१ प	१ त्र	४ औ मि १ वैमि १ आमि १ का १	१ पु	४	५ कुम १ कुश्रु १ . त्या दि ३	३ अ १ सा १ छे १	३ चक्षु आदि	द्र २ का शु १ भा ६	२	५ मिश्र विना	२	२	८ ज्ञा ५ द ३
पुरुषवेदी मिथ्यादृष्टि रचना	१ मि	४ सं अ पर्याप्त अप	६।६ ५।५	१०।७ ६।७	४	३ नरक विना	१ प	१ त्र	१३ आहार कद्विक विना	१ पु	४	३ कुज्ञान	१ अ	२ च १ अच १	द्र ६ भा ६	२	१ मि	२	२	५ ज्ञा ३ द २
पुरुषवेदी मिथ्यादृष्टि पर्याप्त रचना	१ मि	२ स अ० प र्याप्त	६।५	१०।६	४	३ नरक विना	१ प	१ त्र	१० म ४ व ४ औ १ वै १	१ पु	४	३ कुज्ञान	१ अ	२ च १ अच १	द्र ६ भा ६	२	१ मि	२	१ आहा	५ ज्ञा ३ द २
पुरुषवेदी मिथ्यादृष्टि अपर्याप्त रचना	१ मि	२ स अ अप र्याप्त	६।५	७।७	४	३ नरक विना	१ प	१ त्र	३ औमि १ वैमि १ का १	१ पु	४	२ कुम १ कुश्रु	१ अ	२ च १ अच १	द्र २ क १ शु भा ६	२	१ मि	२	२	४ ज्ञा २ द २

पुरुषवेदी सासादनादि अनिवृत्ति पर्यंतगुणस्थानवत् वे मिअग देर	गुण स्थान वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	मिश्र असंयतमेंग तिऽदे २ शेष गु:वत्	गु० वत्	गु० वत्	१ पुं	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वन्	गु० वत्	गु० वन्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्
पुंसकवेदी रचना	६ आदिके	१४	६।६ ५।५ ४।४	१०।७ ६।७ ८।७ ५।६४ ४।३	४	३ देव विना	५	६	१३ आहार कद्विक विना	१ न	४	६ मन.पर्ययकेवल विना	४ अ १ दे १ सा १ छे १	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा६	२	६	२	२	६ छा ६ द ३
पुंसकवेदी पर्याप्त रचना	६ आदिके	७ पर्याप्त	६ ५ ४	१०।६ ८ ७ ६ ४	४	३ देव विना	५	६	१० म ४ व ४ औ १ वै १	१ न	४	६ मन.पर्यय केवल विना	४ सा १ छे १ दे१ अ१	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा ६	२	६	२	१ आ	६ छा ६ द ३
नपुंसकवेदी अपर्याप्त रचना	३ मि १ सा१ अवि १	७ अपर्याप्त	६। ५।४	७।७ ६।४ ४ ३	४	३ देव विना	५	६	३ औ मि १ वै १ का १	१ न	४	५ कुम १ कुश्रु १ मत्यादि ३	१ अ	३ चक्षु आदि	द्र २ का१ शु १ भा३ अशुभ	२	४ मि १ सा १ वे १ क्षा११	२	२	८ छा ५ द३
पुंसकवेदी मिथ्यादृष्टि रचना	१ मि	१४	६।६ ५।५ ४।४	१०।७ ६।७ ८।६।७ ५।६।४ ४।३	४	३ देव विना	५	६	१३ आहारकद्वि कविना	१ न	४	३ कुज्ञान	१ अ	२ च १ अच १	द्र६ भा ६	२	१ मि	२	२	५ छा ३ द २
पुंसकवेदी मिथ्यादृष्टि पर्याप्त रचना	१ मि	७ पर्याप्त	६ ५ ४	१०।६ ८।७ ६।४	४	३ देव विना	५	६	१० म ४ व ४ औ १ वै १	१ न	४	३ कुज्ञान	१ अ	२ च १ अच १	द्र६ भा६	२	१ मि	२	१ आहा	५ छा३ द २
पुंसकवेदी मिथ्या दृष्टि अपर्याप्त रचना	१ मि	७ अपर्याप्त	६ ५ ४	७।७ ६।५ ४।३	४	३ देव विना	५	६	३ औमि १ वैमि १ का१	१ न	४	२ कुम १ कुश्रु १	१ अ	२ च १ अच १	द्र २ का१शु१ भा३ अशुभ	२	१ मि	२	२	४ छा २ द २

नपुंसकसासादनरचना	१ सा	२ सप१ संअ१	६।६	१०।७	४	३ देव विना	१ प	१ त्र	१२ आहार मिश्र वै०मि विना	१ न	४	३ कुज्ञान	१ अ	२ च१ अच१	द्र६ भा६	१ भ	१ सा	१ सं	२	५ ज्ञा३ द२
नपुंसकवेदी सासादन पर्याप्त रचना	१ सा	१ संज्ञी पर्याप्त	६ प	१०	४	३ देव विना	१ पं	१ त्र	१० म४ व४ औ१ वै१	१ न	४	३ कुज्ञान	१ अ	२ च१ अच१	द्र६ भा६	१ भ	१ सा	१ सं	१ आ	५ ज्ञा३ द२
नपुंसकवेदी सासादन अपर्याप्त रचना	१ सा	१ सत्र	६ अ	७	४	५ म१ ति१	१ पं	१ त्र	२ वैमि १ का१	१ न	४	२ कुम कुश्रु	१ अ	२ च१ अच१	द्र२ का१ शु१ भा३ अशु	१ भ	१ सा	१ सं	२	४ ज्ञा२ द२
नपुंसकसम्यग्मिथ्यादृष्टि रचना	१ मिश्र	१ संप	६ प	१०	४	३ देव विना	१ पं	१ त्र	१० म४ व४ औ१ वै१	१ न	४	३ मिश्र	१ अ	२ च१ अच१	द्र६ भा६	१ भ	१ मिश्र	१ सं	१ आ	५ ज्ञा३ द२
नपुंसकवेदी असंयत रचना	१ अस	२ संप१ सं०अ१	६।६	१०।७	४	३ देव विना	१ पं	१ त्र	१२ म४ व४ औ१ वै२ का१	१ न	४	३ मत्यादि	१ अ	३ चक्षु आदि	द्र६ भा६	१ भ	३ उ१ वे१ क्षा१	१ सं	२	६ ज्ञा३ द३
नपुंसकवेदी असंयतपर्याप्त रचना	१ असं	२ संप१	६	१०	४	३ देव विना	१ प	१ त्र	१० म४ व४ औ१ वै१	१ न	४	३ मत्यादि	१ अ	३ चक्षु आदि	द्र६ भा६	१ भ	३ उ१ वे१ क्षा१	१ सं	१ आ	६ ज्ञा३ द३
नपुंसकवेदी असंयतअपर्याप्त रचना	१ असं	१ संअ०	६ अ	७ अ	४	१ नरक	१ पं	१ त्र	२ वैमि१ का१	१ न	४	३ मत्यादि	१ अ	३ चक्षु आदि	द्र२ का१ शु१ भा३ अशुभ	१ भ	२ वे१ क्षा१	१ सं	२	६ ज्ञा३ द३

नपुंसकवेदी देशसंयत रचना	१ दे	१ सप	६ प	१० प	४	२ म१ ति१	१ पं	१ त्र	६ म४ व४ औ१	१ न	४	३ मत्या दि	१ दे	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा ३ शुभ	१ भ	३ उ१ वे१ क्षा१	१ स	१ आ	६ ज्ञा३ द३
नपुंसकवेदी प्रमत्तादिअनि वृत्तिभागपर्यंत स्त्रीवेदिवत् वेद १ नपुंसक	स्त्री० वत्	स्त्री० वत्	स्त्री० वत्	स्त्री० वत्	स्त्री० वत्	स्त्री० वत्	स्त्री० वत्	स्त्री० वत्	स्त्री० वत्	१ नपुंसक	स्त्री० वत्	स्त्री० वत्	स्त्री० वत्	स्त्री० वत्	स्त्री० वत्	स्त्री० वत	स्त्री० वत्	स्त्री० वत्	स्त्री० वत्	स्त्री० वत्
वेदरहित अपगतवेदी रचना	६ अनिवृत्ति आदिक	२ सप सं अ	६।६	१० ४।२।१	१ प	१ म	१ पं	१ त्र	११म४ व४औ २का१	०	४।३ २।१	५ मति आदि सुज्ञान	सा १ छे १ सू १ य १	४	द्र ६ भा १ शुक्ल	१ भ	२ औ १ क्षा १	१ स	२	६ ज्ञा ५ द ४
अपगतवेदी द्वितीयभागअनि वृत्तिसिद्धप र्यंतमूलौघवत्	मूलौघ वत्	मू० वत्	मू० वत्	मू० वत्	मू० वत्	मू० वत्	मू० वत्	मू० वत्	मू० वत्	मू० वत्	मू० वत्	मू० वत्	मू० वत्	मू० वत्	मू० वत्	मू० वत्	मू० वत्	मू० वत्	मू० वत्	मू० वत्
कषायमार्गणागुणस्थान वत्तत्राक्रोध रचना	६ आदिके	१४	६।६ ५।५ ४।४	१०।७ ६।७।८ ६।७।५ ६।४ ४।३	४	४	५	६	१५	३	१ क्रो	७ केवल बिना	५ अ१सा १ छे १ प १ दे १	३ केवल विना	द्र ६ भा ६	२	६	२	२	१० ज्ञा७ द ३
क्रोधकषायी पर्याप्त रचना	६ आदिके	७ पर्याप्त	६। ५। ४।	१०।६ ८।७ ६ ४	४	४	५	६	११ म ४ व ४औ १ आ १	३	१ क्रो	७ केवल बिना	५ अ१दे१ सा १ छे १ प १	३ केवल बिना	द्र ६ भा ६	२	६	२	२	१० ज्ञा७ द३
क्रोधकषायी अपर्याप्त रचना	४ मि१ सा१ अवि१ प्र१	७ अपर्याप्त	६ ५ ४	७।७ ६।५ ४।३	४	४	५	६	४औ मि१वै मि१ आमि १का१	३	१ क्रो	५ कुम १ कुश्रु १मत्या दि ३	३ अ१ सा१ छे १	३ केवल विना	द्र २ क १ शु १ भा ६	२	५ मिश्र विना	२	२	८ ज्ञा ५ द३

क्रोधकषायी मिथ्यादृष्टि रचना	१ मि	१४	६।६ ५।५ ४।४	१०।७ ९।७ ८।६ ७।५ ६।४ ४।३	४	४	५	६	१३ आहारकद्विक विना	३	१ क्रो	३ कुज्ञान	१ अ	२ च१ अच१	द्र ६ भा६	२	१ मिथ्य	२	२	५ ज्ञा३ द२
क्रोधकषायी मिथ्यादृष्टि पर्याप्त रचना	१ मि	७ पर्याप्त	६ ५ ४	१० ९ ८ ७ ६ ४	४	४	५	६	१० म४ व४ औ१ वै१	३	१ क्रो	३ कुज्ञान	१ अ	२ च१ अच१	द्र६ भा६	२	१ मि	२	१ आ	५ ज्ञा३ द२
क्रोधीमिथ्यादृष्टि अपर्याप्त रचना	१ मि	१ अपर्याप्त	६ ५ ४	७ ७ ६ ५ ४ ३	४	४	५	६	३ औमि१ वैमि१ का१	३	१ क्रो	२ कुम१ कुश्रु१	१ अ	२ च१ अच१	द्र २ का१ शु१ भा६	२	१ मि	२	२	४ ज्ञा२ द२
क्रोधीसासादनरचना	१ सा	२ स प१ सअ१	६।६	१०।७	४	४	१ प	१ त्र	१३ आहारकद्विक विना	३	१ क्रो	३ कुज्ञान	१ अ	२ च१ अच१	द्र६ भा६	१ भ	१ सा	१ स	२	५ ज्ञा३ द२
क्रोधीसासादनपर्याप्त रचना	१ सा	१ सप	६	१०	४	४	१ प	१ त्र	१० म४ व४ औ१ वै१	३	१ क्रो	३ कुज्ञान	१ अ	२ च१ अच१	द्र६ भा६	१ भ	१ सा	१ स	१ आ	५ ज्ञा३ द२
क्रोधीसासादनअपर्याप्त रचना	१ सा	१ सअ	६	७	४	३ नारक विना	१ पं	१ त्र	३ औमि१ वैमि१ का१	३	१ क्रो	३ कुम१ कुश्रु१	१ अ	२ च१ अच१	द्र २ का१ शु१ भा६	१ भ	१ सा	१ स	२	४ ज्ञा२ द२
क्रोधीसम्यग्मिथ्यादृष्टि रचना	१ मिश्र	१ सप	६	१०	४	४	१ पं	१ त्र	१० म४ व४ औ१ वै१	३	१ क्रो	३ मिश्र	१ अ	२ च१ अच१	द्र६ भा६	१ भ	१ मिश्र	१ स	१ आ	५ ज्ञा३ द२

क्रोधीअनिवृत्तिकरण प्रथमभाग रचना	१ अनि	२ स प	६	१०	२ मै १ प १	१ म	१ प	१ प्र	९ म ४ व ४ औ १	३	१ क्रो	४ मति आदि	२ सा १ छे १	३ चक्षु आदि	द्र६ भा१ शुक्ल	१ भ	२ औ १ क्षा १	१ स	१ आ	७ ज्ञा ३ द ३
क्रोधोऽनिवृत्ति करण [illegible]	—	१ स प	६	१०	१ प	१ म	१ प	१ [illegible]	६ म ४ व ४ औ १	३	१ क्रो	४ मति आदि	२ सा १ छे १	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा १ शुक्ल	१ भ	२ औ १ क्षा १	१ स	१ आ	ज्ञा [illegible]
[illegible] मायालोभ रचना अपना अपनाव्युच्छि तिरूपतरचना	एवमान मायाविषै मालोभ१० गुणस्थानवत्	एव	एव	एव	एवं	एवं	एवं	एव	एवं	एव	१ स्वकोय	एवं	एवं	एव	एवं	एव	एवं	एव	एव	एव
अकषायी रचना	४ उपशान्त कषायादि	२ प १ अ १	६।६	१०। ४।२।१	०	१ म	१ पं	१ प्र	११ म९ व४ औ २ का१	•	०	७ मति आदि	१ य	४	द्र ६ भा १ शुक्ल	१ भ	२ औ१ क्षा १	१ स	२	६ ज्ञा ५ द ४
अकषायी उपशान्तकषायादि गुणस्थानवत् रचना	गुणस्थानवत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्
ज्ञानमार्गणाविषै गुणस्थानवत् तहां कुमतिकुश्रुत रचना	२ मि १ सा १	१४	६।६ ५।५ ४।४	१०।७ ४।७ ८।६।७ ५।६।४ ४।३	४	४	५	६	१३ आहारकद्विक विना	३	४	२ कुम १ कुश्रु १	१ अ	२ च १ अच १	द्र ६ भा६	२	२ मि १ सा १	२	२	४ ज्ञा२ द २
कुमतिकुश्रुत पर्याप्त रचना	२ मि १ सा १	७ पर्याप्त	६ ५।४	१०।६ ८।७ ६।४	४	४	५	६	१० म ४ व ४ औ१ वै १	३	४	२ कुम १ कुश्रु १	१ अ	२ च १ अच १	द्र ६ भा ६	२	२ मि १ सा १	२	१ आ	४ ज्ञा २ द २

कुमतिकुश्रुत अपर्याप्त रचना	२ मि१ सा१	७ अपर्याप्त	६ ५ ४	७।७।६ ५।४।३	४	४	५	६	३ औमि १ वैमि १ का१	३	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ अ	२ च१ अच१	द्र२ क१ शु१ भा६	२	२ मि१ सा१	२	२	४ ज्ञा२ द२
कुमतिकुश्रुत मिथ्यादृष्टि रचना	१ मि	१४	६।६ ५।५ ४।४	१०।७ ९।७ ८।६।७।५ ६।४।४।३	४	४	५	६	१३ आहारक द्विक विना	३	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ अ	२ च१ अच१	द्र६ भा६	२	१ मि	२	२	४ ज्ञा२ द२
कुमतिकुश्रुत मिथ्यादृष्टि पर्याप्त रचना	१ मि	७ पर्याप्त	६ ५ ४	१०।९।८ ७।६।४	४	४	५	६	१० म४ व४ औ१ वै१	३	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ अ	२ च१ अच१	द्र६ भा६	२	१ मि	२	१ आ	४ ज्ञा२ द२
कुमतिकुश्रुत मिथ्यादृष्टि अपर्याप्त रचना	१ मि	७ अपर्याप्त	६ ५ ४	७।७।६। ५।४।३	४	४	५	६	३ औमि १ वैमि १ का१	३	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ अ	२ च१ अच१	द्र२ क१ शु१ भा६	२	१ मि	२	२	४ ज्ञा२ द२
कुमतिकुश्रुत सासादन रचना	१ सा	२ संप१ सं अ१	६।६	१०।७	४	४	१ पं	१ त्र	१३ आहारक द्विक विना	३	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ अ	२ च१ अच१	द्र६ भा६	१ भ	१ सा	१ सं	२	४ ज्ञा२ द२
कुमतिकुश्रुत सासादनपर्याप्त रचना	१ सा	१ संप१	६	१०	४	४	१ पं	१ त्र	१० म४ व४ औ१ वै१	३	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ अ	२ च१ अच१	द्र६ भा६	१ भ	१ सा	१ सं	१ आ	४ ज्ञा२ द२
कुमतिकुश्रुत सासादनअपर्याप्त रचना	१ सा	१ संअ	६ अ	७ अ	४	३ नरक विना	१ पं	१ त्र	३ औमि १ वैमि १ का१	३	४	२ कुम १ कुश्रु१	१ अ	२ च१ अच१	द्र२ क१शु१ भा६	१ भ	१ सा	१ सं	२	४ ज्ञा२ द२

विभंग ज्ञानीरचना	२ मि १ सा १	१ सप	६	१०	४	४	१ पं	१ त्र	१० म ४ व ४ औ १ वै १	३	४	१ विभंग	१ अ	२ च१ अच१	द्र ६ भा ६	२	२ मि १ सा १	१ स	१ आ	३ ज्ञा१ द२
विभंगज्ञानी मिथ्यादृष्टि रचना	१ मि	१ सप	६	१०	४	४	१ पं	१ त्र	१० म४ व४ औ१ वै १	३	४	१ विभंग	१ अ	२ च१ अच१	द्र६ भा६	२	१ मि	१ स	१ आ	३ ज्ञा१ द२
विभंगज्ञानी सासादन रचना	१ सा	१ सप	६	१०	४	४	१ पं	१ त्र	१० म४ व४ औ १ वै१	३	४	१ विभंग	१ अ	२ च१ अच १	द्र६ भा६	१ भ	१ सा	१ सं	१ आ	३ ज्ञा१ द२
मतिश्रुत ज्ञानी रचना	६ असंयतादि	२ सप १ सअ १	६।६	१०।७	४	४	१ पं	१ त्र	१५	३	४	२ म१ श्रु १	७	३ चक्षु आदि	द्र६ भा ६	१ भ	३ उ१ वे१ क्षा१	१ स	२	५ ज्ञा२ द३
मतिश्रुत पर्याप्त रचना	६ असंयतादि	१ सप	६	१०	४	४	१ पं	१ त्र	११ म४व४ औ१ वै १ आ १	३	४	२ म १ श्रु १	७	३ चक्षु आदि	द्र६ भा६	१ भ	३ उ१ वे१ क्षा१	१ स	१ आ	५ ज्ञा २ द३
मतिश्रुत अपर्याप्त रचना	२ अस १ प्र १	१ सअ	६	७	४	४	१ पं	१ त्र	४औ मि १ वैमि ४ आमि १ का १	२ म १ पु १	४	२ म १ श्रु १	३ अ १ सा १ छे १	३ च १ अच १ अव १	द्र२ क१शु१ भा६	१ भ	३ उ१ वे१ क्षा१	१ स	२	५ ज्ञा २ द ३
मतिश्रुतज्ञानी असंयत रचना	१ अस १	२ सप १ सअ १	६।६	१०।७	४	४	१ पं	१ त्र	१३आ हारक द्विबिना	३	४	म १ श्रु १	१ अ	३ चक्षु आदि	द्र६ भा६	१ भ	३ उ१वे१ क्षा१	१ स	२	५ ज्ञा२ द ३

मतिश्रुतज्ञानी असंयतपर्याप्त रचना	१ असं	१ संप	६	१०	४	४	१ पं	१ त्र	१० म ४ व ४ औ १ वै १	३	४	२ म१ श्रु१	१ अ	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा ६	१ भ	३ उ १ वे१ क्षा १	१ सं	१ आ	५ क्षा २ द ३
मतिश्रुतज्ञानी असंयतअपर्याप्तरचना	१ अस	४ सअ	६	७	४	४	१ पं	१ त्र	३ औमि१ वैमि१ का१	२ न१ पुं१	४	२ म१ श्रु१	१ अ	३ चक्षु आदि	द्र २ का१ शु१ भा६	१ भ	३ उ१ वे१ क्षा१	१ सं	२	५ क्षा २ द ३
मतिश्रुतज्ञानी देशसंयतादि क्षीणकषाय पर्यंतगुणस्थानवत्ज्ञान २	गुण स्थान वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	२ म१ श्रु१	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	५ क्षा २ द ३
अवधिज्ञानरचनाएवमति श्रुतवत्ज्ञान १ अवधिर्मति श्रुतरचया थ कावाज्ञान२ मतिश्रुतअव धिवामतिश्रु त मनपर्ययज्ञा न४मत्यादि	मतिश्रुत वत्	म० वत्	म० वत्	म० वत्	म० वत्	म० वत्	म० वत्	म० वत्	म० वत्	म० वत्	म० वत्	१ अवधि ३ म १ श्रु १ अ १वा मतिश्रुतिमन वा ४ म १ श्रु १ अ १ म १	म० वत्	म० वत्	म० वत्	म० वत्	म० वत्	म० वत्	म० वत्	म० वत्
मन पर्यय ज्ञानी रचना	७ प्रमत्त आदि	१ सं प	६	१०	४	१ म	१ प	१ त्र	६ म४ व४ औ१	१ पुं	४	१ मनः पर्यय	४ सा१ छे१ सू१ य१	३ च १ अच १ अव१	द्र ६ भा ३ शुभ	१ भ	३ उ१ वे१ क्षा१	१ सं	१ आ	४ क्षा १ द ३

मन पर्ययज्ञानी प्रमत्त रचना	१ प्र	१ सं प	६	१०	४	१ म	१ पं	१ त्र	६ म ४ व ४ औ १	१ पुं	४	१ मन. पर्यय	२ सा१ छे१	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा ३ शुभ	१ भ	३ उ१ वे१ क्षा१	१ सं	१ आ	४ ज्ञा १ द ३
मन पर्ययज्ञानी अप्रमत्त रचना	१ अप्र	१ स प	६	१०	३ आहार विना	१ म	१ पं	१ त्र	६ म४ व४ औ१	१ पु	४	१ मन. पर्यय	२ सा१ छे१	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा ३ शुभ	१ भ	३ उ१ वे१ क्षा१	१ सं	१ आ	४ ज्ञा १ द ३
मन.पर्यय ज्ञानी अपूर्वकरणादि क्षीणकषायपर्यंत गुणस्थान वत् वेद १ ज्ञान १	गुणस्थानवत	गु० वत	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	पुंवा नास्ति	गु० वत्	१ मन. पर्यय	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	४ ज्ञा १ द ३
केवल ज्ञानी रचना	२ सयो१ अयो१	२ प१ अप१	६।६	४।२।१	०	१ म	६ ग	१ त्र	७ म२ व२ औ२ का१	०	०	१ के	१ य	१ के	द्र ६ भा१ शुक्ल	१ भ	१ क्षा	०	२	२ ज्ञा१ द १
केवलज्ञानी सयोगीअयोगीसिद्ध रचना गुणस्थानवत्	गुणस्थानवत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्
सामान्यसंयममार्गणा रचना	६ प्रमत्त आदि	२ प१ अ१	६।६	१०।७ ४।२।१	४	१ म	१ पं	१ त्र	११ वैक्रियकद्विक विना	३	४	५ मति ज्ञान आदि	५ सा१ छे१ प१ सू१ य१	४	द्र ६ भा ३ शुभ	१ भ	३ उ१ वे१ क्षा१	१ सं	२	६ ज्ञा ५ द ४

सामान्यसंयमीप्रमत्त रचना	१ प्र	२ प१ अ१	६'६	१०।७	४	१ म	१ पं	१ त्र	११ म४ व४ औ१ आ२	३	४	३ मति आदि	३ सा१ छे१ प१	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा३ शुभ	१ भ	३ उ१ वे१ क्षा१	१ सं	१ आ	७ ज्ञा४ द३
सामान्यसंयमीअप्रमत्त रचना	१ अप्र	१ प	६	१०	३ आहार विना	१ म	१ पं	१ त्र	९ म४ व४ औ१	३	४	४ मति आदि	३ सा१ छे१ प१	३ चक्षु आदि	द्र६ भा३ शुभ	१ भ	३ उ१ वे१ क्षा१	१ सं	१ आ	७ ज्ञा ४ द ३
सामान्यसंयमीअपूर्वकरणादिअयोगी पर्यंतगुणस्थानवत्	गुणस्थानवत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्
सामायक संयमी रचना	४ प्रमत्तादि	२ प१ अ१	६।६	१०।७	४	१ म	१ प	१ त्र	११ म४ व४ औ१ आ२	३	४	४ मति आदि	१ सा	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा३ शुभ	१ भ	३ उ१ वे१ क्षा१	१ सं	१ आ	७ ज्ञा४ द ३
सामायिकसंयमीप्रमत्तादिअनिवृत्ति पर्यंतगुणस्थानवत्	गुण स्थान	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्
छेदोपस्थापनासंयमीरचनाएवसामायिकवत्	सामायक वत्	सा० वत्	सा० वत्	सा० वत्	सा० वत्	सा० वत्	सा० वत्	सा० वत्	सा० वत्	सा० वत्	सा० वत्	सा० वत्	छे	सा० वत्	सा० वत्	सा० वत्	सा० वत्	सा० वत्	सा० वत्	सा० वत्
परिहारविशुद्धिसंयमी रचना	२ प्र१ अप्र१	१ प	६	१०	४	१ म	१ पं	१ त्र	९ म४ व४ औ१	१ पुं	४	३ मति आदि	१ परि	३ च१ अच१ अव१	द्र ६ भा३ शुभ	१ भ	२ वे१ क्षा१	१ सं	१ आ	६ ज्ञा३ द३

परिहारविशुद्धिप्रमत्तअप्रमत्तरचनामूलौघवत्	१ स्वकीय	प १	६	१०	४	१ म	१ प	१ त्र	६ म४ व४ औ१	१ पु	४	३ मति आदि	१ परि	३ च१ अच१ अव१	द्र ६ भा ३ शुभ	१ भ	२ वे १ क्षा १	१ सं	१ आ	६ ज्ञा ३ द ३
सूक्ष्मसांपरायसंयमीरचना सूक्ष्मसांपरायगुणस्थानवत्	१ सू	१ प	६	१०	१ प	१ म	१ प	१ त्र	६ म ४ व ४ औ १	०	१ लो	४ मति आदि	१ सू	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा १ शुक्ल	१ भ	२ उ१ क्षा १	१ स	१ आ	७ ज्ञा ४ द ३
यथाख्यात संयमी रचना	४ उपशानकपायादि	२ प१ अ१	६।६	१०।४ २।१	०	१ म	१ पं	१ त्र	११ म४ व४ औ२ का१	०	०	५ मति आदि	१ य	४	द्र ६ भा १ शुक्ल	१ भ	२ उ १ क्षा १	१ सं	२	६ ज्ञा५ द ४
यथाख्यातसंयमीउपशातकषायादिअयोगोपर्यंत गु० वत्	गुणस्थान वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्
देशसंयमीरचना देशसंयतगुणस्थानवत्	१ दे	१ प	६	१०	४	२ म १ ति १	१ प	१ त्र	६ म ४ व ४ औ १	३	४	३ मति आदि	१ दे	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा३ शुभ	१ भ	३ उ १ वे १ क्षा १	१ सं	१ आ	६ ज्ञा ३ द ३
असंयमी रचना	४ मिथ्यादृष्टिआदि	१४	६।६ ५।५ ४।४	१०।७।६। ७।८।६।७। ५।६।४। ४।३	४	४	५	६	१३ आहारक द्विक विना	३	४	६ कुज्ञान ३ मति आदि ३	१ अ	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा ६	२	६	२	२	६ ज्ञा ६ द ३
असंयमपर्याप्त रचना	४ आदिके	७ पर्याप्त	६ ५ ४	१०।९।८। ७।६।४	४	४	५	६	१० म ४ व ४ औ १ वै१	३	४	६ कुज्ञान ३ मति आदि ३	३ अ	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा६	२	६	२	१ आ	६ ज्ञा६ द३

असंयम अपर्याप्त रचना	३ मि१ सा१ अवि १	७ अप र्याप्त	६ ५ ४	७।७।६ ५।४।३	४	४	५	६	३ औमि१ वैमि१ का१	३	४	५ कुम१ कुश्रु१ मति आदि	१ अ	३ चक्षु आदि	द्र २ क१ शु १भा६	२	५ मिश्र विना	२	२	८ क्षा५ द ३
असंयमी मिथ्यादृष्टि आदिअसंयत पर्यंत गुणवत्	गु० वत्	गु०वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्
दर्शनमार्गणाविषैगुण स्थानवत् तहांचक्षुदर्शनरचना	१२ आदिके	६ चौ१अ२ सं २	६।६ ५।५	१०।७ ६।७ ८।६	४	४	२ चौ१ पं१	१ त्र	१५	३	४	७ केवल विना	७	१ चक्षु	द्र ६ भा ६	२	६	२	२	८ क्षा७ द१
चक्षुदर्शनी पर्याप्त रचना	१२ आदिके	३प च१ अ१ स१	६ ५	१० ६ ८	४	४	२ चौ१ पं१	१ त्र	११म ४व४ औ १ वै १ आ१	३	४	७ केवल विना	७	१ चक्षु	द्र ६ भा ६	२	६	२	१ आ	८ क्षा७ द१
च[क्षुदर्शनी] अ[प]र्याप्त र[च]ना	४ मि १ सा १ अवि१ प्र१	३अ च१ अ१ सं१	६ ५	७ ७ ६	४	४	२ चौ१ पं१	१ त्र	४ औमि१ वैमि१ आमि १का१	३	४	५ कुम१ कुश्रु१ मत्यादि३	३ अ१ ना१ छे१	१ च	द्र२ क१ शु१ भा६	२	५ मिश्र	२	२	६ क्षा५ द१
चक्षुदर्शनी मिथ्यादृष्टि रचना	१ मि	६ च२ अ २ सं२	६।६ ५।५	१०।७ ६।७ ८।६	४	४	२ चौ१ पं१	१ त्र	१३ आहारकद्विकविना	३	४	३ कुज्ञान	१ अ	१ च	द्र६ भा६	२	१ मि	२	२	४ क्षा३ द१
चक्षुदर्शनी मिथ्यादृष्टि पर्याप्त रचना	१ मि	३ प च १ अ १ सं १	६।५	१०।६ ८	४	४	२ चौ १ पं १	१ त्र	१० म ४ व ४ कु १ वै १	३	४	३ कुज्ञान	१ अ	१ च	द्र ६ भा६	२	१ मि	२	१ आ	४ क्षा ३ द १

चक्षुदर्शनी मिथ्यादृष्टि अपर्याप्त रचना	१ मि	३ अ च १ अ १ स १	६ ५	७ ७।६	४	४	२ चौ १ पं १	१ त्र	३ औमि १ वैमि १ का १	३	४	२ कुम १ कुश्रु १	१ अ	१ च	द्र २ क १ शु १ भा ६	२	१ मि	२	२	३ ज्ञा २ द १
चक्षुदर्शनी सासादना दिक्षीणकषाय पर्यंत गुणवत् दर्शन १	गुणस्थान वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	१ चक्षु	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्
अचक्षुदर्शनी रचना	१२ आदिके	१४	६।६ ५।५ ४।४	१०।७ ९।७ ८।६।७ ५।६।४ ४।३	४	४	५	६	१५	३	४	७ केवल विना	७	१ अचक्षु	द्र ६ भा ६	२	६	२	२	८ ज्ञा ७ द १
अचक्षुदर्शनी पर्याप्त रचना	१२ आदिके	७ पर्याप्त	६ ५ ४	१०।९ ८।७ ६।४	४	४	५	६	११ म ४ व ४ औ १ वै १ आ १	३	४	७ केवल विना	७	१ अचक्षु	द्र ६ भा ६	२	६	२	१ आ	८ ज्ञा ७ द १
अचक्षुदर्शनी अपर्याप्त रचना	४ मि १ सा १ अवि १ प्र १	७ अपर्याप्त	६ ५ ४	७।७ ६।५ ४।३	४	४	५	६	४ औमि १ वैमि १ आमि १ का १	३	४	५ कुम १ कुश्रु १ मत्यादि ३	२ अ १ सा १ छे १	१ अचक्षु	द्र २ क १ शु १ भा ६	२	५ मिश्र विना	२	२	६ ज्ञा ५ द १
अचक्षुदर्शनी मिथ्यादृष्टि रचना	१ मि	१४	६।६ ५।५ ४।४	१०।७ ९।७ ८।६ ७।५ ६।४ ४।३	४	४	५	६	१३ आहारकद्विक विना	३	४	३ कुज्ञान	१ अ	१ अचक्षु	द्र ६ भा ६	२	१ मि	२	२	४ ज्ञा ३ द १
अचक्षुदर्शनी मिथ्यादृष्टि पर्याप्त रचना	१ मि	७ पर्याप्त	६।५ ४	१०।९ ८।७ ६।४	४	४	५	६	१० म ४ व ४ औ १ वै १	३	४	३ कुज्ञान	१ अ	१ अच	द्र ६ भा ६	२	१ मि	२	१ आ	४ ज्ञा ३ द १

अचक्षुदर्शनी मिथ्यादृष्टि अपर्याप्त रचना	१ मि	१ अप र्याप्त	६ ५ ४	७।७ ६।५ ४।३	४	४	५	६	३ औमि १ वैमि १ का१	३	४	२ कुम १ कुश्रु १	१ अ	१ अच	द्र२ का१शु १भा६	२	१ मि	२	२	३ आ२ द १
अचक्षुदर्शनी सासादनादि क्षीणकषाय पर्यंतयथासंभवगु०वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	१ अच	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	यथा संभव
अवधिदर्शनी रचना	६ असंय तादि	२ प अ	६।६	१०।७	४	४	१ पं	१ त्र	१५	३	४	४ मति आदि	७	१ अवधि	द्र ६ भा६	१ भ	३ उ१ वे१ क्षा१	१ सं	२	५ क्षा४ द१
अवधिदर्शनी पर्याप्त रचना	६ असंय तादि	१ प	६	१०	४	४	१ पं	१ त्र	११ म४ व४ औ१ वै१ आ१	३	४	४ मति आदि	७	१ अवधि	द्र ६ भा ६	१ भ	३ उ१ वे१ क्षा१	१ सं	१ आ	५ क्षा४ द१
अवधिदर्शनी अपर्याप्त रचना	२ असं१ प्र१	६ अ	६	७	४	४	१ पं	१ त्र	४औमि १वैमि १का१ आमि १	२ पु१ न१	४	३ म१ श्रु१ अ१	३ अ१ सा१ छे१	१ अवधि	द्र २ क१शु १भा६	१ भ	३ उ१ वे१ क्षा१	१ सं	२	५ क्षा३ द २
अवधिदर्शनी असंयतादि क्षीणकषाय पर्यंतअवधि ज्ञानवत्	अवधिज्ञानवत्	अ० ज्ञा०	अ० ज्ञा०	अ० ज्ञा०	अ० ज्ञा०	अ० ज्ञा०	अ० ज्ञा०	अ० ज्ञा०	अ० ज्ञा०	अ० ज्ञा०	अ० ज्ञा०	३वा४ मत्यादि	अ० ज्ञा०	अ० ज्ञा०	अ० ज्ञा०	अ० ज्ञा०	अ० ज्ञा०	अ० ज्ञा०	अ० ज्ञा०	यथासंभव ज्ञानवत्
केवलदर्शनी रचना केवलज्ञानीवत्	केवलज्ञानवत्	के० ज्ञा० वत्	के० ज्ञा० वत्	के० ज्ञा० वत्	के० ज्ञा० वत्	के० ज्ञा० वत्	के० ज्ञा० वत्	के० ज्ञा० वत्	के० ज्ञा० वत्	के० ज्ञा० वत्	के० ज्ञा० वत्	के० ज्ञा० वत्	के० ज्ञा० वत्	के० ज्ञा० वत्	के० ज्ञा० वत्	के० ज्ञा० वत्	के० ज्ञा० वत्	के० ज्ञा० वत्	के० ज्ञा० वत्	के० ज्ञा० वत्

लेश्यामार्गणाविर्षैगुणस्थानवत्तु छारुग्णलेश्या रचना	४ आदिके	१४	६।६ ५।५ ४।४	१०।७ ६।७।८।६ ७।५।६।४ ४।३	४	४	५	६	१३ आहारद्विक विना	३	४	६ कुज्ञान ३ मत्यादि ३	१ अ	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा१ कृष्ण	२	६	२	२	६ क्षा६ द ३
कृष्णलेश्या पर्याप्त रचना	४ आदिके	७ पर्याप्त	६ ५ ४	१०।६ ८।७।६।४	४	३ देव विना	५	६	१० म४ व४ औ१ वै१	३	४	६ कुज्ञान ३ मत्यादि ३	१ अ	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा१ कृष्ण	२	६	२	१ आ	६ क्षा६ द ३
कृष्णलेश्या अपर्याप्त रचना	३ मि१ सा१ अवि१	७ अ	६ ५ ४	७।७।६ ५।४।३	४	४	५	६	३ औमि१ वैमि१ का१	३	४	५ कुम१ कुश्रु१ मत्यादि ३	१ अ	३ चक्षु आदि	द्र २ क१ शु१ भा१ कृष्ण	२	३ मि१ सा१ वे१	२	२	८ क्षा५ द३
कृष्णलेश्या मिथ्यादृष्टि रचना	१ मि	१४	६।६ ५।५ ४।४	१०।७।६। ७।८।६।७ ५।६।४।-।३	४	४	५	६	१३ आहारकद्विक विना	३	४	३ कुज्ञान	१ अ	२ च१ अच१	द्र६ भा१ कृष्ण	२	१ मि	२	२	५ क्षा ३ द २
कृष्णलेश्या मिथ्यादृष्टि पर्याप्त रचना	१ मि	७ पर्याप्त	६ ५ ४	१०।६।८। ७।६।४	४	३ देव विना	५	६	१० म४ व४ औ१ वै१	३	४	३ कुज्ञान	१ अ	२ च१ अच१	द्र ६ भा१ कृष्ण	२	१ मि	२	१ आ	५ क्षा३ द २
कृष्णलेश्या मिथ्यादृष्टि अपर्याप्त रचना	१ मि	७ पर्याप्त	६।५	७।७ ६।५ ४।३	४	४	५	६	३ औमि१ वैमि१ का१	३	४	२ कुम १ कुश्रु १	१ अ	२ च१ अच१	द्र २ क १ शु१ भा१ कृष्ण	२	१ मि	२	२	४ क्षा २ द २
कृष्णलेश्या सासादन रचना	१ सा	२ स प१ स अ१	६।६	१०।७	४	४	१ प	१ त्र	१३ आहारकद्विक विना	३	४	३ कुज्ञान	१ अ	२ च१ अच१	द्र६ भा१ कृष्ण	१ भ	१ सा	१ सं	२	५ क्षा३ द२

कृष्णलेश्य सासादन पर्याप्त रचना	१ सा	१ सप	६	१०	४	३ देव विना	१ प	१ त्र	१० म ४ व ४ औ १ वै १	३	४	३ कुज्ञान	१ अ	२ च१ अच१	द्र ६ भा १ कृष्ण	१ भ	१ सा	१ स	१ आ	५ ज्ञा ३ द २
कृष्णलेश्य सासादन अपर्याप्त रचना	१ सा	१ सअ	६	७	४	३ ति १ म १ दे १	१ प	१ त्र	३ औमि१ वैमि१ का१	३	४	२ कुम १ कुश्रु १	१ अ	२ च१ अच१	द्र २ का१ शु १ भा १ कृष्ण	१ भ	१ सा	१ सं	२	४ ज्ञा २ द २
कृष्णलेश्य सम्यग्मिथ्यादृष्टि रचना	१ मिश्र	१ सं प	६	१०	४	३ देव विना	१ प	१ त्र	१० म ४ व ४ औ१ वै१	३	४	३ मिश्र	१ अ	२ च १ अच१	द्र ६ भा १ कृष्ण	१ भ	१ मिश्र	१ सं	१ आ	५ ज्ञा ३ द २
कृष्णलेश्यासंयत रचना	असं	२ सं प१ स अ१	६।६	१०।७	४	३ देव विना	१ प	१ त्र	१२ म ४ व ४ औ २ वै१ का१	३	४	३ मति आदि	१ अ	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा १ कृष्ण	१ भ	३ उ१ वे१ क्षा१	१ सं	२	६ ज्ञा ३ द ३
कृष्णलेश्य असंयत पर्याप्त रचना	१ असं	१ स प	६ प	१० प	४	३ देव विना	१ प	१ त्र	१० म४ व४ औ १ वै१	३	४	३ मति आदि	१ अ	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा१ कृष्ण	१ भ	३ उ१ वे १ क्षा १	१ सं	१ आ	६ ज्ञा ३ द ३
कृष्णलेश्य असंयत अपर्याप्त रचना	१ असं	१ स अ	६ अ	७ अ	४	१ मनुष्य पंच मादि पृथ्वी के आये	१ प	१ त्र	२ औमि १ का१	१ पुरुष	४	३ मति आदि	१ अ	३ चक्षु आदि	द्र २ क१ शु १ भा १ कृष्ण	१ भ	१ वेद कपंच मादि पृथ्वी के आये	१ सं	२	६ ज्ञा ३ द ३
नीललेश्य रचना कृष्ण लेश्यावत्	कृष्णले श्यावत्	कृ० वत्	कृ० वत्	कृ० वत्	कृ० वत्	कृ० वत्	कृ० वत्	कृ० वत्	कृ० वत्	कृ० वत्	कृ० वत्	कृ० वत्	कृ० वत्	कृ० वत्	द्र १ कृ० वत् भा१ नील	कृ० वत्	कृ० वत्	कृ० वत्	कृ० वत्	कृ० वत्

कपोतलेश्य रचना	४ आदिके	१४	६ ६ ५।५ ४।४	१०।७ ९।७ ८।६ ७।५ ६।४ ४।३	४	४	५	६	१३ आहार कद्विक विना	३	४	६ कुज्ञान ३ मत्यादि ३	१ अ	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा १ कपोत	२	६	२	२	९ ज्ञा ६ द ३
कपोतलेश्य पर्याप्त रचना	४ आदिके	७ प	६ ५ ४	१०।९ ८।७ ६।४	४	३ देवविना जाते भवनत्रिकके भी पर्में पीत	५	६	१० म ४ व ४ औ १ वै १	३	४	६ कुज्ञान ३ मत्यादि ३	१ अ	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा १ कपोत	२	६	२	१ आ	९ ज्ञा ६ द ३
कपोतलेश्य अपर्याप्त रचना	३ मि १ सा १ अवि १	७ अ	६ ५ ४	७।७ ६।५ ४।३	४	४	५	६	३ औमि १ वैमि १ का १	३	४	५ कुम १ कुश्रु १ मत्यादि ३	१ अ	३ चक्षु आदि	द्र २ क १ शु १ भा १ कपोत	२	४ मि १ सा १ वे १ क्षा १	२	२	८ ज्ञा ५ द ३
कपोतलेश्य मिथ्यादृष्टि रचना	१ मि	१४	६।६ ५।५ ४।४	१०।७ ९।७ ८।६ ७।५ ६।४ ४।३	४	४	५	६	१३ आहार कद्विक विना	३	४	३ कुज्ञान	१ अ	२ च १ अच १	द्र ६ भा १ कपोत	२	१ मि	२	२	५ ज्ञा ३ द २
कपोतलेश्य मिथ्यादृष्टि पर्याप्त रचना	१ मि	७ प	६ ५ ४	१०।९ ८।७ ६।४	४	३ देव विना	५	६	१० म ४ व ४ औ १ वै १	३	४	३ कुज्ञान	१ अ	२ च १ अच १	द्र ६ भा १ कपोत	२	१ मि	२	१ आ	५ ज्ञा ३ द २
कपोतलेश्य मिथ्यादृष्टि अपर्याप्त रचना	१ मि	७ अ	६ ५ ४	७।७ ६।५ ४।३	४	४	५	६	३ औमि १ वैमि १ का १	३	४	२ कुम १ कुश्रु १	१ अ	२ च १ अच १	द्र २ क १ शु १ भा १ कपोत	२	१ मि	२	२	४ ज्ञा २ द २
कपोतलेश्य सासादन रचना	१ सा	२ स प १ स अ १	६।६	१०।७	४	४	१ प	१ त्र	१३ आहार कद्विक विना	३	४	३ कुज्ञान	१ अ	२ च १ अच १	द्र ६ भा १ कपोत	१ भ	१ सा	१ सं	२	५ ज्ञा ३ द २

कपोतलेश्य सासादनपर्याप्तरचना	१ सा	१ सं प	६	१०	४	३ देव विना	१ पं	१ त्र	१० म ४ व ४ औ १ वै१	३	४	३ कुज्ञान	१ अ	२ च१ अच१	द्र ६ भा१ कपात	१ भ	१ सा	१ सं	१ आ	५ ज्ञा ३ द २
कपोतलेश्य सासादनअपर्याप्तरचना	१ सा	१ सं अ	६ अ	७ अ	४	३ नरक विना	१ पं	१ त्र	३ औमि१ वैमि १का१	३	४	२ कुम १ कुश्रु १	१ अ	२ च१ अच१	द्र २ का१शु १भा१ कपोत	१ भ	१ सा	१ सं	२	४ ज्ञा २ द २
कपोतलेश्य सम्यग्मिथ्यादृष्टिरचना	१ मिश्र	१ स प	६	१०	४	३ देव विना	१ प	१ त्र	१० म ४ व ४ औ १ वै१	३	४	३ मिश्र	१ अ	२ च१ अच१	द्र ६ भा१ कपात	१ भ	१ मिश्र	१ सं	१ आ	५ ज्ञा३ द२
कपोतलेश्य असंयतरचना	१ असं	२ सं प१ सं अ१	६।६	१०।७	४	३ देव विना	१ प	१ त्र	१३ आहारकद्वि कविना	३	४	३ मति आदि	१ अ	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा १ कपोत	१ भ	३ उ१ वे १ क्षा १	१ सं	२	६ ज्ञा३ द ३
कपोतलेश्य असंयतपर्याप्तरचना	१ असं	१ सप	६ प	१० प	४	३ देव विना	१ पं	१ त्र	१० म ४ व ४ औ १ वै१	३	४	३ मति आदि	१ अ	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा १ कपोत	१ भ	३ उ१ वे१ क्षा १	१ सं	१ आहा	६ ज्ञा३ द ३
कपोतलेश्य असंयतअपर्याप्तरचना	१ असं	१ सं अ	६ अ	७	४	३ देव विना	१ पं	१ त्र	३ औमि१ वैमि१ का१	२ पुं१ न १	४	३ मति आदि	१ अ	३ चक्षु आदि	द्र २ क१शु १भा१ कपोत	१ भ	२ वे१ क्षा १	१ सं	२	६ ज्ञा३ द ३
तेजोलेश्य रचना	७ आदिके	३ स प१ स अ१ अप१	६।६ ५	१०।७ ६	४	३ नरक विना	१ पं	१ त्र	१५	३	४	७ केवल विना	५ अ१ दे१ सा१ छे१ प१	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा१ तेजो१	२	६	२ सं १ अ १	२	१० ज्ञा७ द ३

तेजोलेश्या पर्याप्त रचना	७ आदि के	२ सप१ अप१	६ ५	१० ६	४	३ नरक विना	१ पं	१ त्र	११ म४ व४ औ१ वै१ आ१	३	४	७ केवल विना	५ अ१ सा१ छे१ प१ दे१	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा१ तेज	२	६	२ स१ अ१	१ आ	१० ज्ञा ७ द ३
तेजोलेश्या अपर्याप्त रचना	४ मि १ सा १ अवि १ प्र १	१ सअ	६ अ	७ अ	४	२ मनु १ देव १	१ प	१ त्र	४ औमि १ वैमि १ आमि १ का १	२ स्त्री१ पु १	४	५ कुम १ कुश्रु १ मत्यादि ३	३ अ १ सा १ छे १	३ चक्षु आदि	द्र २ का१ शु १ भा १ तेज १	२	५ मिश्र विना	१ स	२	८ ज्ञा ५ द ३
तेजोलेश्या मिथ्यादृष्टि रचना	१ मि	३ सप १ सअ १ अप १	६ ६ ५	१० ७ ६	४	३ नरक विना	१ प	१ त्र	१२ म४ व४ औ१ वै २ का १	३	४	३ कुज्ञान	१ अ	२ च १ अच १	द्र ६ भा १ तेज	२	१ मि	२ स१ अ१	२	५ ज्ञा३ द २
तेजोलेश्या मिथ्यादृष्टि पर्याप्त रचना	१ मि	२ स प१ अप १	६ ५	१० ६	४	३ नरक विना	१ प	१ त्र	१० म ४ व४ औ१ वै १	३	४	३ कुज्ञान	१ अ	२ च१ अच१	द्र६ भा१ तेज	२	१ मि	२ स१ अ१	१ आ	५ ज्ञा ३ द २
तेजोलेश्या मिथ्यादृष्टि अपर्याप्त रचना	१ मि	१ स अ	६ अ	७ अ	४	१ देव	१ पं	१ त्र	२ वैमि१ का१	२ स्त्री१ पुं१	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ अ	२ च१ अच १	द्र २ का१ शु १ भा १ तेज	२	१ मि	१ स	२	४ ज्ञा२ द २
तेजोलेश्या सासादन रचना	१ सा	२ सप१ सअ१	६।६	१०।७	४	३ नरक विना	१ पं	१ त्र	१२ म४ व४ औ१ वै २ का१	३	४	३ कुज्ञान	१ अ	२ च१ अच१	द्र ६ भा१ तेज	१ भ	१ सा	१ स	२	५ ज्ञा ३ द २
तेजोलेश्या सासादन पर्याप्त रचना	१ सा	१ स प	६ प	१० प	४	३ नरक विना	१ पं	१ त्र	१० म४ व४ औ१ वै१	३	४	३ कुज्ञान	१ अ	२ च१ अच१	द्र६ भा१ तेज	१ भ	१ सा	१ स	१ आ	५ ज्ञा३ द२

तेजोलेश्य सासादन अपर्याप्त रचना	१ सा	१ संअ	६ अ	७ अ	४	१ देव	१ प	१ त्र	२ वैमि१ का१	२ स्त्री१ पु १	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ अ	२ च१ अच१	द्र २ का१शु १भा १ तेज	१ भ	१ सा	१ सं	२	४ ज्ञा २ द २
तेजोलेश्य सम्यग्मिथ्या दृष्टि रचना	१ मिश्र	१ संप	६ प	१० प	४	३ नरक विना	१ पं	१ त्र	१० म ४ व ४ औ १ वै१	३	४	३ मिश्र	१ अ	२ च१ अच१	द्र ६ भा १ तेज	१ भ	१ मिश्र	१ सं	१ आ	५ ज्ञा ३ द २
तेजोलेश्यअसंयतरचना	१ असं	२ स प१ सं अ१	६।६	१०।७	४	३ नरक विना	१ प	१ त्र	१३ आहार कद्विक विना	३	४	३ मति आदि	१ अ	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा१ तेज	१ भ	३ उ१ वे१ क्षा१	१ सं	२	६ ज्ञा ३ द ३
तेजोलेश्य असंयत पर्याप्त रचना	१ असं	१ सं प१	६ प	१० प	४	३ नरक विना	१ पं	१ त्र	१०म ४व४ औ१ वै१	३	४	३ मति आदि	१ अ	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा १ तेज	१ भ	३ उ१ वे१ क्षा१	१ सं	१ आ	६ ज्ञा ३ द ३
तेजोलेश्य असंयत अपर्याप्त रचना	१ असं	१ सं अ	६ अ	७ अ	४	२ म१ दे १	१ पं	१ त्र	३औ मि१ वैमि १का१	१ पुं	४	३ मति आदि	१ अ	३ चक्षु आदि	द्र २ का१ शु १भा१ तेज	१ भ	३ उ१ वे १ क्षा १	१ सं	२ आ	६ ज्ञा ३ द ३
तेजोलेश्य देशसंयत रचना	१ दे	१ स प	६ प	१० प	४	२ ति१ म१	१ पं	१ त्र	६ म४ व४ औ १	३	४	३ मति आदि	१ दे	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा १ तेज	१ भ	३ उ१ वे१ क्षा१	१ सं	१ आ	६ ज्ञा ३ द ३
तेजोलेश्य प्रमत्त रचना	१ प्र	२ प१ अ१	६।६	१०।७	४	१ म	१ पं	१ त्र	११ म४ व४ औ१ आ२	३	४	४ मति आदि	३ सा१ छे१ प१	३ चक्षु आदि	द्र६ भा१ तेज	१ भ	३ उ१ वे१ क्षा१	१ सं	१ आ	७ ज्ञा ४ द ३

तेजोलेश्य अप्रमत्त रचना	१ अप्र	१ सप	६ प	१० प	३ आहारकविना	१ म	१ ० प	१ त्र	९ म ४ व ४ औ १	३	४	४ मति आदि	३ सा १ छे १ प १	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा १ तेज	१ भ	३ उ १ वे १ क्षा १	१ सं	१ आ	७ ज्ञा ४ द ३
पद्मलेश्य रचना	७ आदि के	२ संप १ सअ१	६।६	१०।७	४	३ नारक विना	१ पं	१ त्र	१५	३	४	७ केवल विना	५ अ १ दे १ सा १ छे१ प१	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा १ पद्म	२	६	१ स	२	१० ज्ञा ७ द ३
पद्मलेश्य पर्याप्त रचना	७ आदि के	१ संप	६ प	१० प	४	३ नरक विना	१ प	१ त्र	११ म ४ व ४ औ१ वै १ आ १	३	४	७ केवल विना	५ अ १ दे १ सा १ छे१ प१	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा १ पद्म	२	६	१ स	१ आ	१० ज्ञा ७ द ३
पद्मलेश्य अपर्याप्त रचना	४ मि१ सा१ अवि१ प्र१	१ सअ	६ अ	७ अ	४	२ म १ दे १	१ प	१ त्र	४ औमि १ वैमि १ आ मि १ का १	१ पु	४	५ कुम १ कुश्रु १ मत्यादि ३	३ अ १ सा १ छे १	३ चक्षु आदि	द्र २ क१ शु १ भा १ पद्म	२	५ मिश्र विना	१ स	२	८ ज्ञा ५ द ३
पद्मलेश्य मिथ्यादृष्टि रचना	१ मि	२ सप १ सअ१	६।६	१०।७	४	३ नरक विना	१ प	१ त्र	१२ म ४ व ४ औ२ वै २ का १	३	४	३ कुज्ञान	१ अ	२ चक्षु १ अच१	द्र ६ भा १ पद्म	२	१ मि	१ स	२	५ ज्ञा ३ द २
पद्मलेश्य मिथ्यादृष्टि पर्याप्त रचना	१ मि	१ सप	६ प	१० प	४	३ नरक विना	१ प	१ त्र	१० म ४ व ४ औ १ वै १	३	४	३ कुज्ञान	१ अ	२ च १ अच १	द्र ६ भा १ पद्म	२	१ मि	१ सं	१ आ	५ ज्ञा ३ द २
पद्मलेश्य मिथ्यादृष्टि अपर्याप्त रचना	१ मि	१ सअ	६ अ	७ अ	४	१ देव	१ पं	१ त्र	२ वैमि १ का १	१ पु	४	२ कुम १ कुश्रु १	१ अ	२ च १ अच १	द्र २ क१ शु १ भा१ पद्म	२	१ मि	१ सं	२	४ ज्ञा २ द २

पद्मलेश्यसासादनरचना	१ सा	२ संप१ संअ१	६।६	१०।७	४	३ नरक विना	१ पं	१ त्र	११म४ व४औ १वै१ का१	३	४	३ कुज्ञान	१ अ	२ च १ अच १	द्र ६ भा१ पद्म	१ भ	१ सा	१ सं	२	५ ज्ञा३ द२
पद्मलेश्य सासादन पर्याप्त रचना	१ सा	१ सं प	६ प	१० प	४	३ नरक विना	१ प	१ त्र	१० म४ व४ औ१ वै१	३	४	३ कुज्ञान	१ अ	२ च १ अच १	द्र ६ भा १ पद्म	१ भ	१ सा	१ सं	१ आ	५ ज्ञा३ द२
पद्मलेश्यसासादनअपर्याप्तरचना	१ सा	१ सं अ	६ अ	७ अ	४	१ दे	१ प	१ त्र	२ वैमि १का१	१ पुं	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ अ	२ च १ अच १	द्र२ क१ शु १भा१ पद्म	१ भ	१ सा	१ सं	२	४ ज्ञा२ द २
पद्मलेश्यसम्यग्मिथ्यादृष्टिरचना	१ मि	१ सं प	६ प	१० प	४	३ नरक विना	१ पं	१ त्र	१०म४ व ४ औ १ वै १	३	४	३ मिश्र	१ अ	२ चक्षु१ अच१	द्र ६ भा १ पद्म	१ भ	१ मिश्र	१ सं	१ आ	५ ज्ञा३ द २
पद्मलेश्य असयत रचना	१ असं	२ स प १ सं अ१	६।६	१० ७	४	३ नरक विना	१ पं	१ त्र	१३ आहार का०क विना	३	४	३ मत्या दि	१ अ	३ च१ अच१ अव१	द्र ६ भा १ पद्म	१ भ	३ उ१ वे १ क्षा १	१ सं	२	६ ज्ञा ३ द ३
पद्मलेश्य असयत पर्याप्त रचना	१ असं	१ सं प	६ प	१० प	४	३ नरक विना	१ पं	१ त्र	१० म४ व४ औ१ वै१	३	४	३ मत्या दि	१ अ	३ च १ अच१ अव १	द्र ६ भा १ पद्म	१ भ	३ औ १ वे १ क्षा १	१ सं	१ आ	६ ज्ञा३ द ३
पद्मलेश्य असयत अपर्याप्त रचना	१ असं	१ सं अ१	६। अ	७ अ	४	२ म १ दे १	१ पं	१ त्र	३ औमि १ वैमि १का १	१ पुं	४	३ मति आदि	१ अ	३ च१ अच१ अव१	द्र २ क १शु १ भा१ पद्म	१ भ	३ औ १ वे १ सा १	१ सं	२	६ ज्ञा३ द३

पद्मलेश्य देशसंयत रचना	१ दे	१ संप	६ प	१० प	४	२ म १ ति १	१ पं	१ त्र	९ म ४ व ४ औ १	३	४	३ मति आदि	१ दे	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा १ पद्म	१ भ	३ उ१ वे१ क्षा१	१ स	१ आ	६ ज्ञा ३ द ३
पद्मलेश्य प्रमत्त रचना	१ प्र	२ प १ अ १	६।६	१०।७	४	१ म	१ प	१ त्र	११ म ४ व ४ आ २ औ १	३	४	४ मति आदि	३ सा १ छे १ प १	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा १ पद्म	१ भ	३ उ१ वे१ क्षा१	१ स	१ आ	७ ज्ञा ४ द ३
पद्मलेश्य अप्रमत्त रचना	१ अप्र	१ सप	६	१०	३ आहार विना	१ म	१ पं	१ त्र	९ म ४ व ४ औ १	३	४	४ मति आदि	३ सा १ छे १ प १	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा १ पद्म	१ भ	३ उ १ वे १ क्षा १	१ सं	१ आ	७ ज्ञा ४ द ३
शुक्ललेश्य रचना	१३ आदिके	२ सप १ स अ१	६।६	१०।७ ४।२	४	३ नरक विना	१ पं	१ त्र	१५	३	४	८	७	४	द्र ६ भा १ शुक्ल	२	६	१ स	२	१२
शुक्ललेश्य पर्याप्त रचना	१३ अदिके	१ संप	६	१०। ४।	४	३ नरक विना	१ पं	१ त्र	११ म ४ व ४ औ १ वै १ आ १	३	४	८	७	४	द्र ६ भा १ शुक्ल	२	६	१ स	१ आ	१२
शुक्ललेश्य अपर्याप्त रचना	५ मि १ सा १ अवि १ प्र १ स१	१ सअ	६	७ २	४	२ म १ दे १	१ प	१ त्र	४ औ मि १ वैमि १ आमि १ का १	१ पुं	४	६ विभंग मनःपर्यय विना	४ अ १ सा१ छे१ यथा१	४	द्र २ क१ शु१ भा १ शुक्ल	२	५ मिश्र विना	१ स	२	१० ज्ञा ६ द ४
शुक्ललेश्य मिथ्यादृष्टि रचना	१ मि	२ संप १ स अ १	६।६	१०।७	४	३ न क विना	१ प	१ त्र	१३ म ४ व ४ औ २ वै २ का १	३	४	३ कुज्ञान	१ अ	२ च १ अच १	द्र ६ भा १ शुक्ल	२	१ मि	१ स	२	५ ज्ञा३ द२

शुक्लेश्य मिथ्यादृष्टि पर्याप्त रचना	१ मि	१ सं प	६	१०	४	३ नरक विना	१ पं	१ त्र	१० म ४ व४ औ१ वै १	३	४	३ कुज्ञान	१ अ	२ च१ अच१	द्र६ भा१ शुक्ल	२	१ मि	१ सं	१ आ	५ ज्ञा ३ द २
शुक्लेश्य मिथ्यादृष्टि अपर्याप्त रचना	१ मि	१ सं अ	६ अ	७	४	१ देव	१ पं	१ त्र	२ वैमि१ का१	१ पुं१	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ अ	२ च१ अच १	द्र २ क१ शु १ भा १ शुक्ल १	२	१ मि	१ सं	२	४ ज्ञा२ द २
शुक्लेश्य सासादन रचना	१ सा	२ संप १ संअ १	६ ६	१०।७	४	३ नरक विना	१ पं	१ त्र	१२ म४ व४ औ१ वै २ का १	३	४	३ कुज्ञान	१ अ	२ च १ अच १	द्र ६ भा १ शुक्ल	१ भ	१ सा	१ स	२	५ ज्ञा३ द २
शुक्लेश्य सासादन पर्याप्त रचना	१ सा	१ सं प	६	१०	४	३ नरक विना	१ पं	१ त्र	१० म४ व४ औ१ वै१	३	४	३ कुज्ञान	१ अ	२ च१ अच१	द्र६ भा१ शुक्ल	१ भ	१ सा	१ सं	१ आ	५ ज्ञा३ द२
शुक्लेश्या सासादन अपर्याप्त रचना	१ सा	१ संअ	६ अ	७	४	१ देव	१ पं	१ त्र	२ वैमि १ का १	१ पुं	४	२ कुम १ कुश्रु १	१ अ	२ च१ अच१	द्र २ क १ शु १ भा १ शुक्ल	१ भ	१ सा	१ सं	२	४ ज्ञा २ द २
शुक्लेश्य सम्यग् मिथ्यादृष्टि रचना	१ मिश्र	१ संप	६	१०	४	३ नरक विना	१ पं	१ त्र	१० म ४ व ४ औ १ वै १	३	४	३ मिश्र	अ १	२ च १ अच १	द्र ६ भा१ शुक्ल	१ भ	१ मिश्र	१ सं	१ आ	५ ज्ञा ३ द २
शुक्लेश्य असंयत रचना	१ असं	२ संप१ संअ१	६ ६	१० ७	४	३ नरक विना	१ पं	१ त्र	१३ आहार कद्विक विना	३	४	३ मति आदि	१ अ	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा १ शुक्ल	१ भ	३ औ १ वे १ क्षा १	१ सं	२	६ क्षा ३ द ३

शुक्लेश्य असंयत पर्याप्त रचना	१ असं	१ स प १	६	१०	४	३ नरक विना	१ प	१ त्र	१० म४ व४ औ१ वै१	३	४	३ मति आदि	१ अ	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा १ शुक्ल	१ भ	३ उ१ वे१ क्षा१	१ सं	१ आ	६ ज्ञा ३ द ३
शुक्लेश्य असंयत अपर्याप्त रचना	१ अस	१ स अ	६ अ	७	४	२ म१ दे१	१ प	१ त्र	३ औमि १ वैमि १ का१	१ पु	४	३ मति आदि	१ अ	३ चक्षु आदि	द्र २ का१ शु१ भा१ शुक्ल	१ भ	३ उ१ वे१ क्षा१	१ स	२	६ ज्ञा ३ द ३
शुक्लेश्य देश संयतरचना	१ देश	१ स प	६	१०	४	२ म१ ति१	१ प	१ त्र	९ म४ व४ औ१	३	४	३ मति आदि	१ दे	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा१ शुक्ल	१ भ	३ उ१ वे १ क्षा १	१ सं	१ आ	६ ज्ञा ३ द ३
शुक्लेश्य प्रमत्त रचना	१ प्र	२ प१ अ१	६।६	१०।७	४	१ म	१ प	१ त्र	११ म४ व४ औ१ आ२	३	४	४ मति आदि	३ सा१ छे१ प१	३ चक्षु आदि	द्र६ भा१ शुक्ल	१ भ	३ उ१ व१ क्षा१	१ सं	१ आ	७ ज्ञा ४ द ३
शुक्लेश्य अप्रमत्त रचना	१ अप्र	१ स प	६	१०	३ आहार विना	१ म	१ पं	१ त्र	९ म४ व४ औ१	३	४	४ मति आदि	२ सा१ छे१ प१	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा १ शुक्ल	१ भ	३ उ१ वे१ क्षा१	१ सं	१ आ	७ ज्ञा ४ द ३
शु० लेश्यअपूर्वकरणतैसंयोगीपर्यंतवा अलेश्यअयोगीसिद्ध०गु	गुणस्थानवत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्
भव्यमार्गणाविषै भव्य रचना गुणस्थानवत	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्

अभव्य रचना	१ मिथ्या	१४	६।६ ५।५ ४४	१०।७।९।६। ७।८।६।७ ५।६।५।४।४।३	४	४	५	६	१३ आहारकद्विक विना	३	४	३ कुज्ञान	१ अ	२ च१ अच१	द्र ६ भा ६	१ अभव्य	१ मि	२	२	५ ज्ञा ३ द २
अभव्य पर्याप्त रचना	१ मिथ्या	७ पर्याप्त	६।५।४	१०।९।८ ७।६।४	४	४	५	६	१० म ४ व ४ औ १ वै १	३	४	३ कुज्ञान	१ अ	२ च१ अच१	द्र ६ भा ६	१ अभव्य	१ मि	२	१ आ	५ ज्ञा ३ द २
अभव्य अपर्याप्त रचना	१ मिथ्या	७ अपर्याप्त	६।५।४	७।७।६ ५।४।३	४	४	५	६	३ औमि १ वैमि १ का१	३	४	२ कुम १ कुश्रु १	१ अ	२ च१ अच१	द्र २ का१ शु १ भा ६	१ अभव्य	१ मि	२	२	४ ज्ञा २ द २
भव्याभव्य रहितसिद्ध रचना	०	०	०	०	०	सिद्ध गति	०	०	०	०	०	१ के	०	१ के	०	०	क्षा	०	१ अना	२ ज्ञा १ द १
सम्यक्त्व मार्गणाविषै सम्यग्दृष्टि रचना	११ असंय तादि	२ सं प १ सं अ १	६।६	१०।७ ४।२।१	४	४	१ पं	१ त्र	१५	३	४	५ मति आदि	७	४	द्र ६ भा ६	१ भ	३ उ१ वे १ क्षा १	१ सं	२	६ ज्ञा ५ द ४
सामान्य सम्यग्दृष्टि पर्याप्त रचना	११ असं य तादि	१ स प	६ प	१० ४।१	४	४	१ पं	१ त्र	११ म ४ व ४ औ १ वै १ आ १	३	४	५ मति आदि	७	४	द्र ६ भा ६	१ भ	३ उ१ वे१ क्षा१	१ सं	१ आ	६ ज्ञा ५ द ४
सामान्य सम्यग्दृष्टि अपर्याप्त रचना	३ असं १ प्र १ सयोगी १	१ संअ	६ अ	७ २	४	४	१ पं	१ त्र	४ औमि १ वैमि १ आमि १ का १	२ न१ पु१	४	४ म १ श्रु १ अ१ के१	४ अ१ सा१ छे१ य१	४	द्र २ क१ शु १ भा ४ क१ शु३	१ भ	३ उ१ वे१ क्षा१	१ सं	२	८ ज्ञा ४ द ४

सामान्यसम्यग्दृष्टिअसंयतादिअयोगीपर्यंतगुणस्थानवत् रचना	गुणस्थान वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्
क्षायिक सम्यग्दृष्टि रचना	११ असंयतादि	२ प १ अ १	६।६	१०।७ ४।२।१	४	४	१ पं	१ त्र	१५	३	४	५ मति आदि	७	४	द्र ६ भा ६	१ भ	१ क्षा	१ सं	२	६ क्षा ५ द ४
क्षायिक सम्यग्दृष्टि पर्याप्त रचना	११ असंयतादि	१ प	६ प	१० ४।१	४	४	१ पं	१ त्र	११ म ४ व ४ वै १ औ १ आ १	३	४	५ मति आदि	७	४	द्र ६ भा ६	१ भ	१ क्षा	१ सं	१ आ	६ क्षा ५ द ४
क्षायिक सम्यग्दृष्टि अपर्याप्त रचना	३ असं १ प्रम १ सयोग १	१ अ	६ अ	७ २	४	४	१ पं	१ त्र	४ औमि १ वै १ आमि १ का १	२ न १ पु	४	४ म १ श्रु १ अ १ के १	४ अ १ सा १ छे १ य १	४	द्र २ का१ शु १ भा ४ का१ शु भ ३	१ भ	१ क्षा	१ सं	२	८ क्षा ४ द ४
क्षायिक सम्यग्दृष्टि असंयत रचना	१ असं	२ प १ अ १	६।६	१०।७	४	४	१ प	१ त्र	१३ आहारकद्विक विना	३	४	३ म १ श्रु १ अव १	१ अ	३ च १ अच १ अव १	द्र ६ भा ६	१ भ	१ क्षा	१ स	२	६ क्षा ३ द ३
क्षायिक सम्यग्दृष्टि असंयत पर्याप्त रचना	१ असं	१ स प	६	१०	४	४	१ पं	१ त्र	१० म ४ व ४ औ १ वै १	३	४	३ मति आदि	१ अ	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा ६	१ भ	१ क्षा	१ सं	१ आ	६ क्षा ३ द ३
क्षायिकसम्यग्दृष्टिअसंयत अपर्याप्त रचना	१ असं	१ स अ	६ अ	७ अ	४	४	१ पं	१ त्र	३ औमि१ वैमि१ का१	२ न१ पु १	४	३ मति आदि	१ अ	३ चक्षु आदि	द्र २ का१ शु १ भा४ का१ शु भ३	१ भ	१ क्षा	१ सं	२	६ क्षा३ द३

क्षायिकसम्यग्दृष्टिदेशसंयतरचना	१ देश	१ संप	६ प	१० प	४	१ मनुष्य	१ पं	१ त्र	९ म ४ व ४ औ १	३	४	३ मति आदि	१ दे	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा ३ शुभ	१ भ	१ क्षा	१ सं	१ आ	६ ज्ञा३ द३
क्षायिक सम्यग्दृष्टिप्रमत्तादिसिद्धपर्यंत गुणस्थानवत् रचना	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	१ क्षायिक	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्
वेदक सम्यग्दृष्टि रचना	४ असंयतादि	२ प१ अ१	६।६	१०।७	४	४	१ पं	१ त्र	१५	३	४	४ मति आदि	५ अ१ दे१ सा१ छे१ प१	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा ६	१ भ	१ वेदक	१ सं	२	७ ज्ञा४ द ३
वेदक सम्यग्दृष्टिपर्याप्त रचना	४ असंयतादि	१ संप	६ प	१० प	४	४	१ पं	१ त्र	११ म ४ व ४ औ १ वै१ आ१	३	४	४ मति आदि	५ अ१ दे१ सा१ छे१ प१	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा ६	१ भ	१ वेदक	१ सं	१ आ	७ ज्ञा ४ द ३
वेदकसम्यग्दृष्टि अपर्याप्तरचना	२ असं १ प्रम१	१ स अ	६ अ	७ अ	४	४	१ पं	१ त्र	४ औमि १ वैमि १ आमि१ का १	२ न १ पुं १	४	३ मति आदि	३ अ१ सा१ छे१	३ चक्षु आदि	द्र २ क १ शु १ भा ६	१ भ	१ वेदक	१ सं	२	६ ज्ञा३ द ३
वेदकसम्यग्दृष्टिअसंयत रचना	१ असं	२ सं अ१ संप१	६।६	१०।७	४	४	१ पं	१ त्र	१३ आहारकद्विकविना	३	४	३ मति आदि	१ अ	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा६	१ भ	१ वेदक	१ सं	२	६ ज्ञा३ द ३
वेदकसम्यग्दृष्टि असंयत पर्याप्त रचना	१ असं	१ संप	६ प	१० प	४	४	१ पं	१ त्र	१० म ४ व ४ औ १ वै१	३	४	३ मति आदि	१ अ	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा६	१ भ	१ वेदक	१ सं	१ आ	६ ज्ञा३ द३

वेदक सम्यग्दृष्टि असंयत अपर्याप्त रचना	१ असं	१ संअ	६ अ	७ अ	४	४	१ पं	१ त्र	३ औमि १ वैमि १ का १	२ न १ पुं १	४	३ मति आदि	१ अ	३ चक्षु आदि	द्र २ क १ शु १ भा ६	१ भ	१ वेदक	१ सं	२	६ ज्ञा ३ द ३
वेदक सम्यग्दृष्टि देशसंयत रचना	१ देश	१ सप	६ प	१० प	४	२ म १ ति १	१ पं	१ त्र	९ म ४ व ४ औ १	३	४	३ मति आदि	१ दे	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा ३ शुभ	१ भ	१ वेदक	१ सं	१ आ	६ ज्ञा ३ द ३
वेदक सम्यग्दृष्टि प्रमत्त रचना	१ प्र	२ प १ अ १	६।६	१०।७	४	१ म	१ प	१ त्र	११ म ४ व ४ औ १ आ २	३	४	४ मति आदि	३ सा १ छे १ प १	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा ३ शुभ	१ भ	१ वेदक	१ स	१ आ	७ ज्ञा ४ द ३
वेदक सम्यग्दृष्टि अप्रमत्त रचना	१ अप्र	१ सप	६	१०	३ आहार विना	१ म	१ पं	१ त्र	९ म ४ व ४ औ १	३	४	४ मति आदि	३ सा १ छे १ प १	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा ३ शुभ	१ भ	१ वेदक	१ स	१ आ	७ ज्ञा ४ द ३
उपशम सम्यग्दृष्टि रचना	८ असंयतादि	२ सप १ सअ १	६।६	१०।७	४	४	१ पं	१ त्र	१२ म ४ व ४ औ १ वै २ का १	३	४	४ मति आदि	६ परिहार विशुद्धि विना	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा ६	१ भ	१ उपशम	१ सं	२	७ ज्ञा ४ द ३
उपशम सम्यग्दृष्टि पर्याप्त रचना	८ असंयतादि	१ संप	६ प	१० प	४	४	१ पं	१ त्र	१० म ४ व ४ औ १ वै १	३	४	४ मति आदि	६ परिहार विशुद्धि विना	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा ६	१ भ	१ उप	१ स	१ आ	७ ज्ञा ४ द ३
उपशम सम्यग्दृष्टि अपर्याप्त रचना	१ अस	१ सअ	६ अ	७ अ	४	१ देव	१ प	१ त्र	२ वैमि १ का १	१ पुं	४	३ मति आदि	१ असंयम	३ चक्षु आदि	द्र २ क १ शु १ भा ३ शुभ	१ भ	१ उप	१ स	२	६ ज्ञा ३ द ३

उपशम सम्यग्दृष्टि असंयत रचना	१ अस	२ संप१ संअ१	६।६ सं	१०।७	४	४	१ पं	१ त्र	१२ म४ व४ औ१ वै२ का१	३	४	३ मत्यादि	१ असं	३ चक्षु आदि	द्र६ भा६	१ भ	१ उप	१ सं	२	६ ज्ञा३ द३
उपशमसम्यग्दृष्टिअसंयत पर्याप्त रचना	१ असं	१ संप	६ प	१० प	४	४	१ पं	१ त्र	१० म४ व४ औ१ वै१	३	४	३ मति आदि	१ असं	३ चक्षु आदि	द्र६ भा६	१ भ	१ उप	१ सं	१ आ	६ ज्ञा३ द३
उपशम सम्यग्दृष्टि असंयत अपर्याप्त रचना	१ असं	१ सअ	६ अ	७ अ	४	१ देव	१ पं	१ त्र	२ वैमि१ का१	१ पुं	४	३ मति आदि	१ असं	३ चक्षु आदि	द्र२ का१ शु१ भा३ शुभ	१ भ	१ उप	१ सं	२	६ ज्ञा३ द३
उपशम सम्यग्दृष्टि देशसंयत रचना	१ देश	१ संप	६	१०	४	२ ति१ म१	१ पं	१ त्र	९ म४ व४ औ१	३	४	३ मति आदि	१ देश	३ चक्षु आदि	द्र६ भा३ शुभ	१ भ	१ उप	१ सं	१ आ	६ ज्ञा३ द३
उपशम सम्यग्दृष्टि प्रमत्त रचना	१ प्र	१ संप	६	१०	४	१ म	१ पं	१ त्र	९ म४ व४ औ१	३	४	४ मति आदि	२ सा१ छे१	३ चक्षु आदि	द्र६ भा३ शुभ	१ भ	१ उप	१ सं	१ आ	७ ज्ञा४ द३
उपशम सम्यग्दृष्टि अप्रमत्त रचना	१ अप्र	१ संप	६	१०	३ आहार बिना	१ म	१ पं	१ त्र	९ म४ व४ औ१	३	४	४ मति आदि	२ सा१ छे१	३ चक्षु आदि	द्र६ भा३ शुभ	१ भ	१ उप	१ सं	१ आ	७ ज्ञा४ द३
उपशमसम्यग्दृष्टिअपूर्वकरणतें उपशान्तकषाय पर्यंतगु० वत, मिथ्यात्वसासादन मिश्रसम्यग्‌ [illegible]	गुणस्थान वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	१ संभवती	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्

संज्ञीमार्गणा विशेषकी रचना	१२ आदिके	२ प१ अ१	६।६	१०।७	४	४	१ पं	१ त्र	१५	३	४	७ केवल विना	७	३ केवल विना	द्र६ भा६	२	६	१ स	२	१० ग्रा७ द३
संज्ञी पर्याप्त रचना	१२ आदिके	१ स प	६ प	१० प	४	४	१ पं	१ त्र	११ म४ व४ औ१ वै१ आ१	३	४	७ केवल विना	७	३ केवल विना	द्र६ भा६	२	६	१ स	१ आ	१० ग्रा७ द३
संज्ञी अपर्याप्त रचना	४ मि१ सा१ अवि१ प्र१	१ सअ	६ अ	७	४	४	१ पं	१ त्र	५ औमि१ वैमि१ आमि१ का१	३	४	५ कुम१ कुश्रु१ मत्यादि३	३ अ१ सा१ छे१	३ चक्षु आदि	द्र२ क१ शु१ भा६	२	५ मिश्र विना	१ स	२	८ ग्रा५ द३
संज्ञी मिथ्यादृष्टि रचना	१ मि	२ स प१ स अ१	६।६	१०।७	४	४	१ पं	१ त्र	१३ आहारकद्विक विना	३	४	३ कुज्ञान	१ अ	२ च१ अच१	द्र६ भा६	२	१ मि	१ स	२	५ ग्रा३ द२
संज्ञीमिथ्यादृष्टिपर्याप्त रचना	१ मि	१ संप	६ प	१० प	४	४	१ पं	१ त्र	१० म४ व४ औ१ वै१	३	४	३ कुज्ञान	१ अ	२ च१ अच१	द्र६ भा६	२	१ मि	१ स	१ आ	५ ग्रा३ द२
संज्ञीमिथ्यादृष्टिअपर्याप्त रचना	१ मि	१ संअ	६ अ	७	४	४	१ पं	१ त्र	३ औमि१ वैमि१ का१	३	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ अ	२ च१ अच१	द्र२ का१शु१ भा६	२	१ मि	१ स	२	४ ग्रा२ द२
संज्ञी सासादन रचना	१ सा	२ सप१ संअ१	६ ६	१० ७	४	४	१ पं	१ त्र	१३ आहारकद्विक विना	३	४	३ कुज्ञान	१ अ	२ चक्षु१ अच१	द्र६ भा६	१ भ	१ सा	१ स	२	५ ग्रा३ द२

संज्ञीसासादनपर्याप्त रचना	१ सा	१ संप	६ प	१० प	४	४	१ पं	१ त्र	१०म४ व४औ १वै१	३	४	३ कुज्ञान	१ अ	२ च १ अच १	द्र ६ भा ६	१ भ	१ सा	१ सं	१ आ	५ ज्ञा३ द२
संज्ञी सासादन अपर्याप्त रचना	१ सा	१ संअ	६ अ	७	४	३ नरक विना	१ पं	१ त्र	३ औमि १ वैमि १ का१	३	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ अ	२ च १ अच १	द्र २ क १ शु १ भा	१ भ	१ सा	१ सं	२	४ ज्ञा२ द२
संज्ञीसम्यग्मिथ्यादृष्टि रचना	१ मिश्र	१ संप	६ प	१० प	४	४	१ पं	१ त्र	१० म४ व४ औ१ वै१	३	४	३ मिश्र	१ अ	२ च १ अच १	द्र६ भा६	१ भ	१ मिश्र	१ सं	१ आ	५ ज्ञा३ द २
संज्ञी असंयत रचना	१ असं	२ संप संअ	६।६	१०।७	४	४	१ पं	१ त्र	१३ आहारकद्विक विना	३	४	३ मति आदि	१ अ	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा ६	१ भ	३ उ१ वे१ क्षा१	१ सं	२	६ ज्ञा३ द ३
संज्ञीअसंयतपर्याप्त रचना	१ असं	१ संप	६ प	१० प	४	४	१ पं	१ त्र	१०म४ व ४ औ १ वै १	३	४	३ मति आदि	१ अ	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा६	१ भ	३ उ१ वे १ क्षा १	१ सं	१ आ	६ ज्ञा ३ द ३
संज्ञीअसंयत अपर्याप्त रचना	१ असं	१ संअ	६ अ	७	४	४	१ पं	१ त्र	३ औमि १ वैमि १ का१	२ पुं १ न १	४	३ मति आदि	१ अ	३ चक्षु आदि	द्र २ क १ शु १ भा६	१ भ	३ औ १ वे १ क्षा १	१ सं	२	६ ज्ञा३ द ३
सम्यग्दर्शलय ततेक्षीणकषायपर्यंतगुणस्थानवत् रचना	गुणस्थान वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्

असंज्ञी रचना	१ मिथ्या	१२ संज्ञीपर्याप्त अपर्याप्त विना	५|५ ४|४	६|७|८ ६|७ ५ ६|४ ४|३	४	१ ति	५	६	४ अनुभयवचन१ और का१	३	४	२ कुमा१ कुश्रु१	१ अ	२ च१ अच१	द्र ६ भा ४ अशुभ३ पीत१	२	१ मि	१ असंज्ञी	२	४ ज्ञा २ द २
असंज्ञी पर्याप्त रचना	१ मिथ्या	६ पर्याप्तसंज्ञीविना पर्याप्त	५ ४	६|८|७ ६|४	४	२ ति	५	६	२ अनुभयवचन१ औ१	३	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ अ	२ च१ अच१	द्र ६ भा ४ अशुभ३ पीत१	२	१ मि	१ असंज्ञी	१ आ	४ ज्ञा२ द २
असंज्ञी अपर्याप्त रचना	१ मिथ्या	६ संज्ञीअपर्याप्तविना अपर्याप्त	५|४	७|६|५ ४|२	४	१ ति	५	६	२ औमि १ का१	३	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ अ	२ च१ अच१	द्र२ का१ शु१ भा३ अशुभ	२	१ मि	१ अस	२	४ ज्ञा२ द २
संज्ञी असंज्ञी व्यपदेशरहित सयोगी अयोगी सिद्धत्व नागु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्
आहारमार्गणाविषै आहारकरचना	१३ आदिके	१४	६|६ ५|५ ४|४	१०|७ ६|७|८ ६|७|५ ६|४|४ ३|४|२	४	४	५	६	१४ कार्म्माण विना	३	४	८	७	४	द्र ६ भा ६	२	६	२	१ आहा	१२
आहारक पर्याप्त रचना	१३ आदिके	७ पर्याप्त	६ ५ ४	१०|६ ८|७|६ ४ ४	४	४	५	६	११ म ४ व ४ औ१ वै१ आ१	३	४	८	७	४	द्र ६ भा ६	२	६	२	१ आहा	१२
आहारक अपर्याप्त रचना	५ मि१ सा१ अवि१ प्र१ सयो१	७ अपर्याप्त	६ ५ ८	७|७ ६|५ ४|३|२	४	४	५	६	३ औमि१ वैमि१ आमि१	३	४	६ विभंग मनःपर्यय विना	४ अ१ सा१ छे१ प१	४	द्र १ कपोत भा ६	२	५ मिश्र विना	२	१ आहार	१० ज्ञा ६ द ४

आहारक मिथ्यादृष्टि रचना	१ मि	१४	६।६ ५।५ ४।४	१०।७ ९।७ ८।६ ७।५ ६।४ ४।३	४	४	५	६	१२ म ४ व ४ औ २ वै २	३	४	३ कुज्ञान	१ अ	२ च १ अच१	द्र ६ भा ६	२	१ मि	२	१ आ	५ ज्ञा ३ द २
आहारक मिथ्यादृष्टि पर्याप्त रचना	१ मि	७ पर्याप्त	६।५ ४	१०।९ ८।७ ६।४	४	४	५	६	१० म ४ व ४ औ १ वै १	३	४	३ कुज्ञान	१ अ	२ च १ अच१	द्र ६ भा ६	२	१ मि	२	१ आ	५ ज्ञा ३ द २
आहारक मिथ्यादृष्टि अपर्याप्त रचना	१ मि	७ अप र्याप्त	६ ५ ४	७७ ६।५ ४।३	४	४	५	६	२ औमि १ वैमि १	३	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ अ	२ च १ अच१	द्र १ क भा ६	२	१ मि	२	१ आ	४ ज्ञा २ द २
आहारक सासादन रचना	१ सा	२ सं प१ सं अ१	६।६	१०।७	४	४	१ पं	१ त्र	१२ म ४ व ४ औ २ वै २	३	४	३ कुज्ञान	१ अ	२ च १ अच १	द्र ६ भा ६	१ भ	१ सा	१ सं	१ आ	५ ज्ञा ३ द २
आहारक सासादन पर्याप्त रचना	१ सा	१ स प	६	१०	४	४	१ पं	१ त्र	१० म ४ व ४ औ १ वै १	३	४	३ कुज्ञान	१ अ	२ च १ अच १	द्र ६ भा ६	१ भ	१ सा	१ सं	१ आ	५ ज्ञा ३ द २
आहारक सासादन अपर्याप्त रचना	१ सा	१ सं अ	६ अ	७	४	३ नरक विना	१ पं	१ त्र	२ औमि१ वैमि १	३	४	२ कुम १ कुश्रु १	१ अ	२ च १ अच१	द्र १ कपोत भा ६	१ भ	१ सा	१ सं	१ आ	४ ज्ञा२ द२
आहारक सम्यग्मिथ्या दृष्टि रचना	१ मिश्र	१ स प	६ प	१० प	४	४	१ पं	१ त्र	१० म ४ व ४ औ १ वै १	३	४	३ मिश्र	१ अ	२ च १ अच १	द्र ६ भा ६	१ भ	१ मिश्र	१ सं	१ आ	५ ज्ञा ३ द २

आहारक असंयत रचना	१ असं	२ स अ१ संप१	६।६	१०।७	४	४	१ प	१ त्र	१२ म ४ व २ औ २ वै २	३	४	३ मति आदि	१ अ	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा ६	१ भ	३ उ १ वे १ क्षा १	१ स	१ आ	६ ज्ञा ३ द ३
आहारक असंयत पर्याप्त रचना	१ असं	१ स प	६ प	१० प	४	४	१ प	१ त्र	१० म ४ व ४ औ १ वै १	३	४	३ मति आदि	१ अ	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा ६	१ भ	३ उ १ वे १ क्षा १	१ सं	१ आ	६ ज्ञा ३ द ३
आहारक असंयत अपर्याप्त रचना	१ असं	१ स अ	६ अ	७ अ	४	४	१ प	१ त्र	२ औ मि १ वैमि १	२ न १ पु १	४	३ मति आदि	१ अ	३ चक्षु आदि	द्र १ कपोत भा ६	१ भ	३ उ १ वे १ क्षा १	१ स	१ आ	६ ज्ञा ३ द ३
आहारक देशसंयत रचना	१ दे	१ संप	६ प	१० प	४	२ ति १ म १	१ प	१ त्र	९ म ४ व ४ औ १	३	४	३ मति आदि	१ दे	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा ३ शुभ	१ भ	३ औ १ वे १ क्षा १	१ स	१ आ	६ ज्ञा ३ द ३
आहारक प्रमत्त रचना	१ प्र	२ प १ अ १	६।६	१०।७	४	१ म	१ प	१ त्र	११ म ४ व ४ औ १ आ २	३	४	४ मति आदि	३ सा १ छे १ प १	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा ३ शुभ	१ भ	३ औ १ वे १ क्षा १	१ सं	१ आ	७ ज्ञा ४ द ३
आहारक अप्रमत्त रचना	१ अप्र	१ संप	६	१०	३ आहार विना	१ मं	१ प	१ त्र	९ म ४ व ४ औ १	३	४	४ मति आदि	३ सा १ छे १ प १	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा ३ शुभ ३	१ भ	३ औ १ वे १ क्षा १	१ स	१ आ	६ ज्ञा ४ द ३
आहारक अपूर्वकरण रचना	१ अपू	१ संप	६	१०	३ आहार विना	१ म	१ प	१ त्र	९ म ४ व ४ औ १	३	४	४ मति आदि	२ सा १ छे १	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा १ शुक्ल	१ भ	२ औ १ क्षा १	१ सं	१ आ	७ ज्ञा ४ द ३

आहारकअनिवृत्तिकरण प्रथमभाग रचना	१ अनि	१ सप	६	१०	२ मै १ प १	१ म	१ प	१ त्र	६ म ४ व ४ औ १	३	४	४ मति आदि	२ सा १ छे १	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा १ शुक्ल	१ भ	२ औ १ क्षा १	१ सं	१ आ	७ ज्ञा ४ द ३
आहारकअनिवृत्तिकरणके द्वितीयादि ्ा विभागरचना गुणस्थानवत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्	गु० वत्
आहारक सूक्ष्मसाम्पराय रचना	१ सू	१ संप	६	१०	१ प	१ म	१ पं	१ त्र	६ म ४ व ४ औ १	०	१ लोभ	४ मति आदि	१ सूक्ष्म	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा १ शुक्ल	१ भ	२ औ १ क्षा १	१ सं	१ आ	७ ज्ञा ४ द ३
आहारक उपशान्तकषाय रचना	१ उप	१ संप	६	१०	०	१ म	१ प	१ त्र	६ म ४ व ४ औ १	०	०	४ मति आदि	१ यथा	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा १ शुक्ल	१ भ	२ उ १ क्षा १	१ सं	१ आ	७ ज्ञा ४ द ३
आहारक क्षीणकषाय रचना	१ क्षी	१ संप	६	१०	०	१ म	१ पं	१ त्र	६ म ४ व ४ औ १	०	०	४ मति आदि	१ य	३ चक्षु आदि	द्र ६ भा १ शुक्ल	१ भ	१ क्षा	१ सं	१ आ	७ ज्ञा ४ द ३
आहारक सयोगकेवली रचना इनका अपर्याप्तअला पणकहना	१ सयो	२ प १ अ १	६।६	४।२	०	१ म	१ पं	१ त्र	६ म २ व २ औ २	०	०	१ के	१ य	१ के	द्र ६ भा १ शुक्ल	१ भ	१ क्षा	०	१ आ	२ ज्ञा १ द १
अनाहारक रचना	५ मि १ सा १ अवि १ स १ अया १	८ अपर्याप्त ७ अयोगोपर्याप्त १	६ ५।३	७।७ ।५ ४।३।२।१	४	४	५	६	१ का	३	४	६ विभंग मन. पर्यय विना	२ अ १ य १	४	द्र १ शुक्ल भा ६	२	५ मिश्र विना	२	१ अनाहारक	१० ज्ञा ६ द ४

अनाहारकमिथ्यादृष्टि रचना	१ मिथ्या	७ अपर्याप्त	६ ५ ४	७।७ ६।१ ४।३	४	४	५	६	१ कार्माण	३	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ अ	२ च१ अच१	द्र१ शुक्ल भा६	२	१ मि	२	२ अनाहारक	४ ज्ञा २ द २
अनाहारक सासादन रचना	१ सा	१ सम	६ अ	७ अ	४	३ नरक विना	१ प	१ त्र	१ कार्माण	३	४	२ कुम१ कुश्रु१	१ अ	२ च१ अच१	द्र १ शुक्ल भा६	१ भ	१ सा	१ सं	१ अना	४ ज्ञा२ द २
अनाहार असंयत रचना	१ असं	१ सम	६ अ	७ अ	४	४	१ प	१ त्र	१ कार्माण	२ न१ पु१	४	३ मति१ श्रुति१ अवधि१	१ अस	३ च१ अच१ अव१	द्र १ शुक्ल भा६	१ भ	३ उ१ वे१ क्षा१	१ स	१ अना	६ ज्ञा३ द ३
आहारकमिश्रकप्रमत्त औदारिकअपेक्षयानाहार है तातीरच	१ प्र	१ अ	६ अ	७ अ	४	१ म	१ पं	१ त्र	१ आहारक मिश्र	१ पुं	४	३ म१ श्रु१ अ१	२ सा१ छे१	३ च१ अच१ अव१	द्र१ कपोत भा३ शुभ	१ भ	२ वे१ क्षा१	१ सं	१ आ	६ ज्ञा३ द३
अनाहारक सयोगकेवली रचना	१ सयोगी	१ प	६ अ	२ काय १ आयु १	०	१ म	१ प	१ त्र	१ कार्माण	०	०	१ के	१ य	१ के	द्र१ शुक्ल भा १ शुक्ल	१ भ	१ क्षा	०	१ अनाहार	२ ज्ञा १ द१
अनाहारकअयोगकेवली रचना	१ अयोगी	१ पर्याप्त	६ प	१ आयु	०	१ म	१ पं	१ त्र	०	०	०	१ के	१ य	१ के	द्र ६ भा० नास्ति	१ भ	१ क्षा	०	१ अनाहार	२ ज्ञा १ द १
अनाहारक सिद्धपरमेष्ठीरचना	०	०	०	०	०	सिद्ध गति	०	०	०	०	०	१ के	०	१ के	०	०	१ क्षा	०	१ अनाहार	२ ज्ञा १ द १

मणपज्जयपरिहारो, पढमुवसम्मत्त दोण्णि आहारो ।
एदेसु एक्कपगदे, णत्थि त्ति असेसयं जाणे ॥७२६॥

मनःपर्ययपरिहारौ, प्रथमोपसम्यक्त्वं द्वावाहारौ ।
एतेषु एकप्रकृते, नास्तीति अशेषकं जानीहि ॥७२६॥

टीका – मन पर्यय ज्ञान अर परिहारविशुद्धि सयम अर प्रथमोपशम सम्यक्त्व अर आहारकद्विक योग, इनि च्यारो विषै एक कोई होत सतै अवशेष तीन न होइ, ऐसा नियम है ।

बिदियुवसमसम्मत्तं, सेढीदोदिण्णि अविरदादीसु ।
सग-सग-लेस्सा-मरिदे देवअपज्जत्तगेव हवे ॥७३०॥

द्वितीयोपशमसम्यक्त्वं, श्रेणितोऽवतीर्णेऽविरतादिषु ।
स्वकस्वकलेश्यामृते देवापर्याप्तक एव भवेत् ॥७३०॥

टीका – उपशम श्रेणी तै सक्लेश परिणामनि के वशतै नीचै असयतादि गुणस्थाननि विषै उतरे । ते असंयतादिक अपनी अपनी लेश्या करि जो मरै, तो अपर्याप्त असयत देव होइ नियमकरि, जातै देवायु का जाकै बध भया होइ, तीहि बिना अन्य जीव का उपशम श्रेणी विषै मरण नाही । अन्य आयु जाकै वध्या होइ, ताकै देशसयम, सकल सयम भी न होइ । तातै सो जीव अपर्याप्त असयत देव ही है । तिनि विषै द्वितीयोपशम सम्यक्त्व सभवै है, तातै वैमानिक अपर्याप्त देव विषै उपशम सम्यक्त्व कह्या है ।

सिद्धाणं सिद्धगई, केवलणाणं च दंसणं खयियं ।
सम्मत्तमणाहारं, उवजोगाणक्कमपउत्ती ॥७३१॥

सिद्धानां सिद्धगतिः, केवलज्ञानं च दर्शनं क्षायिकं ।
सम्यक्त्वमनाहारमुपयोगानामक्रमप्रवृत्तिः ॥७३१॥

टीका – सिद्ध परमेष्ठी, तिनके सिद्धगति, केवलज्ञान, केवलदर्शन, क्षायिक सम्यक्त्व, अनाहार अर ज्ञानोपयोग, दर्शनोपयोग की अनुक्रमता करि रहित प्रवृत्ति ए प्ररूपणा पाइए है ।

गुणजीव ठाणरहिया, सण्णापज्जत्तिपाणपरिहीणा ।
सेसणवमग्गणूणा, सिद्धा सुद्धा सदा होंति ॥७३२॥

गुणजीवस्थानरहिताः, संज्ञापर्याप्तिप्राणपरिहीनाः ।
शेषनवमार्गणोनाः, सिद्धाः शुद्धाः सदा भवंति ॥७३२॥

टीका – चौदह गुणस्थान वा चौदह जीवसमासनि करि रहित हैं । बहुरि च्यारि संज्ञा, छह पर्याप्ति, दश प्राणनि करि रहित है । बहुरि सिद्ध गति, ज्ञान, दर्शन, सम्यक्त्व, अनाहार इनि बिना अवशेष नव मार्गणानि करि रहित है । ऐसे सिद्ध परमेष्ठी द्रव्यकर्म भावकर्म के अभाव तें सदा काल शुद्ध है ।

णिक्खेवे एयत्थे, णयप्पमाणे णिरुत्तिअणियोगे ।
मग्गइ वीसं भेयं, सो जाणइ अप्पसब्भावं ॥७३३॥

निक्षेपे एकार्थे, नयप्रमाणे निरुक्त्यनुयोगयोः ।
मार्गयति विंश भेद, स जानाति आत्मसद्भावम् ॥७३३॥

टीका – नाम, स्थापना, द्रव्य, भावरूप च्यारि निक्षेप बहुरि प्राणी, भूत, जीव, सत्व इनि च्यारयोनि का एक अर्थ है, सो एकार्थ । बहुरि द्रव्यार्थिक, पर्यायार्थिक नय, बहुरि मतिज्ञानादिरूप प्रत्यक्ष परोक्ष प्रमाण, बहुरि जीवै है, जीवैगा, जीया ऐसा जीव शब्द का निरुक्ति । बहुरि

"किं कस्स केण कत्थवि केवचिरं कतिविहा य भावा"

कहा ? किसकै ? किसकरि ? कहा ? किस काल ? कै प्रकार भाव है । ऐसै छह प्रश्न होतें निर्देश, स्वामित्व, साधन, अधिकरण, स्थिति, विधान इन छहों तें साधना, सो यहु नियोग ऐसे निक्षेप, एकार्थ, नय, प्रमाण, निरुक्ति, नियोगनि विषै जो भव्य जीव गुणस्थानादिक बीस प्ररूपणा रूप भेदनि कौं जानै है, सो भव्य जीव आत्मा के सत-समीचीन भाव कौं जानै है ।

अज्जज्जसेण-गुणगणसमूह-संधारि अजियसेणगुरू ।
भुवणगुरू जस्स गुरू, सो रायो गोम्मटो जयदु ॥७३४॥

आर्यार्यसेनगुणगणसमूहसंधार्यजितसेनगुरुः ।
भुवनगुरुर्यस्य गुरुः स राजा गोम्मटो जयतु ।।७३४।।

टीका – आर्य जो आर्यसेन नामा आचार्य तिनके गुण अर तिनका गण जो सघ, ताका धरनहारा, असा जगत का गुरु, जो अजितसेन नामा गुरु, सो जिसका गुरू है असा गोम्मट जो चामुडराय राजा, सो जयवत प्रवर्तौ ।

इहां प्रश्न – जो जयवत प्रवर्तो असा शब्द तौ जिनदेवादिक पूज्य कौ कहना सभवै, इहा अपने सेवक कौ आचार्यने असा कैसे कह्या ?

ताका समाधन – जैसे इहा प्रवृत्ति विषै याचक आदि हीन पुरुषकौ सुखी होहु इत्यादिक वचन कहै, सो इच्छापूर्वक नम्रता लीए वचन है । तैसे जिन देवादिक कौं जयवत प्रवर्तो, असा शब्द कहना जानना । बहुरि जैसे पिता आदि पूज्य पुरुष पुत्रादिक कौ सुखी होहु इत्यादिक वचन कहै; सो आशीर्वाद रूप वचन है । तैसे इहा राजा कौं जयवंत प्रवर्तौ, असा कहना युक्त जानना ।

इति आचार्य श्रीनेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती विरचित गोम्मटसार द्वितीय नाम पचसग्रह ग्र थकी जीवतत्त्वप्रदीपिका नाम सस्कृत टीका अनुसारि सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका नामा भाषाटीका विषै जीवकाण्ड विषै प्ररूपित जे बीस प्ररूपणा तिनिविषै आलाप प्ररूपणा नामा बावीसमा अधिकार सपूर्ण भया ।

श्रित्वा कार्णाटिकीं वृत्ति, वर्णिश्रीकेशवैः कृतिः ।
कृतेयमन्यथा किंचिद्, विशोध्यं तद्बहुश्रुतैः ।।१।।

अथ संस्कृत टीकाकार के वचन–

दोहा– अभयचन्द्र श्रीमान के हेतु करी जो टीक ।
सोधो बहु श्रुतधर सुधी, सो रचना करि ठीक ।।१।।

चौपाई–केशव वर्णी भव्य विचार । कर्णाटक टीका अनुसार ।।
संस्कृत टीका कीनी एहु । जो अशुद्ध सो शुद्ध करेहु ।।१।।

अथ भाषा टीकाकार के वचन–

दोहा– जीवकांड कौं जानिकैं, ज्ञानकाडमय होइ ।
निज स्वरूप मे रमि रहै, शिवपद पावै सोइ ।।

सोरठा– मंगल श्री अरहंत सिद्ध साधु जिन धर्म फुनि ।
मंगल च्यारि महंत एई हैं उत्तम शरण ।।

सवैया

अरथ के लोभी ह्वै कै करिकै सहास अति, अगम अपार ग्रंथ पारावार मे परै ।
थाह तौ न आओ तहा फेरि कौन पाओ पार, तातै सूधे मारग ह्वै आधे पार उतरै ।।

इहां परजंत जीव काडकी है मरजाद, याके अर्थ जानै निज काज सब सुधरै ।
निजमति अनुसारि अर्थ गहि टोडर हू, भाषा बनवाई यातै अर्थ गहौ सगरे ।।

इति जीवकांडं सम्पूर्णम् ।।

अकारादि क्रम से गाथासूची

जैसा केवलज्ञान द्वारा जाना वैसा करणानुयोग मे व्याख्यान है। तथा केवलज्ञान द्वारा तो बहुत जाना, परन्तु जीव को कार्यकारी जीव-कर्मादिक का व त्रिलोकादिक का ही निरूपण इसमें होता है। तथा उनका भी स्वरूप सर्व निरूपित नही हो सकता, इसलिए जिस प्रकार वचनगोचर होकर छद्मस्थ के ज्ञान मे उनका भाव भासित हो, उस प्रकार सकुचित करके निरुपण करते हैं। यहा उदाहरण—जीव के भावो की अपेक्षा गुणस्थान कहे हैं, वे भाव अनन्तस्वरूप सहित वचनगोचर नही है, वहा बहुत भावो की एक जाति करके चौदह गुणस्थान कहे हैं। तथा जीवो को जानने के अनेक प्रकार हैं, वहाँ मुख्य चौदह मार्गणा का निरुपण किया है। तथा कर्म परमाणु अनन्त प्रकार शक्ति युक्त हैं, उनमें बहुतो की एक जाति करके आठ व एक सौ अडतालीस प्रकृतियाँ कही हैं। तथा त्रिलोक मे अनेक रचनाएँ हैं वहाँ कुछ मुख्य रचनाओ का निरूपण करते हैं। तथा प्रमाण के अनन्त भेद हैं, वहाँ सख्यातादि तीन भेद व इनके इक्कीस भेद निरूपित किये हैं। इसी प्रकार अन्यत्र जानना।

प० टोडरमल . मोक्षमार्ग प्रकाशक, पृष्ठ स० २७५